श्री दहरविद्या

(ब्रह्मविद्या)

छान्दोग्य उपनिषद् अध्याय

आठवां पर प्रवचन

स्वामी श्री त्रिवेणी पुरीजी महाराज

श्री दहरविद्या

(ब्रह्मविद्या)

छान्दोग्य उपनिषद् अध्याय

आठवाँ पर प्रवचन

स्वामी श्री त्रिवेणी पुरीजी महाराज

प्रकाशक

श्री प्रकाश संन्यास आश्रम

कालीमाटी डोल

काठमाण्डू, नेपाल

प्राप्तिस्थानः-

१. श्री प्रकाश संन्यास आश्रम
कालीमाटी डोल
काठमाण्डू, नेपाल। फोन ४१३८११

२. श्री संन्यास आश्रम
संन्यास मार्ग
कनखल-२४६४०८
(हरिद्वार) उ. प्र. फोन : ३७४

३. वेदान्त कुटीर 'विपुल'
१७३ गरोडिया नगर
घाटकोपर
बम्बई-४०००७७ फोन : ६७८३७३

४. वेदान्त आश्रम
सरदार कुन्ज सोसाइटी
शाहपुर, अहमदाबाद (गुज़रात)

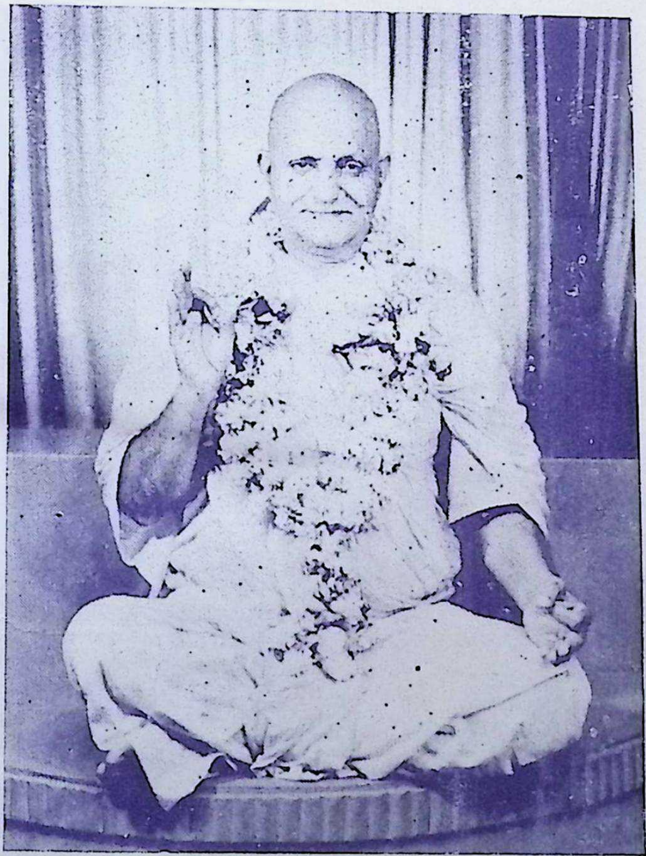
५. संन्यास आश्रम
जामनगर (सौराष्ट्र)

प्रथम आवृत्ति २०४७ अक्षय तृतीया

मूल्य —.........(प्रकाशन विभाग संचालनार्थ)

मुद्रक : माहेश्वरी प्रिन्टर्स (प्रा०) लि०, टंकेश्वर, कालीमाटी, काठमाण्डू, नेपाल

फोन – २१४१६६



श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ
श्री १०८ स्वामी त्रिवेणी पुरी जी महाराज

प्रकाशक

श्री प्रकाश संन्यास आश्रम

कालीमाटी डोल

काठमाण्डू, नेपाल

प्राप्तिस्थानः-

१. श्री प्रकाश संन्यास आश्रम
कालीमाटी डोल
काठमाण्डू, नेपाल। फोन ४१३८११

२. श्री संन्यास आश्रम
संन्यास मार्ग
कनखल-२४६४०८
(हरिद्वार) उ. प्र. फोन : ३७४

३. वेदान्त कुटीर 'विपुल'
१७३ गरोडिया नगर
घाटकोपर
बम्बई-४०००७७ फोन : ६७८३७३

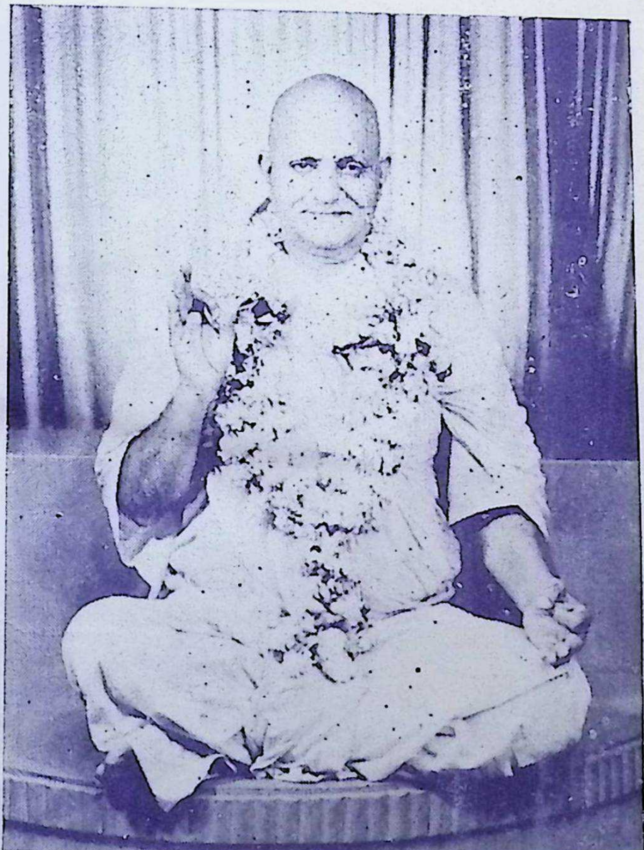
४. वेदान्त आश्रम
सरदार कुञ्ज सोसाइटी
शाहपुर, अहमदाबाद (गुजरात)

५. संन्यास आश्रम
जामनगर (सौराष्ट्र)

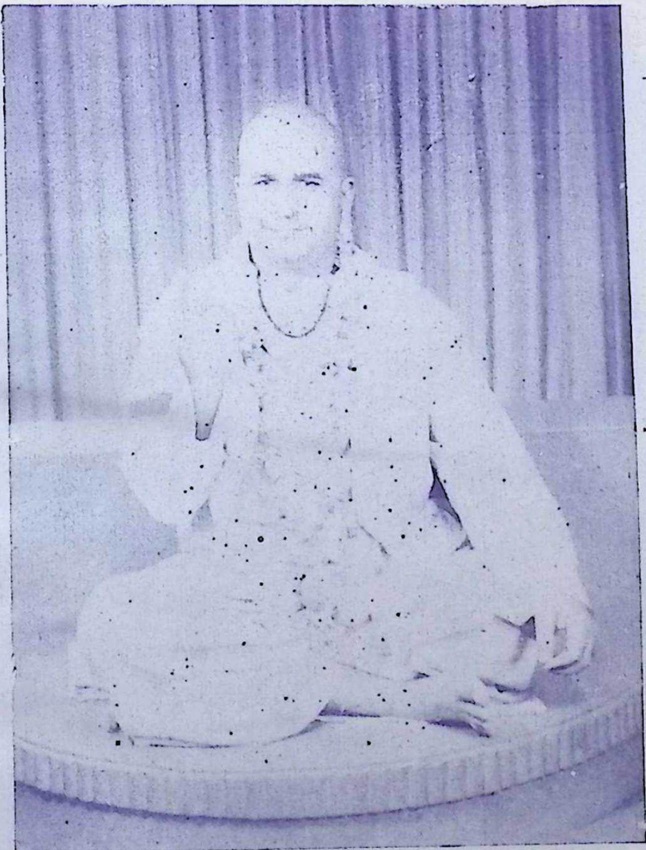
प्रथम आवृत्ति २०४७ अक्षय तृतीया

मूल्य —.........(प्रकाशन विभाग संचालनार्थं)

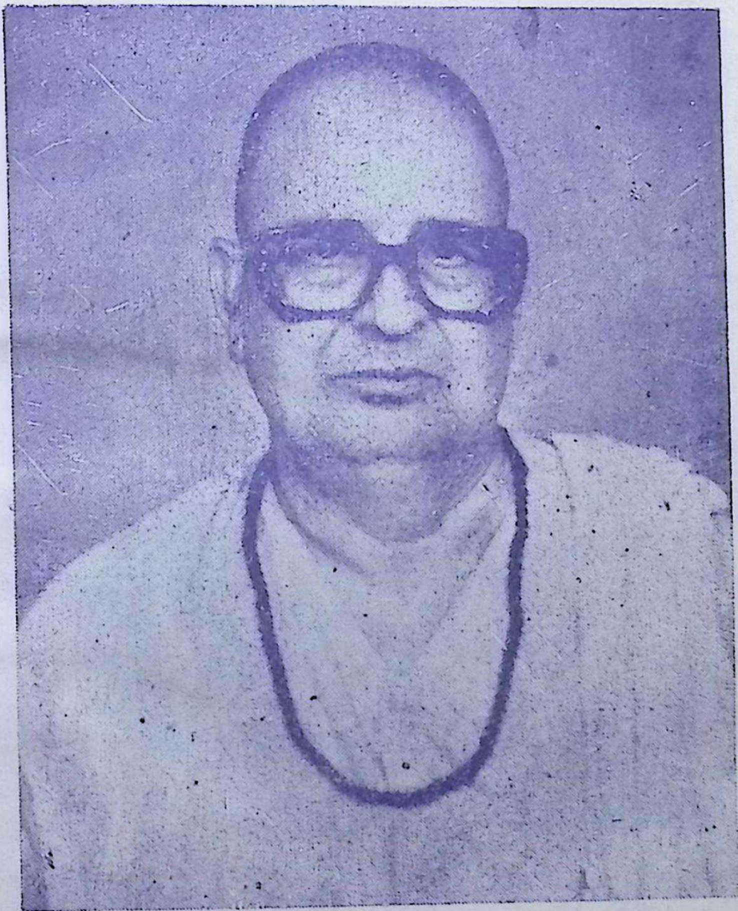
मुद्रक : माहेश्वरी प्रिन्टर्स (प्रा०) लि०, टंकेश्वर, कालीमाटी, काठमाण्डू, नेपाल
फोन - २१४१६६



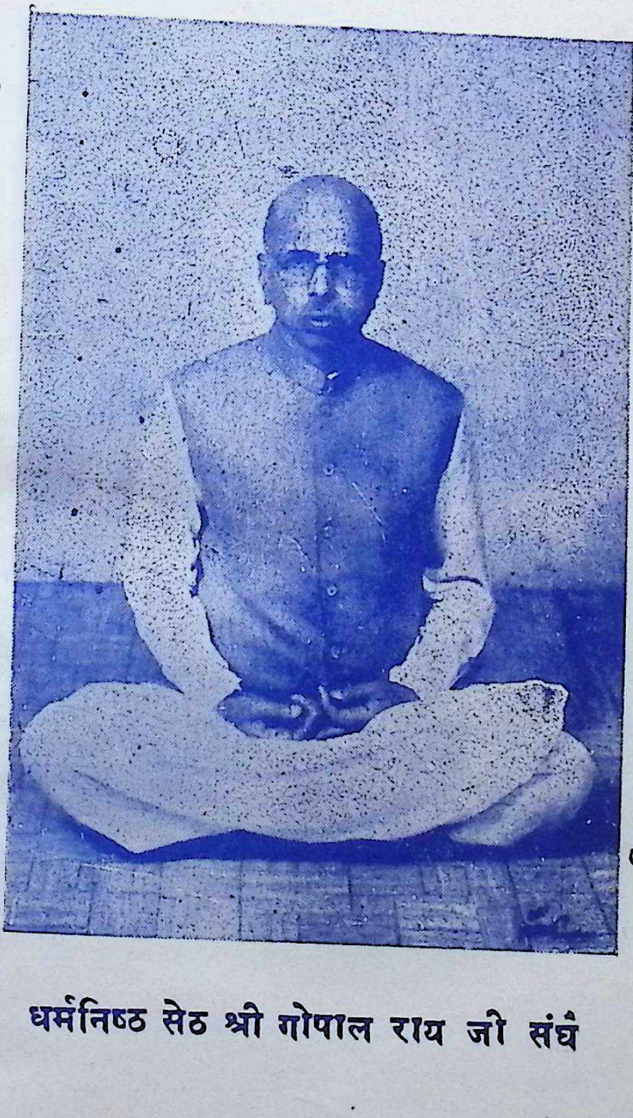
श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ
श्री १०८ स्वामी त्रिवेणी पुरी जी महाराज



श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ
श्री १०८ स्वामी महेश्वरानन्द पुरी जी महामण्डलेश्वर



ब्रह्मलीन श्री १०८ स्वामी पूर्णानन्द शास्त्रीजी महाराज



धर्मनिष्ठ सेठ श्री गोपाल राय जी संघै

दो शब्द

वस्तुतः ब्रह्म देश काल, वस्तुका भेद से शून्य है।"एकमेवाद्वितीयम्,आत्मैवेदं सर्वम्" इत्यादि श्रुतियों द्वारा विशुद्ध चिन्मात्र निर्गुण निराकार ब्रह्म पूर्व छठे तथा सप्तमाध्याय में स्पष्ट सिद्ध कर चुके हैं, किन्तु फिर भी मन्द बुद्धि मुमुक्षु की विचार दृष्टि एकाएक निर्गुण निराकार स्वरूप में स्थिर होती नहीं। अतः उसकी ध्यान वृत्ति की स्थिरता के लिये अष्टमाध्याय में श्रुति हृदय पुण्डरीक देश का उपदेश करती है। इस हृदयाकाश में ध्यान करने से बहुत शीघ्र मन्द बुद्धि मुमुक्षु ब्रह्म साक्षात्कार करने में समर्थ होता है। अतः सगुण साकार भाव भी ब्रह्म का ज्ञान प्रति इष्ट है, हृदयाकाश में ध्यान का नाम दहरविद्या है।

यदिदस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराकाश–स्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं तद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति, इत्यादि श्रुति दहरविद्या स्पष्टीकरण करती है। अष्टम अध्याय में इसका वर्णन है। इस दहरविद्या का प्रवचन मैंने 88 में श्री प्रकाश संन्यास आश्रम, काठमाण्डू नेपाल में किया है जिसका हिन्दी में संस्करण प्रिया शिष्या श्रीमती राजेश्वरी आनन्द ग्वालियर ने बड़ी योग्यता से किया है। अतः उनको बहुत २ धन्यवाद एवं शुभाशीर्वाद है। श्री दहरविद्या के प्रकाशन का पुण्य भार धर्मनिष्ठ सेठ श्री गोपाल रायजी संघै ले रहे है। अतः उनको सपरिवार हार्दिक शुभाशीर्वाद एवं सुमङ्गल कामना है। दहरविद्या का प्रवचन को प्रकाशन मे लाने के लिए ब्रह्मलीन स्वामी श्री पूर्णानन्द शास्त्री जी ने जो सक्रियता साथ प्रारम्भ करवाया था उसकी याद मेरे स्मृति पटलमे सदा रहा है। विधि की ऐसी ही इच्छा थी कि वे पूर्णता के पहले ही ब्रह्मलीन हुए।

मुमुक्षु जनो के हितार्थ प्रकाशित होने वाली दहरविद्या के मुद्रण-संशोधन मे सहयोग प्रिय पण्डित प्रवर श्री गोपालनिधि तिवारी जी ने किया है। प्रिय तिवारी जी को भी हार्दिक शुभाशीर्वाद के साथ धन्यवाद है।

सतामनुचरः

स्वामी त्रिवेणी पुरी जी

२०४७ अक्षय तृतीया

ॐ

छान्दोग्य उपनिषद्
आठवां अध्याय

६-४-८८

प्रवचन सं०-१

"ॐ अथ यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नतराकाशस्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं तद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति ।। तं चेद्ब्रूयुर्यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशः किं तदत्र विद्यते-यदन्वेष्टव्यं यद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति । स ब्रूयात् ।।"

(छान्दो. ८-१-१।२)

यह छान्दोग्य उपनिषद् सामवेद शाखा का उपनिषद् है। इस से पहले छठे और सातवें अध्याय में इस बात को समझा कर आए है कि इस संसार में ब्रह्म के अतिरिक्त जो भी वस्तु दीखती है वह प्रतीति मात्र है। "सदेव सोम्य......

इस श्रुति में उद्दालक ऋषि ने अपने पुत्र श्वेत केतु को समझाया है कि ब्रह्म के अतिरिक्त सब भान मात्र है, प्रतीति मात्र है । सारा संसार भान मात्र है। जैसे अपने अनुभव में देखो स्पप्न में बहुत सी चीजें है और प्यारी लगने वाली है। प्रिय होने पर भी वास्तविक रूप से वहाँ कुछ भी नहीं है । मान मात्र जो वस्तुएं है वो भी जीव को सुख दुख देने में समर्थ है । इस जीव को सुखी या दुखी करने के लिए असली वस्तु की जरूरत नही है। जैसे मां बच्चे को खुश करने के लिए खिलौने देती है इसी प्रकार यह माया भगवती भी इस जीव को प्रसन्न करने के लिए तरह तरह के

के पदार्थ इसके सामने फेंकती रहती है । सुख किस वस्तु से मिले यह निश्चय नहीं। जो वस्तु एक दिन सुख देती है वही दूसरे दिन दु: देती है । माया के इस जगत में कोई पदार्थ ऐसा नही जहाँ से तु सुख ही सुख मिले ।

पुत्र पुत्री, पति पत्नी, भाई बहिन यह सब सम्बन्ध तो दूर है सब से अधिक निकट यह शरीर है । इसको देखो जीवन में इसने कित सुख दिया। कोई २ जीवन भर बीमार रहता है। जिसको कभी को रोग नहीं होता पर बुढ़ापे में देखो यही शरीर कितना दुःखदायी हो जा है । इस तरह सबसे प्यारा शरीर था पर उससे तुमको कितना सु मिला ? जगत की कोई भी वस्तु ऐकान्तिक सुख नहीं दे सकती । ऐक न्तिक सुख तो तुम्हारे स्वरूप में ही है। सुख स्वरूप तुम्हारा स्वरूप है श्रुति कहती है दिग्देशादिभेदशून्य है ब्रह्म । "सदेव सोम्य" संसार के जितने भी पदार्थ है, सब परिच्छिन्न है। यह महान ब्रह्म है दिग्देशकालपरिच्छेदरहित है । दिक्माने दिशा, कोई व इस दिशा में है उस दिशा में नहीं। कोई वस्तु इस देश में है उस में नहीं । कोई वस्तु इस काल में है तो उस काल में नहीं । जो व परिच्छिन्न होगी, अल्प होगी वह साकार होगी। वह किसी देश किसी का किसी वस्तु में होगी । किन्तु तुम्हारी अन्तरात्मा सत्‌चित् आनन्द स्व है। सब देश में सश काल में है। सर्व साक्षी है । जो सर्व साक्षी देश को पकड़ो तो उसका साक्षी, काल को पकड़ो तो उसका सा किसी वस्तु को पकड़ो तो उसका भी साक्षी है । सबका साक्षी जो है, महान आत्मा है, सबका साक्षी होते हुए भी सब से न्यारा है । लिए श्रुति कहती है "दिग्देशकालादिशून्य" जहाँ कोई देश नहीं, दिशा नहीं, कोई काल नहीं ।

भेदवद् वस्तु का अभिप्राय है वस्तु २ में भेद। जैसे यह गुलाब फूल । देखने मे यद्यपि जाति तो दोनों की एक है किन्तु फिर भी दो में भेद है। किन्तु, अन्तरात्मा ब्रह्म में किसी का भेद नहीं । इस न दिशा का भेद न काल का भेद न वस्तु का भेद। कहोगे भेद तो

देश तो है, काल भी है । किन्तु यह बताओ दिशा को किस आँख से देखोगे ? अगर दिशा की आँख से देखोगे तबतो भेद है पर यदि आत्मा की आँख से देखो तो भेद नही रहेगा । शरीर की आँख से शरीर दिखेगा पर आत्मा, ब्रह्म की आँख से भेद कहाँ है ? तब यह शरीर ही कहाँ है । मां के पेट में भी आत्मा तो था पर यह शरीर कहाँ था ? जब शरीर ही नही तो शरीर का भेद भी कहां ? वस्तु हो तब तो भेद भी दिखे, जब वस्तु ही नहीं तो भेद कहां । तात्पर्य यह है कि जब वस्तु ही व्यावहारिक है तो भेद भी व्यावहारिक कहना पडेगा । व्यवहार काल में भेद है परमार्थ में भेद नहीं है ।

छान्दोग्य उपनिषद् के छठे अध्याय में यह निश्चय कर के आए हैं कि ब्रह्म एक है, अद्वितीय है उस में भेद नहीं । सातवें अध्याय में सनत्कुमार ने महर्षि नारद को भूमा विद्या का उपदेश दिया । यहाँ आठवें अध्याय में दहर विद्या को समझने का प्रयत्न करेंगे। मुमुक्षु तीन प्रकार के होते है । एक उत्तम प्रज्ञा का, एक मध्यम प्रज्ञा और एक कनिष्ठ प्रज्ञा का। उत्तम प्रज्ञा मुमुक्षु परम तत्त्व, परम सत्य आत्माको ही मानता है इस के बिना कोई चीज ही नहीं । जैसे अपने शरीर में ही देखो, सारी दुनियां में घुमने की जरूरत नहीं । इस परम सत्य के अतिरिक्त कौन सी वस्तु है जिसको हम पकडेंगें । परम प्रिय कौन ? जिसके रहने से यह शरीर प्रिय है और जिसके चले जाने से यह शरीर प्यारा नहीं, वह परम प्रिय । उस परम प्रिय आत्मा में मनको स्थिर करना है। उत्तम प्रज्ञा मुमुक्षु का मन तो श्रवण मात्र से ही आत्मा में स्थिर हो जाता है किन्तु मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु यह कर नहीं सकता इसलिए आचार्य कहते हैं कि ऐसे मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु पर भी तो अनुग्रह करना चाहिए । "कश्चिदुपाय कर्त्तव्यः, उपदेष्टव्यः" । इस पर अनुग्रह करने के लिए दहर विद्या का उपदेश करते हैं। "यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशस्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्यः" यह ब्रह्म दहर है । यह जितने भी भूत भौतिक प्रपंच हैं इन सब से परे है। "तदेतदपूर्वापरं" श्रुति कहती है सोम्य यह जो ब्रह्म है, अन्तरात्मा है यह अपूर्व है। यहाँ अपूर्व कहने

के पदार्थ इसके सामने फेंकती रहती है । सुख किस वस्तु से मिले यह निश्चय नहीं । जो वस्तु एक दिन सुख देती है वही दूसरे दिन दु देती है । माया के इस जगत में कोई पदार्थ ऐसा नही जहाँ से तु सुख ही सुख मिले ।

पुत्र पुत्री, पति पत्नी, भाई बहिन यह सब सम्बन्ध तो दूर है सब से अधिक निकट यह शरीर है । इसको देखो जीवन में इसने कित सुख दिया । कोई २ जीवन भर बीमार रहता है । जिसको कभी को रोग नहीं होता पर बुढ़ापे में देखो यही शरीर कितना दुःखदायी हो जा है । इस तरह सबसे प्यारा शरीर था पर उससे तुमको कितना सु मिला ? जगत की कोई भी वस्तु ऐकान्तिक सुख नहीं दे सकती । ऐक न्तिक सुख तो तुम्हारे स्वरूप में ही है । सुख स्वरूप तुम्हारा स्वरूप है श्रुति कहती है दिग्देशादिभेदशून्य है ब्रह्म । "सदेव सोम्य" संसार के जितने भी पदार्थ है, सब परिच्छिन्न है । यह महान ब्रह्म है दिग्देशकालपरिच्छेदरहित है । दिक्माने दिशा, कोई व इस दिशा में है उस दिशा में नहीं । कोई वस्तु इस देश में है उस में नहीं । कोई वस्तु इस काल में है तो उस काल में नहीं । जो व परिच्छिन्न होगी, अल्प होगी वह साकार होगी । वह किसी देश किसी का किसी वस्तु में होगी । किन्तु तुम्हारी अन्तरात्मा सत्चित् आनन्द स्व है । सब देश में सश काल में है । सर्व साक्षी है । जो सर्व साक्षी देश को पकड़ो तो उसका साक्षी, काल को पकड़ो तो उसका सा किसी वस्तु को पकड़ो तो उसका भी साक्षी है । सबका साक्षी जो है, महान आत्मा है, सबका साक्षी होते हुए भी सब से न्यारा है । लिए श्रुति कहती है "दिग्देशकालादिशून्य" जहाँ कोई देश नहीं, दिशा नहीं, कोई काल नहीं ।

भेदवद् वस्तु का अभिप्राय है वस्तु २ में भेद । जैसे यह गुलाब फूल । देखने मे यद्यपि जाति तो दोनों की एक है किन्तु फिर भी में भेद है । किन्तु, अन्तरात्मा ब्रह्म में किसी का भेद नहीं । इस न दिशा का भेद न काल का भेद न वस्तु का भेद । कहोगे भेद तो

देश तो है, काल भी है । किन्तु यह बताओ दिशा को किस आँख से देखोगे ? अगर दिशा की आँख से देखोगे तबतो भेद है पर यदि आत्मा की आँख से देखो तो भेद नही रहेगा । शरीर की आँख से शरीर दिखेगा पर आत्मा, ब्रह्म की आँख से भेद कहाँ है ? तब यह शरीर ही कहाँ है । मां के पेट में भी आत्मा तो था पर यह शरीर कहाँ था ? जब शरीर ही नही तो शरीर का भेद भी कहां ? वस्तु हो तब तो भेद भी दिखे, जब वस्तु ही नहीं तो भेद कहां । तात्पर्य यह है कि जब वस्तु ही व्यावहारिक है तो भेद भी व्यावहारिक कहना पडेगा । व्यवहार काल में भेद है परमार्थ में भेद नहीं है ।

छान्दोग्य उपनिषद् के छठे अध्याय में यह निश्चय कर के आए हैं कि ब्रह्म एक है, अद्वितीय है उस में भेद नहीं । सातवें अध्याय में सनत्कुमार ने महर्षि नारद को भूमा विद्या का उपदेश दिया । यहाँ आठवें अध्याय में दहर विद्या को समझने का प्रयत्न करेंगे । मुमुक्षु तीन प्रकार के होते है । एक उत्तम प्रज्ञा का, एक मध्यम प्रज्ञा और एक कनिष्ठ प्रज्ञा का । उत्तम प्रज्ञा मुमुक्षु परम तत्त्व, परम सत्य आत्माको ही मानता है इस के बिना कोई चीज ही नहीं । जैसे अपने शरीर में ही देखो, सारी दुनियां में घुमने की जरूरत नहीं । इस परम सत्य के अतिरिक्त कौन सी वस्तु है जिसको हम पकडेंगें । परम प्रिय कौन ? जिसके रहने से यह शरीर प्रिय है और जिसके चले जाने से यह शरीर प्यारा नहीं, वह परम प्रिय । उस परम प्रिय आत्मा में मनको स्थिर करना है । उत्तम प्रज्ञा मुमुक्षु का मन तो श्रवण मात्र से ही आत्मा में स्थिर हो जाता है किन्तु मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु यह कर नहीं सकता इसलिए आचार्य कहते हैं कि ऐसे मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु पर भी तो अनुग्रह करना चाहिए । ''कश्चिदुपाय कर्त्तव्य:, उपदेष्टव्य:'' । इस पर अनुग्रह करने के लिए दहर विद्या का उपदेश करते हैं । '' यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशस्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्य:'' यह ब्रह्म दहर है । यह जितने भी भूत भौतिक प्रपंच हैं इन सब से परे है । ''तदेतदपूर्वापरं'' श्रुति कहती है सोम्य यह जो ब्रह्म है, अन्तरात्मा है यह अपूर्व है । यहाँ अपूर्व कहने

का अभिप्राय है कि इससे पूर्व में कोई नहीं । जैसे दिशा की दृ
से हम पूर्ब पश्चिम कहते हैं । जहाँ सूर्य उदय हो वह पूर्व और ज
सूर्य दिखना बन्द हो जाए वह अस्ताचल, पश्चिम । दिशा का
केवल अनुभव करते है और नहीं तो सारी पृथ्वी का चक्कर लगा आ
पूर्व पश्चिम कहीं नहीं है । यह अन्तरात्मा, माया और माया का वि
रूप संसार, इससे अपूर्व है । जैसे अपने शरीर को ही देखो शरीर
इन्द्रिय हैं, मन है बुद्धि है और अविद्या भगवती है । इन सबका साक्षी स
से न्यारा चेतन । इसलिए अपूर्व कहा ।

अनन्तरमबाह्यं । इससे पूर्व कोई नहीं । इस के बाद में भी को
नहीं । यह सारे पदार्थ जो है, आदि अन्त वाले हैं जैसे यह शरीर चेत
के करंट में पकड़ा हुआ है किन्तु जरा सा हाथ भी इस करंट से बाहर हुअ
तो डाक्टर कहेगा काट दो इसे, मुर्दा हो गया है । जब तक चेतन
करंट में है तभी तक प्यारा है । इस लिए श्रुति कहती है "तदेतदपू
मनन्तरमबाह्यं" इसके बाहर भी कुछ नहीं । यह सबके बाहर है
ऐसी तुम्हारी यह अन्तरात्मा है । यह आत्मा प्रज्ञानघन है । "एकमेव
द्वितीयं ब्रह्म" यद्यपि श्रुति के द्वारा तो प्रतिपादित है पर मन्द प्र
मुमुक्षु की बुद्धि सहसा इस में प्रवेश नहीं करती इस लिए उसके लि
हृदय देश में "उपदेष्टिव्य:" उपदेश करना चाहिए । ऐसा मुमुक्ष उ
हृद्देश को पकड़ लेता है और ब्रह्म का साक्षात्कार करता है ।

मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु भी आचार्य के उपदेश से हृदय देश में, दहराका
में, ब्रह्म साक्षात्कार कर लेता है किन्तु अतिमन्द प्रज्ञ, कनिष्ठ मुमु
इसे भी नहीं पकड़ सकता । वह कहता है गुरु जी मेरे को तो ऐस
भगवान चाहिए जिसका कोई आकार हो, जो देखने में आवे, पकड़
आवे । इसलिए भगवान की मूर्ति का प्रावधान किया । जिसके पास ह
बैठ सकें । श्रुति उसमें अनेक गुणों का विधान करती है जैसे "सत्य
काम: सत्यसंकल्प:" अतिमन्द मुमक्षु के लिए परमात्मा के गुणों का कथन
करना पड़ता है जिस से वह सत्य काम सत्य संकल्प परमात्मा का
ध्यान कर सके । इस प्रकार ध्यान करके वह अपने मन को आगे बढ़ाता

है। जैसे २ बुद्धि सूक्ष्म होती जाएगी गुणों का भाव कम होता जाएगा। परमात्म भाव दृढ होता जाएगा। जैसे शरीर की अवस्था बढ़ती जाती है तो पिछली अवस्था भूलती जाती है। बचपन गायब हो गया तो युवावस्था से प्यार करने लगता है। बचपन को भूल जाता है। किन्तु जब युवावस्था से आगे बढ़ता है तो घबराने लगता है, हाय अब क्या होगा ? ऐसे मुमुक्षु को यह समझाया जाता है कि मोह नहीं करना। देखने की जो वस्तु है वह देखने की ही है। वह न तेरे साथ आई है न जाएगी। वह ऐसे की ऐसी ही रह जाएगी। इस प्रकार सूक्ष्म दृष्टि में आते आते स्थूल दृष्टि हटती जाएगी। जब तक किसी आकार को पकड़ कर ध्यान करेगा, ईश्वर को अपने जैसा ही मानेगा। सर्व व्यापक सर्वान्त-रात्मा रूप से यह परमात्मा का ध्यान नहीं कर पाएगा।

मुमुक्षु कौन? कहा कि वह शम दम उपरति तितिक्षा श्रद्धा समाधान षटसम्पति सम्पन्न हो। मुमुक्षु के लिए ब्रह्मचर्यादि साधन का उपदेश किया। मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु जल्दी से आकार को छोड़ता नहीं इसलिए उसके लिए शम दमादि षट सम्पत्ति का विधान किया। षट माने छः प्रकार की सम्पत्ति। यह जो सांसारिक सम्पत्ति है इसके लिए सीधा समझो कि छोटे बच्चे को भी यदि नोट या रुपया देकर छीनो तो रोता है, मुठी खींचता है उसके लिए यद्यपि इसका कोई महत्त्व नहीं, पर वह जानता है कि यह कागज मूल्यवान है। सम्पत्ति माने ''सभ्यक् गच्छति पद्यते इति सम्पत्ति'' जिस की कृपा से इस जगत में अच्छी तरह से चल सके। एक धनी मानी व्यक्ति देश में बढ़िया बंगले में रहता है। चलने के लिए हवाई जहाज में उड़ता है। यह सब सम्पत्ति की कृपा है। यदि सम्पत्ति छीन ली जाए तो एक फुटपाथिया भाई में और उस धनी व्यक्ति में क्या अन्तर है। जरा सा बिजि-नैस में घाटा आते ही कहने लगता है कि गये हम तो काम से। लोक सम्पत्ति का भी सम्मान इसलिए है कि इस कि शक्ति से हम शक्तिमान होते हैं। यद्यपि इस से ब्लड प्रैशर, हार्टएटैक आदि भी होता है। इससे डाक्टर को भी भोजन मिलता है। एक के पीछे एक भोजन लेता जाता है। लोक दृष्टि में जिस प्रकार यह लोक सम्पत्ति बड़ा बनाती है।

अध्यात्म दृष्टि से अध्यात्म सम्पत्ति, षट सम्पत्ति है। शमदमादि अध्यात्म सम्पत्ति है।

अध्यात्म शब्द का अर्थ है आत्म सम्बन्धी इस सम्पत्ति से जीव आत्मा की ओर चलता है। आत्माभिमुख होता है। भाग्यशाली लोक सम्पत्ति का भी सदुपयोग करके, धर्म के कार्य कर के अपना जीवन सफल बनाता है। इस मे कोई संदेह नहीं, यह भगवान पशुपतिनाथ का मन्दिर भी किसी महान पुण्यात्मा का संकल्प है। जिस महान व्यक्ति का यह संकल्प है, जिस पुण्यात्मा का यह संकल्प है उसका पुण्य आज भी बढ़ रहा है। यद्यपि वह इस वर्त्तमान काल में जीवित नहीं है किन्तु उसका पुण्य आज भी बढ़ रहा है। आज भी यहां से पार्सल हो रहा है। हम यह पार्सल नहीं करेंगें, आप पार्सल नहीं करेंगे किन्तु परमात्मा, वह अन्तर्यामी पार्सल कर रहा है। यह जीव धर्माधर्म का विभाग नहीं कर सकता। परमात्मा इसका विभाग करता है। जीव धर्म कर सकता है, अधर्म कर सकता है पर उस का विभाग नहीं कर सकता। विवेकशील धन पा कर भी अपना परमार्थ सिद्ध करता है। परलोक साधन सिद्ध करता है। पर जो विवेकशील नहीं है वह डांस डिनर क्लब में ही अपना जीवन समझता है। वह सोचता है इसके विना क्या जीवन है? जैसे भंवरा मधुर गंध लेने जा पहुंचा किन्तु वहीं उसका पहरेदार कांटा भी था। उसने कैंची की तरह उसके सुन्दर पंख काट दिए। वहीं प्राण निकल गये। इसी प्रकार अज्ञानी मूढ़ प्राणी भी इन विषयों में अपने प्राण गंवां देता है किन्तु जो ज्ञानवान है, विवेकी है वह धनादि के द्वारा भी अपना परमार्थ सिद्ध करता है। जो अधिक विवेकी है वह इस अध्यात्म सम्पत्ति को पकड़ता है। शम दमादि साधनो को पकड़ता है।

आचार्य कहते है शम क्या है? शमः मनसो निग्रहः इस सारे शरीर को गाडी समझो। मन स्टीयरिंग है। स्टीयरिंग को ठीक से पकड़ो ठीक से घुमाओ। रोड को ठीक मत करो अपने को ठीक रखो। सीधा जाना हो तो सीधा घुमाओ। left को जाना हो तो left को घुमाओ। right को जाना हो तो right को घुमाओ। तुम यदि ठीक

हो तो रोड कैसी भी हो तुम ठीक पहुंच जाओगे। मनको यदि संसार में घुमाओगे तो यह संसार तुम्हारा सारा रस निचोड लेगा। तुम्हारे जीवन की गाड़ी है यह शरीर और मन है इसका स्टीयरिंग। मन को ठीक राखो। मन को पकड़ो। मन का निग्रह करो। इस मन को खुला मत छोड़ो। इसलिए आचार्य कहते है मनोनिग्रह: शम:।

इन्द्रियाँ वाह्य है। वाहर की जो इन्द्रिय है जैसे वाह्य इन्द्रिय आँख है। आँख से क्या देखना? कैसा देखना किसको देखना? क्या नहीं देखना। आँख तो एक ही है प्यार से देखोगे तो अगला भी प्यार से देखेगा। क्रोध से देखोगे तो क्रोध से देखेगा। वाणी है तुम्हारी। बोलना तो है। सब लोग मौनी नहीं हो सकते। बोलना तो पडेगा। ऐसा बोलो कि तुम्हारा शब्द दूसरे के हृदय में पीड़ा न पहुँचाए, दूसरे का हृदय प्रसन्न करे। वाणी का देवता अग्नि है। यदि अग्नि को बिना विचारे कहीं फैंक दोगे तो वह कहीं भी जलाएगी। विचार से यही अग्नि लाभ पचाएगी। इसी प्रकार वाणी का प्रयोग यदि विचार से करोगे तो यह शब्द रुपी जो अग्नि है जिसके हृदय में जाएगी उसे शान्त करेगी। यदि बिना विचार से बोलोगे तो, वउ अग्नि तो चमड़ी को जलाती है पर शब्द रूपी अग्नि तो मन को जला देती है। मन यदि जल गया तो जीवन नीरस हो जाता है। अपनी पत्नी ही यदि मीठा नहीं बोलेगी तो कहोगे घर रह कर क्या करेंगें इस से तो श्मशान ही अच्छा है संत तुलसी दास अपने समय के महान संत थे। वह कहते है "वशी करण इक मंत्र है तज दे वचन कठोर"। किसी को यदि वश में करना हो तो कठोर वाणी मत बोलो। विचार आता है, विद्वान कैसे बोलता है। विद्वान की वाणी "अर्थवद् प्रत्ययवद्" होनी चाहिए। बोलने का अर्थ flattering नहीं करना है। उसके हृदय को जगाना है। केवल खुश ही नहीं करना। जो हृदय अनादि काल से माया मे सुप्त पड़ा है उसे जागृत करना है। वाणी से ज्ञान प्राप्त हो, जिस से कोई बोध हो, वस्तु सही ज्ञान हो।

विवेकशील प्राणी ही विद्वान है। शास्त्र नहीं पढ़ा, या थोड़ा पढ़ा है पर यदि विवेक है तो वह विद्वान है। इसलिए ऐसा बोलो जो

अध्यात्म दृष्टि से अध्यात्म सम्पत्ति, षट सम्पत्ति है। शमदमादि अध्यात्म सम्पत्ति है।

अध्यात्म शब्द का अर्थ है आत्म सम्बन्धी इस सम्पत्ति से जीव आत्मा की ओर चलता है। आत्माभिमुख होता है। भाग्यशाली लोक सम्पत्ति का भी सदुपयोग करके, धर्म के कार्य कर के अपना जीवन सफल बनाता है। इस मे कोई संदेह नहीं, यह भगवान पशुपतिनाथ का मन्दिर भी किसी महान पुण्यात्मा का संकल्प है। जिस महान व्यक्ति का यह संकल्प है, जिस पुण्यात्मा का यह संकल्प है उसका पुण्य आज भी बढ़ रहा है। यद्यपि वह इस वर्त्तमान काल में जीवित नहीं है किन्तु उसका पुण्य आज भी बढ़ रहा है। आज भी यहां से पार्सल हो रहा है। हम यह पार्सल नहीं करेगें, आप पार्सल नहीं करेंगे किन्तु परमात्मा, वह अन्तर्यामी पार्सल कर रहा है। यह जीव धर्माधर्म का विभाग नहीं कर सकता। परमात्मा इसका विभाग करता है। जीव धर्म कर सकता है, अधर्म कर सकता है पर उस का विभाग नहीं कर सकता। विवेकशील धन पा कर भी अपना परमार्थ सिद्ध करता है। परलोक साधन सिद्ध करता है। पर जो विवेकशील नहीं है वह डांस डिनर क्लब में ही अपना जीवन समझता है। वह सोचता है इसके विना क्या जीवन है? जैसे भंवरा मधुर गंध लेने जा पहुंचा किन्तु वहीं उसका पहरेदार कांटा भी था। उसने कैंची की तरह उसके सुन्दर पंख काट दिए। वहीं प्राण निकल गये। इसी प्रकार अज्ञानी मूढ़ प्राणी भी इन विषयों में अपने प्राण गंवां देता है किन्तु जो ज्ञानवान है, विवेकी है वह धनादि के द्वारा भी अपना परमार्थ सिद्ध करता है। जो अधिक विवेकी है वह इस अध्यात्म सम्पत्ति को पकड़ता है। शम दमादि साधनो को पकड़ता है।

आचार्य कहते है शम क्या है? शमः मनसो निग्रहः इस सारे शरीर को गाडी समझो। मन स्टीयरिंग है। स्टीयरिंग को ठीक से पकड़ो ठीक से घुमाओ। रोड को ठीक मत करो अपने को ठीक रखो। सीधा जाना हो तो सीधा घुमाओ। **left** को जाना हो तो **left** को घुमाओ। **right** को जाना हो तो **right** को घुमाओ। तुम यदि ठीक

हो तो रोड कैसी भी हो तुम ठीक पहुंच जाओगे । मनको यदि संसार में घुमाओगे तो यह संसार तुम्हारा सारा रस निचोड लेगा । तुम्हारे जीवन की गाड़ी है यह शरीर और मन है इसका स्टीयरिंग । मन को ठीक राखो । मन को पकड़ो । मन का निग्रह करो । इस मन को खुला मत छोड़ो । इसलिए आचार्य कहते है मनोनिग्रहः शमः ।

इन्द्रियाँ बाह्य है । बाहर की जो इन्द्रिय है जैसे बाह्य इन्द्रिय आँख है । आँख से क्या देखना ? कैसा देखना किसको देखना ? क्या नहीं देखना । आँख तो एक ही है प्यार से देखोगे तो अगला भी प्यार से देखेगा । क्रोध से देखोगे तो क्रोध से देखेगा । वाणी है तुम्हारी । बोलना तो है । सब लोग मौनी नहीं हो सकते । बोलना तो पडेगा । ऐसा बोलो कि तुम्हारा शब्द दूसरे के हृदय में पीडा न पहुँचाए, दूसरे का हृदय प्रसन्न करे । वाणी का देवता अग्नि है । यदि अग्नि को बिना विचारे कहीं फैंक दोगे तो वह कहीं भी जलाएगी । विचार से यही अग्नि लाभ पचाएगी । इसी प्रकार वाणी का प्रयोग यदि विचार से करोगे तो यह शब्द रुपी जो अग्नि है जिसके हृदय में जाएगी उसे शान्त करेगी । यदि बिना विचार से बोलोगे तो, वउ अग्नि तो चमड़ी को जलाती है पर शब्द रूपी अग्नि तो मन को जला देती है । मन यदि जल गया तो जीवन नीरस हो जाता है । अपनी पत्नी ही यदि मीठा नहीं बोलेगी तो कहोगे घर रह कर क्या करेंगें इस से तो श्मशान ही अच्छा है संत तुलसी दास अपने समय के महान संत थे । वह कहते है "वशी करण इक मंत्र है तज दे वचन कठोर" । किसी को यदि वश में करना हो तो कठोर वाणी मत बोलो । विचार आता है, विद्वान कैसे बोलता है । विद्वान की वाणी "अर्थवद् प्रत्ययवद्" होनी चाहिए । बोलने का अर्थ flattering नहीं करना है । उसके हृदय को जगाना है । केवल खुश ही नहीं करना । जो हृदय अनादि काल से माया मे सुप्त पड़ा है उसे जागृत करना है। वाणी से ज्ञान प्राप्त हो, जिस से कोई बोध हो, वस्तु सही ज्ञान हो ।

विवेकशील प्राणी ही विद्वान है । शास्त्र नहीं पढ़ा, या थोड़ा पढ़ा है पर यदि विवेक है तो वह विद्वान है । इसलिए ऐसा बोलो जो

दुसरे के हृदय मे अर्थ का बोध दे, प्रकाश दे 'अर्थवद् प्रत्ययवद्' ।

दमः बाह्य इन्द्रिय निग्रहः बाह्य इन्द्रियों का निग्रह करो । शम, दम उपरति । उपरति उपरामता मुनुक्षु उपराम हो कर रहे । लोकदृष्टि मे देखो तो जैसे नये २ लड़के की शादी की । पहली बार ससुराल मे नखरे से खाता है । सासू खाना देती है पर खाता नही । वासना का गैस तो है ही । सासू पुछती है पेट मे पीड़ तो नही । कहता है । कुछ चाहिए ? आज कल का जमाई कहता है अमरीका भेज दो । सासू फर्स्ट क्लास है तो अमरीका भेज देगी । सैकिण्ड क्लास है तो फ्लैट मांग लेगा । पुराने जमाने में भैंस मांगते थे । आज कल के मोटर साईकिल मांग लेते हैं । कहते हैं आफिस आने जाने मे बड़ी दिक्कत होती है । खाना मे नखरा किया तो सासु ने इतना दे दिया । कहीं हरियाणे का जाट होता तो जो आता चट कर जाता । एक दर्जन माल पुआ एक ही बार में चट कर जाता तो क्या मिलता ? इस जगत में यदि ऐसे ही मुक्खड़ हो कर रहोगे तो यह माया भगवती तुम्हें कुछ देने वाली नहीं है । थोड़ा उपराम हो कर रहो । जसे सत्तर वर्ष में वही जमाई दादा बन कर ससुराल जाता है तो तृप्त हो कर जाता है । उपराम हो कर जाता है । ऐसे ही मुमुक्षु तृप्त होकर बैठे । सभी भोग तुम्हारे लिए ही नहीं । सब जीव अपना २ भोग लेकर आए हैं । अपना हिस्सा लो । व्यर्थ की तृष्णा, व्यर्थ की वासना व्यर्थ की स्पृहा नहीं होगी तो मत शान्ति रहेगी । एक आनन्द रहेगा । इस शान्ति काल का आनन्द ही ब्रह्मानन्द है ।

इस जगत में तुम्हें और किस वस्तु का आनन्द मिल रहा है ? यह आनन्द किसी बाह्य वस्तु का नहीं । यह तुम्हारा अपना ही आनन्द है । शम, दम, उपरति, तितिक्षा । तितिक्षा, सहनशीलता, सहिष्णुता । शीतोष्ण, सर्दी, गर्मी, सुख दुःख सहन करने की क्षमता । सहनशील होकर रहो । जीवन में सुख आएगा; कभी दुःख भी आएगा, मुमुक्षु इससे घबरावे नहीं । सहन करें । इसको तितिक्षा कहते हैं । शम, दम, उपरति, तितिक्षा और श्रद्धा समाधान , यह जो मन है अनादि काल से इस संसार में रचा पचा रहने के कारण चंचल बना रहता है । भगवान कृष्ण को आस्तिक जगत भगवान

नता है। अर्जुन उस कृष्ण के साथ रहता है पर जब कुरुक्षेत्र के मैदान
वही अर्जुन पहुँचा, इधर उधर देखा, सब अपना वंश है, अपना ही
रवार है। मोह उत्पन्न हो गया। क्या मैं वंशोच्छेदन करने आया हुँ ?
र्जुन इसे महापाप समझता है। मोह से विचलित हो कर कहता है
चंचलं हि मनः कृष्ण" अर्जुन रोता है। भगवान के साथ रहने पर भी ज्ञान
ीं होता। ज्ञान ज्ञानी के साथ रहने से ही नहीं हो जाता। इसके लिए
देश की आवश्यकता होती है। ज्ञान दाता गुरु ही है। शास्त्र में गुरु की
त्ता का व्याख्यान इसिलिए किया है। क्योंकि सद्गुरु ही हृदय में ज्ञान
ज्योति जगाता है। हजार सूर्य भी उदय हो जाएगा तो ज्ञान का प्रकाश
ीं हो सकता। यह प्रकाश तो गुरु मुख से श्रवण करने पर ही किसी भाग्य-
ली को प्राप्त होता है। इतना करने पर भी यदि मुमुक्षु तत्त्व को समझने
अशक्त हो तो भी श्रद्धा को नहीं छोड़े। श्रद्धा से श्रवण करता रहे।
महान विद्या को सुनो। बार२ श्रवण करो। मनन करो। श्रद्धापूर्वक
नन करने से हृदय में ब्रह्म विद्या का उदय होगा। विद्या आने से अविद्या
ाग जाएगी। अविद्या के रहते ही तत्त्व का प्रकाश हृदय में हो जाता है।
सलिए इस महान विद्या का हृद्देश में ध्यान करो।

सातवें अध्याय में भगवान सनत्कुमार ने नारद जी को भूमा विद्या
ा उपदेश किया था। अब इस आठवें अध्याय नें दहर विद्या के विषय
विचार करेगें।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं०-२

''ॐअथ यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मि-न्नन्तराकाशस्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं तद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति ।। तं चेद्ब्रूयुर्यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे द पुण्डरीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशः किं तद विद्यते यदन्वेष्टव्यं यद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति स ब्रूयात्।।

(छान्दो.८-१-१

हम लोग यहाँ दहर विद्या का विचार कर रहे हैं। 'दहर वि यह विद्या शब्द अद्भुत मालुम होता है। किन्तु ऐसा है नहीं दहर हृदय । इस हृदयाकाश में उसका ध्यान करो जो जगत का सत्य जी है। जिस सत्य के विना जीवन नहीं है। सत्य के बिना यह जगत जी कैसे रह सकता है? जैसे हमारे हाथ में यह गुलाब का फूल है इसका जीवन जो रसात्मा है इसके बिना यह फूल सड़ जाएगा । प्रकार इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सत्य, जीवन जो आत्मा है , वह तु हृदय के अन्दर है । '' दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशस्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्यम् श्रुति का अभिप्राय है। इस ब्रह्म का मुमुक्षु अपने हृदयाकाश मे करे ।

विचार आता है कि जिस को ब्रह्म का साक्षात्कार हो गया का कहीं आना जाना बनता है कि नहीं? आना जाना जीव दृष्टि जीव देह के अहंकार म बंधा हुआ है । इसलिए वह इधर उधर भट फिरता है। आज कल विज्ञान बड़े २ यान, बड़े २ राकेट आकाश छोड़ता है। उस यान के अन्दर जो बुद्धिमान वैज्ञानिक बैठा है वह उ ही जाएगा जिधर यान (राकेट) जाएगा । इसी तरह इस शरीर को राकेट समझो। सबमे बड़ा राकेट तुम्हारा शरीर है इसके अन्दर वैज्ञानिक है वह जीव है। माया के आकाश में उड़ते २ यह शरीर भी

केट की तरह खत्म हो जाता है। किन्तु जो वैज्ञानिक (जीव) इसके न्दर बैठा है वह फिर दुसरी जगह जाता है। कर्म के अनुसार दूसरा रीर धारण करता है जैसा कर्म, जैसा ज्ञान होगा उसी के अनुसार दूसरी ां के पेट से जन्म लेगा। आचार्य कहते हैं कि जो उस आत्म तत्व को जान ते हैं। उनकी गति आगे नहीं होती। गति तभी तक है जब तक विद्या अन्दर बैठी है।

इसे अपने अनुभव से समझो। अहं, अहं तो करते हो किन्तु रा अपने से पुछो यह अहं 'कौन है'? कहते हैं नहीं जानते। यह जो हीं जानना है यही अविद्या है। ignorance है। जब तक अविद्या है ब तक कितना बड़ा सेठ भी क्यों न हो उसका जन्म मरण चलता ही हेगा। जब शास्त्र से, गुरु से "अयमात्मा ब्रह्म" यह बोध, यह ज्ञान मिला ो अविद्या निवृत्त हो गई। जब यह अविद्या हट गई, यह माया जब ीवृत हो गई तब यह पांचभौतिक प्रपंच इस रूप मे नहीं दीखेगा। यह पांच ौतिक सृष्टि तभी तक है जब तक पांच भूतों की स्थिति है।

प्रकृति मे देखो। यह जो नाना प्रकार के पेड़ पौधे हैं जब तक ृथ्वी हरी भरी है तभी तक इनका महत्त्व है। अस्तित्व है। जब पृथ्वी सुख ई तब कुछ नहीं रहेगा। इसी प्रकार जब तक अविद्या है तब तक तो ीवों का जन्म मरण चलेगा किन्तु जब अविद्या निवृत हो गई तो कुछ हीं रहेगा। एक दूसरा दृष्टान्त आचार्य देते है "वायु ··· ··· अग्नि" से कभी २ आंधी चलती है, तूफान आता है, बवण्डर चलता है। पहले ादलों में बड़े जोर से बिजली चमकती है। बिजली के प्रबल वेग से चम- ने पर वायु सें बवण्डर, तूफान आता है। और अग्नि शान्त हो जाती है ब? जब इन्धन खत्म हो जाता है। जो भी इन्धन लगाया वह जब त्म हो गया तो अग्नि अपने आप ठंडी होजाएगी। इसी प्रकार हृदयाकाश जब ब्रह्माकार वृत्ति के द्वारा आत्मा का ब्रह्म रूप से बोध हो गया, तत्त्व ोध हो गया तो तुम्हारी गति अवरुद्ध हो गई। समाप्त हो गई। गति ाने जन्म मरण। तुम्हारा जन्म मरण निवृत हो गया। तुम्हारा जन्म मरण ा जो चक्कर था वो निवृत हो गया।

शास्त्र कहता है ' त्वं ब्रह्मासि ' हे सोम्य तुम ब्रह्म हो। जिज्ञासु को शंका हो जाती है कि 'मैं' कौन है ? जो यह दीखने वाल यह मैं हूं या जो नहीं दीखता वह हूं ? दीखने वाला तो शरीर ही है यह बताओ कि शरीर किस से दीखेगा ? अन्तरात्मा की light के शरीर नहीं दीखेगा। दिखने वाला 'मैं' या जिसके बिना नहीं दीखता 'मैं' ? मन्दप्रज्ञ मुमुक्षु को इस 'मैं' का ज्ञान जल्दी से नहीं होता। उत्तम अधिकारी होता है वह गुरु के उपदेश मात्र से खट् निश्चय कर है कि 'मैं' ब्रह्म हूँ। जो श्रद्धादि गुण सम्पन्न है उसे विश्वास हो जात कि गुरु और शास्त्र झूठ नहीं बोलते। जो बोल रहे हैं सच बोल रहे मैं ब्रह्म ही हूँ।

इस बात को तर्क से भी समझो। चूल्हे में लकडी जलती है। लकडी चिट्चिट् करती है। उसकी चिनगारी उड़ कर साड़ी पर जा तो उसने अपना काम कर दिया। चिनगारी ने अग्नि का काम न। अग्नि तो चूल्हे में जलने वाली भी है और चिनगारी वाली भी रूप छोटा होने से वस्तु तुच्छ नहीं हो जाती। रूप छोटा होने के हमें यह तुच्छ दीखी किन्तु अग्नि तो अग्नि ही है। भेद आकार में आकार तुच्छ होने से अग्नि तुच्छ नहीं। इसी तरह समझो तुम्हारे हृद चिनगारी कि तरह यह सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा भास रहा ब्रह्माण्डात्मा चूल्हे की अग्नि की तरह है। ब्रह्माण्डात्मा से जुदा तुम्हारी आ नहीं। यह समझो। ऐसा बोध हो जाने पर जन्म मरण की गति नहीं रहे आचार्य कहते हैं मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु को तो बोध हुआ नहीं इसलिए उ हृद्देश को पकड़ कर, विशिष्ट गुण को पकड़ कर हृदयाकाश में दहर की उपासना बतलानी चाहिए।

यहां यह उपनिषद् सामवेदीय तवल्कार शाखा का उपनिषद् इसके आठवें अध्याय को प्रपाठक कहा है। पाठक में 'प्र' उपसर्ग दिया। जो वेदों को पढ़ावे वह पाठक। आचार्य कहते है पाठक 'पाठयति'। 'वेदानां पाठकः' ब्राह्मणों में पाठक सरनेम भी होता है। जै ही पाठ है। जो इसको सही पढे वो पाठक। यह सत्य है कि वर्तमान

ऐसा नहीं है किन्तु जिस विद्वान की कृपा से पाठक सरनेम मिला वह तो महान विद्वान होगा। इसकिए पाठक नाम पड गया। परम्परा पड़ी हुई है। कभी २ विद्वान के मन में भी शंका रह जाती है। संशय रह गया तो वह उसे दबा देता है। जीव अपनी कमजोरी छिपाता है। वह संशय को दबा कर आगे निकल जाता है। विद्यार्थी के सामने यह नहीं कहेगा कि हम नहीं समझ रहे। बड़ २ विद्वान भी संशय में पड़ जाते हैं। जल्दी अनुभव में नहीं आता कि देह के अतिरिक्त 'मैं' क्या हूँ ? देह से जुदा मैं हूँ तो कैसा 'मैं' हूँ ? यह सूक्ष्म विचार जल्दी बुद्धि में नही बैठता। यह आठवां अध्याय प्रपाठक है। इस में प्र उपसर्ग लगा है जिस का तात्पर्य है कि उस पाठक की तरह इसके ज्ञान में शंका नहीं है। यह जिस वस्तु को सामने रखेगा उस में संशय नहीं। स्पष्ट रूप से रखेगा। पाठक को तो शंका हो सकती है किन्तु प्रपाठक को शंका नहीं। ''प्रकर्षेण बोधयति इति प्रपाठक-'' 'प्र' शब्द का अर्थ है शंका रहित होकर, संशय रहित होकर तत्व का बोध कराता है इसलिए यह प्रपाठक है।

आचार्य कहते हैं 'सर्वभेदशून्यतत्त्वं ब्रह्म' सब भेदों से जो शून्य है, रहित है वह ब्रह्म है। उस सत्य की जब व्याख्या करनी है जिस का न कोई देश है, न कोई दिशा है, न कोई काल है, न गुण है, न क्रिया है। वह तो सदा अद्वैत ब्रह्म है। इसे महान परमार्थ समझो। पुराने सत्सङ्गी हो। कई वर्षों से सुनते आ रहे हो। परमार्थ शब्द का अर्थ। अर्थ के साथ परम शब्द जोड़ो तो परमार्थ हो गया। - अर्थ माने 'अर्थयते प्रार्थयते इति अर्थः' जिसकी चाहना हो, इच्छा हो वह अर्थ। जैसे बाह्य जगत के विषय है रूप रस गन्ध स्पर्श शब्द। यह सब बाह्य विषय है। इन की चाहना हम करते हैं तो यह हम को मिलते रहते हैं। कभी नहीं भी मिलते। यह बताओ रूप आँख से देखते हो तो क्या आँख के लिए है ? रुप रुप के लिए है ? या किसी और के लिए। वो 'और' कौन है ? जो यह 'और' है आँख का द्रष्टा, मन का द्रष्टा, बुद्धि का भी दृष्टा है। सब का द्रष्टा का साक्षी जो चेतन है वह परमार्थ है। यह सब कुछ उसके लिए है। ऐसा वो जो परमार्थ है।उस में न दिक् है,न दिशाहै न काल है। उस में देश काल वस्तु जैसी कोई भेद वाली कोई वस्तु नहीं है।

अपने अनुभव में समझो जिस समय गाढ़ निद्रा में सो जाते है, सुषुप्ति में कोई वाह्य वस्तु नहीं है। न वहाँ तुम्हारा शरीर है, न इस शरीरको खींचने वाले घोड़े, यह तुम्हारी इन्द्रियाँ, न इन्द्रियों को चलाने वाला प्राण, न प्राण को खींचने वाला मन , न मन को चलाने वाली बुद्धि और न बुद्धि को बल देने वाली अविद्या। केवल वो तुम्हारा स्वरूप है जो परम तत्त्व है । जो सब से परे है वह आत्मा है। जब तुम शरीर से परे हो गये तो तुम मनुष्य नहीं। इन्द्रियों से परे हो गये तो तुम इन्द्रिय नहीं । प्राण से परे हो गये तो तुम प्राण नहीं। मन से परे हो गये तो तुम मन नहीं। बुद्धि से परे हो गये तो तुम बुद्धि नहीं और अविद्या से परे हो गये तो तुम अविद्या भी नहीं । तुम इन सब से न्यारे, इन सब के साक्षी हो। इसलिए श्रुति कहती है "अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रः अक्षरात् परतः परः", हे सोम्य आप तो अप्राण हैं। आप प्राण नहीं हैं। जहाँ प्राण होगा वहाँ जीव भाव होगा। आप मन भी नहीं हो। अमनाः शुभ्रः ' मन क्या है ? मन जीव का द्योतक है। जीव भाव को स्पष्ट करने वाला है। आप शुभ्र हो । शुभ्र माने निर्मल, शुद्ध, स्वच्छ तुम निर्मल हो।

'अक्षरात् परतः परः" अक्षर शब्द का अर्थ है न क्षरति इति अक्षरः। जिसका क्षय न हो वो अक्षर, नाश न हो तुम अक्षर से भी परे हो। नाश किस का नहीं होता? यह जो अविद्या भगवती है, अनादि है। अनन्त काल से यह जीव के साथ २ चली आ रही है। इसलिए इस अविद्या को अक्षर शब्द से भी कहते हैं गीता के पन्द्रवें अध्याय में कहा है "द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च "इस लोक में दो पुरुष हैं। यह पंच भूत हैं इनको क्षर पुरुष कहा। देखो यह जो पुष्प है यह अपने आप में पूर्ण है। क्षर और अक्षर । इसे की लालिमा पूर्ण है। इसका विकास भी पूर्ण है। जितना गन्ध इस में चाहिए उतना गन्ध भी है। पुष्प कितना सुन्दर है। इसका जो रूप रस गन्ध चाहिए सब पूर्ण है। पूर्णात् पुरुषः। इसलिए इसको पुरुष कहा पांचभूत अपने स्वरूप मे पूर्ण हैं। पृथ्वी जैसी होनी चाहिए वैसी ही है। आज कल बडे २ वैज्ञानिक हैं किसी ने इस मे दोष निकाला कि पृथ्वी ऐसी न हो कर ऐसी होनी चाहिए। ऐसी होती तो अच्छा था। पानी ऐसा न हो कर ऐसा होता तो अच्छा होता। अग्नि ऐसी न हो कर ऐसी होती तो अच्छा होता। वायु ऐसा होता तो अच्छा

था। ईश्वर की इस सृष्टि मे किसी कि हिम्मत नहीं जो इसमे दोष निकाल सके। बडे २ विद्वान हैं, वैज्ञानिक है, किसी ने दोष निकाला ? अपने शरीर को ही देखो। किसी ने कहा कि यह इतना लम्बा होता तो अच्छा था १२ फुट का होता तो अच्छा होता, दूर की चीज ले लेते। ईश्वर ने छोटा शरीर बना कर गल्ती की। जरा सोचो इतना बड़ा होता तो इतना बड़ा bed room कहां से आता बुढा बुढी कहते हैं जरा पकड़ कर उठाओ । जवान को भी उठाना पड़ता । ५, ६ फुठ लम्बा ही ठीक है। ईश्वर की सृष्टि मे जो जैसा है वैसा ही ठीक है। ईश्वर महान है उस की सृष्ठि मे किसी ने आज तक गल्ती नहीं निकाली। इसलिए सत्चित् आनन्द स्वरूप जो आत्मा है यह अक्षर प्रकृति है

अक्षर प्रकृति माया है। इस माया की निवृत्ति तब तक नहीं होगी जब तक तत्त्व बोध नहीं होगा। ब्रह्म का बोध नहीं होगा। उस ब्रह्म के ज्ञान के लिए यह ब्रह्म विद्या है। दहर विद्या है। इस दहर विद्या कि उपासना करने वाला मुमुक्षु मूर्धन्य नाड़ी के द्वारा उर्ध्वगामी हो कर जाता है। श्रुति यहाँ इस शरीर को ब्रह्म पुर कह रही है। लोक जीवन मे जिस गांव मे ब्राह्मण अधिक संख्या मे रहते हो उसे ब्राह्मण नगर कह देते हैं। जिस गांव मे क्षत्रिय अधिक रहते हों उसे क्षत्रिय नगर कहदेते है। यहाँ इस शरीर को श्रुति ब्रह्म पुर कह रही है क्यों कि इस मे ब्रह्म का निवास है। श्रुति इस सत्य को समझना चाहती है कि मन्द बुद्धि मुमुक्षु भी शनैः २ परमार्थ तत्त्व ग्रहण कर लेता है। इसलिए वह आठवां अध्याय बड़ा ही महत्त्व पूर्ण है।

कल इस पर पुनः विचार करेंगे

हरि ॐ तत्सत्

ॐ

११-४-८८

प्रवचन सं०-३

" ॐ यावन्वा अयमाकाशस्तावानेषोऽन्तर्हृदयआकाश उभे अस्मिन् द्यावापृथिवी अन्तरेव समाहिते उभावग्निश्च वायुश्च सूर्याचन्द्रमसावुभौ विद्युन्नक्षत्राणि यच्चास्येहास्ति यच्चनास्ति सर्वं तदस्मिन्समाहितमिति ।।"

(छान्दो.८-१-३)

विचार आया कि मुमुक्षु एक तो वो है जो ब्रह्म वेत्ता है। ब्रह्मवेता वह जो यह जानता है कि यह आत्मा ब्रह्म है। ऐसा जिसको अनुभव हो गया कि 'ब्रह्मैवाहमस्मि' मैं ब्रह्म हूँ। ऐसा जो ब्रह्मवेत्ता है, उस का किसी लोक में आना जाना नहीं। यह किसी लोक में नहीं जाएगा। 'न तस्य प्राणाः उत्क्रामन्ति' उसके प्राणों का उत्क्रमण नहीं होता। उपनिषद् में आया है कि महान जो तत्व ज्ञानी है उसके प्राण इस शरीर से ऊपर नहीं उठेंगे। प्राण जब इस शरीर से ऊपर उठते हैं तो प्राण के साथ सूक्ष्म शरीर उठेगा। मन बुद्धि चित्त अहंकार पांच ज्ञानेन्द्रियाँ पांच कर्मेन्द्रियाँ और इन के साथ इनका स्वामी भी उठेगा। अपने स्वामी को छोड़कर ये थोड़े उठेंगे। क्योंकि चेतन के बिना जड़ में कोई सार नहीं। अन्तरात्मा इन का स्वामी है। अपने शरीर में ही समझो। जब तक चेतन के करंट में है बड़ा प्यारा लगता है। मां बाप बेटा बेटी पति पत्नी सबको प्यारा लगता है। किन्तु जहाँ चेतन आत्मा ने इसको छोड़ा तो कोई इसकी ओर मूंह करके रोता भी नहीं। मुर्दे की शक्ल बड़ी भयंकर होती है। किन्तु जहाँ चेतन आत्मा बैठा है वहाँ बड़े प्यार से बोलेगा। जब यह सूक्ष्म शरीर के साथ उड़ा तो कर्म जंजीर से बंधा हुआ दूसरे शरीर में चला जाता है।

तत्त्व विद्या यहाँ जिसको दहर विद्या कह रहे हैं यह कर्म जंजीर को काट देती है। तब सूक्ष्म शरीर भी छिन्न भिन्न हो जाता है। टुकड़े टुकड़े हो जाता है। कारण शरीर, अविद्या भी लुप्त हो जाती है। जैसे बर्फ पानी

हो जाता है। मक्खन धूप से पिघल जाता है। इसी प्रकार तत्त्व विद्या के आते ही अविद्या पिघल जाएगी। अविद्या निवृत्त हो जाएगी तो सूक्ष्म शरीर भंग हो जाएगा। अज्ञान निवृत्त हो गया तो तुम्हारी आत्मा कहाँ जाएगी। यह कहीं नहीं जाएगी उस व्यापक सत्ता में लीन हो जाएगी। जीव भाव के निवृत्त हो जाने पर व्यापक भाव में प्रतिष्ठित हो जाएगी। सूक्ष्म शरीर के सम्बन्ध से, अविद्या के प्रभाव से इस के अन्दर जीव भाव चल रहा था। अविद्या के हट जाने पर इस का जीव भाव नष्ट हो गया। ब्रह्म भाव प्रगट हो गया। ब्रह्म बनाना नहीं है इसे ब्रह्म भाब ने प्रकट करना है।

इसे अनुभव से समझो। जैसे ड्रामा में लड़का लड़की का पार्ट करता है तो लड़की जैसा ही दीखता है। लड़की की तरह ही बोलता है। यह सब उस ड्रेस की महिमा है पर उस के वास्तविक स्वरूप में कोई अन्तर नहीं। लड़की का पार्ट करते हुए भी अन्दर से उसे कोई शोक नहीं होगा, कोई मोह नहीं होगा। किन्तु यदि अपने स्वरूप को भूल गया तो लड़की भाव में आ जाएगा और अब अपने को लड़की ही समझने लगेगा। देखने वाले भी कहते हैं यह लड़की कितनी सुन्दर है। लड़की समझने पर भी है तो लड़का हीं। यह सब ड्रेस का प्रभाव है। इसी प्रकार इस शरीर के प्रभाव से 'मैं' पुरुष हूँ मैं स्त्री हूँ। स्थूल शरीर का प्रभाव है। सूक्ष्म और कारण शरीर के प्रभाव से मैं जीव हुँ यह भाव है। स्थूल शरीर तो परमात्मा ने रखा है, वही हटा सकता है मृत्यु देवता ही इसे हटाएगा। और कोई नहीं हटा सकता। सूक्ष्म और कारण शरीर के अहंकार को ब्रह्म विद्या नष्ट कर देगी। स्थूल शरीर वहीं पड़ा रहे; सूक्ष्म शरीर भी भले ही पड़ रहे पर जब ब्रह्म विद्या के द्वारा यह निश्चय दृढ़ हो जाएगा कि मैं ब्रह्म हुं तो तीनों शरीरों के रहने पर भी इनका प्रभाव समाप्त हो जाएगा।

ज्ञान के होते ही न तो स्थूल शरीर मरेगा न सूक्ष्म शरीर नष्ट होगा और न कारण शरीर। किन्तु इन तीनों शरीरों का प्रभाव समाप्त हो जाएगा। जैसे लड़का लड़की की ड्रेस में रहते हुए भी निश्चय ठीक रहने पर लड़का ही रहता है। ड्रेस के पड़े रहने से क्या फर्क पड़ता है। निश्चय ठीक रहना चाहिए। तत्त्व साक्षात्कार तो शरीर में ही होगा। श्रुति कहती है 'न तस्य

प्राणा उत्क्रामन्ति' 'ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति' ब्रह्म को जानने वाला साक्षा ब्रह्म होता है। इस का प्राण कहीं नहीं जाएगा। अब किसी लोक में नह जाएगा।

जिसके अन्दर भेद बुद्धि है, भेद बुद्धि जिसके अन्दर बैठी है, कर्त्तापन जिसके अन्दर बैठा है, भोक्तापन जिसके अन्दर बैठा है। ऐसी मलिन वासना जिसके अन्तः कारण में बैठी है जो मलिन वासना वाला है उसी का आना जाना है। उसी का जन्म करण है। ऐसा जो मन्द बुद्धि मुमुक्षु है। प्रज्ञा नाम है बुद्धि का जिससे तत्त्व दर्शन होता है। महान सूर्य आकाश में है। थोड़ा बादल आने से उस महान सूर्य का प्रकाश ढक जाता है धूप मंद हो जाती है इसी प्रकार अज्ञान की छोटी सी बदली 'मैं ब्रह्म हूं' इस महान ज्ञान को ढक लेती। इसलिए यह मन्द प्रज्ञ है। 'मैं ब्रह्म हू' यह ज्ञान दब गया है। इसके अन्दर कर्त्तापन भोक्तापन है। इसके लिए दहर उपासना का विधान किया। 'यदिदं ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं' श्रुति कहती है बेटा 'दहरं पुण्डरीकं' 'दहरं अति अल्पं बहुत छोटा। पुण्डरीकं कमल को कहते हैं। पुण्डरीक सदृशं। हृत्कमल। 'वेश्म' जैसे कोई बड़ा राज महल है यह तुम्हारा हृदय ही बड़ा राजमहल है। पुण्डरीकं। कमल के समान है इसके अन्दर 'वेश्म' सूक्ष्माकाश हृदयाकाश इसीको श्रुति 'पुण्डरीकं वेश्म' कह रही है। जैसे राजमहल में बहुत से नौकर चाकर होते हैं। कुछ अन्दर काम कर रहे है, बहुत से बाहर का काम कर रहे हैं। जो बाहर का काम करते हैं वे बाहर ही रहते हैं। वे अन्दर नहीं जा सकते। कुछ अन्दर रहते हैं वह अन्दर का काम ही करते हैं। वे बाहर नहीं जा सकते। पांच ज्ञानेन्द्रियां बाहर मार्किटिंग का काम करती हैं। पांच बड़े २ नगर हैं। रूप नगर रसनगर, गन्ध नगर, शब्द नगर और स्पर्श नगर। माया का बाजार है इसका काम पांच ज्ञानेन्द्रियाँ करती हैं। पर यह सब ऐसे नौकर हैं जो केवल अपना २ काम ही करते हैं। दूसरे का नहीं करेगें। जैसे चक्षु है रूपनगर में जाएगा, जो रूप इसको मिलेगा, अच्छा या बुरा। यह विचार नहीं करेगा लाकर अन्दर के नौकर मन को सौंप देगा। मन आगे बुद्धि के सामने पेश करेगा यह maid servent है बुद्धि निश्चय करेगी। यदि रूप अच्छा है, सुन्दर है

तो आगे कर दिया। अहंकार खड़ हो गया उसने प्लेट आगे कर दी। पर मान लो रूप कोबरा का है तो बुद्धि झट हटाने का आदेश दे देगी। यदि रूप सुन्दर है तो महाराजा बोलेगें ले आओ। प्रिय रूप है, प्रिय रस है, प्रिय शब्द है तो कहेंगे आने दो, और ले आओ। और सुनने दो। इस प्रकार मोहाशक्ति बढ़ जाएगी। इस मोहाशक्ति में यह जीव बंधा बंधा घूम रहा है

यह मन तो बेचारा एक है और विचरण करने वाली इन्द्रियाँ दस हैं। यह सब बाहर ही घूमने वाली हैं। उसी समय चक्षुरूप दे रहा है, कर्ण शब्द दे रहा है, इसना रस दे रही है तो यह मन उसी समय में रूपको भी पकड़ रहा है, शब्दको भी पकड़ रहा है इसको भी पकड़ रहा है। दस इन्द्रियों का बोझा उठाने वाला एक मन। तो उस में चंचलता नहीं होगी इसलिए मंत्र कहता है 'पुण्डरीक वेश्म' हृत्कमल में ध्यान करो। आचार्य व्याख्या करते हैं यह हृत्कमल ब्रह्मोपलब्धि का अधिष्ठान है। अधिष्ठान माने आधार। साक्षात् करना होगा तो यही करना होगा यही ब्रह्म का दर्शन होगा। पर कब ? जब इन्द्रियों को अन्दर खिचेंगे तब !

दूसरी श्रुति है 'यच्छेद्वाङ्मनसि' मंत्र कहता है जो प्राज्ञ है, प्राज्ञ का अर्थ है प्र माने प्रकृष्ट ज्ञ माने ज्ञान। प्रकृष्ट प्रज्ञा, श्रेष्ठ ज्ञान। जिसका लोभ कम है, मोह कम, शोक कम। एक दम हटेगा तो नहीं किन्तु कम हो सकता है। अपने अनुभव में जैसे समझो। बचपन में छोटे से खिलौने से मां प्रसन्न कर लेती थी पर अब ज़रा कल्पना करो कि इस समय मां आ जाए और एक झुनझुना हाथ में देने लगे तो क्या करोगे ? उस अवस्था में वह खिलौना अच्छा था पर इस अवस्था में दो पैसे का खिलौना देख कर यही कहेंगे कि मां का screw ढीला है। किन्तु जवान लडके के लिए मां यदि हीरे के नगवाली सोने की अंगूठी ले आए और आकर बेटे के हाथ में पहना दे तो कहेगा मेरी मम्मी बडी अच्छी है। मम्मी से प्यार भी करेगा। तात्पर्य यह है कि अवस्था के अनुरूप चीज मिली। तो प्रसन्न हो गया।

जीव को अवस्था के अनुसार चीज अच्छी लगती है। अज्ञान काल में माया भगवती रूप, रस गन्ध शब्द स्पर्शादि विषयों से जीव को बस में करती है

पर ज्ञान काल में यह विषय रबड़ के खिलौने जैसे है। ज्ञान काल में अविद्या छोड़ देती है। यही मोक्ष है " एषः मोक्षः छोटे बच्चे को मां गोद में बिठाती है किन्तु जवान को गोद में नहीं बिठाएगी। कहेगी यह गोद है कि कौच है? जवान को बगल में बिठाना पसन्द करेगी। अज्ञानी छोटा बच्चा है माया इसे पकड़े रहती है। पर ज्ञानी बड़ा बेटा है, अविद्या इसे नहीं पकडती। इससे तो उल्टे हाथ जोड़ती है। ज्ञानी बनने के लिए दहर विद्या है। इसे 'दहरोपासना' भी कहते हैं। जिसकी बुद्धि निर्मल है। जो संसार के इन विषयों मे शोक मोह को नहीं पकड़ती वह प्राज्ञ है। 'यच्छेद् वाङ्मनसि प्राज्ञ' अर्थात वाणी को मन में लीन करो। इसका अर्थ हैं कि वाणी सब इन्द्रियों की लीडर है। जैसे किसी पार्टी का नेता जब पकड़ में आ जाता है तो अन्य सदस्य अपने आप लुप्त हो जाते हैं। इसी तरह सारी इन्द्रियों की नेता जो तुम्हारी वाणी है इसे नियंत्रण में करो। यह वाणी इतनी शक्तिशाली है कि सारा संसार इस वाणी की पकड़ में है मनुष्य तो क्या, किसी पक्षी को खाने को कुछ मिल जाए तो ऐसी वाणी बोलता है कि सब इकट्ठे हो जाते हैं। एक को पत्थर मारो तो एक कौआ कांवर करता है और सब के सब कौए इकट्ठे हो जाते हैं। देखो कितना संगठन है पक्षियों में भी किन्तु यह मनुष्य संगठन नहीं कर पाता। प्रकृति में भी कितना संगठन ह। प्रकृति के नियम से सब संगठित हैं। कीड़े मकौड़े भी देखोकि कितनी लाईन से चलते हैं पर मनुष्य को सिखना पड़ता है कि क्यू बना कर खड़े होओ। चींटी को देखो प्रकृति के नियम से क्यू बना कर चलती है। मधुमक्खी एक रानी मक्खी होती है। वो पकड़ी जाए तो सबकी सब वहीं पहुंच जाती हैं। मनुष्यों में भी नेता लोग यही समझाते हैं कि संगठित रहोगे तो लोक जीवन में बल रहेगा।

अध्यात्म जीवन मे सारी इन्द्रियाँ वाणी की फकड़ मे हैं। बिना वाणी के पशु पक्षी भी नहीं चलते तो यह मनुष्य कैसे चलेगा। आज यदि सब नेताओं का मूंह बंद हो जाए तो युद्ध नहीं होंगे। झगड़ा कहीं होगा ही नहीं। विश्व शन्ति हो जाएगी, क्योंकि वाणी जब उल्टा पुल्टा बोलती है तो झगड़ा हो आता ह। जहाँ वाणी संयम में है उस परिवार में सुख शान्ति है। जहाँ वाणी संयम में नहीं वहाँ कभी सुख नहीं रह सकता। जिन घरों में झगड़े होते हैं

सब वाणी के कारण ही होते हैं । वाणी ठीक है तो सब ठीक हैं । 'वाक् संयमः' इसलिए श्रुति कहती है 'वाङ् मनसि प्राज्ञ' जिसकी बुद्धि में आत्मा परमात्माका बोध है वह प्राज्ञ है । जिसकी बुद्धि सुन्दर है वह अपनी वाणी की आहुति मन में देवे । मन रूपी अग्नि में वाणी की आहुति दो । जैसे यज्ञ में घी की आहुति होती है । वाणी से केवल वाणी ही नही समझो। वाणी से उपलक्षित सब इन्द्रियों को मन में दो । सम्पूर्ण इन्द्रियों की आहुति मन में करो । जब तुम्हारी इन्द्रियाँ अन्दर आ गई तो बाहर क्या अच्छा और क्या बुरा । निद्रा में जाते हो तो पहले सब इन्द्रियाँ मन में प्रवेश कर जाती हैं । किन्तु यदि मन नहीं सोया तो क्या होगा ? मन सोया नहीं तो उस समय स्वप्न होगा । बाहर की कोई चीज नहीं होगा उस समय । आँख से देखोगे नहीं । कान से सुनोगे नहीं किन्तु मन अपना खेल दिखाता रहेगा ।

इस मन की आहुति बुद्धि में दो । विशुद्ध बुद्धि में । विशुद्ध बुद्धि वह है जिसके अन्दर ब्रह्म भाव जाग्रत हो गया है । आत्मा परमात्मा का बोध प्रगट हो गया है । उस बुद्धि को विशुद्ध बुद्धि कहते हैं । इस विशुद्ध बुद्धि में पवित्र भावना आ गई हैं । मलिन वासना से मुक्त हो गया है । 'स अति विशुद्ध बुद्धि धुनोति मायमा' यह अति विशुद्ध बुद्धि है यह माया को पीछे हटा देती है । अपने जीवन में समझो । बहुत सी सास बन चुकी हो । बहुत सी बनने वाली हो । तो बहु कौन अच्छी ? जो सासु से काम ले या जो सासु को जाम कर दे । खिला पिला कर कमरे में बन्द कर दे । दस वर्ष जीना होगा तो पांच वर्ष में हीं ठंडी हो जाएगी । शरीर हिलता डुलता है तो खाना दाना चलता है । शरीर से हिलना डुलना बन्द हो गया तो क्या होगा ? इसलिए काम लेने वाली बहु अच्छी है । काम करने से शरीर में खून गर्म होगा । खाना दाना ठीक चलेगा । 'धुनोति माया' को सासु समझो । विशुद्ध बुद्धि बहु की तरह है । यह माया को पीछे कर देती है । ब्रह्मवेत्ता निर्भय होने लगता है । यच्छेद् वाङ् मनसि ।

विशुद्ध बुद्धि की भी आहुति करनी पड़ती है समष्ठि महत्तत्व में । समष्टि महत्तत्व का अर्थ समझो समष्टि बुद्धि । हिरण्य गर्भ का ज्ञान समष्टि बुद्धि है । बुद्धि जब उस में लीन हो जाएगी तो मेरा तेरा, यह भाव हट जाएगा ।

व्यापक भाव आ जाएगा। उस समय तत्त्व की अनुभूति होगी ! 'ज्ञानात्मनि' विशुद्ध ब्रह्म रूप सत्चित् आनन्द स्वरूप जो चेतन है उस में जा कर यह बुद्धि विलीन हो जाएगी। माया की निवृत्ति हो जाएगी।

श्रीमद् भागवत के ग्यारहवें स्कन्ध में भगवान कहते हैं कि जिस प्रकार अग्नि लकड़ी को खा जाती है ऐसे ही ज्ञान कर्मों को जला देता है। समाप्त कर देता है। श्रुति में आया हैं 'अनेन जीवेन आत्मनाऽनुप्रविश्य' परमात्मा इच्छा करता है मैं नाम रूप की सृष्टि करूँ। मैं जीव भाव से प्रगट हो कर नाम रूप की सृष्टि करूँ। यह कल्पना नहीं समझो अनुभव करो अपने शरीर में जो विकृति हो रही है। बच्चा धीरे २ कुमार हो रहा है। कुमार जवान हो रहा है। यह विकार कब तक होता है ? जब तक चेतन अन्दर बैठा है। यदि चेतन शरीर को छोड़ देता है तो शरीर में विकार नहीं होता। बच्चा जवान नहीं होता। सोचो शरीर को कौन बड़ा कर रहा है ? तुम या यह चेतन। चेतन जब छोड़ देगा तो मम्मी कौन सा दूध पिला कर बड़ा करेगी। इसलिए मंत्र कहता है 'अनेन जीवेन आत्मनाऽनुप्रविश्य" परमात्मा कहते हैं हम जीव रूप से बन्धन में आ रहे हैं साक्षात् बन्धन में नहीं आ रहे। जीव रूप से नाम रूप की सृष्टि करते हैं। वही चेतन है जो अन्दर बैठा है। बच्चे को जवान और जवान को बुढा बना रहा है। रात दिन के थपेड़े खाते हालत खराब हो गई। रात आई दिन गया। दिन आया रात गई। सुनार जैसे सोने की पिटाई लगाता है तो वह फैलता जाता है। लुहार लोहे की पिटाई करता है तो लोहा फैलता जाता है कुम्हार मिट्टी की पिटाई करता है तो मिट्टी फैलती जाती है इसी प्रकार यह काल देवता तुम्हारे शरीर की पिटाई कर रहा है। रात और दिन रूपी हाथों से काल देवता तुम्हारी पिटाई कर रहा है। बच्चा बच्चा नहीं रहा, कुमार कुमार नहीं, जवान जवान नहीं और बुढा बुढा नहीं। बुढ्ढे ने कहा मैं तो पिटाई सहन नहीं कर सकता तो उसने कहा कि यहाँ रहोगे तो पिटाई खाना ही पड़ेगा। भाग जाओ यहाँ से। वह भाग गया। मार खाई नहीं गई तो कहा मर गया। 'अनेन जीवेनात्माऽनुप्रविश्य' मुमुक्षु इस शरीर में प्रवेश करता है तो इन्द्रियो का संयम कर के मन में प्रवेश करे। बाह्य साधनों से सम्पन्न कर के अन्दर प्रवेश करे। दहराकाश में। दहर माने अति अल्प अति

सूक्ष्म । संयम से मन को शान्त कर के आत्मा में प्रवेश करे ।

आचार्य कहते हैं 'उपसंगृहीतकरणं बाह्य' करण माने इन्द्रियाँ । इन बाह्य करणों का, इन्द्रियों का पुण्डरीक में, हृत्कमल में उपसंहार करे । जैसे कछुआ कोई खतरा देखता है तो अपने सारे अंगों को अन्दर की ओर मोड़ लेता है । इसी तरह मुमुक्षु जन्म मरण रूपी काल के सामने खड़ा है । मुमुक्षु अपनी सारी इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटा कर अन्दर मोड़ ले । भगवान गीता के दूसरे अध्याय में कहते हैं 'यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता'' उसकी प्रज्ञा प्रतिष्ठित होगी । कल इसकी व्याख्या करेंगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१२-४-८८

प्रवचन सं०-४

''ॐ तं चेदब्रूयुरस्मिन्श्चेदिदं ब्रह्मपुरे सर्वं समाहितंसर्वाणि च भूतानि सर्वेच कामा यदैतज्जरावाप्नोति प्रध्वंसतेवा किं ततोऽतिशिष्यत इति ।''

(छान्दो ८-५-४)

श्रुति कहती है हे सोम्य कुछ कमाई तो तेरेको करनी पड़ेगी । संसार की जो भी कमाई है केवल देखने की है । जब तक देखेगा तब तक तेरी । आँख बन्द हो गई तो तेराक्या है? यह बात ठीक है कि लोक दृष्टि में बुद्धिमान मनुष्य जो धनादि कमाता है उससे कुछ लोक हित करता है। पुण्य करता है। इससे आत्मा का कुछ परलोक साधन होता है । किन्तु इससे यही होता है कि दूसरा जन्म अच्छा मिल जाएगा । पूर्व जन्म में कुछ अच्छे कार्य किए हैं, उनके फल स्वरूप यह सुन्दर शरीर मिला है । यह जन्म अच्छा मिला है । इसी तरह यदि वर्तमान जीवन में भी सत्कर्म करता रहेगा तो आगे गति ठीक रहेगी । आगेका

जन्म अच्छा होगा। किन्तु मोक्ष तो तभी होगा जब सत्य को समझेगा। आत्माके सत्य स्वरूप को, जिस के बिना कोई जी नहीं सकता, समझने के लिए, सत्य में प्रवेश करने के लिए श्रुति भगवती कहती है दहराकाश में प्रवेश करो। दहराकाश शब्द का अर्थ है हृदयाकाश। और कहीं नहीं जाना है । इसके लिए बाहर के विषयों में रमण करने वाली इन इन्द्रियों को थोड़ा समेटना पड़ेगा । लोक जीवन में कहीं तीर्थ यात्रा में जाना हो तो सभी कितनी तैयारी करते हैं? थोड़े दिन के लिए वहाँ जाते हैं तो भी तैयारी कितनी करते है ? पहले तो पाकेटमनी देखते है। तो सोचो, जब थोड़े समय के लिए इतनी तैयारी करते हैं तो जहाँ हमेशा के लिए जाना है वहाँ के लिए कोई तैयारी नहीं करनी पड़ेगी। इसलिए कहा कि मुमुक्षु विवेक वैराग्यादि साधन को पकड़े। विवेक और वैराग्य गीता में भगवान स्पष्ट करते है "इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एवच" भगवान कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं कि इन्द्रियों के जो विषय हैं, जो अर्थ हैं, उनसे वैराग्य को पकड़ो। ईश्वर स्वयं अर्जुन को उपदेश कर रहे हैं। क्यों? कान में फुंक क्यों नहीं मार दी? कान में फुंक मारने से आत्मा का ज्ञान नहीं होता। आत्मा का ब्रह्म रूप से बोध तो तभी होता है जब ज्ञान दाता गुरु इसका उपदेश करते हैं। जब तक ज्ञान दाता गुरु आत्मा का, ब्रह्म का उपदेश नहीं करेंगे, आत्मा का ब्रह्म रूप से बोध नहीं होगा । इस लिए श्रुति कहती है "तदववा विजिज्ञासितव्यं"।

इस की विजिज्ञासा करो। जिज्ञासा शब्द है उस में 'वि' उपसर्ग लगाया है। माने विशेष जिज्ञासा करो। जिज्ञासा कहाँ करना है? कहते हैं गुरु की शरण पकड़ो। ब्रह्मवेत्ता का आश्रय ग्रहण करो। नौका के आश्रय से भयंकर नदी को पार कर जाते हैं। नौका तो लकड़ी की बनी हुई है । आज काल तो बडे २ जहाज बने हुए हैं। उनके द्वारा महान गहरा जो समुद्र है, उसको भी पार कर जाते हैं। इसी तरह ज्ञान दाता जो गुरु है उसका आश्रय पाकर मुमुक्षु इस संसार रुपी भव सागर से पार हो जाता है। महान ब्रह्मवेत्ता गुरु के पास जाकर इसकी जिज्ञासा करो। इसको जानने की इच्छा करो। यह तुम्हारी जो आत्मा हैं, यह हृदयाकाश में है। हृदयाकाश के अन्दर जो ब्रह्म है उसके लिए श्रुति निर्देश करती है।

आचार्य आगे भाष्य में कहते हैं 'आकाशो वै नाम रूप' नाम और रूप यह दो ही सृष्टि हैं। इन का आश्रय जो ब्रह्म है, उदाहरण के लिए समझो यह शरीर नाम है , रूप इसकी आकृति है, इसका आश्रय चेतन है। इस चेतन के आश्रय में यह शरीर जीवित है। चलता रहता है । जब तक चेतन है सब अपना २ सम्बन्ध जोड़ेंगे। कोई इसको भाई कहेगा, कोई पिता कहेगा, कोई पति कहेगा। सब इसका स्वाद लेगें। पर जहाँ चेतन आत्मा ने इस शरीर को छोड़ा कि फिर कुछ नहीं। इस से निश्चय हो गया कि चेतन ही आश्रय है। आकाश शब्द का अभिप्राय है, जैसा सूक्ष्म आकाश है वैसा ही सूक्ष्म यह ब्रह्म है। इस ब्रह्म के आश्रय में ही यह नाम रूप सृष्टि चल रही है।

मुण्डकोपनिषद का मंत्र है "यस्मिन द्यौःपृथ्वी चान्तरिक्षमोतं मनः सह प्राणैश्च सर्वैः। तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या, वाचो विमुञ्चथामृतस्यैषसेतुः" इस मंत्र में कहा 'यस्मिन' जिस परमात्मा के अन्दर यह द्यौ, यह पृथ्वी, यह आन्तरिक्ष सब जिस में ओत प्रोत है। जिसके आश्रय में यह सब जी रहे हैं। "मनश्च प्राणैश्च सर्वैः" इसका अर्थ क्या निकला कि इस सारे ब्रह्माण्ड का आश्रय वो ब्रह्म ही है। जैसे अपने शरीर से ही समझो जब तक चेतन के आश्रय में है तभी तक जीवित है। सभी प्रिय बन्धु आएंगे, किन्तु जब चेतन ने छोड़ा, कहेंगे मर गया। सोचो यह सारा जो ब्रह्माण्ड है, यह प्यारा क्यों लगता है ? यह चेतन आश्रय में है। जब यह ब्रह्माण्ड उस चेतन का शरीर बना तो वह चेतन विराटात्मा बन गया। सगुण साकार। सगुण साकार भासने पर भी है नहीं। सत्‌चित् आनन्द स्वरूप इस परमात्मा में सगुण साकार भाव है। जैसे अनुभव के लिए जाग्रत अवस्था में यह स्थूल शरीर दीखता है, स्वप्न में केवल छाया मात्र है किन्तु सुषुप्ति में कुछ भी नहीं है।

जाग्रत में स्थूल शरीरका फोटो आ जाएगा। सुषुप्ति में कोई भी आकार नहीं। तो समझो कि यह जाग्रत का आकार प्रतीति मात्र है। भान मात्र है। इस देहाहंकार से ऊपर उठो। गीता के अठाहरवें अध्याय में 'अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् विमुच्य निर्ममःशान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते। इस शरीर में अहंकार करके बैठा है और इस शरीर के बलको तू अपना वल समझता है।

'दर्प' बल बढा तो दर्प करता है । जो सज्जन हैं, जिन का मान करना चाहिए उनका अपमान करने में संकोच नहीं करता ।'अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं" कामं माने अनेक प्रकार की कामनाओं का बाजार लगा देता है । वासना के मार्ग में जो अवरोध करता है, उन पर क्रोध करता है। चाहे अपना बेटा ही क्यों न हो, माता पिता यदि रोढा अटकाएंगे तो क्रोध करेगा । वासना का समर्थन करो, स्पोर्ट sport करो तो मां बाप अच्छे, नहीं तो दुश्मन मानने लग जाता है । यह आज कल के बेटा बेटियों की ही बात नहीं, प्राचीन काल में भी ऐसा ही होता था । बहुत से उदारण हैं ।

भारवि कवि को पिता ने गुरु कुल में पढने भेजा । थोड़े समय में बहुत बडा विद्वान बन गया । बड़े २ विद्वान उससे हारने लगे । पुराने समय में शास्त्रार्थ होता था । उसके द्वारा तत्त्व का निर्णय होता था। वादी और प्रतिवादी दोनों ही सत्य के आधार पर निर्णय मानते थे । प्रतिवादी जहाँ हार जाता था चूप हो जाता था कि हम हार गये । आज कल की तरह नहीं था कि सत्य को पकड़ेगे ही नहीं । भारवि की प्रशंसा चारों ओर फैल गई । शास्त्रार्थ में जीत कर घर में आया । मां ने बडा प्यार किया । पिता ने भी प्यार किया । सब ने प्रशंसा की पर पिता ने प्रशंसा नहीं की । बेटे को क्रोध आ गया कि पिता हमारे ऐश्वर्य को देखना नहीं चाहते । मन मे क्रोध की वृत्तिबन गई । क्रोध बढ़ता ही गया । यहाँ तक कि पिता को मारने के लिए तैयार हो गया । एक दिन डण्डा हाथ लेकर दरवाजे पर खड़ा हो गया कि पिता बाहर निकलेंगे तो सिर फोड़ दुंगा । अन्दर माता पिता बात कर रहे थे । मां ने पिता से कहा कि लड़के की सब प्रशंसा करते है पर तुम इसकी प्रशंसा नहीं करते सारी दुनिया इसकी प्रशंसा करती है । तुम क्यों नहीं करते । थोड़ी तो करनी चाहिए । योग्य बेटा है,बुढा कहता है मैं बाप हूं कि सारी दुनियाँ बाप है? मैं यदि इसकी प्रशंसा करने लगुंगा तो बेटा आगे नहीं बढ़ेगा । मैं इसलिए इसकी प्रशंसा नहीं कर रहा कि बेटा और आगे बढ़े ।

आदमी जीवन में जितनी उन्नति करता है क्या उतनी ही होती है ? क्या उतना ही ज्ञान है ? ज्ञान क्या और नहीं है जितना हम जीवन में पकड़ते हे? जिज्ञासु ज्ञान की सूक्ष्म भूमि में उत्तरोत्तर आगे बढ़ता है । जैसे कोई धनी

व्यक्ति और अधिक धन कमाने की इच्छा करता है। ऐसे ही विद्वान को, विवेकी को आगे २ बढ़ाना चाहिए। ज्ञान का अन्त नहीं मानना चाहिए। जितनी सूक्ष्म जिज्ञासा से आगे बढ़ोगे उतना तुम्हारा ज्ञान बढ़ता जाएगा मैं चाहता हुँ कि बेटा और आगे बढ़े। जितना समझ गया है उससे भी ज्यादा विद्वान बने। बेटा हाथ का डण्डा फैंक कर पिता के चरणों में गिर गया। आपके हृदय में इतने ऊँचे विचार है। इन भावों को मैं नहीं समझ पाया। मैं बड़ा पापी हुँ। आपके गूढ़ भावको नहीं समझ सका। पिता ने सिर हाथ फेरा।

यह अहंकारादि दोष आ जाते है। बल का अहंकार, बुद्धि का अहंकार ज्ञान का अहंकार। इसलिए भगवान कहते हे :-

'अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रह' परिग्रह, गृह्णाति परिग्रह। यह जो भूत हैं इन भूतों को हम वश में करते जाते हे। जितनी पृथ्वी मिल गई उतनी पृथ्वी से संतोष नहीं। जितना जल मिल गया उतने जल से संतोष नहीं। आकाश भी कवर (cover) कर लिया त्याग तो किया नहीं। 'विमुच्य निर्मम:शान्तो: ब्रह्मभूयाय कल्पते' विवेक शील इन दोषों से पीछे हटे तब इस में ब्रह्म भाव आएगा। 'ब्रह्मभूयाय कल्पते' यह ब्रह्म भाव में आ जाएगा। इसलिए श्रुति ने स्पष्ट किया '' यस्मिन द्यौ: पृथ्वी चान्तरिक्षम् '' जिसके अन्दर यह पृथ्वी, यह अन्तरिक्ष, यह द्यौ, सूर्य के ऊपर का मण्डल द्यौ लोक है। 'मन: प्राणैश्च देखो श्रुति क्या कहती है, इस ब्राह्माण्ड की जो आत्मा है उसीने तुम्हारे मन और प्राण को पकड़ा है। मन और प्राण को पकड़ने से इस में जीव भाव आ गया। तब यह जन्म मरण वाला हो गया। संसारी कहलाने लगा। यद्यपि जन्म मरण मनका ही हुआ। मन ने शरीर को पकडा तो जन्म, मन ने शरीरको छोड़ा तो मरण। किन्तु इसका आरोप चेतन में हो रहा हे। अपने स्वरूप में मन भी नहीं मरता। केवल इन्द्रियों से, शरीर से वियोग ही मरण हे। दूसरे शरीर को पकड़ लेना हीं ईसका जन्म है। एक गुफा से निकला दूसरी गुफा में घुस गया। जैसे जानवर जंगल मे शिकारी के आने पर गुफा मे छुप जाता है। यह जीव भी एक शरीर से दूसरे शरीर मे घुस जाता है। यही जन्म मरण है।

यह जीव भाव कब निवृत्त होगी जब यह एक आत्मा को जानेगा ''तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या'' यह जो विश्वात्मा है, सारे ब्रह्माण्ड की जो

आत्मा है । इसको जानेगा । अल्प दृष्टि में राग द्वेषादि है अल्प दृष्टि से राग द्वेषादि दृष्टि से होने वाले कर्म भी रागद्वेष वाले ही होंगे । इस से धर्माऽधर्म हो रहा है । इसके बन्धन मे यह जन्म मरण चल रहा है । जब तुम एक विश्वात्मा को जान जाओगे, उसमें जब तुम्हारा मन स्थिर हो जाएगा तो राग द्वेष निवृत्त हो जाएगा । विश्वात्मा मे मन की स्थिति होने से राग द्वेष हट गया तो इनके अधीन होने वाले जो कर्म हैं वो भी समाप्त हो जाएगें अब जो कर्म होगें वो शान्त कर्म होंगे । शांत अनवद्य । अनवद्य शब्द का अर्थ है । अनिन्द्य कर्म । निंद्य कर्म है पापादि । दूसरे को दुःख देना । अन्याय करना । अनिंद्य कर्म किसी को दुख नहीं देंगे,; पीड़ा नहीं पहुँचाएँगे । ऐसे शान्त कर्म पुण्य की बृद्धि करेंगे जो तुम्हारे मोक्ष का हेतु हो जाएगा । तुम्हे मोक्ष की ओर ले जाएंगे । ज्ञान मे सहायक होंगे ।

"तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या
वाचो विमुञ्चथामृतस्यैष सेतु"

उपनिषद का मंत्र सावधान करता है । जगत का जीवन कोई दूसरा नहीं है । जो तुम्हारा जीवन है वही जगत का जीवन है । आकाशो वै नामरूपयो निर्वहिता'आकाश रूप जो ब्रह्म, है यही नाम रूप का आधार है।आकाश के समान व्यापक जो सत्‌चित् आनन्द स्वरूप ब्रह्म है, यही नाम रूप को व्यवस्थित करता है । यही नाम रूपका आधार । 'अन्य वाचो बिमुञ्चथ' जिस वाणी के द्वारा केवल मनोरंजन हो रहा है, मन प्रसन्न हो रहा है, जैसे गल्प कथाएं उपन्यासादि जो होते हैं उनसे मनोरंजन तो हो जाता है । किन्तु मन को कुछ मिलता नहीं अन्दर कुछ नहीं मिलता जैसे का तैसा रह जाता है । मंत्र कहता है यह जो गल्प कथाएँ हैं यह तेरे मनको बिगाड़ने का सामर्थ्य तो रखती हैं । जिस वासना से यह लिखी गई हैं उसका इन्जेक्शन तुम्हारे मन में लग जाएगा । इसलिए ऐसी वाणी सुनो जो चित्त को शान्त करे ।

व्यावहारिक जीवन में कभी २ चित्त में क्षोभ होता है तो गीता आदि पढ़ने से शान्ति आती है किन्तु उपन्यासादि पढ़ने से अशान्ति ही बढ़ती है । अभिप्राय यह है कि शब्द जिस हृदय से निकलते हैं वह हृदय कितना निर्मल हैं, कितना ऊँचा है, उतना ही वह अपने मनको प्रभावित करते हैं । इसीलिए

गीता रामायण आदि पढने से मन को शान्ति मिलती है । अर्जुन कुरूक्षेत्र के के मैदान इधर उधर देखता है । दोनों ओर देखा तो समझा, मेरा ही वंश मरने के लिए खड़ा है । क्या मैं इन सबको मारने के लिए ही वीर बना हुँ ? अर्जुन को शोक हो गया । शोक को दूर करने के लिए भागवान ने उसे आत्मा का बोध दिया । जिनको तू सोचता है कि मैं मारूँगा तो यह मर जाएँगे । कोई नहीं मरेगा कोई मरने वाला नहीं । 'अशोच्यानन्वशोचस्त्वं' जिनके बारे में शोक नहीं करना चहिए, उनके तू शोक करता है । अशोच्य क्या है ? आत्मा का कभी मरण नहीं । भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य आदि सबको आत्म रूप से देखो । आत्मा अमर है, जो अशोच्य है उनका तू शोक कर रहा है । आत्मा रूप से न किसी का जन्म है न मृत्यु । न कोई मारने वाला है न कोई मरने वाला । 'प्रज्ञावादांश्च भाषसे' बात पंडितों जैसी करता है और शोक करता है । भगवान कहते हैं बात तो तू बड़े विद्वानों की तरह करता है और मूर्खों की तरह रोता है ।

गतासू जो तत्त्व ज्ञानी हैं वे 'गतासूनगतासूंश्च' 'असु' नाम है प्राण का, जिनके प्राण निकल गये हैं उनका भी शोक नहीं करते और जिनके प्राण अभी नहीं निकले हैं उनका भी शोक नहीं करते । विवेकशील शोक नहीं करते । पडित शोक नहीं करते ।

नैनं छिन्दन्ति शास्त्राणि नैनं दहतिपावक; यह जो अन्तरात्मा है, इसके ऊपर कितने शस्त्र क्यों न चले, इस आत्माका छेदन नहीं कर सकते । दूसरे शब्दों में समझो कि आज जो विश्व में बड़े २ शस्त्र हैं वह इन चार भूतों से बने हैं, पृथ्वी जल तेज वायु । यह सारों भूत सृजक भी हैं, संहारक भी हैं सृजक माने सृष्टि करने वाले भी हैं, संहार माने नाश करने वाले भी हैं । आज का बुद्धिमान संहारक शक्ति को ही निकाल रहा है, सृजन शक्ति को नहीं निकाल रहा । सृजक शक्ति को नहीं ले रहा ।

आज सारा संसार भयभीत है।जिस के पास बड़े २ संहारक यंत्र हैं वह वह भी डर रहा है, जिसके पास नहीं हैं वह भी डर रहा है । तुम्हारे शरीर में भी चारों शक्तियाँ हैं। आत्मा पर किसी का प्रभाव नहीं । इन चारों भूतों का इस आत्मा पर कोई प्रभाव नहीं । भूतों से बने जो संहारक यंत्र हैं, अग्नि का काम है जला देना, जल का काम है सड़ा देना, वायु का काम है शोषण करना सुखा

देना किन्तु आत्मा पर इन में से किसी का भी प्रभाव नहीं ऐसी तुम्हारी वो अन्तरात्मा है। सत्‌चित् आनन्द स्वरूप जो यह अन्तरात्मा है मुमुक्षु उसको समझे।

मंत्र कहता है इस हृदयाकाश के अन्दर जो मन है इसमे जो चेतन अभिव्यक्त हुआ उतने अंश में यह जीव हो गया। मन को पकड कर यह जीव हो गया मन ने जब शरीर को पकड़ा तो मनुष्य हो गया। यह शरीर देखो चेतन से ओतप्रोत है। मैं बच्चा हुं, मैं जवान हुं, मैं बुढा हुं, पुरूष हुं, स्त्री हुं, सारी अवस्थाओं का आरोप इस चेतन में हो रहा है। किन्तु ठीक से देखो तो शरीर की कौन सी अवस्था उसकी है ? न बच्चा, न जवान, न बुढा। जैसे बुर्के का रंग। पैरो के पास काला, उसके ऊपर सफेद उसके ऊपर लाल, उसके ऊपर गुलाबी। जहाँ से देखा वैसा ही वर्णन कर दिया। इसी तरह शरीर की अवस्था से अपना स्वरूप मान लिया। बचपन से देखा तो बच्चा मान लिया, कुमारावस्था को देखा तो कुमार मान लिया, युवावस्था को देखा तो जवान कहने लगे। बुर्के को हटा दिया तब कौन ? इसी तरह स्थूल शरीर तुम्हारा लक्षण नहीं। यह थोड़े समय के लिए है। मृत्यु देवता इसे हटा देता है, सब कहते हैं मर गया मर गया।

मनोमयः प्राण शरीर नेता, प्रतिष्ठितोऽन्ने हृदयं संनिधाय, तद्विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीरा, आनन्द रूपममृतं यद् विभाति ॥ मंत्र कहता है यह परमात्मा मन में व्याप्त होने के कारण मनोमय है, सबके प्राण और शरीर का नेता है। 'शरीरात् शरीरन्तरम् नयति' प्राण इस वर्तमान शरीर को लेकर चल रहा है। मृत्यु के समय यह प्राण इसको खींच कर (सूक्ष्म शरीर को) दूसरे शरीर में ले जाएगा। 'शरीर नेता' कहा 'हृदयं संनिधाय' हृत्कमल का आश्रय लेकर इस स्थूल शरीर में, अन्नमय कोश में प्रतिष्ठित है। 'विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीराः' मुमुक्षु को श्रुति धीर कह रही है। जो दुख में रोवे नहीं सुख में हंसे नहीं वह धीर। छोटे बच्चे की तरह मां ने जरा आंख लाल की तो रोने लगा पर बड़ा होने पर मार खाने पर भी नहीं रोता। सहनशील हो गया। शोक मोहको अपने हृदय में जमने नहीं देवे वह धीर। धीर पुरूष, विवेकी पुरूष इस आत्मा के ब्रह्मभाव का दर्शन करते हैं। आकाश के समान सर्वत्र प्रकाशित

यह ब्रह्म ही इस विश्व का आधार है मुमुक्षु गुरु का आश्रय पकड़ कर अपने हृदयाकाश में इस ब्रह्म का साक्षात्कार करे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१३-४-८८

प्रवचन सं०-५

"ॐ तं चेद्ब्रूयुर्यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे सर्वं समाहितं सर्वाणि च भूतानि सर्वे च कामा यदैतज्जरा वाप्नोति प्रध्वंसते वा किं ततोऽतिशिष्यत इति ।।"

(छान्दो.८-१-४)

मंत्र कहता है कि बुद्धिमान इस परमात्मा से मिलने किसी देश में नहीं जाए, किसी काल की प्रतीक्षा नहीं करे । वह परमात्मा सर्व देश में और सर्व काल में है । उससे मिलने के लिए अपने हृदयाकाश में प्रवेश करे हृदय को दहराकाश कह रहे हैं । इस दहराकाश को श्रुति राजमहल कह रही है जैसे राजमहल में बहुत से लोग काम करने वाले होते हैं इस दहराकाश में बहुत सी इन्द्रियाँ नौकरों की तरह काम करती हैं । इन्द्रिय गण तुम्हारे नौकर हैं । इस हृदयाकाश में प्रवेश करने पर सत्चित् आनन्द स्वरूप जो परमात्मा है वह तुम्हें मिलेगा । इस बात को पहले समझा कर आए हैं शिष्य भी चतुर होना चाहिए । केवल सत् वचन से काम नहीं चलता । चेला प्रश्न करता है कि गुरुजी आप कहते है, 'दहरं पुण्डरीकं वेश्म . . . . अन्वेष्टव्यं' दहराकाश जो राजमहल की तरह है उसमें प्रवेश करो । किन्तु वहाँ किसी की जिज्ञासा करें ? किस की खोज करें ? अन्वेषण करें ? गुरु जी हृदय के अन्दर तो कुछ दीखता ही नहीं। अपने अनुभव से समझो जैसे आँख बंद कर के ध्यान में बैठें तो मालुम पड़ता है कि वहाँ शून्य है ।

'दहरं पुण्डरीकं न किंचित् विद्यते' वहाँ कुछ भी मालुम नहीं पड़ता । किस की खोज करें ? तत्त्ववेत्ता के पास जाकर उसको जानने की इच्छा करो, वहाँ तो कुछ भी नहीं है । जिज्ञासु शिष्य जब इस प्रकार प्रश्न करे तब ब्रह्मवेत्ता गुरु उस ब्रह्म का उपदेश करे । देखो श्रुति सारे रास्ते साफ करती है ।

'स ब्रूयात' ब्रह्मवेत्ता आचार्य जिज्ञासु शिष्य को इस प्रकार समझावे । यावान् बाह्याकाश तावान्' हृदयाकाश प्रेम से उसको समझाना चाहिए । इस रहस्य को उसे समझाओ कि जितना व्यापक यह बाह्याकाश है उतना ही बड़ा यह हृदयाकाश । कहने का अभिप्राय यह है कि इस हृदयाकाश में रहने वाला ब्रह्म भी व्यापक है । 'हृदयं पुण्डरीकं वेश्म' इस दहराकाश में मन और बुद्धि रहते हैं । यह जो अन्तःकरण है यह बड़ा ही स्वच्छ है । बड़ा निर्मल है । जैसे अपने अनुभव के लिए समझो इस पृथ्वी को रत्नगर्भा कहते हैं । इसके अन्दर पेड़ पौधे हैं । पत्थर हैं, हीरे भी हैं । हीरा अन्य पत्थरों की तरह नहीं है । यह स्वच्छ है । पारदर्शी है । इसी तरह इस माया भगबती की सृष्टि में तुम्हारा मन बुद्धि हीरे की तरह स्वच्छ है । जो स्वच्छ होगा, अति निर्मल होगा, उस में वस्तु का सही दर्शन होगा । जैसे शीशे के सामने खड़े हो जाओ तो तुम्हारा सारा शरीर जैसे का तैसा दीखता है । स्वच्छ वस्तु के अन्दर वस्तु को बोध होता है । शीशा भी तो एक प्रकार से मिट्टी ही है किन्तु कितना पवित्र है ?

दीवार के सामने खड़ें हो जाओगे तो छाया तो दीखेगी पर स्पष्ट कुछ दीखेगा नहीं । शीशे के सामने स्पष्ट बोध होगा । दूसरी दृष्टि से समझो । तालाब हो तो पोखरा कहते है न, निर्मल जल हो, तुम्हारा शरीर उस में स्वच्छ दीखेगा । जेसे इसके किनारे पर खड़े होने से तुम्हारा शरीर उस स्वच्छ जल के अन्दर स्पष्ट दीखेगा स्वच्छ शीशे के सामने खड़े होने पर तुम्हारा शरीर उस शीशे में स्पष्ट दीखेगा । इसी प्रकार स्वच्छ बुद्धि में ध्यान करने वाले को वह परमात्मा दीखता है । 'अत्र ब्रह्म उपलभ्यते' माने महान परमात्मा उस में दीखता है । मन और बुद्धि शब्द दो हैं किन्तु अर्थ एक है । विशुद्ध बुद्धि के अन्दर स्वरूप का बोध होता है । तत्त्व साक्षात्कार होगा । क्या बोध होगा ? 'अयमहमस्मि' नाहं देहादिसंघातः' । संघात शब्द का अर्थ है हड्डी मांस का ढेर नहीं हूं । यह देह इन्द्रियाँ मैं नहीं हूं । मैं इनसे न्यारा हुं ।' आत्मैवाहमस्मि' 'ब्रह्मैवाहमस्मि' । ऐसा बोध होगा मुमुक्षु को । ऐसा तत्त्व बोध होगा ।

गीता में भगवान कहते हैं 'योगयुक्तो विशुद्धात्मा' ब्रह्माकार वृत्ति का नाम योग है । आज कल योग का प्रचार बहुत हो रहा है । आसन आदि सिखा दिए, यह योग नहीं, योग का साधन है । यह शरीर की exercise के लिए अच्छा है । health के लिए अच्छा है । जो शरीर से अधिक काम नहीं करते

उनके लिए अच्छा है किन्तु 'योगः ब्रह्मात्मनि समाधानम्'। योग का अर्थ है समाधि और समाधि का अर्थ है मन निश्चल हो कर ब्रह्माकार वृत्ति में आ जाना। यह आत्मा ब्रह्म है ऐसा निश्चय हो जाना। मुमुक्षु को विवेक वैराग्यादि साधन युक्त होना चाहिए। सोचो जिस संसार में हम आए हैं इस संसार में हम एक नहीं करोड़ों बार आ चुके है और इस संसार के जिन भोगों को आज हम ले रहे हैं उनको करोड़ों बार ले चुके हैं। किन्तु इन भोगों से कोई तृप्ति हुई नहीं। जैसे का तैसा। जैसे अपने अनुभव के लिए समझो कि जन्म से अब तक इस जीभ से कितना घी तेल चला गया पेट में किन्तु जीभ पर कुछ है? जितना मर्जी है घी तेल खाओ पर जीभ जैसी की तैसी ही रहती है। उंगली में जरा सा घी या तेल मल दो तो थोड़ी देर तक कुछ मालुम होगा पर जीभ पर कुछ नहीं। ऐसे ही इन इन्द्रियों से कितने ही भोग लो यह जैसी की तैसी। इस लिए मुमुक्षु के लिए कहा कि वह विवेक वैराग्य को मोक्ष का साधन बनाए।

भाग्य से पति पत्नी बेटा बेटी बने हैं तो एक दूसरे की आत्मा का उत्कर्ष करो। उत्थान करो। मिलने का अभिप्राय यह है कि एक दूसरे की आत्मा का उत्कर्ष करो। जैसे स्टेशन पर विभिन्न दिशाओं से आए हुए यात्री मिलते हैं, प्यार से बोलते भी हैं पर गाड़ी आ जाने पर सब अपने २ रास्ते चले जाते हैं। आंख बन्द कर के देखो यह तुम्हारी गाड़ी कहाँ से आई है? कहाँ जाएगी? यह जो तुम्हारी पत्नी की गाड़ी है यह कहाँ जाएजी? कहाँ से आई है? यह घर स्टेशन नहीं तो और क्या है? सब स्टेशन के मुसाफिर है। किन्तु प्यारे मुसाफिर है। अगर हम एक दूसरे की आत्मा को मोक्ष की ओर उठाते है तो प्यारे मुसाफिर हैं। अगर एक दूसरे की आत्मा को ऊपर नहीं उठाते, कूएँ में ही गिराते हैं तो प्यारे मुसाफिर नहीं, दुश्मन से भी खराब हैं। दुश्मन तो एक बार मारता है पर यह भोग अनन्त बार मारते है। इसलिए विवेकशील मुमुक्षु को इस प्रकार समझना चाहिए।

हृदयाकाश में प्रवेश करने के लिए ध्यान की वृत्ति का नाम योग है। 'योगयुक्तो विशुद्धात्मा' इन का मन विशुद्ध है। विशुद्ध मन का लक्षण है, निर्मल शान्त मन। जिस को किसी की बात पर जल्दी गुस्सा नहीं आता। बोलेगा तो वही जो पास रहता है, किन्तु वह मुमुक्षु मन मे क्रोध नहीं आने देता। जैसे

कमल का पत्ता अपने ऊपर पानी नहीं ठहराता। पत्ते पर पानी गिरा किन्तु ठहरा नहीं। लहर आई और चली गई। उसको कहते हैं 'योगयुक्तो विशुद्धात्मा 'विजितात्मा' माने वशीकृत आत्मा। मन तुम्हारे वश में है। जिस में शोक नहीं, लोभ नहीं ठहरता। क्रोध नहीं ठहरता और जिस में चित्त के नाना विकार नहीं ठहरते। आते हैं किन्तु ठहराते नहीं। 'विजितात्मा जितेन्द्रिय' जितेन्दिय" उसको कहते है जिस की इन्द्रियाँ वश में। आंख जो चाहेगी वो देखना है। या तुम जो चाहोगे वो आंख देखेगी? देखना तुम ने है। विवेक से विचार करो। तुम जो चाहो वो तुम्हारी आंख देखे। तुम जो चाहो वो तुम्हारे कान सुने, तब तुम जितेन्द्रिय हो। मन की स्थिति जब अच्छी होती है तो इन्द्रिया भी अच्छी। तुम ने जो चाहा इन्द्रियो ने वो किया तब तुम जितेन्द्रिय हुए कि इन्द्रियो ने जो चाहा वो तुमने किया? तब तो इन्द्रियों ने तुम को जीत लिया। तब तुम जितेन्द्रिय नहीं हो। जितेन्द्रिय तो तब हो जब तुम ने इन्द्रियों को जीत लिया। कर्ण देवता ने कहा लता मंगेशकर या आशा भोंसले के गाने सुनने हैं स्वर तो उनका मीठा है किन्तु स्वर लहरी में ही बह गये, अन्त में कुछ नहीं मिलेगा। मिलेगा तो शोक। किन्तु यदि उस को सुना जिस के सुनने से सब कुछ पा लिया।

यह बताओ कि शरीर के समझने से आत्मा को समझोगे कि आत्मा को समझने से शरीर को समझोगे? आत्मा को भूल गये तो शरीर को क्या समझोगे? उसको कहते है बेहोश। जो बेहोश है उसने कभी अपने शरीर से प्यार किया? घर में भी नहीं रखेंगे, हास्पिटल में रखेंगे। यह वेदों की वाणी है, गप्प नहीं। यह तो नावल या कहानी नहीं। "न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं" मंत्र कितना साफ कहता है ' न तत्र सूर्यो भाति' हे सोम्य सूर्य भी इस आत्मा का प्रकाश नहीं कर सकता। महान प्रकाशशील सूर्थ इस आत्मा को प्रकाशित नहीं कर सकता। सूर्य तो जड़ पदार्थो को प्रकाशित करेगा। जड़ पदार्थों के अंधेरे को दूर कर देता है। जितने भी नक्षत्र और तारे है तुम्हारे इस अज्ञान रूपी अन्धेरे को दूर नहीं कर सकते। चन्द्रमा यह तारागण जितने भी दीखते है इन में से कोई भी इस आत्मा को प्रकाशित नहीं करेगा। 'तमेव भान्तमनुभाति सर्वं' श्रुति कहती है कि जब इस आत्मा का 'अहं' रूप से भान होगा तो 'इदं'

का भीं भान होगा । 'मैं हूँ' का भान पहले होता है तब शरीर का भान होता है।

गाढ़ निद्रा में सो जाओ । प्रातः उठते ही मुँह पर हाथ फेरते है । बगल में बच्चा भी सोया है । पहले अपने को देखते हो, बाद में बच्चे को पहले 'अहं' रूप से अपने को देखते हो, तब दूसरे को देखोगे । जिसने अपने को नही देखा वह बच्चे को कैसे देख लेगा ? इस लिए मंत्र स्पष्ट करता है तमेव भान्तंमनुभाति सर्वं' उसके भान होने से ही सब भासता है । यह सारा ब्रह्माण्ड उस के प्रकाश से ही प्रकाशित है । ''तस्य भासा सर्वनिदं विभाति'' इस लिए बुद्धिमान मनुष्य जीवन के जितने भी भोग हैं । जिस भोग का नाम सुख और दुःख है । सुख दुःख साक्षात्कारो भोगः जीवन में कभी दुःख आता है कभी सुख आता है । जैसे समझो बड़े २ बुद्धिमान आज भी है, जैसे द्वापर में थे, सतयुग में थे । त्रेता में थे, आज भी कमी नहीं है । विज्ञान का इतना चमत्कार आप के सामने हैं यह उन की बुद्धि का विलास है । विश्व के प्राण को मुट्ठी में लें कर बैठे हैं , ऐसे २ महान विद्वान है, किन्तु जिस समय दुःख आता है उस समय डाक्टर को हाथ जोडते है । इस दुःख रूपी दैत्य को मारने के लिए कोई बम नहीं बना । प्राणियों की हत्या के लिए तो बम बन चुका हैं । सुख में तो सब मस्त रहते है, पर दुःख कोई नहीं चाहता । किन्तु दुःख जब आता है, उन की छाती पर चढ़ जाता है उस समय वो ना नहीं कर सकते दुःख को दूर करने के लिए कौन सा इन्जैक्शन है । यह कर्म भोग है । कर्म भोग ज्ञानी को भी आएगा, अज्ञानी को भी आएगा । इस अंश में दोनों समान हैं । ज्ञानी का कर्म भोग आएगा तो ज्ञानी उसको चुप चाप सहन करेगा । अपना कर्म भोग समझ कर शान्ति पूर्वक उसको सहन करेगा । शान्तमना हो कर रहेगा । अज्ञानी को जब दुःख आएगा, वह रोएगा, चिल्लाएगा ।

एक बड़े विद्वान संत पेड़ के नीचे बैठे रहते थे । चोट लग गई । घाव हो गया । इतनी स्थिर बुद्धि थी कि शरीर को देखते ही नही । घाव में कीड़े पड़ गये । घाव बढ़ता गया । प्रेमी भक्तो की कमी नहीं थी । चोर के भी जब मित्र बन जाते है तो महान ज्ञानी के मित्रों की, भक्तों की; प्रिय जनों की कमी नहीं थी । सब कहते है गुरु जी, दवाई लगाओ, पर वह कहते है मैं इन कीड़ों का भोग क्यों बन्द करुँ । यह इन जीवों का भोग है । भक्तों ने बहुत

समझाने की कोशिश की पर वे नहीं माने। भक्तों ने सोचा क्या करें। कौन समझावे दूसरे संत के पास गये। प्रार्थना किया भगवान आप चल कर हमारे गुरु जी को समझाओ तो मान जाएंगे। संत ने पत्र लिख कर दिया कि जिस धर्मशाला में रहो उस की सफाई भी करते रहो। यह शरीर धर्मशाला है यदि तुम उस में झाड़ू नहीं लगाते तो दूसरों को तो लगाने दो। यह संत पत्र पढ़ कर बोले कितनी धर्मशालाएँ छोड़ कर आए हो? उनकी ओर देखो, वो साफ है कि गन्दी? वो सब गन्दी पड़ी है। हम इस की सफाई के लिए थोड़े आए है।

कर्म भोग आएगा, ज्ञानी शान्ति से भोगेगा। निवृत्ति भी जरूरी है। रोग की दवाई भी खाओ। अमुक सीमा तक तुम को पुरुषार्थ करने के लिए कहा है। कहाँ तक तुमको पुरुषार्थ करना है? जहाँ तक तुमको भूख लगती है, प्यास लगती है, सुख दुःख का भान होता है। अहंकार है, वहाँ तक तुमको शरीर की रक्षा भी करनी पड़ेगी। पर जब तुम देहाहंकार से बाहर हो गये, जैसे गाढ निद्रा में देहाहंकार से बाहर हो जाता है, गाढ़ निद्रा में देखो; चलते २ पेड़ के नीचे लेटे सो गये, कोबरा छाती से निकल गया पर तुम्हे दुःख नही होगा। भय नही होगा, जब सर्प की दृष्टि होगी तब भय होगा। जब देह की दृष्टि ही नहीं तो सर्प की दृष्टि कहाँ से होगी? इसी प्रकार निर्विकल्प समाधि में जिस की स्थिति है, जिसका मन समाधि में लीन हो चुका है, वह दुनियां को दीखेगा कि वह सुन रहे हैं, बोल रहे है, देख रहे है, किन्तु वह यह सब कुछ करता हुआ भी निर्विकल्प है। उसका मन समाधि में स्थित है। "यत्र २ मनोयाति तत्र २ समाधय:" ऐसे ज्ञानवान का मन जहाँ २ भी जाएगा वहीं समाधिस्थ है। समाधि जहाँ २ है तत्र २ ब्रह्मदर्शन है। उसकी दृष्टि में दूसरा कुछ है ही नही।

अपने जीवन में समझो। इस शरीर में जब तक बैठे है हम एक दूसरे को देखते हैं। पति पत्नी को देखता है पत्नी पति को देखती है। जीवन काल में हम एक दूसरे को देखते हैं। यह बताओ, यह शरीर दीखता है कि नही? इस दृष्टि में देखते हुए भी शरीर नहीं दीखता। वह आत्मा ही शरीर के आकार मे भासता है। सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा ही शरीर के आकार मे भास रहा है। जब प्राणात्मा शरीर को छोड़ देता है उस समय यह शरीर अपने असली

स्वरूप में दीखा । तो सोचो उस समय यह शरीर कितना भयंकर है । जिस शरीर से प्यार था, जिस शरीर में मोह होता था, अब उस मुर्दे में मोह होता है क्या ? प्यार होता है ? कोई देखता है उसको ? मालूम क्या पड़ा, कि हम उसी को देखते रहे, उसी से प्यार करते रहे, पर समझे नहीं । जीवन काल में शरीर को देखा ही नहीं । यही अज्ञान है । सब कुछ उस से करते हैं पर समझे कुछ नहीं । जैसे अन्धी मां है । उसका पुत्र सुन्दर है । गोद मे लेकर प्यार भी करती है पर उसे देख नहीं पाती । जीवन में कभी उसे देख नहीं पायेगी । अज्ञानी भी इस अन्धी मां की तरह उसके साथ रहता है । उसी के साथ उठता बैठता है । उसी के साथ हंसता बोलता है । उसी के साथ खाता पीता है किन्तु देखता नहीं । उस अन्धी मां की तरह । देखा कब जब वह चला गया । तब क्या दीखा हड्डी मांस का ढेर । मुर्दे के पास किसी को अकेला बैठने को कहो तो कहेगा मुर्दे के पास अकेले कैसे बैठेंगे ? अब बैठने को तैयार नहीं । जीवन काल में जिस के पास अकेला बैठने में आनन्द आता था । तो सोचो वह कौन था जिस के साथ हम बैठते रहे ? हम भी कौन हैं जो बैठते रहे उस के पास ? क्या शरीर है ? इस लिए मुमुक्षु आत्मा की ओर ध्यान देवे । उस की ओर ध्यान देने के लिए कहा 'हृदयं पुण्डरीकं वेश्म' दहराकाश में मन बुद्धि के अन्दर सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा भास रहा है । इस चेतनात्मा की ओर मन की वृत्ति आनी चाहिए ।

ब्रह्माकार वृत्ति बनेगी तो ब्रह्म का भान होगा । 'तद् ब्रह्मोपलभ्यते' उस वृत्ति की रक्षा के लिए विवेक और वैराग्य रूपी साधन को पकड़ा रहे । " योग युक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रिय, सर्वभूतात्म भूतात्मा, कुर्वन्नपि न लिप्यते ।" 'सर्व भूतात्मा' माने सम्पूर्ण भूतों का आत्मा जिसका आत्मा है वह 'कुर्वन्नपि न लिप्यते । वह इस लोक में यद्यपि कर्म भी करता है किन्तु उन से लिपायमान नही होता । बड़े २ ज्ञानियों ने बड़े २ कर्म किए है । प्रत्यक्ष समझो, आद्यगुरु श्री शंकराचार्य जी , जिनकी द्वादश शताब्दी चल रही है । शत को यहाँ भी समारोह मनाएँगे । वह अपने समय के महान दार्शनिक थे । कितने महान विचार उन्हों ने दिए । आज सारे संसार के प्राणी मुक्तकंठ से उन की प्रशंसा कर रहे हैं । मनुष्य यदि दुःखों से छुटकारा पा सकता है तो

केवल इन विचारों को पकड़ने से ही पा सकता है। अद्वैत में मन को स्थिर करोगे तो द्वैत तुम्हें तंग नही करेगा। मेरा तेरा जहाँ होगा वहाँ द्वेष भी होगा, घृणा भी होगी। इर्ष्या भी होगी। यद्यपि व्यवहार काल में अमुक मात्रा में घृणा होती है, इर्ष्या भी होती है, पर यदि तुम व्यवहार काल और परमार्थ को एक ही कर डालोगे तो तुम्हारी घृणा कभी वृत्त नहीं होगी। घृणा में जन्मे, राग द्वेष में जन्मे यह तो ठीक है पर अब भी यदि यह न गया तो कब जाएगा।

यह तो ठीक है कि वृक्ष में जब फल लगते हैं तो कच्चे ही होते है पर जब वह वृक्ष पका कर फल देता है तब मीठें होते हैं कि नहीं। इसी तरह ज्ञान में आने पर ही जीवन में मिठास आती है। ज्ञान में आना ही पड़ेगा नहीं तो शान्ति नहीं आएगी। 'नास्ति बुद्धि भगवान कहते है जिसकी बुद्धि योग युक्त नहीं ज्ञान युक्त नहीं। सत्‌चित् आनन्द से युक्त नहीं, उसकी बुद्धि है ही नहीं जिस की वह भावना नही बनी "न चायुक्तस्यभावना" आत्म भावना नहीं बनी उसको शान्ति कहाँ से मिलेगी? इसलिए मुमुक्षु को, विवेकशील को आत्मा में प्रवेश करना चाहिए। जो परमात्म भाव में आया ही नहीं, ध्यान की वृत्ति बनी ही नहीं जिस की उसे संसार के भोग तो मिल जाते हैं, मन थोड़ी देर के लिए शान्त हो जाता है, पर फिर वही का वही। क्या हम वृक्ष से भी गये बीते है।

इस बात पर कल और विचार करेंगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१४-४-८८

प्रवचन सं०-६

"ॐ स ब्रूयान्नास्य जरयैतज्जीर्यते वंधेनास्य हन्यत एतत्-सत्यंब्रह्मपुरमस्मिन्कामाः समाहिता एष आत्मापहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसङ्कल्पो यथा ह्येवेह प्रजा अन्वाविशन्ति यथानुशासनं यं यमन्तमभिकामा भवन्ति यं जनपदं यं क्षेत्रभागं तं तमेवोपजीवन्ति ।।"

(छान्दो.८-१-५)

विचार आया । इस बात को कहा कि यह जो दहराकाश है माने हृदयाकाश । हृदय अति अल्प है इस लिए यह दहराकाश भी अति अल्प है । इस दहराकाश में अन्तःकरण की स्थिति है । अन्तःकरण जो इस आत्मा के अति समीप है । जो आत्मा के सुख दुःख का अति समीप साधन है, उसे अन्तः करण कहते है । इन इन्द्रियों को बहि करण कहा आँख बाहर के रूप को खींचेगी । आँख यदि रूप को नही खींचे तो तुम रूप देख नहीं सकते । मन से कल्पना करते रहो पर रूप कितना सुन्दर है, यह ज्ञान तुम्हें नहीं हो सकता । शब्द कितना ही सुन्दर है पर यदि कान ने इस सुन्दर शब्द को नहीं पकड़ा तो तुम शब्द सुन नहीं सकते शब्द का ज्ञान होगा नहीं । यह बाहर के साधन हैं बाहर की वस्तु को पकड़ेंगे ।

मन बुद्धि अन्तःकरण है । यह आत्मा के अति समीप है । जैसे कोई नौकर राजा के अति समीप होता है । महाराजा आगे पीछे चलता है । विश्वासी नौकर अति समीप रहता है । राजा उसी के हाथ से चीज लेगा । हर एक के हाथ से नहीं लेगा । यह आत्मा तो राजाओं का भी महाराजा है । इसके अति समीप

रहने वाले मन बुद्धि है और यह मन बुद्धि अपने स्वरूप में सत्य हैं। क्योकि सत्त्व प्रधान है। सत्त्व गुण प्रधान होने से इस मन बुद्धि में ध्यान देने से ''विज्ञान ज्योति ब्रह्म अवभास्यत'' विज्ञान ज्योति स्वरूप ब्रह्म का भान मुमुक्षु को होता है। उस का भान होने से सारा कर्म चक्र उसका ''ज्ञानाग्नि सर्वकर्माणि भस्यसात् कुरूते।

गीता में भगवान कहते हैं यह ज्ञान रूपी अग्नि है यह सम्पूर्ण कर्मो को भस्म कर देती है। सम्पूर्ण कर्म का अर्थ यह है कि एक तो क्रियमाण. कर्म है, जो इस जन्म में फल न दे कर अगले जन्म में फल देंगें। इन अगले जन्म में फल देने वाले कर्मों की निवृत्ति जब तक नहीं होगी, जन्म मरण चलता रहेगा। दूसरे संचित कर्म, जो स्टोर भरा पड़ा है इनका भी इस जन्म में फल नहीं मिलता। अगले जन्मों में मिलता रहेगा। जब तक यह संचित कर्म निवृत्त नही होते जन्म मरण का चक्कर नहीं छुटेगा। यह जो ब्रह्म भाव है, हृदय के अन्दर 'आत्मैवाहमस्मि' ब्रह्मैवाहमस्मि' यह जो ब्रह्मानुभूति है, यह ब्रह्मभाव मुमुक्षु के संचित कर्मो को और आगामी कर्मो को नष्ट कर देगी और प्रारब्ध कर्म का फल इस जन्म मे भोग हो रहे हो। वह भोग समाप्त हो जाएँगे। इस प्रकार पुनर्जन्म का कारण कोई कर्म नहीं रहेगा। पुनर्जन्म नही होगा। श्रुति कहती है ''न स पुनरावर्तते, न स पुनरावंतते।'' वह पुनः इस लोक मे नहीं आएगा। क्योंकि उस के निमित्त जो कर्म है, वह नष्ट हो गये है। ऐसा ज्ञानी इस लोक मे पुनः नहीं आएगा।

श्रुति कहती हृदयाकाश कैसा है ? जहाँ ब्रह्म का विज्ञान ज्योति स्वरूप से अनुभव हुआ। ''यावान् बाह्याकाशः तावान् हृदयाकाशः'' बेटा यह ठीक है कि हृदय के सम्बन्ध से यह हृदयाकाश छोटा मालुम पड़ा। किन्तु छोटा मालुम पड़ने पर भी यह छोटा है नहीं। 'यावान् बाह्याकाशः' जितना विशाल यह बाह्याकाश है, उतना ही बड़ा यह हृदयाकाश है। इसका तात्पर्य यह है कि जिस स्वरूप वाला यह बाह्याकाश है, उसी स्वरूप वाला तुम्हारा हृदयाकाश है। और इस हृदयाकाश मे 'ब्रह्म उपलभ्यते' ब्रह्म की उपलब्धि होती है। ब्रह्म का भान होता है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि जैसा हृदयाकाश छोटा है अथवा जैसा यह महाकाश विशाल है, ब्रह्म भी ऐसा ही है। ऐसे आकाश की उपमा नहीं की।

आकाश की उपमा देने का अभिप्राय है कि इस तुम्हारी अन्तरात्मा, ब्रह्म की अन्य कोई उपमा बनती नहीं। किसी वस्तु को किसी दृष्टान्त से तो समझाना पड़ेगा। किन्तु यह जो तुम्हारी आत्मा है इसके समान कोई दृष्टान्त भी नहीं। इस महाकाशको दृष्टान्त के लिए जो पकड़ा, वह इसलिए कि यह महाकाश भूत भौतिक सारे जगत को व्याप्त कर के बैठा है। तो दृष्टान्त व्यापक अर्थ में है किन्तु इस का अर्थ यह नही कि वो आकाश की तरह है।

अन्यत्र श्रुति भगवती आकाश की सृष्टि का वर्णन करती है कि यह परमात्मा आकाश की सृष्टि करता है। मंत्र आया 'य एनमावृत्तम् खं दिवं महींच' येन माने जिस ने इस आकाश को भी आवृत्त किया है व्याप्त किया है इसका अर्थ क्या हुआ? आकाश से छोटा आकाश को आवृत्त कर नहीं सकता। जो आकाश से महान होगा वही आकाश को व्याप्त करेगा। द्यौ लोक को भी इस ने व्याप्त किया। मही नाम पृथ्वी का है, पृथ्वी को भी इस ने व्याप्त किया। इस का अर्थ यह भी समझो, जैसे यह गुलाब का पुष्प है, इस पुष्प में सुन्दर गन्ध कब तक रहेगा? इसका रूप कब तक रहेगा? जब तक रसात्मा इस मे रहेगा। रसात्मा जब इसको छोड़ देता है तो न रस, न रूप, न गन्ध। यह तुम्हारी पृथ्वी जो इतनी सुन्दर लगती है, इतनी प्यारी लगती है। यह अनन्त रसवर्षिणी पृथ्वी, अनन्त प्रकार के रसों की वर्षा करने वाली पृथ्वी। अगर यह मुर्दा हो गई तो? सजीव नहीं रही तो इस में से क्या निकलेगा। बृहदारण्यकोपनिषद में मंत्र आया है " यः पृथिव्यां तिष्ठन् पृथिव्या अन्तरो यं पृथिवी न वेद यस्य पृथिवी शरीरं यः पृथिवीमन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृतः" जो पृथ्वी के अन्दर बैठा है और पृथ्वी से न्यारा है। जिस को पृथ्वी नहीं जानती। पृथ्वी जिसका शरीर बना हुआ है। दृष्टान्त में इस शरीर को पकड़ो। यहाँ जितने भी बैठे है सभी अच्छी उमर को पार कर के आए है, इस शरीर को माल भी खिलाते जा रहे हैं। जरा इससे पुछो, क्यों भाई। तेरे खाने दाने के लिए हम आंख बन्द कर के काले पीले कर्म भी कर जाते है, पर क्या तुम हम को जानते हो? हम कौन है? यह शरीर मौन हो जाएगा। कहेगा. हम तो आप के पालतू गधेड़ हैं। हम आपके स्वरूप का व्याख्यान कैसे करें। जानवरों में एक गधा ही ऐसा जानवर है जो अपने मालिक को नहीं जानता। मालिक ने

घांस भूसा खिलाया और पीठ पर चढ कर जहाँ चाहा चल दिया। इसी प्रकार यह तुम्हारा गधा भी कहेगा कि हम तुम को नहीं जानते।

एक आदमी बेहोश हो गया। वह अपने शरीरको भोजन नहीं दे सकता घर वाले ज्यादा कृपा करेंगे तो हास्पिटल में भर्ती कर देगें। डाक्टर मुँह को नहीं खोल सकता। इतने बड़े शरीर की कोई दीवार फोड़ कर सुईसे खाना दाना भर देगा। किन्तु मुँह को नहीं खोलेगा। मालिक जब मुँह बन्द कर के बैठा है तो हम को क्या अधिकार है मुँह खोलने का। इस शरीर में सौ वर्ष तक बैठे रहो पर यह तुम्हें जानेगा नहीं तुम इसको जानते हो तो अच्छे काम इस से ले लो तो शरीर बड़ा उपकारी हैं। तुम्हारा उपकार करने वाला है। सत्य को समझने का साधन भी यही है। अच्छी उमर में सत्य को समझने का प्रयत्न करो। जैसे थोड़ी देर के लिए समझो, रसगुल्ला हाथ में मलने पर कोई स्वाद नहीं आएगा। हाथ मूर्ख है। मुँह मे रखोगे तो स्वाद आएगा। जितना ही स्वाद को जानती है। वह हाथ जोड़ कर कहेगी, भाई साहब। मेरे पास ले आओ, क्योंकि वह भी अपने फ्लैट में बन्द है। चलना फिरना जानती नहीं। स्वाद का ज्ञान तुम्हारी अन्तरात्मा को, बाकी फोकट अंश हंडी में चला गया। शरीर को हंडी समझो। हंडी मर गई। ''ज्ञानामृत भोजनं'' ज्ञानरूपी अमृत आत्मा का भोजन है शेष अंश हंडी में जो रीफाइनरी लगी है। refined हो कर शक्ति हाथ को मिली।

निश्चित बात है इस शरीर में कितनी ही लम्बी आयु पार करो यह शरीर हमको कभी नहीं पहचानेगा। इसी तरह यह पृथ्वी अपनी आत्मा को नहीं जानती। मैं जिसके बल से हरी भरी हुं, इस बात को पृथ्वी नहीं जानती जैसे यह शरीर तुम को नहीं जानता। 'इत्येव सत्यात्मा इस सत्‌चित् आनन्द स्वरूप आत्मा को यह शरीर नहीं जानता। देह की दीवारों में अपने को बन्द कर के मत बैठो। शरीर का लम्बा चौड़ा आकार क्या है? दीवारें ही है। अपने को इतना ही बडा हमने समझा। तुम इतने ही बड़े नहीं हो, तुम विश्वात्मा हो। इस लिए यहाँ भी मंत्र कहता है येनावृतं खं च दिवं महीं''। जिस परमात्मा के द्वारा यह आकाश व्याप्त है। द्यौ लोक माने स्वर्ग भी व्याप्त है। यह सारी भूमि भी व्याप्त है। ऐसा वह विश्वात्मा तुम्हारे हृदयाकाश में भास

रहा है। उस हृदयाकाश में उस की भावना करो। उसकी उपासना करों। ब्राह्मी भावना करो।

दूसरी श्रुति है, तैत्तिरीय श्रुति "तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशद्वायुः। वायोरग्नि रग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या औषधयः। औषधिभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः" यह मंत्र कहता है "तस्माद्वा एतस्मात्" देखो दो शब्द है 'तस्मात्' कहने का अर्थ है उस परमात्मा से, जिस को परोक्ष कहा, और 'एतस्मात्' यह जो 'अहं' रूप से हृदय में भास रहा हैं अर्थात यह अपरोक्ष है। यह सत्‌चित् आनन्द स्वरूप जो आत्मा है। इन में भेद नहीं। यह एक है। इसलिए मंत्र कहता है 'तस्माद्वा एतस्मात्' इस आत्मा से 'आकाशः सम्भूतः' आकाश उत्पन्न हुआ। आकाशात् वायु' आकाश से वायु उत्पन्न हुआ। अपने अनुभव में समझो कि जितना space होगा उतनी ही वायु मिलेगी। छोटा कमरा होगा तो उतनी ही वायु मिलेगी। खुली वायु नहीं मिलेगी। खुला space होगा तो वायु अधिक मिलेगी। महान यह जो आकाश है इस में वायु देवता। तो इसकी भी सृष्टि परमात्मा ने किया। वायोरग्नि वायु से अग्नि प्रकट हुआ। थोडी देर के लिए समझो वायु जहाँ चलती है अग्नि प्रकट हो जाती है। वायु चली तो अग्नि प्रकट हो गई। बिजली चमकी माने बादलों मे अग्नि आ गई। वर्षा शुरू हो गई। पानी आ गया। अग्नि से जल की उत्पत्ति हुई। और इसी पानी से यह तुम्हारी पृथ्वी उत्पन्न हुई। उस से नाना प्रकार की वनस्पति की सृष्टि। इन औषधियों से यह तुम्हारा शरीर उत्पन्न हुआ। 'स व एष पुरुषः अन्नरसमयः" इस प्रकार इस आत्मा ने इस शरीर को पकड़ लिया। यह अन्न रसमय तुम्हारा शरीर। इस शरीर की दृष्टि में मनुष्य पशु, पक्षी नाना योनियों के अन्दर अपने को बंधा हुआ पाता है।

श्रुति इसको अपने स्वरूप की स्मृति देती है। यह तेरा स्वरूप नहीं। वृहदारण्यक उपनिषद में महर्षि गार्गी को समझाते है "एतस्मिन खल्वक्षरे आकाशओतश्च प्रोतश्च।" गार्गी अपने समय की महान विदुषी थी। ब्रह्म वादिनी थी। गार्गी ने प्रश्न किया था कि हे भगवान यह आकाश किस में ओत प्रोत है? इसलिए यह प्रश्न किया कि आकाश तक तो हम लोगों को जीवन

दीखता है किन्तु आकाश के परे कोई जीवन दिखाई नहीं देता। इसलिए बहुत से आकाश तक ही रह जाते है कि आकाश के परे कोई तत्त्व नहीं। प्राचीन काल में पंचभूतों की उपासना थी। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश। इन की उपासना। आज कल यह धीरे२ लुप्त हो गई है। इस लिए आकाश तक ही परम तत्त्व मान कर रह जाते थे। इसलिए महर्षि गार्गी को समझाते है हे गार्गी "एतस्मिन्खल्वक्षरे गार्गि आकाशश्च ओतश्च प्रोतश्च।" यह जो अक्षर आत्मा है तुम्हारी, अक्षर शब्द का अर्थ है 'न क्षरति' इस आत्मा का परिवर्तन नहीं। क्षर माने परिवर्तन। जैसे इस शरीर का देखते २ परिवर्तन हो रहा है। बचपन से कुमार, कुमार से जवान, जवान से बुढा हो गया। जवानी तक तो परिवर्तन अच्छा लगता है, पर इस के आगे। जैसे पहाड़ी पर चढ़ना तो अच्छा लगता है। ऊपर जा कर लम्बी सांस लिया। स्वच्छ वायु मिली। सुन्दर दृश्य दीखे। पर उतरने में घुटनो में पीडा होती है। चढने पर तो सब लोग देखते भी है किन्तु नीचे उतरने पर किसी २ को ही दीखता है। इसी तरह समझ लो। बच्चे से कुमार, कुमार से जवान, यह तुम्हारे जीवन का पहाड़ है। जवानी पर खुशी २ आरूढ होता है किन्तु जब बुढ़ापा आता है तो कमर धनुष की तरह टेढ़ी हो जाती है। जंघे भी सुखने लगती है। तो कहता है कहाँ फंस गये। तब प्रार्थना करता है कि भगवान जल्दी से उठालो। तब भगवान भी कहता है न तेरी जरूरत नहीं है। तुम वही रहो जहाँ सव कुछ दिया है। वही सब कुछ अर्पित किया है वहीं सुखी हड्डिया भी दो। इस लिए मुमुक्षु जीवन के सत्य को स्वीकार करे।

महर्षि कहते है हे गार्गी इस अक्षर परमात्मा के अन्दर यह सब कुछ ओत प्रोत है। यह पंच भूत मुर्दा नहीं है। याद रखो यह सजीव पिंड है सब। जैसे मुर्दा शरीर किसी को प्यारा नहीं। उसके नाम की बडी २ समाधियां तो बनवा देगें किन्तु प्यार नही करेगे उसको। तो इन पंच भूतों से भी जो प्यार है वो इसी लिए है कि यह सजीव है। मुर्दे नहीं है। इसलिए यहाँ मूल मंत्र में आया है 'यावान्वा अयमाकाशास्तावानेषोऽन्तर्हृदयाकाश:' जितना यह विशाल आकाश है उतना ही यह हृदयाकाश है। हृदयाकाश म सत् चित् आनन्द स्वरूप ब्रह्म है 'उमे अस्मिन् द्यावा पृथिवी अन्तरेव समाहिते

उभावग्निश्च धायुश्च सूर्याचन्द्रमसावुभौ" यह सब कुछ जो तेरी दृष्टि में आता है, यह सब कहाँ रहता है? महर्षि गार्गी से कहते हैं हे गार्गी महान अक्षर परमात्मा के शासन में यह सूर्य चन्द्र नक्षत्र हैं ।

ठीक समय से सूर्य का उदय होना , ठीक समय से अस्त होना, क्या यह अपने आप ही हो रहा है ? उस परमात्मा के शासन में यह सूर्य ठीक व्यवस्थित चल रहा है । जैसे हम लोग कभी २ असावधानी होने से, जहाँ जितने समय पर पहुंचना चाहिए, नहीं पहुंचते । गल्ती कर जाते है । यही गल्ती यदि सूर्य भी कर जाय, जितने समय में उदय होना चाहिए , नहीं हो तो सारे ब्रह्माण्ड मे खलबली मच जाएगी । कभी २ हम छुट्टी ले लेते है । बीमार पढ़ जाते हैं । यदि कहीं सूर्य भी कहे कि आज मुझे इस round पर नहीं जाना है । कहीं एक ही जगह बैंठ जाए तो क्या होगा ? सूर्य को लाने वाला कौन सा बड़ा वैज्ञानिक है ? है कोई शक्ति किसी के पास इतनी शक्ति नहीं । जीव शक्ति अमुक मात्रा तक है किन्तु ईश्वर का काम ईश्वर ने ही करना है ईश्वर स्वरूप तुम्हारा नहीं हो सकता। यह ब्रह्म भाव जो है इस का उपदेश इसलिए है कि ब्रह्म तुम्हारा स्वरूप है किन्तु ईश्वर स्वरूप तो मायापति का है । जीव तो अविद्या पति है । अविद्या को पकड़ कर जीव बना है । इस अविद्या से छुट्टी पाने के लिए यदि तुम ब्रह्मभाव का चिन्तन करोगे , ब्रह्मभाव पाओगे । अविद्या से छुट्टी पा जाओगे किन्तु यह नहीं समझना कि कोई तुमको ईश्वर बना देगा । ईश्वर की सृष्टि ईश्वर से ही चलेगी । जीव से नहीं चलेगी ।

एक बड़े अच्छे संत थे।लोग उनको बड़ा सिद्ध मानते थे। वर्षा नहीं हुई। जाकर संत के पांव पकड़ कर बैंठ गये । भोला भक्त भीं सिद्ध होता है। बोले वर्षा करो । आप सब कुछ कर सकते हैं । क्या करें ? माला लेकर बैंठ गये । भगवान से बात करने लगे । भगवान ने सुन ली । वर्षा हो गई । भक्त लोग बहुत खुश हुए । गेहूँ लगा दिया । पृथ्वी भी हरी भरी हो गई । पर कुछ दिनों के बाद उस हरी भरी खेती में कीड़ा लग गया । खेती पीली हो गई । अब बताओ इन भक्तों का क्या होगा ? फिर संत के पांव पकड़ लिए। गुरु महाराज खेती तो पीली हो गई । इस खेती को हरा बनाओ । आप सब कुछ कर सकते है। संत बोले मेरे पास इतनी शक्ति नही है । पर भक्त माने नहीं, फिर माला लेकर बैठ

गये । यह माला भगवान का सुदर्शन चक्र है । भगवान ने पुछा क्या बात है ? अब क्यों दरवाजा खट खटा रहे हो ? संत बोले भगवान भक्तों की खेती तो अच्छी हुई थी किन्तु अब पीली पड़ गई है । कुछ करिए कि उनकी खेती हरी भरी हो जाए । आकाशवाणी हुई कि कीड़े को मारने के लिए अमुक वायु चलेगी तब यह मरेगा । तब तुमने वर्षा करने की शक्ति मांगी थी पर यह शक्ति तो मांगी नहीं । अब तुम्हें यह शक्ति भी देता हूँ । किन्तु परमात्मा ने यह भी कहा कि जीव के आश्रय में सारी शक्तियाँ नहीं रह सकती । यह तो परमात्मा के आश्रय ही रहती है । इसी लिए वह ईश्वर है । वह जगत का नियन्ता है । मुमुक्षु को जगत का नियन्ता नहीं बनाना इसको तो केवल जन्म मरण के चक्कर से बाहर निकलना है । इस लिए आचार्य कहते हैं "यावान् देहाध्यास तावान् जन्म मृत्यु"

मुमुक्षु है, सत्सङ्गी है, आत्मा, परमात्मा, जीव, जगत का भेद जानता है । किन्तु फिर भी यदि देहाध्यास, देहका अहंकार है, ऐसा मानता है कि 'मैं जीव हूं' मैं दुखी हूं, मैं सुखी हू, तब तो तत्त्व ज्ञान में आना ही पड़ेगा । तत्त्व का बोध तो हुआ किन्तु अपरोक्ष तो हुआ नहीं इसलिए तब तक नमस्कार करते रहो । 'त्रयोवन्द्या:' तीन वन्दनीय हैं तीन को नमस्कार करो । वेदान्त विद्या को नमस्कार करो । "अवाङ्मनसागोचर:" वाणी जिसको पकड़ नहीं सकती । वाणी जिस की पकड़ में है । मन जिस को पकड़ नहीं सकता । यह मन भी उसकी पकड़ में है । मन और वाणी जिसकी पकड़ में घूमते हैं, उस तत्त्व को वेदान्त विद्या समझा रही है । इसे नमस्कार करो कि हे विद्ये तेरी कृपा से ही हम इस सत्य को समझेंगे । और इस तत्त्व कों समझाने वाले गुरु को । ज्ञानदाता को नमस्कार करो । बुद्धिमान आचार्य जो वक्ता है उसको नमस्कार करो । मन वाणी से परे जो तत्त्व है उसको मन वाणी में लाकर समझाना कितना टेढ़ा है इस लिए उनको नमस्कार करो । और कहते हैं 'ईश्वर' ईश्वर को नमस्कार करो क्योंकि तुम्हारा व्यष्टि अहंकार अभी गया नहीं तो समष्टि में जो परमात्मा है उसकों नमस्कार करो । तत्त्व का विचार करो । साधन को मत छोड़ो । ईश्वर को नमस्कार करते रहो कि हे प्रभु तुम्हारा अनुग्रह जो है वह हमें उस सत्य तक पहुंचा दे ।

मंत्र कहता है "उभावग्निश्च वायुश्च सूर्याचन्द्रमसावुभौ विद्युन्नक्षत्राणि

यच्चास्येहास्ति यच्चेनास्ति सर्व तदस्मिन्समाहितमिति" यह अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र विद्युत नक्षत्र तारा गण, जो तेरी दृष्टि में आया वो और। जो तेरी दृष्टि में नहीं आया वो सबका सब इसी में समाया हुआ है। 'सर्वं समाहितमिति।' इस परमात्मा के अन्दर यह सब समाया हुआ है। ऐसा जो सत्चित् आनन्द स्वरूप परमात्मा है वो इस दहराकाश में भास रहा है वो अति निर्मल तत्त्व ब्रह्म भाव जो है मुमुक्षु उस ब्रह्म भाव को पकड़े। 'अयमात्माब्रह्माहमस्मि" यह ब्रह्म ही मैं हूं 'नाहं संसारी, न अहं जीव' मैं न संसारी हूं, न मैं जीव हूं। मंत्र इस बात को समझा रहा है। आगे और इस बात को स्पष्ट करेंगे। अब सीधे हो कर बैठो, जोर से हरि ॐ बोलो और हृदय में उस ब्रह्म का ध्यान करो।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१५-४-८८

प्रवचन सं०-७

"ॐ स ब्रूयान्नास्य जरयैतज्जीर्यति वधेनास्य हन्यत एतत्सत्यं ब्रह्मपुरमस्मिन्कामाः समाहिता एष आत्मापहतपाप्मा विजरोवि मृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसङ्कल्पो यथा ह्येवेह प्रजा अन्वाविशन्ति यथानुशासनं यं यमन्तमभिकामा भवन्ति यं जनपदं यं क्षेत्रभागं तं तमेवोपजीवन्ति ॥"

(छान्दो. ८-१-५)

विचार चल रहा है, जिज्ञासु प्रश्न करते हैं कि हे भगवन, 'तं चेदंब्रूयुर्रस्मिश्चेदिदं ब्रह्मपुरे सर्वं समाहितं" आप कहते आ रहे हैं कि 'सर्व अस्मिन् ब्रह्मपुरे समाहितं' एस शरीर को ब्रह्मपुर कह रहे हैं। ब्रह्मपुर शब्द का अर्थ है 'ब्रह्म वपुरं ब्रह्मपुरं' पुर माने निवास स्थान। यह सारी प्रजा किस में निवास कर रही है? उसी ब्रह्म में। यह शरीर ब्रह्म नहीं। ब्रह्मपुर यह आत्मा है। जिस समय इस शरीर को यह चेतन छोड़ देता है उस समय यह शरीर मर जाता है। किन्तु यहाँ पर शिष्य जो प्रश्न कर रहा है इस का अभिप्राय है कि गुरु जी यह शरीर ही तो ब्रह्मपुर है, इस शरीररूपी ब्रह्मपुर में सब कुछ है 'सर्वाणिच भूतानि सर्वे च कामा:' सम्पूर्ण भूत और सम्पूर्ण वासना भी तो इसी शरीर में हैं। यदि यह शरीर नहीं है तो कौन सा कामना है? कौन सी इच्छा है? कोई इच्छा नही। चेला इस शरीर कों ही ब्रह्मपुर कह रहा है किन्तु यह तो रोज अपना नक्शा बदलनेवाला है। जैसे बच्चा था तो बच्चा नहीं रहा, कुमार था तो कुमार नही रहा। जवान था तो जवान नही रहा। इस तरह अपना नक्शा बदलता जा रहा है। एक दिन यह वृद्धावस्था आकर इस को पकड़ती है। यह जरा है। वृद्धावस्था को कहते जरावस्था यह अपने देवता निर्जरा है 'निर्जरा देवा:' यह देवता वृद्धावस्था की पकड़ में नहीं है। इसकी पकड़ में मनुष्यादि प्राणी हैं। यह जरा जो है यह सब को पकड़ती है।

श्री मद्भागवत में जरा को चण्डदेव की पुत्री कहा। चण्डदेव माने काल देव। यह काल देव की पुत्री है। जैसे आज कल माता पिता लड़के लड़की के बात चीत करने की आजादी देते है इसी प्रकार चण्डदेव ने अपनी पुत्री से कहा कि बेटी पुरंजन नाम के राजा की सेना में बड़े २ शूरवीर है तुम उनसे स्वयंवर की बात चीत करो। और किसी को भी पति रूप में चुन लो। जरा गई पर वहाँ किसी ने इसकी ओर देखा ही नहीं। बेचारी मुँह लटकाकर लौट आई। बोली पिता जी कोई भी मुझ से शादी करने को तैयार नहीं। पिता ने आशीर्वाद दिया कि तुम सब को पकड़ लो। तब से जरा ने सबको पकड़ना शुरु कर दिया। समय आने पर यह सब को पकड़ लेती है। एक बार पकड़ लेने पर फिर जरा छोड़ती नहीं। 'जरावाप्नोति' इस तरह वृद्धावस्था आ जाती है और शरीर 'प्रध्वंसते' यह नष्ट हो जाता है।

दृष्टान्त देते हैं जैसे घड़े में सुन्दर दूध भर कर रखा है या निर्मल जल भर रखा है। घड़ा फूट गया तो दूध इसमें नहीं बचेगा। जल इस में नही बचेगा। जैसे इस घड़े के टूट जाने मे या इस गड़े को तोड़ देने से दूध अथबा जल इस में कुछ नहीं बचेगा तो कोई उस घड़े से क्या लेगा। इसी तरह यह शरीर, जिसको ब्रह्मपुर कहा, जब जरा ने इस को तोड़ दिया तो क्या बचेगा। मृत्यु देवता ने इसे नष्ट कर दिया तो इस में तों कुछ बचा नहीं। चेला कहता है तो इस दहराकाश में क्या ध्यान करें। इस में तो कुछ बचा ही नहीं। गुरु जी कहते हैं कि बेटा ऐंसी बात नहीं हैं। ऐंसी कल्पना नहीं करो। बुद्धिमान जो गुरु है जिज्ञासु को इस प्रकार समझावे कि दहराकाश के अन्दर जो तत्त्व है सत्चित् आनन्द स्वरूप है "नास्य जरया जीर्यति" 'तत् सत्यं' यह सत्य है इसे जरा जीर्ण नहीं करती। देह जीर्ण हो जाएगा पर इस सत्य पर जरा का कोई असर नहीं। जो साकार वस्तु होगी जरा उसे प्रभावित करेगी। जैसे यह फूल है गुलाब का। यह आकार वाला है, इसके अवयव हैं। इसकी एक २ पंखुड़ी अलग २ कर दो तो फूल कहाँ बचेगा।

साकार वस्तु मे परिणाम भी है परिणाम माने परिवर्तन। जैसे यह शरीर एक स्वरूप से दूसरे स्वरूप में बदलता जाएगा। किन्तु 'अहमास्पद' जो आत्मा है, बचपन में भी 'अहं' कुमारावस्था में भी अहं, युवावस्था में भी 'अहं' और वृद्धावस्था में भी वही हम। शरीर छोड़ने लगता है तो भी कहता है 'हम मर रहे हैं' मर रहा है दोस्त और कहता है 'हम मर रहे हैं' यह आत्मा बड़ा भोला है। शरीर से दोस्ती कर के बैठा है। इस शरीर के मरण को अपना मरण समझ रहा है। इसके शोक मोह मे अपने में शोक मोह समझता है। शास्त्र निषेध करता है कि बुद्धिमान निष्फल कर्म नहीं करे। देखो यह पृथ्वी है। इस में हम कहीं निष्फल कर्म नहीं करे। देखो यह पृथ्वीं है। इस में हम कहीं गड्ढा खोदना चाहें तो खोद सकते हैं पत्थर मिट्टी हटा दिया तो गड्ढा बन जाएगा। चाहोगें तो पानी भी निकाल सकते हो। किन्तु यदि यों ही गड्ढे खोदते जाओ कहीं पांच फुट कहीं दस फुट, तो इस से क्या प्रयोजन सिद्ध होगा ? यह निष्फल कर्म होगा। जैसे कभी २ नदी के किनारे बैठ गये। लकड़ी से जल पीट रहे हैं। जल पीटने से छींटे उड़ेंगे। जल पीटने से क्या प्रयोजन। पानी की अक्ल तो बढ़ेगी नहीं यह निष्फल

कर्म है ।

जो साकार वस्तु होगी वो कटेगी, पिटेगी । किन्तु जो वस्तु साकार नही हैं, यद्यपि उसकी उपाधि टूट जाएगी किन्तु वह नही टूटेगा । जैसे घडा क्या है ? मिट्टी के गोलाकार का नाम घडा है । किन्तु यदि गोलाकार अन्दर से पोला नही है तो इससे क्या काम चलेगा ? बाहर से गोलाकार अन्दर से पोल । इस पोल का नाम है घटाकाश । उस से हमारा काम चल रहा है । प्रयोजन सिद्ध होता है । पानी रखो, दाल भात बनाओ । घड़े को डण्डा मारो तो घड़ा टूट जाएगा । तो क्या घड़े के अन्दर जो आकाश है वह भी टूट गया ? आकाश नही टूटा । मान लो कोई आदमी तलवार से आकाश को काटने लगा बडा शूरवीर है । किसी ने पुछ लिया क्या कर रहे हो ? बोला जो आज कल कोई नही कर सका वो मैं कर रहा हूँ । पुछा कर क्या रहे हो ? कहता है आज तक आकाश को किसी ने नही काटा, मैं आकाश को काट रहा हूँ । तो सुनसे वाला बुद्धिमान क्या कहेगा ? यही न कि इस की बुद्धि में जंग लग गया है । यह आकाश कटने वाला है ।

इसी तरह यह जो दहराकाश है, हृदयाकाश । इस दहराकाश में सूक्ष्म बुद्धि है इस बुद्धि के अन्दर चेतन भाव प्रकट हुआ । यह चेतन अपने स्वरूप मे निर्गुण निराकार है । यह निर्गुण निराकार चेतन शरीर के बुढे होने से बुढा नही होता शरीर के जबान होने से जवान नही होता और शरीर के मरने से मरता भी नही । इस लिए इस मनुष्य को अमरत्व समझाया जाता है कि तुम अपने अमरत्व को समझो । बात को और समझो, कहते है बेटे का जन्म हुआ । तो बताओ किस का जन्म हुआ ? जो था उसका जन्म हुआ कि जो नही था उस का ? जो था उसका जन्म हुआ । तो जो था उस का क्या जन्म हुआ, वो तो पहले ही था । और जो नहीं था उसका जन्म कैसा ? वह तो था ही नही । तो यह कहना पड़ेगा कि जिस आत्मा ने तुम्हारें से अपने शरीर का आकार पकड़ना होगा, वह पिता के शरीर मे पहले आएगा । पिता के शरीर से मां के शरीर मे चला जाएगा और वहाँ अपने शरीर के अकार को खड़ा करेगा । अपने स्वरूप में कोई अन्तर नही करेगा । किन्तु शरीर के आकार को खड़ा करेगा । और जब वो शरीर का आकार तैयार हो जाएगा तो बाहर चला आएगा । जैसे कारखाने

मे कोई चीज तैयार होती है । यह मां का पेट भी एक कारखाना है, बडा कारखाना । यह भगवान का कारखाना है, नाना प्रकार की शक्लें बना रहा है वह ।

इस शरीर को ही देखो । जहाँ नाक चाहिए वहाँ नाक लगा है । आँख को देखो जहाँ चाहिए वहीं लगी है । जहाँ कान चाहिए वहाँ कान लगे हैं । मुख को ही देखो अगर ऐसे न कर के यूँ फांड दिया होता तो खाते कैसे ? कैसे चलाते मुँह को ? कितना बडा वैज्ञानिक है वो । ऐसी वो जो तुम्हारी अन्तरात्मा है उस आत्मा के लिए भगवान कहते हैं ' नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि ननं दहति पावकः नचैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः" इतना बडा शूरवीर है अर्जुन । कुरूक्षेत्र के मैदान में खडा है । उसके जैसे शूरवीर बहुत थे । किन्तु घबडा गया । यह सब मर जाएंगे ? जितने भी यहाँ आए हैं, मैं क्या सब को मारने आया हूँ ? वंशोच्छेदन तो महापाप है ।

भगवान कहते हैं तू किसी को नहीं मारेगा, न यहाँ कोई मरने वाला ही है । देखो, आत्मा के अमरत्व का बोध दे रहे हैं । 'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि' यह शस्त्र इस आत्मा का छेदन नहीं कर सकते नैनं दहति पावकः' यह पावक, माने अग्नि, यह अग्नि इसको जला नहीं सकती । ' न चैनं क्लेदयन्त्यापो" आपो माने पानी, यह पानी इस को सडा नहीं सकता । अग्नि का काम जलाना पानी का काम है सडांना । ' न शोषयति मारुतः' मारुतः माने वायु । यह वायु, जो आकाश में खुला बहने वाला है, कपडे धो कर बाहर सुखाओं, वायु पानी को खींच लेता है । यह मारुत, वायु इस आत्मा का शोषण नहीं कर सकता । इसका तात्पर्य क्या निकला कि यह निर्गुण निराकार है । निर्गुण निराकार जो तत्त्व है वह पंचभूतों की पकड से परे हैं । पंचभूत उसकी पकड में है ।

अन्यत्र कहा "अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं तथारसं नित्यमगन्धवच्चयत् अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं, , निचाय्य तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते ।। नचिकेता ऋषिपुत्र है । उस नचिकेता को यमराज, जो मृत्यु देवता है । वह साक्षात् मृत्यु देवता उस नचिकेता को उपदेश करते हैं । यमराज भी ब्रह्मविद्या के आचार्य हैं । वह कहते है कि नचिकेता यह तेरी अन्तरात्मा है यह रूप, रस, गन्ध, शब्द और स्पर्श यह जो पांच विषय हैं, यह इन पांचो विषयों से परे है । यह अरूप है

इसका कोई रूप नहीं, अरस है , अगन्ध है इसका कोई रस नहीं, इस में कोई गन्ध नहीं । अस्पर्श है इसका कोई स्पर्श नहीं कर सकता । ऐसी तेरी यह अन्तरात्मा है , वो 'अनाद्यनन्तं महतः परंध्रुवं' अनादि है । अनादि कहने का अभिप्राय है ' आदि कारणं' जिस का कारण होता उसको सादि कहते हैं । जैसे यह पुष्प है । यह उस पौधे से उत्पन्न हुआ है इसलिए यह सादि है कल यह नहीं था । सायंकाल कली के रूप में था । रात भर कली के रूप में चलते २ सवेरे विकसित हो गया । यह सादि पदार्थ है । सादि माने, यह कारण वाला पदार्थ है । हे नचिकेता यह तेरी आत्मा अनादि है । इसका कोई कारण नहीं है । जैसे पहले कहा कि पुत्र का जन्म हुआ । जन्म होना क्या ? प्रकट होना । जैसे दूध में मक्खन तो है ही, मन्थन किया तो प्रकट हो गया । तो आपने मक्खन को उत्पन्न किया कि प्रकट किया ? कहना पड़ेगा कि उत्पन्न तो नहीं किया, प्रकट किया । तिलों में तेल है, कोल्हू में दबाया तो तेल प्रकट हो गया । तेल को उत्पन्न नहीं किया । प्रकट किया । यह कपड़े है, जिन तन्तुओं से यह कपड़ा बना, उन मे यह कपड़ा है कि नहीं ? अगर नहीं तो बना कैसे ? कहोगे यदि है तो दीखता क्यों नहीं ? दीखना चाहिए । नहीं दीखता कोई अपराध नहीं ।

दो प्रकार की अवस्थाएँ होती हैं । अभिव्यक्त अवस्था और अनभिव्यक्त अवस्था । एक अवस्था तो अभिव्यक्त होती है, जैसे दही का मन्थन किया तो मक्खन दीखा । अभिव्यक्त हो गया । दही का मन्थन नहीं किया, यूं ही रखा है,उस मे भी मक्खन है पर दीखता नहीं है, तो क्या उस दही में मक्खन नहीं है ? है तो सही किन्तु दीखता नही है , अनभिव्यक्त है । ' यदस्ति तदुपलभ्यते, यन्नास्ति तन्नोपलभ्यते ।' जो है वो प्राप्त होता है जो नहीं है उस की प्राप्ति कैसी ? यह जो तुम्हारी अन्तरात्मा है सत्चित् आनन्द स्वरूप यह अनादि है । इस का कोई जनक नहीं । इस का कोई उत्पन्न करने वाला नहीं । जिसका कोई आदि नहीं उसका अन्त भी नहीं । 'वाचारम्भणं विकारोनामधेयं' वाणी का विकार है । नाम और रूप केवल वाणी का विलास है । नाम माने शब्द, रूप माने आकृति । तो शब्द और आकृति को पकड़ कर हम वाणी से इस को बोलते हैं । इस का वर्णन करते हैं । यह वाग्विलास मात्र है । 'वाचारम्भणं विकारो' ।

प्यार से बोलना भी वाणी का विलास है और क्रोध से बोलना भी वाणी का विलास है। किन्तु प्यार से बोलोगे तो तुम्हें प्यार मिलेगा, और क्रोध से बोलोगे तो तुम्हें क्या मिलेगा ? क्रोध ही मिलेगा। चाहे पत्नी ही हो, प्यार की वाणी बोलोगे तो प्यार की वाणी सुनने को मिलेगी। किन्तु यदि क्रोध से बोलोगे तो तुम्हारे अन्दर जो क्रोध है, उसका इन्जैक्शन उस को भी लग गया और उस का दिमाग गर्म हो गया। अब सोचो कैसे बोलेगी वह प्यार से। हृदय ठण्डा होगा तो प्यार से बोलेगी। अग्नि शीतलता को नष्ट कर देती है। यह क्रोध क्या है ? क्रोधाग्नि है। क्रोध से जब बोलोगे तो बदले में क्रोध ही मिलेगा। इसलिए लोक जीवन में भी प्यार करो। ऐसा मत सोचो कि वह मीठा बोले तब तुम मीठा बोलोगे। जो तुम्हारा partner of life है, जीवन साथी है, उसे अच्छा बनाने का ही प्रयत्न मत करो। अपने को अच्छा बनाओ तुम्हारे सम्पर्क से वह अच्छा तो बन जाएगा। क्योंकि तुम अच्छे हो इस लिए वह अच्छा बन जाएगा। तुम यदि बुरे हो तो वह बुरा बन जाएगा। इस लिए विवेकशील सोचे वाचारम्भणं विकारो नामधेयं' श्रुति कहती है कि हे बेटा जिस दुनियाँ में तू चल रहा है, वो कुछ भी नहीं है। केवल वाणी का विलास है। यह पुष्प है बड़ा सुन्दर हैं। पर पुष्प को पुष्प कब तक कहोगे ? जब तक यह खिला रहेगा। जब यह सूख जाएगा, तब क्या कहोगे ? खराब हो गया, मुर्झा गया, सड़ गया। इस लिए कहा 'वाचारम्भणं विकारो'।

आगे श्रुति कहती है ' अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं, ऐसा वो जो तत्त्व है। वो अनादि है अनन्त है। 'यद् अन्तवत् न भवति ' अनन्तं। जिस का आदि हैं उसका अन्त है। जिसका आदि नहीं उसका अन्त भी नहीं। किसी वस्तु का अन्त करने वाले तीन पदार्थ होते हैं। वेदान्त का भाषा में तीन माने जाते हैं। देश, काल वस्तु। देशकृत अन्त, जैसे जो यहाँ हैं वह घर में नहीं जो घर मे है वह यहाँ नहीं। देश अन्त कर देता है वस्तु का। वस्तुकृत अन्त, एक वस्तु के आकार में दूसरी बस्तु नहीं। जैसे इस पुष्प की शक्ल में यह पुष्प नहीं। होते हुए भी वस्तु रूपान्तर में नहीं है। जैसे तुम्हारा शरीर है। आकार में तुम्हारा शरीर जो है वो तुम्हारे दोस्त के शरीर के आकार से भिन्न है। कालकृत अन्त। एक काल में हैं दूसरे काल में नहीं है। जैसे हमारे इस शरीर

का बचपन एक काल मे था पर अब नहीं हैं। काल ने हमारै शरीर के बचपन का अन्त कर दिया। अब जरा अंगुठा चूसो तो। अब अपने को क्या कहते हो ; बचपन का जब काल ने अन्त कर दिया तो आगे बढ़ना पड़ेगा। कुमारावस्था का अन्त कर दिया तो जवानी में आगे बढ़ना पड़ेगा। जवानी का अन्त कर दिया तो बुढ़ापे में जाना पड़ेगा। और जब बुढ़ापे का भी अन्त कर दिया तो कहते हैं मर गया। चला गया। जो अभी तक यहाँ था वो अब यहाँ नहीं है। यहाँ से चला गया। यहाँ यह जो तुम्हारी आत्मा है। भगवान यमराज नचिकेता को समझाते हुए कहते हैं 'अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं' हे बेटा यह अनादि हैं, अनन्त है। 'महतः परं ध्रुवं' महत्तत्व से भी परे है। ध्रुवं माने यह सत्य है। परम सत्य है। इस के परे कोई सत्य नहीं। इसकी सत्ता से ही यह शरीर इतना प्यारा लग रहा है। 'एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः' मंत्र कहता है कि बेटा अपने सुन्दर निर्मल चित्त से इस आत्मा को जानो।

संसार के खट्टे मीठे पदार्थों को तो जानते २ बच्चे से जवान हुए, जवान से बुढे हो गये पर जाना क्या ; जानते गये भूलते गये। अभी दो दिन पहले क्या सब्जी खाई थी याद नही। जानते जाओ, भूलते जाओ। इसलिए कहा एषोऽणुरात्मा वेदितव्यः' एक मात्र तुम्हारी आत्मा है जिसको जान जाओगे तो भूलने की बात नहीं। जीवन को सही रूप से जानना कोई मामूली बात नही। इस जीवन को ठीक से समझाना भी योग है। इस की भी आवश्यकता है। एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यो, यस्मिन् प्राणः पञ्चधा संविवेश' यह प्राण पांच प्रकार से तुम्हारे शरीर में प्रवेश किया हुआ है। प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान। प्राण ने अपने को पांच भागों में विभक्त किया हुआ है। तुम्हारे शरीर की रक्षा के लिए पांचों की आवश्यकता है मुख और नाक से निकलने वाली हवा प्राण वायु, नाभि से कण्ठ तक रहने वाली उदान वायु। नाभि केन्द्र में घूमने वाली जो वायु है उसको समान वायु कहते हैं। सारे शरीर में घूम कर जो संकल्प करता है उसको व्यान कहते हैं। घूम फिर कर खूब खाया पीया और तान कर सो गये। किन्तु वो जो wastage माल है उसको बाहर निकालने के लिए कौन सा sweeper रखा है sweeper यदि हड़ताल कर दे तो जानते हो क्या हाल होगा ; उस परमात्मा ने क्या सीवर लाईन बनाई है ; उस की

सफाई करने के लिए यह अपान है । नाभि मे नीचे तक जो वायु है उसे अपान वायु कहते हैं । अपान को जो तिरस्कार करेगा उसको अपान वायु छोड़ देगा । अब खाओ डाक्टर की गोलियां । अपान यदि अपना काम करना छोड़ दे तो wastage को बाहर निकालने वाला कोई नहीं । कहते है भंगियों ने हड़ताल कर दी । इन प्राण और इन्द्रियों को तृप्त करने के लिए मनुष्य अपनी सारी आयु व्यतीत कर देता है । जो भोगों से विरक्त हो कर विशुद्ध चित्त से उस परमात्मा के चिन्तन में लग जाता है । वह उस परमात्मा को जान लेता है । यमराज कहते है बेटा अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुव, निच्चाय तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते ।" जो इस परम सत्य आत्मा को जान जाएगा वो मृत्यु के मुख मे पार हो जाएगा नहीं तो मृत्यु के मुख में चला जाएगा । जैसे हम लोग मुट्ठी भर चने मुख में डाल लेते है ऐसे ही यह काल देवता रात दिन प्राणियों का भोजन कर रहा है । इस बात को कल और स्पष्ट करेंगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१६-४-८८

प्रवचन सं०-८

"ॐ तद्यथेह कर्मजितो लोकः क्षीयत एवमेवामुत्र पुण्यजितो लोकः क्षीयते तद्य इहात्मानमननुविद्य व्रजन्त्येतांश्च सत्यान् कामाँस्तेषां सर्वेषु लोकेष्वकामचारो भवत्यथ य इहात्मा-नमनुविद्य व्रजन्त्येतांश्च सत्यान् कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।।"

(छान्दो ८-१-६)

छान्दोग्य श्रुति दहरोपासना के बारे में इस सत्य को समझाती है कि विवेकशील मुमुक्षु इस हृदयाकाश में कैसे प्रवेश करे। क्योंकि जब तक अपने हृदय को पकड़ेगा नहीं, इस हृदयाकाश के अन्दर यह जो सत्‌चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है, यह पकड़ में नहीं आएगा। इसलिए उस आत्मा के स्वरूप का विवेक करता है। इस आत्मा के स्वरूप का ज्ञान हो जाएगा तो इसमें प्रवेश करने में कठिनाई नहीं होगी। कल भी कहा था कि यह सत्‌चित् आनन्द स्वरूप आत्मा इस देह के विकारों से परे है। यह कहने का तात्पर्य यह नहीं कि केवल शरीर के विकारों से परे है। किन्तु जो सगुण साकार पदार्थ होगा उसका प्रधान विकार होगा प्रतिक्षण परिणाम। जैसे यह फुल है फुल का प्रतिक्षण परिवर्तन हो रहा है। यह परिबर्तन अमुक सीमा तक तो बड़ा अच्छा लगता है। बच्चे को ही देखो, धीरे२ बड़ा होता है तो मां को अच्छा लगता है। सम्बन्धी भी खुश होते हैं कि बच्चा बड़ा हो रहा है। युवावस्था तक तो यह परिवर्तन अच्छा लगता है। सब खुश होते है। मान लो मां भी बड़ी आयु लेकर आई है। 80, 90 वर्ष की हो गई। लड़का भी 60, 65 का हो गया। शरीर की क्या दशा होगी। सामने बैठा है, सिर कांप रहा है, मूंह मे दांत नहीं है। तब वही मां कहती है मेरा वेटा बुढा हो गया है। उस की वृद्धावस्था से उस को प्यार नहीं। बेटा तो कह रही है किन्तु अब उसकी वो शक्ल उतनी प्यारी नही लगती जितनी पहले लगती थी। अर्थ यह निकला कि साकार पदार्थ मे परिवर्तन होगा और यह परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है। किन्तु इस आत्मा मे कोई परिवर्तन नहीं।

यह आत्मा सदा शाश्वत सदा सत्य। इस सत्य को प्रकट करने के लिए मंत्र ने कहा ' न अस्य जरयैतज्जीर्यते ' जरावस्था इसको जीर्ण नहीं करती। स्थूल शरीर तो साकार हैं। साकार होने की वजह से स्थूल शरीर में अवस्था विकार आएगा। स्थूल शरीर यद्यपि जीर्ण हो गया है किन्तु इसके अन्दर बैठने वाला जैसे का तैसा है। उस मे कोई परिवर्तन नही। कभी इस शरीर में चोट लगती है या मान लो इस में कोई आपरेशन भी करना पड़ता है। इस शरीर को काटना भी पड़ता है मंत्र कहता है ' वधेनास्यन हन्यत' इस शरीर को कोई काट भी देगा, कोई मार भी देगा तो भी यह आत्मा मरेगा नही कटेगा नही। कोई शस्त्र इस इस आत्मा को काट नहीं सकता। यह कल भी समझाई थी। " एतत्सत्यं ब्रह्म-

पुरमस्मिन्कामा समाहिताः" बेटा इस आत्मा को कैसा समझो ? 'एतत्सत्यं' । तुम सारे जगत को देखो । आज कल विज्ञान के बड़े २ साधन उपलब्ध है । किसी राकेट में बन्द होकर तुम सारे जगत का, सारे ब्रह्माण्ड का भ्रमण कर सकते हो । लोक लोकान्तर में जा सकते हो किन्तु डर यही है कि तुम लौट कर आओगे कि नही । जा तो सकते हो, इतनी शक्ति तो विज्ञान ने उत्पन्न की है ! ध्रुवतारा मे चले जाओ, शुक्रतारा में चले जाओ । किसी भी ग्रह नक्षत्र में चले जाओ किन्तु मृत्यु की पकड़ से बाहर नहीं जा सकते । मृत्यु के लम्बे हाथ है। यही बात है कि कोई जाने की इच्छा नहीं करता ।

आज बड़े २ लोग है इस दुनियाँ में जिन के सामने यह प्रश्न है कि इस धन का क्या करें । धन खर्च कर के किसी अन्य ग्रह में जा सकते है । कहीं भी चले जाएं किन्तु जानते है कि मरना तो पडेगा ही । मरना तो है ही तो यही पड़े रहो क्योंकि जिस शरीर को पकड़ कर बैठे हो यह अमृत नही है । वह मृत्यु की पकड़ में हैं मृत्यु की पकड़ से बाहर नही है । जैसे मां कभी २ बच्चे को दों हाथ से पकड़ती है और उसे यू उछालती है। यद्यपि बच्चे को यू उछालना नहीं चाहिए । उसके हाथ पांव या हार्ट पर भी असर पड़ सकता है किन्तु फिर भी हाथ से पकड़ तो है ही । ऐसे ही मृत्यु देवता ने भी दो हाथ से पकड़ रखा है एक हाथ में मेहंदी लगी है दूसरा हाथ काला है। काला दास्ताना पहन रखा है । दिन मेहंदी है रात काला दास्ताना है । इन दो हाथों से काल ने पकड़ कर रखा है । किस को ? इस शरीर को । इस को तुम कहाँ ले जाओगे । जहाँ भी ले जाओगे यह हाथ रबर की तरह लम्बे होते जाएगे । अमरीका चले जाओ तो वहाँ भी यह दो हाथ हैं । । और किसी देश में चले जाओ तो वहाँ भी यही दो मिलेंगे । इसलिए इस शरीरको मृत्यु से बचाने की इच्छा मत करो ।

यह ठीक है कि यह शरीर हमारा मोक्ष साधन भी है । ऐसा शरीर मिला है तो कुछ सुनने के लिए बैठे हैं । इस शरीर के साथ ही तो आत्मा से मित्रता की इच्छा करते हो । यह शरीर किसी को प्यारा नहीं । मित्रता चाहिए पर केवल शरीर से कौन मित्रता करेगा । आत्मा के बिना यह शरीर किसी को प्यारा नहीं । हमारा असली मित्र कौन है ? 'एतत्सत्यं' उस मित्र को सत्य कहा। सत्य माने जो झूठ नही । ' यः त्रिकालेपि स्वस्वरूपात् न प्रचलते तत्सत्यं" जो

त्रिकाल मे भी अपने स्वरूप से विचलित न हो। अपने स्वरूप को छोड़े नही । बदले नही वह सत्य है जो झूठ को भी सत्य कर के दिखाए वो सत्य नही। जो तीनों कालों मे एक रस रहे वो सत्य । जैसे यो तो कहोगे, हम बच्चे थे, हम जवान थे हम अब बुढे हो गये है । तो देखो बच्चा, जवान, बुढा तो कहते गये पर हम को नही हटाया 'अहं' के स्वरूप में कोई अन्तर नही पड़ा । श्रुति कहतीं है ' स्वरूपं न जहाति त्रिकालेपि ' जो अपने स्वरूप को न बदले वो सत्य । तीनों कालो मे जो अपने स्वरूप से च्युत न हो वो सत्य ।

इस आत्मा को उपनिषद् की श्रुति ब्रह्मपुर कह रही है । ब्रह्म ही सबका आधार है । इसी में सारी प्रजा जी रही है । इसी का दृष्टान्त समझो जैसे यह शरीर है । ठीक हैं इस शरीर को अन्न भी चाहिए, जल भी चाहिए, पहनने कों वस्त्र भी चाहिए । रहने को जगह भी चाहिए । प्रिय बन्धु भी चाहिए । किन्तु आत्मा बिना क्या चाहिए ? पहले क्या चाहिए ? न भोजन चाहिए, न सुन्दर वस्त्र चाहिए । न कोई प्रिय बन्धु आएगें । तो सोचो पहले क्या चाहिए ? आत्मा चाहिए या भोजन चाहिए ? वस्त्र चाहिए ; रहने के लिए सुन्दर स्थान चाहिए ; आत्मा के बिना कोई हमारा नही । तो जिस के बिना कोई हमारा नहीं वो हम । इस लिए इसे कहते हैं ब्रह्मपुर । यह ब्रह्मपुर है । गीता में भगबान कृष्ण इस रहस्य को स्पष्ट करते हैं "सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि, ईक्षते योग युक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः"

हे अर्जुन योग युक्त आत्मा । योग से युक्त जो मुमुक्षु है । योग से तात्पर्य केवल कुछ आसनादि से नहीं हैं । यह स्वास्थ्य के लिए तो ठीक है किन्तु इसे योग नही कहा जा सकता । यह तो अपने को धोखे में डालने वाली बात है । नेति धोति आदि क्रियाएँ भी केवल शरीर की सफाई के लिए हैं । जैसे घर की सफाई के लिए झाड़ू आदि किया जाता है । योगः परमात्मनि चेतः समाधान् योग, शास्त्र से और गुरु से इस सत्य को समझो 'यह आत्मा ब्रह्म है' इस रूप से इस सत्य को पकड़ो । मन की निर्विकल्प स्थिति में यह सत्य प्रकट होता है । विकल्प रहेगा तो, जैसे चिन्ता होगी, शोक होगा, भय होगा तो सत्य की अनुभूति नहीं होगी । मान लो कोई अपना प्रिय बन्धु पास में बैठा है किन्तु उस चिन्ता में, उस शोक में , उस भय में उस से आनन्द नहीं मिलेगा । तो सोचो कि यदि

अपने प्रिय बन्धु से भी थोड़ा सा सुख लेना हो तो मन को निश्चिन्त करना पड़ता है तो इस अत्मा का ब्रह्म रूप से आनन्द लेने के लिए क्या करना पड़ेगा ।

कान से सुन्दर शब्दो का जो आनन्द ले रहे हो वो क्या कान का आनन्द है ; आँख से जो सुन्दर रूप का आनन्द लेते हो वो क्या आँख का आनन्द है ? जीभ से जो रस। स्वाद करते हो वो क्या जिह्वका आनन्द है ? जीव रूप से जो जो भी आनन्द ले रहे हो, है तो सब आत्मा का ही आनन्द । चेतन का यदि करण्ट नहीं तो कौन सा आनन्द है । सब आनन्द उसके करण्ट में ही हैं । उसके करंट में उपाधि का आनन्द है । दृष्टान्त से समझो, आज कल भी हैं, पुराने जमाने में भी होता था । बारात आती ह, जब द्वार पर बारात मा जाती है तो दुल्हे पर इतर छिड़कते है । यह जो इतर छिड़कते है इसक अर्थ यह भी हो सकता है कि जो बदबु तुम अपने साथ लेकर आए हो वह लेकर अन्दर मत घुसना । cented हो कर अन्दर आओ । यह जो cent हैं यह शरीर उपाधि से फैल जाएगा । इसी तरह यह जो विषयों का आनन्द है यह आत्मा ने अपने अभास मात्र से cented किया हुआ है । सब को स्वादिष्ट बनाया हुआ है । आत्मा यदि अपना अभास खीच ले तो क्या सोचते हो ? यह जो चेहरे की सुन्दरता हैं क्या यह चमड़ी की चमक है ? अगर वह अपने आभास को खींच ले तो मुख को देखो । कितना भयंकर लगेगा ।

यह चिदाभास है । चेतन का आभास मात्र । अन्दर चलो तो उसकी चमक, उसका स्वाद । वाहर चलो तो उसका स्वाद । यह सब उस चिदाभास का ही स्वाद है । तुम हमेशा उसी के स्वाद में रहते हो । हमेशा ब्रह्म ज्ञान मे रहते हो, फिर उसको समझते नही । उसी का नाम अज्ञान है । उसी के आनन्द मे जीते हो फिर भी नही समझते । यह सत्सङ्ग, यह शास्त्र यह गुण इसलिए है कि जिज्ञासु इस सत्य को पकड़ ले । जिज्ञासु इस वृत्ति को पकड़ लेगा तो मन की वृत्ति को हृदय में समाहित कर देगा । हृदय में समाहित करने का मतलब क्या । स्थूल सूक्ष्म कारण तीनों बन्धो को पार कर जाएगा । स्थूल शरीर स्थूल बन्ध है । सूक्ष्म शरीर , पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियां, पंच प्राण मन बुद्धि 17 तत्त्वो को सूक्ष्म शरीर सूक्ष्म बन्ध है इसके पीछे कारण शरीर कारण बन्ध है । हृदय में ध्यान करने से तीनों बन्धों से परे हो जाएगा ।ब्रह्माकार वृत्ति में आ जाएगा ।

मुमुक्षु थोड़ा बहुत प्रयत्नशील रहे और इस वृत्ति को जाग्रत करता रहे। इसी को कहते योग । 'सर्वभूतानि चात्मनि' इस का मतलब है सब भूत इस आत्मा के अन्दर है । सम्पूर्ण भूतों से केवल यह शरीर ही नहीं समझते । शरीरों को तो इस लिए कहना पड़ता है कि यह प्रत्यक्ष हो रहे है । यह पृथ्वी जल तेज वायु और यह अकाश, यह पांच भूत भी इसी में है । वेद मंत्र है 'एतावान् एतस्य महिमा, त्रिपादस्यामृतंदिवि उस परमात्मा की इतनी बड़ी महिमा है । 'अथोजायांसश्च पुरुषः' पूर्ण परमात्मा को पुरुष कहते हैं । उस पुरुष, परमात्मा के एक पाद में यह सम्पूर्ण भूत हैं । सम्पूर्ण भूतों का कारण जो माया है वो माया भी परमात्मा के एक पाद में है । माया के दशांश में यह सम्पूर्णभूत हैं । तीन पाद में तो परमात्मा जैसे का तैसा है । निर्गुण निराकार स्वरूप है । इन सम्पूर्ण भूतों को मुमुक्षु ऐसे समझे कि यह सब मेरे हैं । 'आत्मैवा हमस्मि' मैं ब्रह्म ही हू ।" ऐसी भावना मुमुक्षु करता रहे । जब सम्पूर्ण ब्राह्माण्ड की आत्मा बने तो तुम्हारे अन्दर झूठा राग कहाँ से आएगा । झूठा द्वेष कहाँ से आएगा । धर्माधर्म की उत्पत्ति रूक गई। अब जो पुण्य होगा वो मोक्ष देने वाला पुण्य होगा । शुद्ध पुण्य होगा ।

जब तुम इस ब्रह्मभाव में चले गये तो अब तूम्हारी कामना कोई नहीं । जब कामना कोई नहीं तो कामना मूलक कर्म भी नहीं । दुनियाँ में सब से सस्ता और सबसे छोटा कर्म रोने का है किन्तु रोने का कर्म भी कब होगा ? जब कोई निमित्त आएगा । कोई निमित नहीं आएगा तो कैसे रोओगें ; जैसे कोई रो रहा । हो पूछा क्यों रो रहे हो ; कहते हैं पता नहीं । तो सुनने वाले क्या कहेंगे? screw ढीला है । तो रोने के लिए भी ज्ञान चाहिए । हमारा कोई प्रिय चला गया तो चलो रो लो थोड़ा, किन्तु बिना ज्ञान के रो भी नहीं सकते । तो दुनियाँ का कौन सा काम है जो बिना ज्ञान का होता है । जीने के लिए भी जो धन्धा करते हो, उस के लिए भी ज्ञान चाहिए और अपने अन्दर आने के लिए तो और अच्छा ज्ञान चाहिए । मुमुक्षु श्रद्धा से चलता रहे ।

गीता में भगवान कहते हैं ' श्रद्धावान् लभते ज्ञानं, तत्परः संयतेन्द्रियः, ज्ञानं लब्ध्वा परांशान्ति, मचिरेणाधिगच्छति ' श्रद्धाशील, श्रत् सत्यं ध माने ध्यानं । यस्यामृतो । जिस मन की वृति में सत्य का ध्यान आवे । मन की वृत्ति जब सत्य का ध्यान होता है, देखो मन की वृत्ति में जब सुख का ध्यान होता है,

तो उस सुख को पाने के लिए दुःख को शान्ति से सहन करते हैं । इसीं तरह उस सत्य को पाने के लिए जब हमारे मन में वृत्ति जग जाती है तो हम आगे बढ़ने का प्रयत्न करते हैं । श्रद्धा शब्द की व्याख्या आचार्यों ने की 'गुरु वेदान्त वाक्य विश्वासः' विश्वास भी करोगे तो गुरु के वाक्य में और वेदान्त वाणी में । क्योंकि वेदान्त विद्या जों कहेगी झूठ नहीं कहेगी । आत्मवेत्ता जो गुरु है वो भी जो कहेगा, तुम्हारे भले के लिए ही कहेगा । उस को अपना personal क्या interest है ? इस लिए गुरु और वेदान्त वाक्य में श्रद्धा हो गई तत्पर हो गया। 'संयतेन्द्रिय' इन्द्रियों में संयम आ गया । आज का बुद्धिमान मनुष्य एक २ के सौ नोटों की गड्डी में से जब एक नोट खींचता है तो कितनी सावधानी बर्तता है । घिस २ कर देखेगा कि कहीं दो नोट तो नही निकल आए । कितने सावधान है ? पाकेट के लिए सावधान है । अपने लिए नहीं । यही माया है । इसलिए भगवान कहते हैं जो करना है अभी करना है । कल किस ने देखा है ? जो अपने लिए सावधान है गीता उन के लिए कहती है ' तत्परः संयतेन्द्रियः'

ज्ञान लब्ध्वा परांशान्ति मचिरेणाधिगच्छति गुरु से शास्त्र से जब इस प्रकार ज्ञान पा जाएगा । परा शान्ति, अचिरेणाधिगच्छति ' मोक्षा रूपा शान्ति पर जाएगा । अचिरेण माने तत्काल । तत्काल, उसीक्षण शान्ति मिलती है मुमुक्षु को श्रुति कहती है 'एतत् मत्यं ब्रह्मपुरं ' बेटा यही ब्रह्मपुर है । पुर में लोग रहते है । ब्रह्म में ही सब रहते है । प्रत्यक्ष में समझो जब तक हमारा यह शरीर आत्मा के करंट मे रहेगा । तभी तक सब इस से प्यार करेंगे । सब आएंगे । कोई बेटा कोई भाई, कोई पत्नी सब आएंगे । इससे प्यार करेंगे । कोई मुर्दा उठ कर चलने लगे तो कोई चलने देगा ? डंडा मार कर टांगे तोड़ देंगे । इसका अर्थ क्या निकला कि जड़ प्रकृति को अधिकार नहीं कुछ करने का । उस चेतन के करंट में यह सब कुछ कर सकती है । माता पिता, बेटा बेटी, पति पत्नी सब बनने का अधिकार शरीर को है । किन्तु आत्मा के बिना न बेटा न बेटी न भाई न बन्धु । चेतन के करंट में यह सब कुछ बनेगा जिस के करंट में सब कुछ बनेगा वही पहले चाहिए । इस लिए श्रद्धाशील मुमुक्षु मन की स्थिति ऐसी बनावे ।

शरीर से जो भी व्यवहार है, यह नाटक है । नाटक तो करना पड़ेगा। नाटक का अर्थ 'न अटक' अटको मत आगे बढ़ते जाओ । कही नही अटको । यह

शरीर कहीं अटका ? बच्चा बना था बच्चा नहीं रहा। कुमार बना कुमार नही रहा। कहीं नही अटका। अब बुढापे में पकड़ने लगोगे तो क्या होगी? जैसे नदी मे में बहते हुए कोई घास को पकड़ लेता है। कही कोई लता मिल जाएगी तो उसी को पकड़ लेता है जो पाता है वही पकड़ता है, किन्तु नदी की तेज लहरों ने खींच लिया। ऐसे ही काल रुपी महानदी की लहरों में बहते जा रहे हैं। रात दिन रूपी दो लहरें हैं। उस में सब बहते जा रहे हैं। रात दिन रूपी दो लहरें हैं। उस में सब बहते जा रहे हैं। कोई अमृत नहीं करेगा। इसलिए अपने को ही पकड़ो। दूसरे को नहीं। इसका यह अर्थ नहीं कि किसी का तिरस्कार करो। मां को मां समझो, पत्नी को पत्नी समझो। भाई को भाई समझो पर ध्यान उस का रखो। मन सब को दो किन्तु ध्यान यह रखो कि मैं ही इस स्वरूप में पति हूं, इस स्वरूप मे पत्नी। जब मैं ही सब में हूं तो मोह कैसा ? मोह दूसरे में होता है कि अपने में ? मोह तो दूसरे में होता है। तो जब दूसरा कोई है ही नहीं तो मोह कहाँ ? मोह नही तो शोक कहाँ ? शोक भी दूसरे में होता है। अपने स्वरूप में निवृत्ति नहीं इस लिए शोक भी नही।

श्रुति कहती है 'तत्र कः मोह का शोकः' शोक नही आएगा मोह नही आएगा। 'तदेतत्सत्यं ब्रह्मपुरम्' मंत्र कहता है यह सत्य है ब्रह्मपुर। पहले इस शरीर को ब्रह्मपुर कहा। क्योंकि यह शरीर ब्रह्म के साक्षात्कार का साधन है, स्थान है। इस बुद्धिमान मुमुक्षु को कहीं साक्षात्कार होगा तो इसी शरीर में होगा। 'उपलब्धिस्थानं ब्रह्मपुर' ब्रह्म साक्षात्कार का स्थान होने के कारण इसे ब्रह्मपुर कह दिया। किन्तु यह गौण है। प्रधान इस चेतन को ही ब्रह्मपुर कह रहे है। 'अस्मिन् कामः समाहितः' इस अन्तरात्मा में यह सारी कामनाएँ समाहित है। जीव की कामानाएँ आने जाने वाली है इस लिए सत्य नहीं। मंत्र कहता है सत्यकामा सत्यसङ्कल्पः' ईश्वर की कामनाए सत्य है ईश्वर के सङ्कल्प सत्य है। जीव का सङ्कल्प मन से होगा और मन से बीस बार सच और बीस बार झूठ बोलता है। जीव सङ्कल्प वासना से होगा। वासनाएँ अनेक होती हैं। जीव अनेक सङ्कल्प कर बैठता है। होगा वह भी नहीं हो सकेगा वह भी। कामनाओ से मुक्तपाना जीव का कर्त्तव्य है। यह ब्रह्म चिन्तन, ब्रह्म ध्यान इस लिए कि हम मिथ्या कल्पना से मिथ्या वासनाओं से छुट्टी पा जाएँ। ब्रह्म के

स्वरूप को सत्य काम कहा, क्योंकि विशुद्ध सत्त्व गुण प्रधान ईश्वर की उपाधि है। विशुद्ध सत्त्वगुण प्रधान उपाधि में जो संकल्प होगा वो सत्य होगा।

जीवन में समझो कभी मन बड़ा प्रसन्न होता हैं तो झूठ बोलने की इच्छा नहीं होती, सच बोल देता है। मन प्रसन्न नही है, भय से कमजोर हो गया तो झूठ बोल देगा। छुपा देगा। इसका अर्थ निकला कि सत्त्व गुण की लहर आ गई तो मन प्रसन्न हो गया। रजोगुण तमोगुण की लहर आ गई तो मूर्खता में फंस गया। शोक मोह मे फंस गया। ईश्वर मे रजोगुण और तमोगुण तो है ही नहीं। इस लिए वह परमात्मा सत्य काम हैं, सत्य संकल्प हे। मंत्र आगे कहता है 'एषआत्माऽपहतपात्मा' यह हृदय के अन्दर जो चेतन है यह साक्षात्कार स्वरूप है। 'अपहतपात्मा' यहाँ पाप्मा शब्द का अर्थ धर्माधर्म है। यह आत्मा धर्माधर्म से परे है। ऐसी आत्मा को जो जान जाएगा वह समस्त लोकों में आजादी से जा सकेगा।

कल इसकी आगे व्याख्या करेंगे

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१७-४-८८

प्रवचन सं०-९

"ॐ यथा ह्येवेह प्रजा अन्वाविशन्ति यथानुशासनं यं यमन्तमभिकामा भवन्ति यं जनपदंयं क्षेत्रभागं तं तमेवोपजीवन्ति ।। ॐ तद्यथेह कर्मजितो लोकः क्षीयत एवमेवामुत्र पुण्यजितो लोकः क्षीयते तद्य इहात्मानमननुविद्य व्रजन्त्येतांश्च सत्यान् कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेष्वकामचारो भवत्यथ य इहात्मानमनुविद्य व्रजन्त्येतांश्च सत्यान् कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।।"

(छान्दो.८-१-५।६)

विचार आया मंत्र कहता है कि यह तुम्हारी आत्मा न तो किसी अवस्था के विकार से विकार वाला है, न इस मे वृद्धावस्था आती है, 'नास्य वधेन हन्यते' न यह किसी से मारा जाता है। अवस्था विकार साकार पदार्थ मे आता है किन्तु जो साकार पदार्थ नहीं होगा उस में कोई विकार नहीं होगा। जैसे पेड़ पौधे हैं, कोई नहीं छुए उसको तो भी वह अपनी अवस्था के अनुसार धीरे २ बड़ा होगा, फलेगा फूलेगा और अपने आप सुख जाएगा। यही हाल हमारे शरीर का है। किसी मे पुछो क्यों भाई तुम बुढे होना चाहते हो ? संसार में दो तरह के वर्ग चल रहे हैं आस्तिक और नास्तिक। आस्तिक ईश्वर को मानने वाला है, परलोक को भी मानता है। दूसरा प्रत्यक्ष वादी है, वह कहता है ईश्वर की बात छोड़ो। परलोक की बात भी छोड़ो। जो दीखता है उस मे काम ठीक से करो। भौतिक वादी भी कहेगा नही और जो अस्तिक है वो भी कहेगा नही। तो 100% वोट बुढा नहीं होने के पक्ष में चले गये। किन्तु क्या ईश्वर तुम्हारे इस बहुमत को मान लेगा ? वह कहेगा मेरी घरवाली जो करती है वह ठीक है। जो पुरुष अपनी घरवाली को ठीक जानता है वह उसके कहने को टालता नही। वह जानता है कि वह जो करेगी ठींक ही करेगी। अपने घर में किसी के लिए झगड़ा क्यों करे। अपनी शक्ति को क्यों बिगाड़ेगा। घर वाली से झगड़ा करोगे तो शान्ति से रोटी खाने से भी गये।

तात्पर्य यह कि 100% हम बुढा होना नही चाहते। यहाँ आस्तिक नास्तिक सब बराबर हो गये। पर तुम्हारे बहुमत का कोई मूल्य नही। तुम ठीक जैसे आए हो ऐसे चलते चलो। ज्ञान से चलोगे तो कुछ पाकर जाओगे। नही चलोगे तो गंजा कर जाओगे। यह प्राण रूपी धन इस शरीर रूपी पिंजरे मे बन्द है। इस शरीर को एक बक्सा समझो। जैसे टूटा बक्सा है, उस के अन्दर जो भी डालोगे गिरता जाएगा। ऐसे ही इस शरीर के अन्दर प्राण रूपी जो धन है वह गिरता चला जाएगा। उस का कोई महत्त्व नही रहेगा। इस बुद्धिमान को विचार तो करना पड़ेगा साकार पदार्थ ही विकारी होगा यह तुम्हारी जो अन्तरात्मा है यह साकार पदार्थ नही हैं। 'एतत् सत्यं ब्रह्मपुरं' यह सत्य है। यह त्रिकाल सत्य है। किसी एक काल मे तो यह फूल

भी सत्य है । त्रिकाल सत्य वो है,जिस काल मे उस का ज्ञान नही था तो भी वो सत्य था । जिस समय ज्ञान हुआ उस समय भी सत्य है । जिस समय हम उस के ज्ञान से दूर हो जाएंगे उस समय भी तो भी वह सत्य ही रहेगा । जिज्ञासु उस के इस स्वरूप को जानता है इसलिए इस के त्रिकाल सत्य कहा । श्रुति पहले शरीर को भी ब्रह्मपुर कहकर आई है । पशु पक्षी के शरीर तो ऐसे है कि इन में आओ और प्राण गवाँ कर चले जाओ।जैसे कोई मन्द बुद्धि हो, जेब मे धन डाल कर मार्किटिंग के लिए जाए रुपया तो खर्च कर आया, सारा धन खर्च कर के आ गया किन्तु लाया कुछ भी नहीं । घर वाली कहेगी कोई पाकेट मार मिल गया होगा ।

ऐसे ही पशु शरीर है । मनुष्य शरीर ही ऐसा शरीर है कि यहाँ से कमा कर लौटते हो । अब यह कमाई तुम्हारे ज्ञान के अधीन है । जितना ऊँचा ज्ञान होगा, उतनी ही ऊँची कमाई होगी । एक चोरी करता है । एक बुद्धि से बिजनैस करता है । तो जो चोरी करता है, क्यों करता है । उस का ज्ञान वैसा ही बना । यद्यपि ज्ञान तो निर्मल पदार्थ है । यद्यपि ज्ञान मे दोष नहीं, किन्तु उसने समझा ही उतना और चित्त के जो लोभ मोहादि विकार है इन चित्त के विकारों पर नियन्त्रण नहीं रख सका । इस लिए वह चोरी करता है । जो इन झूठे लोभ मोहादि विकारों मे संयम करेगा वह अच्छे काम करेगा । बिजनेस भी करेगा । परिवार का, समाज का, राष्ट्र का भी भला करेगा । इस लिए कहा कि मनुष्य बड़ा श्रेष्ठ है इसे ब्रह्मपुर कहा है । इस मे जब अपने सत्य स्वरूप को जानने की इच्छा करेगा , आत्मा का भी कल्याण करेगा । तो यह ब्रह्मपुर है किन्तु आत्मा स्वभाव से ही ब्रह्मपुर है । वह सर्वाधार है, सबका आश्रय है । विना चेतन के कोई वस्तु जी नहीं सकती । इस चेतन के आश्रय मे ही हमारा यह शरीर चला है । जिस समय यह चेतन इसको छोड़ देगा, सब इसको छोड़ देंगें । अपने अनुभव के लिए समझो रामायण सुनते हो , आजकल T. V. पर देखते हो, तुलसीदास जी सामान्य भाषा मे बोल गये ' जा पर कृपा राम की होहिं, ता पर कृपा करे सब कोई ।' जिस क ऊपर राम की कृपा है उस के ऊपर सब कृपा करते है।वो राम तो अपने समय में हुए और चले गये।पर राम का तात्पर्य्य केवल दशरथ का बेटा नहीं । राम रमते सर्वस्मिन् सर्वैः स रामः' जो सब मे रमण करे वह

राम । वह तुम्हारे हृदय मे भी रमण कर रहा है 'मैं' 'मैं' कर के । 'अहं' 'अहं' कर के उसी का भान हो, रहा है । जब तक तुम्हारे हृदय मे रमण कर रहा है, अहं अहं कर रहा है, जब तक उसकी कृपा है तब तक सब की कृपा है । भाई, बेटा बन्धु सब की कृपा है । और उसने कहा कि भक्त तुम बैठो मैं जाता हू, तो तुम्हें कोई रहने देगा ? उसमे मुँह फेरा कि झट् पालकी सजाएंगे और बांधकर ले जाएंगे । यहाँ नेपाल मे तो और भी अच्छा है, यद्यपि राम अभी गया नही पर समझ लिया कि राम जाने वाला है तो पहले ही डोली मे बिठाकर ले जाते हैं आर्यघाट, पशुपतिनाथ के पास । तुम बढ़िया घर बना सकते हो, प्राण को उस मे बन्द कर सकते हो, पर प्राण छोड़ नहीं सकते उस में । घर में मरने का अधिकार नही नेपाल मे । जिस को ले कर जाते हैं वह सोचता है कि आये थे तुम्हारे वंश में, आराम से रहे, जो बना वो किया भी, अब जा रहे हैं । जिस का ज्ञान ठीक नहीं वह रोने लगता है, हाय मेरे बेटे मेरे को बाहर निकाल रहे हो ।

यह संसार ऐसा ही है । यहाँ तो खिलते फूल को ही आगे रखा जाता है । सूखे फूल को कौन हाथ मे लेगा । ज्ञान का फल यह है कि जो भी पदार्थ है, उन का जो स्वरूप हम समझ कर बैठे हैं वह ऐसे हैं नहीं । इसलिए बड़ी बुद्धिमानी से इस सत्य को समझो । इस आत्मा को समझो और इस मे मन की स्थिति बनाओ । मन ठीक रहेगा तो यह शरीर भी ठीक रहेगा । यह शरीर कभी ज्यादा भी रहेगा कभी कम भी रहेगा तो भी कम्पन नहीं आयेगा । भय से यह मन कांप जाता है । मृत्यु का भय हा सब से बड़ भय है दुनियां में । यह आत्मा ही ब्रह्मपुर है उस की छाया मे यह शरीर जिएगा, खाएगा पिएगा । ब्रह्मपुर कहने का तात्पर्य यह है कि केवल इस शरीर का ही नही यह सम्पूर्ण जगत का जो आधार बना हुआ है वह अपनी आत्मा है । ऐसी आत्मा मे संकीर्णता कहाँ से आएगी । जैसे लोक जीवन मे जो बच्चों के माता पिता बनते है वो अपने बच्चों को एक ही आँख से देखते है । बड़ी मां अपने सब बच्चों को एक ही आँख से देखेगी । यह अलग बात है कोई बच्चा मां का ज्यादा ध्यान रखता है तो मां भी उसका अधिक ध्यान रखती है । किन्तु यह सब मेरे ही बच्चे है यह ध्यान रखती है । इसी तरह ज्ञानवान भी समझ जाता है कि मैं ही जगत का आधार हूँ तो बताओ किस से ज्यादा प्यार करेगा और किस पर गुस्सा करेगा ।

चित्त के विकार साफ हो जाएँगे, चित्त निर्मल हो जाएगा। 'अपहतपाप्मा' हो जाएगा। पाप्मा शब्द का अर्थ है धर्माधर्म। मनुष्य धर्म भी करता है, अधर्म भी करता है किन्तु इन का प्रभाव बुद्धि तक ही है। आत्मा में इन का कोई प्रभाव नहीं। जैसे जाग्रत अवस्था में ही क्रोध आता है, सुषुप्ति मे क्रोध की स्थिति नहीं रहती। भगवान कृष्ण गीता मे कहते हैं। इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः। मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः" हे अर्जुन यह इन्द्रियाँ बड़ी सूक्ष्म हैं जिन अर्थो को ग्रहण करती हैं उन अर्थो से बड़ी सूक्ष्म हैं, इन्द्रियों से परे मन है यह मन इन इन्द्रियों से सूक्ष्म है। एक ही मन सारी इन्द्रियों को कंट्रोल में करता है। सूक्ष्म शब्द अर्थ समझो अधिक शक्तिशाली। अधिक शक्तिशाली कौन होगा? जैसे इस लोक म समझो प्रजा का पालक राजा होता है। वह राजा सार्वभौम है। उस के हाथ में उस राष्ट्र की सारी सत्ता है। राजा के समीप रहने वाले लोग भी शक्तिशाली होते हैं। कभी २ उस व्यक्ति को भी लोग राजा कह देते है। जो जितना महाराजा के समीप होता है उस की उतनी ताकत बढ जाती है। इसी तरह तुम्हारी यह अन्तरात्मा राजाओं का भी महाराजा है। इस के जो समीप होगा उस की उतनी ही ताकत बढ जाएगी। जैसे यह विषय बाहर हैं, तुम्हारी इन्द्रियाँ यहाँ बैठी है। यह चेतन के करंट में में है। आत्मा के समीप है इस लिए इन की शक्ति बढ गई। मन आत्मा के और भी समीप है इस लिए मन की शक्ति बढ गई। मन से परे बुद्धि है। मन संशय वृत्ति का नाम है। मन की स्थिति हमेशा संशय प्रधान है 'इदमस्ति न वा इदमस्ति न वा' यह है कि नही? यह होगा कि नही? संशय वृत्ति में किसी वस्तु का निर्णय नहीं कर सकते। जहाँ बुद्धि आ गई उसने निश्चय कर दिया। यही ठीक है। निश्चय हो गया तुम संशय से बाहर हो गये।

याद रखो, तुम को जो भी सुख होगा वो निश्चय मे ही होगा। संशय में नहीं। संशय में तो दुःख ही होगा इस लिए कहा 'संशयात्मा विनश्यति' संशय वाले का यह लोक नही और परलोक भी नहीं। यह लोक माने जो दृश्यमान है, यह मनुष्य शरीर ही मनुष्य लोक है। जवान लड़के को भी यदि संशय हो गया कि 'यह करूँ कि वो करूँ' यहाँ रहूँ कि वहाँ जाऊँ, तो वह भोजन भी ठीक से नहीं कर पाएगा। जब भोजन ही ठीक से नहीं कर सके तो यह शरीर भोजन के

बिना रहने वाला नहीं , यह कहेगा कि जब तुम खाना दाना ही ठीक से नही देते तो हम तुम्हारे को उठा २ कर क्यों घूमें । तुम अपना बन्दोबस्त करो और हम को अपनी मम्मीं के घर जाने दो 'नायं लोको नास्ति परः' शरीर की मम्मी कौन ? यह पृथ्वी । इस शरीर को पृथ्वी मे मिल जाने दो । जो यहाँ ठीक नहीं वह वहाँ भी ठीक नही । इस लिए कहां 'नायं लोको नास्ति परः' जो यहाँ ठीक वह वहाँ भी ठीक है इसलिए यहाँ ज्ञान को स्वस्थ बनाओ । बच्चों को बचपन में ही पढ़ाते हैं क्यों कि बचपन मे ही यदि ज्ञान ठीक रहेगा तो वह ज्ञान जीवन के लिए उपयोगी होगा । परिवार के लिए, समाज के लिए, राष्ट्र के लिए उपयोगी होगा । इतने अंश मे ज्ञान ठीक होगा तो उस की लोक मे प्रशंसा हो जाएगी कि परिवार का भला करने वाला है, समाज का भला करने वाला है, राष्ट्र का भला करने वाला है । जिसका ज्ञान ठीक नहीं हुआ, कुछ पड़ा लिखा नही तो वो भैंस तो चरा लेगा किन्तु कुछ कर नहीं पायेगा । इसी जीवन मे इस ज्ञान को ठीक बनाना पड़ेगा ।

तुम कहो कि आगे कर लेगें तो पता नहीं आगे क्या हालत हो जाएगी । क्या पत्ता किस रूप में कहाँ प्रगट होओगे । मम्मी यदि सींग पूंछ वाली मिल गई तो बेटे का क्या हाल होगा ? यह खाला का बाड़ा नहीं है कि तुम्हारी इच्छा से जन्म होगा । बड़ी सावधानी से चलने की आवश्यकता है । 'न सुखं संशयात्मनः' जो हमेशा संशय में रहता है उस को सुख नहीं और उसका परलोक भी नहीं । इसलिए श्रुति कहती है "अस्मिन् ब्रह्मपुरे सर्वे कामाः" इस महान आत्मा के अन्दर सब कामनाएँ समाहित करो । जीव झूठी इच्छाएँ करता है । मलिन सत्त्व जो इसकी उपाधि है उसे और मलिन कर देता है । यह वासना का जाल बुनता जाएगा कर कुछ भी नहीं सकेगा । वो ही मनुष्य कुछ कर सकता है जो अपने मन को उस परमात्मा से मिलाता है । उसके मन के अन्दर सत्त्वगुण की स्थिति बन जाती है, रजोगुण की स्थिति कमजोर हो जाती है । तो वह आदमी सत्यकाम होता जाता है । यह है 'सत्यकामः सत्यसङ्कल्पः' एक फोन नं. मिलाने के लिए कितने नम्बर मिलाने पड़ते हैं । तब कहीं ठीक नम्बर मिलता है और बात हो पाती है । ईश्वर से मन को मिलाने के लिए नम्बर मिलाओ । ईश्वर सत्यकाम है सत्यसङ्कल्प है । ईश्वर का कामनाएँ, ईश्वर के सङ्कल्प झूठे नहीं होगें । झूठे

सङ्कल्य उस हृदय मे होते हैं जिस में सत्त्व गुण की शुद्धि नहीं। जिस का सत्त्व गुण मलिन है। रजो गुण होगा तो राग बढ़ेगा। चिन्ता तृष्णा बढ़ेगी। तमोगुण बढ़ेगा तो जड़ता बढ़ेगी आलस्य बढ़ेगा।सुस्ती आएगी, बेहोशी रहेगी।

सत्य सङ्कल्प सत्य काम ईश्वर ही अपहत पाप्मा है, जो धर्माधर्म से परे है। जीव के अन्दर जो सुख है उसका कारण जीव का धर्म है, पुण्य है किन्तु परमात्मा स्वरूप से ही सुख स्वरूप है। 'विज्ञानंमानन्दं ब्रह्म' यह महान ब्रह्म ज्ञान रूप ही है। वह विज्ञान स्वरूप है। उसको ज्ञान भी कही से लेने की जरुरत नही उसको सुख भीं कही से लेने की जरुरत नहीं। जीव को जरुरी है। थोडी२ देर मे अज्ञान से दब जाता है। अपने सुख का संग्रह करना पड़ेगा। reserve करना पड़ेगा। सुख के निमित्त कर्म भी करना पड़ेगा। तत्त्वविचार करना पडेगा। जीव जब तक बुद्धि की पकडे रहेगा, तब तक जन्म मरण में बंधा रहेगा। बुद्धि को छोड़ देगा तो मोक्ष मे चला जाएगा। 'एष मोक्षः' बुद्धि को तत्त्व चिन्तन से लगाओ। तत्त्वचिन्तन मे आने वाली बुद्धि अपने स्वरूप मे समाहित हो जाती है। यह श्रुति आगे इन्द्र विरोचन प्रसंग में आने वाली है, आगें इसकी विशद व्याख्या करेंगे। देखो मंत्र कहता 'इहात्मानमनुविद्य व्रजन्तेषांश्च सत्यान् कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति।' यह इस लोक में, इस शरीर में, इस आत्मा को 'मैं' 'मैं' तो करता जाता है बकरीं के बच्चे की तरह। किन्तु 'मैं' कौन हूँ' यह समझता नहीं। इस 'मैं' को जो नही समझता, शास्त्र से गुरु से जो इस सत्य को नहीं समझेगा, 'व्रजन्ति' माने चले जाते है, जिस शरीर को पकड़ कर खड़े थे, कुछ नहीं समझे अन्दर कौन है? वह शरीर भी गया, चल पडे। वह कही भी जाएगा पराधीन होगा, उसकी कामना पुरी नहीं होगी। जैसे यहाँ मंत्र कह रहा है साम्राज्य है नेपाल मान लो अपना राष्ट्र है तो हम यहाँ प्रजा है राजा ने कहा कि तुम वहाँ चले जाओ तो हम को वहाँ जाना पडेगा। राजा की आज्ञा माननी पड़ेगी उसके आगें मना नहीं कर सकते। जब तक हम उसके राज्य मे रहते है उसकी आज्ञा का उल्लंघन नही कर सकते।

उसी तरह जब तक हम कर्म के अधीन है वह कर्म हमको जिधर भी खींच कर ले जाएगा हम को जाना पडेगा। कर्म जिस २ फल में बांध देगा उसी

उसी शक्ल में बंधना पड़ेगा। तुम ना नहीं कर सकते मंत्र स्पष्ट करता है 'यथा ह्वेह प्रजा अन्वाविशन्ति यं जनपदं यं क्षेत्रभागं तं तमेवापि जीवन्ति।' जैसे प्रजा को महाराजा का जैसा शासन होगा उसी के अनुशार रहना पड़ेगा। जहाँ वह कहेगा वहीं जाना पड़ेगा। ना करोगे तो विशेष कारण बतलाना पड़ेगा। वह भी उस की समझ में आएगा तो वह मानेगा नहीं तो बागी समझे जाओगे वह जिस जनपद मे भेजेगा, जनपद माने नगर, जिस २ क्षेत्रभाग मे भेजेगा वहीं जाकर रहना पडेगा। जिधर महाराजा ने कहा प्रजा को उधर जाना ही ठीक है। वहीं जाकर वह प्रजा आनन्दित होती है। वह स्वतंत्र नही है किन्तु यह बताओ राजा पर किसी का शासन है? वह स्वतंत्र है। वह जहाँ चाहेगा जाएगा। वह किसी के अधीन नही। स्वतंत्र कौन? राजा। राज्य मे रहने वाली सारी प्रजा महाराजा के अधीन है। इसी तरह प्रकृति का जो साम्राज्य है इस के अन्दर जब तक यह जीव है, यह जीव कर्म की रस्सी से बंधा हुआ है, स्वतंत्र नहीं है। जहाँ भी कर्म ले जाएगा जाना पडेगा। श्रेष्ठ कर्म होंगे तो स्वर्ग लोक मे भी जा सकता है। तामस कर्म होंगे तो पशु पक्षी भी बन सकते हो। वहाँ मी 'मैं' मैं' कर सकते हो पुण्य पाप दोनों समान कक्ष मे होंगे तो मनुष्य शरीर मे आ जाओगे। अगर तत्त्वज्ञान में आ जाओगे तो तुम महाराजा की तरह स्वतंत्र हो सकते हो। तत्त्व ज्ञान का मतलब क्या? जो अब तक अपने को अपूर्ण समझता था, संसारी समझता था, कर्त्ता भोक्ता समझ रहे थे, सुखी दुःखी समझ रहे थे। वो सब विकार अब नहीं रहे। पूर्ण भाव में आ गये। तुम अपनी पूर्णता को समझ जाओगे। ऐसा सत् चित् आनन्द स्वरूप यह ब्रह्म है। अपने ब्रह्म भाव को स्पष्ट समझ लेगा, वो महाराजा की तरह स्वतंत्र हो जाएगा। पूर्ण स्वतंत्र होने से कर्म बंधन से बाहर हो गया। अब कर्म इसको पकडेगा नहीं। श्रुति ऐसी व्याख्या करती है। कल और व्याख्या करेंगें।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१८-४-८८

प्रवचन सं०-१०

"ॐ य इहात्मानमनुविद्य ब्रजन्त्येतांश्च सत्यान् कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।। स यदि पितृलोक कामो भवति सङ्कल्पादेवास्य पितरः समुत्तिष्ठन्ति तेन पितृ-लोकेन सम्पन्नो महीयते ।।"

(छान्दो. ८-१-६)

(छान्दो. ८-२-१)

बड़ा अच्छा विचार आ रहा है। हम लोग यह निश्चय कर के आये है कि आत्मा का असली स्वरूप निर्गुण निराकार है। इस में कोई विकार नही। यह किसी शस्त्र से कटता नही। आत्मा का लक्षण किया 'अपहतपाप्मा' पाप्मा शब्द से धर्माधर्म कहा। आत्मा में धर्म नही अधर्म भी नहीं। जीव सुख धर्म प्रधान है आत्मा का सुख स्वभाविक सुख है। स्वभाविक सुख होने से कहा गया 'विज्ञानमानन्द ब्रह्म' अर्थात आनन्द इस का स्वस्वरूप है। सुख इसका स्वस्वरूप है। दुःख इस में नहीं है। कहने का अभिप्राय यह है कि जो श्रद्धाशील मुमुक्षु आत्मा के ऐसे स्वरूप को समझ जाएगा, वह ऐसा ही हो जाएगा। वह ऐसे स्वरूप में पहुंच जाएगा। उस का जीवभाव छुट जाएगा। नहीं तो जीवभाव छुटेगा नही। शरीर रूपी बक्से मे जन्मा, प्रगट हुआ, शरीर रूपी बक्से मे ही जिया और शरीर रूपी बक्से मे बन्द ही चला जाएगा। कभी विचार ही नहीं किया कि 'मैं' क्या हूं ? 'मैं' कौन हूं ? कुछ सोचा ही नही। हजारों मे किसी एक की परलोक की दृष्टि होती है। वह सोचता है कि यहाँ आए है तो यहाँ से वहाँ भी जाएँगे। इसलिए वह सत्कर्म भी करता है सत्कर्म का अर्थ, सत् माने परमात्मा, परमात्मा का ध्यान कर के जो कर्म करना है वह सत्कर्म है। सत्कर्म भी किया पर केवल यही कि परलोक में अच्छी गति हो। इस के आगे विचार

नहीं किया । अपने स्वरूप का इस मे विचार ही नही किया । 'मैं' कौन हूं' परमात्मा का ध्यान करता है । श्रद्धा कर के बैठा है और सत्कर्म करता है । तो वह सत्कर्म उसको एक cell से निकाल कर दूसरे cell मे भर्ती कर देगा ।

जैसे घर में मूसे बढ़ गये । बाजार से चूहेदानी ला कर सजा दिया । चूहा खाने की चीज देख कर उस मे घुस गया । दरवाजा बन्द हो गया । फंस गया उस मे और समझ गया कि मैं arrest हो गया । धीरे से चूहेदानी को उठाया और गली मे जाकर विमला के घर के आगे चूहेदानी को खोल दिया । चूहा निकला और विमला के घर घुस गया । अभ सेठानी तो छुट्टी पा गई पर विमला के घर मे चूहा घुस गया । दो चार दिन बाद वह भी एक चूहेदानी ले आई और उस मे चूहे को फंसा कर जमना के घर मे छोड़ आई । यह चूहा जैसे एक चूहेदानी से दूसरी चूहेदानी मे भटक रहा है । इसी तरह यह जीव रूपी चूहा माया की चूहेदानी मे फसा हुआ है । माया ने इस जीव को चूहेदानी मे फंसा रखा है और यह एक शरीर से दूसरे शरीर मे घुसता रहता है । एक बड़ी सेठानी ने सोचा कि चूहा तो पकड़ना है किन्तु चाँदी के पिंजरे मे पकडेगी । चाँदी का पिंजरा बनवाया और सजा कर रख दिया । चूहा उस में फंस गया । हम तो बस चाँदी की चूहेदानी में फंसे है । जो सींग पूंछ लगा कर आए हैं, बाहर बंधे हैं वो लोहे की चूहेदानी है । श्रुति इस रहस्य का विस्फोट करती है कि बेटा ऐसी इच्छा मत करो कि हम बड़ा पुण्य कर के स्वर्ग पा जाएंगे । सोम का पान कर के अमर हो जाएंगे । 'अपाम सोमा अमृता अभूम' अमर होने का अर्थ लोगो ने समझा कि जन्म मरण से छूट्टी पा जाएंगे 'चिरममृता अभूम चिरकाल तक जीने का, चिरस्थाई होने का तात्पर्य है तुम्हारी आयु बढ़ जाएगी। जैसे मच्छर की आँख से अपने शरीर को देखो । मच्छर की दृष्टि मे हमारी आयु कितनी बड़ी है । हमारे इस एक शरीर की आयु में मच्छर तो करोड़ों बार जन्मेगा मरेगा । जैसे मच्छर की आँख में हमारी आयु बड़ी है ऐसे हो हमारी दृष्टि मे देवताओं की आयु बड़ी है । देवता अमर है देवताओं की आयु में हम लाखों बार जन्मेगे मरेंग । पर देवता भी अमर नहीं ।

श्रुति कहती है 'कर्मजितो लोकः क्षीयत' कर्मजित शब्द का अर्थ हैं कर्मणा जीयते,जीयते का अर्थ है आर्जन करना जैसे किसी सुन्दर बगीचे में माली कैसी

अक्ल से फूल चुनता है। कली भी नही टूटे कांटा भी नहीं गढ़े। इस मन लोभ मोह का बाजार लगा पड़ा है। लोभ मोह को कही खरीदने जाना पड़ेगा क्या ? आत्मा के परलोक भले के लिए शुभ इच्छा करेगा तब सुन्दर कर्म को पकड़ेगा। तभी श्रेष्ठ कर्म को पकड़ेगा। तुम्हारा यह शरीर भी कर्म से चयन किया हुआ है। सारी दुनियां में देखो, सब कुछ मिलेगा पर यह सुन्दर शरीर नही मिलेगा। अभी तक कोई ऐसी दुकान नहीं खुली कि जहाँ तुम ऐसा सुन्दर शरीर पां सको। सारी दुनियाँ सम्पत्ति भी रखो तो भी पुराने शरीर के बदले नया शरीर नहीं मिलेगा। नया शरीर लेने तो परमात्मा की मार्कीट मे ही जाना पड़ेगा। और परमात्मा की मार्कीट में जब लौटोगे जब यदि अच्छा कर्म कर के लौटोगे, केवल अच्छा कर्म ही नहीं, ज्ञान पूर्वक किया हुआ कर्म होगा तीं अच्छा सुन्दर शरीर मिलेगा। नहीं तो सींग पूंछ वाली मम्मियों की कमी नहीं है दुनियाँ में।

श्रद्धा से बुद्धिमान सत्कर्म तो करता है किन्तु यह जानने की इच्छा नही की कि 'मैं कौन हूं' तो उसका यह कर्म कैसा है, जैसे कोई अन्धा आदमी है और उस अन्धे आदमी को कोई पकड़ कर ले गया पशुपति के दर्शन कराने के लिए। तो उसका यह कर्म तो अच्छा है किन्तु अन्धा है, इसलिए वहाँ जाने पर भी कुछ दीखा नही। चला क्यों गया ? आदमी पकड़ कर ले गया। इस अन्धे की तरह ही यह सत्कर्म जो करना है पशुपति नाथ का दर्शन करना है। सत्कर्म श्रद्धा ले आई। श्रद्धा ने सत्कर्म कराया। उस अन्धे और इस अन्धे में क्या फर्क है। सत्कर्म को समझो पशुपति का स्वरूप और श्रद्धा जो है उसे वह आदमी समझे। जैसे वह अन्धा पशुपति के मन्दिर में जा कर भी कुछ देख कर नही आया ऐसे ही हमने श्रद्धा से सत्कर्म तो किया किन्तु कुछ समझा नहीं कि यह किस के लिए सत्कर्म किया है ? जो दीख रहा है, यह शरीर, क्या यह इसका फल भोक्ता है कि और ही कोई इसके फल का भोक्ता होगा ? यह विवेक तो हम ने किया ही नही। इस का अर्थ यह हुआ कि परमात्मा के भरोसे ही है सब। यह तो ऊपर का छिलका ही है। जो यह जानता है कि इस छिलके को अपने से जुदा करो और आनन्द जो है उस को निकाल कर आगे भेज दो। नही तो 'पुनरपि जननं पुनरपि मरणं, पुनरपि जननीजठरे शयनं मूढमते गोविन्दं भज' यह चक्कर

तेरा बन्द होने वाला नही है । मां की जठराग्नि में बार २ शयन करना पड़ेगा। इस लिए विवेकशील को अपनी इस आत्मा को भी जानना चाहिए । इसके जाने बिना कल्याण नहीं ।

यह बताओ बिना जाने तुम्हारा कौन सा काम होता है । रोने के लिए भी ज्ञान की जरूरत है । मम्मी के मरने का ज्ञान होगा तभी छोकरा रोएगा । तो यह समझो कि यह कर्म क्यों और किस के लिए कर रहे हो । इतना ज्ञान तो चाहिए ही । इसके बिना कुछ होने वाला नही । ज्ञान नही तो सब कर्म अल्प फल देने वाले होंगे । मच्छर का दृष्टान्त समझो । तामसी योनि है मच्छर की । तामसी कर्म से तामसी योनि में चला गया । थोडी देर जी कर दूसरी योनि में चला जाएगा । थोड़ा भी यदि कही टिकता है तो मनुष्य योनि में ही टिकता है । आज कल बड़े घरानों में कुत्ता पालने का, शौक हो गया है । कहते हैं मनुष्य का की एक वर्ष की आयु और कुत्ते की सात वर्ष इस का तात्पर्य यह है कि मनुष्य बच्चा मे 10, 12 वर्ष मे थोड़ा होश में आता है कुछ सिखता है । इतने समय में कुत्ता बुढा हो कर मर भी जाता है । जितना तामसी योनि में जाएगा उतनी आयु कम मिलेगी । यह भी ईश्वर का अनुग्रह समझो क्योंकि तामसी योनि से जल्दी छुट्टी पा जाएगा । किन्तु एक बक्से से निकला और दूसरे बक्से में फंस गया ।

मंत्र कहता है 'कर्मजितो लोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुण्यजितो लोकः क्षीयते' तामसी शरीर जल्दी मर जाता है । बडे २ कर्म भी तू करेगा तो देव शरीर प्राप्त कर लेगा । कहते है 'अपाम सोमममृताः अभूम' सोम पान कर के अमृत हो जाएगा । किन्तु अमर तो देवता भी नही । मरना उसको भी पडेगा । उस की अमुक सीमा तक आयु है । भगवान गीता में स्पष्ट करते है 'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति, ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशन्ति । हे अर्जुन तू स्वर्ग में भी जाएगा तो पुण्य क्षीण होने पर मर्त्य लोक में आना पडेगा । एवं त्रयीधर्ममनु— प्रपन्ना, गतागतं कामकामा प्रलभन्ते।।ऋग् यजु: साम वेद यह तीनों मिल कर त्रयी विद्या कहलाते हैं वेद विहित धर्म 'त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना' को प्राप्त करने वाले भीं 'गतागतं कामकामा लभन्ते' काम माने वासना नाना प्रकार की वासना में ही जिन की बासना है उस को कामकामा कहते है । ऐसे जों नाना प्रकार की नाना

वासना वाले है उन के लिए कहा 'गताऽगतं' गता और अगता। आना जाना लगा रहता है। जाओ और लौट कर चले आओ। यह लोग आने जाने की निबृत्ति नही कर पाते। आने जाने की निवृत्ति तो तत्त्वज्ञान से होती है। 'ज्ञाने सर्वा क्रिया परिसमाप्यते' ज्ञान में ही सब कर्मों की समाप्ति है। उदाहरण के लिए समझो भोजन करने लगे तो कितनी देर तक भोजन करोगे? तृप्ति वा ज्ञान हुआ क्रिया समाप्त हो जाएगी।

ससुराल में जमाई ने थोड़ा सा खाया। ससुर ने देखा कि इस ने खाना बन्द कर दिया। उसने कहा लो मैं खिलाता हुँ। पर वह कब तक खिलाएगा। बहुत प्यार से भी खिलाएगा तो या दो ग्रास ही। ज्ञान ने मना कर दिया। अधिक नही खाएगा। तृप्ति जाग गई। जब तक ज्ञान नही होगा क्रिया चलती रहेगी। इसलिए कहा 'एवमेवामुत्र पुण्यजितो लोकःक्षीयते' मंत्र सावधान करता है। इस लोक में बुद्धिमान को समझने के लिए बडे सुन्दर मंत्र दिए है। रूप को समझना हो तो आँख को पकड़ो। शब्द को समझना हो तो कान को पकड़ो। यह शब्द को समझा देगा। यों आकाश में कान लगाने से कुछ नही पकड़ेगा। यहाँ हम सब बैठे हैं। ट्रांजिस्टर खोलोगे तो शब्द सुनाई पड़ेगा। दुनियाँ सूक्ष्म गति से चल रही है। इन्द्रियों के बल से पकड़ नही पाओगे। इसलिए परमात्मा ने इन के पीछे सूक्ष्म बुद्धि को रखा है। बुद्धिमान अगर सूक्ष्म बुद्धि को जाग्रत करेगा तो यह सूक्ष्म जगत को भी समझ जाएगा। स्थूल जगत के भोग अल्प आयु देने वाले है। अल्प सुख देने वाले और अधिक दुख देने वाले है।

इसी प्रकार यह जो सूक्ष्म जगत है। सूक्ष्म जगत के भोग भी अल्प है और अल्प सुख देने वाले है। जब तुम्हारे अन्दर ऐसा विवेक जग जाएगा तो वैराग्य भी आ जाएगा। यह सारी दुनियाँ हमारे लिए नही है। सारी दुनियाँ के भोग हमारे लिए नही है। इस शरीर में उस ने बांध कर भेजा है। जैसा पनीर बनाते है। पतले कपड़े में बांध कर लटका दिया। पानी २ तो चू गया और अन्दर का जो घन भाग था वह पनीर बन जया। घन भाग जमता गया पानी २ निकलता गया। हम जो रोज खाते है उस का घन भाग जमता गया फोकट भाग बाहर निकल गया। इसी की पालिश करते रह गये। सोचा हीं नही अन्दर कौन है? मंत्र कहता है बिना समझदारी के अगर जाओगे तो कोई लाभ

नही होगा।

'इहात्मानमनमुविद्य व्रजन्ति' श्रुति से, शास्त्र से, गुरु से समझो। यही आत्मा का बोध देने वाले है। श्रुति से समझा नहीं, शास्त्र से समझा नहीं और गुरु से भी उस आत्मा को नहीं समझा। जो भी समझा, इन्द्रियों से दीखने वाले पदार्थो को ही समझा। जैसे स्कूल में, कालेज में यूनिवर्सिटी में education तो चल रही है। पर वहाँ बच्चे जो समझते है वो किस को समझते है? जो इन्द्रियों से दीखने वाले पदार्थ जो है उन्ही को समझा। पर जिस के बिना इन्द्रियाँ नहीं देखती उसके बारे में क्या समझा? इस लिए मंत्र कहता है 'इहात्मानन्नुविद्य' इस आत्मा को तो समझा ही नहीं। इस हंडी को ही भरते रहे। तुम्हारे देश में ही दो टाईम भोजन बनता है। बाकी देशों मे तो लंच होता है। संस्कृत से लुंच शब्द है लुंच माने थोडा यहाँ से खीचो थोडा वहाँ से खींचो। एक पीस डबल रोटी का खींच लिया कुछ आलू चाँप खींच लिया। बस सायंकाल को डिनर माने अब भोजन करेंगे। किन्तु हमारे देश मे दो समय का भोजन है। खाकर आफिस जाओ और सायंकाल आकर भी खाओ। केवल इस हंडी को भरने के लिए हम लोग लुंच करते रहे। पर यह हंडी भरी नहीं, यह खाली की खालीं ही रही।

दो नौजवान छोकरे एक संत के पास गये, गुरु जी हम लोग को चेला बनाओ। गुरु जी ने देखा 'उपदेष्टव्य' परीक्षा कर के शिष्य को उपदेश करो। गुरु जी ने कहा जाओं यह हंडी भर कर ले आओ। हंडी मे छेद था। भरता है झरता है। न हंडी भरी न चेला लौटा, एक ने अकल लड़ाई वह हंडी को भर कर ले आया। जो भर कर ले आया वो पास हो गया। जो नही आया वो नही आया। यही है यह पेट रूपी हंडी। न यह हंडी भरेगी न हम लौटेगें गुरु के पास। यह है 'सत्यान् कामान्' नाना वासनाओं को सत्यकाम शब्द से कह रहे है। सच्चा इस लिए कहा कि जीव सत्य मान कर ही इच्छा करता है। सर्वेषु लोके-ष्वकामचारो भवति' यहाँ जहाँ भी जाएगा इसकी इच्छा अधूरी ही रहेगी। 'अकामचारो भवति' अपूर्ण कामना मे हीं आगे जाएगा अपने अनुभव के लिए समझो, हम लोगों की आयु आगे वढी रहीं है। किन्तु हमरी कामनाएँ कहाँ; पूर्ण होती है। अधूरी इच्छा पडी रह जाती है। मंत्र आगे कहता है जो मुमुक्षु विवेक

वैराग्यादि से सम्पन्न हो कर अपनी आत्मा को समझने की इच्छा करते है । उस के लिए प्रयत्न करते है । 'इहात्मानमनुविद्य व्रजन्ति' इस आत्मा को जान जाते है । पा जाते है । दुनियाँ में 'मैं और मेरा' दो पदार्थ है । 'मैं' है तो मेरा भीं है 'मैं' के बिना 'मेरा' क्या है ? या शरीर भी 'मैं' के विना मेरा नहीं तो शरीर के सम्बन्ध बेटा बेटी, पति पत्नी, माता पिता कौन ? किस के है ? ऐसा उस सत्‌चित्‌ आनन्द स्वरूप आत्मा को समझ कर जो जाएगा वह जहाँ भी जाएगा स्वतंत्र हो कर जाएगा । उस की जो भी इच्छा होगी वह सत्य होगी । पूर्ण होगी। अपनी इच्छा के अनुसार जहाँ चाहेगा जा सकेगा । तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति "

कल इस को और स्पष्ट करेंगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१६-४-८८

प्रवचन सं०-११

"ॐ तद्य इहात्मानमननुविद्य व्रजन्त्येतांश्च सत्यान्कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेष्वकामचारो भवत्यथ य इहात्मानमनुविद्य व्रजन्त्येतांश्च सत्यान् कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।। ॐ स यदि पितृलोककामी भवति सङ्कल्पादेवास्य पितरः समुत्तिष्ठन्ति तेन पितृलोकेन सम्पन्नो महीयते ।।"

(छान्दो.८-१-६)

(छान्दो. ८-२-१)

विचार आया मंत्र सावधान करता है कि जो मुमुक्षु विवेकशील है उस का सर्व श्रेष्ठ कर्त्तव्य है कि वो इस बात का विचार करे कि जो भी योनि कर्म से प्राप्त होने वाली है वह अमर होने वाली नही है। इसका कारण स्पष्ट है कि जितना बड़ा कारण होगा उतना ही बड़ा फल होगा। कारण से बाहर फल नही होगा। रोज का अनुभव बताता है कि जितना भोजन करोगे उतनी ही भूख हटेगी कभी दो एक ग्रास खाया और कोई ऐसा समाचार मिला कि खाना छूट गया तो एक दो ग्रास खाने से जितना पेट भरता है उतना ही भरेगा। इसी तरह कर्म का विधान वेद करता है कि हमारे जीवन के जो जो भी कर्म होंग वह सीमा से बंधे होंगे। उन कर्मो को तुम इन्द्रियों की शक्ति से करोगे। शरीर की शक्ति से करोगे तो शरीर और इन्द्रियों की शक्ति परिमित है इस लिए उन के द्वारा होने वाले कर्म भी परिमित होंगे। तब तुम उन परिमित कर्मो से अनन्त फल की इच्छा कैसे कर सकते हो।

अनन्त फल तो तभी मिलेगा जब अनन्त का बिचार करोगे। उस अनन्त की ओर चलोगे। इसलिए इस सत्य को श्रुति ने मंत्र में स्पष्ट किया 'कर्मचितान् लोकान् परीक्ष्य' जो मुमुक्षु ब्रह्मभाव की ओर चलने वाला है। ब्राह्मण जो है अर्थात् जो ब्रह्मभाव की ओर चल रहा है वह कर्म से प्राप्त होने वाले लोकों की परीक्षा करे। 'यद्यज्जन्य तत्तन्मर्त्यं' जो जो भी उत्पन्न होगा वह नष्ट होने वाला होगा। अनित्य होगा। कर्म करते चलो और फल भोगते चलो। इस लिए 'निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन' माया का सारा ब्रह्माण्ड जितना भी बना हुआ है, ब्रह्म की ओर चलने वाला मुमुक्षु इससे विरक्त हो जाए। जैसे उस जीवन में जो २ चीजें मिलती है सब से हमारा प्यार कहाँ होता है। जिस वस्तु को ज्यादा प्रिय समझते हो उस से प्यार करते हो। जिस को प्रिय नही समझते उस से विरक्त हो जाते है। इस आत्मा से ऊपर कौन प्यारा है? कभी २ आत्मा के लिए शरीर को भी छोड़ देते है। ऐसी उस सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा को कर्म के द्वारा तुम प्राप्त नहीं कर सकते 'नास्त्यकृतः कृतेन' कृतेन माने कर्मणा, कर्म मात्र से तू इस आत्मा को नहीं पा सकता। इस लिए कहो 'तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्, समित्पाणिः, श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्' इस आत्मा को तू गुरु से और शास्त्र से जान। गुरु की शरण में जा। श्रद्धाशील

मुमुक्षु बुद्धिमान ग्राचार्य के समीप जाता है। यही गुरु परम्परागत विद्या है। 'तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया' भगवान कृष्ण ग्रर्जुन को उपदेश करते है।

महान शूरवीर ग्रर्जुन था। उस को भगवान कहते है कि सत्य को जानने के लिए उन गुरुग्रों के पास जाग्रो ग्रौर श्रद्धा से उन की सेवा करो। प्यार से उन्हें नमस्कार करो। कोई २ ऐसा जिज्ञासु भक्त भी होता है जो सेवा करता जाता है पर कभी कुछ पूछता ही नहीं। पूछेगा नही तो वह बतलाएंगे क्यों ? देवर्षि नारद का इतिहास ग्राप सब जानते हो। नारद की तीनों लोकों मे ग्रनवरत गति है। तीनों लोकों में ग्रबाध गति से घूमते है। उस मन को नारद समझो। ग्राज भी तुम्हारे ग्रन्दर बैठा है। नारद का स्वरुप कैसा है। खड़ी लम्बी चोटी। वीणा हाथ में। यह लम्बी चोटी वासना है। पांच ज्ञानेन्द्रिय वीणा है। यह विषय इन्द्रियों को नचाते है। ग्रांख को रूप के सामने नचाते है। कान को शब्द के सामने नचाते है दिव्य संगीत के सामने नचाते है। रसाल पदार्थों के सामने रसनेन्द्रिय को नचाते है। यह इन्द्रिया नाचने लग जाती है ग्रपने २ विषयों के सामने। रूप को ग्रांख से पकड़ते है क्या यह ग्रांख चमचा है। यह नारद जो है तुम्हारा मन, यह तीनों लोकों में घूमने वाला है। नारद शब्द का ग्रर्थ है ' नारं ददाति इति नारद:'ग्रापो नारा इति प्रोक्ता: तत्र ग्रयनं यस्य'तदापि नारद। ग्रप माने पानी। इस को नार कहते है उसके ग्रन्दर जो विस्तर लगा कर बैठा है उसको नारायण कहते है। नार क्या हुग्रा ? विष्णु व्याप्नोति सर्व इति विष्णु जो सबको व्याप्त कर के बैठा है वह विष्णु। इस विष्णु पद को देने वाला, प्राप्त कराने वाला, नारद। उस मन से तुम विष्णु पद को प्राप्त कर सकते हो। यह मन तुम्हें विष्णु पद तक पहूँचाने वाला है।

वो नारद एक दिन कैलाश पर्वत पर पहूंच गये। पार्वती ग्रकेली बैठी थी। भोलानाथ कहीं गये हुए थे। नारद जी की ग्रादत थी कही किसी को छेड़ना कभी किसी को, ग्रौर फिर चुपचाप देखना। पार्वती जी से बातें करने लगे। बोले जानती हो शंकर जी गले में जो मुंडों की माला पहने हैं वो कहां से ग्राई ? जब २ तुम्हारा जन्म हुग्रा, तुम से उन का विवाह हुग्रा। जितना जीवन तुम उन के साथ रही जब शरीर छोड़ा तो तुम्हारी खोपड़ी निकाल कर

गले में डाल ली। इतना तुम मे प्यार था भोलानाथ का। भगवती रूठकर बैठ गई। भोलानाथ ने पूछा कोई आया था? हाँ नारद आए थे। नारद ने बताया कि यह मुंडमाला सब मेरी ही खोपडियों की है। इतने मेरे जन्म हो चुके है पर आप ने मेरा मोक्ष क्यों नही किया? तो भोलानाथ बोले तुम ने कभी पूछा ही नहीं। हे भगवती जव तुम ने कभीं मोक्ष की इच्छा ही प्रकट नहीं की तो मैं क्या करता। तुम भी खेल में खुश रहीं हम भी player बने रहे। तेरी आयु थोड़ी रहती थी इस लिए तुम बार २ जन्म लेती रहीं शरीर छोड़कर जाती रही। हम तेरे मुण्ड निकाल कर रखते रहे। तुम आत्मा वारे में जिज्ञासा करो तो हम तुम्हारे मोक्ष का भी विचार करें।

इसका अर्थ निकला कि बुद्धिमान इस आत्मा के बारे में गुरु से जिज्ञासा करे। सत्सङ्गी आपस मे भी विचार करें कि असली सत्य क्या है? जो आज देखा वो कल नही। वच्चे से कुमार हुए, कुमार से जवान हुए, और जवान से बुढे हो गये। यह बुढ़ापा कहाँ से आ गया? कोई दुकान है परमात्मा की जहाँ बुढ़ापा मिलता है? यदि ऐसी कोई दुकान होती हीं क्या वहाँ कोई बुढ़ापा खरीदनें जाता किन्तु यह अपने आप मिल जाता है जरा आगे चल कर तो देखो। भगवान कहते है 'परिप्रश्नेन सेवया' उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनरतत्त्वदर्शिनः' ज्ञानी है और तत्वदर्शी भी। दो विशेषण दिए श्रुति ने कहा 'श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ' श्रोत्रिय माने श्रुतमऽधीते। जो केवल वेद शास्त्र को शब्द मात्र रूप से पकड़े जैसे टेप रिकार्डर शब्द को पकड़ता है चलाने पर उन्हीं शब्दों को निकाल देगा। अर्थ को नही जानता। यह अपने स्वरूप में जड़ है। जड़ होने के नाते कुछ नही समझेगा। बुद्धि भी यदि शब्द को ही पकड़े टेप रिकार्डर की तरह, यद्यपि है तो यह भी जड़ ही किन्तु चेतन के करंट में जैसे यह शरीर जड़ नहीं रहा, चेतन सा ही दीखता है। यह बुद्धि तो शरीर से सूक्ष्म है सूक्ष्म होने के कारण अधिक शक्तिशाली है। इस के द्वारा केवल यह संसार के विषय ही पकड़े, इसी की चिन्ता करे और इसी की चिन्ता में ठंडे हो गये चले गये तो जीवन का महत्त्व कुछ भी नही निकला।

बुद्धि जड़ होते हुए भी चेतन के करंट मे रहन के कारण चेतन जैसी हो गई है। जिस के करंट से यह शरीर इतना प्यारा, इतना सुन्दर लगता है,

तो सोचो यह बुद्धि कितनी चेतन हो गई है। केवल शब्द को पकड़ने वाले गुरु से ज्ञान नहीं होगा। भगवान कहते हैं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन:' तत्त्वदर्शी भी हो केवल शास्त्र का ज्ञाता ही नहीं, तत्त्व का अनुभवी भी हो 'तत्तस्य भाव: तत्त्वम्' तत् का स्वरूप तत्त्व है। तत् हम ने परमात्मा को मान रखा। उस परमात्मा का जो स्वरूप है उसे तत्त्व कहते। आंख से जिस को देख नही सकते 'नापरोक्ष: अहं' सोचो, समझो इस अहं को आंख से देख सक्ते हो क्या ? इस 'अहं' को आंख से देख नही सक्ते हो। तो यह 'अहं' भी तत्त्व है। यह भी परोक्ष हो गया तुम्हारे लिए। इस लिए यह जीव बना हुआ है। 'अयमऽहमस्मि' 'मैं यह देह नही हूं' जब हमको इस तरह इस 'अहं' का अपरोक्ष अनुभव हो जाएगा कि यह देह तो मेरे कर्म का आकार है। जितना पैसा देते हो उतना अच्छा ड्रेस बन जाता है। यह तुम्हारा शरीर इसी तरह dress बना हुआ है किन्तु यह dress भी अमुक समय तक ही हमारे पास रहेगा। इस लिए इस सत्य कों जानो।

बुद्धि से केबल शास्त्र को पकड़ा, अनुभव हुआ नही तो अनुभव न होने से शास्त्र से जैसे शब्द को पकड़ा वैसा ही बोल देगा। वह परमात्मा अपनी महिमा मे नित्य जागता रहता है। वह उन ज्ञानी तत्त्वदर्शी महापुरुषों के द्वारा प्राप्य है 'य एष सुप्तेषु जागर्ति कामंकामं पुरुषों निर्मिमाण: तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ।।" घर मे बुढिया माता होती है, दादी, परदादी। जाड़े के दिन हैं। सब खा पीकर सो गये हैं। पर यह अभी जाग रही है। अपना कुछ काम भी कर रही है। यह तुम्हारी आत्मा भी ऐसा ही है। य एष सुप्तेषु जागर्ति' शरीर ने कहा मुझे खाट पर डाल दो। मुझे छुट्टी दे दो अब मैं तुम्हारे काम का नही रहा। शरीर को खाट पर डाल दिया। इन्द्रियों ने कहा अब हम भी क्या करेंगी ? जिस की सेवा में हम मग्न थे उस को खाट पर डाल दिया तो आंख ने कहा मैं अब क्या देखूंगी। कान ने कहा, मैं अब क्या सुनूं मुझे भी बन्द करो। ऐसे ही सब इन्द्रिया छुट्टी ले कर अलग हो गई। मन भी सो गया। अब केवल एक सेवक रह गया प्राण। जैसे सब इन्द्रियां छुट्टी लेकर चली जाती हैं, ऐसे ही यदि यह प्राण भी छुट्टी लेकर चल दे तो लोग क्या समझेंगें ? मर गया। देखा नही मद्रास का चीफ मनिस्टर M.G.R. सोते सोते चल बसा और वो जानकी जी पास में सोती ही रह गई। जिसके पास थी वो अब

है ही नहीं ।

अब यहा शरीर भी सो गया । इन्द्रियां भी सो गई पर प्राण चल रहा हैं । उस ने सोचा अब काम किस से होगा ? हमारा काम किस से चलेगा ? तो मन, यह अटची जनरल है तुम्हारा, खट् अटैंची लेकर तैयार हो गया । मन ने स्वप्न में नई सृष्टि खड़ी कर दी । और यह जो तुम्हारी आत्मा है इस ने कहा ठीक है । यह स्वप्न मे जो सृष्टि देखते हो यह क्या है ? इसकी सृष्टि तुम्हारी अन्तरात्मा ने की । य एष सुप्तेषु जागर्ति सब के सो जाने पर यह जागता रहता है । लोग कहते है महाराज सिद्धि कैसे होती ? यह सिद्धि नहीं तो और क्या है ? यह आत्मा की सिद्धि है । जैसा २ संस्कार उदभूत हुआ, वैसे २ जीव खड़े हो गये । संकल्प करते ही सामने सृष्टि आ गई । स्वप्न में देखो तुम कितने सिद्धि हो ? तुम को सिद्ध होने की कोई जरूरत है ? कोई सिद्ध चाहिए तुम को ? यह तुम्हारी महान सिद्धि है । हिमालय भी खड़ा कर दिया तुमने । समुद्र भी खडा कर दिया । बम्बई जैसी नगरी की सृष्टि कर दी । मैदान भी रच डाले लाखों व्यक्तियों की सृष्टि कर दी । किन्तु जाग्रत में आए तो इस शरीर के नीचे दब गये । जैसे कोई पहाड़ के नीचे दब जाए । अब शरीर की शक्ति से चलना पडेगा ।

मन शरीर से बहुत अधिक शक्तिशाली है । इस लिए स्वप्न मे जो २ कल्पना करेगा उस की सृष्टि कर देगा यह स्वप्न की सृष्टि बड़ी विचित्र है । इस का तात्पर्य यह निकला कि जैसे स्वप्न मे तुम सृष्टि कर लेते हो, ऐसे ही ईश्वर की सृष्टि हैं । उस ईश्वर को सृष्टि करने मे क्या परिश्रम पड़ेगा । उस की उपाधि तो और भी सूक्ष्म है । उसको कोई परिश्रम नहीं पडेगा । स्वप्न की जो सृष्टि हो रही है वह मन कीं उपाधि से हो रही है । ईश्वर की उपाधि माया है । ईश्वर की सृष्टि माया उपाधि से हो रहीं है । आचार्य कहते हैं 'यथा जीवे स्वप्नसृष्टि तथा ईश्वरे' जैसे जीव के अन्दर यह स्वप्न की सृष्टि निद्रा शक्ति के द्वारा हो रहीं है । 'ब्रह्माण्डे स्थित माया सृष्टि स्थित्यन्तकारिणी' निद्राशक्ति जीव के अन्दर और माया शक्ति ईश्वर के अन्दर । यह माया सृष्टि भीं करती है, स्थिति भी करती है और उसका अन्त भी करती है । श्रद्धाशील ज्यादा शंका से अपने को घेरे नहीं । शंका से अपने को बाहर करे । इसलिए कहते है 'य एष

सुप्तेषु जागर्ति कामं कामं पुरुषो निर्मिमाणः'

जैसे २ कामना आती है, वैसी २ सृष्टि कर देते है। 'तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म' शुक्रं माने शुद्ध । हे सोम्य वो ही शुद्ध तत्त्व है। जैसे जीवन काल में शरीर को छूते भी हो, प्यार भी करते हो । जीवन काल मे शरीर को छूने से कोई पाप नहीं होता । इस के पास बैटते भी हो । जरा क्रोध आ गया तो थोडा तू तडाक भी कर लेते हो । किन्तु उस शरोर को आत्मा ने ज्यों ही छोडा, उस के समीप भी बैठने की इच्छा नही होती । तो जिस के रहने से शरीर शुद्ध है, इतना पवित्र है, वो कितना शुद्ध होगा । इस लिए श्रुति कहती है 'तदेव शुक्रं' वो शुक्र है, शुद्ध है, पवित्र है । वही ब्रह्म है । 'तदेवामृतमुच्येत' वही अमृत है । अमृत माने क्या ? अमृत में से 'अ' को हटा दो तो क्या रह गया ? मृत माने मुर्दा । उस को मरना भी बाकी नही है । वह मरा हुआ ही है । यह 'अ' तुम्हारी आत्मा है । उस आत्मा मे मन को रखकर लोक जीवन का व्यवहार करो । यह लोक जीवन जो है, तुम्हारा थ्येटर हाल है । तुम्हारे जीवन का जो भी ड्रामा है, उस ड्रामा मे हम भर्ती है उस का यह थ्येटर हाल है । जो जिस शकल मे आया है,उस शकल मे ड्रामा तो करता रहे, पर अपने घर को न भूले । यह ड्रामा करने वाला यदि अपने घर को भूल गया तो इस को घर मे कौन पहुंचायेगा । विस्मृति मृत्यु है, स्मृति ही जीवन है । उस विस्मृति से बचने के लिए यह सत्सङ्ग शास्त्र और गुरु है । जाग्रत रखने के लिए सत्सङ्ग भी चाहिए, शास्त्र भी चाहिए, गुरु भी चाहिए । इस लिए मंत्र कहता है'तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते''तस्मिल्लोकाः श्रिताः सर्वे' यह सर्व लोक, लोक्यते भुज्यते कर्मफलभोगः । यह मनुष्यादि शरीर जहाँ हम अपने २ कर्म का फल ले रहे हैं जहाँ कर्म का भोग वह लोक है ।

यह पृथ्वी भी लोक है । पृथ्वी मे आकर जीव अपने २ कर्म का फल लेता है । मंत्र कहता है 'तस्मिन् श्रिताः' इस चेतन के आश्रय में यह प्राणी है । जड़ चेतन सब उस परमात्मा के आश्रय में है 'तदु नात्येति कश्चन' उस का अतिक्रमण कोई नहीं कर सकता । जो कुछ भी उस जगत में है, परमात्मा का अतिक्रमण करने की शक्ति किसी मे नहीं है । इस का अर्थ क्या ? कारण कार्यं व्याप्नोति कारण कार्य को व्याप्त करता है । जैसे फूल है, यह कार्य है । इसका

जो कारण है यह उस कारण की पकड़ मे है। उस कारण का अतिक्रमण कर के यह फूल बाहर नहीं जा सकता। दूसरे शब्द मे मान लो यह कपड़ा है, इस का कारण तन्तु है। तो तन्तु की पकड़ में यह कपड़ा है। तन्तु को छोड़ कर कपड़ा बाहर नहीं जा सकता। कारण कार्य को बाहर नहीं जाने देता। एक २ तन्तु खींचने लगो तो कपड़ा कहाँ रहेगा। किसी सुनार के पास जाकर कहो यह पांच तोले सोने का कंकण है। तुम पांच तोले सोना ले लो और उस के पैसे और कंकण मुझे वापस कर दो। तो वह क्या कहेगा? कंकण देखने मात्र का है। आकार का नाम कंकण है। कारण से बाहर कंकण कुछ भी नहीं। सोना ही सोना है। कारण तो सोना ही है। उस सोने से बाहर कंकण क्या है।

इसी प्रकार इस जगत का कारण वो है। तो यह जगत से बाहर कहाँ जाएगा। बाहर जाने की जगह ही नही है। जरा भी निकलेगा तो हाथ पांव ठंडे हो जाएंगे। पलंग से नींचे जमीन पर डाल देंगे। तो जरा से हाथ पांव ठंडे होते ही, जो प्यारे थे उन्होंने तुम्हें नीचे जमीन पर डाल दिया। तो पलंग पर किस की कृपा से सो रहे थे। जिस ने तुमको पलंग पर बढ़िया गद्दे पर सुलाया बढ़िया डनलप का तकिया लगा कर सुलाया। यह सब चेतन की माया है। ऐसी है तुम्हारी आत्मा। मुमुक्षु ऐसी आत्मा को जाने।

श्रुति स्पष्ट करती है 'इहात्मानमनुविद्य' इह माने 'अस्मिन जन्मनि' अभी, इसी जन्म में, श्रुति से शास्त्र से बुद्धिमान आचार्य से इस आत्मा को जानो। बिना समझे चल दिए तो बड़ी गड़बड़ है। यहाँ समझो कि यह तुम्हारी आत्मा ही ब्रह्म ह। लोग कहते हैं यह तो रोने गाने वाला है, यह ब्रह्म कैसे हो सकता है? पर रोने गाने वाला मन है। मन बजा रहा है, स्वर मुँह से निकल रहा है। इस मे आत्मा का क्या बिगड़ा। जैसे बाजे बजते हैं। फूंक यहाँ से मारते हैं स्वर वहाँ से निकलता है। शहनाई की तरह तुम्हारा मुँह है। इस प्रकार जो आत्मा को जान जाएजा कि यह ब्रह्म ही है। अग्नि मट्टी मे रहने वाली भी है और चिनगारी मे रहने वाली भी अग्नि है। दोनों ही अग्नि है। तुम्हारे हृदयाकाश में रहने वाली आत्मा और ब्रह्माण्ड की आत्मा एक ही है। अपने तत्त्व विचार से जो इस प्रकार ब्रह्म को समझ जाएगा वह मोक्ष मे चला जाएगा। अन्यथा कोई बड़े से बड़ा सिद्ध भी तुम को मृत्यु के मुख से नहीं बचा सकता।

इस लिए बुद्धिमान मुमुक्षु अपनी आत्मा को ब्रह्म समझे । जीव ही समझते रहे तो जन्मते मरते रहोगे विवेकशील इस सत्य को स्वीकार करे ।

बडे से बड़ा सिद्ध तुमको चमत्कार तो दे सकता है किन्तु तुम्हें मृत्यु के भय से मुक्त नहीं कर सकता । इस के लिए तो तुम्हे तत्त्व विचार करना हीं पडेगा । यदि तुम अपनी आत्मा को ब्रह्म नहीं समझें, रोने गाने वाला ही समझते रहे तो जन्मते मरते रहोगे । साईबावा के पास पी, सी. सरकार पहुंच गये । उन को भी गुलाब जामुन दे दिया । इस ने भी फूंक मारी और झट कलकत्ता का रस गुल्ला दे दिया । बोले यह क्या । कौन हो तुम ? इस ने कहा तुम भी जादूगर मैं भी जादूगर । कौन सी जाति, कौन सा घर ? आप इस को सिद्धि कहते हो' मैं जादू कहता हूं । भगवान भीं बड़ा जादूगर है । उस कीं माया बड़ी विचित्र है। है कुछ, दीखता कुछ हैं । जो है वो दीखता नहीं जो दीखता हैं वह है नही । यही माया है । इस लिए मुमुक्षु अपनी आत्मा को समझे । जो २ भी विषय है सब बन्धन के हेतु हैं सच्चे नहीं हैं । ऐसा जो जान गया इस माया के पिंजरे से बाहर हो जाएगा । सम्पूर्ण लोको मे आजादी से घूम सकेंगे ।

कल इस बात को और स्पष्ट करेंगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२०-४-८८

प्रवचन सं० १२

" ॐ य इहात्मानमनुविद्य व्रजन्त्येतांश्च सत्यान् कामांस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।। ॐ स यदि पितृलोक-कामो भवति सङ्कल्पादेवास्य पितरः समुत्तिष्ठन्ति तेन पितृ-लोकेन सम्पन्नो महीयते ।। ॐ अथ यदि मातृ लोककामी भवति सङ्कल्पादेवास्य मातरः समुत्तिष्ठन्ति तेन मातृलोकेन सम्पन्नो महीयते ।।

(छान्दो. ८-१-६,८-२-१।२)

बडे रहस्य की जो बात है वो यह है, मंत्र कहता है' इहात्मानमनु-विद्य व्रजन्ति' कुछ भाग्यशाली लोग 'इह जन्मनि माने इसी जन्म में 'आत्मानमनु-विद्य व्रजन्ति' आत्मा को जान लेते है । जाना तो यहाँ से है ही । इस संसार के जितने भी पदार्थ है इन्हें तो रोज देखते हो ! बेखते जाते हो भूलते जाते हो । उतनी ही अविद्या घेरती जाती है । जन्म से अब तक समझते ही आ रहे हो । जितना भी देखा, समझा है, अब तक कितना याद है ? किन्तु जिसको नही समझा है उस के बिना कितना समझा, क्या समझा ? जीवन मे अब तक जिस को समझने का प्रयत्न ही नहीं किया, उसके बिना क्या समझे ? यह आँख है तुम्हारी, इस आँख के बिना कौन सा रूप देखोगे ? कान के बिना कौन सा शब्द सुनोगे ? साइन्स ने बहुत तरक्की की है पर तुम्हारे कान के बिना साइन्स कौन सा शब्द तुम को सुनाएगी ? तुम्हारी आँख के बिना साइन्स कौन सा रूप तुम को दिखाएगी ? प्लास्टिक के हाथ पांव लगा देगी पर उस से नाक भी नहीं खुजा सकते-

ग्रौर तो क्या करोगे ? तो सोचो यह सृष्टि परमात्मा की है। वही इसको चला रहा है। उस के बिना यह नहीं चलने वाली। तो उस को समझो।

इस लिए मंत्र कहगा है 'इहात्मानमनुविद्य' ग्रनुविद्य का ग्रर्थ है, गुरु से, शास्त्र से 'विद्य' ज्ञात्वा, गुरु के उपदेश से ही जिज्ञासु इस ग्रात्मा को समझता है।गुरु भी शास्त्र के विना तो बोलेगा नही। इस लिए कहा शास्त्र से ग्रौर गुरु से समझो। गुरु ग्रौर शा.स्त्र जो कहता है वह ठीक कहता है। ऐसा इस ग्रात्मा को समझो। समझना क्या है 'ग्रयमहमस्मि' नाहं देहादिसंघातः। में ग्रात्मा हूं। 'देहादि संघातः' मै देह इन्द्रियों का समुदाय नहीं हूं। देह ग्रौर ग्रादि का ग्रर्थ इन्द्रिय गण। यह समुदाय मैं नही हूं। गीता के पन्द्रहवें ग्रध्याय में भगवान कृष्ण कहते हैं 'क्षरश्चाक्षर एवच' क्षर ग्रौर ग्रक्षर प्रकृति का विवेक किया। क्षर माने प्रतिक्षण परिणामी। जैसे यह फूल है हमारे हाथ में। यह फूल प्रतिक्षण परिवर्तित हो रहा है। वदल रहा है। इसी प्रकार यह तुम्हारा शरीर है प्रतिक्षण बदल रहा है रोज इसको बढिया पालिश करते हैं। बढिया खाना दाना देते है। काले पीले पापड़ बेलते है। पर यह रोज ही नई २ शक्ल बदलता है। भगवान कृष्ण ग्रर्जुन को इस रहस्य को समझाते हैं 'यस्मात्क्षरत्मतीतोऽहं' मैं इस 'क्षर' से न्यारा हूं। क्षर माने प्रतिक्षण विनाशी। यह जो ग्रविद्या ग्रन्दर बैठी है, यह ग्रबिद्या कब से हमारा पीछा कर रही है। यह ग्रनादि काल से प्रवृत हो रही है। इस ग्रविद्या को ग्रक्षर कह रहे हैं। ग्रक्षर इस लिए कह रहे है कि इस का नाश जल्दी देखने में ग्राता नहीं। यू तो ग्रविद्या भी विनाशी है।

ग्रपने ग्रनुभव के लिए समझो। छोटा बच्चा मां से पूछता है यह क्या है ? मा ने कहा बेटा यह गुलाब का फूल है। तो जिस समय पूछा उस समय तो ग्रज्ञान था। पर जब मां ने बता दिया कि यह गुलाब का फूल है तो ग्रज्ञान की निवृत्ति हो गई। ग्रज्ञान की निवृत्ति ग्रनुभव सिद्ध है। ग्रपने स्वरूप में ग्रहं २ करो। पूछो यह ग्रहं कौन ? कहते है नहीं जानते। यह जो नही जानते कहते हो, सोचो, यह समझदारी से कह रहे हो या बिना जाने ? यह नही जानना भी ज्ञान है, इस का ग्रर्थ यह निकला कि तुम्हारी ग्रात्मा ज्ञान ग्रौर ग्रज्ञान दोनों का साक्षी

है । नहीं जानते तो न जानने का ज्ञान है, जानते हो तो जानने का ज्ञान है। अज्ञान कब से चल रहा है इस की कोई सीमा नहीं । इस लिए इसे अक्षर कहा। 'यस्मात्क्षरमतीतोऽहं' 'अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः' भगवान कहते है कि इस लोक में और वेद में मैं पुरुषोत्तम नाम से प्रसिद्ध हूँ । क्योंकि क्षर और अक्षर प्रकृति को पुरुष कहा । पुरुष शब्द कहने का तात्पर्य्य है 'पूर्णतः पुरुषः' ईश्वर की सृष्टि में जो कुछ भी बना है वह अपने स्वरूप मे पूर्ण । इस पुष्प को ही देखो, इस में सब कुछ पूर्ण है । रूप भी ठीक है, रंग भी ठीक है, आकार भी ठीक है , इस की पंखुड़ियों का विकास भी ठीक है ।

क्षर अक्षर पुरुष प्रकृति को कहा और मुझे पुरुषोत्तम कहा । पुरुषों में उत्तम । उत्तम कैसे हो गया ? तो जो ज्ञानवान होगा वही उत्तम होगा । मनुष्यों में श्रेष्ठ कौन ? ज्ञानवान । जो ज्ञानवान होगा वह आगे २ चलेगा । अज्ञान पीछे२ चलेगा । यहाँ तुम्हारे शरीर में ही देखो । ठीक है इस में तुम किसी के भाई, बन्धु, बेटा, बेटी बने हो । सब कुछ बनेगा । शरीर का आकार भी प्यारा लगेगा। और इस शरीर का संचालन करने वाली इन्द्रियाँ भी प्यारी लगेंगी । सब आएँगे इस से प्यार भी करेंगे । पर तुम्हारे बिना कौन इसको प्यार करेगा ? तुम जिस दिन इस शरीर को छोड़ दोगे, उस दिन कोई प्यार करेगा इस से ? तो यह प्यार शरीर के लिए है कि तुम्हारे लिए ? यह प्यार शरीर के लिए नहीं, तुम्हारे लिए है । ठीक है तुम को नही देखा उसने, किन्तु जो कुछ भी शरीर के रूप में देखा वह तुम्हारा ही स्वरूप है । मुर्दे को शक्ल कितनी भयंकर होती है । अकेले बैठने में भी डर लगता है । कहता है मैं अकेला नही बैठूँगा इस के पास । जीवन काल मे कितना प्यार करते हैं । यह सब जो है वह तुम चेतन हो । इस लिए गुरु कहता है कि यह सब चेतन की ही महिमा हैं । हे सोम्य 'त्वं ब्रह्मासि' तू ब्रह्म है। यह ब्रह्म ही पुरुषोत्तम है , यही श्रेष्ठ है । श्रुति कहती है । सारे शरीर रूपी कारखाने में यह ब्रह्म ही श्रेष्ठ है । यह चेतन ही उत्तम है । इसलिए इस को पुरुषोत्तम कहा ।

यही चेतन नियन्ता है । हाथ पैर नाक कान आदि जो कुछ भी हैं यह

चेतन ही नियन्ता है। जैसे शरीर के पैर हैं रोड पर तो इन्हों ने ही चलना है, पर जिधर इसकी इच्छा होगी उधर ही पैर चलेंगे। उस की इच्छा के बिना यह पैर नहीं चलेगें। इस लिए कहा 'अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः' मेरे को इस लोक में और वेद में पुरुषोत्तम कहा गया है। इस महान आत्मा को जानने का फल कितना बड़ा है? कुछ लोग कहते हैं, इस ब्रह्म विद्या से हमारे अन्दर क्या होगा? भगवान कहते हैं क्या नहीं होगा? सब कुछ होगा। एक योग के द्वारा कुछ सिद्धियाँ मनुष्य प्राप्त कर लेता है। अणिमा, गरिमा, लघिमा, महिमा प्राप्ति प्राकाम्य, इशित्व, वशित्व यह आठ प्रकार की सिद्धियाँ हैं। योगाभ्यास के द्वारा इन सिद्धियों को पा जाता है। परन्तु यह जैसे आती है वैसे ही चली भी जाती हैं। जैसे इस शरीर मे यह जवानी जो आती है कितनी बड़ी सिद्धि है। सारे world की मार्किट में चले जाओ। किसी दुकान पर जवानी मिले तो शर्त है। जवानी में दुनियाँ मच्छर जैसी दीखती है। तो यह क्या है? कर्म सिद्धि है? बड़ी भारी सिद्धि हैं। योग के द्वारा तो और भी चमत्कार पूर्ण सिद्धि हैं। श्री मद्भागवत में सौभरि ऋषि की कथा आती है। महर्षि सौभरि बड़े तपस्वी रहे। बड़े योगी थे। एक पैर के अंगूठे पर खड़े हो कर बारह वर्ष तक तप किया। 12 वर्ष तक पवनाहारी बने रहे। 12 वर्ष तक जमुना के पानी में खड़े रहे। शरीर की क्या हालत हो गई। बदबू आने लगी। सड़ गया शरीर। लेकिन जब समाधि खुली तो क्या देखा? एक बड़ा मत्स्य परिवार सामने जल में क्रीड़ा कर रहा था। सौभरि के मन मे इच्छा हुई कि तेरा भी कोई परिवार होता। कोई आगे नहीं कोई पीछे नही। क्या किया तू ने दुनियाँ में आकर? बस योग ही करता रह गया। देखो योग तो किया, तप भी किया, किन्तु वासना क्षय नहीं हुई।

तप भी करो योग भी करो, तत्त्वज्ञान के बिना वासना क्षय नहीं होगी वासना बनी रहेगी तो जन्म मरण निवृत्त नहीं होगा। सौभरि से रहा नहीं गया। सोचा कहाँ जाएँ? उस समय मान्धाता राजा बड़ा धर्मात्मा था महान तेजस्वी था। बड़ा प्रसिद्ध था। उसके पास गये। राजा के पास समाचार पहुंचा महान तपस्वी सौभरि ऋषि आए हैं। राजा कहा ले आओ उन को। ऋषि को आदर के साथ महल मे लाकर बिठाया गया। पूछा। क्या कारण है आप के पधारने

का ? आप को क्या चाहिए । सौभरि ऋषि ने अपनी इच्छा प्रकट की । राजा सुन कर अवाक् रह गया । राजा ने ऋषि के शरीर की अवस्था को देखता रह गया । यह संसार के जितने भी पदार्थ हैं, शरीरावस्था के अनुसार ही मिलते हैं । संसार के पदार्थ तुम्हारी अवस्था को देखते हैं । यह तुम्हारे ज्ञान को देखते हैं । तुम्हारे कर्म को देखते हैं । सौभरि ऋषि को देख कर राजा ने सोचा कि यह तो ठंडे हो गये । किन्तु मना नहीं कर सका क्योंकि इतना बड़ा तपस्वी है । शाप दे दिया तो भस्म कर देगा । जीव जब वासना से आक्रान्त होता है तो कभी २ ज्ञान के बिना भी बोल पड़ता है । कहोगे कैसे ? क्रोध से जब बोलता है तो ज्ञान के बिना ही बोलता है । क्या बोलता है कुछ पता नहीं ? राजा ने सोचा कि मैं अगर इस को मना करता हुं तो यह क्रोध करेगा । और तब यह क्रोध मे बिना ज्ञान के ही बोलेगा । तेरा सर्वनाश हो जाएगा ।

राजा ने बचाव के लिए कहा, आप हमारे अन्तःपुर में चले जाईए । हमारी जो कन्या आप के साथ स्वयंवर के लिए तैयार हो जाएगी हम उसी का विवाह आप से कर देंगे । ऋषि भी समझ गये कि मेरे शरीर को देखकर राजा ने अंगूठा दिखा दिया । नौकर के साथ चलते २ ही ऋषि ने योग बल से शरीर बदल लिया । ऐसा सुन्दर शरीर बनाया कि साथ चलने वाला भी देखता ही रह गया । कुमारियों के महल में गया । नौकर ने राजा का संदेश सुनाया । आप मे से जो इन को पसन्द करेंगी उस के साथ इस का विवाह कर दिया जाएगा । एक लड़की कहती है यह मेरे लिए ठीक हैं । दूसरी कहती है हमारे लिए ठीक है । सब कुमारियाँ विवाद करने लगी । ऋषि ने कहा झगड़ा क्यों करती हो, मैं सब के साथ शादी कर लूंगा । राजा के पास समाचार पहुंचा । राजा भी देख कर हरान हो गया । सब ने कहा दूल्हा बहुत सुन्दर हैं । राजा भी प्रसन्न हो गया । शादी कर के ले गया सबको । जंगल में जा कर पचास लड़कियों के लिए अलग २ बढिया बंगले खड़े कर दिए । नौकर चाकर खाना दाना सब सिद्धियों के बल पर चलता रहा । कोई बिमार हो गई तो झट फूंक मारी ठीक कर दिया । बीमारी भी घबराती रही । एक २ लड़की के सौ २ लड़के हुए । 5000 बेटे हो गये । एक दिन राजा के मन मे आया कि चलकर लड़कियों को देखें । जंगल मे गया तो देख कर हैरान रह गया । इतने सुन्दर बंगले । सुन्दर नगर बसा हुआ

है । बीच २ पानी की बावडियाँ, सुन्दर कमल के फूल,भंवरे ।राजा ने देखा, मेरा ऐश्वर्य तो इस के सामने कुछ भी नहीं । इस प्रकार सौभरि अपने समय का महान सिद्ध रहा ।

दीर्घ काल तक सब सिद्धियों के बल से ठीक चलता रहा । खान पान सब व्यवस्था ठीक चलती रही । एक दिन एक बीमार हो गई । फूंक मारी तो कुछ हुआ नही । सिद्धि गायब हो गई । क्योंकि जो योग बल से आई है वह समाप्त हो गई । जैसे जवानी आती है खत्म हो जाती । सौभरि ऋषि पश्चात्ताप करने लगे । यह सब कुछ मेरा गया । संग: सर्वात्मना त्याज्य: ऐसे प्राणियों का संग न करे जो मन को खींच ले । प्रथम तो संग किसी का भी न करे । किन्तु बिना संग किए हम रह नहीं सकेगें क्योंकि मनुय्य को मनुय्य का बच्चा चाहिए । यदि करो भी तो उन महान संतो को संग करो । महान ब्रह्मवेत्ता संत का संग करो जो इस महान ब्रह्म को जाने । 'अस्ति ब्रह्मेति चेद् वेद' सन्त किस को कहते हैं ? जो ब्रह्म है ऐसा स्वीकार करे । वो संत हैं । ब्रह्म के अस्ति भाव में जिस की भावना दृढ़ हो । ऐसा नहीं कि कपड़े रंग लिए और संत हो गये । वो ही इस संसार रूपी रोग की महान औषधि हैं । ऐसे ज्ञानी संतो का संग करो ।

असक्तबुद्धि: सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृह:।नैष्कर्म्यं युक्त मुमुक्षु जो सत्सङ्गी हैं, ज्ञानवान हैं, उन का लक्षण बता रहे है 'असक्तबुद्धि: सर्वत्र' अपनी बुद्धि को कहीं अटकने नहीं देवें । बाजार जाओ । बाजार में कितनी दूकाने लगी है । मान लो आप को कोई चीज लेनी भी नही है । किन्तु आप को बुद्धि जिस चीज को पकड़ लेगी, वह चीज आपको लेनी पडेगी । खरीदना पड़ेगा । क्योंकि आप की बुद्धि वहाँ रुक गई हैं । इस लिए खरीदना पड़ा । नहीं तो सारा बजार घूमकर आ जाओगें । कुछ खरीदोगे नही । जिस की बुद्धि कहीं रूकी नहीं वह कुछ नही खरीदेगा । इस तरह यह संसार माया का बाजार है । भगवान कहते हैं असक्त-बुद्धि: सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृह: जिस ने अपनी आत्मा माने अपने मन को जीत लिया है । 'विगतस्पृहा: स्पृहा कहते हैं वाञ्छा को । इस को कहते है नैष्कर्म्य सिद्धि । वह निष्कामता में आ जाएगा । उस स्थिति में चला जाएगा जहाँ कोई कर्म नहीं । जीवन की ऐसी ऊँची स्थिति । जैसे जीवन में समझो रोज निद्रा मे

जाते हो तो कोई क्रिया रहती है वहाँ ? वहाँ कोई क्रिया नहीं रहती। ज्ञान की ऊंची भूमि में चले जाग्रोगे तो वहाँ कोई क्रिया, कर्त्ता करण कुछ भी नही है। जाग्रत मे क्रिया, करण, कर्त्ता है। स्वप्न में भी क्रिया करण कर्त्ता है किन्तु सुषुप्ति में नहीं है। किन्तु वहाँ तुम अज्ञान के अन्धेरे में रहते हो। किन्तु ज्ञान की ऊंची भूमि मे नैष्कर्म्य नाम की सिद्धि है। उस सिद्धि का चमत्कार गीता में भगवान कहते हैं वह सर्ववित् हो जाता है। श्रुति भी कहती है

स सर्वो भवति, स सर्वज्ञो भवति।

जो सिद्धि योग के द्वारा आएगी कपूर की तरह उड़ जाएगी। ब्रह्मविद्या के अनुसन्धान से जो सिद्धि आएगी वह तुम को छोड़ेगी नहीं। ब्रह्मज्ञान के द्वारा जो सिद्धि आएगी वह सीधे मोक्ष में ले जाकर छोडेगी। दूसरे बाजार में उस ने जाना ही नहीं। 'असक्तबुद्धिः सर्वत्र' नैष्कर्म्य नाम की सिद्धि तुम को सर्वज्ञ बनाएगी। सर्ववित् बनाएगी। वह भगवान के भक्तों में श्रेष्ठ होगा। भजति मां सर्वभावेन' वह सब भावों में भगवान को ही देखता है। बताओ उस को कौन सी मूर्ति दोगे। कौन सा आकार दोगे ? किस मूर्त्ति से प्यार करोगे ? यह सारी मूर्तिया उसी की है। यह सारा ब्रह्माण्ड उसी की मूर्ति है। तो ज्ञानवान किसी एक मूर्त्ति को, किसी छोटी सी मूर्ति को लेकर क्या करेगा ? ऐसी उस की भक्ति है। यह ज्ञानलक्षणा भक्ति है। ऐसी उस में तत्त्व निष्ठा हो जाएगी। इस प्रकार यह जो भी इच्छ करेगा वो पूरी हो जाएगी। संकल्प सृष्टि करने की महान शक्ति उस मे आ जाएगी। महान रहस्य का विस्फोट करते है। मंत्र कहता है 'तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति' ऐसा ज्ञानवान किसी भी लोक में जाने की इच्छा करता है तो जा सकता है। इस को कोई रोकने वाला नही।

सब से बड़ा अवरोध तो अज्ञान ही है। किसी जौहरी की दूकान पर जाओ। बड़े २ हीरे रखे है वहाँ आंख से तो हम उन हीरों को देखेंगे किन्तु यदि हीरे का ज्ञान हमको नहीं, तो आंख से देखते हुए भी नही देख सकते। अज्ञान बांध देता है। जो हीरों की विद्या को जानता है, वह सब हीरों को देख सकता है। वह हीरे को बाहर से भी देखता है, अन्दर से भी देखता है। इसी तरह तत्त्वज्ञानी जो ज्ञानवान है। 'तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति'। कोई अवरोध नहीं। कोई रोकने वाला नही। यह स्वतंत्र हो गया। सब से बड़ा अवरोध अज्ञान था। उस को इस ने काट दिया। इस लिए अब कोई बाधा

नही । दृटान्त से समझो । महाराजा को रोकने वाला कोई नहीं । कहीं भी जाना चाहे कुछ भी करना चाहे वह स्वतंत्र है । प्रजा को रोकने की शक्ति राजा के पास है प्रजा अमुक सीमा तक स्वतंत्रता का उपयोग कर सकती है । उस के आगे राजा उसको रोक सकता है । इसी तरह प्रकृति के साम्राज्य मे यदि तुम ज्ञानभाव में ऊपर उठ गये तब तुम्हें स्वतंत्रता है । किन्तु ज्ञान भाव में नहीं उठोगे तो भले ही तुम योग करो, उपासना करो, स्वतंत्र नही हो सकते । हाँ तप से, योग से सीमित भोग ले सकते हो । जितनी उस तप या योग की सीमा है उतना भोग तुम ले सकते हो । किन्तु ज्ञानवान को रोकने वाला कोई नहीं । इस की कोई सीमा नहीं ।

इस लिए कहां तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति स यदि पितृलोक-कामो भवति सङ्कल्पादेवास्य पितरः समुत्तिष्ठन्ति' ऐसा महान ब्रह्मवेत्ता यदि इच्छा करे कि हम पिता को देखें, तो संकल्प करते ही पिता सामने आ जाएगा। पितृलोकेन सम्पन्नो महीयते' पितृ लोक के महान ऐश्वर्य से सम्पन्न हो जाएगा । 'स यदिमातृलोककामो भवति ' वह यदि मां से मिलने की इच्छा करेगा, 'सङ्कल्पादेवास्य मातरः समुत्तिष्ठन्ति' तो सङ्कल्प करते हुए आपकी बहुत सी माताएँ, जो उस के वश में हो गई है । सब सामने खड़ी हो जाएगी । सङ्कल्प से खड़ी हो जाएगा । उसके सङ्कल्प का इतना चमत्कार बता रहे हैं । वह जो जो सङ्कल्प करेगा वह सिद्ध होता जाएगा । इति

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२१-४-८८

प्रवचन सं०-१३

"ॐ अथ यदि स्वसृलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य स्वसारः समुत्तिष्ठन्ति तेन स्वसृलोकेन सम्पन्नो महीयते।ॐ अथ यदि सखिलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य सखायः समुत्तिष्ठन्ति तेन सखिलोकेन सम्पन्नो महीयते ।। ॐ अथ यदि गन्धमाल्यलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य गन्धमाल्ये समुत्तिष्ठतस्तेन गन्धमाल्यलोकेन सम्पन्नो महीयते ।।

(छान्दो. ८-२-४।५।६)

विचार आया, यह महान जो तत्त्वज्ञानी है इस की सङ्कल्प शक्ति अति प्रबल हो जाती है। इस के बारे में कल विचार किया था। श्रुति ने कहा हे सोम्य 'स सर्वो भवति यस्तु परमेऽक्षरे वेद्यते' जो उस परम अक्षर को जानता है वह सर्वात्मा हो जाता है। 'स सर्वज्ञो भवति' लोक दृष्टि में ऐसा समझो कि जहाँ सर्वात्मभाव आप में आया आप समझ जाएँगे कि इन भूतों में क्या हो रहा है। जैसे पारिवारिक जीवन में माता पिता और बच्चे। कोई बच्चा उपद्रवी भी होता है। उपद्रवी माने झगड़ा करने वाला बच्चा। दूसरे बच्चे को लाफा लगा दिया, उस की मां देख रही थी। उसने आकर इस उपद्रवी बच्चे को एक लगा दिया। जब इस की गाल में लाफा लगा तो इस की मां भी देख रही थी। वह जोर से चिल्लाई। क्यों? क्योंकि वह बच्चे को अपना स्वरूप हीं जाननी है। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि यह लाफा उस की ही गाल पर पड़ा है। शरीरों मे भेद होते हुए भी उन शरीरों के अन्दर जो तत्त्व है, वह एक है। इसलिए जो सर्वात्म भाव में पहुंच जाता है वह सब प्राणियों की पीड़ा को अपनी पीड़ा मानने

लग जाता है । सब के सुख की कामना करता है । हे भगवान इनको दुख से मुक्त करो । सब प्राणियों को सुख दो ।

बच्चा पिता को बुलाने गया । पिता बड़ा सत्सङ्गी था । वह सत्सङ्ग सुन रहा था । प्रवचन का प्रसंग था ' एष सर्वेषु भूतेषु गूढ आत्मा न प्रकाशते' यह जो चेतन है सब प्राणियों में गूढ़ है, माने छिपा हुआ है, वह सब के अन्दर एक ही है । वृद्ध सुन रहा था । बच्चा बुलाने गया उस ने वह प्रवचन सुना । और सुनकर मन मे धारण कर लिया कि एक ही परमात्मा सम्पूर्ण भूतों में छिपा हुआ है । दुकान पर बोरों का मूँह खोल कर रखते हैं । एक गाय आई और चावल खाने लगी । बच्चा सोचता है कि जब सब में एक ही परमात्मा है तो इस मे भी वही परमात्मा है, मैं इस को क्यों हटाऊँ । खाती है तो खाने दो । इतने में बुढा आया गाय को देखा । एक छड़ी मारी । गाय तो चली गई पर बच्चा हाय कर के चिल्लाया । पिता ने पूछा तुम क्यों रोते हो, मैं ने तुम को थोड़े ही मारा है । बच्चा कहता है आप ने जब गाय को मारा तो मैं गाय के शरीर में था । वह छड़ी मुझको लगी । इस लिए मैं रो रहा हू । पिता ने कहा तुम गाय के शरीर में कैसे थे ? बच्चा बोला आप ने कथा में नहीं सुना कि एक ही परमात्मा सब भूतों में है । मैं उसी परमात्मा का ध्यान कर रहा था । वह एक ही है तो गाय के शरीर में नहीं है क्या ? पीठ देखी तो छडी का निशान था । अर्थ निकला कि उत्तम अधिकारी को सुनते ही बोध हो जाता है । उत्तम अधिकारी उस को कहते हैं जो पूर्व जन्म मे तत्त्वविद्या का श्रवण करते २ निष्ठा में तो चला गया, वेदान्त विद्या सुनते २ उस की तत्त्वनिष्ठा तो दृढ बन गई किन्तु साक्षात्कार नहीं हुआ ।

जैसे यूं समझो कोई बड़ा हीरा हो उसको तत्परता से देखते २ निश्चय होता है कि हीरा निर्दोष है जब पत्थर को देखने के लिए भी तुम्हारी बुद्धि को श्रम करना पड़ता है समय की भी अपेक्षा है । तुम्हारी जो अन्तरात्मा है जिस की कृपा से यह शरीर इतना सुन्दर लगता है । इतना प्यारा लगता है । वो कौन है? तत्त्व विचार करते २ उसका विचार सुनते २ समय तो लगेगा । वागदेव की कथा आप लोगों ने सुनी होगी । महान ऋषि था । महान ब्रह्म वेत्ता था । श्रद्धा से वेदान्त विद्या का श्रवण करने वाला । लम्बा जीवन सुनते २ भी तत्त्व

साक्षात्कार में नहीं पहुँचा ।

आचार्य तत्त्व साक्षातकार में तीन तरह का प्रतिबन्ध मानते हैं । भूत प्रतिबन्ध, वर्त्तमान प्रतिबन्ध, भावी प्रतिबन्ध । भूत प्रतिबन्ध वह है जैसे कोई नौजवान लड़का हो । पहले वह गृहस्थाश्रम में था । किसी कारण से वैराग्य हो गया । घर छोड़ दिया । गुरु की शरण में गया । गुरु ने समझाया कि बेटा लौट जाओ, यह योग तेरे बस का नहीं । पर वह माना नही । तो गुरु क्या करेगा ? कोई आत्मा मोक्ष मार्ग की ओर चलना चाहता है तो प्रेरणा तो देना पड़ेगी। चोर के पास कोई जाए तो वह चोर गुरु भी चोरी सिखाता है । चोरी कोई अच्छी विद्या तो नहीं है । अब बताओ किसी ज्ञानी संत के पास कोई आएगा तो वह क्या करेगा ? उपदेश तो करेगा । पर उस उपदेश को सुनते ही उसे बोध नहीं होगा मान लो उस लड़के का कोई प्रिय रहा घर में । गुरु जी ब्रह्म का उपदेश करते हैं पर उस को बोध नहीं हो रहा । क्योंकि मन में वह प्यारा बैठा है । उसकी स्मृति होती है । गुरु जी विचार करते है कि इतना उपदेश करने पर भी इस को बोध क्यों नहीं हुआ ? इस के मन में कोई प्रिय स्मृति बैंठी है । उन्हों ने उस प्रिय का ही ब्रह्म रूप मे उपदेश किया । उसी का ध्यान करने को कहा । बेटा वही ब्रह्म है तुम उसी का ब्रह्मरूप में ध्यान करो । जिस में उस के मन की वृत्ति चल रही थी उसी में ब्रह्म का उपदेश करते ही उस को बोध हो जाता है कि 'यह ब्रह्म है' 'मैं ब्रह्म हूँ' 'ब्रह्माऽहमस्मि' । यह भूतकाल का प्रतिबन्ध है ।

वर्तमान काल का प्रतिबन्ध 'प्रतिबन्धो वर्तमानोहि विषयासक्तिलक्षण: ' जो वर्तमान काल में हमारी बुद्धि को पीछे हटाने वाला विषय हो । विद्यारण्य मुनि पंचदशी मे समझाते है । विषय माने यह रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श यह पांच विषय है । जीवन मे उसने इन्ही विषयों को समझा यह विषय ही तत्त्व है । और कुछ समझा ही नही । जीवन का सार तो यही है । सुन्दर रूप देखो । सुन्दर शब्द सुनो सुन्दर गन्ध जो, सुन्दर रस लो, सुन्दर स्पर्श का स्वाद लो । यह विषयासक्ति अन्यत्र जाने ही नहीं देती । यह वर्त्तमान प्रतिवन्ध है । इस लिए कहा प्रतिबन्धो वर्तमानोहि विषयासक्ति लक्षण:'

दूसरा यह है कि यह विषय जो है, जिन को यह मनुष्य बड़े प्यार की आंख से देखता है किन्तु उन के बारे में कभी विचार नहीं करता । यह विषय

ब्लॉटिंग पेपर की तरह हैं। वह क्या काम करता है ? इस को खींच लेता है। इसी तरह यह विषय तुम्हारे जीवन के रस को सुखाने वाले हैं। खींचने वाले हैं। बड़ी २ दुकानों पर देखो लोग बढ़िया शो रूम बना कर बैठे है। यह तुम्हारी जेब का पैसा खींचने वाले है। इसी तरह यह माया की मार्कट है । यह तुम्हारी इन्द्रियों की शक्ति को खींचने वाले विषय है। भर्तृहरि विक्रमादित्य के बड़े भाई थे। राजा भी थे। विद्वान भी। प्रजा इन को विष्णुरूप मानती थी। बड़ी श्रद्धा थी प्रजा की इन पर। कुछ समय तक इन्हों ने राज्य किया। प्राचीन काल का नियम था। वेद सिद्धान्त है कि जैसे तुम इस शरीर में एक अवस्था में नहीं रह सकते। बच्चे बने तुम बच्चे नहीं रहे। कुमार बने तुम कुमार नहीं रहे। जवान बने तुम जवान नही रह सकते। शरीर की अवस्था के अनुसार आश्रम भी बदल जाता था।

यह आश्रम व्यवस्था केवल वैदिक संस्कृति मे ही है। बाल्यावस्था मे ब्रह्म चर्याश्रम, युवावस्था में गृहस्थाश्रम। 'आश्रमादाश्रमम् गच्छेत्' एक आश्रम से दूसरे आश्रम में जाओ। गृहस्थाश्रम मे रहने का अधिकार पचास वर्ष तक था। 25 वर्ष तक वेदादि का स्वाध्याय करना। 25 वर्ष में जो लड़का गृहस्थाश्रम में आएगा ' सदृशीभार्याम् विन्देत ' अपने अनुरूप भार्या का पाणिग्रहण करे। लड़की भी युवति होगी। सन्तान होना ही चाहिए। पुत्र उत्पन्न होना चाहिए। अमोघ शक्ति थी। अव्याहत शक्ति होती थी। वो पुत्र जब 25 वर्ष होगा तो पिता 50 में पहूंच जाएगा। माता पिता ने पुत्र का विवाह किया और अपने पितरों को नमस्कार किया। अपने वंश को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया कि हम इस वंश मे आये थे। यथाशक्ति वंशवृद्धि कर के जिन आत्माओं ने जन्म लिया उनको पाला पोसा। अब हम को आज्ञा दो कि हम आगें चले जएं। लड़का राष्ट्रपति बन गया। बहू प्रधान मंत्री बन गई। माता पिता वानप्रस्थाश्रम में चले जाते है। सब कुछ छोड़ छाड़ के किसी तीर्थ स्थान मे चले जाएंगे। 'ततो वनी भवेत्' तब वानप्रस्थ आश्रम में चले जाओ। अब बताओ झगड़ा होने वाला है ? उधर घर में बहू बेटा शान्तचित्त से गृहस्थाश्रम मे रहेंगे। संतान भी कितनी अच्छी होगी। आज कल तो आसक्ति के कारण आश्रम परम्परा को भी छोड़ दिया। न्यू ब्लड भी वही old blood भी वहीं। तो दोनों मे संघर्ष तो होगा ही।

माता पिता का आशीर्वाद बच्चो को मिलना चाहिए प्रथम गुरु तो माता पिता ही होते है। परिवार के गुरु तो वही हैं। बहू ऐंठती है, सासु भी ऐंठती है। घर मे गड़बड़ हुई तो आशीर्वाद कहाँ से मिलेगा। आशीर्वाद की कमी हो गई। यदि बड़े सब कुछ छोड़ छाड़ के चले जाएं एकान्त में भगवद्ध्यान चिन्तन करे तो दोनों को शान्ति मिल जाए। यदि कभी बच्चों के मन में आए कि चलो माता पिता के दर्शन कर आएँ तो दो एक साल में मिलेंगे। स्वभाव से ही प्रेम बढ़ेगा। कितना आशीर्वाद मिलेगा। विदेश मे एक बात अच्छी देखी। अमरीका इंगलैंड मे 15, 16 वर्ष के बच्चे को माता पिता अपने पास रखेंगे। पर इसके बाद अपने आप कमाओ और आगे जीवन चलाओ। एक बात तो अच्छी है। यद्यपि मैंने इसमे रूक्षता का अनुभव किया। झगड़ा तो नहीं हुआ। बुढा बुढी घर मे रह गये। और उनको घर से बाहर कर दिया। जिनका घर था। छोकरा छोकरी बाहर रहते है। पढते भी है कमाते भी है। बुढा बुढिया कुत्ता कुत्तिया पालते हैं। उन से प्यार करते है क्योंकि जो प्यारे थे उनको तो बाहर कर दिया। जैसे भी आता हैं रहते है। साल मे एक दिन मदर्स डे फादर्स डे पर आते हैं। एक गुल दस्ता भेंट कर दिया tea toast किया और चल दिए। संयुक्त परिवार प्रथा हमारे यहाँ की प्रथा है। बच्चे घर मे रहते है। मां बाप तपस्वी बन कर घर से जाते है। बच्चों को सब कुछ देकर जाते है। भोगी बनकर नहीं। हमारी परम्परा मे इतना फर्क है। वहाँ उन के अन्दर तो पक्षियों की वृत्ति है। पक्षी जिस घर में अण्डा देती है। उन्हें लेते भी हैं, दाना खाना भी देते है बच्चों को। पर जब उन्होंने उडना सीखा कि उन्हें मार कर निकाल देते है। वह आकाशगामी हो जाता है तब लौट कर घोंसले मे नहीं आता। यही विदेशियों मे है। 15, 16 वर्ष का हुआ कि घर से निकाल दिया, तुम अखबार बेच कर खाओ चाहे कोई और धन्धा करो किन्तु घर में लौट कर नहीं आओ। भारतीय परम्परा मे माता पिता जाते है तुम यहाँ रहो। इस प्रकार जीवन को समझना पड़ेगा।

ऐसी हालत मे यह वर्तमान प्रतिबन्ध जो है यह बड़ा अवरोध करता है। एक दिन भर्तृहरि ने राज्य छोड़ दिया जंगल मे जाकर जप तप करने लगा। एक दिन रात्रि के समय मैदान मे घूम रहा है। चन्द्रमा की चांदनी है। लम्बा चौड़ा

मैदान है। हरी घास से मैदान भरी पड़ी है। किसी अफिमची ने घास पर थूक दिया रहा। वह घास पर अटक गया। चन्द्रमा की किरण से वह हीरे की तरह चमकने लगा। भर्तृहरि ने देखा, यह तो कोई हीरा है। मन से वैराग्य ने कहा अरे तुम को क्या करना हीरे से, छोड़ो। किन्तु दूसरे मन ने कहा उठा ले, किसी गरीब को दे देना। इस ने जो हाथ मारा तो हीरा क्या था वह तो पानी था, चिपक गया हाथ से। भर्तृहरि बडा दुखी हुआ, और मीठे स्वर से गाता है :- भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता अब तक मेरी बुद्धि मे यह बात थी कि मैं इन संसार के भोगों को भोग रहा हूं। किन्तु अब मालुम पड़ा कि यह संसार के भोग तो ब्लाटिंग पेपर की तरह है, इन्होंने तो मुझे ही सुखा दिया। मैंने भोगों को नहीं भोगा अपितु भोगों ने ही मुझें भोगा। बाद मे कुछ बचा तो मैंने सोचा चलो थोड़ा तप कर डालें। पर अब पता चला कि मैंने तप को नहीं तपा, तप ने ही मुझे तपा दिया। जैसे अग्नि ने हंडी को गर्म किया ऐसे ही तप ने मुझे तपा दिया। मैंने तप कुछ नही किया। फिर सोचा कि काल आ रहा है, जा रहा है। किन्तु काल न कहीं आता है न जाता है। वही काल जो द्वापर मे था जो त्रेता मे था, जो सतयुग मे था, वही आज हमारे समय मे भी है। 'कालो न यातो वयमेव यात:' जैसे दिन मे हम बैठें है। यही सतयुग में था। कोई फर्क नहीं पड़ा। काल कही नहीं जाता, हम को ही विदा कर रहा है। क्या सुन्दर बच्चे थे। गोद में खेलते थे। अब किसी की गोद मे बैठ कर देखो। मां भीं नही बिठाएगी। फिर भी मन को कहता है कि तुम ने कैसीं तृष्णा को छिपा कर रखा है। यह जैसी की तैसी है। 'तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा: ' तृष्णा जीर्ण नहीं हुई। इस में कोई फर्क नहीं पड़ा, हम ही जीर्ण हो गये। पुराने हो गये।

इस लिए कहा प्रतिबन्धो वर्तमानो हि विषयासक्तिलक्षण:' मुमुक्षु मोक्ष साक्षात्कार मे जब चलता है तो यह वर्तमान प्रतिबन्ध अवरोध बनता है। वाम देव तो बड़ा ऋषि था। तपस्वी था। कोई भावी प्रतिबन्ध रहा होगा। जैसे ग्राम मे किसी घर में सांप घुस जाए। वहाँ दो तीन मंजिल के मकान तो कम ही होते हैं। किसी ने देखा नहीं कही छुप कर बैठ गया। सर्प तो काल का साकार रूप होता है। ऐसे ही जन्मान्तर का कोई कर्म इस सांप की तरह छुप कर बैठा है। वह तुम को ज्ञान नहीं होने देगा। यह भावी प्रतिबन्ध है। वह कर्म ज्ञान के

सामने आता नहीं । क्योंकि 'ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा' इसलिए वह उस के सामने आता ही नही । कहता है एक जन्म तुम्हारा और बाकी है। एक मम्मी अभी बाकी है । यही हाल वामदेव का रहा । एक मम्मी उस की बाकी थीं । उस मां के पेट मे वामदेव जब गया । पांच महीने मे बच्चा सर्वाङ्ग सुन्दर अङ्ग सहित तैयार हो जाता है । और उस के अन्दर चेतनता की अभिव्यक्ति हो जाती है । याद रखो चेतन पहले ही अन्दर रहता है तभी बच्चे का शरीर बनता है । बाहर से नही आएगा । पिता के शरीर से मां के शरीर मे केवल पानी नही जाता उस मे चेतन आत्मा होता है । मां के शरीर मे जितना matter चाहिए, लेकर अपना शरीर बनाता है । उस मे ही चेतनता की अभिव्यक्ति होती है । बच्चा हिलने डुलने लगता है । चतुर मां समझ जाती है । इस लिए मां का खाना पीना कैसा होना चाहिए उस का चलना फिरना कैसा होना चाहिए उस का विशेष उपदेश होता है । वह सावधानी से रहे, ज्यादा खट्टा मीट्ठा नही खाएँ। क्योंकि मां जो खाती है, वही बच्चे का भोजन होता है ।

यहाँ वामदेव को पांच महीने मे मां के पेट मे ही तत्त्वका साक्षात्कार होता है । 'अहं मनुश्च अहं सर्वात्मा, अहं सूर्यश्च' जैसे कोई गुफा के अन्दर से बोले तो बाहर आवाज आती है ऐसे ही आवाज आने लगी । वामदेव का पिता मां के पेट से कान लगा कर सुनता है । रहा नही गया इस से, यह भी बडा ऋषि था । पूछा, तुम कौन हो ? कोई भूत हो कि प्रेत । मां के पेट से कोई नही बोलता । तू कौन है जो बोल रहा है । वामदेव अन्दर से बोला 'वामदेवोऽहमस्मि' मैं वामदेव हूँ । मेरा पूर्वाश्रम है, मेरा परिवार है, पत्नी भी है, बेटा बेटी भी है। वहाँ जाकर पता किया । पता लगा कि वामदेव ऋषि थे । तो यह भावी प्रतिबन्ध है । मुमुक्षु को मन्द प्रयत्न नहीं होना चाहिए । हम वेदान्त विद्या सुनते है, इस से हमारा क्या भला होगा ? ऐसी शंका नही होना चाहिए । श्रद्धा से निश्चय करो कि उस परम सत्य के बिना कोई हमारा प्यारा नही । बेटा बेटी, पति पत्नीं माता पिता, अगर वो आत्मा नही तो कोई प्यारा नहीं । उसी को अग्नि के अन्दर आहुति कर देते है । आंख बन्द कर के पशुपति नाथ के सामने हरि ॐ कर देते है । यह पांचभौतिक शरीर बदबू मार जाएगा । सब को परेशान करेगा । इसलिए जल्दी से जल्दी अग्नि मे आहुति दे देते है । जिस से यह उन

भूतों मे मिल जाए । dust to dust हो जाए ।

ऐसी स्थिति मे यह भूत प्रतिबन्ध, वर्तमान प्रतिबन्ध, भावी प्रतिबन्ध, जब तक यह नष्ट नहीं होगें तत्त्वसाक्षात्कार नहीं होगा । किन्तु जब तत्त्व-साक्षात्कार हो जाएगा, सर्वात्मभाव में आ जाएगा । जब सर्वात्मभाव मे आ जाएगा उस को यह feeling होने लगेंगी 'आत्मैवेदं ब्रह्मैवेदं सर्वम्' यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूद्विजानतः तत्र को मोहः कः शोक एकत्वम-नुपश्यतः' जिस काल मे ' यह सबभूत मेरी ही आत्मा है, और कुछ भी नही, तो कोई शोक नही कोई मोह नही । यह सब हृदय मे तब तक है, जब तक तत्त्वका साक्षात्कार नहीं हुआ ।

आज जगद् गुरु शंकराचार्य जी की द्वादश जन्म शताब्दी है जयन्ती है । बडी प्रसन्नता की बात है, यहाँ भी इस पर्व को मना रहे है । उन के जन्म स्थान कालटी में समारोह हो रहा है । दिल्ली मे भी समारोह है । यहाँ भी कार्यक्रम रखा है साढ़े तीन बजे से । 'भूमा विद्या' नाम की एक पुस्तक छपी है । हमारे प्रवचनों का संग्रह है । आज इस पुस्तक का विमोचन भी होना है । परराष्ट्र मंत्री पधार रहे हैं । इसलिए आप समय से आवें तो अच्छा है ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२२-४-८८

प्रवचन सं०-१४

"ॐ अथ यदि गन्धमाल्यलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य गन्धमाल्ये समुत्तिष्ठतिस्तेन गन्धमाल्यलोकेन सम्पन्नो महीयते ।। ॐ अथ यद्यन्नपानलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्यान्नपाने समुत्तिष्ठतस्तेनान्नपानलोकेन सम्पन्नो महीयते ।।"

(छान्दो.८-२-६)

(छान्दो. ८-२-७)

विचार चलता है कि यह जो तत्त्वज्ञानी है, इसके अन्दर कितनी शक्ति है। बहुत से लोग यह समझते हैं कि योगाभ्यास के द्वारा हमारे अन्दर यौगिक शक्तियाँ आ जाएँगी। किन्तु यह बात नहीं है। शक्ति जो भी आएगी सब मन के निरोध से आएगी। मन का निरोध होगा तो शक्तियाँ आएँगी। मन यदि चंचल होगा तो योग नहीं होगा। जब योग ही नहीं होगा तो शक्ति कहाँ से आएगी। यह ब्रह्म विद्या योगों का भी योग है। इस लिए ब्रह्मविद्या को भगवान कृष्ण गीता मे कहते हैं 'राजविद्या राजगुह्यम्' यह विद्या राज विद्या है। राज विद्या का यह अर्थ नहीं कि यह राजाओं की विद्या है। ठीक है कि प्राचीन काल मे राजाओं को ब्रह्म विद्या पढ़ना अनिवार्य था। क्योंकि उस को जनता जनार्दन का शासन करना है। आत्म विद्या नही होगी तो समता नही आएगी। तो राजा शासन कैसे करेगा यदि उस मे राग द्वेष रहेगा तो। किसी को अपना मानेगा किसी को पराया। जिसको अपना मानेगा उस को अपराधी नही मानेगा। जिस को पराया मानेगा, उस का अपराध नही भी होगा तो उस को अपराधी बताएगा। इस लिए राजा से महान पाप होगा। आत्म विद्या से वह इन पापों से बच जाएगा।

शास्त्र ने तो सब का भला करना है । वह राजा है, ठीक है अपने महान पुण्यों से इस पद पर पहुंचा है । पद की प्रतिष्ठा तो शरीर तक ही है । बाद मे क्या है ?

उस आत्मा का भला परलोक तक भी होवै, शास्त्र का यह अभिप्राय है इस लिए ऋषि लोग राजाओं के ब्रह्म विद्या देते थे । जिस से राजा मे समभाव आए । सम दृष्टि हो । 'समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयो' शत्रु को और मित्र को समान भाव से देखे । यह तभी होगा जब तुम्हारे ज्ञान मे समता होगी । ज्ञान मे जब तक समता नहीं होगी व्यवहार मे समता नही आएगी । राजविद्या का तात्पर्य है विद्या का राजा । इस लोक मे जितनी विद्याएँ है, उन सब मे श्रेष्ठ है यह विद्या । आप लोग सुनते हो । उपनिषदो मे विद्या के दो भेद किए । अपरा विद्या और परा विद्या । अपरा विद्या 'अपरस्य व्यवस्थायै' अपर की व्यवस्था के लिए । अपर माने अपकृष्ट । जो अपकृष्ट वह अपर जो उत्कृष्ट वह पर । शरीर मे ही विचार करो । यह शरीर आत्मा से हीन कोटि का है । आत्मा से अपकृष्ट ह । आत्मा इस से श्रेष्ठ है । इस लिए आत्मा पर और शरीर अपर । लोक दृष्टि व्यवहार तो तुम्हे इस शरीर से ही करना है । वह आत्मदेव तो ज्योति स्वरूप अन्दर बैठा है । बेटा बेटी बनने के लिए शरीर को आगे आना पडेगा । शरीर को परिवार मे रहना पडेगा, इन्द्रियों से व्यवहार भी करना हैं । जाति भी चाहिए, समाज भी चाहिए, राष्ट्र भी चाहिए । व्यवहार तो सब के साथ करना है । परिवार को भी देखना है, जाति को भी देखना है, समाज को भी देखना है, राष्ट्र को भी देखना है । इन सबको देखते हुए अपने को ऊपर भी उठाना है । गिरा कर तो नहीं जाना । इसलिए शास्त्र ने अपरा विद्या का विधान किया । बुद्धिमान अपरा विद्या को भी पकडे । अगर यह मर्यादा मे नही है तो पर आत्मा का क्या होगा ?

ऋषियों ने अपरा विद्या का भेद किया । आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता, दण्डनीति आन्वीक्षिकी विद्या माने तर्क विद्या। बुद्धिमान मनुष्य स्वभाव से ही तर्क शील है कोई न कोई शंका लगी ही रहती है । बुद्धिमान आचार्य को उस शंका को हटाना पड़ेगा । शंका कब होगीं जब तर्क करेगा । कोई कहे 'कार्यमस्तु कारणं माभूत्' कार्य तो हो पर कारण न हो । यह तो वही बात हो गई कि पुत्रोऽस्तु

पिता मा भूत् 'पुत्रोऽस्तु माता मा भूत्' पुत्र तो हो माता पिता न हो। तो क्या माता पिता के बिना पुत्र हो जाएगा ? तो मानना पडेगा यदि पिता न स्यात् यदि वा माता न स्यात् पुत्रो न स्यात् माने तर्क है तो तर्क को काटना पडेगा। धूआ वही होगा जहाँ अग्नि होगी। माता पिता के बिना पुत्र कहाँ से होगा ? अग्नि के बिना धूम्र कहाँ से होगा ? अग्नि नही होगी तो धूम्र भी नहीं होगा। बुद्धिमान आचार्य तर्क के द्वारा समझाता है। इस तर्क विद्या के प्रधान महर्षि गौतम माने जाते है। महर्षि कणाद तर्क विद्या के वक्ता हैं। बड़ा विचार है हमारे यहाँ तर्क बिद्या का। इसको न्याय भी कहते हैं। इस का होना आवश्यक है। इस विद्या के द्वारा अपने मन को तर्क रहित करना है। संशय रहित करना है। खूब कूचे से बर्तन को मलते है। सोने के बर्तन को भी साफ तो करना पड़ता है। इसी तरह तुम्हारी यह बुद्धि सोने के कटोरे से भी सुन्दर है। इसको भी साफ करना होगा। बुद्धि मे तर्क और नाना प्रकार की शंका जग है। यह बुद्धि को चंचल करने वाले है। इसके लिए आन्वीक्षिकी विद्या है।

उस आन्वीक्षिकी विद्या के साथ त्रयी विद्या है। ऋग् यजुः साम। ऋग्यजु:साम विद्या को त्रयी विद्या के नाम से कहा गया है। यह त्रयी विद्या मे महर्षि कहते है 'आन्वीक्षिक्या तु विज्ञयौ धर्मोधर्मौ त्रयीस्थितौ'।

'अर्थानर्थौ तु वार्तायाम् दण्डनीत्वामनयानयौ' आन्वीक्षिकी विद्या जो तर्क विद्या है इस विद्या मे ऋषियों ने पंचभूतों का विचार किया। जो आज कल भौतिक बिद्या है। उस का मूल है यह तर्क बिद्या। हमारे ऋषियों ने परमाणुओं का पहले ही विचार किया है। वो कहते है परमाणुओं से जगत होता है। यह परमाणु कारणवाद है। अपनी कल्पना है जैसे कोई भी पदार्थ होता है। उसका विकास होता है उस का ह्रास भी होता है। जैसे अपने शरीर को ही पकड़ो। धीरे २ जवान हुआ। क्या हमेशा जवान ही होता रहेगा। उस का ह्रास हो जाता है। इसी तरह प्रत्येक पदार्थ है। यह पुष्प है। अमुक समय तक इस का विचार होगा। इसके वाद ह्रास होगा। इसकी पंखुड़ी २ बिखर जाएगी। यह पंखुड़ीं भी नहीं रहेगी सड़ जाएगी। ह्रास की भी सीमा है। हिमालय है। इसका विकास हुआ। तो ह्रास भी होगा। यह ह्रास की जो धारा है। धारा माने प्रवाह। जैसे बिकास का प्रवाह है वैसे ही ह्रास का भी प्रवाह है। पुष्प और

हिमालय के विनाश का जो प्रवाह है, उस को बराबर तो नहीं कह सकते। क्योंकि पुष्प तो बहुत छोटा है। इस के विनाश का प्रवाह पहले ही रुक जाएगा। किन्तु हिमालय तो विशाल है। अतः विशाल वस्तु का विनाश दीर्घ काल मे जाकर होगा। जहां विनाश का प्रवाह रुक गया। आगे विनाश नहीं होगा।

ऐसा तत्त्व है वो परमाणु। आज कल बड़े सूक्ष्म यंत्र है वैज्ञानिकों ने उस की खोज की। दूसरे दृष्टान्त मे ऐसा समझो जैसे खपरे का घर होता है। झिमटी पानि छेद में से सूर्य की किरण भीतर आ रही है। उस प्रकाश में अनन्तानन्त छोटे २ कण उड़ने हुए दिखाई देते हैं। आंख से यद्यपि कुछ नहीं दीखेगा परन्तु उस सूर्य की तेज धूप में वह छोटे २ असंख्य कण उड़ते हुए दिखाई दे जाते है। 'जालन्तरगते भानौ सूक्ष्म यद् दृश्यते रजः' 'तस्य सृष्टि तमो भावाः' यह जो छोटा सा छेद है। उस मे भानु माने सूर्य की किरण, उस किरण में जो छोटा सा कण दीखता है रज का। यह सूक्ष्म जो कण है इस रज कण को सूक्ष्माति सूक्ष्म यन्त्र के द्वारा तोड़ते जाओ तो अन्तिम साठवाँ हिस्सा जो होगा। वह परमाणु होगा। नैयायिक भी परमाणु को नित्य मानता है। महा प्रलय तक चलता रहेगा। फिर ईश्वर की इच्छा हुई 'अहं सृष्टि कुर्याम्ः' मैं सृष्टि करूँ। ऐसी इच्छा होने पर परमाणुओं के अन्दर जो क्रिया है। वह एक दूसरे को जोड़ने लग जाएगी। इस तरह परमाणु के पीछे परमाणु जुड़ने लग जाएँगे। और विशाल पृथ्वीं, बिशाल जल, विशाल वायु, विशाल अग्नि, यह चार पदार्थों का कारण परमाणु है। आकाश को नैयायिक नित्य मानता है। 'तस्य सृष्टि तमो भावा परमाणु तदुच्यते' इस लिए इसे कहते हैं भौतिक विज्ञान। यह तुम्हारा शरीर कहीं पैराशूट से तो लटक कर नहीं आ गया। इन भूतों से ही बना है। उन्हीं का मैटर इस में है और उसी से यह शरीर लम्बा चौड़ा बना है। इन भूतों से जब हमारा सम्बन्ध है तो इन के बारे में विचार तो करना पड़ेगा। बिना किए तो काम चलेगा नहीं। किन्तु यदि केवल इन्हीं को ही समझ कर रह गये, चेतन के बारे मे विचार ही नहीं किया तो इन्हीं भूतों में ही रह जाओगे।

यह स्थूल शरीर तो यहीं रह जाएगा। गति तो सूक्ष्म शरीर की है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियां पंच प्राण, मन बुद्धि यह सूक्ष्म शरीर निकल कर आगे जाएगा। जैसे बड़े २ वैज्ञानिक राकेट छोड़ते हैं, एक राकेट तो आकाश

तक ले जाता है । फिर उसके अन्दर से यान निकलता है जिस को शुक्रतारा तक भेजना है । इसी तरह समझ लो हमारा यह शरीर रूपी राकेट है । यह राकेट आकाश मे घुम रहा है । जीवन का जितना समय है, उतने काल तक यह राकेट घूमता रहेगा । फिर उसके अन्दर से सूक्ष्म राकेट अर्थात सूक्ष्म शरीर निकलेगा । समय आने पर । उस सूक्ष्म राकेट के अन्दर भी बैठने की जगह है । जहाँ वह बैज्ञानिक बैठा है । इस के अन्दर है कारण शरीर माने अविद्या । अहं २ करो । पर पूछो कि यह अहं कौन ? कहते है नहीं जानते । 'यह नहीं जानते' जो कह रहा है वह है वैज्ञानिक । यह यहाँ से उडेगा । अब यहाँ चलना बन्द हो गया । लोग कहेंगे मर गया किन्तु मरा वरा कुछ नहीं, वह वैज्ञानिक निकल जया । कहाँ जाएगा, कुछ पता नहीं । इस गति को आन्वीक्षिकी विद्या पकड़ती है। आन्वीक्षिकी विद्या इस का व्याख्यान करती है । ऋग् यजु, साम त्रयी विद्या उस गति का व्याख्यान करती है । ऋषियों को यह ज्ञान था कि ऐसा कर्म पकड़ो, ऐसी साधना पकड़ो, उपासना करो । इस जीवन को कर्म भी चाहिए । कर्म के बिना यह रह नहीं सकता । भगवान कृष्ण के सामने अर्जुन कह रहा है, हम तो फक्कड़ हो कर बैठ जाएँगे । हम युद्ध नहीं करेंगे । भगवान कहते हैं कि तु फक्कड़ बन जाएगा चाहे लक्कड़ बन जाएगा, पर कर्म के बिना तू रह नहीं पाएगा ।

एक क्षण भी कर्म के बिना कोई रह नहीं सकता । अच्छा नहीं करेगा तो बुरा करेगा । इस लिए अच्छा कर्म करो । अच्छे कर्म का फल अच्छा होगा ।

अच्छे कर्म की ब्याख्या, वो तुम्हारे लिए भी अच्छा तो दूसरे के लिए भी अच्छा । वह अच्छा कर्म । जो तुम्हारे लिए बुरा, दूसरे के लिए भी बुरा वह बुरा कर्म । इस की ब्याख्या त्रयी विद्या करती है । कर्म और उपासना की ब्याख्या इसके प्रभाव से यह जीव स्वर्ग लोक तक जाएगा या ब्रह्म लोक तक भी जा सकता है । यह अपरा विद्या है । इस जीव का उत्थान अपरा विद्या के द्वारा ब्रह्म लोक तक है । इस से आगे यह विद्या नहीं ले जा सकती । देवता की उपासना का फल भी उस देवता के लोक तक ही पहुँचाएगा । जैसा संग करोगे वैसा आदमी तुम को पकड़ लेगा । चोर का संग करोगे तो वह तुम्हें अपने घेरे से बाहर नहीं जाने देगा । इस का अर्थ यह निकला कि अपरा विद्या के द्वारा तुम्हारा मोक्ष नहीं

होगा । इस लिए इस के आगे परा विद्या है । ब्रह्म विद्या । इस विद्या के द्वारा तुम्हे 'अहं' का बोध होगा । यह सत्चित् आनन्द स्वरूप तुम्हारी आत्मा चेतन है । जिस के बारे में मंत्र कहता है । 'तत् सन्मूलं स्यात्' श्रुति कहती है इस का मूल कहाँ होगा । जो २ भी कार्य होगा उस का कोई कारण होगा जैसे यह फूल है । इस का कारण क्या है ? पृथ्वी । पृथ्वी का कारण जल, जलका कारण तेज है । जैसे गर्मी होती है तो वर्षा हो जाती है । तेज का भी कोई कारण है । तेज भी अपने आप नहीं हुआ । हे सोम्य यह सारी प्रजाएँ सन्मूल हैं, अर्थात इन के मूल में सत् है । अपने शरीर में ही समझो । इस शरीर के जीने का आयतन आत्मा है । आयतन माने स्थान , निवास ।

"स य एषो अणिमा तत्सत्यं सा आत्मा" जब तक यह शरीर उस चेतन आत्मा के करंट में है, तब तक मत डरो । श्रुति कहती है हे सोम्य जो सत्य है, वही आत्मा है । महर्षि कहते हैं 'तत्त्वमसि श्वेत केतो' वो आत्मा तुम हो । हे सोम्य 'तत् त्वं असि' वो आत्मा तु है । यह देहादि तो तेरे ऊपर कर्मों का कवर (cover) है । जिस कर्म ने इस कवर को रखा है, जब वह कर्म हट जाएगा तो कवर भी हट जाएगा । किन्तु उस आत्मा के स्वरूप में कोई फर्क नहीं पड़ेगा । 'तत्त्वमसि' महा वाक्य है । बिना महा वाक्य के उपदेश के इस आत्मा का ब्रह्म रूप कर के बोध नहीं होगा । 'आन्वीक्षिकी तु विज्ञानं धर्माधर्मौ त्रयी स्थितौ, अर्थानर्थौ तु वार्तयाँ' । वार्तानाम है शब्द विद्या का । माने ब्याकरण । आजकल ग्रामर कहते हैं । बिना ग्रामर के हम किसी भाषा को पकड़ नहीं सकेगें । हमारे यहाँ व्याकरण शास्त्र बड़ा विशाल है । कैसा ही शब्द हो ब्याकरण रूपी मशीन मे आते ही उसका स्वरूप बदल जाएगा । इस लिए वार्ता विद्या माने शब्द विद्या अर्थ और अनर्थ का विचार करती है । अर्थ की भी ब्याख्या करती है और किस शब्द का क्या अर्थ नहीं है, इसकी भी ब्याख्या करती है । 'दण्डनीत्या नयानयौ' चौथी विद्या है दण्ड नीति । राजा प्रजा का प्रधान हे । अपराधी को दण्ड कौन देगा ? वही देगा । किन्तु दण्ड तो निति के अनुसार ही देना होगा । वह भी बंधा हुआ है । मनमानी करेगा तो आगे उस को भी हिसाब देना पड़ेगा । वह कानून को सामने रख कर ही न्याय करता है । हाँ तुम्हारी अवस्था को देखकर

परिस्थिति को देख कर, तुम्हारे कर्म को देख कर तुम्हारी सजा कुछ कम कर सकता है। तुम अच्छा कर्म कर के जाओगे तो तुम को पुरस्कार भी दे सकता है। यह जो मनुष्य प्राणी हैं, इन्हीं मे कुछ गुलाब है तो कुछ काँटे भी है। उन काँटो को कौन पकड़ेगा। इस लिए राजा बनाया जाता हैं 'अन्यायकरा नश्यन्ति,नश्यन्ति बहुनायका:' जिस का कोई नेता नहीं वह जाति कैसे चलेगी। राष्ट्र को नेता चाहिए। और यदि जिसको देखो वही नेता, तो भी व्यवस्था भंग हो जाएगी। इस लिए पार्लियामैंट में भीं प्रधान मंत्री होता है उस के आगे भीं राष्ट्रपति है। इस लिए राजा बनाया कि देश की व्यवस्था करेगा। धर्माऽधर्म का विवेक करेगा। न्याय अन्याय का निर्णय करेगा।

यह चार विद्याएँ मनुष्य के जीवन को सुखी बनाने के लिए हैं। इस के आगे जाने के लिए परा विद्या है। पर माने श्रेष्ठ। इस शरीर को देखो और इस के अन्दर इस आत्मा को देखो। कितना श्रेष्ठ है। उसके करंट में जो जड़ जैसा नहीं दीखता। मांस का पिंड जड़ जैसा नही लगता। आत्मा जैसा लगता है। आत्मा के बिना यह शरीर क्या है? मरने में क्या बाकी है? जिस के करंट में मुर्दा मुर्दा नहीं तो सोचो वो कितना बड़ा सिद्ध है। तुम कितने सिद्ध हो सिद्ध होते हुए भी दूसरे सिद्धों के पीछे चल पड़ते हो। अपने को छोड़ कर अन्य सिद्धों से मिलते हो। और अपने मे जो सिद्ध है उस को कभी देखा ही नहीं। एक मुर्दे शरीर को मुर्दा नहीं रहने दिया। इस सिद्ध को जानने की जो विद्या हैं वह परा विद्या है। इस लिए भगवान कहते है यह राज विद्या है। विद्यानाम राजा। ब्रह्म बिद्या के नीचे सारी विद्याएँ हैं। राज गुह्य। गुह्यानाम् राजा। गुह्य माने रहस्य। जो छुपाए जाते हैं। जैसे घर मे हीरा सोना आदि है। तिजोरी में रखते हो कि नहीं। चोर तवाखाने में डाल दिया। लौकिक जीवन का वो धन हैं, जिस का मतलब केवल इतना ही है कि यह तुम को आराम से रोटी दे सकता है। इससे अधिक यह हीरा तुम को क्या देने वाला है। दो चार हीरे खालो। उस हीरे को छुपाया है किन्तु यह तुम्हारी अन्तरात्मा जो हीरों का हीरा है, कितने रुपयों मे ले आओगे? इस लिए भगवान कहते हैं यह सब से श्रेष्ठ है, छुपाने योग्य हैं।

इस हीरे को, आत्मा रूपी असली हीरे को जानने की जो विद्या है वह

राज विद्या है । 'पवित्रं मिदमुत्तमम्' यह विद्या पवित्र है । ज्ञान ही तुम को पवित्र करेगा । अपने घर में कितनी बार झाड लगाओगे । कितनी बार तुम नहाओगे । कहते हैं महाराजे हम तो बिना नहाए खाते नहीं । मछली तो चौबीस घण्टे पानी में रहती है । वह कितनी पवित्र है ? जब तक ठीक ज्ञान को नहीं पकड़ोगे तब तक तुम्हारे अन्दर शुद्धि आने वाली नहीं । आत्म बोध होगा तभी पवित्रता आएगी । "पवित्रमिदमुत्तमम्" बीच के समय में यह फैंशन हो गया था कि हम किसी का छुआ खाते नहीं है । पेड़ पोधे किस का छुआ खाते है । स्वयं पाकी है, अपने बनाते है अपने ही खाते है । तुम भी क्या हो ? चलते फिरते पेड़ पौधे ही हो । और क्या हो ? जब तक वहाँ नहीं पहुंचा, जहाँ पहुँच कर फिर लौटना नहीं तो तुम ने कौन सी नई चीज की । सोचना पड़ेगा जीवन के बारे में भक्ति करो, अच्छा है । पशुपति जाओ, दर्शन करो सब अच्छा है किन्तु इतना ही करते रह जाओ और समझो कुछ नहीं तो क्या हुआ । भगवान कहते है कि यह ज्ञान इतना सरल है कि 'प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम्' । प्रत्यक्ष अवगम्य है । समझ मे आने वाला है । सुसुख है । सुख पूर्वक प्राप्त करने योग्य है । किया जा सकता है । कोई कठिनाई नहीं यह महान योग है । इस योग के द्वारा विलक्षण सिद्धि आती है । ऐसा योगी जो भी कल्पना करेगा वो ही मिल जाएगा । जिस लोक की कल्पना करेगा, प्राप्त कर लेगा ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२३-४-८८

प्रवचन सं०-१५

"ॐ अथ यदि गीतवादित्रलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य गीतवादित्रे समुत्तिष्ठत स्तेन गीतवादित्रलोकेन सम्पन्नो महीयते । ॐ अथ यदि स्त्रीलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य स्त्रियः समुत्तिष्ठन्ति तेन स्त्रीलोकेन सम्पन्नो महीयते ।।"

(छान्दो.८-२-८।६)

महान जो ब्रह्म वेत्ता है, इस महान आत्मवेत्ता का कितना बड़ा सामर्थ्य है, कितना प्रभाव है, इस बात को स्पष्ट करते हैं। कहते हैं कि यह जो इच्छा करेगा वह हो जाएगा। देखो, इच्छा अपूर्ण किसकी होती है ? इच्छा तो सब की होती है, पर सबकी इच्छा पूर्ण नही होती क्योंकि जहाँ तक हमारा मन जाता है नाम रूप मे ही घूमता है। नाम रूप वाला पदार्थ अपने स्वरूप मे अपूर्ण है। जेसे गुलाब का फुल है, कितना बड़ा है इस की इच्छा भी करेगें तो इतनी हीं बड़ी होगी। उसे लेगें और थोडी देर मे फेंक देंगे। इस माया के जंगल के जितने भी पदार्थ है, इन के अन्दर घूमने वाला मन कभी शान्त नहीं रह सकता। कभी तृप्त भी नहीं होगा। किन्तु इस नाम रूप का अधिष्ठान जो सत् चित् आनन्द रूप अन्तरात्मा है उस को समझो। मन जब गाढ निद्रा मे चला जाता हैं तो किसी सुख की कमी पडती हैं वहाँ हमे ? गाढ निद्रा मे किसी सुख की कमी नहीं। किन्तु जिस सुख की हम लोग विषयो से चाहते है वह सुख

हमे गाढ निद्रा मे स्वतः प्राप्त होता है । वहाँ कौन सा विषय है । न वहाँ रूप है, न रस है, न शब्द है, न स्पर्श है । फिर भी निद्रा की स्थिति में तुम को महान आनन्द मिला ।

श्रुति कहती है 'एषोऽस्य परमानन्दः' यह सुषुप्ति का आनन्द परमानन्द है । इस के समान उत्कृष्ट आनन्द किसी विषय मे नहीं है । नाम रूप से मिलने वाला आनन्द सीमा में बंधा हुआ है । इस लिए थोडी देर में दूसरे विषय की इच्छा हो जाएगी । जैसे भोजन किया थोडी देर के लिए पेट भर गया । तृप्ति हो गई । ठीक है उस समय खाने की जरूरत नहीं, पर जहाँ हंडी दो चार बार हिली कि जगह बन जाएगी । ऐसा कोई भी भोजन नही जो हमेशा के लिए तुम्हारी भूख को मार दे । सारे विषय ऐसी ही है । इस लिए बार २ इन विषयों को लेना पडता है । पर इस आत्मा का महान आनन्द जब मिल गया । तो यह बाहर जगत के जितने भी भोग है यह बेस्वाद हो जाएँगे । भोजन यदि युक्ति से, ठीक प्रकार से कर लिया तो बाद में उसी भोजन में स्वाद नहीं रहेगा । तुम्हारा भोजन तो यह आनन्द ही है ।

श्रुति आत्मा के आनन्द को परमानन्द कहती है । उस को पा जाने पर अपने स्वरूप मे लीन हो जाता है । फिर मन बाहर नहीं भटकता । बाहर निकलने वाला जो मन है, वह वासना वाला मन है । आत्मा के अन्दर रमण करने वाला मन नहीं । इस की वासना कुछ नही रहती । जब वासना नही रहती तो मन बाहर नही जाता । उस मन को निर्विकल्प मन कहते है । ऐसा मन निर्भय हो जाता है । उस को मृत्यु का भी भय नही रहता मृत्यु सामने खडा है पर उसको मृत्यु का भी भय नहीं क्योंकि उस को उस मे भी 'मैं' ही दीखता है । अगर मैं इस शरीर में मृत्यु का भोज्य हूं तो मृत्यु की शकल मे भोक्ता भी 'मैं' ही हूं । महाभारत में जड भरत का उपाख्यान है । घर वाले बड़े प्रिय है, बड़ा प्यार करते हैं । जड़ भरत ऋषभ देव के पुत्र है । ऋषभ देव भगवान के अंशावतार माने जाते है । जो भगवान के अंशावतार थे उन ऋषभ देव के ज्ञान में क्या कमी हो सकती है ? उन के ज्ञान में कोई कमी नही थी । जड भरत का जब जन्म हुआ तो रोये ही नहीं । उन का नाम ही जड़ भरत रखा गया । कहते है तीसरे जन्म मे इन का मोक्ष हुआ । यह इन का तीसरा जन्म था । 'भक्तस्य त्रीणि' । पहले जन्म

में यह महान सम्राट हुआ। धर्मानुसार 'आश्रमात् आश्रमं गच्छेत्' ब्रह्मचर्यात् गृही भवेत। गृही भूत्वा वनी भवेद, वनी भूत्वा प्रव्रजेत्। यह वैदिक सनातन धर्म का अकाट्य नियम था। जैसे बच्चे से कुमार बने। कुमार से जवान बने। जवान से बुढे बने। तुम रूके कहीं? रूक कर करती भी क्या? यह प्रकृति का नियम है नियम से चलना ही पड़ेगा। स्टेशन बाय स्टेशन स्थान बना जीवन को बदलो। ब्रह्मचर्य आश्रम में बेदानुसार ज्ञान से अपने को पूर्ण करो। पूर्णता में आकर जगत को सुन्दर बनाओ। गन्दा नहीं करो। गन्दा करने का अधिकार नही है। सुन्दर बना कर अमुक समय तक इस में रहो। जैसे गवर्नमैंट अमुक समय तक काम लेकर पैन्शन दे देती है। Retire कर दिया कि अब आराम से बैठ कर रोटी खाओ। वेदिक परम्परा में इसी तरह 25 वर्ष तक ब्रह्मचर्य आश्रम में रहो। 25 वर्ष गृहस्थाश्रम में रहो। गृहस्थ आश्रम की सर्विस करो। 25 वर्ष में तुम्हारे बेटा बेटी जवान हो जाएँगे। पितरों को हाथ जोड़ो और वानप्रस्थ आश्रम में चले जाओ।

भरत ने इसी नियम अनुसार राज्य किया। और बाद में बन में जाकर तप करने लगा। एक दिन गंडकी नदी के किनारे बैठा तप कर रहा था। हिरणी भागती हुई आई। उस के पीछे शेर पड़ा था। हिरणी भय के कारण भागी। नदी में छलांग लगायी। पेट मे बच्चा था गिर गया। हिरणी तो मर गई। बच्चा पानी की धारा में बहने लगा। भरत से देखा नही गया। दया आ गई। कमल के फूल की तरह कोमल सा बच्चा इस के हाथ लग गया। बच्चे को लेकर कुटिया में लौटा और पालने लगा। दूध पिलाते हैं। शरीर मे तो पशु है, पर अन्दर जो बैठा है वो तो पशु नहीं है। अब यह ध्यान में बैठते है तो यह बच्चा कभी गोद में घुस जाता है। जो अपने बच्चों को छोड़ कर आया हे, विरक्त है। इस को माया कहते है। कोई मन्द कर्म सामने आ गया। मोक्ष की ओर चल रहा है और बीच में यह कर्म आ गया। स्पर्श सुख सब सुखों से बड़ा। यह हाथ फेरते है। प्यार से हाथ फेरो तो आदमी का बच्चा भी फैल जाता हैं। यह ध्यान में बैठे है और वह पीठ खुजाने लगता हैं। मित्र बन गया वह। एक दिन वह कहीं जंगल में चला गया। लौटा ही नही। ऋषि चिन्ता में बैठे है कि हाय उसे कोई शेर खा जाएगा। इसी चिन्ता में प्राण छूट जाते है। और कोई यदि तुम्हारे पास

आएगा तो आने से पहले पत्र भेजेगा, तार देगा या फोन करेगा। किन्तु यह काल मृत्यु देवता एक ऐसा अतिथि है जो बिना किसी सूचना के आ जाएगा। इस के पास सब के Address हैं। कहीं भी, कभी भी बिना सूचना दिए पहुंच जाता है। इस लिए कहा कि मुमुक्षु सावधान रहे। कब आ जाता है कुछ पता नहीं। न इस ने चिट्ठी लिखनी है, न तार देना है, न टेलीफोन करना है। देखो जड भरत ध्यान में बैठे हैं, ध्यान में वो हिरणी का बच्चा दौड रहा है, हाय वह जंगल में चला गया, और उसी समय मृत्यु देवता आ गये। जिस ध्यान में तुम्हारा मन जाएगा उसी योनि में तुम को जाना पड़ेगा। इस लिए मुमुक्षु को कहा जाता है कि तुम ब्राह्मी भावना करो। 'आत्मैवाहमस्मि' ब्रह्मैवाहमस्मि।

शरीर है, बडा सुन्दर है, बल भी है, पर आत्मा के बिना क्या है? कितनी सुन्दरता है? हाथी है। इतना बडा जानवर है। अगर इस को प्राण छोड देता है तो वहीं गिर जाएगा। यह प्राणात्मा जिस भावना में यहाँ से निकलेगा उसी योनि में चला जाएगा। गीता मे कहा है। यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्, तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भाव भावितः। अगर तुम्हारा मन सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा से सदा परिपूर्ण है। जीवन काल मे परिपूर्ण है। तो आगे भी इसी भाव में जाएगा। शरीर कितने वर्ष से तुम्हें मिला है? जितने वर्ष का है उतना ही कहना पडेगा। जैसे बच्चा है तो कहेगा 5, 6 वर्ष का। इस के पहले तुम्हारी कौन सी शक्ल थी? इस से पहले भी कोई शक्ल तो रही होगी। यह शरीर 50, 60, 70, 80 वर्ष तक रहेगा। अधिक से अधिक शतायु होगा 100 वर्ष तक रहेगा। यह आकार जन्म के बाद जो period of life है उसी में है। जन्म से पहले भी यह आकार नहीं और मृत्यु बाद भी नही। ऐसी दशा में बुद्धिमान आचार्य, ज्ञान दाता गुरु जैसा बोले वैसा आत्मा को स्वीकार करे। यह सत्चित् आनन्द स्वरूप ही है। मुमुक्षु हमेशा ब्राह्मी भावना करे। इस ब्राह्मी भावना के करने से ही यह धीरे २ आगे बढ जाएगा। मन की भावना तो पता नही इसे कहाँ ले जाएगी। देखो जड भरत को जा रहा था मोक्ष की ओर और मन की भावना ले गई हिरण योनि में।

हिरणी का बच्चा बन गया, किन्तु इस योनि मे भी ज्ञान बना रहा। ज्ञान ने नहीं छोडा। देखो एक बात याद रखो कि सत्सङ्ग के द्वारा जो ज्ञान

प्राप्त होगा वह निष्फल नहीं होगा। ठीक है इस शरीर में तुम को साक्षात्कार नहीं हो सका तो भी तत्त्व का ज्ञान नष्ट नहीं होगा यह फिर तुम्हें पकडेगा। जब छोटा सा पाप भी फल दिए बिना नष्ट नही होता तो यह ज्ञान कैसे नष्ट हो सकता है ? हिरण योनि में स्मृति हुई कि तुम कहाँ जा रहे थे ? कहाँ पहुंच गये। जा रहा था मोक्ष में आ गया पशु योनि में। ज्ञान की कृपा हो गई। ज्ञान का प्रसाद स्मृति है। विस्मृति death है। भूल जाना ही मृत्यु है। ज्ञान ने स्मृति दी कि कहाँ से कहाँ आ गये। इस ने हरी घास खाना बन्द कर दिया। पश्चात्ताप हुआ। सुखे पत्ते खाने लगा जिस से शरीर शीघ्र समाप्त हो जाए। ज्यादा दिन टिके नहीं। यह शरीर जल्दी छूट जाए और मैं मोक्ष में चला जाऊँ। थोडे दिन में शरीर छूट गया। बडे पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्म हुआ। जन्म होते ही रोया नहीं। देखो इस संसार का नियम है कि आओ तो रोओ, जाओ तो रोओ। हाय यह सब कुछ छूट जाएगा। किन्तु ज्ञानवान नहीं रोता। आता है तो भी खुशी जाता है तो भी प्रसन्न। यह जो इस का जन्म हुआ तो रोया नही। माता पिता ने देखा बच्चा तो अच्छा है। प्रसन्न हुए और बच्चे को पालने लगे। किन्तु यह तो ऐसी वृत्ति धारण किया कि माँ ने दूध पिला दिया तो पी लिया। लिटा दिया तो लेटा रहा। उठा दिया तो उठ गया। सुला दिया तो सो गया। इस तरह बच्चा बडा होता गया। नाम पड़ गया जड़ भरत। शरीर तो पंच भूतों का विकार है बढने लगा। ज्ञान भी ठीक है। जो कहते है कर देता है बोलता कुछ नही। 12 वर्ष का हो गया। माता पिता ने सोचा कि ब्राह्मण कुल मे आया है। यज्ञोपवीत संस्कार तो कर दो। संस्कार कर दिया। गायत्री मंत्र रटाया पर याद ही नहीं करता। याद क्या होगा जिधर हम अपना मन देते हैं। मन को बाहर दिया ही नही तो याद क्या होगा। जहाँ मन नही देगें याद नहीं होगा। मन तो जिसका है उसी को दिया है। दूसरे को क्यों दे ? मंत्र याद ही नहीं हुआ। किसी ने पकड कर नहला दिया तो नहा लिए। किसी ने खिला दिया तो खा लिया। नहीं तो नहाना धोना भी नहीं। खाना भी नहीं।

भाईयों ने देखा छोकरा है तो हट्टा कट्टा। पडोस की माईया भी काम लेने लगी। काम भी करता है। नौ भाई हैं। उन्होने सोचा कि जड़ तो है किन्तु काम तो करता है। ले जाकर खेत मे छोड दिया। माता पिता की मृत्यु के बाद

भाई भाईया कहा तक पालते । खेत मे छोड आए । हाथ मे खोदने का यंत्र दे दिया बोले खेतों को खोदो । वह संसार बडा स्वर्थी है । कुदाल हाथ मे दे दिया। वह खेत खोदने लगा। किन्तु कहां खोदना है कैसा खोदना है कुछ पता नहीं । कहाँ खड्डा करना है कहाँ समतल रखना है, कुछ पता नहीं । खोदता जा रहा है । रात को वहां पडा रहता हैं । धूप वर्षा सब सहन करता है । घर वाले भी कमाऊ बेटे से प्यार करते हैं।मां भी कमाऊ बेटे से प्यार करती है। नही तो मम्मी भी कहेगी यह मेरे काम का नहीं । एक दिन खेत पर बैठा है तो चोरों का एक सरदार भगवती की बलि देने के लिए किसी लड़के को ले जा रहे थे । वेद मन्त्र है 'चौराणां पतयेनमः' तुम तो चोरों के पति हो तुम्हें नमस्कार हो ।

भगवती की बलि के लिये मान्यता थी कि अपने भले के लिए दूसरे के प्राण लेना । भला दूसरे के प्राणों की हत्या कर के अपने प्राणों को कैसे बचाओगे । जिस मृत्यु ने उस को मारा वह तुम्हें कैसे छोड़ देगी । तुम्हें तो मृत्यु का साक्षात्कार वहीं हो गया । इस लिए ज्ञानवान दयाशील होता है । वह किसी के प्राणों की हत्या नहीं करता । किसी की हत्या कर के वह अपने पेट को कबरगाह नहीं बनाता । कबरगाह माने मुर्दा गाढने की जगह । अच्छे पदार्थ खाओ । बहुत पदार्थ बनाए हैं भगवान ने तुम्हारे खाने के लिए । ज्ञानवान सत्सङ्गी की बुद्धि सुन्दर होगी । बुद्धि सुन्दर होगी तो विचार भी अच्छे होंगे । विचार सुन्दर होगा तो अच्छे पदार्थ ग्रहण करेगा । कर्म अच्छा होगा । चोरो के सरदार ने जिस को बलि के लिए पकड कर रखा था, वह भाग गया । भगवान ने उस को बचा लिया । किन्तु बलि देनी है इस लिए सरदार ने अपने चोरों को उसे ढूढने भेजा । यह बिचारा महात्मा खेत पर खड़ा था । हाथ पकड कर ले गये । अंधेरा था । देवी के मन्दिर के सामने रख दिया । देखा बडा सुन्दर है । सब अवयव भी ठीक है । 12, 13 वर्ष का सर्वाङ्ग सुन्दर सुडील छोकरा । पहले स्नान करवाया, बढिया वस्त्र पहनाएँ, बढिया २ भोजन करवाया और भगवती के मन्दिर के सामने बिठा दिया । भगवती की पूजा होने लगी । ढोल बजने लगे । सब बडे प्रसन्न हो रहे है ।

सरदार खड्ग लेकर पीछे खड़ा हो गया । भगवती के मुँह पर पसीना आने लगा । मूर्ति फट कर देवी प्रकट हो गई । उसके हाथ से खड्ग लेकर सब

को मार दिया । खोपडियाँ जो गिरी उनसे फुटबाल की तरह खेलने लगी । उन्मत्त हो गई । ऐसा क्यों हुआ ? सुनो क्योंकि जो सामने बैठा है वह तो साक्षात् ब्रह्म हो गया है । यह कोई मनुष्य थोडे ही है ! जो शरीर के अहंकार में है मनुष्य वह है । जब तक हम मन के करंट में हैं तब तक हम जीव है । जब हम ने मन के अहंकार की दीवार को तोड दिया तो शरीर की दीवार टूट गई । 'ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति' श्रुति कहती है ब्रह्मवेत्ता साक्षा् ब्रह्म स्वरूप हो जाता है । साक्षात ब्रह्म के रूप मे जड भरत सामने बैठा है । भगवती उस की शक्ति है । लोक मे ही देखो । 5 फुट लम्बी पत्नी अ..र उसके पति पर कोई हमला करना चाहे तो वह जान देती है कि नहीं । जिस की मैं शक्ति हूं, जिस के बल से मैं चलती हूँ, भगवती ने सोचा ये उस को कैसे मार देगें । भगवती उन्मत्त हो गई । बाद मे गोद मे लेकर प्यार करती है । मां की भांति प्यार करती है । खेल करने के बाद भगवती अन्तर्ध्यान हो गई ।

दृष्टान्त का तात्पर्य यह है कि मृत्यु का भय तो उसको है जो केवल शर.र के अहंकार में ही घूमता है । उस अहंकार कों पार कर जाओ तो मृत्यु तुम्हारा क्या बिगाडेगी । 'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन' कही से कोई भय नही । ब्रह्मज्ञानी जब उस को जान जाएगा तो उस का कहीं से भी कोई भय नही । मृत्यु का आकार आज तक किसी ने देखा नहीं । दुनियाँ में रोज प्राणी मर रहे हैं । बडें २ वैज्ञानिक भी हैं, उन से जरा पूछो कि मौत का कौन सा आकार है ? किसीं के पास उस का कोई फोटो नही । यह मृत्यु जो है इस ने किसी को छोडा नही । इस को किसी ने देखा नही । सब से बडा भय मृत्यु का है । किन्तु यह ब्रह्मवेत्ता जो है वह इस के भय से भयभीत नहीं होता । श्रुति कहती है 'न बिभेतिकुतश्चन' महान इस ब्रह्म के ज्ञान को विद्वान जब जान जाएगा वह निर्भय हो जाएगा । गीता में भगवान कहते है 'समं सर्वेषु भूतेषु' सम्पूर्ण भूतों में एक रस है । भूत तो अपना स्वरूप बदलते जा रहे है जैंसे अपने शरीर को ही देखो । रोज शक्ल बदलता जा रहा हैं । किन्तु इन के अन्दर रहने वाला तत्त्व सदा एक रस है । जो विनाशी नहीं । उस की कृपा से यह विनाशी होते हुए विनाशी नहीं दीखते । जो ऐसे अविनाशी तत्त्व को देखता है । 'यः पश्यति स पश्यति' इस का दर्शन भी ऐंसा है कि वह विनाशी मे उस अविनाशी

तत्त्व को देखता है उसी का देखना ठीक है। वाकी लोग कुछ भी नहीं देखते। 'पश्यन्नपि न च पश्यति लोकः' भगवान शंकराचार्य कहते है, मूर्ख देखते हुए भी नहीं देखते। वह मूढ ही है। इस प्रकार इस तत्त्व ज्ञान की स्थिति में ज्ञानवान महान ऐश्वर्य को पाता है।

उस की जो कल्पना होगी वह सिद्ध हो जाती है। श्रुति कहती है 'यं यं कामयते तेन सम्पन्नो महीयते' जिस २ पदार्थ की इच्छा करता है अथवा किसी देश मे जाने की इच्छा करता है। कभी हरिद्वार तीर्थ में जाने की इच्छा होती है। यह ज्ञानवान इस शरीर में बैठा हुआ कहीं भी जाने की इच्छा करेगा तो सङ्कल्प से वहाँ पहुंच जाएगा। एक बडे संत थे। जहां रहते थे वहीं कुतिया का बच्चा भी रहता था। कुतिया ही थी। कुत्ता मालिक से बड़ा प्यार करता है। यह भी संत से बड़ा प्यार करे। जहाँ भी वह जाए पूंछ हिला २ कर साथ २ चले। संत को दया आ गई, कह दिया 'पुत्री भव' संकल्प करते ही सुन्दर कन्या खडी हो गई। सिद्ध संत थे। लड़की बन गई। एक महाराजा संत का शिष्य था। गुरु के दर्शन को आ गया। लड़की को देखा अन्दर बाहर घूमता है। राजा बार बार देखता है। ऐसी सुन्दर लड़की यहाँ रह कर क्या करेगी? बार २ कन्या की ओर देखता है। महात्मा समझ गये। राजा भी बोल पडे कि महाराज यह कन्या मुझे दे दो। संत ने कहाँ यह तुम्हारे लायक नहीं है। इसे यही रहने दो पर मन जब किसी विषय को पकड़ लेता है तो जल्दी छोड़ता नही। यह तो ज्ञान की कृपा हो जाए, ईश्वर का अनुग्रह हो जाए तो छोडता है नही तो नहीं छोडता। नही माना तो महात्मा ने कहा ले जा। विवाह कर लिया। राजा खुशी से उसे अपने घर ले गया। पटरानी भी बना दिया। महल मे रात को रोज दीपक जलाए जाते थे। किन्तु थोडी देर मे ही अंधेरा हो जाए। राजा नौकरो को डाँटता है। रानी क्या सोचेगी? रोज पूरा तेल भरते हैं दीपक जलाते हैं पर दीपक क्यों जल्दी बुझ जाते हैं किसी को पता नही चलता। एक दिन राजा ने सोच मैं स्वयं देखूंगा।

नकली नींद मे सो गया। खुर्राटे भरने लगा। हमारे शास्त्री जी जैसे खुर्राटे भरते है। रानी ने देखा तो जल्दी से उठी और चप चप कर के तेल पी

गई। राजा ने कहा अरे। यह राजमहल मे इतने सुन्दर २ पदार्थ खाते हुए भी तेल पीती है। यह मनुष्य नही है। गुरु महाराज ने यह बेटी किस से बनाई है। जाकर पता लगाऊँगा। रानी से पूछा चलोगी। बेटी झट से तैयार हो गई। दोनों आ गये। बेटी पिता के घर इधर उधर घूमने लगी। राजा बैठ गये महात्मा के पास। धीरे से पूछा गुरु जी क्या बात है ? महात्मा बोले तुम को तो पहले से ही मना किया था। तु नही माना ले गया मैं क्या करूँ। महात्मा ने झट लड़की को बुलाया। पानी छिडका। पुनः कुतिया बन गई। तो ऐसे ही हैं यह संसार के पदार्थ। मुमुक्षु इन सांसारिक पदार्थो की परीक्षा कर के लेवे। ज्ञान से परीक्षण करो।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२४-४-८८

प्रवचन सं० १६

"ॐ यं यमन्तमभिकामो भवति यं कामं कामयते सोऽस्य सङ्कल्पादेव समुत्तिष्ठति तेन सम्पन्नो महीयते ॥
त इमे सत्याः कामा अनृतापिधानास्तेषां सत्यानां सतामनृतमपिधानं यो यो ह्यस्येतः प्रैति न तमिह दर्शनाय लभते॥"

(छान्दो. ८-२-१०१८-३-१)

मंत्र कहता है यह जो महान ब्रह्म वेत्ता है, आत्मवेत्ता, जो सत्य को समझ जाएँगे कि सत्य यही है तो उस सत्य मे जो इच्छा करेगा पूर्ण हो जाएगी। क्योंकि वह सत्य सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की आत्मा बना हुआ है। यूं समझो जसे बिजली का तार कहीं से भी पकड़ लोगे तो करंट लगेगा। मान लो विजली सारे शहर मे एक ही करंट है। एक जगह से आपने पकडा तो सारे शहर की बिजली को पकडा। सारे शहर का एक हीं स्विच रखा हो तो एक ही स्विच on करने से सारे शहर की बिजली जल जाएगी। और जहाँ switch को बन्द किया, सारे शहर की बिजली बन्द हो जाएगी। इसी प्रकार यह जो ब्रह्मवेत्ता है सारे ब्रह्माण्ड की आत्मा पकड बैठा है। उससे अपने हृदय में समझ लिया है कि ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ है ही नही।

लोग कहते है कि मन बडा चंचल है। यह बाहर नाम रूप की लहरों मे फंस जाएगा। कुछ पकड नही पायेगा। भगवान कृष्ण जैसा वक्ता और अर्जुन जैसा श्रोता। अर्जुन कृष्ण को कितना प्यारा है। श्री मद्भागवत मे उद्धव को ज्ञान दिया और भगवद् गीता से अर्जुन को। और किसी को ज्ञान नहीं दिया। गोपियों के यहां गये खाना दाना लिया और शटक गये। बेचारी गोपियाँ इसी मे संतुष्ट हो गई कि चलो हमारा खा तो लिया कृष्ण ने। यहाँ गीता मे अर्जुन कहता है 'चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्' मेरा मन बडा चंचल है। केवल चंचल ही नही प्रमथनशील भी है। जैसे दही को मथने वाली मथानी की तरह है। दहीं का मंथन किया मक्खन अलग छाछ अलग। इस शरीर रूपी हंडी मे यह मन जब हिलने लगता है तो सारे शरीर की शक्ति को खत्म कर देता है। इस मन को अगर बाहर कहीं रखेंगे तो कहाँ रखेंगे। यह किसी एक नाम रूप वाले पदार्थ मे रहने वाला नही। इसलिए हृदय को श्रेष्ठ स्थान माना गया है। इस मन को हृदय के अन्दर ले आओ। मन जब हृदय में चला गया तो एक स्थान पर पहुंच गया। जब एक स्थान पर मन टिक गया तो इस मे एकाग्रता आ जाएगी। इस के लिए महर्षि पातञ्जलि कहते है 'अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः' मन को रोकने के लिए मुमुक्षु अभ्यास करे। मन मे एकाग्रता लाये और संसार मे व्यवहार करे। वैराग्य को मन मे धारण कर के संसार मे व्यवहार

करे। मोह से व्यवहार नहीं करो।

मोह से व्यवहार करोगे तो व्यवहार बिगडेगा। और मन भी बिगडेगा। ठीक office work समझ कर कार्य करो। जिस office में हम काम करते हैं उस में हम से बडा भी कोई है। जैसे झूठ लोगों की समझ मे आ जाता है ऐसा सत्य क्या समझ में नहीं आएगा। एक झूठ को छिपाने के लिए झूठ की कितनी बडी बाढ लगानी पडती पर सत्य को छिपाने के लिए कोई बाढ नही लगानी पडती उस को तो open रखा गया है। तो जो चीज कई पर्दो के अन्दर छिपी हुई है जब वह लोगों की समझ में आ जाती हैं तो जो open है वह क्या लोगों की समझ में नहीं आएगी। विवेकशील यह नही समझे कि हम सत्य से चलेंगे तो कोई हमारे सत्य को समझेगा नहीं और हम पीछे रह जाएँगे। थोडी देर के लिए आवरण हो सकता है। मान लो थोडी देर के लिए हम रह भी जाएँ किन्तु सत्य तो सत्य ही है।

जैसे अग्नि जलाओ। उस के ऊपर घास फूंस डालो। अग्नि दब जाएगी। थोडी देर तो दबी रहेगी। पर जिस समय अग्नि प्रज्जवलित होगी तो उस घास फूंस का क्या हाल होगा। इसी तरह सत्य अग्नि को भी कोई दबा नहीं सकता। हमारे सत्य को दवाने के लिए कोई मोहावरण भी करेगा। नकली परदा भी करेगा तो सत्य रूपी अग्नि उसी को खत्म कर देगी। और स्वयं ऊपर आ जाएगी। यह ठीक है कि सत्य को पकड़ना थोडा टेढा है, यह भी तप का काम है।

वास्तव में तो हम सब सत्य के ही भक्त है। जिस शरीर को आत्मा ने छोड दिया, क्या हम ने उस शरीर को पकडा ? सब छोड देते है। यह आत्मा ही सत्य है। इस सत्य को पाने के लिए हम सब छोड देते है। हम सब सत्य के पुजारी है। साधन रूप मे हाथ से पवित्र कर्म करो। वाणी से सत्य बोलो। यद्यपि साधन कोई भी अपने स्वरूप में सत्य नही है, किन्तु सत्य जब लक्षित हो जाता है तो साधन खत्म हो जाता है। उस सत्य तक कैसे पहुंचे, और उस सत्य के विना कोई है नहीं। इस लिए यहाँ मंत्र कहता है 'यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येस्य हृदि श्रिताः। अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते' श्रुति कहती है 'अत्र ब्रह्म समश्नुते' अत्र माने अस्यम् अवस्थयाम्' इस अवस्था मे ब्रह्म भात्र को प्राप्त कर

लेगा। किस अवस्था में ? 'यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामाः' कामाः माने नाना प्रकार की वासनाएँ। सत्य को ढकने के लिए यह कामनाएँ आवरण है। जैसे आज कल घरों मे पर्दे लगाते है। बिजली का पंखा चला दिया। बाहर की हवा भी नहीं, बाहर का प्रकाश भी नही। ऐसे ही यहाँ भी यह नाना प्रकार की वासनाएँ क्या हैं ? यह पर्दे है। सत्य इन पर्दो के अन्दर छिप गया है। यदि हृदय की ओर चलोगे तो यह वासनाओं का गैस तुम को बाहर फैंक देगा। जिधर की वासना होगी उधर ही मन चला जाएया। और उस पदार्थ को पकड़ लेगा। इसलिए कहा अभ्यास और वैराग्य धारण करो।

यह संसार के सारे पदार्थ तुम्हारे लिए नही हैं ! मुमुक्षु के लिए कहा कि वैराग्य करो। इन संसार के पदार्थो को प्राप्त करने के लिए हम करोड़ों जन्म भी ले तो भी यह सारे पदार्थ हम को मिल नहीं सकते। जब मिल नहीं सकते तो इन सारे पदार्थों का आनन्द भी हमे कहाँ से मिलेगा। जिस शरीर में ब्रह्मजिज्ञासा होती है, ब्रह्म को जानने की इच्छा होती है वह मोक्ष शरीर होता है। क्योंकि इस आत्मा से परे और कोई सत्य नहीं है। जिस आत्मा से परे कोई सत्य नही उस आत्मा को जानने के लिए हम जा रहे हैं।

राजर्षि जनक की कथा आप लोगों ने सुनी है। राजर्षि जनक विदेह कहलाते थे। 'बिगतो देहो विदेह' इस देह अहंकार से ऊपर उठ गये थे।देहाहंकार से ऊपर उठ गये तुम्हारा कर्तापन समाप्त हो गया। हम को कर्त्तापन का अहंकार छोड देगा। तो भोक्तापन भी छूट जाएगा। जीवन काल मे जब देहाहंकार चला गया तो कर्त्तापन भोक्तापन भी छूट गया। इस को जीवन मुक्ति कहते हैं। अब जो भी हो रहा है सहज भाव से हो रहा है। यही जीवन्मुक्ति है। जैसे छोटे बच्चे को अभी शरीर का अहंकार नही है। दो तीन महीने का बच्चा है। सूक्ष्म ममता तो हो गई है, उस की उंगली पकडो तो खींचता है किन्तु फिर भी इस शरीर का अहंकार नहीं है उस को। न देखने का अहंकार, न सुनने का अहंकार, न बोलने का अहंकार। मां अच्छे साफ सुथरे कपडे पहन कर बैठी है, बच्चे को दूध पिला रही है, इतने से ही उसने अपनी टूटी खोल दी। क्या मां उस को मारेगी। ज्यादा से ज्यादा उस को हटा कर परे कर देगी। पर मारेगीं नही। जिस को ज्ञान ही नही है वह मार नही खाएगा। मार तो वह खाएगा जिसको

ज्ञान है कि मैं यह कर रहा हूँ। इस लिए ज्ञानी के शरीर की जो भी क्रिया होती है वह सहज ही होती है। ऐसा जो तत्त्व ज्ञानी है, जिस का मन निर्विकल्प हो गया है वह ब्राह्मी स्थिति में पहुंच गया है।

ऋषम देव का उदाहरण है। राजा थे, पहले राज्य भी किया। अच्छी प्रकार से किया किन्तु अब छोड दिया ज्ञान भाव में पहुंच गये। शरीर का भी ज्ञान नहीं। कुछ लोग उन के पीछे पड गये। अन्त में उन्होने मुँह में पत्थर रख लिया। जहाँ बैठे है वही मल मूत्र भी हो रहा है। शरीर का भान ही नही है। जगह तो वह खोजता है जिसको शरीर का अहंकार है। ऋषम देव चलते २ कर्नाटक के जंगल मे घुस गये। बांस का विशाल जंगल था। बांस के जंगल में आंधी चलने पर जब बांस आपस मे रगड खाते हैं तो आग प्रगट हो जाती है। उसी अग्नि मे ऋषभ देव भस्म हो गये। कर्नाटक का राजा अरिहन्त था। उस ने समझा यही धर्म है यहीं से जैन धर्म प्रकट हो गया। मंत्र बन गया। 'नमो हरिः अन्तरे'। ऋषभ देव तो विशुद्ध सनातन धर्मी थे। पर उन से यह जैन धर्म प्रकट हो गया।

जनक राजर्षि की परम्परा मे विदेह एक टाइटल (उपाधि) हो गया। एक जनक तो विदेह हो कर हो गये। जनक को एक विचित्र स्वप्न दिखाई दिया। अपने को कंगाल समझता है। दरिद्र समझता है। भूखा समझता है। स्वप्न मे इधर उधर भटकता है। एक अन्न क्षेत्र मे जाता है, वहाँ कहा कि खाना खत्म हो गया। यह बेहोश होकर गिर पडा। थोडी देर मे होश आया। आगे चला खिचडी बनी थी। बर्त्तन पास मे है नहीं। दोनो हाथों मे खिचडी ले ली। जेसे ही खाने लगा कि दो बडे २ सांड लडते हुए आए उन्हों ने जोर से टक्कर मारी। नींद खुल गई। देखा तो महल में पलंग पर सो रहा है। स्वप्न मे भूखा नंगा देखता है। यहाँ अपने को महाराजा बना हुआ देखता है। सोचता है यह सच है कि वह सच है? यह मैं हूं कि वो मैं हूँ? यह मेरा कि वो मेरा? यह सब क्या है? राजा का दिमाग चक्कर खा गया। यह जाग्रत में जो भी ऐश्वर्य है इस का सम्बन्ध स्थूल शरीर से है। सूक्ष्म शरीर से इस का कोई सम्बन्ध नहीं स्वप्न सूक्ष्म शरीर मे हुआ। राज बस यही शब्द बोलता जा रहा है। यह सच कि वह सच। उस धुन मे राजसभा में पहुंच गया। बडे २ ऋषि, तत्त्वज्ञानी

वठ है पर कोई कुछ बोल नही सकता। किसी के बोलने की हिम्मत नहीं है। अष्टावक्र ने देखा कि कोई बोल नही रहा तो वह बोले न यह सच्चा न वो सच्चा। यह सब आरोपित है। जाग्रत का दृश्य भी आरोपित है। स्वप्न का दृश्य भी आरोपित है। तुम दोनों के साक्षी हो। केवल द्रष्टा हो। जाग्रत का अध्यारोप हुआ तो हम जाग्रत के द्रष्टा बने। स्वप्न का अध्यारोप हुआ तो हम स्वप्न के द्रष्टा बने। आचार्य कहते है कि ब्रह्म तो निष्प्रपंच है। उस निष्प्रपञ्च ब्रह्म पर प्रपंच का अध्यारोप है। 'निष्प्रपंचम् प्रपञ्च्यते'।

जैसे उदाहरण के लिए समझो। जाग्रत में स्थूल शरीर का अहंकार चलता है। स्वप्न में सूक्ष्म शरीर का अहंकार चलता है। सुषुप्ति में अविद्या बैठी है। जहाँ पर यह जाग्रत और स्वप्न दोनों हट गये किन्तु कारण शरीर बैठा है। इस अविद्या को हटाने के लिए ब्रह्माकार वृत्ति है। जैसे सूर्य के सामने से बादल हटा तो महान सूर्य आकाश मे भासने लगता है इसी तरह तुम्हारे हृदयाकाश मे यह अविद्या बादल की तरह है। मुमुक्षु ब्रह्माकार वृत्ति के द्वारा इस अविद्या बादल को हटाता है तो सूर्य का भी सूर्य जो तुम्हारी आत्मा है वो उस की पकड मे आ जाती है। 'आत्मैवाऽहमस्मि' मैं जिस को खोज रहा था वही तो मैं हुं' ऐसा निश्चय करो। बुद्धि के सम्बन्ध से जीव बना। बुद्धि से न्यारा ब्रह्म। बुद्धि के सम्बन्ध वाला जो जीव है वह खोज रहा है। अपने बुद्धि से परे वाले स्वरूप को। अपनी खोज अपने ही कर रहा है। जब वहां पहुंचा तो पाया कि 'अयमहमस्मि' 'मै यह हूं'। मैं देहादि संघात नही हूं। मैं इस देह से न्यारा इस का साक्षी हूं।

श्री मद्भागवत में महर्षि व्यास आत्मा के स्वरूप का वर्णन करते है। 'आत्मा नित्योऽव्ययः शुद्ध एकः क्षेत्रज्ञ आश्रयः। अविक्रियः स्वदृग् हेतुर्व्यापको' ऽसङ्ग्व्यनावृतः यह आत्मा नित्य हैं, अव्यय है, शुद्ध हैं। जैसे अपने इस शरीर मे समझो, जहाँ प्राणात्मा ने इस शरीर को छोडा तो हम उस शरीर को छूते नहीं हैं। छूएँगे तो नहाना पड़ेगा। यह बताओ जीवन काल में हम एक दूसरे को छूते हैं तो नहाते हैं क्या? तो शुद्ध कौन निकला? यह जो दीखता है वो कि जो नही दीखता वो? उस ने अपनी चमक से इस को शुद्ध कर दिया। नित्य अव्यय शुद्धः एकः क्षेत्रज्ञः आश्रयः। ऐसी की जो आत्मा है वो 'अविक्रियः' है माने उस मे कोई विकार

नही। शरीर में तो विकृति हैं, विकार है किन्तु आत्मा में कोई विकार नहीं। यह असङ्ग है उस मे कोई सङ्ग नही। विद्वान इन लक्षणों के द्वारा इस आत्मा के स्वरूप को समझे 'अहं ममेत्यसद् भावं देहादौ मोहजं त्यजेत्' अपने इस नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वरूप को समझ कर अहंता और ममता का त्याग करे। मैं' और मेरा सोचो। अनुभव करो। आयु का अच्छा भाग हम लोग खा पी चुके हैं। मान लो इस समय 50 वर्ष का है तो 30 वर्ष पहले का जो शरीर था, उस शरीर के अन्दर हम थे कि नही? कहना पड़ेगा थे। इस समय का 50 वर्ष वाला शरीर तुम्हारा या 30 वर्ष पहले वाला शरीर तुम्हारा? तो कहना होगा दोनों नही। तो हाल क्या हुआ जैसे गधे को पकड़ा, मुट्ठी भर घास खाने को दिया और चल दिए। पीठ पर बोझा लाद दिया और कहा चलो। ऐसे ही यह शरीर का बोझ भी है। कहना पडेगा वो भी हमारा नही और यह भी हमारा नही। मतलब हमारे ऊपर लाद दिया गया है। और हम लोग मेरा २ करते जा रहे हैं। इस लिए मुमुक्षु बडी सावधानी से मन का अपनी आत्मा मे लगावे। वो स्वरूप भी देखने का ही मेरा था और यह भी देखने का ही मेरा हे। जो चीज देखने की होती है वो पकड़ने कीं नहीं होती। 'अहं ममेत्यसद् भावं देहादौ मोहजं त्यजेत्' यह अहंता और ममता असद्भाव हैं। इस लिए इन का त्याग करो।

अष्टावक्र जी राजा जनक को इस सत्य को स्पष्ट करते है कि यह भी तू नही और वो भी तू नहीं। यह भी तेरा नहीं वो भी तेरा नहीं। हे राजन् तू तो इन का साक्षी है। आरोप का अपवाद कर दिया। स्वप्न का अपवाद कर दिया। माने हटा दिया। जाग्रत को हटाया, स्वप्न को हटाया तो जाग्रत का द्रष्टापन का जो भाव था वह भी हट गया। स्वप्न का द्रष्टापन का जो भाव था वो भी हट गया। स्वरूप मात्र रह गये। उपाधि के द्वारा जो भाव आये थे वह उपाधि के हटने पर हट गये। जैसे गवर्नमैंट हम को कोई पद देती है, जब तक हम उस पद पर प्रतिष्ठित है तब तक हमारा वो आफिस है। उस पद से रिटायर होने पर हम सामान्य मनुष्य बन बन गये। फिर तो यदि जस आफिस से कुछ काम भी होगा तो उससे कहना पड़ेगा जो उस पर बैठा है। भाई साहब हम भी इस धर्मशाला में आए थे। यह संसार है। अब तुम हमारा काम करो। विवेकशील घबरावे नही। 'गुणा गुणेषु वर्तन्ते, इति मत्वा न सज्जते' यह गुण

ही आपस में बर्त रहे हैं। 'न सज्जयते न वध्यते' फिर तू बन्धन से बाहर हो जाएगा ।

अष्टावक्र ने जनक को समझाया। मुमुक्षु आत्मभाव में क्यों समाहित नहीं होता। जब सत्य पकड़ मे आया। झूठ को तो हम सब पकड़ते है तब तक अपने को कमजोर समझते है किन्तु जब सत्य का बल आ जाएगा तो झूठ को हम पकड़ ही नहीं पायेगें। झूठ बोलना मुश्किल हो जाएगा। 'अथ मर्त्योऽमृतं भवति' श्रुति कहती है यह नाना प्रकार की वासनाएं जो हृदय मे धर कर के बैठी हुई है, यह वासनाएं जब तुम्हे छोड़ देगी तो मर्त्य अमृत हो जाएगी। यहाँ तुम्हारे अन्दर ब्रह्मभाव आ जाएगा। 'अत्रब्रह्म समश्नुते' यह तुम्हारी ब्राह्मी स्थिति होगी। इस लिए मंत्र इस बात को स्पष्ट करती है 'यं यं कामो ·· ·· महीयते' महान ऐश्वर्य होता है। जैसे इस लोक मे महान सम्राट है, बाह्य ऐश्वर्य को पकड कर बैठा है। इस के द्वारा उसकी शोभा है, उस की प्रतिष्ठा है। सारी प्रजा उस का मान करती है। आदर करती है, जय जय कार करती है। यह ऐश्वर्य है उसका। ऐसे ही यह अध्यात्म ऐश्वर्य है। महान ऐश्वर्य है। इस से बढ कर कोई ऐश्वर्य नहीं। सारी कामनाओं को छोड देगा। मन जब निर्मल हो जाएगा। माने निर्मल भाव में आ जाएगा। उस समय मन सिद्ध हो जाएगा। जो भी कामना करेगा, पूर्ण हो जाएगी। जो इच्छा करेगा वह इच्छा का विषय सामने आ जाएगा।

धन के बल से तुम सारी चीजें नही खरीद सकते। आज कल देखो जरा से मे हार्ट पींडा हो जाती है। तुम धन के बल से इस पीड़ा को दूर नही कर सकते। अगर यह हटने वाली होगी तो अपने आप हटेगी। नही तो तुम इसे हटा नहीं सकते। बल्कि पीड़ा तुम्हें ही हटा देगी। तुम्हारी इच्छा से कुछ होने वाला नही। देखो जरा सी पीड़ा ने तुम को यहाँ से पार कर दिया। मनुष्य इस लोक के पदार्थो से संतुष्ट नही हो सकता। मंत्र है 'सत्यकामः सत्यसङ्कल्प' देखो तुम्हारे अन्दर जो सत्य कामः है, जो ऐसी ऊँची सिद्ध स्थिति है तुम्हारे मन की। तुम जो चाहोगे हो जाएगा। 'यं यमन्तमभिकामो भवति तेन सम्पन्नो महीयते'। जो इच्छा करोगे वह हो जाएगा।

झूठी वासनाएँ तुम्हारे अन्दर भरी पडी है। लोक जीवम की भी बहुत सी कामनाएँ जीव के अन्दर दबीं रहती है मुझे यह मिले यह मिले। यह सारी कामनाएँ सत्य कामना को दबाती है। जेसे सीधा समझो एक बुद्धिमान वकील है। एक झूठ केस है। एक क्लाएंट को बचाने के लिए सब कहेगा। वकील कहता है कि हम तुम को बचा देगे एक लाख रु० मुझे देना पड़ेगा। पर मैं जो कहूँगा वहीं पड़ेगा। कोर्ट में जज जब कुछ पूछे तो केवल मैं कर देना। दूसरा कोई शब्द नही बोलना जज पूछता है तो मैं कर देता है। न्यायधीश ने वकील की ओर देखा। उस ने कहा यह पागल है। पागल है तो बाहर निकालो इस को। कोर्ट से छूट गया। वकील के पास आया तो वही मैं ·· ··· बोलता है। वकील ने पैसे मांगे तो मैं ··· बोलता है। वकील ने कहा मूर्ख यह तो मैं ने तुम्हें केस से बचाने के लिए सिखाया था। कहता है जब मैं ··· कहने से वहाँ से छूट गया तो क्या यहाँ से नही छूटूंगा। वकील मुँह देखता रह गया।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२५-४-८८

प्रवचन सं०-१७

"ॐ त इमे सत्याः कामा अनृतापिधानास्तेषां सत्यानां सताम-नृतमपिधानं यो यो ह्यस्येतः प्रैति न तमिह दर्शनाय लभते।।"

(छान्दो. ८-३-१)

यह मंत्र मुमुक्षु को सावधान करता है। मंत्र कहता है कि बेटा तू सत्य-काम है। तू जो इच्छा करेगा वह पूरी हो जाएगी किन्तु सत्य होने पर भी कहा 'अनृतापिधानं' इस महान सत्य को झूठ ने ढक कर रखा है। इस अनृत हटाओ। अनृत शब्द का अर्थ वेदान्त भाषा में मिथ्या कहते हैं। माया कहो, अनृत कहो, मिथ्या कहो। माया शब्द की आचार्य व्याख्या करते है, 'मा माने निषेधं यत्प्राप्ता सा माया'। मा शब्द का अर्थ है निषेध माने नास्ति नही। स्वकाल मे ही जो निषेध को प्राप्त करे। जिस काल में वस्तु भासती है उसी काल में वह वैसी नही है। इस को माया कहते हैं। इस माया को अनृत शब्द से भी कहते हैं। अनृत माने मिथ्या माने झूठा। जो जैसा दीखता है वैसा होता नहीं। जो जैसा दीखे वो वैसा हो नहीं, यही झूठ है। जैसे इस शरीर को ही देखो। मालूम पडता है यही सच्चा है, यही प्यारा है यही सब कुछ है। हम कितना ही इसको सच मान लें पर वस्तु का स्वभाव बदलता नही। यह जैसा है वैसा रहेगा नहीं। इस लिए इस को माया कहा है।

शास्त्र कहीं इस को माया कहता है, कही अविद्या कही अज्ञान। क्योंकि 'स्वकाले स्वप्रतिषेधं प्राप्नोति' जिस काल में है, उसी काल में निषेध हो रहा है। अविद्या इस लिए कहा कि विद्या आने पर, ज्ञान हो जाने पर अविद्या हट जाती है। ज्ञान आया तो अज्ञान चला गया। इस को तम भी कहा, माने अन्धकार। अन्धकार बस्तु को ठीक से देखने नहीं देता। इसीं का परिणाम यह जगत प्रकृति भी है। आद्य जगद गुरु श्री शंकरा चार्य जिन की द्वादश जन्म शताब्दि हम लोगों ने मनाई। आचार्य कहते हैं - सन्नाप्युसन्नाप्युभयात्मिका नो

भिन्नाप्युभिन्नाप्युभयात्मिका नो।
साङ्गाप्यनङ्गाप्यु भयात्मिका नो
महाद्भुताऽनिर्वचनी यरूपा॥

यह माया क्या है? सत् दीखती है, पर सत् ने, जैसे गुलाब का फूल सत् दीखता है। किन्तु थोडी देर में इस की पंखुड़ी २ बिखर जाएगी तो सत् कैसे बोलोगे? थोड़ी देर में इसकी पंखुडियाँ इस को छोड़ देगी। असत कहोगे? नहीं। क्योंकि प्रत्यक्ष दीखता है। भास रहा है। सुगन्ध दे रहा है। असत् उस वस्तु को कहते हैं जिस का भान ही न हो जैसे खरगोश का सींग और नृसिह। मनुष्य का सींग।

जो कहीं, किसी काल मे न हो वह असत्य, अलीक पदार्थ । जैसे लोक मे प्रसिद्ध है, वंध्यापुत्र । जिस का कभी कोई बच्चा हुआ हीं न हो वह बंध्या । कोई कहे कि बंध्यापुत्र जा रहा है, तो सुन ने वाला क्या कहेगा ? screw ढीला है ।

ऐसे जो अलीक पदार्थ है, जिन पदार्थों का इस जगत मे कोई स्वरूप नहीं है उन पदार्थो को असत् कहते है । माया भगवती और इस का खडा किया हुआ यह बगीचा । यह सत् भी नहीं, असत् भी नही । असत् कहें तो प्रतीति हो रही है । असत् की प्रतीति नहीं होती । सत् कहे तो थोडी देर में नहीं रहेगा । सत् तो वह है जिसका कभी नाश न हो । इस लिए यह सत् भी नहीं असत् भी नहीं । जब दोनो नही तो उभय मान लो । सत् असत् दोनों मिल कर कुछ होगा। आचार्य कहते हैं 'सन्नाप्युसन्नाप्युभयात्मिका नो' माया का यह परिणाम पंचभूत यह माया का परिणाम जव इसको बोलते है तो बहुतों के दिमाग में बुखार आ जाता है । बडीं शंका हो जाती है बुद्धिमान आदमी को कि जब यह सत् भी नहीं असत् भी नहीं तो परिणाम क्या होगा ? उदाहरण के लिए मान लो कोने में रस्सी पडी है किन्तु 'रस्सी' स्वरूप के अज्ञान से सर्प दीखता है । अज्ञान जो था वही सर्पाकार हो कर दीखता है । रस्सी के स्वरूप का अज्ञान ही सर्प वना । सर्प २ चिल्लाया । तेजी से दौडा । गिर पडा । चोट भी आई । इसी को परिणाम कहते हैं । ऐसे ही यह माया भी अब से जगदाकार बन जाती है । संसार के रूप में खड़ी हो जाती है । जैसे माया मिथ्या, झूठ । वैसे ही माया से बना यह जगत भी मिथ्या है । जैसे सोने से बनी चीज सोना ही है, लोहे से बनी वस्तु लोहा ही है, मिट्टी से बना घड़ा मिट्टी ही है ऐसे ही माया से बना संसार माया ही है । यह अपने स्वरूप को छोड़ता नही । इस लिए आचार्य कहते हैं जिस अनृत ने सत्य को दवाया, माने ढका तो सत् नही दीखता । झूठ ही सत् हो कर दीखता है । जैसे यह शरीर तुम्हारी आत्मा को दबा कर बैठा है । समय पर खाना दाना मांगता है, अगर बेटा बेटी बन कर रहना है तो खाना दाना लाओ । बस हम लोग उसी की पूर्ति मे लगे रहते है । पूरा करने मे घोड़े की तरह दौड़ते रहते है । जैसे टांगे मे घोड़ा दौड़ता है । किन्तु पूर्ति फिर भी हो नहीं पाती । जिस के बिना यह एक क्षण भी खडा नही हो सकता उस सत्य की खोज भी नहीं कर पाते । बस भूल भूलैया में ही रह जाते हैं ।

अनृतापिधाना का अर्थ होता है ढक देना ।आचार्य कहते है यह न सत् न असत्, उभय रूपा भी नही । इसलिए एक शब्द से समझा अनिर्वचनीय है । वेदान्त विद्या के बडे आचार्य कहते है 'युक्तिदृष्टयातु अनिर्वचनीया' इसका निर्वचन सम्भव नही । तर्क से जब निश्चय करते है कि यह सत् नहीं असत् नही, उभयात्मिका भी नही तो अनिर्वचनीय है । लोग समझेगे कि इस का निर्वचन कर नही सकोगे । यदि माया की व्याख्या करने की शक्ति नही है तो बडे ज्ञानी गुरु की उपासना करो । जो तुम्हे इस के व्याख्यान निरुक्ति कर के शिक्षा देंगें । कहते है ' मायस्वभावा एव तादृश:' माया का स्वभाव ही ऐसा है कि उस का निर्वचन नही होता । ऐसा नही कि हम उस का निर्वचन कर नही सकते । माया स्वभावत अनिर्वचनीय है । इस अनिर्वचनीयता को बडे २ बौद्ध दार्शनिकों ने भी स्वीकार किया है । ' बुद्धयाविविच्यमान: स्वभावो न उद्यारते, अतोनिरभिलप्यो निष्स्वभावश्च दर्शित:' इस पदार्थो का जैसे २ हम बुद्धि से विचार करते है इनका कोई स्वरूप नही ठहरता । यहपदार्थ स्वभाव से अपना कोई स्वरूप नही रखते । इसलिए इस पदार्थो का निर्वचन नही हो सकता ।

जैसे यह गुलाब का फुल । कल सायंकाल को यह कली के रूप में था तो क्या कली इस का स्वरूप है ? आज सुन्दर खिल गया है तो यह खिला हुआ इस का स्वरूप ? सायंकाल इस की पंखुडी २ बिखर जाएगी , वो इस का स्वरूप ? अपने शरीर को ही देखो, यह भी गुलाब के फूल से कम नही । मां की गोद मे बच्चा गुलाब के फूल कीं तरह सुन्दर होता है । जब बच्चा 25 वर्ष का जवान हो गया तो मां पचास की तो होगी ही । बाहर से आया और मां की गोद मे बैठने लगा, तो मां क्या कहेगी ? क्या यह कोच है । हड्डी टूट जाएगी । जब तू छोटा था तब तो ठीक था । यह बदलता जा रहा है । जब अस्सी वर्ष की मां हो गयी तो बेटा साठ वर्ष का । बुढिया चश्मा लगा कर देखती है । सिर हिलने लगा । क्या देख रही है ? क्या जिस बेटे को मैंने जन्म दिया था, यह वही है ? शरीर से तो वह कहाँ का कहाँ पहुंच गया है, किन्तु अन्दर तो चेतन है, अहंकारी जो बैठा है, उस को कहती है बेटा और अपने को मां कहती है । यह लोक सम्बन्ध देखने मात्र का ही होता है । जन्म देने वाला भी बैठा है, जन्म लेने वाला भी बैठा है तो वह मां बन गई, वह बेटा बन गया । यह लोक जीवन

का सम्बन्ध भी आत्मा को पकड़े बीना नहीं चलेगा तो आध्यात्मिक जीवन की तो वात ही छोड़ो।

अगर इस को सच्चा माना तो इस ने वास्तविक सत् को ढक देना है। सत् कभी दीखेगा ही नहीं। 'अनृतापिधाना' एक जन्म तो क्या करोडों जन्म भी लो तो भी सत् दीखने वाला नही। इस लिए कहा कि विवेकशील अनृत से ऊपर उठे और इस सत् की खोज करे। यह माया जिसकी बात चला रही है यह सत् भी नहीं, असत् भी नही उभयात्मिका भी नही। तो इस को भिन्न कहें ? सत् तो आत्मा है। आत्मा माने ब्रह्म यह माया ब्रह्म की शक्ति है। तो क्या यह शक्ति ब्रह्म से भिन्न है ? भिन्न पदार्थ कहीं और भी रह सकता है। आचार्य कहते हैं यह शक्ति उस से भिन्न भी तो नही। सोने से बना गहना अगर सोने से भिन्न है तो उस को सोने से बाहर कहीं भिन्न रख सकते है कि नहीं ? नहीं तो सोने से बना कंकण सोने से भिन्न नहीं। वह सोना ही है। इसलिए उस को सोने से बाहर नहीं रख सकते। इसी तरह यह माया भी ब्रह्म से भिन्न नही। भिन्न नही तो अभिन्न है ? आचार्य कहते है कि अभिन्न भी नहीं। कोई चीज हो तो उस को भिन्न भी करो। जब कोई चीज ही नहीं तो अभिन्न किस को कहोगे ? अगर चीज कहो तो माया एक चीज बन गई।'एकमेवाऽद्वितीयं नेहनानास्ति किञ्चन मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति'।

'एकम् एव अद्वितीयं' यह एक है और अद्वितीय है। 'न इह नाना अस्ति किंचन' इस ब्रह्म में नाना कुछ भी नही। नाना शब्द का अर्थ है, भेदवद् वस्तु। इस का भेद किसी से नही। मंत्र कहता है, जो इस नाना भाव को नही छोड़ेगा, वह वार २ जन्म लेगा और बार २ मृत्यु को प्राप्त होगा। जैसे यहाँ देखो, शरीर से नाना दीखने वालों की संख्या तो है, पर यह सारे शरीर कहाँ बैठे है ? क्या हाल में बैठे है ? आत्मा में बैठे है। यही कहना पडेगा। जेसे शरीरों का आकार जुदा है ऐसे ही आत्मा भी जुदा है क्या ? आत्मा सब को सत् चाहिए। चित् चाहिए माने चेतन चाहिए और आनन्द स्वरूप चाहिए। एक आत्मा के अन्दर इतने शरीर बैठे हैं। इतने शरीरों के अन्दर गुण कर्म जुदा २ हो सकते है, क्योंकि इन शरीरों के अन्दर मन जुदा २, बुद्धि जुदा २, इन्द्रियाँ जुदा २। इस लिए यह जुदा २ काम तो करेंगे किन्तु सव के अन्दर करंट एक ही है। जैसे विजली के

करंट से कहीं बोलने का यंत्र काम करता है। कही प्रकाश का यंत्र। कही ठंढा करने यंत्र तो कही हवा का यंत्र। किन्तु सब यंत्र एक ही बिजली के करंट से चल रहे हैं। यहाँ नैपाल में तो ठंडी भगवान ने दे रखी है किन्तु वहाँ नीचे देखो क्या पंखे और कूलर चल रहे होंगे। एक ही करंट कितना काम कर रहा है। इसी तरह तुम्हारे अन्दर भी जो आत्मदेव बैठा है, उस का करंट भी कहीं आंख से देख रहा है, कहीं कान मे सुन रहा है, कहीं हाथ को चला रहा है और कहीं नाक को। करंट तो एक ही है सब यंत्रो को चला रहा है। 'एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा। कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः, साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ।।

यहाँ श्रुति चाहती है कि आप वहाँ पहुंच जाओ। जहाँ एक ही देव सम्पूर्ण भूतों में गूढ़ है। गूढ़ शब्द का अर्थ है छिपा हुआ। यहाँ माया से छिपा हुआ है। यह अज्ञान से छिपा हुआ है। कोई भी आएगा, तुम्हारे शरीर से मिल कर चला जाएगा। आत्मा को कोई नही देखेगा। किन्तु मिला किस से? जब शरीर को आत्मा छोड़ देगा तो इस शरीर के पास कौन बैठेगा? कोई भी बैठना नहीं चाहता। तो इस समय जो इस शरीर के पास कोई बैठता है या इस से बात करता है तो क्या समझते हो कि इस शरीर से कर रहा है? जिस के बिना यह शरीर कुछ भी नही वो आत्मा है। किन्तु उस आत्मा को इस शरीर ने दबा रखा है। मैं तुम को बेटा बेटी बनाता रहुँगा तुम मेरा खाना दाना करते रहो। तुम मुझे खाना दाना देते रहो मैं तुम को बेटा बेटी बना कर रखूंगा। तुम हाँ हाँ करते रहो। शरीर को मेरा मेरा कहते रहो। उस तोते की तरह गोपी कृष्ण गोपी कृष्ण बोलते जा रहे हैं। भाई ने तोते को सिखा रखा था गंगाराम गोपी कृष्ण बोलो। तुम भी उसीं की तरह शरीर रूपीं पिंजरे में बन्द हैं। वो भाग्य-शालीं मुमुक्षु है जो इस शरीर में हीं उस तत्त्व की, उस सत्य की खोज करता है।

'भिन्नाप्यभिन्नाप्यु उभयात्मिका नो' यह माया भिन्न भी नहीं, अभिन्न भी नहीं। 'साङ्गाप्यसाङ्गाप्युभयात्मिका नो' हे भगवन माया का कोई स्वरूप तो मानो। साङ्गा माने अंगेन सहिता। जैसे गुलाब का फूल है। इस की प्रत्येक पंखुड़ी इस का अङ्ग है। अगर प्रत्येक पंखुडी निकालते जाओ तो फूल का क्या हाल होगा।

सब अङ्ग मिल कर यह गुलाब का फूल है। अगर यह माया भी ऐसे ही अंगों वालीं होगी तो साकार होगी साङ्ग। इस को साकार भी नहीं कह सकते क्योंकि इस के अंग देखने मात्र के हैं। अनङ्ग कहो तो अनङ्ग भी नहीं कह सकते। अनङ्ग माने अंग रहित, निरवयव। निराकार भीं नहीं कह सकते। क्योंकि इस का परिणाम रूपी जगत खड़ा है तो यह निराकार कैसे है? उभयात्मिका भी नहीं। तो क्या है? महाद्भुता। अनिवर्चनीय। जगद्गुरु शंकराचार्य युक्ति के द्वारा इस माया को अनिर्वचनीय स्वरूप करते हैं। संसार के पदार्थ है इन का निर्वचन नही है। यह निःस्वभाव हैं। इन का कोई स्वभाव नही। कोई स्वरूप नही है।

अपने शरीर पर ही समझ सकते हो। इस शरीर का बचपन में एक स्वरूप था। कुमारावस्था में एक स्वरूप था। जवानी मे एक स्वरूप था। बुढापे का भी एक स्वरूप है। यह बताओ असली स्वरूप कौन सा है? देखते २ इस का बचपन चला गया। कुमारावस्था चली आई। जवानी को समझा कि यह अमर रहेगी किन्तु देखते ही देखते वो भी फिसल गई। जैसे कोई दोस्त कहे कि भाई साहब तुम यहां बैठो मैं अभी आता हूं। उस ने बिठा दिया और सरक गया। ऐसे ही जवानी भी, तुम को सफेद चद्दर उढ़ा दी और स्वयं चली गई। वृद्धावस्था की चद्दर उढा दी तुम को। देखा तो पता चला कि जवानी तो फिसल गई। अब बताओ प्यार किस से करोगे? जो चला गया उस से या जो है इस समय उस से प्यार करोगे? यह सब देखने मात्र है। तुम बच्चे भी नही बने, कुमार भी नही बने और जवान भी नही। यह सब शरीर के आकार हैं। बादल की तरह आए, बरसे और चले गये। इसी लिए कहा 'महाद्भुता' यह महान अद्भुत है, आश्चर्य है। किसी स्वरूप में इस का कथन बनता नहीं, इसलिए आचार्य कहते हैं अनिवर्चनीय ही कहो इसे।

तीन ही प्रकार इस माया के माने जाते हैं

श्रुतिदृष्ट्या तु तुच्छा, युक्तिदृष्ट्या तु अनिर्वचनीया
अनृता लोकदृष्ट्या तु सत्या वास्तवी।

श्रुति की दृष्टि से निश्चय करोगें तो यह माया तुच्छ दीखेगी। युक्ति की दृष्टि से निश्चय करोगे तो अनृत यामे मिथ्या दीखेगी। लोक दृष्टि से देखोगे

तो सत्य मालूम पड़ेगी । लोक दृष्टि माने सामान्य दृष्टि । सामान्य दृष्टि से देखोगे तो यह माया भगवती सत्य मालूल पड़ती है । इस लिए कहा 'अनृताम-पिधाना' । मायिक पदार्थ जो अनृत पदार्थ हैं उन्हों ने इस सत्य को दबा कर रखा है । सत्य को जब दवा कर रखा तो सत्य प्रतीति में नही आता । और झूठ ही दीखता है । जब झूठ के पीछे चलने लगते है तो नाना प्रकार की कामनाएँ, नाना वासनाएं बनती हैं । पर कोई कामना सफल नही होती । क्योंकि कामनाएँ झूठी है । सत्य वस्तु को समझेंगे तभी सत्य काम होंगे । सही तो सत्य काम नही बन सकते ।

एक धनी व्यक्ति श्रद्धाशील भक्त भी था । इस लोक जीवन में सन्तान न हो तो मनुष्य समझता है कि जीवन निरर्थक है । हम आंख बन्द कर के चले जाएँगे तो घर के दरवाजे बन्द हो जाएंगे । कोई दरवाजा खोलने वाला तो चाहिए । सन्त के चरणों में गिर गया कि मुझे पुत्र दो । सन्त ने कह दिया जा हो जाएगा पुत्र । पुत्र हो गया । बडा समारोह किया । संत को भी बुलाया । संत के मित्र भी पहुंचे । दोस्तों में बात चीत होने लगी किस संत ने पुत्र दिया ? वह बोला यह जो साथ साथ में हैं यह तो रोटेड हैं । रोटेड माने रोटियां खाने वाले । संत तो वही है इन्ही के आशीर्वाद से पुत्र हुआ है । बाकी सब तो यों ही हैं । एक ने सुन लिया । उसने कह दिया 'पुत्रो न पुत्री भव' देखा तो वह पुत्री बन गई । रोने लगा । जिन्हों ने पुत्र का वरदान दिया था उस के पास रोया । पूछा क्या हुआ ? गल्ती से ऐसा बोल दिया था अमुक संत ने ऐसे कहा और पुत्र पुत्री बन गया । संत बोले अब उन्हीं के पास जाओ । पश्चात्ताप करो ।

कहने का तात्पर्य यह हैं कि किसी का आशीर्वाद फल जाता है तो हम दूसरे का अपमान कर बैठते हैं क्यों 'अनृतापिधाना' हमारे अन्दर झूठी वासनाएँ बैठी रहती हैं वह झूटी वासनाएँ हमारी प्रवृत्ति को भी बिगाड़ती हैं । कर्म को भी बिगाड़ती । जिस का मन उस सिद्ध आत्मा में पहुंच जाता हैं वह जो कल्पना करेगा वह सिद्ध हो जाएगी । जिस का मन केवल वासना को लेकर ही घूमता रहेगा वह तो एक दूसरा अनृतापिधाना वासना से ही टकराती रहेगी । एक वासना स्थिर तो रहेगी नहीं । कभी कोई वासना आएगी, कभी कोई । इसलिए

वह किसीका मान करेगा किसी का अपमान कर बैठेगा। जिस से उस की वासना पूरी हो जाएगी उसका मान करेगा दूसरे का अपमान। इसलिए बुद्धिमान को यह सोचना चाहिए। जब सत्य की खोज करने चलो तो सत्य से ही मिलो। जो सत्य आत्मा से मिलता है वह सत्य काम होगा। लोक जीवन में चलने वाले जो लोग है उनकी कामनाएँ भी असत् पदार्थों को पकड़ने वाली है। वह इस सत्य में नहीं पहुंचेगें। मान लो इस शरीर में हम किसी के बेटा बेटी है। पति पत्नी हैं। यदि उन में से कोई चला भीं जाता है। उस आत्मा से मिल भी सकता है। जो सत्य काम नही होगा उन के संकल्पों की सिद्धि नहीं होगी।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२६-४-८८

प्रवचन सं०-१८

"ॐ अथ ये चास्येह जीवा ये च प्रेता यच्चान्यदिच्छन्न लभते सर्वं तदत्र गत्वा विन्दतेऽत्र ह्यस्यैते सत्याःकामा अनृतापिधानास्तद्यथापि हिरण्यनिधिं निहितमक्षेत्रज्ञा-उपर्युपरि सञ्चरन्तो न विन्देयुरेवमेवेमाः सर्वाः प्रजा अहरह-र्गच्छन्त्य एतं ब्रह्मलोकं न विन्दन्त्यनृतेन हि प्रत्यूढा ॥"

(छान्दो.८-३-२)

मंत्र कहता है कि यह जो अनृत है भगवती माया, इस माया से वह सत्य छिपा हुआ है। माया भगवतीं ने इस सत्य को छिपा कर रखा है। इसलिए इस सत्य की खोज करे बुद्धिमान। 'अनृतापिधाना' मंत्र कहता है कि अनृत के द्वारा अपिधाना हो गया है। अनृत का अर्थ है देखने में सच्चा और हो झूठा जैसे देखने में यह शरीर ही सच्चा लगता है किन्तु एक दिन हाथ जोड़ देगा, कहेगा भाई साहब तुम आगे जाओ। मुझ को यही रहने दो। यह शरीर अनृत है। माया का कार्य होने से मायामय है। माया को भी झूठा कहते है। भगवान कृष्ण गीता में कहते हैं 'दैवी ह्येषा गुणमयी, मम माया दुरत्यया' भगवान इस माया को देवी कह रहे है। देवी इसलिए कह रहे हैं क्योंक इस का सम्बन्ध देव से है। देव हैं यह चेतन अन्तरात्मा। यह तुम्हारी आत्मा देवों का देव है। सब इन्द्रियों के द्वारा जो ज्योति आ रही है, जो प्रकाश आ रहा हैं वो सब इसी का है। यह देवीं हैं यह गुणमयी। त्रिगुणा माया है। जैसे लोक में तीन धागे लेकर रस्सी बनाते हैं तो कहते हैं यह रस्सी मजबूत है। चाहे हाथी को बांध लो इस से। इसी प्रकार हाथी की तरह शक्ति सम्पन्न जो तुम्हारी आत्मा है और रस्सी की तरह माया की चपेट में आ गई है। अब छूटना कठिन है।

भगवान आगे छूटने का उपाय भी स्वयं ही बता रहे हैं। कहते हैं 'मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते' जो मेरी शरण मे आ जाना है वह माया के बन्धन से छूट जाता है। भगवत् शरणागति। भगवान का अर्थ है सत्-चित् आनन्द स्वरूप चेतन। उस चेतन की शरणागति लेने से यह माया पीछे हट जाती है। नही तो यह माया आगे नही बढने देती। यह माया क्या काम करती है ? इस माया का विशाल क्षेत्र है। यह माया पहले तो आवरण करती है।माया के अन्दर तीन शक्तियाँ हैं राजस, तामस और सात्त्विक। पहले तामस शक्ति आवरण खड़ा कर देगी। आवरण से विक्षेप होगा। जैसे रस्सी है किन्तु जरा सा अंधेरा होने से रस्सी के स्वरूप का मान नही हुआ। तो स्वरूप का आवरण हो गया और भासा क्या ? 'अयं सर्पः' यह सर्प ह। लोक मे विक्षेप कहते हैं क्रोध को, शोक को, चिन्ता को। वास्तव में यह विक्षेप नही विक्षेप के कार्य हैं। वास्तव में विक्षेप कहते हैं जो है वो समझा नहीं और जो समझा वो है नहीं। अन्यथा बुद्धि का नाम विक्षेप है। जैसे है रस्सी समझा सर्प।

जैसे अपने खास मे सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा। इस आत्मा स्वरूप को समझा नही। आवरण हो गया। विक्षेप आ गया। अपने को जीव मानने लगा। 'अयं जीवः अय संसारी'। यह समझने लगा अन्यथा भाव पकड लिया। जब ऐसा जीवभाव बना। तो सत् चित् आनन्द स्वरूप तो आवरण से ढक गया और मैं जीव मैं संसारी ऐसा समझने लगा। किसी बडे भाग्य से मनुष्य योनि मे आ गया। ज्ञान का अधिकार केवल मनुष्य योनि मे है। तब कुछ सुनने का भी अधिकार है, कुछ समझने का भी अधिकार है तथा कुछ करने का भी अधिकार है। जीव तो पशु भी है, परन्तु उस को ज्ञान मे अधिकार नहीं। पशु तो इतना ही है कि मनुष्य के सम्पर्क मे आ गया तो इस ने घास भूसा दे दिया। बदले मे उसके बच्चे के हिस्से का दूध ले लिया। देखा नहीं बछडें को पीछे बांध देते है कि हम ने तेरी मामी को घास खिलाया है बदले मे दूध हम लेंगे। तू छोटा बछडा हम बडे बछडे। इस मनुष्य जन्म मे अधिकार मिलता है कि कुछ सुनो, कुछ समझो, कुछ करो। जब सुनने का अधिकार मिला तो क्या सुनो ? यह जगत क्या है ? मैं क्या हूं ? तो इस मे अविद्याकृत दोष खडे हो जाते है। अविद्या के चार दोष इस के सामने खडे हो जाते हैं। उन दोषों का भाव पशुओं में नही है। वह दोष है अभावना, विपरीत भावना असम्भावना और विप्रतिपत्ति।

अभावना क्या है ? जवान लड़का है। पढा लिखा है। किन्तु उस को कहो कि भगवान को हाथ जोड़ो तो कहेगा भगवान कहाँ है ? काला है कि गोरा है ? कैसा है ? परमात्मा के बारे मे अभावना हो गई। कहते है ईश्वर को मानना भी अफीम का नशा है तुम जो करते हो इस का फल तुम को क्या मिलता है ? यह बुद्धि का दोष है। बुद्धि का दुरुपयोग है। ईश्वर दीखता नही इस लिए ईश्वर है नही। पर सोचो तुम किस को दीखते हो ? यह हड्डी मांस का बैग ही दीखता है। किन्तु तुम कौन हो ? यह किस को दीखाता है। किन्तु जिस दिन तुम इस शरीर मे नहीं रहोगे तो इस शरीर को घर मे कौन रखेगा। कोई कहेगा यह मेरा बेटा है ? बेटी है ? पति है ? पत्नी है ? तुम्हारे बिना इस शरीर की कोई स्थिति नहीं। जैसे तुम नही दीखते हुए भी सब तुम को मान रहे है, खाना दाना दे रहे हैं। यह ब्रह्माण्ड भी तो एक शरीर है। यह उस आत्मा के बिना

कैसे रहेगा ? इस प्रकार तर्क से समझना पडेगा। विपरीतभावना है जो आत्मा नही उस को आत्मा मानना। शरीर के आकार मे आत्मा मानना। यह शरीर आत्मा तो है नहीं। चेतन के करंट मे सौ वर्ष तक भी रहे तो भी अपने स्वरूप मे यह चेतन होने बाला है नही। जैसे लोहा अग्नि मे डाल दो अग्नि के करंट से लोहा अग्नि जैसा दीखेगा। अग्नि की तरह जलाने का काम भी करेगा। किन्तु फिर भीं लोहा लोहा ही है, वह अग्नि तो हो नही सकता। इसी तरह यह चेतन आत्मा के करंट से यह शरीर चेतन आत्मा जैसा तो दीखेगा पर रहेगा जड़ का जड़ ही। पंच भूतों का पुतला ही रहेगा। लोहे का लोहा ही रहेगा। दूसरे पदार्थ तो अच्छे है, लोहा हजार वर्ष तक भी पडा रहे तो कुछ नही पर मनुष्य शरीर 24 घण्टे भीं नही रहेगा। जब चेतन से जुदा होगा तो सड़ जाएगा।

तो सोचों जिस चेतन के करंट में यह सौ वर्ष तक रहता है और जिस के बिना यह चौबीस घण्टे भी नही रह सकता तो यह शरीर अपने स्वरूप मे कैसा है ? इस आत्मा की तरह कोई भी अमर तत्त्व नहीं है। जिस के रहने से यह मुर्दा भी 100 वर्ष तक मुर्दा नही दिखा ऐसा वो भूतनाथ है प्रेतनाथ है। जो विदेशी लोग है वो यह नही समझते वो कहते है कि शिव जी श्मशान घाट में रहता है इस लिए भूतनाथ है। उन को यह पता ही नही कि यह पृथ्वी श्मशान घाट है। अग्नि जल रही है। सूर्य देव सब को पका रहा है। यह पंचभूत ही शरीर के आकार मे आ गये। यह भूत है कि नही। प्राण जो चौबीस घण्टे चल रहे है यह ही प्रेत है भूतों का नाथ और प्रेतनाथ जो अन्दर बैठा है यही शिव है। बुद्धिमान इस शिव रूप आत्मा की ओर ध्यान दे। इस शरीर को तो play ground समझो। ध्यान इस आत्मा मे रखकर इस play ground मे हाकी फुटबाल खेलो। यह शरीर खेलने के लिए मैदान है। अगर player मैदान मे खेलने जाए और वहीं रह जाए तो वहाँ कौन उसको रहने देगा ? यह रहने की जगह नही है। इस शरीर मे कोई रहने नहीं देगा। हम लोग भी यहाँ खेलने आए है। देखो इस शरीर मे बच्चे थे कुमार हो गये। कुमार बने फिर एक लाफा पडा तो जवान हो गये। हाथी की तरह मस्त हो कर चलने लगे। यहाँ नैपाल मे पहले जंगल मे बडे २ हाथी होते थे। फिर एक लाफा पड़ा। तो कहाँ पहुँच गये। सीढियों के नीचे पहुंचा दिया। अब कहता है हाथी पकड़ कर चलो। अब क्यो हाथी

पकड चला ? जब time था तब तो बोला ही नही । तो यह हाल है ।

अन्तरात्मा की कृपा से ही अच्छा है, नही तो यह शरीर कुछ भी नहीं । किन्तु इस शरीर को ही आत्मा मान लिया, यह विभावना है । असम्भावना- शरीर के बल का अहंकार असम्भावना है । मेरे जैसा कौन है ? इस दुनियाँ मे मुण्डे २ मतिर्भिन्न किसी ने कह दिया कि शरीर के बिना कोई आत्मा नही किसी ने कह दिया शरीर ही आत्मा है । किसीं ने कहा यह शरीर आत्मा नही हो सकता । आत्मा तो शरीर से अलग है तो यह संशय मे चला गया कि यह शरीर आत्मा है कि नही इस संशय का नाम है असंभावना दूसरा यह कि ईश्वर है कि नही यह संशय । यह असम्भावना है । इस जगत मे ईश्वर नाम का कोई तत्त्व है कि नही यदि इस शंका मे रह गया तो कुछ कमाई नही कर सकेगा । हाथ को कमाई खाकर खत्म कर देगा । बुद्धि काम नहीं करेगी । असम्भावना में, संशय मे न प्रवृत्ति, न निवृत्ति । संशय जब आदमी को हो जाता है हमारा प्यार भी लंगडा हो जाता है । भित्र को छोड़ भी नहीं सकते और उस को अब प्यार भी नहीं कर सकते । गीता में भगवान कहते है ।

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ।

नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ।।

संशयात्मा को भगवान बडा पापी कहते है । जो तुम्हारा प्रिय बन्धु है, जीवन दे रहा है तुम्हारे लिए । उस मे तुम शंका करने लग जाओ । माता पिता, बेटा बेटी, पति पत्नी यह प्रिय बन्धु है । अगर आपस मे शंका करोगे तो दुःख को बढा लोगे । सुख को कम कर दोगे । इस से संशय से अपने को दूर रखना चाहिए सशयात्मा नहीं बनना चाहिए । यह बडा दोष है ।

'अज्ञश्च' अज्ञ माने अज्ञानी । यह बडा दोष नही है अज्ञानी को कोई समझा लेगा तो ज्ञान हो जाएगा किन्तु संशय बडा दोष है । 'अश्रद्दधानः' श्रद्धा नही है तो किसी के समझा देने पर श्रद्धा भी हो जाएगी पर 'संशयात्मा विनश्यति' संशय सब से बड़ा दोष है यदि जीवन में संशय हो गया यो 'विनश्यति' संशयात्मा के जीवन में कोई रस नहीं रहेगा । कोई समझाएगा तो

जल्दी समझेगा नही । 'नायं लोकोऽस्ति न परो' अपने मे ही देखो बाजार से खाने का सामान लाए । शंका हो गई कि अच्छा है कि बुरा ? कुछ मिला तो नही इस में ? तो कैसे खाओगे । उसका यह लोक भी नही । हम अपने घर मे क्या उत्पन्न कर सकते हैं । शहरों में रहने वाले ज्यादा से ज्यादा कुछ रुपया उत्पन्न कर सकते है काम कर के । पर चीजें तो सारी बाजार से ही लानी पड़ेगी । गेहूँ, चावल, दालें बाजार से ही आएगी । आज का बुद्धिमान परतंत्र हो गया । विज्ञान ने इसे गुलाम बना दिया है । हम अपने खाने के लिए कुछ भी उत्पन्न नही कर सकते । यदि कोई गेहूँ उत्पन्न कर लेता है तो उसे पैसा चाहिए । पर शंका हो गई तो जीवन कैसे चलेगा । शंका तो पग २ पर हो सकती है । बुद्धिमान को इस दोष से बचना चाहिए । 'न सुखं संशयात्नः' ।

चौथा दोष बताया है विप्रतिपत्ति । कोई कहता है जीव ब्रह्म कैसे बन सकता है ? जीव तो जीव ही रहता । दूसरे ने कहा जीव ब्रह्म से जुदा नही है । 'जीवो ब्रह्मैव नापरः' किसी ने कहा जगत सत्य है दूसरे ने कहा 'ब्रह्म सत्यं जगन् मिथ्या' जगत झूठा है । अगर यह सत्य है तो गुलाब का फूल जैसा आज है वैसा ही कल भी रहना चाहिए । पर ऐसा होता नही । कल तो इस की पंखुडी २ अलग हो जाएगी । देख भी रहा है जगत का कोई पदार्थ सच्चा नही फिर भी सत्य मान लेता है । इसलिए यह जगत सच्चा है कि झूठा है, यह भ्रम हो जाता है । विप्रतिपत्ति हो जाती है । अभावना, विपरीत भावना, असम्भावना और विप्रतिपत्ति यह चार दोष अज्ञान के हैं । इन का विचार इसलिए किया जाता है मुमुक्षु इन दोषों से बचे । निर्मल हो जाए । माया जिस को अनिर्वचनीय कहा, यह सत् भी नही असत् भी नही । सत् असत् उभयात्मिका भी नही । माया माने जैसा दीखे वैसा हो नही । जैसे स्वप्न मे नाना प्रकार पदार्थ दीखते हैं किन्तु पकड़ने में कुछ नही आता । ऐसे ही यह जाग्रत के पदार्थ भी हैं । कुछ लोग कहते हैं कि यह संसार दिखाई देता है । इस की सब चीजे सच्ची दीखती है । अगर यह मिथ्या है तो दीखता क्यों है ? यह संसार दिखता है फिर सत्य कैसे नही ? अरे भाई स्वप्न भी तो दीखता है अगर वह सच्चा हो तो निवृत्त क्यों हो जाता है । स्वप्न के पदार्थ जैसे देखते २ गायब हो जाते हैं ऐसे ही यह जाग्रत का जगत भी देखते २ गायब होता जा रहा है । दीखने मात्र से वस्तु सच्ची नही

हो जाती ।

यह माया भगवती ऐसी है महाभारत की कथा है नारद कृष्ण के पास गये । देखा श्री कृष्ण रुक्मिणी के साथ बैठे यज्ञ कर रहे है। नारद ने सोचा अच्छा मौका मिला । रुक्मिणी को प्यारा समझ । उस के साथ यज्ञ करा रहे है और सत्य भामा और दूसरी जो है उन सब को यो ही समझा है । जाकर सत्यभामा से चुगली लगाऊँगा । किसी का स्वभाव होता है चुगली लगाने का । उस का स्वभाव ऐसा ही था । पहुंच गये सत्यभामा के यहाँ । देखा तो कृष्ण वहाँ भी खड़े है । दूसरी के पास गये । कृष्ण वहाँ भी मौजूद है । जैसे देखा कृष्ण ने नमस्कार किया । नारद बोले मैं तो तुम को वहाँ छोड कर आया हूँ । नारद ने सोचा था कि कुछ लगाऊँगा । जिस २ के पास गये वहाँ २ कृष्ज को मौजुद देखा। काम नही बना । भगवान कृष्ण तो अन्तर्यामी थे । बोले हे नारदः-

माया गम पुन्याम् मोहितश्चापि म खिदः ।
सर्वभूतगुणे युंक्तं नैव माम् ज्ञातुमर्हसि ।।

यह माया की पुरी है । इस मे तुम खेद मत करो । तुम कहोगे कि जहाँ भी मैं गया वहा कृष्ण तो पहले ही खडा है । 'सर्वभूतगुणें युंक्तं णैव माम् ज्ञातुमर्हसि' समझा रहे हैं कि यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मेरी माया की पुरी है । यह पंचभूतों का बाजार है । कोई यह कहे कि इस ब्रह्माण्ड मे हम विराट पुरुष को पकड़ लें, तो यह सम्भव नही यह तुम्हारी पकड़ से बाहर है । गुरु तुम को बाहर ध्यान करने को कभी नही कहेगें । अन्दर ही ध्यान करने को कहेंगे । हृदय मे ध्यान करो । सर्व भूतों से युक्त उस परमात्मा से यह जीव मिल नहीं सकता ।

कैसे मिलेगा ? अगर आँख से चलोगे, यह आंख तो रूप मे रह जायेगी । आंख का रोड रूप नगर तक ही जाता है । भगवान के किस रूप को पकडोगे ? यदि गन्ध को लेकर चलोगे तो घ्राणेन्द्रिय गन्ध मे ही रह जाएगी । शब्द को लेकर चलोगे तो श्रवणेन्द्रिय शब्द पकड़ कर ही रह गई । आगे नही जाएगी । जीभ को लेकर चले तो रसनेन्द्रिय स्वाद मे ही रह गई । त्वगेन्द्रिय स्पर्श तक ही जाएगी । तो कौन सी इन्द्रिय इस विराट को पकड़ पाएगी । तुम कहो कि मन से पकड़ेंगे, तो कहते हैं कि यह मन भी बाहर के पदार्थो को पकड़ता है । परतंत्र हि

वहिर्मनः । बाहर के पदार्थों को पकड़ने मे भी यह मन परतंत्र है । इन्द्रियों के सहारे से ही यह बाहर के पदार्थों को पकड़ता है । बिना इन्द्रियों के यह मन बाहर नही जाता अन्दर ही अन्दर मदारी के बन्दर की तरह नाचता रहता है । चिन्ता शोक भय के बाजार मे घूमता है । इसलिए कह रहे हैं 'सर्वभूतगुणे र्युक्तं' । इन्द्रियों के बल से ही इस विराट से क्या मिलोगे ? शरीर से ही कल्पना करो मन मे । कोई छः फुट का जवान पिता खड़ा है । बच्चा छोटा है मान लो पकड़ कर खड़ा भी हो गया । डेढ फुट का बच्चा जांघ पकड़ लेगा किन्तु पिता के सारे शरीर को नही छु सकता । इसी तरह यह जीव विराट के शरीर को पकड़ कर उससे प्रवेश नही कर सकता । इसलिए हृदय मे ही जाना पडेगा । 'एषोऽन्त हृर्दयाकाश' । यह छान्दोग्य के आठवे अध्याय में दहर विद्या का वर्णन है । इस का नाम दहरोपासना है अपने हृदयाकाश में ब्रह्मभाव को प्रकट करो । हृदयाकाश मे उस ब्रह्म को पकड़ने की कोशिश करो । नही तो आगे जा नहीं सकते । मंत्र कहता है 'सत्य अनृतापिधान' जो तुम्हारे प्रिय बन्धु इस लोक में है या कुछ यहाँ से चले गये है, यह जीव कभी २ उन से मिलने की इच्छा करता है । जो सत्य काम हो गये है , जिन क, मन सत्‌चित् आनन्द स्वरूप आत्मा मे स्थिर हो गया है । वह अगर अपने प्रिय बन्धुओं से मिलने की इच्छा भी करता है तो वे उसको मिल जाएंगे । क्योंकि सत् से मिल कर उस का संकल्प सत् हो गया है । वह जो भी संकल्प करेगा वही उस के सामने खड़ा हो जाएगा । पति की इच्छा करे तो पति, पत्नी की इच्छा करे तो पत्नी । पुत्र की इच्छा करे तो पुत्र अर्थात् वह जिस २ की इच्छा करेगा वह उन को मिल जाएगा । मंत्र कह रहा है 'सर्वं तदत्र गत्वा विन्दतेऽत्र ह्यस्येते सत्याःकामा' वह सत्य काम है । सत्य संकल्प है । आत्म वेत्ता है । हृदय मे प्रवेश कर जाएगा । तो वहाँ जो २ कामना करेगा उस के अनुसार वह पदार्थ उस को मिल जाएगा । उस की कामनाएँ उस के हृदय मे साकार हो कर , मूर्त्त रूप धारण कर के खड़ी हो जाती हैं ।

जैसे कोई देवता की उपासना करता है तो उस की उपासना जब पूर्णता की ओर आगे बढती हे तो वह देवता उस के सामने मूर्त्त रूप मे खड़ा हो जाता है और कहता है 'वरं ब्रूहि' वर मांगो । यद्यपि उस ने किसी की इच्छा नही की थी । केवल एक मात्र आत्मा के ध्यान मे हीं मग्न था । साधना का परिणाम है ।

ध्यान में पहुंचने से इस मे इतनी शक्ति आ जाती है, और इन शक्तियों से वह जो चाहे कर सकता है। किन्तु कहा 'अनृतापिधाना' यह जो झूठी माया है, अपिधान माने अच्छादन करने वाली है। जैसे रस्सी का अज्ञान होने से रस्सी का असली रूप ढक गया। जब तक अज्ञान बैठा है नब तक रस्सी का सर्प ही भासता रहेगा। ज्ञान होने से ही सर्प हटेगा। डंडे से नही हटने वाला है। गोली से भी नही मरेगा। अज्ञान से जो उत्पन्न हुआ, वह ज्ञान से ही मरेगा। नहीं तो नही हटेगा। यह जो अज्ञान है, जिस को अविद्या कहते है। जिसको माया भी कहते है, यह भाव रूप है।

अज्ञानं भावरुपं यद् विज्ञानेन विलीयते ।
तदाज्ञानिति प्राहुर्प्राज्ञा वेदान्तवेदिनाः ।।

जैसे सुख और दुःख। जिस समय दुःख होगा, उस समय सुख तो नही होगा। तो दुःख क्या भाव रूप है या अभाव रूप है ? सुख का अभाव दुःख नही है। दोनो जुदा २ पदार्थ है। दुःख असली पदार्थ है। ऐसे हीं अज्ञान जुदा और ज्ञान जुदा। अज्ञान ज्ञान का अभाव नही है। अज्ञान को यदि ज्ञान का अभाव मानो तो अभाव से कुछ उत्पन्न होता नहीं। अज्ञान किसीं का कारण बनता नही अतःज्ञान स्वतंत्र पदार्थ है और ज्ञान स्वतंत्र पदार्थहै। प्राचीन जो दार्शनिक वेदान्ती है वे ऐसा मानते है। गीता मे भी कहा है 'अज्ञानेनावृतं ज्ञानं' इस आत्मा को अज्ञान, अविद्या माया ने ढक दिया है 'अनृतापिधाना' सत्य को ढकता है।

कल इसी प्रसंग को आगे समझाएँगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२७-४-८८

प्रवचन सं०-१९

"ॐ स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरुक्तं हृदयमिति तस्माद्धृदयमहरहर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति ।।"

(छान्दो.८-३-३)

श्रुति भगवती कह रही है कि जो सत्य काम है, सत्य संकल्प है, उनके संकल्पों के अनुरूप उन को फल नहीं मिल रहा, इस का कारण क्या है ? उस के लिए कहा 'अनृतापिधाना' । यह माया भगवती और इसके द्वारा जो कल्पित विकार है , उन विकारों के द्वारा यह सत्य ढका हुआ है । उस सत्य तक पहुँच नही रहे । जब तक उस सत्य तक नही पहुँचोगे तो तुम को कुछ नहीं मिलेगा । तुम अगर इच्छा भी करोगे तो भी तुम्हें वह नही मिलेगा । तेरी जो इच्छा होगी वह झूठी ही होगी । जीवन मे समझो हम लोग कितनी इच्छाएँ करते हैं किन्तु हमारे मन की बहुत कम इच्छाएँ पूरी होंती हैं । बाकी की इच्छाएँ तो आई और गई । अपूर्ण ही रहती हैं इस लिए कहते है 'ऋषीणांम पुनराद्यानामर्थोवाचम-नुधावति' आद्य ऋषि, सिद्ध ऋषि जैसी इच्छा करेंगे अर्थ वैसा ही बन जाएगा । जैंसी उन की वाणी निकलेगी अर्थ वैसा ही बन जाएगा । उन को अर्थ के अनुसार इच्छा करने कीं जरुरत नही जिस का हृदय सिद्ध नही हुआ । हृदय माने हृदयस्थ मन माने हृदय में रहने वाला मन । जिस का यह मन सिद्ध नही हुआ । जिसके तप से, जिसके ध्यान से मन मे सिद्धि नही आई । मन वहीं का वही है उन को अर्थ के अनुसार वाणी बोलनी पड़ती है । अर्थ कुछ और वाणी कुछ बोलेगे तो

mad कहे जाएंगे । यदि अर्थ के अनुसार बाणी बोलेगे तो कहते हैं इस का दिमाग ठीक है । स्वस्थ है ।

सिद्ध पुरुष जो सिद्ध हृदय के है उन की वाणी के अनुरूप अर्थ के एटम बदल जाते है । अर्थ उस शक्ल का हो जाएगा । इस मे कोई शंका नही । उस लिए कहा 'अनृतापिधाना' उस का हृदय माया से ढका हुआ है यह झूठी जो माया हृदय के अन्दर प्रवेश करने के दो तरीके हैं । एक तो प्रकृति के नियम से निद्रा मे हम लोग हृदय मे जाते हैं । इस के लिए मंत्र कहता है 'यथा हिरण्यनिधि निहितं क्षेत्रज्ञा उपर्युपरि सञ्चरन्तो न विन्देय' यह श्रुति बडी रहस्य पूर्ण है । बेटा यह सारी प्रजाएं रोज ब्रह्म लोक जाती है । मंत्र पृथ्वी को हिरण्यनिधि कह रहा है आज बडे २ वैज्ञानिक भूमि में कैसी २ खोज कर रहे हैं । कहां स्वर्ण है ? कहां चांदी है ? कहां लोहा है ? कहां तेल है ? जैसे चतुर बच्चा मां का स्तन चूसता है । दूध पीने वाला बच्चा बडा चतुर है । कैसे खींच २ कर दूध पीता है । इसी तरह यह वैज्ञानिक भी, जो बच्चे हैं । कैसे धरती मां की तसली २ खोज रहे है । निचोड रहे है । यही speed चालू रही तो पचास वर्ष वाद इस का क्या हाल होगा ? यह तो बाद मे आने वाले लोग ही जानेगे । दस बीस हजार फुट की बल्कि मीटर की गहराई मे जाकर तेल निकाल रहे है । समुद्र को भी नही छोड रहे है । बरमे लगा कर उस मे अन्दर घुस रहे है । जैसे हमारे शरीर का बल है । इस मे कई प्रकार के धातु है । बुद्धिमान डाक्टर यदि सूई लगा कर उस बल को खींच ले तो शरीर का क्या हाल होगी ? इस मे क्या बचेगा ? शरीर मुर्दा हो जाएगा ।

इस पृथ्वी को मुर्दा नही समझो । यह भी सजीव पिंड है । यह मुर्दा नही है । आत्मावाला है । 'धर्मजिज्ञासा मानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः' जिस को सही सही जानने की इच्छा हो वो श्रुति प्रमाण को पकडे । बृहदारण्यक श्रुति है 'यः पृथिव्यां तिष्ठन् पृथिव्या अन्तरो यं पृथ्वी न वेद यस्य पृथ्वी शरीरं यं पृथ्वीमन्तरो यमयत्येष स आत्मान्तर्याम्यमृतः' जिस को पृथ्वी नही जानती । पृथ्वी जिस का शरीर बना हुआ है । इस के लिए बडा दृष्टान्त है यह शरीर । जन्म से अब तक जिस में बैठा है, इस से पूछो कि तेरे लिए हम सब कुछ करते

है । क्या तू हम को जानता है ? तो यह कहेगा कि तुम हमको जानते हो तो हम को खाना दाना मिल रहा है और जिस दिन तुम हम को जानना बन्द कर दोगे उस दिन कोई हम को खाने को देगा ? जैसे यह शरीर जिस को हम इतना प्यार करते है पर यह हम को नही जानेगा । अपने को अपने ही जानना पड़ेगा ।

परमात्मा पृथ्वी शरीर धारण कर के हम लोगों के खाने दाने की व्यवस्था कर रहा है । हम सावधानी से इस मे से कुछ लें, यह कोई कल्पना नही। विचार करने की जरूरत है । यह फल फूल, पेड़ पौधे, फ्रूट अन्न, यह सब क्या है ? 'उस के' रहने से यह सब मिल रहा है । यदि वह इस को छोड देगा तो मुर्दा पृथ्वी कुछ भी नहीं देगी । तो पृथ्वी सजीव पिंड हुआ कि नही । किसी जीते जी आदमी को, किसी गरीब को रुपये का लालच देकर किसीं विद्वान डाक्टर के पास experiment के लिए ले जाओ । वह उस को चारो ओर से खींचने लगे, उस का रस निकालने लगे तो क्या हाल होगा उस का ? आत्मा तो है अभी अन्दर । पैसा तो मिलेगा परन्तु वह उस को खा नही पायेगा । मर जाएगा । निस्सार शरीर जब हो जाएगा तो यह आत्मा इस को छोड देगी । पृथ्वी विस्सार हो गई तो यह ब्रह्माडात्मा इस को छोड देगी, उस समय सोचो स्थिति क्या होगी ? इस लिए आज के वैज्ञानिक को थोड़ा होश मे भी आने की जरूरत है बच्चा मां को तभी प्यारा है जब ढंग से दूध पीयेगा । यदि दूध के साथ खून भी चूसने लगे तो कौन मां उस को दूध पिलाएगी । जानते होंगें पूतना का कृष्ण ने प्राण ही खींच लिया था ।

यही इस श्रुति का महत्त्व है 'यथा हिरण्यनिधिं निहितमक्षेत्रज्ञा उपर्यु-परि सञ्चरन्तो न विन्देयुरेवमेवेमा:' पृथ्वी के अन्दर स्वर्ण भरा पडा है । हिरण्य–निधि माने स्वर्ण निधि । जिस को भू गर्भ का ज्ञान तो है नही । वह ऊपर से हीं घूम कर चला जाएगा । केवल मिट्टी पत्थर देख कर ही ऊपर घूमेंगे । अन्दर क्या तत्त्व है, उन को कुछ पता नही चलेगा कि उस के अन्दर कितना स्वर्ण है । क्यो कि यह दो आंख से देख कर चल रहा है पशु भी दो आंख से देख कर चल रहा है । पक्षी भी दो ही आंख से देखता है । यह मनुष्य भी यदि दो ही आंख से देखेगा तो इस की नजर कितनी बडी ? पशु जितनी । त्रिनेत्र किस को कहते है ?

त्रिनेत्र शिव का ही नाम है सब जीव दो ही आंख से देख कर चलते है 'और अपना भोग भोगते है । शिव का भोग योग से बंधा हुआ है । इसी लिए त्रिनेत्र शिव ही हैं । और किसी देवता को त्रिनेत्र नहीं कहा । और लोगों का भोग कर्म से बंधा है । योग से बंधा नही । हम लोग इस शरीर मे कब तक जीएंगे ? जब तक कर्म है । यदि हम भी योग मे बन्ध जाएँ तो इच्छा मृत्यु पा सकते है । भीष्म पितामह का नाम तो हम सब ने सुना है । महाभारत का विलक्षण युद्ध हुआ था जिस मे हमारे देश की संस्कृति, बडा विज्ञान नष्ट हो गया था उस कुरुक्षेत्र के मैदान शय्या पर लेट गया । उस समय सूर्य दक्षिणायन था । युद्ध तो 18 दिन मे खत्म हो गया था किन्तु कहते है प्राण छोडेंगे उत्तरायण में । सोचो कितना कन्ट्रोल है मन मे, कितना योगाभ्यास है । राज कुमार थे । पितामह थे । महल मे रहते थे। इतना सब होते हुए भी प्राण पर कंट्रोल था। अभी नही छोडेंगे प्राण शरीर छोडेंगे उत्तरायण मे । द्रौपदी दर्शन करने गई । उस को उपदेश करने लगे । द्रौपदी ने प्रश्न किया । बडी सुन्दर बुद्धि है आपकी इस समय । उपदेश कर रहे है आप । कौरवों की सभा मे जब आप सब बैठे थे । दुशासन मेरी साडी खींच रहा । उस समय यह बुद्धि कहाँ गई थी आप की ? उस समय कुछ उपदेश करते। वह सत्य वाणी बोलते हैं ।

'अर्थस्य पुरुषो दासः दासस्य अर्थो न कस्यचित्' हे द्रौपदी 'अर्थस्य पुरुषोदास' लोक जीवन का जो अर्थ है मनुष्य उस का दास है । यह अर्थ किसी का दास नही है । कितना ही आदमी कमाता है उस का कमाया हुआ धन यहीं रह जाता है । ठीक है उसने अपनी कमाई का अच्छा उपयोग किया । किन्तु यहाँ का धन यही रह जाएगा ? परलोक मे पुण्य ही जाएगा । जैसे किसी देश मे जाकर धन कमाओ । बडे सुन्दर बंगले बनाओ । सुन्दर ढंग से रहो किन्तु वहाँ की सरकार बिगड़ जाती है तो कहेगी कि तुम यहाँ से कुछ ले जा नही सकते । इस प्रकृति के साम्राज्य का भी यही हाल है । जन्में तो नंगे आये थे । बीच मे दौड़ धूप किया , कमाया, ठाठ से रहने लगे । जब उस ने कहा get out तब, नंगे हो कर जाओ । 'दासस्य अर्थस्तु न कस्यचित्' कुछ लेकर नहीं जा सकते । भीष्म कहते है 'इति सत्यं' 'बद्धोस्मि अर्थेन कौरव' द्रौपदी यह सत्य है कौरवों ने मुझे अर्थ से बांधा हुआ था।मैं उन की रोटी खाता था। अब इस युद्ध मे अर्जुन के बाणों

से मेरा वह खून निकल गया है। मेरा मन निर्मल हो गया है। द्रौपदी चुप हो गई। यह लोक धन ऐसा ही है।

संयम बरतो। बाजार मे सारीं चीजे तुम्हारे लिए ही नहीं है। तो दो आंखों से देखने वाले मनुष्य पशु, पक्षी, देव सब पशु ही है। तीसरे नेत्र से देखने वाला जो होता है वह शिव है। अनुभव से समझो। वैज्ञानिक पृथ्वी पर चलता है तो मिट्टी पत्थर देख कर खोज लेता है कि इतनी गहराई पर यह धातु है। इतनी गहराई पर स्वर्ण है। यह बताओ यह उस ने कौन सीं आंख से देखा? तीसरे नेत्र से देखा बुद्धि रूपी नेत्र से। इसलिए वैज्ञानिक भी, विद्वान को भी त्रिनेत्र कहते है। तीसरा नेत्र प्रज्ञा नेत्र है। इस तीसरे नेत्र से जगत को देखो। दो नेत्र से देखना पशु भूमि है। इस जगत मे शोक होता है, मोह होता है, नाना विकार आते हैं। क्योंकि इस जगत का असली स्वरूप देखने मे नहीं आता। जगत का असली स्वरूप अगर दीख जाएगा तो शोक। मोह नही होगा। जैसे उदाहरण के लिए समझो। कोई व्यक्ति वडे अच्छे कपड़े पहन कर सोया है। जिसने उसको मुर्दा समझ लिया उस को कोई शोक मोह नही होगा। जिस ने नही जाना उस को उस के कपडों में लोभ हो जाएगा। मोह हो जाएगा। सही वस्तु दीख जाएगी तो मन निश्चिन्त रहेगा। जब तक यथार्थ वस्तु नही दीखेगी मन मे विकार आता रहेगा।

वैज्ञानिक जानता है कि पृथ्वी के अन्दर क्या रहस्य है। वह अपने नेत्र से इस रहस्य को जान जाता है। इसी प्रकार ज्ञानवान इस जगत को तीसरे नेत्र से देखता है। जब तीसरे नेत्र से देखा तो क्या दीखा? नाम और रूप। जैसे यह गुलाब फूल है। यह स्वयं जी रहा है कि किसी का जीवन इस को मिला हुआ है? कहना पडेगा कि इस का जीवन रसात्मा है। इस की पंखुडियों में, इस के आकार में इस की सुन्दरता में जो कुछ भी है, पानी ही है। पानी निचोड दिया जाय तो क्या है? इस की सुन्दरता इस रस से ही है किन्तु इस को आंख से नहीं देख सकते। तो बुद्धिमान नाम रूप को मिथ्या समझेगा। रसात्मा को ही सत् समझेगा। मिथ्या का अर्थ है, भासता तो है पर पकड़ने जाएँ तो हाथ कुछ भी नही आता। बचपन कितना सुन्दर होता है। अपने शरीर मे समझो देखते २

बचपन उड गया, कुमारावस्था चली गई जवान अवस्था निकल गई । अब क्या हो गया ? अपने शरीर से उत्पन्न होने वाले बेटा बेटी कहदे हैं कि मां उस कोने मे बैठ जाओ । अब सोचो किसी को बास बैठना भी पसन्द नही । जो था वो गया कि जो नही था वो गया ? जो था नहीं, केवल भासता था, वो गया । मिथ्या का मतलब कुछ नहीं, ऐसा नहीं है । जैसा है वैसा रहेगा नहीं । इस लिए वेदान्त भाषा मे यह मिथ्या है । बहुत से लोग समझते नही कहते है महाराजा खाते जाते है और कहते हैं मिथ्या है । पंचभूतों का पुतला है पंचभूतों का भोजन तो लेगा ही । उस ने उस को साफ कर दिया इस को भी साफ कर दिया । यह सब प्रतीति मात्र है । जिस को यह प्रतीति हो रही, उस आत्मा में मन को दो ? कैसे दृष्टान्त । जैसे रात को खा पीकर बिस्तर मे लेट गया । सुषुप्ति में जाने से पहले आंख को बन्द किया । फिर इन्द्रियों को मन के करंट से हटाया । इन्द्रियों के सम्बन्ध से शरीर को एक दम ढीला छोड दिया तब निद्रा आती है ।

निद्रा क्या ? माने मन हृदय मे प्रवेश कर गया 'सर्वा: प्रजा अहरहर्गच्छन्त्य एतं ब्रह्म लोकं न विन्दन्त्यनृतेन हि प्रत्यूढा' यह सारी प्रजाएँ रोज ब्रह्म लोक में जाती है । पर इस ब्रह्म लोक को समझती नहीं है । कैसा महत्त्वपूर्ण है मान लो एक महाराजा ने अन्डर ग्राऊन्ड under ground office बनाया है । किसी अपराधी को हाथ पांव बांध कर आंख बन्द कर के वहाँ ले गये । पुलिस तो रास्ता जानती है । जहां महाराजा बैठे हैं वहां जाकर आंख की पट्टी खोल दी। तो वह अपराधी वहां का सारा ऐश्वर्य देखेगा कि नही ? महाराजा को भी देखेगा । राजा ने दण्ड भी सुना दिया बारह घंटे खड़ा रहने की सजा दे दी । फिर आंख पर पट्टी बांध कर बाहर ले आए । यह बताओ उसको रास्ते का तो कुछ पता नहीं चला किन्तु वहां का आनन्द तो मिला ही । यह जीव है, यह रोज ब्रह्म लोक मे जाता है किन्तु आंखो पर अविद्या की पट्टी बंधी हुई है । उदाहरण है जैसे हम शीशा देखते हैं । हमारे मुख का प्रतिबिम्ब कहां है ? शीशे में । शीशा हटा दिया तो प्रतिबिम्ब कहां गया ? बिम्ब में ।

यह मन बडा सुन्दर दर्पण हैं । कूटस्थ साक्षी आत्मा है । ब्रह्म का आभास इस मन मे आ रहा है । आभास युक्त मन जींव है । आधार तो वही

बना हुआ है । आभास युक्त मन सामान्य अहंकार में बंधा हुआ है । जाग्रत में इस मन में रजोगुण आया, सतोगुण आया । थोड़ी देर के लिए शान्त हो गया । आनन्द का अनुभव किया जीवन में याद रखो, शान्ति मालूम हो, सुख हो तो सत्त्व गुण समझो । चिन्ता भय मालूम पडे तो समझो रजोगुण आया है । जब आलस्य हो, प्रमाद हो तब तमोगुण है । यह जो मन है जाग्रत मे यह सामने रहता है । आभास कूटस्थ आत्मा का आया हुआ है । रजोगुण तमोगुण आदि के विकार चिन्ता शोक भय आते हैं। निद्रा ने मन हट कर अपनी मम्मी की गोद मे चला जाता है । मम्मी कौन ? अविद्या में लीन हो गया । आभास कूटस्थ साक्षी मे मिल गया । ब्रह्म लोक पहुंच गया । पर समझा कुछ नही । अज्ञान मे गया अज्ञान में आया । जैसे उस कैदी को पट्टी बांध कर ले गये महाराजाधिराज के पास । वहां का जो विलक्षण आनन्द है वो तो मिला किन्तु समझा कुछ नहीं । ऐसे ही सुषुप्ति में जो महान आनन्द मिलता है जाग्रत मे किसीं विषय में ऐसा आनन्द नही मिलता ।

जाग्रत मे तुम को सुखी करने के लिए रूप रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श पांच विषयों का बगीचा बना कर रखा है । फिर भी चिन्ता, फिर भी दुःख । सुखी नही । किन्तु सुषुप्ति अवस्था में वहां कौन सा विषय है ? न रूप है । न रस है । न शब्द है । न गन्ध है । न स्पर्श है । कोई भीं विषय नहीं है वहां । न मेरा है न तेरा है । फिर भी आनन्द में क्या कमी है ? यह सुषुप्ति का आनन्द अगर तुम को नही मिलेगा तो जीवन नीरस हो जाएगा । जीवन में निराश हो जाओगे । किसी २ को निद्रा छोड़ देती है । डाक्टर की गोलियों पर जीते हैं । जैसे मान लो पुराने जमाने की मां हो । चार पांच बच्चे हों । नैपाल जैसा देश देश हो । ठंडी का मौसम हो । बडी रजाई वनाई । उस मे एक बेटा इधर से घुस गया । एक बेटा उधर से घुस गया । चार पांच एक ही रजाई में घुस गये । उस में एक छोकरा तूफानी था वह रात को रजाई के अन्दर लातें चलाता हैं । मां उस को रजाई से बाहर निकाल देती है । क्यों ? उस के मरे सारे बच्चे दुःखी हो जाते हैं । उत्पाती बच्चे को मां छोड़ देती है । ऐसे ही कुछ तूफानी बच्चों को निद्रा मां भी छोड़ देती है । डाक्टर को हाथ जोड़ता है गोलियाँ खाता है

व्यवहार काल मे शान्ति से कर्म मे जाओ ! शान्त हो कर कर्म करो।सब कुछ तुम्ही ने नही करना है । सब कुछ तुम्हीं को नहीं मिलना है । तुम को तुम्हारे हिसाब से मिलेगा । प्रत्येक चीज कोटे से आ रही हैं । तुम कितना ही दौड़ कर जाओ पर मिलेगा कोटे से ही । राशन कार्ड बना हुआ है सब का । ठीक है, हम नहीं जानते कि हमारा कितना कोटा है किन्तु जानने वाला तो जानता है । 'एतं ब्रह्म लोकं न विन्दन्त्यनृतेन हि प्रत्यूढा:' ।

यह जीव रोज ब्रह्म लोक में जाता है पर जानता नहीं । अज्ञान से बंधा हुआ है । मिथ्या अज्ञान से पकडे हुए हैं । जो अज्ञान से पकडा हुआ है 'न विन्दन्त्य' उस के हाथ में भी चीज होगी तो वह नहीं समझेगा उदाहरण के लिए उत्तम कोटि का हीरा है । हमारे हाथ में हीरा रख दिया किसी ने । आंख देखेगी पर यह कितना कीमती हे ? हम कहां समझेंगे । चमकीला है, सुन्दर है कहा है 'पश्यन्नपि न च पश्यति मूढ:' देखते हुए भी हम नही देखते । मुह्यति माने मूढ । यह मूढ है केवल विषय के आकार को देखा और मोहित हो गये । इस प्रकार यह देखता हुआ भी नही देखेगा ।

ज्ञान से हृदय मे जाओगे तो ब्रह्म का बोध होगा । यह अनुभव कैसे होगा ? इस सत्य को कल के लिए छोड दें तो ज्यादा अच्छा होगा । अब सीधे होकर बैठो और हृदय में ध्यान करो ।

हरि: ॐ तत्सत्

ॐ

२८-४-८८

प्रवचन सं०-२०

"ॐ स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरुक्तं हृदयमिति तस्माद्धृदयमहरहर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति ।। ॐ अथ य एष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात्समुत्थाय परं ज्योतिरुप सम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यत एष आत्मेति होवाचैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति ।।"

(छान्दो.८-३-३)

(छान्दो. ८-३-४)

कल यह विचार हम लोगों ने किया था, जैसे कोई महाराजा under ground office में बडे अपराधी को दण्ड देने के लिए बुलवाए तो सिपाही उस की आंखों पर पट्टी बांध कर ले जाएँगे। हथकडी भी लगी है। पता नही कौन से रास्ते से ले जाएँगे। राजा के सामने जा कर आंखों से पट्टी हटा देगें। देख कर आश्चर्य चकित हो गया कि कहां आ गया। किधर से आया ? कैसे आया ? कुछ पता नहीं। पट्टी हटते ही वहां का ऐश्वर्य देख कर बडे आनन्द में आ गया। कहां से आया ? क्यों आया ? मैं अपराथी हूँ सब भूल गया। पुलिस मुझे पकड कर लाई है। यह भी भूल गया। बस आनन्द आ रहा है। इसी तरह यह जीव रोज हृदय मे प्रवेश करता है। सुषुप्ति कब होगी ? जब यह जीव हृदय मे प्रवेश करेगा।

भेद इतना समझो कि जब इन्द्रिय प्रधान इसकी दृष्टि है तो उस समय

इस को जाग्रत कहेगें। यह जाग्रत अवस्था है। इन्द्रियों के द्वारा देखेगा। करेगा। कंठ मे जब इसकी स्थिति होती है तो मन को पकड कर स्वप्न देखता है। उस समय स्वप्न मे स्थिति होती है। अब जैसे संस्कार आएँगे वैसे ही स्वप्न मे देखेगा। किन्तु जब मन को छोड कर हृदय मे प्रवेश कर जाएगा, इस को दहराकास कहा। दहराकाश मे मन प्रवेश कर जाए। तामसी निद्रा में चला जाएगा। जो चिदाभास है बह उस में लीन हो ज.एगा जिस का बह आभास था। जैसे शीशे में मुँह देखने है। जब तक शीशा होता है तब तक मुँह का प्रतिबिम्ब उस मे दीखता है। दर्पण को हटा दिया तो प्रतिबिम्ब अपने स्वरूप में लीन हो गया। अपने स्वरूप को छोडेगा नही। इसी तरह श्रुति दृष्टान्त देती है कि सुषुप्ति अवस्था में मन सामने से हट कर अपने कारण, तामसी निद्रा में लीन हो जाता है और आभास साक्षी मे लीन हो गया। अपने स्वरूप मे यह साक्षी ब्रह्म है। इस साक्षी ब्रह्म में लीन हो एसा। श्रुति इस को ब्रह्म लोक कहती है।

ब्रह्मलोक माने ब्रह्मैव लोक ब्रह्म लोक। ब्रह्म ही सब का जीवन स्थान है। अपने अनुभव ने सभझो, यह शरीर है, ठीक है इस के लिए अन्न भी चाहिए, वुस्त्र भी चाहिए रहने के लिए जगह भी चाहिए। किन्तु आत्मा बिना क्या चाहिए ? पहले आत्मा चाहिए कि पहले भोजन चाहिए ? पहले आत्मा ही चाहिए। आत्मा ही आश्रय है। देखो, जैसे यह पुष्प है। इस में सुन्दर रूप है। यह पुष्प सुन्दर रूप का आश्रय बना हुआ है। किन्तु कब तक यह आश्रय रहेगा ? जब तक उस में रस रूप आत्मा है। जब रस सुख गया तो यह सुन्दर रूप रहेगा ? इसी तरह तुम्हारी यह अन्तरात्मा है। यही इस का आश्रय है। इसी में जीव भाव खडा है। यह शरीरादि सब इसी में खडे है। ऐसी वो जो अन्तरात्मा है उस को यहां कहा कि यह ब्रह्म लोक है। एतं सर्वाः प्रजा 'अहरहर्गच्छन्त्य ब्रह्मलोकं' अहरहर् माने प्रति दिन। अहर् संस्कृत मे दिन को कहते है। सर्वाः प्रजा प्रजा माने वो जीव जिस को निद्रा आती है। मनुष्य को तो निद्रा आती ही है किन्तु अपनी २ योनि के अनुसार पशु पक्षी भी सोते है। यह मनुष्य जो है यह अपने ऊपर नाना प्रकार की चिन्ताओ का बोझ उठा कर बैठा है। इस को निद्रा भी आनी है तो अच्छी निद्रा नही आती। निद्रा मे तो तुम प्रकृति के नियम से गये। किन्तु इस आत्मा मे तुम ज्ञान से और ध्यान से जाओ। उस हृदयाकाश में मन अगर ध्यान

से प्रवेश करेगा। सत् चित् आनन्द स्वरूप यह आत्मा ब्रह्मलोक है। इस ब्रह्म मे यदि तुम्हारा मन प्रवेश करे तो वो जो ध्यान की स्थित है। इस ध्यान की स्थिति में जब मन आएगा तो यह 'निर्विषयमना:' महर्षि कहते है ज्यों २ विषय कम होते जाएँगे ध्यान अधिक लगेगा। इस का अर्थ क्या है ? यह मन जब तक बाह्याकार विषयों मे रमेगा मन चंचल रहेगा और अन्तरमुखी आत्मा मे जैसे२ इस मन की स्थिति बनेगी मन की चंचलता कम होती जाएगी। बाह्य विषयों की चिन्ता कम होती जाएगी। अपने घर की दृष्टान्त से समझो। पुराने जमाने में लड़कियाँ भोलीं भाली होती थी। उन को पता भी नहीं होता था। माता पिता ने किसी अच्छे परिवार के लडके को देख कर बातचीत की और विवाह कर दिया। आज कल की तरह नही था कि लड़का लड़की को देखेगा। लड़की लड़के को देखेगी तब विवाह होगा। इस लड़की को तो पता ही नही। सुन भी लिया, फिर भी गम्भीर है। विवाह हो गया। पालकी में बिठाया और विदा कर दिया। जैसे किसी चिड़िया को जंगल से पकड़ कर ले आओ तो वह तुम्हारे छोटे से पिंजरे से पड़पेगी। फड़फड़ाती है किन्तु धीरे २ वह चिडिया खाने पीने लग जातीं है। सोचती है उड़ने की जगह तो कम है पर खाना दाना ठीक है। धीरे २ शान्त हो जाती है। ऐसे ही यह लड़की भी उस चिडिया की तरह पहले तो तड़पती है। कब भाई आएगा ? कब मुझ को ले जाएगा ? रास्ता देखती रहती है। धीरे २ समझ जाती है कि यही मेरा घर है। उस का मन अब निश्चिन्त हो जाता है। मस्ती से रहती है। फिर भीं मां जब तक जीवित है बेटी का मां की ओर आकर्षण रहता है। मां का भी बेटी के प्रति आकर्षण रहता है। मां भी चली गई तब कहती कि भाई बुलाएगा तब जाऊँगी। इस क्रम से जैसे धीरे २ वह जमती गई। बेटा बेटी भी हो गये। इस का संसार बन गया उस घर को भूलती जा रही है। अब उस घर के संकल्प विकल्प भी नहीं होते। दादी बन कर बैठ गई तो पूरी तरह से भूल गई।

उसी लड़की की तरह समझ लो यह संसार तो मम्मी का घर है। मुमुक्षु जब मोक्ष की ओर चलेगा तो धीरे २ इस मन को यहाँ से बाहर निकालेगा। इस मन मे नाम रूप भरा पडा है। जितना इस में नाम रूप भरा है इतना ही भय, चिन्ता और शोक होता है। इस लिए यह मन चंचल रहता है। कई लोग

कहते है महाराज यह मन बडा चंचल है । एक लडका बडा सत्सङ्गी था । संत के पास रोज जाता था । सेवा करता था । सत्सङ्ग सुनता था । रोज समय से जाना समय से लौट कर आ जाना उस का नियम बन गया था । एक दिन उसका बहनोई आ गया । बहन की नई २ शादी की थी । यह लड़का जब उठ कर चलने लगा तो बहनोई ने पूछ लिया कहाँ जा रहे हो ? इस ने कहा एक संत के पास । वह बोला मैं भी चलूँ ? बोला चलो । दोनों आ गये । इसने अपने नियम के अनुसार पहले कुछ सेवा की और हाथ जोड कर संत के सामने बैठ गया । बहनोई भी थोडी देर तो बैठा रहा फिर मन नही लगा । यूं देखा, उठ कर चला गया । उस को भी नही बोला कि मैं जा रहा हूँ । घर पर भी इस के बारे में कोई चर्चा नही नही हुई । दूसरे दिन फिर वह भी गया । यह अपने नियम से सेवा कर के सत्सङ्ग सुनने बैठ जाता है । वह थोडी देर बैठ कर चला जाता है । तीसरे दिन फिर वही हाल हुआ । नमस्कार कर के बैठ गया और थोडी देर मे उठ कर चलने लगा । संत ने कहा इधर आ। बैठ, सुन तू रोज आता है पर बैठता क्यों नही ? लड़का थोड़ी देर चुप रहा फिर बोला महाराज मेरी अभी २ शादी हुई है मैं उस का मुँह देखे बगैर ज्यादा देर रुक नहीं सकता । सत ने कहा अच्छा, यह बात है । यह बता तू पढा लिखा है ? बोला हाँ महाराज मैं यह पढा हूं वह पढा हूं । संत ने कहा तुम्हारी पत्नी कितनी सुन्दर है उस का व्याख्यान करो । लिख कर ले आओ । घर गया । उस को कविता लिखनी पड़ेगी । घर जा कर उस को कहता है कि तू खडी रह । स्वयं बैठ गया लिखने लगा । कब तक खडी रहती ? थोडी देर बाहर चली गई । फिर बुलाया । ऐसा करते २ कुछ २ लिख कर ले गया । सन्त को सुनाया । संत प्रसन्न हुए । बहुत अच्छा लिखा है तुम ने । ऐसा करो अब मन से उस को देखो और फिर लिखो । यही से उस का ध्यान करो और लिखो । साला तो अपने नियम से समय पर आया और चला गया किन्तु इस का मन तो इतना मग्न हो गया कि बाह्य विस्मृति हो गई । एक दम ध्यान में लीन हो गया और लिखता जा रहा है । जब और ध्यान में लीन हो गया तो लिखना भी भूल गया । मन से उस का रूप इतना सुन्दर लगा कि पहले कभी नहीं लगा था ।

एक बात समझो । इन्द्रियों से वस्तु जितनी सुन्दर लगती है, मन से कहीं अधिक सुन्दर लगती है क्योंकि मन इन्द्रियों से सूक्ष्म है । और इन्द्रियों से वस्तु

जितनी बुरी लगती है मन से कहीं अधिक बुरी लगती है। मन गुण दोष की अन्तरात्मा में प्रवेश कर जाता है। इस लिए मन का जो दर्शन है वह बडा महत्त्वपूर्ण होता है। तुम्हारा जो स्वरूप है सत् चित् आनन्द स्वरूप, जो मुमुक्षु ज्ञान और विवेकशील विचार से इस के अन्दर प्रवेश कर जाएगा वह तो 'आत्मैवाहमस्मि' ब्रह्मैवाहमस्मि, इस सत् चित् आनन्द रूप आत्मा मे ही लीन हो जाएगा। मैं ही आत्मा हूं मैं ही ब्रह्म हूं, 'नाहं देहादिसंघात:' मैं यह देहादि संघात नहीं हूं। जब इस अहंकार से ऊपर उठ जाता है और उस आत्मभाव में मन जब स्थिर हो जाता है तो मन निर्विकल्प हो जाता है। निर्विकल्प माने नाम रूप नही है। यह मन अपने स्वरूप मे विलीन है। उस निर्विकल्प स्थिति मे मन इस दहराकाश में, हृदयाकाश में सत् चित् आनन्द स्वरूप में यह मन मग्न है। जैसे उदाहरण के लिए समझो श्री मद्भागवत मे शुकदेव मुनि के लिए आया है।

'तस्य पुत्रो महायोगी समदृङ निर्विकल्पक:

एकान्तमति रुन्निद्रो गूढो मूढ इवेयते''

उस महर्षि व्यास का यह पुत्र महान योगी है। समदृक् उस की दृष्टि सम हो गई है। दृष्टि मे भेद नही रहा। दृष्टि में जब तक भेद है किसी को अच्छा और किसी को बुरा कहेगा। क्यों मन के अन्दर राग द्वेष घूम रहा है। राग द्वेष के अधीन हुआ मन लोक में घूमता है। किन्तु जहाँ राग द्वेष नही है 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' श्रुति कहतीं है 'इदं सर्वब्रह्म' जब यह सब ब्रह्म है तो दृष्टि समता मे आ गई। दृष्टि समान भाव में आ गई तो राग द्वेष नहीं रहेगा। गीता मे भगवान कहते है:- इहैव तैर्जित: सर्ग:।

ऐसे जो महान आत्म ज्ञानी मुमुक्षु है, उन्हों ने इस जीवन में ही भावी 'सर्ग भावी देहसम्बन्ध:' आगे जो जन्म होने वाला है उस को भी इसी देह मे जीत लिया है। आगे उन का जन्म नही होगा। क्यों ? जन्म का कारण अज्ञान और कर्म। अज्ञान भी नहीं और जन्म देने वाला कर्म भी नहीं। 'एषा मुमुक्षुणां' ऐसे जो मुमुक्षु है सामान्य मुमुक्षु नही। तत्त्वज्ञानी मुमुक्षु वह निर्दोष हैं 'निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्मात् ब्रह्मणि ते स्थिता:' यह जो महान ब्रह्म है यह निर्दोष

हैं क्योंकि यह सब के लिए समान है। इस मे कमी बेशी नही। जिस में दोष होगा उस म कमी बेंशी होगी। जैसे यह शरीर है अपना। लम्बा, मोटा, दुबला छोटा कई आकार का हो सकता है किन्तु आत्मा में कोई फर्क नही पडता। वो एक जैंसा हैं। यह निर्दोष है। इसलिए कहां 'निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिता:' यह ब्रह्म में स्थित है। ऐसा ही यहाँ महामुनि शुकदेव का मन निर्विकल्प हो गया हैं। उन की समदृष्टि हो गई है। दृष्टि जब सम तत्त्व को पकडेगी तो सम दृष्टि होगी। विषय भाव को पकडेगी तो दृष्टि में विषमता रहेगी। विषम तत्त्व का मतलब है नाम रूप। नाम रूप में जिन की दृष्टि रहेगी और राग द्वेष में जिनकी दृष्टि रहेगी तो धर्माधर्म होते रहेगें। अच्छा कर्म आया तो धर्म हो गया। बुरा कर्म आया तो अधर्म हो गया। जो उस नाम रूप से ऊपर चले गये हैं वह किस से राग करेंगे ? किस से द्वेष करेंगे।

'समदृङ् निर्विकल्प एकान्तमतिरुन्निद्रो गूढो मूढ इवेयते'

श्री मद्भागवत में इस स्वरूप का वर्णन आया है। कैंसा स्वरूप है शुकदेब का ? 'एकान्तमति' एकस्मिन् मति एकान्तमति एक मे ही जिस की मति है। एक 'अन्त' अन्त शव्द का अर्थ है न इति न इति।

"अशीर्यो न शीर्यते असङ्गो न हि सज्जते, अभयं वै जनक:"

महर्षि याज्ञवल्क्य राजर्षि जनक को उपदेश करते हुए कहते हैं। राजा जनक अपने समय का महान सम्राट है और हाथ जोड कर बैठा है। हे भगवन इस सत्य को मेरे को समझाओ। कहते है यह आत्मा का आदेश है। आदेश माने उपदेश अगृह्यो नहि गृह्यते नेति नेति। यह नाम रूप नही हैं। वह इस नाम रूप से परे है। इस का अर्थ सीधा यों समझो कि जो नाम रूप का आधार है, जिस अधिष्ठान के बिना नाम रूप नहीं भासता। यह जो तुम्हारीं आत्मा है यह जगतका रस है। यह सारा जो ब्रह्माण्ड खडा है यह क्यों खडा है ? यह आत्मा इस का आधार वना हुआ है। इस जगत का रस में मन की प्रवृति कैसे हो ? यह मायिक नाम रूप से मन ऊपर उठेगा तब रसात्मा में इस की प्रवृति होगी। जब तक नाम रूप माधिक जगत में मन का आकर्षण है तब तक अधिष्ठान में प्रवेश नही करेगा। इसलिए कहते हैं 'न इति न इति। यह नही है यह नही है। माने नाम रूप नही

है । यह तेरी,जो अन्तरात्मा हे यह 'अगृह्यो' है उस का मतलब यह समझो जैसे इन्द्रियों से हम किसी वस्तु को पकड़ते है । अपने हाथ से पूछो, क्यों भाई साहब तुम अपने आप ही सब कुछ करते हो ? तो यह भाई साहब क्या बोलेगा ? यह कहेगा ऊपर वाला जाने । ऊपर वाला है तो हाथ भी उठेगा, चलेगा, पकड़ेगा । आत्मा नहीं तो हाथ क्या करेगा ? तो यह बताओ कि हाथ ने ऊपर वाले को पकडा कि ऊपर वाले ने हाथ को पकड़ा ? उसी ने हाथ को पकडा वह हाथ को छोड़ देगा तो यह हाथ कुछ नहीं पकडेगा । उठेगा ही नहीं ।

वह आत्मा किसी की पकड़ मे नही । सब इन्द्रियाँ उस की पकड में है । वह किसी इन्द्रिय की पकड में नहीं । सब उस की पकड में है तभी सब इन्द्रियाँ अपना अपना काम करती है । 'अशीर्यो नहि शीर्यते असङ्गो नहि सज्जते' यह किसी के बन्धन में नहीं है । शरीर इस को बांधना भी चाहेगा तो बांध नहीं सकेगा । जब उस की इच्छा होगी छोड देगा । और जहाँ उसने छोड दिया तो सब ने छोड़ दिया । आत्मा कौन ? जिस की पकड़ से सब की पकड़ । जिस के छोड देने से सब ने छोड़ दिया । आत्मा की पकड़ है तो बेटा है, बेटी भी है, भाई भी है, पति भी है, पत्नी भी है, बाप भी है । आत्मा ने छोड़ दिया तो फिर कोई क्या करेगा ?

उस आत्मा मे जिस की स्थिति हो गई उस के लिए कहते है 'एकान्त-मतिः' उन्निद्रः शुकदेव मुनि का मन उस आत्मा में स्थित है । उन्निद्रः शब्द का अर्थ है 'उत् ऊर्ध्वं गतः निद्रा यस्य' जिस कीं निद्रा बाहर निकल गई है । निद्रा अविद्या । सोना दो प्रकार का । अगर कोई पूछे निद्रा का क्या अर्थ तो क्या कहोगे ? नहीं समझना भी निद्रा है । गाढ निद्रा में सो गये । छाती पर सांप आकर बैठ गया । बीकानेर मे एक पीला सांप होता है । चढ गया । मुँह से मुँह लगा कर तुम्हारे प्राण पी जाएगा । और विष वाला प्राण तुम्हारे मुँह मे छोड़ जाएगा । पर उस की यह खूबी है कि जाते समय पूंछ फटकार कर जाता है । अगर उस समय तुम जाग गये तो बच सकोगे । वो लोग दवाई भी जानते है । पर अगर सोते रहे तो फिर कोई तुम्हे बचा नहीं सकता । निद्रा का अर्थ है नही समझना । लोक दृष्टि में जो निद्रा है यह भी कुछ नहीं समझने देती । और

अज्ञान का अर्थ भी नही समझना है। यह भी निद्रा है। इस निद्रा मे आत्म स्वरूप को नहीं समझता। यह रात्रि की जो निद्रा है, यह तो बाहर के नाम रूप को नहीं समझने देती और अज्ञान रूपी जो निद्रा है यह तुम्हारे 'अनादि मायया सुप्तो यथा जीव: प्रबुध्यते असली स्वरूप को नहीं समझने देती। 'अजमनिद्र असुप्तं अद्वैतं बुध्यते तदा'।

यह जीव अनादि माया की निद्रा में सोया पडा है। जी रहा है, इस शरीर में खा रहा है, चल रहा है। किसी ने पीठ पर गधे की तरह बोझ लाद दिया है। तत्त्व को जानने वाला आचार्य बडा करुणाशील हो। दयावान हो। क्षमाशील हो। वो इस जीव को जाग्रत करे कि बेटा उठो। अज्ञान की निद्रा से जागो। आचार्य ने जगा दिया।

'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निदबोधत'उठो जागो।आचार्य के द्वारा वर प्राप्त करो। कौन सा वर ? ज्ञान का वरदान श्रेष्ठ है। और जो भी वरदान तुम्हे मिलेंगे वो थोडे समय के लिए अपने विषय को रखेंगे। बाद मे कुछ नही। किन्तु यह ज्ञान का वरदान अमरत्व को देने वाला वरदान है। इस के जैसा कोई वरदान नहीं।इस लिए मंत्र कहता है उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्यंवरान् निबोधत,क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयोवदन्ति' बेटा इस आत्मा को जान लेगा तो कठोर से कठोर मार्ग भी कट जाएगा। नही तो यह मार्ग बड़ा दुर्गम है। क्यों कि यहाँ न कोई मेरा न तेरा इस मार्ग बडे धीर वीर ही चलते हैं। यहाँ न हम किसी के न कोई हमारा। ऐसे मार्ग पर चलना है। लोक दृष्टि का जो मार्ग है उस मे मेरा भी है और तेरा भी है। मानते तो ऐसा ही रहे किन्तु आंख खुल गई तो न मेरा निकला न तेरा। इसीलिए कहते हैं यह मेरा तेरा मिथ्या है। मोह मिथ्या में ही होता है। इस लिए कहा 'यदा जीव: प्रबुध्यते' उस आत्मा के स्वरूप को यह जीव कैसे समझेगा। 'अजं' अज है। बर्थ डे मनाए जा रहे हैं। किस का बर्थ डे है। जिस का जन्म हुआ उस का या जिस का जन्म नहीं हुआ उसका ? जो है उस का जन्म दिन कौन सा हुआ और जो है ही नहीं उस का भी जन्म कैसा ? दूसरे शब्दों में चौकीदार भी रखा है फिर भी चोर घुस गया। तुम पहरेदार रहे तो यह चोर आ गया। जन्म हुआ पडोसी का और खुशी अपने मना रहे हैं। यह चोर तुम को नाम रूप में ले जाएगा।

इस प्रकार शुकदेव मुनि की स्थिति का वर्णन किया यह मूढ है। कैसे चल रहे है शुकदेव। देखने वालों को लगता है मूढ जा रहा है। यह गूढ है। इस को कोई नही जानता कि यह कितना ज्ञानी है। शुकदेव जी जा रहे है। पीछे २ व्यास जी जा रहे है। बडा सुन्दर तालाब है। देवाङ्गनाएँ स्नान कर रही है। सब कपडे खोल नहा रही है। शुकदेव आए। इन के मन मे कोई भेद नही आया। इस के पीछे व्यास जी को आते देखकर सब अपने वस्त्र लेने भागीं। व्यास जी को बडा आश्चर्य हुआ। पूछा, देवियो, मेरा जवान बेटा आगे गया है तब तो तुम ने वस्त्र नहीं पहने और मुझ बुढे को देख कर तुम्हे लज्जा आ गई। देवाङ्गनाएँ कहती है आप ठीक कह रहे है। जैसे घर मे छोटे बच्चों के सामने मां कपडे पहनती है उसे संकोच नही होता। पर बडे बच्चे में स्त्री पुरुष का भेद आ गया। महर्षि आप कह तो ठीक रहे है किन्तु आप का बेटा महान तत्त्वज्ञानी है उस की दृष्टि मे भेद ही नही है इस लिए हम को लज्जा नही आई किन्तु तुम्हारी दृष्टि मे भेद बैठा है। जहाँ स्त्री पुरुष का भेद बैठा है वहाँ हम ने लज्जा करना उचित समझा। इस तरह मुमुक्षु अपने मन को अभेद तत्त्व में ले जाए।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२९-४-८८

प्रवचन सं०-२१

"ॐ स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरुक्तं हृयमिति तस्माद तस्माद् हृदयमहरहर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति ।।"

(छान्दो. ८-३-३)

श्रुति भगवती इस बुद्धिमान मनुष्य को सावधान करती है कि इस लोक में तुम्हारी जो यह विशाल भूमि है, इस के अन्दर यदि कहीं स्वर्ग निधिहै तो अज्ञानी पुरुष आएगा, ऊपर ही ऊपर घूसेगा और चला जाएगा । इस स्वर्ण निधि का उस को कोई ज्ञान नहीं होगा । वह अज्ञान के घेरे में है । वह उस को समझ नही पायेगा । किन्तु भूगर्भ विद्या का जानने वाला समझ जाएगा कि इतनी गहराई पर मिट्टी है, इतनी गहराई पर सोना है इतनी गहराई पर फलां चीज है । इसी तरह इस हृदय के अन्दर सब से कीमती तत्त्व है । उस हृदय के अन्दर यह सारी प्रजाएँ रोज आती है, रोज जाती है किन्तु कुछ समझती नहीं । 'अनृतेन हि प्रत्यूढा:' इस की व्याख्या कर के आए है । 'प्रतिदिनं एतं ब्रह्मलोकं गच्छन्ति न बिन्दन्ति अनृतेन हि प्रत्यूढा:' ।

प्रति दिन ब्रह्मलोक जाते है पर कुछ नहीं समझते । अज्ञान में बंधे हुए जाते है । ऐसे ही रह जाते है । इस लिए बुद्धिमान जैसे प्रकृति के नियम से इस दहराकाश में जाता है । सुषुप्ति यदि इसे नही होगी तो इस का जीवन नीरस हो जाएगा । नीरस हो जाएगा माने किसी चीज का रस इस को नहीं आएगा । यह पदार्थों में जो स्वाद आता है, वह इस लिए आता है कि रोज इस को अपने भीतर का रस, आत्मा का रस मिलता है । महान दिव्यानन्द इस को रोज मिलता है । अगर लगातार चार दिन यह निद्रा मे न जावे तो इस मनुष्य की खोपड़ी बैंगन का

भुर्ता बन जाएगी। यह तो परमात्मा की महान कृपा है। जैसे कोई धनी मानी सोचता है कि हमारे इस नगर मे कोई भी अतिथि आवे तो भूखा नही रहे। इस लिए अन्न क्षेत्र खोलता है। वहाँ उस को खाने को मिलेगा। इसी तरह परमात्मा ने भी तुम्हारे लिए निद्रा, सुषुप्ति अवस्था बनाई है। वह परमात्मा करुणावरुणालय हैं। करुणा का वरुणालय है। माने करुणा का समुद्र हैं। वरुण नाम है जल के अधिष्ठात्री देवता का। वरुण का आलय माने घर। यह परमात्मा करुणा का का समुद्र है। परमात्मा का जैसी करुणा किस के पास होगी। करुणा उस के पास है जिस को कभी रोष नहीं आवे। मनुष्यों मे कभी करुणा आती है कभी रोष आता है। अपना ही बेटा हो उस पर भी कभी क्रोध आता है। कभी करुणा आती है। हम लोग खिचड़ी खाते है। थोड़ी सी करुणा थोड़ा सा रोष। परमात्मा को कभी रोष नहीं आता।

कहोगे कि बड़े २ असुरों पर तो क्रोध आया। हिरण्यकशिपु पर देखो कैसा क्रोध आया था। किन्तु यह भी भगवान का क्रोध नहीं था करुणा ही थी क्रोध तो उस का अपना ही था जो भगवान के श्री मुख पर झलकने लगा। जरा अपने मुह को क्रोध के आकार में बनाओ और फिर शीशे मे देखो। इसी तरह हिरण्यकशिपु या कंस आदि थे। इन का अपना ही क्रोध भगवान के मुँह पर दीखा और यह लोग डरने लगे। उन को भगवान उस स्वरूप में दीखते रहे। वही भगवान जो हिरण्यकशिपु पर क्रोध करते हैं, प्रह्लाद से क्षमा मांग रहे हैं कि मुझे आने देरी हो गई है। प्रह्लाद को क्रोध नहीं प्रेम करते हैं बड प्रसन्न दीखते है। इस लिए करुणा वरुणालय है। वह कभी क्रोध नहीं करते हैं। रोज अपने हृदय मे जाओ। इस के लिए सुषुप्ति रखी है। यह आनन्द मिलेगा तो जाग्रत का का आनन्द भी अच्छा लगेगा। यह आत्मा का आनन्द ही तुम्हारा भोजन है। जब तक सुषुप्ति का आनन्द तुम को मिलता रहेगा। जाग्रत के पदार्थो मे भी आनन्द मिलता रहेगा। सुषुप्ति तुम को छोड़ देगी तो जाग्रत का आनन्द भी नही मिलेगा सुषुप्ति को सब जीवों के लिए अन्नक्षेत्र समझो। इस लिए हृदय मे रोज जाओ।

किन्तु हृदय मे कौन जाएगा? जो जाग्रत के कर्म को कठोर नही करेगा।

जाग्रत के कर्म कोमल रखो ।जब कभी भी क्रोध आता है तो किसी बुरे कर्म से ही आता है । ध्यान रखो जाग्रत अवस्था में तुम्हारा कर्म ऐसा न हो जो तुम्हारे मन विकृत कर दे। वाणी से मीठा बोलो, हाथ से भी अच्छा कर्म करो जिस से तुम्हारे अन्दर उस का प्रतिक्रिया(reaction) अच्छा हो । महर्षि व्यास कहते है :-

'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' धर्म का जो गूढ रहस्य है उस को सुनो । 'श्रूयता सर्वधर्मानाम्' सूत्र रूप में धर्म को समझो । और उसको अपने मन में रखो । बडे प्यार से कोई सुन्दर मणि को अपने गले मे धारण करता हैं।बिजलीकी तरह चमकने वाली मणिं हमारे गले में चमके।जो तुम को अच्छा नहीं लगता वह दूसरों के साथ नहीं करो । जैसे हम को झूठ अच्छा नही लगता । इस का अर्थ है कि हम भी दूसरों के साथ झूठ नही बोलें। किन्तु यह भी याद रखो कि एक ही दिन में कोई हरिश्चन्द्र नही बन सकता । आज से प्रतिज्ञा करो कि झूठ नही बोलेंगे । यह संसार ऐसा है कि कहीं झूठ भी बोलना पड़ता है तो ऐसी कल्पना नहीं करना कि एक ही दिन में हम सत्य बोलने लग जाएँगे । उस में कभी २ बडी परेशानी हो जाती है । हरिश्चन्द्र को भी अभ्यास करना पड़ा था। वह भी सत्य में कब पहुंचा ?

कथा आती है कि हरिश्चन्द्र को पुत्र नहीं होता था । पुत्रेष्टि याग किया । वरुण देवता का आह्वान किया । वरुण देवता ने प्रसन्न होकर वरदान मांगने को कहा । पुत्र मांगा । कहा जो पहला पुत्र होगा वह आपको दूंगा । वरुण देव ने स्वीकार कर लिया । पुत्र हुआ । वरुण देवता प्रगट हो गये । बोले लाओ हमारा हिस्सा । भगवन ! इतनी क्या जल्दी है । अभी तो बहुत छोटा है थोडी प्रतीक्षा करो । वरुण देवता चले गये, कहा ठीक है । चार पांच वर्ष मे फिर आए। बोला थोड़ा पढा लिखा दूं । थोड़ा समय और दो । वरुण देवता लौट गये। बच्चे को पढ़ने भेजा । पढ लिख कर जवान हो गया । वरुण देवता फिर आ गये । बोले लाओ । हरिश्चन्द्र ने छोकरे को कहा तीर्थ करने चले जाओ । वरुण देवता से बोल दिया तीर्थ करने चला गया है । वरुण देवता कुपित हो गये और शाप दे दिया कि तुम को जलोदर रोग हो जाए । जलोदर नाम का एक रोग होता है, पेट में पानी भर जाता है । पेट फूल गया । प्राण निकलने लगे । बड़ मुश्किल हो गया।

फिर याग करना पड़ेग । हरिश्चन्द्र ने सौ गाय देकर एक ब्राह्मण के बेटे को खरीद लिया यज्ञ मे बलि देने के लिए । लाकर खम्बे से बांध दिया । बच्चा रोने लगा । यज्ञ में विश्वामित्र भी आए थे । पूछा बेटा क्यों रोते हो ? बच्चा कहता है भगवन्! मुझे बचाओ । विश्वामित्र को दया आ गई । उस को एक मंत्र प्रधान स्तोत्र दिया । जिस से वरुण देवता तुरन्त प्रसन्न हो जाए।बोले स्तोत्र का पाठ करो वरुण देवता तुम पर प्रसन्न हो जाएँगे । पाठ किया झट से वरुण देवता प्रसन्न हो कर प्रकट हो गये । 'वरंब्रूहि' विश्वामित्र ने उस को सिखा दिया था कि बोलना कि यजमान जो यज्ञ कर रहा है उस को यज्ञ का फल मिले और मुझे प्राण दान दो । हरिश्चन्द्र का जलोदर ठीक हो गया और इस बालक को अभय दान मिला । पिता अजिगर्त आया कि चलो तुम्हारी मम्मी तुम को याद कर रही है । वह बोला मेरा कोई मम्मी डैडी नही है । उन्हों ने तो मुझे सौ गौएँ लेकर बेच दिया था । प्राण दाता ही पिता है । विश्वामित्र ने इस को अपना बेटा मान लिया । उन के सौ पुत्र अपने थे । इस को भी घर ले गये । कहा यह मेरा धर्म पुत्र है इस को तुम लोग अपना बड़ा भाई मानो । 50 पुत्रो ने कहा हम मानेगे और 50 बोले हम नही मानते । उसको घर से निकाल दिया । कहा जाता है यह ईरान ईराक वाले भी विश्वामित्र की ही सन्तान हैं । उन का रक्त (blood) आर्य है । यह बालक बड़ा वेद ज्ञाता हुआ । शुनशेप नाम था । बड़ा ऋग्वेदीय ऋषि हुआ । तब हरिश्चन्द्र को सत्य का आभास हुआ । सोचो हरिश्चन्द्र को सत्यवादी बनने मे कितना समय लगा कहने का तात्पर्य यह है कि एक दिन मे तुम सत्य को पकड नही सकते । धीरे २ अभ्यास से (by practice) सत्य को पकड़ना है ।

एक दिन में हम सत्य को छोड़ भी नही सकते । कोई कहे कि झूठ बोलो तो हम झूठ भी नहीं बोल सकते सत्य की जगह सत्य बोलना ही पड़ेगा । जब सत्य को पकड़ोगे तो सत्य के पास पहुंच जाओगे । बुद्धिमान घबरावे नहीं । तुम्हारा मन शान्त हो जाएगा । शान्त मन उस परम सत्य की खोज करेगा कि वह 'कौन ह' ? एक तो देखने का सत्य और एक परम सत्य । इस के लिए मंत्र कहता है 'स वा एष आत्मा हृदि' हृत शब्द है,उस का हृदि बन गया । कहते है आत्मा मिलने के लिए तुम को किसी लोक मे जाना नहीं पडेगा । अपने इस

हृदय में जाओ। भगवान कृष्ण ने भी अर्जुन को इसी सत्य को प्रगट करते हुए कहते है।

"ईश्वरः सर्वभूताना हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति
भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया ।।"

हे अर्जुन वह ईश्वर सब के हृदय मे बैठा है। कहते है कैसे बैठा है? जैसे हम बैठ जाते है ऐसा ही बैठा है क्या? हृदय के अन्दर जो मन रूपी दर्पण है उस मे इस का आभास आया। इस साभास मन का आधार चेतन साक्षी परमात्मा है वह हृदय में है। आभास रुप से मन में स्थित है। अपने आप में वह आत्मा है। इस लिए भगवान कहते है।

'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति' जैसे हम शीशा देखते हैं। शीशे में मुख का प्रतिबिम्व दीखता है। मुख की स्थिति शीशे मे बनी। यह मन विशुद्ध सत्त्व से बना हुआ कितना पवित्र है। इसलिए कहते है 'हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति' वहाँ पर रह कर धन्धा क्या करता है? कहते है 'भ्रामयन् सर्व--भूतानि' सम्पूर्ण भूतों को भ्रमण करवाता है। मन में जो आभास गया वह जीव बना तो भ्रमण क्या करवाया? इस शरीर के अहंकार मे घुमाया। जैसे मदारी का बन्दर होता है। मदारी ने बांस गाढ दिया। बन्दर का नाम कमल कुमार रख दिया। कहा चढ जा इसके ऊपर और नाच। कमल कुमार उछल कर चढ गया और नाचने लगा। यह मन तुम्हारा कमल कुमार है। यह बांस यह शरीर है। इस शरीर मे यह जीव चढ गया। मैं ब्राह्मण का बेटा हूँ। बाप बडा है इस लिए मैं वडा हूँ। अपने अन्दर तो बड़प्पन के गुण हैं नही किन्तु बाप बडा हैं। इस तरह अहंकार करता जा रह हैं। आगे मंत्र कहता है, हृदय मे बैठा हुआ वह सभी प्राणियों को भ्रमण करवा रहा है। "यंत्रारूढानि मायया" इस शरीर को यंत्र कह रहे हैं। यह बड़ा विचित्र यंत्र है। आज का वैज्ञानिक भी इस शरीर रूपी यंत्र को समझने में असमर्थ हैं। क्या इस के अन्दर विज्ञान भरा है। आज कल कम्प्यूटर साईन्स चला है। यह बताओ कम्प्यूटर से तुम आए कि कम्प्यूटर तुम मे आया। यह मानव की खोपडी कम्प्यूटर का कम्प्यूटर है। यह अटोमैटिक यंत्र है। कितना काम करता है।

इस यंत्र पर रूढ होना क्या ? माने शरीर का अहंकार । कहता है 'मैं' पुरुष हूँ ।' 'मैं स्त्री हूँ' । 'मैं बच्चा हूँ' पूछो इस से कब से पुरुष बना है ? ठोकर कर कब तक इस शरीर का परिचय देते रहोगे । जन्म से पहले तो यह शरीर था नहीं । मरने के बाद यह शरीर रहेगा नहीं। हाँ जहाँ शरीर का पता(Address) देने की जरूरत है वहाँ दो । परिचय भी दो। पर तुम्हारा असली परिचय क्या है? न यह परिचय जन्म से पहले था, न मरने के बाद रहने वाला है, फिर थोडे समय का जो परिचय है उसे ही देते जा रहे हो । यह अपनी विस्मृति नहीं तो और क्या है । जीते जी इस शरीर के अहंकार से पीछे हटो । यह ब्रह्म विद्या का लक्ष्य है । अपने स्वरूप की स्मृति करो । इस के लिए हृदय मे प्रवेश करो ।

उपनिषद का यह मंत्र कहता है ''सत्येन लभ्यस्तपसाह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम् ।

अन्तः शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो । यं पश्यन्तियतयः क्षीणदोषाः यह मंत्र चार साधन बताता है हृदय मे प्रवेश करने के लिए । मंत्र कहता है यह अन्तः शरीर है अन्तः शरीर माने हृदयाकाश । वो सत् चित् आनन्द स्वरूप जो आत्मा है, ज्योति स्वरूप है । ज्योति, जब हम लोग बोलते है तो लोग समझते है कि यह दीपक या बिजली की ज्योति होगी । सूर्य या चन्द्रमा की ज्योति है । प्रकाश का भी प्रकाश है । यह सूर्य की ज्योति आ रही है और नेत्र की भी नेत्र की ज्योति यह समझ रही है कि यह कौन है ? यह कहाँ जा रहा है ? यह क्या कर रहा है? पर सूर्य की ज्योति तो यह नही समझ रही । सूर्य की ज्योति जड़ ज्योति है । भौतिक प्रकाश है । और तुम्हारी ज्योति चेतन ज्योति है । ज्ञान ज्योति है । इस लिए यहाँ मंत्र कहता है कि 'सत्येनलभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम् इस परम ज्योति को पाने के चार साधन बताए हैं सत्य, तप, सम्यक्ज्ञान और ब्रह्मचर्य । सत्य माने लोक दृष्टि मे जो सत्य है व्यवहारिक सत्य, अर्थात् वाणी से ठीक बोलो । हाथ से ठीक कर्म करो । ठीक जगह से खाओ । ठीक बांट कर खाओ । यह सत्य है । वाणी वो सत्य है जिस से न तुम्हारी हानि हो न दूसरे की हानि हो । मान लो एक अपराधी भाग रहा है । पुलिस उस का पीछा कर रही हैं । तुम ने उसे देखा और पुलिस को बता दिया । उस को पकड कर फांसी

की सजा दे दी गई। तो तुम्हारा सत्य बोलने का क्या लाभ हुआ। ऐसी जगह मे सत्य को जरा दबाओ। अपना मुंह बन्द रखो। नहीं बोलो।

''सत्यं ब्रूयात्, प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्'' अप्रियं सत्यं न ब्रूयात। सत्यं ब्रूयात् सत्य बोलो किन्तु कठोर सत्य नहीं बोलो। मुंह बन्द रखो। सत्यं ब्रूयात् प्रियंब्रूयात। प्यारा लगने वाला सत्य बोलो। तुम्हारे सत्य बोलने से अगर किसी के हृदय मे पीडा हो तो मुंह को दबा कर रखो। बिल्कुल सूत्र फार्मूले ठीक(set) कर के रखे है। सत्य बोलो प्रिय बोलो जिस से किसी का भला हो वह बोलो। 'प्रियं च अनृतं न ब्रूयात्' किन्तु प्रिय लगने वाला झूठ मत बोलो। यह सनातन धर्म है। वाणी का सनातन धर्म। सत्य की ओर चलने के लिए सब इन्द्रियों कहना पडेगा। साथ चलने के लिए कहना पडेगा। जैसे लोक मे कहीं जाना हो तो अपने साथी ढूंढते हैं कि हमारे साथ चलो। इसी प्रकार इन इन्द्रियों को मोक्ष मार्ग का साथी बनाओ। वाणी कैसे साथी बनेगी? इसी प्रकार यह वाणी तुम्हारी साथी बनेगी। 'एष धर्मः सनातनः' इन्द्रियों का संयम करो।

तपः माने इन्द्रिय संयमः। इस का मतलब यह नहीं कि मुँह पर पट्टी बांध लो। जैसे जैनी संत होते हैं। मुँह पर पट्टी बांध कर रखते है। जो गैस निकल रहा है उस से कितने प्राणी मर जाते है। जो गैस निकल रहा है इसे बाहर मत जाने दो। यह नहीं सोचा कि जो अन्दर बैठा है अर्थात तुम्हारे स्वास्थ्य की कितनी हानि है? संयम से बोलो। इन्द्रियों का संयम ही तप है। एक संत थे। रसना के जरा कमजोर थे। रस गुल्ला खाने के बडे शौकिन थे। एक दिन गंगा किनारे ध्यान लगा कर बैठ गये। भूख का समय हो गया। जीभ को भी रस गुल्ले का ध्यान आ रहा था। रसनेन्द्रिय मचलने लगी। बोले आज नहीं खिलाऊँगा। तू बहुत तंग करती है। हाथ जोड़ने लगी तो उठे। बाजार से बढिया रस गुल्ला एक किलो की हंडी ले आए और किनारे पर बैठ गये। जीभ को दिखा २ कर गंगा मे फेंकते जा रहे है। नीचे जो मछलियां थी गंगा मे कूद२ कर खाने लगी। इधर रसनेन्द्रिय मछलियों की तरह मुंह मे उछलने लगी। वह पानी मे उछल रही है यह मुंह मे उछल रही है। यह रसनेन्द्रिय कोई कम नही है। कितने पर्दे लगाकर बैठे है जैसे आज कल बडे २ बोग बंगले बनाते हैं।

बडी २ खिडकियाँ लगवाते है। फिर उन काले पर्दे लगा देगें और लाईट जला कर बैठेंगे। बाहर की हवा भी बन्द लाईट भी बन्द। इसी तरह यहां होठों का पर्दा दांतो की दीवार लगा रखी है। उस के अन्दर बन्द है बेचारी। इस तरह सब रस गुल्ले दिखा २ कर गंगा जी में फेंकते जा रहे है। आखिरी बचा तो बोली यह तो दे दो। बोले न। तू बहुत तंग करती है इसलिए यह भी नहीं मिलेगा। इस तरह इन्द्रियों के संयम मे कठोरता बरतो। ढीले नही होना। ढीले हुए तो हमेशा ढींले ही हो जाएंगें। इन्द्रियों के बात के लिए सत्यव्रत होना चाहिए। यह तप हो गया। वही खाने का नाम तप नही।

जीवन को युक्ति युक्त बनाओ। युक्ति युक्त जीवन तप है। जीवन को ाल भी दो, इस से काम भी लो। 'सत्येन लभ्यमतपसाह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम् तीसरा साधन बताया सम्यग्ज्ञान। ज्ञान का बडा दोष है संशय। दूसरा दोष है भ्रम। तीसरा दोष उल्टा समझ लेना संशय, भ्रम और विपरीत ज्ञान यह तीनों बडे दोष है जिज्ञासु मुमुक्षु को बुद्धिमान आचार्य ' सम्यक ज्ञान देता है। सम्यक ज्ञान वह है जिस मे संशय भ्रम और विपरीत ज्ञानादि दोष न हो। यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आतमा है। यह आत्मा ही ब्रह्म है। इसके सिवाय दूसरा कोई ब्रह्म नहीं है। यह सम्यक ज्ञान है। इस तरह तुम्हारे मन की स्थिति बन जाएगी। 'ब्रह्मचर्येण नित्यम्' इन्द्रियों का संयम ही ब्रह्मचर्य है। मुमुक्षु इस प्रकार इन चार साधनों के द्वारा प्रयत्न करे। एक दिन मे यह नही होगा। धीरे २ यह सब होगा।

'अन्तः शरीरे ज्योतिमयः हि शुभ्रो यं पश्यति यतयः क्षीणदोषाः' शरीर के अन्दर, हृदयाकाश मे ज्योति स्वरूप है शुभ्र है निर्मल हैं। 'यतयः' का अर्थ है पुरुषार्थ करने वाला मुमुक्षु। 'यतय' का अर्थ सन्यासी भी होता है। पर यहाँ यत्नशील मुमुक्षु है। जैसे घर छोड कर यत्न से यहाँ आए हो। तत्परता से आना पुरुषार्थ है। ज्ञान का संचय करने के लिए ऐसे पुरुषार्थ करना पडता है। यः पश्यति यदि इस का अनुभव करते है तो इस के दोष क्षीण हो जाते हैं और यह यत्नशील मुमुक्षु निर्मल मन से इस आत्मा मे प्रवेश कर जाता है।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१०-४-८८

प्रवचन सं० २२

"ॐ स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरुक्तं हृदयमिति तस्माद्हृदयमहरहर्वा. एवंवित्स्वर्गां लोकमेति ।।"
ॐ अथ य एष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात्समुत्थाय परं ज्योति रुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यत एष आत्मेति होवाचैतद्-मृतमभयमेतद्ब्रह्मेति तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति ।।"

(छान्दो. ८-३-३।८-३-४)

विचार चल रहा हैं कि मुमुक्षु इस आत्मा मे प्रवेश करे । जैसे हम लोग इस शरीर मे हम लोग प्रवेश किए हुए है तो यह शरीर चलता फिरता है । शरीर मे प्रवेश करने अर्थ है जाग्रत मे शरीर के अहंकार को लेकर चलना । निद्रा मे शरीर के अहंकार से बाहर हो गये अर्थात स्थूल शरीर से बाहर हो गये । कारण शरीर मे चले गये । अविद्या मे चले गये । जाग्रत मे स्थूल शरीर के अहंकार को पकड लेता है । सुषुप्ति मे स्थूल शरीर के अहंकार से बाहर हो गया तो शरीर के सुख दुःख से बाहर हो गया । इन्द्रियों के द्वारा जितने शोक मोह मे आया था उस शोक मोह से बाहर हो जाता है । तब इस महान आत्मा का आनन्द इस को मिलता है । इस बात को पहले भी कई बार मैंने स्पष्ट किया है कि जाग्रत मे यह पांच ज्ञानेन्द्रियाँ तुम को संसार के सारे पदार्थों को पकड २ कर बार २ देती है । खींच २ कर जैसे कोई बडा सेठ हो । उस के पांच नौकर हों । यहाँ तुम्हारे तो बहुत से नौकर है । पांच ज्ञानेन्द्रियाँ पांच कर्मेन्द्रियाँ पांच प्राण मन बुद्धि । पांच ज्ञानेन्द्रियाँ तत्पर रहेगी अपने २ विषय को पकड कर देती रहेगी । इन के द्वारा

कभी शोक कभी मोह कभी क्रोध कभी लोभ, नाना प्रकार के पदार्थ मिलते रहेगें।

सुषुप्ति मे कोई इन्द्रिय नही है। वहाँ इन इन्द्रियों का नेता मन भी नहीं है। फिर भी महान आनन्द का रस आ रहा है। यह आनन्द हृदय मे प्रवेश करने का है। इस लिए मंत्र कहता है "अहरहर" प्रति दिन यह प्रजाएँ 'गच्छन्ति न विन्दन्ति अनृतेनहि प्रत्यूढा' ब्रह्म लोक जाती है। हृदय को ब्रह्म लोक कह रहे है। किन्तु उस ब्रह्म लोक को नहीं जानती। जहाँ जाकर ब्रह्म के महान आनन्द को प्राप्त करते है। 'अनृतेनहि प्रत्यूढा' यह सारी प्रजाएँ अज्ञान से बंधी है माने अविद्या से घिरी है। इस लिए कुछ नहीं जानती। इस लिए कहा कि मुमुक्षु को उस आत्मा मे प्रवेश करना है। देहाहंकार से ऊपर उठेगा तो हृदय मे प्रवेश करेगा। तब आत्मा के समीप पहुंच जाएगा।

जिस हृदय मे तुम को प्रवेश करना है वहाँ आत्मा है। आत्मा शब्द का अर्थ है 'आप्नोति ह वैं इदं सर्वं स आत्मा' इदं सर्वं माने यह जो कुछ भी है नाम रूप जगत्। यह इतना बडा ब्रह्माण्ड है। गुलाब के फूल की तरह, सुन्दर बना हुआ है। क्यों ? चेतनात्मा ने रसात्मा ने इस को पकड रखा है। श्रुति कहती है यह सब को व्याप्त करता है। मुर्दे संसार से कोई प्यार नही करता। यह जीवित संसार है। यह सारा ब्राह्मण चेतन से ओत प्रोत है। 'आत्मैवेदं सर्वं ब्रह्मैवेदं सर्वं' जिस आंख से हम देखते है उस मे इतनी शक्ति नही कि इस सूक्ष्म तत्त्व को पकड सके। किन्तु यह चिन्मय पिण्ड है। अपने अनुभव के लिए समझो जैसे इस शरीर मे रक्त(blood)है खून निकलता है। तो हम को तो द्रव्य ही दीखता है परन्तु डाक्टर को उस मे सजीव जीवाणु दीखते है। जीवन दौड रहा है उस के अन्दर। वो ही जीवन तो तुम्हारा जीवन बना हुआ है। जीवन है इस मे। अगर इस रक्त(blood)के अन्दर जो जीवन है यह मर जाए तो यह शरीर मर जाएगा। याद रखने की बात है यह कि रक्त(blood) के अन्दर जो श्वेत को (white cell)और रक्त कोष(red cells) है यह मिल कर तुम्हारे जीवन की रक्षा कर रहे है। वो सामान्य सत्ता से चल रहे हैं। तुम्हारा ही धर्म सोम है। बुद्धिमान को दृष्टि आत्मा मे रखनी चाहिए।

बृहच्च तत् दिव्यमचिन्त्यरूपं, सूक्ष्माच्च तत् सूक्ष्मतरं विभाति ।
दूरात् सुदूरे तदिहान्तिके च, पश्यत्स्विहैव निहितं गुहायाम् ।।

मुण्डक श्रुति का मंत्र कहता है जैसा पहला मंत्र स्पष्ट करता है 'आप्नोति ह वै इदं सर्व इदं सर्व आप्नोति' यहाँ भी बृहच्च शब्द का अर्थ हैं व्यापक । दिव्यं शब्द का अर्थ है यह दिव्य है । व्यापक माने परिपूर्ण । दिव्य माने प्रकाशशील । जितने भी पदार्थ हैं सब को प्रकाश की जरूरत है । कही बिजली से प्रकाश करते है, कहीं सूर्य से प्रकाश करते हैं । अग्नि को अग्नि किस के द्वारा बनाओगे । अग्नि सो स्वयं अग्नि है । लकडी को जलाने के लिए अग्नि जलानी पडती है । जिस को पवित्र होने के लिए किसी दूसरे की अपेक्षा है । तुम्हारे शरीर को पवित्र करने के लिए आत्मा चाहिए । आत्मा को पवित्र होने के लिए शरीर की जरूरत नही । आत्मा नही है तो कोई छूएगा नही । वह आत्मा दिव्य है । वह अभी निकला नहीं उस से पहले ही शरीर की शक्ल बदल जाती है । वह अभीं जाने के लिए दरवाजे खोल रहा हैं विष्णु पद मे डाल देते ह । इसलिए मंत्र आत्मा को दिव्य शब्द से कह रहा है । हे सोम्य यह दिव्य है । इस को दिव्य होने के लिए किसी दूसरे पदार्थ की आवश्यक नहीं ।

यह अचिन्त्य रूप है । अचिन्त्य कहने का तात्पर्य है इस का चिन्तन नही किया जा सकता । हम लोगों की आदत पड गई है किसी शब्द अथवा किसी रूप के द्वारा किसी वस्तु को देख कर मानना । जहाँ शब्द नहीं । जहाँ कोई आकार नही वहाँ हमारी बुद्धि मन्द (dull) हो जाती है। बहुत से तर्क करते है ईश्वर कहाँ है दिखाओ तब मानेगें । तो देखे जैसे डाक्टर गोली देता है खाने के लिए यदि रोगी (patient) कहे कि पहले पीडा को दूर करने की शक्ति दिखाओ तब मैं खाऊंगा। चक्की (tab) तोड़ने पर भी वह शक्ति दीखेगी नही। दीखेगी नहीं तो क्या है भी नही। सारी दुनियाँ को आंख से देखने की इच्छा, यह पशु आंख है । पशु आंख से देखता है तो मान लेता है क्योंकि उस के पास इतनी सुन्दर बुद्धि नही है । यद्यपि पशु भीं बुद्धि से बिचार करता है । सारी दुनियाँ को केवल आंख से देखने की इच्छा मत करो। अगर उस चक्की (tab) को तोड कर देखोगे तो कुछ नही मिलेगा। डाक्टर नहीं कहेगा कि खाकर देखो । अपने आप तुम को मालूम पड जाएगा ।

अन्दर पेट भी एक मशीन है । जो इस शक्ति को प्रकट कर देती है ।

इसी तरह यहाँ श्रुति कहती है 'दृश्यते त्वग्रया बुद्धया सूक्ष्मयासूक्ष्मदर्शिभि' जो सूक्ष्मदर्शी हैं तत्त्वदर्शी ब्रह्मवेत्ता सूक्ष्म बुद्धि से इस को अनुभव करता है इसलिए कहा 'बृहच्च दिव्यं अचिन्त्यरूपं' वह किसी शब्द या किसी आकार से चिन्त्य नहीं है। क्यों ? सारे शब्द उसी में हैं , सारे आकार उसी में हैं तो किस शब्द और किस आकार से उस को पकडोगे। उस परमात्मा का कौन सा आकार पकड़ोगे। जैसे हम सब यहाँ बैठे है। शरीर की दृष्टि से आकार जुदा होने पर भी अन्दर से जो तत्त्व है वो एक है। सब को आत्मा चाहिए जीने के लिए। इसी तरह यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड है भिन्न आकार होने पर भी सारे आकार उसी के है। किसी एक आकार मे उस को पकड़ने की इच्छा करना अपनी अल्पज्ञता का परिचय देना है। हम अज्ञानी हैं यह बतलाना है। जैसे गवर्नमैंट अपने रंगरुटो को चांदमारी सिखाती है।सिपाहीचांदमारी(shooting) करता है निशाना(target)हाथ को पक्का करने के लिए लकडी का पट्टा हैं,उस मे लाल काली रेखा है।अभ्यास करते२ वही आंख पर पट्टी बांध कर निशाना साध लेता है। इतना कुशल हो जाता है वह सिपाही। राष्ट्र के लिए लड़ना भी पडता है। घर मे रहते है तो कभी पत्नी से भी टकराना पड़ता है। गवर्नमैंट जो करोड़ों रुपये खर्च करती है युद्ध के समय सिपाही की एक गोली ही करोड़ों रुपये की हो जाती है। यद्यपि उस लकड़ी के पट्टे पर गोली मारना कोई लक्ष्य नहीं है। सिपाही को ट्रेण्ड करना लक्ष्य है। इसी प्रकार हमारे यहाँ जो मन्दिर है उन मे ईश्वर की मूर्तियाँ जो रखी जाती है, वह मूर्ति लकड़ी की या पत्थर की, सोने या चांदी की कितनी भी सुन्दर हो वह तुम्हारे से सुन्दर नहीं हो सकती। तुम साक्षात् चेतन हो। वह मूर्ति तो तुम्हारे मन की स्थिरता के लिए रखी जाती। वह तो तुम्हारी श्रद्धा का भगवान है।

जब मन स्थिर हो जाएगा तो तुम समझ जाओगे कि क्या है ? तुम अन्तरमुखी हो जाओगे। मन की चंचलता कम हो जाएगी। यह मन को शान्त करने उपाय् है इनका अभिप्राय यह नही कि यही भगवान है। यहाँ मन को स्थिर करना लक्ष्य(target)है। भगवान का ध्यान करो कि वह परिपूर्ण है।विवेक शील परमात्मा की सर्व सत्ता को स्वीकार करे। जो मनुष्य लोगों में ही लिप्त

रहता है उस के लिए परमात्मा दूर है। वह कहता है मेरा क्या है ? कभी २ गुस्से मे आकर घर में ही कह देता है 'हमरो के छ्या' मेरा क्या है ? मेरा क्या है ? यह तो सोचा किन्तु मैं क्या हूं यह कभी सोचा नही। पहले यह तो सोचो कि तुम क्या हो ? हम का कुछ विचार ही नहीं हमारा क्या है ? यह बताओ। इसलिए जो आवश्यक है वह उचित मात्रा मे लो मोह की वृद्धि मत करो। आसक्ति मे मत बंधो। आसक्ति बढ गई तो तुम छोड नही सकोगे। पकड भी नहीं सकोगे। पकडने मे भी शोक छोडने मे भी शोक। यह बताओ शरीर ने तुम को पकडा है कि तुम ने शरीर को पकडा है। चलो आज यही फैसला कर लो। जब तक तुम्हारा कर्म भोग है तभी तक यह शरीर तुम्हारे पास है। लोग कहते है चले गये। बात करते २ चले गये। चले नही जाएँगे तो क्या बैंठे रहेगें तुम्हारे पास ? उस का समय खत्म हो जाएगा तो जाएगा ही। सत्य की खोज करो केवल वासना को नही बढाओ। केवल वासना के बढने पर वासना के पदार्थ मिलने पर भी तुम पकड नही पाओगे।

एक बडा तपस्वी था। पश्चाग्नि तपता था। दिल्ली जैसा गर्म देश नेपाल जैसा नही हिमालय की गोद मे बैंठे हो। अभी भी स्वैटर पहन रखे हैं। वह पश्चाग्नि तप रहा है। आगे अग्नि, पीछे अग्नि, ऊपर अग्नि सामने अग्नि पांच तरफ से अग्नि तप रहा है। आश्रम मे एक देवदूत आ गया। उठ कर उस का स्वागत करता है। कोई चमत्कारी पुरुष आता है तो उस का स्वागत करो। उस की बात प्रेम से सुनो। देवदूत जब जाने लगा तो बोला हे तपस्वी हम बडे प्रसन्न है। हम विष्णुदूत है। बैकुण्ठ जा रहे है। कोई समाचार देना हो तो दो। बडा प्रसन्न हुआ यह। बोला हम १२ वर्ष से तप कर रहे है किन्तु फल तो अभी कुछ हुआ नही। आप भगवान से हमारी सिफारिश करना कि कब दर्शन देगें। कुछ समय के बाद वही देवदूत आया और बोला हे तपस्वी, चलो हमारे साथ। तुम को बैकुण्ठ ले चलते है। उस समय जम्बू जेट नहीं था। संकल्प जैट था संकल्प मात्र से बैकुण्ठ जा पहुँचे। क्या देखता है कि भगवान का दरबार लगा है। दरबार मे पहुँच गये। वहा कतार (Que) लगा हुआ है। भगवान बांटते जा रहे है। जो जो मांगता है वह दे रहे है। कोई कहता है लक्ष्मी चाहिए। कोई लडका मांगता है। वहाँ परिवार नियोजन (family planning) नही था। सब अपनी २ इच्छा से मांग रहे है

देवदूत ने कहा तुम को कतार(Que)मे खडे होने की जरूरत नहीं।जिस को विष्णु भगवान से स्वयं याद किया हो वह क्यू मे क्यों खडा हो। बैठा रहा। सब वट गया। सब अपनी २ इच्छा के अनुसार ले गये। सब चले गये तो विष्णुदूत इस को विष्णु भगवान के पास ले गया। वहां देखा तो विष्णु भगवान खाली हाथ बैठे है। कुछ भी नहीं बचा। यह घबरा गया। भगवान ने चन्दन का टीका लगा दिया। माला पहना दी और कहा जाओ भगत। इस का मुंह ऐसे बिगडा जैसे कुनीन की गोली खालिया हो। इस को बाहर निकाल कर दरवाजा बन्द कर दिया। विष्णुदूत गायब हो गया। यहे दरवाजे पर ही माथा टेक कर बैठ गया। एक दिन, दो दिन, वही बैठा रहा। भगवान ने सोचा कि इस को दिया तो बहुत है। नारद को याद किया भगवान ने। जब कोई समस्या आती है तो भगवान नारद को याद करते है। नारद आ गये। भगवान ने कहा इस भक्त को समझाओ। माला दिया। माला क्या है सुदर्शन चक्र। जरा घुमाओ तो सही इस को। सारे पाप ताप काट डालती है। और इस को मैंने चन्दन का टीका किया। संसार चक्र से बाहर निकालने के लिए वैराग्य का प्रतीक चन्दन। माथे मे तिलक लगाने का तात्पर्य है ज्ञान को जाग्रत करना।

यह ज्ञान का केन्द्र है। नारद ने कहा अच्छा मै समझाता हूँ इस को। नारद ने जा कर तपस्वी को हाथ जोडे। यह गुस्से से था ही। नारद को देख कर बोला। एक तो धोखा दे ही गया अब तुम क्या कहना चाहते हो। नारद ने कहा है तपस्वी तुम को बहुत कुछ दे दिया है भगवान ने। तुम समझे नही। वह बोला क्या दिया है? दो पैसे की माला मिली और जरा चन्दन। वह भी उड गया अपने आप। नारद बोले, शान्त हो जाओ हम तुम को दिखाते है। तुम क्रोध नहीं करो। शान्त हो कर ध्यान लगा कर बैठो। बैठ गया। नारद ने संकल्प से सुन्दर महल खडा किया। सोने की महल सोने कीं दीवारें, सोने की दरवाजे। चमचमाता हुआ महल। उस के दरवाजे पर तीन पहलवान खडे है। थोडी देर मे क्या देखता है, जैसे गवर्नमैंट तस्करों को नहीं पकडती जो सोना ले कर आते है। कोई सोने का गट्ठर उठा कर ला रहा है। पहलवान ने गट्ठर तो इधर फैंका और उस को उठा कर कूएं मे फेंक दिया। दूसरा एक बेटे को इधर पकडा हुआ एक को उधर। कितने पुत्र पौत्र लेकर आ रहा है। पुत्र पौत्रों को छुडा कर उधर

फेंका और बुढे को कूए मे। कोई भेंड़ बकरियाँ लेकर आ रहा है उस को भी उठा कर कूएँ मे फेंक दिया। घबरा कर इस ने आंख खोली। नारद ने पूछा क्या देखा? बोला यह महल बड़ा विचित्र है। पहलवान सब को उठा २ कर कूएँ मे फेंकते जा रहे है। सब मर गये।

नारद ने समझाया कि जो भगवान के सामने कतार (Que) लगा कर खडे थे न वही है यह सब। जिस ने धन मांगा था। आयु खत्म हो गई तो कहां जाएगा? मृत्यु के कूएँ मे। धन हीरे जवाहरात करोड़ो रुपये तो रह गये यहीं। मनुष्य की आयु कितनी है? पचास तक पहुंचते २ तो मामला बिगड जाता है। सत्तर तक खांसी खुर्री तंग करता है। ब्लाटिङ्ग पेपर जैसा हाल हो जाता हैं। बहुत से बेटा बेटी भी हो गये तो क्या? बहुत से पशु भी हुए तो क्या? आयु तो इतनी है है। तुम को ऐंसा जीवन चाहिए क्या? बताओ। उस ने कहा न। तो बोलो भगवान ने तुम को इस माया चक्र से बाहर निकाल दिया। विरक्त बना दिया। ऐंसे जीवन मे केवल आयु नाश करने के अतिरिक्त अन्त मे कुछ भी नही मिलेगा। एक बात यह भी समझो, चाहिए तो परिवार भी, धन भी और पशु आदि भी। पर ज्ञान के बिना क्या चाहिए? एक व्यक्ति अस्पताल मे बेहोश पड़ा है। बताओ उस को क्या चाहिए? बेहोश को घर में कोई नही रखेगा। किता बडा परिवार भी हो बेटा बेटी भी हो पर बेहोश को घर मे कोई नहीं रखेगा मेरे तेरे का ज्ञान भी जीवन में आवश्यक है। जब मेरे तेरे को ठींक से समझ जाओगे तो 'मैं' कौन हूँ यह समझ मे आएगा। इसलिए विवेकशील ज्ञान को ठीक रखें।

नारद ने तपस्वीं को समझाया कि यह मोक्ष महल था। बडे २ पहलवान जो थे वह उन लोगों को, जो काम क्रोध लोभ मोह आदि विकारों से भरे है, इस महल मे प्रवेश नही करने देते। जो मुमुक्षु तत्त्व विचारशील है वही इस मोक्ष महल में प्रवेश करेगा। जो संसार की वासना वाले है उन को बाहर फेंक देते हैं। विवेक और वैराग्य को अपना साथी बनाओ। यह अङ्गरक्षक (body guards) है। विवेक होगा तो असत्य में नही जाओगे। वैराग्य होगा तो तुम किसी मे मोह नही करोगे। तुम्हारा इन असत्य पदार्थो मे मोह था वह नष्ट कर दिया। मोक्ष की ओर चलनेवाले मुमुक्षुके यह अङ्गरक्षक (bodyguard) है। जैसे लोकमे जब बडे लोग कही जाते हैतो उनको सरकार अङ्गरक्षक [bodygurds] देती है। इसीप्रकार यह

विवेक और वैराग्य है । यह होते है तो इन के पीछे सब साधन आते जाते है : यह दो ठीक होना चाहिए । संसार से धीरे २ उपरामता को प्राप्त करो । भगवान कृष्ण कहते हैं हे अर्जुन 'बुद्धया घृतिगृहीतया' धैर्य से युक्त बुद्धि से वैराग्य को धारण करो।एक वैराग्य होता है तित्तरीय वैराग्य।श्मशानिया वैराग्य।श्मशान मे किसी को लेकर गये तो कहते है अरे यह संसार कुछ नही । ज्यों ही लौट कर घर मे आए तो फिर वैसे के वैसे। राग भी करो वैराग्य भी करो । सत्य को ठीक से समझो ।

जो मन से सत्य को ठीक समझने के लिए तैयार नही वह मन का कृपण । एक हाथ का कृपण होता है । हाथ का कृपण आज नही तो कल कुछ करने को तैयार हो सकता है, किन्तु मन का कृपण जो होगा वह तो इस जन्म मे भी और दूसरे जन्म मे कृपण होगा । यह बडा दोष है ।

अर्जुन कहता है " कार्पण्यदोषोपहत स्वभावा " हे भगवन् ? मैं बडा कृपण हो गया हूँ । मन का कृपण । "पृच्छामि त्वां धर्मसंमूढचेता:" मेरा मन कृपण हो गया है । मैं धर्म में मूढ हो गया हूं । मेरा चित्त मोहित हो गया है । "यच्छ्रेया स्यान् निश्चितं ब्रूहि तन्में"जिस मे मेरा श्रेय हो वह मुझ को समझाओ। "शिष्यस्तेऽहं शाधिमांत्वां प्रपन्नम्" अभी तक तो यार थे । लंगोटिया यार कहते थे पहले । आज कल तो पैंट यार होते है । अब कहता है हे भगवन् हम आप की शरण मे है । आप का शिष्य हुं । आप मेरा अनुशासन करो । धीरे २ मुमुक्षु सत्य को पकडे । हृदय मे प्रवेश करे । हृदय मे कैसे प्रवेश करना है इस के लिए हम कल से ब्राह्मी वृत्ति का व्याखयान करने वाले है । उस के लिए मधु भूमि मधुमती मधु प्रतीका और विशेष भुमि का व्याखयान करेगें ।

अप्रैल तो आज जाने का कार्य (shake hand) कर रहा है । कल एक तारीख से सांयकाल भी प्रवचन करने की सोच रहे है । गीता के छठे अध्याय का योग प्रधान विचार है । कल सायंकाल पांच बजे से अन्य लोग लाभ उठाएँगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१-५-७८

प्रवचन सं०-२३

"ॐ अथ य एष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात्समुत्थाय परं ज्योतिरुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यत एष आत्मेति होवा चैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति ।।"

(छान्दो. ८-३-४)

विचार चल रहा है कि इस आत्मा मे कैसे प्रवेश करें । सत्सङ्ग, शास्त्र और गुरु के द्वारा मुमुक्षु को जो बोध प्राप्त होता है, उस बोध के प्रकाश से इस आत्मा मे प्रवेश किया जा सकता है । आत्मा मे प्रवेश माने आत्म स्वरूप मे प्रवेश । जैसे बहुत सुन्दर बंगला बनाया पर दरवाजा रखा ही नही तो अ:दर कैसे प्रवेश करोगे । अन्दर प्रवेश करने के लिए एक दरवाजा बनाओगे तभी हम उस को घर कहेंगे और उस मे प्रवेश कर सकेंगे । इसी प्रकार इस आत्मा स्वरूप मे प्रवेश करना है तो अविद्या को पार करना है । अविद्या भगवती ने दो काम किए हैं । एक तो आवरण किया माने इस आत्मा के स्वरूप को ढक दिया और दूसरा विक्षेप माने उल्टा कर के दिखाया । इस बात को पहले भी समझा कर आए हैं । संक्षेप मे समझो जैसे रस्सी स्वरूप का अज्ञान जब हुआ तो रस्सी स्वरूप आवृत हो गया और सर्प का भान हुआ । जब रस्सी का असली स्वरूप अज्ञान से ... गया तब सर्प का भान हुआ । यह रस्सी स्वरूप मे सर्प का भान मिथ्या है ।

हम लोगों को जीवन मे कभी भय आता है, कभी चिन्ता आती है, कभी क्रोध आता है, कभी शोक आता है । इस को विक्षेप कहते है । पर यह विक्षेप नहीं, यह विक्षेप के कार्य है । विक्षेप क्या है ? तुम्हारा जो असली स्वरूप है, वह,

चित् आनन्द स्वरूप, पहले इस को अविद्या ने ढक दिया और मन के करंट से उस मे जींव भाव खडा हो गया। 'अहं, अहं' यह विक्षेप है। जीव भाव मे आकर अपने को जीव समझता है। मेरा ब्रह्म स्वरूप है, मैं अमृत स्वरूप हूं, यह नही समझता। अपने अमृतत्व को विस्मृत कर दिया तभी न मृत्यु के भय से डरता है। अपने अमृतत्व को कैसे स्मृत करे, इस के लिये ब्रह्माकार वृत्ति बनानी पडेगी।

इस लोक मे जैसे कोई धनी मानी माता पिता है। मान लो एक ही लड़कीं है। लड़की का विवाह करना है तो गहने बनवाने पडेगें। मां ने सोचा सोने की बंगडी मे हीरे का नग लगवाऊँगी। भगवान ने दिया है तो हम क्यों नहीं देगे। उस हीरे को लेने बाजार जाना है। अपने को हीरे का ज्ञान है नही कि असली हीरे का क्या लक्षण हैं तो किसी बुद्धिमान को साथ लेकर जाते है। क्योंकि गल्ती हो गई तो हजारों का मामला ऊपर नीचे हो जाएगा। एक पत्थर है छोटा सा। हीरे मे ज्यादा नुक्सान भी नही होता तुम्हारा। पांच दस हजार का हेर फेर हो सकता है। दुकानदार तुम को ज्यादा बुद्धू नही बना सकता इतना तो वह करेगा। वहाँ इतनी सावधानी वर्तते है। वह तो बाजार मे मिलने वाला हीरा है किन्तु तुम्हारी यह जो अन्तरात्मा है यह हीरों का भी हीरा है। संसार की किसी मार्किट मे मिलने वाला नही। इस शरीर को तो सुन्दर बाक्स समझो और इस के अन्दर यह किमती हीरा तुम्हारी आत्मा है। यह अमूल्य हीरा है। कितने हजार मे लाओगे यह हीरा ? मान लो कभी यह बाक्स खाली हो गया तो चलो कही से खरीद ले। तो कहाँ मिलेगा यह ? यह हीरा हम को मिला हुआ है और हम उस को समझने के लिए तैयार नही। यह अज्ञान नही तो क्या है ? यही बडा अज्ञान है। इसलिए मुमुक्षु इस को जाने।

मंत्र कहता है 'स वा एष आत्मा हृदि' तुम को स्थान बता दिया। श्रुति ने स्थान बताया हृदि। हृ और द। दो अक्षर। हृदि। अयं हृदयं। दो अक्षर साथ एक और मिलाओ। तुम्हारे जीवन मे दो क्रियाएँ हो रही हैं। प्राण क्या है ? प्राण बाहर से जीवन को अन्दर खींच रहा है। इस क्रिया को 'हृ' कहते हैं। जीवन जब अन्दर गया तो हमने उसको पचा लिया। उसके फालतू (wastage) अंश

वाहर फेंका। अन्दर से बाहर फेंकने का नाम 'द' हैं ह और द। एक बात समझो। काठमाण्डू मे रोड तो फर्स्ट क्लास बनी है पर कहाँ तक तुम को जाना है यह निश्चय तो तुम को ही करना है या रोड निश्चय करेगा। इसी तरह यह क्रिया है बाहर से अन्दर जाने की। यह कहाँ तक जाएगी? नाक से हवा अन्दर गई या मुँह से हवा अन्दर गई। अगर कोई रोकने वाला नही होगा तो क्या होगा? बीच मे रुकावट भी चाहिए। यह रुकावट करने वाला यं। यमयिता। यं शब्द का अर्थ है नियन्त्रण करने वाला। कंट्रोल करने वाला। यह नियंत्रण करने वाला जो होगा वह जड नहीं होगा। चेतन होगा। वह चेतन आत्मा है तुम्हारी।

हृदि अयं माने हृदयं। इस प्रकार श्रुति के द्वारा जब आत्मा के स्वरूप का निश्चय सत् चित् आनन्द रूप से हुआ तो वृत्ति को ब्रह्माकार बनाओ। 'ब्रह्मैवाहमस्मि आत्मैवाहमस्मि'। इसलिए गुरु महावाक्य का उपदेश करता है 'ब्रह्मासि सोम्य' इस लोक मे मां प्यार से देखती है तो बेटा भी प्यार से देखता है। एक डेढ फुट का बच्चा होने पर भी। जब वह क्रोध से देखती है तो मुँह फेर कर रोने लगता है। हाथ फेरती है। मनाती है। प्यार से बोलोगे तो प्यार से बोलेगा। जीवन मे जितने भी साथी है सब को प्यार चाहिए। पहले तुम्हारे अन्दर प्यार होना चाहिए। इसी तरह तुम्हारी अन्तरात्मा भी तुम से क्या चाहेगी। इस आत्मा को ब्रह्म कर के जानना है। आत्मा को जान तो सब रहे है पर जीव रूप से जान रहे है। मैं जीव हुँ। मैं संसारी हुँ। मैं सुखी हुं। मैं दुखी हुं। नाना प्रकार के अहंकार का गट्ठर बांध कर जा रहा है। गुरु कहता है कि बेटा 'ब्रह्मासि' तू ब्रह्म है। बहुत से लोग तो घबरा जाते है हाय मैं ब्रह्म? हम तो संसारी है, मूर्ख है, अज्ञानी है। अब तो ब्रह्म कहना तो अहंकार करना है। वीसों तरह के अहंकार के गट्ठर बांध कर चल रहा है, मैं कर्त्ता हूँ, मैं भोक्ता हूँ, मैं संसारी हूं, गधे की तरह वोझ लाद कर चला जा रहा है। इन नाना प्रकार के अहंकारो को हटाने के लिए 'मैं ब्रह्म हूँ' यह पकड़ना पडेगा एक अहंकार पकडना पडेगा। कांटा गढ गया तो क्या उंगली फेरोगे? उस कांटे को निकालने के लिए दूसरा कांटा ही लेना पडेगा।

मन मे जब आनन्द आता है तब तुम प्यार से बोलते हो। जैसे सामने

बेटे को, पति को, पत्नि को देखते हो। तदाकार वृत्ति होने पर तुम्हारे मन मे आनन्द आया तब तुम प्यार से बोलते हो। आनन्द नहीं आता तो बोलोगे ही नही। वो बोलेगी भी तो कहोगे चुप हो अभी। यह इस को पता ही नहीं। एक 'अहं ब्रह्मास्मि' इस अहंकार से सारे अहंकारों को खत्म करना है।यह ज्ञान की जो ऊंची भूमि है, तुम्हारी ब्रह्माकार वृत्ति जब बन जाएगी, जब इस वृत्ति में स्थिरता आएगी, तब आनन्द आएगा। लोक जीवन मे पति पत्नी, बेटा बेटी जो भी प्रिय सम्बन्ध है, बलवान विषयराग है। राग के बल से वृत्ति रूक जाती है। किन्तु यहाँ पर इस ब्रह्माकार वृत्ति में 'ब्रह्मैवाहमस्मि' राग नही है।सनातन धर्मावलम्बी आस्तिक लोग भगवान कृष्ण को अवतार मानते है। अर्जुन उनके साथ मे रहता है। बहुत प्यारा भी है। उसके जैसा कोई प्यारा नहीं। उसी के साथ बैठता उठता है। जैसे बढिया फोटो खींच लो और उसको सदा अपने साथ ही रखो। फोटो की तरह कृष्ण के साथ घूमता है किन्तु साथ रहने पर भी समझा कुछ नही। कुरुक्षेत्र के मैदान में रोने लगा। जब रोने लगा तो भगवान ने समझा कि यह तो कोरे का कोरा है। क्योंकि जब तक आत्मा का बोध नहीं होगा तब तक शोक मोह को कोई दूर नही कर सकता।

बडे २ जादूगर है इस संसार में किन्तु हाथ फेर कर या फूंक मार कर कोई शोक को दूर नहीं कर सकता। शोक मोह तो ज्ञान से ही नष्ट होगा। ज्ञान दाता गुरु की जो शास्त्र मे बडी महिमा का वर्णन है यह इसलिए है कि इनके ज्ञान से हमारी आत्मा मोक्ष मे चली जाएगी। माया के इस चक्कर से बाहर चली जाएगी। इनकीं वाणी मे इतनी ताकत है कि हमारे अज्ञान को दूर कर देगी। भगवान की जिस पर बडी कृपा होती है उनको ज्ञान मिलता है। धन तो मूर्ख को भी मिल जाता है। धन मिल जाना कोई भाग्य का लक्षण नहीं है। आंख बन्द होने पर तुम्हारा क्या है ? यह धन कब तक तुम्हारा रहेगा। आंख बन्द हो गई। कोई कोने से बोले भी कि बेटा यह बंगला हम नहीं छोडेगें। तो बेटा क्या बोलेगा पिता भूत हो गया। कितना ही बडा ऐश्वर्य हो तुम्हारा। जब तक आंख खुलीं है तुम्हारा है। आंख बन्द हुई तो तुम्हारा कुछ नही। भाग्य का लक्षण है ज्ञान मिले। भगवान ज्ञान दे हमको, भले ही खाने को कम दे। ऋषि लोगों को हम क्यों मानते है ? उन्होने आत्मा को जानने के लिए प्रयत्न किए। वह खाने के

ऊपर इतना लम्बी हाथ नहीं करते थे।

अर्जुन को भगवान कृष्ण ने आत्म ज्ञान दिया आत्मा का उपदेश दिया। अर्जुन का जो ज्ञान था उसके लिए कहा कि यह तो मूर्खता है। 'अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे' बाते तो ज्ञानियों जैसी करता है किन्तु शोक की मूर्खो की तरह कर रहा है। जो पंडित होते है, मर्मदर्शी, जिसके लिए गीता मे भगवान कहते है 'यस्य सर्वे समारम्भा:' जगत के भले के लिए वे कर्म तो करते है पर उन को अपना कोई स्वार्थ नहीं होता। जीवों का भला हो। वेद का मंत्र है आप सब सुनते हैं 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया:।

सर्वे पश्यन्तु भद्राणि मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत् ।।

यह मंत्र द्रष्टा क्या कहता हैं कि सब का भला हो। अपने बच्चो का भला तो बाघ(tiger)भी चाहता है।क्रूर हैं पर बड़ा अच्छा पिता है।प्यारतो शेर भी करता है इस मनुष्य के हृदय मे तो वह सत्य प्रगट होना चाहिए कि इसको सब जगह वो ही मालूम पडे। हे भगवन यह सब तुम्हारे बच्चे सुखी हों केवल शरीर का सुख नहीं। यह सब भद्र देखें माने आत्मा को देखें। आत्मा को देखें क्या ? आत्म ज्ञान प्राप्त करें। सब कल्याणकारी दर्शन करें। संसार का दुःख इनको न हो। कितनी दया है। कितनी क्षमा है। ज्ञानवान ऐसा क्षमाशील होता है। प्राणियों मे कोई गल्ती करने वाला भी आएगा। ठीक है गल्ती करने वाले ने तो गल्ती कीं पर ज्ञानवान का कर्त्तव्य है उसको क्षमा करना। क्षमा करके समझाना यह भी एक पुण्य है किन्तु क्षमा करना और समझाना नहीं यह एक अपराध हो जाता है। नयी २ बहु आई। गल्ती कर दी कोई। सासु ने प्यार से क्षमा कर दिया पर समझाया नहीं। बोली कुछ नही। प्यार से समझा भी देती तो बहु वह गल्ती फिर नहीं करती। उसको ज्ञान नही कराया। थोडें दिन बाद बहु ने वही गल्ती फिर कर दी। अब सासु क्रोध करती है। तो बताओ वो पहले दिन की क्षमा का क्या अर्थ हुआ। कुछ भी लाभ नही हुआ। ज्ञान देना सबसे श्रेष्ठ है। धर्म है।

मुमुक्षु अपनी आत्मा मे मन को लगावे। सत् चित् आनन्द स्वरूप तुम्हारी आत्मा है इस का ध्यान करो। जब ध्यान मे बैठो और मन आत्मा के

करंट मे आते ही आनन्द आवे तो समझो नम्बर मिल रहा है । जैसे फोन मिलाते हो कि नहीं।नम्बर मिलते हीघण्टी (ring)होने लगती हैतो क्या समझा कि जहाँहम बात करना चाहते है वहाँघण्टी (ring)होनेलगी माने नम्बर लगगया है।ध्यान करना फोन का नम्बर मिलाना है।आनन्द आना माने नम्बर मिल जाना।घण्टी (ring)हो गई अब वह ऐ (hallo) करने ही वाला है।उस समय श्वास को थोडा रोको । यह मधु भूमि है । इस मधु भूमि मे धीरे २ मुमुक्षु चले ।

जैसे २ मधु भूमि मे मन लगता है आनन्द आता है । धीरे २ शरीर की विस्मृति होने लगती है । मन की स्थिति ध्येयाकार होने लगती है । इसके लिए दृष्टान्त समझो निद्रा मे जाने के लिए बिस्तर मे लेट गये । शरीर को ढीला छोडना पडता है । ढीला छोड़ दिया । मन धीरे से शरीर को छोड़ कर स्वप्न मे चला गया । बाम्बे मैरिन ड्राईव पहुंच गया । कारों की माला बनी हुई है, पंक्ति लगी हुई है । किनारे में खड़ा२देख रहा है कारे बडी वेग (speed)से आ रही है। स्थूल शरीर बिस्तर मे सोया पडा है और यह सूक्ष्म शरीर से मैरिन ड्राईव पहुंच गया । वहाँ विकल्प चल रहा है । यह अच्छे बुरे का विकल्प देख रहा है । तेजी से आने वाली कार का एक्सीडेंट हो गया । हा हा कर के चिल्लाया । मां ने पूछा क्या हुआ ? कहता है एक्सीडैंट । कहाँ ? तू तो यहाँ बिस्तर मे सोया पडा है । तो इसी प्रकार ध्यान मे जब तुम स्थूल शरीर के अहंकार से परे जाओगे, ब्रह्माकार वृत्ति मे मन रम जाएगा । मधु भूमि है यह ।

इस मे ध्याता ध्यान ध्येय त्रिपुटी है । मैं ध्यान कर रहा हूं । मेरा ध्येय ब्रह्म है । ध्येयाकार वृत्ति ध्यान है । विकल्प बना हुआ है । यही सविकल्प समाधि है । त्रिपुटी का नाम विकल्प है । एस स्थिति मे उसको महान आनन्द भी आता है । एक छोटे से मनुष्य को आप प्यार करते हो तो तुम को आनन्द आता है तो सोचो महान ब्रह्म से जब वृत्ति टकराएगी तो महान आनन्द नही आएगा ? बडा विलक्षण आनन्द आएगा ।

इसके लिए कहा है 'नास्वायेत् सुखं तत्र, निःसङ्गः प्रज्ञया भवेत्। निश्चलं गौडपादाचार्य कहते है 'नास्वादत् सुखं तत्र' इस ब्रह्माकार वृत्ति के

आनन्द का मुमुक्षु रसास्वादन नहीं करे। यह जो अन्तःकरण की वृत्ति बनी यह गुरु ने जो उपदेश किया है 'ब्रह्मासि सोम्य' उस महावाक्य के द्वारा यह वृत्ति उत्पन्न हुई है। यह वृत्ति अन्तःकरण से उत्पन्न हुई है और यह अन्तःकरण माया का कार्य है इसलिए यह वृत्ति भी माया रूप ही है। पर बडी विशुद्ध वृत्ति। बडी विशुद्ध माने बड़े पापों का नाश कर के महान पुण्य उत्पन्न करने वाली है। मन को एकाग्र करना ही महान पुण्य है। मनको चंचल करना ही पाप है। अपने अनुभव के लिए समझो बडे २ धनी मानी है। बडे २ पुण्य के काम करते है। लोकहित के काम करते है पर उनको किसी ने पुण्यात्मा नही कहा। संत को कहते है यह पुण्यात्मा है।

"साधूनां दर्शनं पुण्यं तीर्थभूताहि साधुना।
कालेन फलति तीर्थः, सद्य साधु समागमः।।"

तीर्थ मे जो पुण्य होगा किसी काल मे होगा। पर यह संत जो है यह चलते फिरते तीर्थ है इनके दर्शनों से तत्काल ही पुण्य होगा। मन की मैल को हटा दिया। ऐसा पाउडर छिड़का कि ज्ञान हो गया। जमान्तर के पाप कट गये। आज कल वो पाऊडर चला है न, कि जरा छिड़का और जासुस मर गये। इसलिए इन को पुण्यात्मा कहा। यह ध्यान करते है ध्येयाकार ब्राह्मी वृत्ति मे इनको महान पुण्य होता है। इस महान पुण्य के द्वारा आनन्द आता है। किन्तु इस आनन्द का रसास्वादन नही करना। यह भी मायिक है। यह विशुद्ध ब्रह्मानन्द नही। विशुद्ध आत्मानन्द नही।

आचार्य कहते है कि वृत्ति के द्वारा तुम ने ब्रह्मानन्द को पकड़ा, आत्मा नन्द को पकड़ा, यह मन की वृत्ति है और कभी मन की वृत्ति चंचल हो गई तो ध्यान मे बैठे, ध्यान जमा नही। मन चंचल हो गया। तो शोक हो गया। योग भ्रष्ट हो गया। इसीलिए कहा 'नास्वादयेत् सुखं तत्र निःङ्ग प्रज्ञया भवेत्। निश्चल निश्चरच्चित्त एकीकुर्यात् प्रयत्नतः।। संसार के सुखों मे मुमुक्षु वैराग्य करे। इस ब्रह्माकार वृत्ति के सुख का स्वाद भी नहीं लेना। यह सुख भी मुझे नही चाहिए। जैसे एक छोटा बच्चा है। मां ने उसको कुछ दिया वह कहता है मुझे नही चाहिए। तो मां उससे बडी चीज देती है। मुमुक्षु भी जो ज्ञानवान है जब वह भोगों से

वैराग्य धारण करेगा तो भगवान कुछ देगा कि नही इसको ? यह पांच फुट की मम्मी है यह जब अपने बच्चे को खुश करने के लिए उसे नई २ चीजें लाकर देती है तो क्या भगवान मे उतनी अक्ल भी नही है ? भगवान तब तुमको ब्रह्मानन्द देगा। आचार्य कहते है कि मुमुक्षु इसलिए यहाँ इस मधु भूमि मे रसास्वादन नही करे। निश्चलंनिश्चरच्चित्तं' कोई आदमी तो धीरे २ चलते है कि उनके चलने की अवाज भी दुसरे को सुनाई नही पडती। वो हमको नही देखे और हम उसको पकड ले।

'निश्चलं निश्चरच्चित्तं' ब्रह्माकार वृत्ति मे मुमुक्षु इसी प्रकार शान्ति मन से चले। जैसे २ मन की गति शान्त होती जाएगी वैसे २ इसमे महान आनन्द उत्पन्न होगा। और तब 'एकी कुर्यात् प्रयत्नतः' इस मनको आत्मा मे लीन कर दो। उपदिषद का मंत्र है 'प्रणवो धनुःशरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते। अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत् ।।' पुराने जमाने का दृष्टान्त है, मंत्र कहता है कि बेटा प्रणव माने ॐकार को पकडो। किसी शब्द को तो पकड कर चलेगा। ब्रह्म लोक भी जाना चाहत है तो किसी बुद्धिमान आचार्य के द्वारा समझो। जीवात्मा को शर वाण बनाओ, ॐकार को धनुष बनाकर ॐकार के ऊपर इस जीवात्मा रूपी शर को चढाओ। ब्रह्म को लक्ष्य निश्चित करो। जैसे धनुष पर वाण चढा कर छोडते है। मुमुक्षु प्रमाद रहित होकर लक्ष्य का भेदन करे। जैसे इस लोक मे जो शिकार करते है वो निशाना लगाने के लिए एक आंख बन्द कर लेते है। निशाना लगाने के लिए दोनों आंख नही खोलते। दोनों आंख खोलेगा तो अन्तःकरण दोनों आंख से बाहर निकल जाएगा। मन दोनों आंख से बाहर गया तो निशाना कैसे लगेगा। लक्ष्य को पकडेगा नहीं इसलिए एक आंख को बन्द करना पडता है। इसी प्रकार यहाँ समझो। यहाँ तो मुमुक्षु को दोनों आंख बन्द करनी पडेगी क्योंकि यहाँ बाहर तो देखना नही, कोई निशाना बनाना नहीं। यहाँ तो अपने को अपना ही निशाना बनाना है।

अपने अहं भाव को, शरीर भाव के अहंकार को ॐकार रूपी धनुष पर रख कर चित्त के ब्रह्मभाव मे छोड देना है। मंत्र कहता है 'शरवत्तन्मयो भवेत्' तद्रूप हो जाए। इस प्रकार लक्ष्य का अनुसंधान करे। प्रमाद नही करे

अनुसन्धान के लिए पुरुषार्थ करे। अपने अनुभव के लिए समझो जिसका अन्तःकरण सूक्ष्म हो जाता है वो अन्तःकरण लक्ष्य में लीन हो जाता है। जैसे मिस्त्री का टुकडा पानी मे डाल दिया तो पानी मीठा हो जायगा। जाओ हमारी कृपा से तुम मीठे हो जाओ। हमारा तो जो होगा सो होगा। जैसे कोई सिद्ध होता है न, कहता हैं जा ऐसे हो जाएगा इसी तरह अपने 'अहं' को ब्रह्म मे लीन करना है। अपने अहं भाव को जुदा कर के ब्रह्म भाव का ध्यान करना जो है अहंग्रहोपासना है। मधुमति भूमि तक अपने अहं को जुदा रखा हुआ है। किन्तु जब आगे बढेगा तो उस मिस्त्री के टुकडे की तरह पानी मे घुल जाएगा। अपना नाम रूप मिटा देगा। अपना जो अहं भाव है। इस अहं को ब्रह्म मे लीन कर देना है। तब मन निर्विकल्प समाधि मे पहूंच जाएगा। यह मधु प्रतीका भूमि है।

मधुमति भूमि में जाकर व्युत्थान भी तो होगा उठेगा। जगत व्यवहार मे भी जाएगा। बडे २ ऋषि जो ज्ञानी थे उन्होंने जगत व्यवहार भी किया। और तो क्या इस युग मे भी आद्य जगद् गुरु शंकराचार्य हुए, जो अपने समय के महान दार्शनिक थे। आस्तिक समाज तो उन्हे शंकर का अवतार मानता है। उनके दार्शनिक सिद्धान्तो के सामने सिर झुकता है। आज यह शंकराचार्य का दर्शन ही हैं जो विश्व को शान्ति प्रदान कर रहा है। 'एको देवः सर्वभूतेषु गूढः' शंकर के दर्शन ने एकात्मवाद का घोष किया। एक ही देव सम्पूर्ण भूतों मे गूढ हैं। श्रुतियाँ तो शंकर ने नहीं बनाई। श्रुतियाँ तो पहले ही थी किन्तु सब ने अपनी मनमानी जो व्याख्या कर रखी थी उन सबको शंकर ने काट दिया और एकात्मावाद को स्पष्ट किया। वर्षा होती है, प्रपोटक लाखों हो जाते हैं। एक ही पानी है पर प्रपोटक माने बुद्‌बुदे उसमे लाखों हो रहे हैं। इसी तरह उस एक ब्रह्म मे नाना रूप प्रकट हो रहे हैं। इसलिए इसे मिथ्या कहा। तो तुम्हारा शोक मोह नही होगा। लोक जीवन मे व्यवहार अच्छा होगा। कल और आगे समझाने वाले हैं। आधा घंटा सायंकाल भी देंगे। आप लोग लाभ लें।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२-५-८८

प्रवचन सं०-२४

"ॐ अथ य एषात्मा हृदि तस्यैदेव परं ज्योतिरुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यते एषा आत्मेति होवाचैतदमृतंमभयंमेतद्ब्रह्मेति तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति ।"
"तानि ह वाएतानि त्रीण्यक्षराणि सतीयमिति ।।"

(छान्दो.८-३-४।८=३-५)

मंत्र कहता है कि बेटा तुमको जिससे मिलना है वो दूर नहीं है । वो तो तेरी आत्मा है । अर्थात उसके विना तू नही । तू माने जीव । इस आत्मा के बिना यह जीव नही । चेतन अन्तरात्मा का प्रकाश , महान तेज मन मे पडा । यह तेज सहित जो मन है यह जीव हो गया । यह तेज शरीर मे आया । शरीर के अहंकार मे आ गये । हम मनुष्य है, हम पुरुप हैं, हम स्त्री हैं कहते चले जा रहे हैं । माने उस तेज ने मन को पकड़ा तो जीव है, उस तेज ने शरीर को पकड़ा तो हम मनुष्य है । मन से न्यारा वह महान तेज ब्रह्म है । उस ब्रह्म को आत्मा कहते हैं । आत्मा शब्द की व्याख्या पहले भी कर के आए हैं 'आप्नोति ह वै इदं सर्वं स आत्मा' इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को जो व्याप्त करे वो आत्मा जैसे दूध मे मक्खन है । अगर दूध मे मक्खन नही तो दूध क्या ? पानी पी लिया, दूध पी लिया बराबर । दूध का सारा मक्खन है । इसी तरह इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सार यह आत्मा है । शरीर का सार क्या है ? यह चेतन । अगर यह चेतन नही तो कुछ भी नही । इसलिए भगवान गीता मे आत्मा के व्यापक भाव का निर्देश करते है : 'भूतानामस्मि चेतना ।'

मुझको तुम किस रूप मे देखता चाहते हो जिस रूप में भी तू नजर मेरी करेगा, मैं तेरे सामने हूँ । मैं सब भूतों चेतना रूप मे हूँ । 'रसोहमस्मि कौन्तेय'

हे कौन्तेय जल के अन्दर मैं रसात्मा हूँ। रस भाव अगर पानी से हट गया तो पानी मुर्दा हो जाएगा। मुर्दा पानी तुमको जीवन नहीं दे सकता। 'प्रभास्मि शशि सूर्यंयो' महान यह सूर्य है, यहा शशि माने चन्द्रमा है, अगर यह प्रभा खत्म हो गई तो क्या रह गया। इसलिए सर्वरूप मे यह परमात्मा ही है उसको आत्मा भी कहा।

मुमुक्षु अपनी आत्मा मे कैसे प्रवेश करे। इस के बारे मे विचार चल रहा है। मन तो चंचल है, इस चंचल मन को घेर कर आत्मा मे लगाना पड़ेगा क्योंकि इस आत्मा से बढ कर कोई प्यारा नहीं। पहले तो यह विचार करें, माता पिता, भाई बहिन, पति पत्नी, बेटा बेटी जो भी प्रिय सम्बन्ध हैं, जिसको आत्मा ने छोड़ा उसको हमने भी छोड़ दिया। तो हमारी पकड़ पहले कि आत्मा की? उसकी पकड़ पहले है। उसकी पकड़ है तो हमारी भी पकड़ है और उसने छोड़ दिया तो हमने भी छोड़ दिया। इस आत्मा मे, ब्रह्मभाव में मन को स्थिर करना है। जब इस स्थिति मे आनन्द का भान हो जाए तो मधु भूमि है। मधु माने शहद जैसे मीठा होता है ऐसा ही यह आनन्द है। किन्तु इस आनन्द का स्वाद नही लेना चाहिए। यह भी मायिक आनन्द है। आगे दूसरी भूमि मधुमती है। जब मन इस भूमि मे पहुंच जाएगा तो देहाहंकार से ऊपर उठ जाएगा। उपनिषद मे एक मंत्र है 'आत्मानमरणिं कृत्वा प्रणवोत्तरारणिम्, ध्याननिर्मन्थनाभ्यासा-देवंपश्येंन्निगूढवतः' दो लकड़ी ऊपर नीचे रख कर दधि मंथन की तरह यज्ञादि मे जो अग्नि उपयोग मे लाई जाती हैं वो, वह चूल्हे में रहने वाली अग्नि नही। जैसे दधि मंथन करना पड़ता है। ऐसे ही यहाँ अरणि मंथन होता है। अरणि नाम है लकड़ी का। विशेष लकड़ी जिससे अग्नि प्रकट होती है। इस अग्नि को बडे यत्न से पकड़ना पड़ता है क्योंकि यह बड़ी सूक्ष्म होती है।

यहाँ पर भी यही विधि अपनाओ। 'आत्मानमरणिं कृत्वा'। इस अपनी आत्मा को अरणि बनाओ। 'प्राणवोत्तरारणिम्' प्रणव माने ॐकार को उत्तर अरणि। नीचे कीं लकड़ी और ऊपर की लकड़ी। फिर उनका मन्थन। माने ॐकार का जप। केवल जप नहीं ध्यान वृत्ति सहित जप। तत्परता भी चाहिए।

जैसे लोक जीवन मे देखो जेसे पति पत्नी, बेटा बेटी भी मन लगा कर बात नही करें तो कहते हैं जाओ तुम सुनते तों हो नहीं। जब मन लगा कर बात करते है तो आनन्द आता है। इसी तरह जब मन लगा कर जप करोगे तब आनन्द आएगा। मंत्र जप क्या है ? मंत्र तो शब्द है और आत्मा उस मंत्र जप का आधार है। जैसे यूं हाथ घिसो तो ठंडी मे गर्मी उत्पन्न हो जाती है, यहाँ भी मंत्र जप करोगे तो घर्षण होने से ज्ञानाग्नि प्रकट होती है। महान आनन्द का भान होता है। 'ध्यान निर्मथनाभ्यासादेवं पश्येन्निगूढवत्' ध्यान से निर्मंथन किया है तो, पुनः २ जप किया है तो, 'देवं पश्येत् माने अनुभूयेत। देव माने आत्मदेव। उस आत्मदेव का अनुभव करो। स्थूल शरीर, सूक्ष्म, कारण शरीर से विलक्षण यह चेतन मात्र आत्मा, यह ब्रह्म मैं हूँ। 'ब्रह्माहमस्मि' धीरे २ ऐसी वृत्ति को स्थिर करो। इस वृत्ति मे जब स्थिरता आ जाएगी तो महान पुण्य भी उत्पन्न होगा। आनन्द भी आएगा। व्यवहार काल से भी जब बाहर चलोगे तो धीरे २ तुम्हारा व्यवहार भी ठीक होगा। झूठा लोभ नहीं आएगा, झूठा क्रोध नहीं आएगा। मोह नही आएगा। उचित मात्रा मे तो सब आना ही चाहिए पर झूठा नही आना चाहिए। ठीक २ लाभ(Profit)लेना चाहिए। उसकी जेब भी खाली न हो और हमारा हिस्सा भी मिल जाए। इस प्रकार ठीक से व्यवहार करो।

व्यवहार ठीक होगा तो कर्मयोग हो जाएगा। मधुमती भूमि मे त्रिपुटी बनी रहेगी। ध्याता ध्यान औंर ध्येय यह त्रिपुटी तो बनी रहेगी किन्तु स्थूल शरीर के अहंकार से बाहर हो जाओगे। इस वृत्ति को जब आगे उठाएँगे तो वैराग्य आदि की भावना करनी पडेगी।

गौड़पादाचार्य कहते है 'दुखों का अनुस्मरण करो' किसी भी योनि मे जाने की इच्छा मत करो। क्योंकि कहीं भी जाओगे, किसी भी योनी में जाओगे तो वहाँ भी दुःख होगा। स्वर्गादि की भी इच्छा नहीं करो। 'आत्मैवेदं सर्वं ब्रह्मैवेदं सर्वं। इस भावना से तुम को जन्म नही मालूम पड़ेगा। जैसे किसी को स्वप्न मे पुत्र हो गया तो यह सत्य है या झूठा। जाग्रत मे तो हुआ नहीं और

स्वप्न मे हो गया । इसी तरह यह जन्म भी हमारे अन्दर माया से ही हुआ है । असल मे मेरा जन्म है ही नहीं । उस स्वप्न के पुत्र जैसा ही है । 'अजोहमस्मि अमृतोहमस्मि' आचार्य कहते है सब अज है । जन्म नहीं दीखेगा तो मृत्यु भी नहीं दीखेगी । जन्म दीखना है तो मरण भी दीखता और मृत्यु का भय भी दीखता है जन्म नही, मरण नहीं, मृत्यु का भय नही । अब ब्राह्मी वृत्ति को ऊपर उठाओ । इस प्रकार धीरे २ जब मधुमति भूमि से ऊपर उठोगे तो ध्याता ध्यान और ध्येय यह त्रिपुटी खत्म हो जाएगी । मैं ध्याता हूँ , यह जो अहंकार है यह विलीन हो जाएगा । ध्येयाकार वृत्ति हो जाएगी 'मैं ध्याता हूँ' जब यह अहंकार नही तो ध्यान भी नहीं ।ध्याता और ध्यान नही रहा केवल ध्येयाकार वृत्ति रह जाएगी । यह निर्विकल्प समाधि है । इस निर्विकल्प समाधि की योग में बडी प्रशंसा है ।

धर्ममेधमिमं प्राहुः समाधिं योगवित्तमाः
वर्षत्येष यतो धर्मामृत धाराः सहस्रशः ।।

महर्षि कहते है 'योगवित्तमाः' इस समाधि का नाम है धर्ममेघ । जैसे यहाँ नैपाल में रोज मेघ आते है और क्या वर्षा करने लगते हैं छर छर । हिमालय ने कहा जाओ थोड़ा ठन्डा करके आओ । नहीं तो सूर्य जो फुंकार मार कर गया है गर्मी की । जैसे वादलों से पानी बरसता है तो उसकी सीमा नही होती । कितना पानी बरसा इसकी कोइ सीमा नही होती । मनुष्य अगर वरसाएगा तो सीमा रखेगा कि इतना बरसाया मेंने । भगवान जब बरसाता है तो सीमा नही रखता । बह अनन्त जल राशि जीवों को देता है । इसी तरह यह मधुप्रतीका जो भूमि है यह धर्म मेघ समाधि है । धर्म की अमृत धारा है । जैसे वो मेघों से अनन्त जलधारा बरसती है । ऐसा ब्रह्मवेत्ता मुमुक्षु चाहे घर मे हो या बाहर हो उसके भीतर अनन्त धर्म की वर्षा होती है। महान पुण्यों की वर्षा होगी । सब नष्ट हो जाएंगें ।

अनादाविह संसारे संचिताः कर्मकोटयः
अनेन विलयं यान्ति शुद्धो धर्मो विवर्धते ।।

आचार्य कहते है बेटा अनादि संसार ने कब से जन्म ले रहो हो, कोई पता नही । करोडों वार मनुष्य भी बन चुके हो । किन्तु आए और गये । जीव का हाल वो है जैसे माताएँ खाना तो घर मे बनाती ही है । पुराने जमाने मे कुत्ते

बिल्ली से छुआछूत करते थे। आज कल तो अपने बच्चे से प्यार कम करेगें पर कुत्ता बिल्ली से अधिक। बिल्ली म्याऊँ कर के चौके मे घुस गई। वो बेचारी आटा मल रही थी। उल्टा हाथ मारा। इधर से भागी उधर से आगई। म्याऊँ। लकड़ी उठाई उसने। इस जीव का भी यही हाल है। एक कोने से निकला मृत्यु देवता ने मारा उल्टा हाथ तो भागा। दूसरे कोने म्याऊँ करके आगया। बच्चा जन्मता है तो क्या कहता है? मै आऊँ? म्याऊँ। यहाँ से तो निकला है तो तू क्यों निर्लज्ज होकर उधर से आ गया। जो मालिक थे वो पराए हो गये जो कोई नही थे वो अपने हो गये। अब यह कहे कि यह बेटा हमारा हैं तो जो नये मां बाप बने है वो देगें क्या? बस इसी तरह यह जीव इधर से उधर घुमता है। झूठे मां बाप बनता रहता है। पर अभी तक असल मे किसी का बेटा बना ही नहीं और सब का बेटा बन कर रोता गाता चला जा रहा है। बेटा बेटी बनने की आवश्यकता नहीं। यह आत्मविद्या जब आएगी तब यह मामला ठंढा होगा। इसलिए कहा ''अनेन विलयं यान्ति' इस संसार मे कितनी बार तू मनुष्य बना है, कितने तुमने कर्म किए है कोई ठिकाना है?

यह जो निर्विकल्प समाधि है, जिसका नाम धर्ममेघ कहा। इस मधु प्रतीका भूमि मे इस समाधि के द्वारा जितने जन्म जन्मान्तर के कर्म है वो भस्म हो जाएँगे। 'ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा'। यह ज्ञानाग्नि है सम्पूर्ण कर्मो को नष्ट करने वाली है। बुद्धिमान आचार्य के द्वारा मुमुक्षु इस ज्ञानाग्नि को प्रकट करता है। और प्रकट करके अपने अनेक जन्मों के कर्मो को नष्ट कर देता है। कर्म दो प्रकार के समझो। संचित कर्म और क्रियमाण कर्म। प्रारब्ध कर्म से तो यह शरीर बना है। यह प्रारब्ध कर्म एक तो शरीर का जन्म, शरीर की आयु और शरीर का भोग माने सुख दुःख। जब तक यह शरीर रहेगा, अगर ब्रह्मज्ञान, तत्त्वज्ञान भी हो जाएगा। तुम ब्रह्म वेत्ता भी बन जाओगे तो भी भाग्य का भोग तो मिलेगा सुख भी मिलेगा दुःख भी मिलेगा। इस प्रारब्ध को ज्ञान नही काटेगा। ड्यूटी मे आए हो तो कुछ मिलेगा ही। ज्ञान प्रारब्ध को कुछ नहीं बोलता। संचित कर्मो मे से ही जो कर्म फल देने के लिए तैयार हो जाते है वही यह जन्म आयु और भोग देते है। यही प्रारब्ध है।

जैसे तीन साथी ब्राह्मण, जाट और नाई साथ २ चल पडे । गर्मी के दिन थे गांव से बाहर निकले और चल पडे । थोडा आगे गये तो प्यास लगी । सोचा कही बैठ कर थोड़ा पानी पिएँगे । पानी तो था नही । गन्ने के खेत थे । गन्ने तोडे और मेंढ पर बैठ कर चूसने लगे । किसान ने दूर से देखा । मैंने इतनी मेहनत से गन्ने लगाए है और ये लोग तोड़ कर खा रहे है । धीरे २ आया । शक्ल से देखा, एक तो ब्राह्मण है । दूसरे को देखा बड़ी २ मूंछे है पहचान गया राजपूत है । और तीसरा नाई है । नाई की ओर मुँह कर के बोला तुम को दाढी बनाने के लिए बुलाओ तो बीस बार बुलाने पर आते नही हो और आते हो तो बिना पैसे के बात नही करते । यह ब्राह्मण देवता है । और यह हमारे राजा ही है राजपूत देश की रक्षा करते है । पर तुम कैसे खा रहे हो ? दो उठा कर लगाई नाई तो बेचारा भाग गया । आगे जाकर भगवान से प्रार्थना करता है इन दोनों को भी पडे तो ठीक है । नहीं तो गांव मे जाकर मेरी बेइज्जती करेगें कि मार खाकर आया है । यह दोनों भी देखते रहे कि चलो हम बच गये । किसान ने संगठन तोड़ दिया । अब ब्राह्मण की ओर देख कर बोला, आप तो भूदेव है । किन्तु इस अकड़ खां को देखो, कैसी मूछें रखी है । मैंने कितनी मेहनत की है और यह ऐसे खा रहा है जसे खेत उसके बाप का हो । राजपूत की भी पिटाई कर दी वह भी माग गया । सबको एक साथ पीटता तो तीनों मिल कर उल्टे उसी की पिटाई कर देते । अब बचा ब्राह्मण बेचारा । बोला पंडित देवता तुम जरा सा कर्म करवाते हो तो 'दक्षिणा पदे पदे' पद पद पर दक्षिणा मांगते हो और यहां मेरी मेहनत का लगाया हुआ गन्ना कैसे मुफ्त मे उडा रहे हो । उसको भी दो लगा दी। बेचारा भाग गया । तात्पर्य यह कि संगठन तोड़ दिया । विघटन हमेशा मार खा जाता है ।

यहाँ भी देखो, तुम्हारे जो कर्म है प्रारब्ध कर्म तो चुपचाप कोने में बैठा है । तुम्हे खाना दाना दे रहा है । ज्ञान प्रारब्ध कर्म को कुछ नहीं कहता । संचित कर्म और क्रियमाण कर्म । पहले क्रियामाण कर्मों को लात मार कर भगाया ज्ञान ने । अब बचें संचित कर्म । यह वह कर्म हैं जिनका इस जन्म में कोई भोग नहीं होगा आगे सैकडों जन्मों तक इनका भोग चलता रहता है । अनेन विलयं यान्ति । यह जो धर्ममेघ समाधि है यह इन संचित कर्मों को भी नष्ट कर देती है ।

अमुना वासनाजाले निःशेषं प्रविलापिते
समूलोन्मूलिते पुण्यपापाख्ये कर्म संचये ।।

यह जो निर्विकल्प समाधि है इस निर्विकल्प समाधि के द्वारा वासनाओं का क्षय कर दिया । 'अमुना वासना जाले' वासनाओं का जाल बना हुआ है । देखो इस संसार मे जब हमें अपनी इच्छा के अनुसार कोई चीज मिल जाती है तो चित्त में कितनी शान्ति आती है क्योंकि वह चीज छोटी है इसलिए उसके द्वारा मिलने वाली शान्ति भी छोटी ही है । यदि तुम्हारे अन्दर यह रहस्य प्रकट हो जाए कि सत्‌चित्‌ आनन्द स्वरूप 'आत्मा मैं हूँ' यह ज्ञान हो जाए तो कौन सी वासना रह जाएगी । मैं देहादि संघात से विलक्षण सत्‌चित्‌ आनन्द स्वरूप आत्मा ही हूँ । जब यह साक्षी स्वरूप चिन्मात्र मालूम पड़ गया तो अमुना वासना जाले निःशेषं प्रविलापिते । यह सारी वासनाओं का जाल नष्ट हो जाएगा । 'समूलोन्मूलतें' मूल सहित 'पुण्यपानक्षये कर्मसंचये ।' पाप का क्षय करना और पुण्यों का भी क्षय करना ज्ञानाग्नि का लक्ष्य है । कहोगे महाराज पुण्य भी क्षय हो जाएँगे तो हमारा क्या बनेगा ? तो देखो हथकडी सोने की हो या लोहे की । काम तो वही करेगी । बन्धन तो दोनों ही हैं । ज्ञान ने तुमको किसी कर्म मे नहीं रखना है । मोक्ष मे ले जाना है ज्ञान ने ।

पुराने समय में जब अंग्रेजों का शासन था तो कोई राजा महाराजा भी गड़बड़ कर देता था।जसको भी पकड(arrest)करना पड़ता था।तो उस राजा को बांधने के लिए सोने की हथकडी बनाते थे और पुलिस का बडा आफिसर उस राजा को कैद करने आता था । तो कैद तो महाराजा भी किया जाता था किन्तु उसको पोजीशन के अनुसार सोने की हथकडी और बड़ा पुलिस अधिकारी काम में लाए जाते थे । पर यह बताओ इन्होंने काम क्या किया ? यह पुण्य सोने की हथकडी है । मुमुक्षु को दोनों कर्मों से छुट्टी पानी है । एक बात और भी समझो । आचार्यो ने ऐसी भी व्यवस्था किया है कि ब्रह्मवेत्ता के कुछ कर्म शेष भी रह गये हैं तो यदि वह घर में है । पिता है या मां है तो उसके शेष कर्म उसके पुत्रों को मिलेगे । गुरु है तो उसके शिष्यों को उसके पुण्यों का फल मिल जाएगा । ज्ञान होने मे काल का कोई नियम नही है । देश का नियम नही अवस्था का भी नियम

नही। ज्ञान कहीं भी, किसी भी काल या अवस्था मे हो सकता है। किसी को बचपन में ही हो जाता है। किसी को बुढापे में होता है। ज्ञान होने पर उसके सभी कर्म भस्म हो जाते है। "ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणिभस्मसात् कुरुते तथा"। ज्ञानवान का कोई कर्म बाकी नहीं रहता। उसके पुण्य कर्म जो प्रारब्ध के बच जाते है वह तो उसके पुत्रों या शिष्यों को मिल जाते है और उनके बचे हुए पाप कर्म उनकी निन्दा करने वालों को मिलते है। हाँ जब तक उसका यह शरीर है तब तक मनुष्य जैसा उसका भान होगा किन्तु श्रुति कहती है ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म हो जाता है। यह चलता फिरता ब्रह्म हैं।

निर्विकल्प समाधि के द्वारा इसके सारे कर्म भस्म हो गये। अब कोई चिन्ता नही, कोई अभिलाप भी नहीं। अभिलाप माने वाणी से बोलना। अब "सुप्रसन्ना सुकृतज्योति" यह प्रसन्न है। इसकी सब चिन्ताएँ भाग गई। जब अपनी असली चीज को पा जाता है तो अभय हो जाता है। मृत्यु का भय भी नहीं रहा। हर्ष विषाद नहीं। वह हर्ष विषाद से ऊपर उठ जाता है। इस प्रकार मन की प्रारम्भिक स्थिति मधु भूमि और मधुमति भूमि दूसरी भूमि सविल्कप समाधि है। तीसरी भूमि है मधु प्रतीका निर्विकल्क समाधि है, चौथी भूमि जीवनमुक्ति है। यह विशोका भूमि है।

दुखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृह
वीतरागभय क्रोधः सस्थितधीर्मुनिरुच्यते

ज्ञानी होने का मतलब क्या है? कोई दुःख आता भी है तो ज्ञानी के मन मे उद्वेग नहीं होता। जैसे छोटे बच्चे को मारो तो रोता है किन्तु बड़ा होने पर वह रोता नहीं। ऐसे ही ज्ञानी दुःख मे उद्विग्न नहीं होता। सुख में स्पृहा नहीं माने सुख की इच्छा नहीं। इसको मुनि कहते हैं यह आत्मतत्त्व में स्थित हो जाता है। धीर हो जाता है। इस प्रकार मुमुक्षु इस दहराकाश मे सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा का अनुसन्धान करे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

३-५-८८

प्रवचन सं०-२५

"ॐ एष आत्मेति होवाचैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति
तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति ।
ॐ तानि ह वा एतानि त्रीण्यक्षराणि सतीयमिति
तद्यत्सत...महरहर्वा एवंवित्स्वर्ग लोकमेति ॥"

(छान्दो.८-३-४)

(छान्दो. ८-३-५)

विचार करके आए हैं कि मुमुक्षु अपनी इस आत्मा में सीधी दृष्टि देवें, वस्तु जब सीधी होती है, स्पष्ट होती है तो गडबड नही होती। स वा एष आत्मा। स माने वो परमात्मा। एष माने आत्मा। केवल आत्मा शब्द से हम समझते हैं यह रोने गाने वाला, शोक मोह करने वाला, मेरा तेरा करने वाला आत्मा है तो ऋषि जो बडें तत्त्ववेत्ता थे वे समझ गये कि इस आत्मा को तो लोग यही टाईटल देते रहेगें। तिरस्कृत कर देगें। श्रद्धा नहीं करेंगे। इसलिए उन्होंने आत्मा शब्द में परम शब्द का विशेषण लगा दिया। विशेषण लगा देने से छोटी वस्तु बडी हो जाती है, जैसे गवर्नमैंट विशेषण देती है न। तत् तत् पद लगा देती है। Army chief of staff का पद दे दिया। सवा पाँच फुट लम्बा आदमी किन्तु chief of staff का पद मिलते ही हजारों जवान सैल्यूट मारने के लिए खडें हो जाते हैं। विशेषण लग गया। विशेषण की प्रतिष्ठा है। बुद्धिमान इस लोक में विशेषण की भी प्रतिष्ठा करें।

इसी तरह यहां अविद्या विशेषण आया। और उस अविद्या में मन विशेषण जुड गया तो वह जीव बन गया। वह जीव फिर जैसे २ कर्म सामने

आते हैं उनके अनुसार भिन्न २ शरीरों में नाचने लगता है। आजकल आप जानते हैं न डाँन्स की ट्रेनिङ्ग दी जाती है। बडे २ थियेटर बने हैं। रंगशालाएँ बनी हें वहां नाचने वाले पहुँचते हैं न। इसी तरह यह मनुष्य देव, गन्धर्व, पशु, पक्षी आदि शरीर क्या है ? थियेटर हॉल है। यह इस जीव के डाँस करने के स्थान है। जब मनुष्य बन गया तो मनुष्य जैसी चाल चलेगा। पशु बन गया, चार पैर लग गये तो चार पैर से पशु जैसी चाल चलने लगा। पक्षी की योनि में पक्षी की चाल चलेगा। पर इन्हीं थियेटर हालों में ही नाचता रहा घर एक दिन भी नहीं लौटा बडा डान्सर है, बडा नाटककार है। जहाँ देखो वह थियेटर में जाता रहता है। लोगों को भी आदत पड गई है इससे स्वाद लेने की। इसको घर लौटाने के लिए ही यह परम शब्द का विशेषण रखा है। इसलिए आत्मा के साथ परम विशेषण जोड दिया। परम विशेषण लगने से आत्मा क्या बन गया ? परमात्मा। आत्मा ही परमात्मा बन गया। मन के करंट से मनुष्य बना। यह शरीर रोज अपना रंग बदलता है। शरीर ने कहा हम बच्चे तो बच्चा बन गया। शरीर ने कहा हम कुमार तो कुमार कहने लगा। जवान तो जवान हो गये। शरीर ने कहा बुड्ढा तो बुड्ढे हो गये। सोचों जो दूसरे ने कहा तुमने वही मान लिया तो उसको भोला कहोगे कि समझदार। भाई ठीक हो तो हाँ कह दो नही तो ना कह दो।

भगवान शिव को भोलानाथ कहते हैं और किसी देवता को भोलानाथ नहीं कहा। क्योंकि यह झट प्रसन्न हो जाते हैं। भगत ने जरा सा गाल बजा दिया उसी से प्रसन्न हो गये। अन्य देवी देवता इतनी जल्दी प्रसन्न नहीं होते। किन्तु शिवजी वडी जल्दी प्रसन्न होकर वरदान दे देते हैं। पत्नी भी समझती हें ऐसा नहीं समझाना भी पडता है बाडी गार्ड बन कर आई है तो समझाना तो पडता है। ईस भोलानाथ को भी ब्रह्मविद्या समझती है। हे भगवन तुम तो महान ब्रह्म हो, तुम जीव नहीं हो, संसारी नहीं हो, जन्म मरण वाले नहीं हो।

'अथ स एष सम्प्रसादो' मंत्र तुम्हारी आत्माको सम्प्रसाद शब्द से कह रहा है। प्रसाद माने प्रसन्नता सम्प्रसाद माने सम्यक प्रसाद याने ऐसी प्रसन्नता जिसके पीछे दुःख न हो। लोक में जो खुशी मिलती है उसमें गम भी रहती

हैं। शोक मोह कोई न कोई विकार रहता है पर तुम्हारी आत्मा सम्प्रसाद है। इस सम्प्रसाद में जब मन की स्थिति हो जायेगी तो शोक नहीं होगा, मोह नहीं होगा, गम नहीं होगा, स्पष्ट किया सम्यक प्रसीदती सम्प्रसाद। जहाँ शोक मोह का लेश भी नहीं। गाढ निद्रा में सो जाते हैं तो अच्छी तरह प्रसन्न हो जाते हैं। जाग्रत के पदार्थ प्रसन्न भी करते हैं साथ में शोक का इन्जैक्शन भी देते जा रहे हैं। थोडी खुशी और थोडा गम। सुख ज्यादा और दुःख कम मिले तो हम उनकी गणना नहीं करते। चलो सुख तो मिल ही गया है थोडा दुःख भी है तो ठीक है। पर दुःख ज्यादा और सुख कम हो जाए तब घबराता है। वैराग्य होता है। अपने जो प्रिय बन्धु है पति पत्नी, बेटा बेटी, माता पिता, इनसे भी अगर सुख ज्यादा और दुःख कम मिले तो सहन करता है किन्तु यदि दुःख ज्यादा और सुख कम मिलने लगे तो अपनेको बचना पड़ता है।

यह आत्मा सबसे प्रिय है। श्रुति कहती है 'अन्तर अन्तरतम।' और भी स्पष्ट बात समझो। माता पिता, बेटा बेटी, पति पत्नी हद सब आपस में भी जो प्यार करते हैं यह प्यार कब तक करते हैं? जब तक चेतन का भान हो रहा है पर जब चेतन का भान न हो और समझ लिया कि यह मुर्दा हो गया है तो मुँह फेर कर रोने लगते हैं। हाय रे तुम तो चले गये। तो बताओ जो दीखता है वो प्यारा कि जिस के बिना नही दीखता वो प्यारा? कहना पडेगा जिसके बिना नहीं दीखता वही प्यारा। इस चेतन आत्मा के बिना कुछ नहीं दीखता। चेतन आत्मा के करंट से ही सब कुछ दीखता है। वस्तुतः कोई प्यारा नहीं है। सब बोल चाल के लिए ही प्यारे हैं। वो चेतन आत्मा ही सब से प्यारा है। वो आत्मा अपने शरीर मे भी प्यारा, बेटा बेटी के शरीर मे भी प्यारा।

थोडी देर के लिए अनुभव करो, बेहोश हो गये। हास्पीटल ने भर्ती कर दिया। वह पडा है वहाँ। उसके प्रिय बन्धु बेटा बेटी, भाई बहन उसकी ओर देख कर रो रहे है। दुःखी हो रहे हैं। खुशी नहीं।खुशी का जो केन्द्र(centre)है वह नहीं है।अगर खुशीका केन्द्र(centre)शरीर हो तो वो तो सामने खाट पर पडा है पर नहीं। जों हमको आंख की खिडकी से था, वो नहीं देख रहा। वो प्यारा

था । इसका मतलब क्या हुआ कि जो प्यारा था और जो झांकता था और कहता था कि तुम हमारे हो । वो नही है । वही प्यारा था ।

न चक्षुषा गृह्यने नापि वाचा, नान्यैर्देवैस्तपसा कर्मणा वा । ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्त्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः ।। मंत्र कहता है बेटा इस को तू आंख से नहीं देख सकता । आंख तो रूप को पकडती है । यह रूप है इसको आंख पकडेगी पर अच्छा बुरा तो जो अन्दर बैठा है , वही देखेगा । अगर अन्दर वाला बेहोश है तो यह आंख नहीं देखेगी । अच्छा सेवक कौन ? जो मालिक की खुशी के लिए कुछ करता है मालिक नही है तो कुछ नहीं करता । यह इन्द्रिय गण तो तुम्हारे सेवक हैं । 'नान्यैर्देवै' अन्य देव माने दूसरे इन्द्रिय गण जो है वो देव भीं इस आत्मा को नहीं ग्रहण करते । 'न तपसा न कर्मणा व' तप करते हो तो पुण्य ले लो पुण्य का फल ले लो और क्या करोगे । जेसे इस लोक मे कोई अच्छा काम करता करता है तो गवर्नमैंट उसको इनाम देतीं है । बुरा काम करता है तो दण्ड भीं देतीं है । इसीं तरह उस परमात्मा कीं गवर्नमैंट मे भीं अच्छा करोगे तो इनाम मिलेगा । तप के बल से तुमको पुण्य लोक मिलेगा । वहाँ चले जाओ ।

जैसे गवर्नमैंट बडे आफिसर कीं कही बाहर भेजतीं है तो सब सुविधाएँ देतीं है । पांच तारा वाला होटल (five star hotel) मे ठहरनेका पूरा खर्चा गवर्नमैंट देतीं है । कोई फुट पाथिया जहाँ भीं जाएगा फुट पाथ पर हीं रहेगा।अगर केवल लोक जीवनको हीं पकडो तो उससे भीं क्या लाभ? अपनेको भूल कर दूसरेको कितना पकडोगे । जैसे वो बेहोश आदमी । बेहोश माने जो अपने को भूल चुका है । अब मान लो उसका कोई बेटा हो, बेटी हो, पति हो, पत्नी हो, किसीं को क्या पकडेगा । जब वह अपने को ही भूल चुका है तो कोई भी उसकी पकड मे नहीं है । इसलिए विवेकशील इस सत्य को स्वीकार करे । 'ज्ञानप्रसादेन विशुद्ध सत्त्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलंध्यायमानः ।। उसको कैसे पकडोगे ? कहते है ज्ञान रुपी प्रसाद से । जो बुद्धिमान आचार्य कहते है वह अपने जिज्ञासु भक्त को ज्ञान का प्रसाद देते है । यह मिश्री का टुकडा जो देते है, इसको प्रसाद समझ कर लेते है ।

यह मिश्री का टुकडा, टुकडा नही, उस ज्ञान प्रसाद का प्रतीक है। जैसे भगवान की प्रणाम करने के लिए मन्दिर मे मूर्ति रखी है। क्या उसे केवल मूर्ति समझते है नहीं। नमस्कार तो करते है। परमात्मा को। इसी प्रकार असल मे ज्ञान ही प्रसाद है। मुमुक्षु इस ज्ञान प्रसाद को हृदय मे में धारण करे।

'ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्त्वः' यह चित्त शुद्ध हो जाती है। शुद्ध चित्त का लक्षण है कि कुछ प्रतिकूल बात होगीं तो, सुख की भी होती, दुःख की भी होती है, दुःख की भी बात होगी तो दुःखी नहीं होगा। अपने चित्त को समझाए कि चुप रहो, जैसे बडा बेटा और छोटा बेटा। छोटे बेटे को मम्मी जरा सीं घुड़की देती है तो रोने लगता है। पर बडे को लाफ़ा भीं मारतीं है तो रोता नहीं बल्कि अकड़ जाता है कभी २ तो। उसमे सहन शक्ति आ गई है। मम्मी को टेढी आंख से देखता है तो मम्मी भी घबरा जाती है। दूसरा लाफा नही लगाती। फर्क हो गया कि नहीं। सहन शक्ति आ गई। प्रकृति के नियम से सहन शक्ति आई है उसमे और यह छोटा बच्चा है। इसमे अभी सहन शक्ति नहीं आई। ऐसे ही जो सत्सङ्गीं है जो इस सत्य को स्वीकार करता है 'ब्रह्मैवाहमस्मि' आत्मैवाहमस्मि' 'आत्मा ही ब्रह्म है' मै ब्रह्म हूँ। भगवान भी कहते है, 'अहमात्मा गुडाकेश सर्व–भूताशयस्थिता' मै ही तो आत्मा हूँ सब भूतों में।

मन जब आत्मा मे चला गया तो छोटी मोटी वातों से दुःख आने पर भी कुछ हर्जा नहीं। क्योंकि जो भी दुःख आयेगा वह सच्चा नहीं है। वह देखने का ही दुःख होगा। जैसे ड्रामा मे एक पति बना एक पत्नी बनी। पत्नी का पैर फिसल जाता है। गिरते ही मर जाती है। वह रोता जाता है। दर्शक देख रहे है। दर्शक भी तदाकार होकर, चित्त मे रोने के भाव भर लाता है और रोने लगता है। दर्शक मोह से रो रहे है। क्योंकि जो मरी है उसमे उनका प्यार हो गया था और उस छोकरे से उनको मोह हो गया कि उसकी पत्नी मर गई है। उसके दुःख को अपना दुःख समझ रहे है। तादात्म्य भाव मे चले गये। रोना भी हो तो ज्ञान पूर्वक राओ। तुम जब मरी ही नहीं तो हम कैसे रोते ? उल्टी प्रशंसा करेगा।

जगत से व्यवहार तो करना पडेगा। रोने के जगह रोने का ड्रामा करो

हंसने की जगह हसने का। किन्तु समझने की जगह समझो। तुम तो पूर्ण समझदार हो। तुम्हारी आत्मा सत् चित् आनन्द स्वरूप पूर्ण समझदार है। इसको क्या देना है। इसके ज्ञान से तो दूसरे ज्ञान ले रहे है। इस चेतन आत्मा के करंट से उसके ज्ञान से चक्षु कितना सुन्दर रूप देखते है। यह श्रोत्रेन्द्रिय कितना सुन्दर शब्द पकडती है। यह जीभ तुम्हारी कितनी रसाल सुन्दर पदार्थो का स्वाद लेती है। अगर बेहोश आदमी के मुँह मे रसगुल्ला रख दो तो उसको स्वाद आएगा। यह तो उसके ज्ञान से ही सब कुछ मिलने वाला है। उसने अपने करंट से सबको आनन्द मे कर दिया। वह ही अपने ज्ञान से सबको आनन्द दे रहा है। कितना बडा करंट वो दे रहा है उसकी कोई सीमा नही 'ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्त्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमान' श्रद्धाशील मुमुक्षु को बुद्धिमान आचार्य तत्त्व ज्ञान देता है उसके अनुसार 'निष्कलं' कला माने अवयव। जसे यह फूल है। गुलाब का फूल है इससे यह पूछो तुम इतने बडे क्यो हो गये? वह कहेगा, पंखुडियाँ आ गई मैं बडा हो गया। अब एक एक पंखुडी को निकालना शुरु कर दो तो यह गुलाब का फूल छोटा होगा कि नही। यह पंखुडियाँ इसकी कला है। कला माने अवयव। जैसे तुम्हारा शरीर है। हाथ, पैर, नाक, कान, मूंह यह अवयव है। कला है। सकल माने कला सहित। इसको साकार भी कहते है। किन्तु जिस आत्मा ने इस को धारण किया है बताओ उसकीकौन सी कला है। बडा धर्मात्मा कौन। जो कुछ भी काम करे उसका ध्यान कर के करे। हे भगवान हम तुम्हारे लिए कर रहे है।

मान लो खीर का कटोरा आया। स्वाद लेने वाला कौन? जीभ। पर वह तो देखो जमीन से कितनी दूरी पर है? कम से कम 4 , 5 फुट तो है ही। इस शरीरको बिल्डिग (भवन) समझो। जीभका जो तल (flat) है मुँह। पर्दे ठीक (set) किए हुएहै। होटो का पर्दा। दांतों की तो दीवार खड़ी हुई हैकि कही बाहर नहीं लटक जाए कितनी सुरक्षा की है इसकी? आंख ने कह दिया कि खीर की कटोरी बहुत सुन्दर है। यह जीभ कहती है भाई साहब जरा ऊपर पकड़ाओ तो। कौन भाई साहब? यह हाथ। जैसे बडे शहरों मे ऊपर रहने वालीं माई बुढिया हो गई। टांगे वाय से टेढी हो गई है। चार मंजिल पर रहती है। बुढिया सेब खाने की बड़ी शौकिन है। उतरा जाता नहीं। नीचे से आवाज आ गई सेब ले लो।

मौस्समी ले लो। रस्सी बांध कर टोकरीं लटका दी। सेव कैसे दिए ? २० रु. किलो। नही पन्द्रह, दो। टोकरीं मे १५ रुपये रख दिए और नीचे लटका दिया। उसने पैसे लेकर सेव रख दिए। बस टोकरी ऊपर खींच ली। यह जीभ उस बुढिया की तरह है। खीर की कटोरी का पता चला झट कहा भाई साहब जरा ऊपर कर दो। उसने कहा हट हम कोई तुम्हारे नौकर है। हमको क्या मिलेगा। जीभ ने कहा मैं स्वाद लेकर आगे कर दुंगी। तुम को बल दुंगी। आगे शोधन(refinary) में भेज दुंगी।भाई साहब को समझाया तो उनको भी अक्ल आगई। स्वाद लेने के लिए जीभ। पर यह जीभ अपने पास कुछ रख नहीं सकती। सब गोदाम में चला गया।आगे शोधन(refinary) में जो रस निकला वह सारे शरीर में बांट दिया।किन्तु शोधन(refinary)तभी चलेगी जब वह अन्दर होगा। यदि यह आत्मा नहीं होगा तो कुछ नहीं होगा इसलिए कहा कि मुमुक्षु इस सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा का ध्यान करे।

मुमुक्षु इस ब्रह्म का अनुभव करता है हृदय मे। कैसे ध्यान करता है ? कहते है 'निष्कलं' यह निराकार है। माने उसका अपना कोई आकार नहीं। जो भी आकार है सब मायिक है। प्रतीति मात्र ह। जैसे यह शरीर एक दिन बच्चा था। पर बच्चा नहीं रहा। जो यह बचपन देखने का ही रहा। कुमार था,कुमार नही रहा। तो कुमारावस्था भी देखने की ही थी। युवावस्था आई तो वो भी देखने की ही थी। और अब बुढापा आया जैसे पुराना चोला हो। पहनते २ लीरे लीरे हो गई। एक लीर इधर लटक रही है। एक उधर लटकी है। इधर से कमर टेढी, उधर से पैर टेढा। यह बुढ़ापे का शरीर ऐसा ही है। तो माया ही जवान हुई। माया ही बुढिया हुई। उसको खेल खिला रही है। खेल दिखाते २ बुढिया हो गई। अन्तरात्मा जैसे का तैसा ही है। कोई फर्क नहीं उस में। इसलिए श्रुति कह रही है 'निष्कल ध्यायमानः' बेटा यह निराकार है। जो साकार पदार्थ होगा परिवर्तन उसमें होगा। परिवर्तन साकार पदार्थ मे ही होगा। जो निराकार पदार्थ है उस में क्या परिवर्तन होगा। क्या बो छोटा होगा कि मोटा होगा, कि लम्बा होगा, कि पसला होगा ? इसका तो आकार ही कोई नहीं। जैसे यह पृथ्वी है, यह घट बढ़ सकती है किन्तु आकाश में क्या परिवर्तन होगा। आकाश अपने स्वरूप मे निराकार है। इसलिए विवेकशील मुमुक्षु आत्मा को ऐसा ही समझे

कि इसका कोई आकार नहीं। 'हिरण्यमयं परे कोशे बिरजं ब्रह्म निष्कलं' मंत्र कहता है ध्यान करने लिए 'हिरण्यमयं' श्रुति हृदय को हिरण्यमय कह रही है। हिरण्य शब्द का अर्थ है स्वर्ण। अर्थात जैसे सोना चमकदार होता है यह विज्ञान मय कोश, यह बुद्धि ऐसी ही चमकवाली है तुम्हारी। उस बुद्धि से परे 'हिरण्यमयं परे कोशे बिरजं' विरजं माने 'गुण विकार वर्जित' रजोगुण आदि विकार उसमे नही है। यह विकार बुद्धि में है। बुद्धि में रजोगुण है तो कभी क्रोध आता है, कभी चिन्ता, कभी भय आदि विकार आएँगे। बुद्धि मे सत्त्वगुण है तो खुशी भी आएगी, सुन्दर विवेक आएगा, दया आएगी, उदारता भी आएगी। यह सत्त्व गुण के कार्य है। सत्त्व गुण की बृद्धि करो। सत्त्व गुण की बृद्धि होगी तो दया, क्षमा अहिंसा सत्य यह गुण आएँगे। यह गुण ज्ञान को बढाएँगे। क्रोध आया तो, जैसे सूर्य महान है। किन्तु बादल के आते ही उसका तेज दब जाता है। इसी तरह सूर्य का भी सूर्य हृदयाकाश मे यह आत्मा सत्‌चित् आनन्द स्वरूप। जिसके बिना न आंख देखेगी। न कान सुनेगा। न हाथ कुछ करेगा। उस आत्मा को, रजोगुण के द्वारा जब क्रोध आया, विवेक नही रहा, तो उस क्रोध ने दबा दिया। क्रोध में अंधा हो जाता है त्रिगुणा प्रकृति है। घूमती रहती है इसलिए रजोगुण का आना स्वाभविक है। रजोगुण जब आया तो क्रोध आ गया। उस समय ठंडा पानी पी कर मुह बन्द कर लो। जल्दी किसी बोलो नहीं। मंत्र कहता है 'तत्छुभ्रं' शुभ्रं माने ज्योति स्वरूप। वह महान ब्रह्म ज्योति स्वभाव है। 'तद्‌यदात्मविदोविदुः' इसको कौन जानता है ? कहते है इस महान ब्रह्म को आत्म वेत्ता जानते है। यही सम्प्रसाद है। यह हृदय मे प्रकट होता है। कैसे प्रकट होता है ? इसके लिए ब्राह्मी वृत्ति का व्याख्यान कर के आए है। आगे कल और बताएँगे। अब सीधे होकर बैठो हरि ॐ बोल कर हृदय मे उस सत्‌चित् आनन्द स्वरूप आत्मा का ध्यान करो।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

४-५-८८

प्रवचन सं०-२६

"ॐ अथ य आत्मा स सेतुर्विधृतिरेषां लोकानाम सम्भेदाय नैतं सेतुमहोरात्रे तरतो न जरा न मृत्युर्न शोको न सुकृतं न दुष्कृतं सर्वे पाप्मानोऽतो निवर्तन्तेऽपहतपाप्मा ह्येष ब्रह्मलोकः ।।"

(छान्दो.८-४-१)

वडा अच्छा विचार है बुद्धिमान मुमुक्षु को असली जीवन कैसे पकडना है। इसके लिए मंत्र कहता है, हृदय के अन्दर यह आत्मा ज्योति स्वरूप है। "अन्तर हृदयस्थ ज्योति स्वभाव:" सम्प्रसाद की व्याख्या कल भी किया था। अपने अनुभव में समझो। जाग्रदवस्था में कम से कम पाँच इन्द्रिया इस जीव को नाना प्रकार के विषयों का आनन्द देती है। किन्तु नाना प्रकार के इन विषयों का यह सुख कितना है? सुख बहुत ही कम है। दु:ख-ही अधिक है। जब यह जीव गाढ निद्रा नें चला गया तो स्थूल शरीर से बाहर हो गया। इन्द्रियाँ इसके प्रकाश से बाहर हो गई। मन को देखेगा तो स्वप्न होगा। मन भी लीन हो गया तो हृदय देश में चला जाएगा। दो तीन घंटे यह गाढ निद्रा नें रहेगा तो वहाँ सुख की कौन सी कमी पढी। यहाँ कोई विषय नहीं। विषयों को पकडनेवाली इन्द्रियाँ भी नहीं। तो सोचो जाग्रत् में नाना प्रकार के सुख के साधन होने पर भी तुमको वो सुख नहीं मिला जो निद्रा में मिला। जाग्रतका कोई भी सुख तुमको एक घण्टा दो घण्टा से अधिक सुखी नहीं कर सकता। जवतक तुम्हारा मन उस विषयको पकडेगा। मनं ने विषयको छोड दिया, झट दुखी हो जायगा तो सुषुप्ति अवस्था का जो आनन्द है। इसलिए श्रुति कहती है।

"आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानत्" आनन्द रुप ब्रह्म है, ऐसा जानो। जैसे

अपने अनुभय के लिये समझो कि जाग्रत अवस्था में हमएक दूसरे को देखते है तो आनन्द आता है पर जब नहीं देखते तो कभी विपरीत बात हो जाती है तो दुःख होता है। पर जाग्रत में जो प्यारा है वह नहीं दीखा, बेहोश हो गया आने उस शरीर को देखकर प्रसन्न होते है या रोते है ? तो सोचो तुम्हारे जीवन में सम्प्रसाद, माने सुखी को कौन उत्पन्न कर रहा है।

शरीर के आर से आत्मा का दर्शन ही प्रसन्न करनेवाला है। किन्तु यह शरीर के आकार से आत्मा का दर्शन सत्य नहीं। यह परिवर्तनशील है। बचपन में कुछ होता है कुमारावस्था में कुछ होता है, युवावास्था में कुछ होता है। बदलता जाता है। पर इस शरीर के रूप में भी हम एक दूसरेको देखते है तब खुशी होती है। यदि शरीर रूप से दर्शन नहीं हुआ तो कोई खुशी नहीं होगी। 'एष सम्प्रसाद' शरीर के रूप में जो आत्मा है वही आनन्द देने वाला है। यदि आत्मा शरीर को छोड देता है तो उस मुर्दा शरीर से कोई प्यार नहीं करता। यदि शरीर का ही आनन्द होता तो इस समय भी आनन्द मिलना चाहिए था किन्तु नहीं मिलता। इसलिए पहले का आनन्द भी आत्मा का आनन्द था। यह शरीर तो जबरदस्ती का मेहतान बन गया हम इसका स्वागत करते है। इसके लिए जीवन देते है पर एक दिन यह आँख बदल देगा। कहते है तोता होता है न, यह अपने मालिक से आँख बदल देता है। माने उड जाता है। उस तोते की तरह हम इस शरीर को पालते हैं। पर इसने आँख बदल दिया। इस-लिए कहते है कि मुमुक्षु अपनी आत्मा को समझे।

मंत्र कहता है 'अस्माच्छरीरात्समुत्थाय' इसको समझने के लिए मुमुक्षु अपने इस शरीर से ऊपर उठे। इस शरीर में अलंकार का जो जाल बना रखा है। जैसे समुद्र में मछली पकडने के लिए जाल डालते है। बड २ जाल डालते कोई २ तो दो दो मील लम्बा होता है। सैकडों मछलियाँ ऊसमें फंस जाती है। पर कोई बडा मत्स्य आया। उसने फटकार मारी। जाल फट गया। सब मछ-लियाँ निकल कर पानी में चली गई। पर आजकल तो जाल भी बडे मजबूत होते है कि जल्दी फटते नहीं। इस शरीर को भी जाल ही समझो। इसमे जीव

मछली की तरह फंसा पडा है। हम बच्चे है, हम कुमार है, हम मनुष्य है। शरीर जीतना ही अपने को समझता है। इस शरीर से बाहर निकलो कहते है शरीर से बाहर निकल कर कहाँ जाएगा। अगर कोइ श्रद्धाशील होगा तो भगवान को याद करेगा। नहीं तो कहेगा खाना दाना ले आओ। उठ गये हम। जैसे निद्रा में शरीर से बाहर वो गये ऐसे ही जाग्रत में ईस देहाहंकार से बाहर हो जाओ।

'अस्माच्छरीरात्समुत्थाय' सुषुप्ति मे स्थूल शरीर से बाहर हो गये। सूक्ष्म शरीर से बाहर हो गये। पर कारण शरीर से बंधे है। यह ब्रह्मविद्या तुमको कारण शरीर से बाहर कर देती है। कारण शरीर माने अविद्या। अविद्या माने नहीं जानते। जो कह रहा है वह जाने कह रहा है या बिना जाने कह रहा है। नहीं जानना भी जानना है। नहीं समझना भी समझना है। यह तो पोलिटिकल बाषा है। पोलिटिशियन्स बैठ है। राष्ट्र के किसी मामले पर बातचीत चल रही है।चाय खानाtea loastभी चल रहा है।जातेरकह दिया तुम्हारीबात समझ मे नहीं आई। तो बोले कोई बात नही, आजसमझ मे नहीं आई तो कल आ जायेगी।कल हमचाय खानाtea loastकर देगें जैसे यह जातेरकह देते है कि नहीं समझे, इसी तरह यह जीव भी पोलिटिशियन से कम नहीं। जानता हुआ भी बोल रहा है नहीं जानते। 'में कौन हुँ' मैं नहीं जानता। अगर ऐसा कोई कहे तो क्या कहोगे उनको? पागल कि अच्छा? जैसे प्रकृति के नियम से हम स्थूल शरीर से रोज बाहर हो जाते हो। सूक्ष्म शरीर के अहंकार से बाहर हो जाते हो। उससे तुम्हे सुख देता है। यदि सुषुप्ति का यह आनन्द तुमको नहीं मिले तो जानते हो खोपडी का क्या हाल होगा। बैंगन का भर्ता खाते हो न। सोना ही अच्छा लगेगा।पर नींद आ रही नही।यह तो प्रकृति तुमको शरीर से जुदा करके जो आनन्द देती है वह सुख तुम्हे जाग्रत में कोई देने वाला नहीं है। जाग्रत में जो प्रिय बन्धु तुमको सुख देनेवाले दीखते है उन्होंने बगल में काँटा छुपा रखा है। जहाँ तुम्हारी आँख उधर हुई तो खट काँटा चुभो देगे। यह जाग्रत के सारे के सारे भोग ऐसे ही है। सुख के साथ में दुःख, दुःख के साथ सुख। ऐसा कोई सुख नहीं जिसके साथ दुःख न हो। एसा कोई दुःख नही जिसके साथ न हो। यह सुषुप्ति का सुख जो जो है वह ब्रह्मानन्द है। वहाँ कोई दुःख नहीं। केवल इतना

ही है कि वहाँ कुछ समझने का आडर नही किसी गवर्नमेंट का तुम कुछ समझो मत । बिस्तर डालकर सोये रहो । जो कुछ करना है हम करेंगे । हम समझेंगे ।

किन्तु यह भी बडा होशियार है कुछ नही समझा फिर भी समझा । विशेष नही समझा सामान्य समझा । जिस वस्तु को हम विशेष रूप से समझते है उसका नाम करण करते है । जैसे यह गुलाव का फूल है । पर जिसे विशेष रूप से समझें नही उसका नाम करण कैसे करेंगे । जैसे हम सबके लिए कह रहे हैं । वह भी सुनेगा । इसे सामान्य रूप से कहेंगे । सुषुप्ति का आनन्द किसी विशेष रूप मे नही कह सकते । इसलिए ब्रह्मानन्द कहना होगा

एषोऽस्य एव परमानन्दः श्रुति कहती है बेटा यह इसका परमानन्द है । 'एतस्य एव अन्यानि भूतानि आनन्दिनो भवन्ति' इसके आनन्द से वी दूसरे सारे भूत आनन्द रुप से कर भासते है । यह सब उसीका आनन्द है । मुमुक्ष अपनी आत्मा में जरुर ध्यान देवे ।

इस शरीर के अहंकार से ऊपर उठो । 'परम ज्योति रुप सम्पद्य' मैं पुरुष हूँ, मैं स्त्री हूँ यह जो शरीर मे अहंकार कर के बैठ गये है इससे ऊपर उठना है । जैसे हम आसन से उठते है ऐसे नहीं उठना । यह देह का जो अहंकार गले मे बांध लिया है इस अहंकार से ऊपर उठना है । माने इस देहाहंकार को छोडना है । इस शरीर से ऊपर जो अशरीरी है, परम ज्योति स्वरूप है । अन्यत्र मंत्र है । अशरीरं शरीरेष्वनवस्थेष्ववस्थितम् । महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति ।' मंत्र कहता है यह आत्मा अशरीर है । 'अधिष्ठितं' उन शरीरों मे यह बैठा है । जिन शरीरों की कोई अवस्था नही । तुम्हारे रहने से यह शरीर बच्चा । तुम्हारे रहने से यह शरीर कुमार । तुम्हारे ही रहने से यह युवावस्था । तुम्हारे रहने से ही इस शरीर की बृद्धावस्था । तुम अगर इस शरीर को छोड दो तो इस शरीर की कौन सी अवस्था होगी । बच्चा जन्म लेते ही यदि इस शरीर को छोड दे तो उस मे कौन सी अवस्था आएगी । इसलिए मंत्र कहता है कि जिन शरीरों की कोई अवस्था नहीं अर्थात् उसके रहने से ही, उसकी कृपा से ही अवस्था का बोध होता है । पर उसके बिना यह महत्व हीन हो गया है । उस चेतन के

करंट के बिना यह शरीर कुछ भी नहीं।

''महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति ।।'' ऐसी महान आत्मा को जानने के लिए यह मनुष्य शरीर है। यो शरीर तो बहुत है, पशु, पक्षी, कीट पतंग, देव, गन्धर्व किन्तु यह सब केवल भोग शरीर है। यहाँ तक कि देव शरीर में आत्मा का कोई बोध नहीं। वहाँ भी तुम अनन्त भोज तो भोग सकते हो किन्तु आत्मा का ज्ञान प्राप्त करने का कोई साधन नहीं वहाँ। तुम्हें दिव्य कर्म उसके लिए है। कोई व्यक्ति सत्सङ्ग प्रेमी नही, वह इस लोक काम करते २ धन तो पा ही जाता है। करोडपति भी हो गया किन्तु आत्मा का बोध जगा ही नहीं। उस को सत्सङ्ग करने को कहो तो कहता है करने की फुर्सत तो है नही सत्सङ्ग कहाँ से सुनें। मरने की फूर्सत न होने पर भी वह अपना काम निकाल ही लेता है। वह बहुत जबरदस्त है। अपने को समझने के लिए समय अवश्य निकालो। जैसे इस हंडी को भरने के लिए फुर्सत निकालते हो। अगर खाना दाना बन्द कर दो तो यह करोडों की सम्पत्ति क्या काम आएगी? इसलिए बुद्धिमान अपने को जानने की कोशिश करे। अपने को जाने बिना हम दूसरे को कितना जानेगे अपनेको देखने का प्रयत्न करो।

गाडी चलाने के लिए कितना सावधान रखना पडता है। स्टियरिङ्ग को सम्भालने के कितना ध्यान रखना पडता है। क्यों? कहीं असावधानी से एक्सी-डेंट हो गया तो इस शरीर में रहने का अधिकार भी नही रहेगा। यही डर है कि यह शरीर हमारा नही रहेगा। ध्यान कहाँ नही करना पड़ता। किसी के घर में घुस कर चोरी करने वाला कितना ध्यान रखता है, कहाँ से निकलना है? कहाँ धन रखा है? बुद्धिनान मुमुक्षु इस आत्मा में अपना मन लगावे। मंत्र कहता है 'महान्तं विभुमात्मानम मत्वाधीरो न शोचति' धीर जब इस आत्मा को विभु जान जाता है तो सोच नही करता। शोक नही करता। धीर माने दुःख भी है, दुःख का कारण भी है किन्तु यह घबराता नही। दुःखी नही होता मन को दुःखी नही करता उसको धीर कहते है। ज्ञान आने पर मृत्यु से भी नही डरना चाहिए अगर मृत्यु भी आ जाए तो डरो मत। उसको कहो कि यह रखा है तुम्हारा तोहफा यह शरीर। स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द,

स्वामी दयानन्द बडे अच्छे महात्मा हुए हमारे देश में । अगर उस समय इनलोंगो ने हमारी दृष्टि नही बदली होती तो आज यह हिन्दू जाति कहाँ पहुँची होती ? कुछ पता नही ।' यहाँ तो समुद्र छुते ही जाति चली जाती थी । आज तो तुम्हारी जाती के करोडों आदमी इङ्गलैंड, अमेरिका में रह रहे है पर उस समय तो समुद्र छुआ और जाति गई । इन तीन महात्माओं ने हिन्दू जाति को ऐसा विचार दिया । इस शरीर में जैसे नही नहाओ तो दुर्गन्ध भरेगा । स्नान करते हो तो शुद्ध रहता है । ऐसे ही यह समाज भी एक शरीर है । विद्वान इस समाज को विचार गंगा हें स्नान करवाते है तो यह शुद्ध, जीवित रहता है नही तो नाना प्रकार की कुरीतियाँ भर जाती है । नाना प्रकार के मिथ्या अहंकार भर जाते है । नाना प्रकार के अन्ध विश्वास भर जाते है । इस प्रकार ज्ञान से ऊपर कोई तत्त्व नही । स्वामी रामतीर्थ कहते है "O my sister death, Come and take this, It is my offer for you." मृत्यु से कहते है आओ हम तो तुम्हारे भाई है । देखो कितना शुद्ध ज्ञान है । भाई के पास बहन आती है तो भाइ कुछ न कुछ उसको देता है । सदा everready रहे जब आए तभी ले जाए ।

एक बडे अच्छे संत थे । हृषिकेश में रहते थे । रोज रात को बिस्तर खोल कर बिछाएं और सबेरे बाँधकर रख दें । किसी ने पूछ लिया कि स्वामीजी आप बरसों यही रहते है । इसी आश्रम में । रोज रात को विस्तर खोलकर बिछाते हो और सवेरे बाँधकर लटका देते हो क्यों ? तो बोले कि अगर किसी दिन इस आश्रम का व्यवस्थापक जो कोठारी है, वह कभी कहे कि जाओ यहाँ से तो बिस्तर बाँधने का भी समय न लगें । एकदम बाहर हो जाएँ । यह जो सारा संसार है, इसका कोठारी है मृत्यु देवता । उसने कहा get out तो फिर देरी नहीं करनी चाहिये हमेशा अपने को ready रखो । जहाँ उसने कहा बाहर हो जाओ (get out) फिर इधर उधर नहीं देखे । ज्ञानवान मुमुक्षु ऐसा निर्भय हो जावें । उस समय रोने लग जावे कि हाय यह सब यहीं छूट जाएगा । तो सोचो पहले क्या बांध कर लाया था । यहाँ का माल है यहीं छुटेगा । मुमुक्षु मोह को भंग करे ।

अपने को ज्योति भाव मे ले आओ । 'परम ज्योति सम्पन्न' स्थूल शरीर

के अहंकार को छोडो, सूक्ष्म शरीर के अहंकार को छोडो, कारण शरीर के अहंकार से बाहर निकलो और परम ज्योति स्वरूप मे अपने को ले आओ । 'स्वेन रूपेण' स्थूल शरीर के अहंकार को रोज सुषुप्ति मे छोडते हो, सूक्ष्म शरीर के अहंकार को भी छोडते हो । इस अवस्था मे न स्थूल शरीर का अहंकार, न इन्द्रियों का अहंकार, न बुद्धि का अहंकार दो शरीरों मे तो सुषुप्ति मे बाहर हो जाते हो, किन्तु कारण शरीर से बाहर नहीं होते । जैसे चतुर मां अपने बच्चे को आंगन मे चलने देती है । जब वह छोटा होता है चलना सीखता ही है।उसे आंगन से बाहर नही जाने देती । ज्यों ही छोकरा बाहर गया कि झट पकड कर ले आएगी । इसी तरह यह माया भगवती है । यह मां तो सवा पांच फुट लम्बी है पर माया की पकड कितनी लम्बी है । जहाँ भी तुम जाओगे इस माया की पकड से बाहर नहा जा सकते । यह माया भी उस मम्मी की तरह जीव को अपनी गोद से बाहर नहीं जाने देती । पर यह आत्म विद्या, ब्रह्म विद्या बडा दयालु है । जैसे विमला अपने बच्चे को बाहर नहीं जाने देती । उधर से आ गई जमना । उसने छोकरे का अपनी गोद मे ले लिया । क्या तुम अपने बच्चे को हमेशा गोदी मे ही रखती हो । वह उसे बाहर गई । इस जमना की तरह यह ब्रह्मविद्या है । नहीं तो विमला छोडने वाली नहीं । जमुनां ब्रह्मविद्या की तरह है यह बच्चे को बाजार मे ले जाती है । ब्रह्मविद्या जीव को ब्रह्म भाव मे, आत्म भाव मे खडा कर देती है ।

मंत्र कहता है इसी को तो आत्मा कहते है । जिस आत्मा की तू खोज कर रहा है । यहां स्थूल शरीर का अहंकार नहीं, सूक्ष्म शरीर का अहंकार नहीं और कारण शरीर भी यहाँ है । 'एतद ब्रह्म एतदमृतमिति' एतद ब्रह्म मंत्र कहता है, यही ब्रह्म है । 'सर्वोपाधि विनिर्मुक्त; इसमे कोई उपाधि नहीं। ब्रह्म कोई दूसरा नहीं । तेरी ही आत्मा है । यही ब्रह्म है । इस मे स्थूल, सूक्ष्म और कारण कोई उपाधि नही । यह सत्‌चित् आनन्द स्वरूप आत्मा ही ब्रह्म है । मुमुक्षु इस आत्मा का ध्यान करे । तोते वाली बात तो पहले भी सुना है किसी ने सुग्गा पाल रखा था उसने उसे सिखा रखा था कि जालवाला आएगा, जाल बिछाएगा हम नही फंसेगे । हम नही फसेंगे । ऐसा वह रटता है । एक दिन वह भाग गया और

जंगल मे चला गया ।वहाँ एक पेड पर हजारों सुग्गे थे । तोते मे एक विशेष शक्ति होती है कि वह जो सुनता है वही बोलने लगता है । यह (England returned trained) सुग्गा जब वहां पहुँचा तो सारे तोते यहा रटने लने । जालवाला आएगा । जाल बिछाएगा । हम नही फंसेगे । हम नहीं फसेंगे । एक दिन सचमुच एक जाल वाला शिकारी वहाँ आ गया । उसने जाल बिछाया और दाना भी डाल दिया । वहीं बैठ गया । एक भी सुग्गा नहीं आया । बेचारा शिकारी माथे पर हाथ रख कर बैठ गया । आज बच्चों का क्या सिखाऊँगा ? यह तो सब (traind) है । एक भा मूर्ख नीचे नहीं आ रहा । एक दूसरा आदमी आया, पूछा क्या सोच रहे हो ? देखतें नहीं जाल डाला हुआ है, दाना भी है पर तोते बोल रहे है सुनो । उसने कहा तुम पीछे हट जाओ छिप जाओ । फिर देखो आते है कि नहीं । यह दूर हट गया । धीरे से एक तोता धीरे से नीचे उतरा । देखते ही देखते सारे तोते जाल मे आ गये । गाना गाते जा रहे है हम नहीं फसेंगे । मस्ती से गाते जा रहे है और जाल मे फंसे पडे है । यही हाल इस जीव का भी है । गाता जा रहा है नहीं फसेंगे । अब फंसने मे क्या कसर है । मोह तुम्हारे अन्दर, शोक तुम्हारे अन्दर, भय तुम्हारे अन्दर । सारे प्रपंच मे फंसे पडे हो और गाना गाए जा रहे हो ।

मंत्र कहता है 'एतदमृतमभयमेत द्ब्रहेति' यही अमृत है । यही अभय पद है । इसका अर्थ ऐसा समझो कि यह तुम्हारा चेतन आत्मा जो है यह जब तक शरीर मे है तब तक सब बन्धु वा बान्धव उस शरीर से निर्भय होते है । जब यह चेतन शरीर को छोड देता है तो सब को भय लगने लगता है । 'एतस्यब्रह्मणो नाम सत्यमिति यहाँ दो शब्द आए है । 'तस्य ह वा एतस्य' वह्र परमात्मा जिस कहीं दूर समझा है । उसे तस्य शब्द से कह रहे है । और यह जो हृदय के अन्द न इसको एतस्य कहा है । तस्य शब्द परोक्ष अर्थ मे प्रयोग किया है । अर्थात् जो अर्थ तुम्हारी दृष्टि मे नहीं वह परोक्ष । जो अर्थ तुम्हारी दृष्टि मे है उसको अपरोक्ष कहते है । वो सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है वही सत्य है । वह ब्रह्म है । यह श्रुति ब्रह्म का नाम सत्य रख रही है । यह सत्य क्या है ? इसको कल के लिए छोड देते है इस पर कल विचार होने वाला है ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

५-५-८८

प्रवचन सं० २७

"ॐ अथ य आत्मा स सेतुर्विधृतिरेषां लोकानामसम्भेदाय नैतं सेतुमहोरात्रे तरतो न जरा न मृत्युर्न शोको न सुकृतं न दुष्कृतं सर्वे पाप्मानोऽतो निवर्तन्तेऽपहत-- पाप्मा ह्येष ब्रह्मलोकः ।।

(छान्दो. ८-४-१)

इस बात का विचार आया 'सम्प्रसादो' इस आत्मा को श्रुति भगवती सम्प्रसाद रूप कहती है । इस जीवन मे अगर कोई भी सुख का अनुभव होता है तो इस आत्म दर्शन से ही होता है । जैसे परस्पर हम लोग रहते हैं माता पिता, बेटा बेटी, पति पत्नी, जब तक चेतन का भान होता है तभी तक आनन्द में है । जब चेतन का भान बन्द हो गया तो दुःख हो जाता है । मान लो कोई आदमी बेहोश भी हो जाता है तो भी बडा दुःख हो जाता है । बेहोश होते ही चलो हास्पीटल मे दूसरी तो कोई जगह ही नहीं । होश मे आते ही खुश हो जाते हैं । जब उसने आंख रूपी खिड़की से झाका की आनन्द आ गया । इस आनन्द की कोई सीमा है ? जाग्रत में रूप से आनन्द आया तो यह रूप की सीमा में बंधा हुआ है । शब्द से आनन्द आया तो शब्द का सीमा मे बंधा हुआ है । रसाल पदार्थो के खाने का स्वाद आया तो यह आनन्द स्वाद की सीमा मे बंधा हुआ है । जितना स्वाद होगा उतना आनन्द आएगा । रूप रस गन्ध शब्द और स्पर्श यह पांच विषय जाग्रत मे हैं । इन विषयों की सीमा है । इन विषयों से जो सुख मिला वह भी सीमित होगा । यह विषया सुख है । और पति पत्नी, बेटा बेटी, माता पिता इन सब से जो आनन्द आता है वहाँ कौन से विषय का आनःद है । कहने को तो वहाँ सब चीजें हैं पर आंख की खिड़की से चेतन की ज्योति न आये तो वहाँ कौन सा आनन्द है? आनन्द तो चेतन का ही है । आत्मा का दर्शन नहीं ही तो रूप रस शब्द स्पर्श सब

गौण है । ऐसा जो चेतन सत् चित् आनन्द स्वरूप तुम्हारी आत्मा है इसका नाम रखा 'सम्प्रसाद' उस सम्प्रसाद की ओर मुमुक्षु ध्यान देवे । इसके लिए यह विचार चल रहा है । यह जो सम्प्रसाद है आगे जिसके लिए कहा :-

"तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणोनाम सत्यमिति"

उस ब्रह्म का नाम भी रखो । जैसे बच्चा मां से पूछता है ऐसे ही श्रुति भगवती जो मां से भी अधिक हित करने वाली है । यह मां तो वर्तमान में ही महान देखना चाहती है । लोक में महान होने के दो ही लक्षण है एक तो शरीर से महान बलशाली हो और दूसरा धन आदि मिल जाए । अच्छ बंगला मिल जाए । बस इतने तक ही मां का ध्यान होता है । पर श्रुति भगवती तुमको ज्ञान सम्पन्न करना चाहती है । ज्ञान सम्पन्न होगा तो बुद्धि के व्यामोह मे नही आएगा । शोक नही तो तुमको क्या दुःख है । कोई भी दुःख आने से पहले तुमको शोक भेजता है कि तुम जाकर उसको पकडो फिर मैं आता हूँ । यह शोक तुम्हारी शक्ल बिगाड़ देता है । जैसे लकड़ी सूख जाती है तो वृक्ष के पत्ते पीले पड जाते है ऐसे ही यह शोक जब तुमको अन्दर से पकड लेता है तो तुम्हारी शक्ल बिगड़ जाती है । श्रुति भगवती ज्ञान के द्वारा तुमको इतना तृप्त करेगी कि तुमको सत्य मे पहुंचा देगी ।

झूठ कभी भी एक रूप, एक रंग मे रहने वाला नहीं । वह रंग बदलता रहता है किन्तु सत्य कभी नहीं बदलेगा । श्रुति तुम को उस सत्य में पहुंचा देगी जब सत्य को पकड लेगा तो झूठ में पहले जो तुमको शोक था । मोह था वह नहीं होगा । उसके परिवर्तन मे पशु पक्षी भी दुःखी होते है । झूठ का परिवर्तन होना स्वभाविक है । जंगल मे शेर रहता है उसकी महारानी अगर मर गई तो वह शेर दुःखी हो जाता है । कहीं शेर मर जाए तो शेरनी दुःखी हो जाती है । तो प्रकृति के योग वियोग से पशु पक्षियों मे भी शोक मोह चलता है । उतने मे वह भी दुःखी हम भी दुःखी । किन्तु मनुष्य मे जब श्रुति भगवती ज्ञान को जाग्रत कर देती है तो इन मिथ्या पदार्थो से आने वाला दुःख थोडी देर के लिए आएगा किन्तु जड नही जमा पाएगा । अज्ञानी पकड कर बैंठ जाता है । ज्ञानी उसको पकडेगा नही । लोक मे नाटक तो करेगा पर टिकने नही देगा । जरा सा आंख मल लो क्या फर्क पढता है ।

जैसे आज कल पढीं लिखी लडकियाँ शादी के समय सब देख सुन कर शादी करेगी तो रोएगा क्या ? जरा सा मम्मी की आर देख कर एक बूंद उसके लिए निचोड दिया । पुराने जमाने मे मां बाप शादी करते थे और वह चिल्लाकर रोती थी । ज्ञान ही शोक का निवर्तक है । और ज्ञान ही शोक को बढाने वाला है । श्रुति भगवती तुमको उस ज्ञान के द्वारा ही वर्तमान मे भी सुखी करती है और परलोक मे भी । उस जन्म मे भी हम जितने महान बने हुए है यह हमारे पूर्व जन्म के सुकर्मों का ही फल है । जैसे पूर्व जन्म के सुकर्मो का फल तुम्हारा यह जन्म है । अच्छी मां मिली । अच्छा पिता मिला । सुन्दर शरीर मिला । सुन्दर ज्ञान मिला । ऐसे ही इस जन्म के सुकर्म भी तुम को (lift) देगें । इसमे शंका नही । वैदिक धर्म मे यह शंका वाली बात नही कि यह होगा कि नहीं । श्रुति कहती है 'तस्य ह वै एतस्य' जिस ब्रह्म के बारे मे हमने तेरे को बतलाया है उसको श्रुति सत्य का नाम दे रही है । मंत्र कहता है 'त्रीणिऽक्षराणि सतीयमिति तद्यत्सद्यमहरहर्वा एवंवित्स्वर्ग लोकमेति त्रीण्यक्षाराणि सत्यमिति ।' तीन अक्षर हुए स, त और यम मिल कर सत्यम् बना । मंत्र कहता है यत् सत तदमृतं । जो सत् है वह अमृत है । सारा जगत उसी के अन्दर जी रहा है । अपने शरीर को ही दृष्टान्त मानो । यह तुम्हारा शरीर इस आत्मा के आश्रय मे ही रहा है । अमृत वना हुआ है । उस चेतन के आश्रय मे ही यह शरीर बडा प्यारा बना हुआ है । बूढा भी हो तो भी चलो ठीक है किन्तु जहाँ चेतन ने इसको छोडा तो बच्चा भी होगा तो कुछ नही होगा । इस चेतन को ही अधिष्ठान कहते है । अधिष्ठान माने आश्रय ।

अधिष्ठान मे अन्यथा प्रतीति होती है । जैसे रस्सी मे सर्प भ्रम । अधिष्ठान सत्य होगा और उसमे भासने वाला मिथ्या होगा, प्रतीति मात्र होगा । गौड पादाचार्य कहते है :-जैसे अन्कार मे रस्सी का निश्चय नहीं हुआ । विकल्प हो गया । एक कहता है सर्प है । दूसरा कहता है टेढी मेढी लकडी पढी है । तीसरा कहता है पानी की धारा है । अधिष्ठान एक है और विकल्प अनेक है । यह जो भी भेद है दृष्टि के भेद से विकल्प मे भेद है । विकल्प कोई भी हो, है तो मिथ्या ही । मिथ्या का हुआ कि प्रतीति काल मे भी वस्तु है नही । यस्मिन् काले

जिस काल मे प्रतीति हो रही है उस काल मे भी वस्तु है नही । अपने शरीर मे ही देखो न । वच्चा भी दीखता है जवान भी दीखता है, बूढा भी दीखता है। प्रतीति तो होती रही पर वस्तुतः है क्या ? (cent) रखो । शीशी मे रखे रहो । लगाया नहीं । कार्क बन्द कर के रखा रहा तो भी वह रहेगा नही । देखते ही देखते उड गया । इसी प्रकार इस शीशी मे भी बचपन का (cent) उड गया कुमारावस्था का (cent) उड गया । जवानी का (cent) भी उड गया । अब इस बुढापे को यों समझो खरोंच खरांच मुमुक्षु इस जगत को यह समझे कि जिस जगत मे हम रहते है वह कच्चे धागे जैसा है । इसका कोई अस्तित्व नहीं । देखते ही देखते गायब होता जाता है । फिर भी भासता है, यह माया है । अधिष्ठान ही सत्य है । रस्सी का सत्यत्व ही सर्प मे भास रहा है। अधिष्ठान रस्सी है सर्प सच्चापन भी रस्सी का ही भास रहा है ।

'यस्मिन् द्यौं पृथिनी चान्तरिक्षमोत मनः सह प्राणैश्च सर्वै. । तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विभुञ्चथामृतस्यैष सेतुः' मंत्र कहता है उस परमात्मा के अन्दर यह जगत कैसे ओत प्रोत है । यह परमात्मा ही जगत का अधिष्ठान है । 'यस्मिन् द्यौ' द्यौ कहते है सूर्य मन्डल के ऊपर का लोक । मनश्चप्राणः श्रुति मन को पकडती है उसका अर्थ क्या है ? कि जो सारे व्रह्माण्ड का आधार है, वही तुम्हारे मन का आधार है । तुम उस ब्रह्माण्डाधिपति से जुदा नही हो । 'तमेवैकं विजानथ' तुम उस एक परमात्मा को जानो वही अमृत का सेतु है । बाकी सब केवल वाणी का विलास है । कर्ण रस मात्र है । 'आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथा-मृतस्यैष सेतुः' मुमुक्षु उस सत्य को पकडे ।

जैसे सोने से कंकण बनाते हैं । कभी गले का हार, कभी अंगूठी बनाते है । कभी २ व्यवहार के चक्कर मे फंस जाता है । देला भी पडता हैं । पैसे हैं नही पर देना जरुर है । घरवाली उदारता से कहा यह कंकण है । यह दे दो फिर वन जाएगा । तो पति क्या करेगा ? अच्छा पति पत्नी के गहने बेचना पसन्द नही करता । पर मजबुरी भी हो जाती है । तो वह कंकण लेकर सुनार के पास गया। बोला भाई कंकण तो मुझे दे दो और सोना तुम लेलो । उसके दाम मुझे दे दो । तो सुनने वाला क्या कहेगा? (screw) ढीला है । कंकण कोई जुदी

चीज नही है। कंकण है कहाँ ? यह तो सोना ही कंकण के आकार मे दीखता है । देखने मात्र का कंकण है । देखने मात्र का उसका व्यवहार है । असल मे सोना ही हैं।

जैसे यह सोना कंकण के रूप मे भास रहा हैं ऐसे ही यह महान ब्रह्म ही जगत के रूप मे भास रहा है। ज्ञानी दृष्टि मे जगत क्या है 'आत्मैवेदंसर्व ब्रह्मैवेदंसर्व' यह सब आत्मा ही है। कोई पागल भी अपने आपसे नही लडता लडता है दूसरे से । जिसको यह मान हो रहा है कि 'आत्मैवेदंसर्व' वह झगड़ा भी किसके साथ करेगा । यहाँ लडने की गुंजाइश ही नही। कितना ही क्रोध आव पर वह किस पर क्रोध करेगा । भिन्न २ विकल्प होते हुए भी मुमुक्षु यदि निश्चय कर ले कि यह तो रस्सी ही है । एककण पहले जो सर्प भास रहा था । भय से पसीना भी आ रहा था । दूसरे क्षण देख लिया कि यह रस्सी है । भय समाप्त हो जाएगा । यद्यपि देथते ही पसीना तो सुखेगा थोडा समय लगगा किन्तु निर्भय तो हो जाएगा । भय तत्काल निवृत्त हो गया । इसी प्रकार मुमुक्षु जब उस ब्रह्म को, सत्य को समझ लेगा कि ब्रह्म ही इस जगत का अधिष्ठान है तो नाम रूप सब मिथ्या भासने लगेगा । जैसे रस्सी स्वरूप का अज्ञान होने से रस्सी सर्प दीखने लगी । इसी तरह ब्रह्म का अज्ञान होने से ब्रह्म जगत रूप मे दीखने लगा । अज्ञ न ही इसका कारण है । माया हीं इसका क.रण हं ।

छान्दोग्य उपनिषद् के छठे अध्याय मे श्वेत केतु को उद्दाशक ऋषि का पुत्र, बडा पुत्र है। उस श्वेत केतु को महर्षि उद्दालक उपदेश कर रहे है कि बेटा यही सत्य है । किन्तु सुनकर फिर कहता है 'भूप एव' हे भगवन मुझे और समझाओ । यह असली जिज्ञासु का लक्ष्य है। एक दिन महर्षि कहते है 'न्यग्रोछफलं आनय' बट का विशाल पेड था । जवान लडका था झट फल ले आया । महर्षि बोले 'भिन्दि' इसे तोडो । तोड दिया। महर्षि ने पूछा 'किं पश्यसि' क्या देखते हो ? छोटे २ बीज इससे देख रहै है। इनमे एक दाने को पीस दो । उसने पीस दिया । अब क्या देख रहे हो ? कहता है अब तो हम कुछ भी नहीं देख रहे । हे सौम्य तुम श्रद्धा करो । अब तु कुछ नहीं देख रहा है। किन्तु यह महान विशाल बट का पेड इसी मे है। तुमको दीख नही रहा। तेरी आँख नाम

रूप की पकढ कर चल रही है। कार्य कारण मे लीन हो गया है। बीज से अकुर हुआ। अंकुर मे वृक्ष बन गया। वो वृक्ष का कारण वीज कार्य मे लीन हो गया। जैसे कंकड सोने के बिना कुछ नहीं। कारण के बीना कार्य कुछ नहीं। ज्ञानवान को सोना ही दीखता है। पर देखने वाले को नाम रूप दीख रहा है। उसको सोना और कंकड दो दीख रहे है। इसलिए उसको तैसे भी दोनों के ही देने पडेंगे। क्योंकि नाम रूप में इसको व्यामोह है। नाम रूप इसके ऊपर चढ गये है। सुनार के बल सोने के तैसे देगा बयोंकि उसको नाम रूप नहीं दीख रहे। उसके दिमाग मे केवल सोना ही है। इसी तरह प्रानवान मुमुक्ष इस जगत को ब्रह्म रूप ही दीखता है। नाम रुप को मिथ्या समझता है। अधिष्ठान को ही सच्चा मानता है।

"विनिश्चितां यथा रज्वां विकल्पितं विनिवर्तते"
तद्वदात्मा विनिश्चितः"

यह रस्सी है यह निश्चय हो गया तो अब कोई भी विकल्प रहेगीं। जैसे यहाँ रज्जु का निश्चय हो जाने पर यह सर्प है, यह जल धारा है आदि कोई भी विकल्प रहेगा नही। इसी तरह आत्मा का निश्चय ही जाने पर, अधिष्ठान रूप निश्चय हो जाने पर यह नाम रूप जगत मिथ्या हो जाएगा। सुनार की दृष्टि मे कंकण चूडी अंगूठी मिथ्या है केवल सोना ही सोना है। तुम नाम रूप मे खेलोगे। उसने नाम रूप मे नहीं खेलना है। उसने अधिष्ठान मे खेलना है। मुमुक्षु ऐंसी धारणा बनावें।

'मनोमयमिदं द्वैतमद्वैतं परमार्थतः'
मनसो ह्यमनीभावेद्वैतं नोपसभ्यते।

बेटा यह तू जो नाम रूप को जो देखता है, वह मनोमय है। मन जो है वह लाल मुँह वाला बन्दर की तरह है। इम डाली से उस डाली पर चला जाता है। हलवाई की दूकान थी बटवृक्ष के नीचे। उपर बन्दर रहते थे। बन्दर ताकता रहता है कि कब हलवाई उठे। हलवाई उठा और यह बन्दर झट से नीचे उतरा। एक लड्डू हाथ मे एक मुँह मे रखकर भाग जाएगा। इसीं तरह तुम्हारा मन भी इस बन्दर की तरह कूदता रहता है। निश्चल नही रहता। मन की कृपा से ही सब दीखता है। मन की कृपा से नाम रूप भासना है। जब यह मन अपनी भाव को

प्राप्य हो जाता है तो द्वैत नहीं दीखता । तुम उस भाव को पकडो जिससे यह मन अमनी भाव हो जाए । जैसे इस लोक मे यूँ समझो कि वस्तु प्रिय है । पास मे पडी है पर तुम्हारा मन उसमे गया नहीं । तो यह मन अमनी भाव मे हो गया । भोजन कर रहे है पेट भर गया । जिस भोजन का अभी तक स्वाद आ रहा था । अब मन अमनी भाव हो गया । इसलिए स्वाद नहीं । भय तभी तक विषयों की ओर जाता है जबतक जगत के स्वरुप को जानता नहीं । जब जगत के असली स्वरूप को समझता नहीं । जब जगत के असली स्वरुप को यह मन समझ जाएगा तो फिर यह विषयों की ओर आर्कार्षित नहीं होगा । विवेक और वैराग्य दोनों तुम्हारे पास आ जाएँगे । तुम्हारा मन अमनी भाव को पकडेगा । विवेक नाम रुप को मिथ्या करके अधिष्ठान को प्रकाशित करेगा । जैसे यह शरीर इस आत्मा के बिना कुछ भी नहीं । यह विवेक ही स्पष्ट करेगा । फिर वैराग्य तुम्हारे मन को घेरेगा ।

विवेक और वैराग्य यह दो मनुष्य के body guards है । माया ताकती रहे क्या फर्क पडता है। आचार्य कहते है ग्रहो न तत्र नोत्सर्गा चिन्ता यत्र न विद्यते, आत्मसंस्थं मद्ज्ञानं मजाति समतांगतम् । 'ग्रहो न तत्र नोत्सर्गा' ग्रह माने ग्रहण । अब ग्रहण नहीं । वहाँ ग्रहण नहीं तो उत्सर्ग भी नहीं । नोत्सर्ग उत्सर्ग माने त्याग । ग्रहण और त्याग वहाँ होता है जहाँ विकार होता है । वहाँ ग्रहणी नहीं त्याग भी नहीं । जैसे मान लो यह अपना शरीर है । शरीर मे ग्रहण भी हो रहा है, त्याग भी हो रहा है । यह विकारी है । देखते २ बच्चा, कुमार जवान हो गया । पर यह आत्मा अविकारी है इसमे ग्रहण भी नहीं त्याग भी नहीं । दूसरी बात ग्रहण किसका होता है ? जो मैं नहीं होता । दूसरे मे होता है । ग्रहण और त्याग दोनों दूसरे मे होते है । अपने मे ग्रहण त्याग क्या होगा ।

अपना स्वरूप तो ज्ञान ही ज्ञान है । 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म । इस तरह मुमुक्षु इस ज्ञान मे आगे बढता है ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

६-५-८८

प्रवचन सं०-२८

"ॐ तस्माद्वा एतं सेतुं तीर्त्वाऽन्धः सन्नन्धो भवति विद्धः सन्नविद्धो भवत्युपतापी सन्ननुपतापी भवति तस्माद्वा एतं सेतुं तीर्त्वापि नक्तमहरेवा भिनिष्पद्यते सकृद्विभातो ह्येवैष ब्रह्मलोकः ।।"

(छान्दो. ८-४-२)

विचार है मंत्र ने कहा 'तस्य ह वा एतस्य ब्रह्मणो नाम सत्यमिति' वो जो ब्रह्म परोक्ष रूप मे, तस्य कहने का तात्पर्य है परोक्ष रुप मे जो परमात्मा है उसको अपरोक्ष रूप मे बतलाने के लिए 'एतस्य' शब्द से कहा । जो वो है वो यह हैं । ईशावास्योपनिषद् मे आया है 'योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि' । वो जो पुरुष है वो मै हूँ । यहाँ मात्रा मे तात्पर्य नहीं, स्वरूप मे तात्पर्य है । वो सत् चित् आनन्द रूप है, हम भी सत् चित् आनन्द रूप है । इसीलिए गुरु कहता है हे सौम्य 'तत्त्वमसि' 'तू' वो है । ऐसा कहने का तात्पर्य क्या है कि स्वरूप मे तुम वही हो । मात्रा मे ठीक है, वह महान उपाधि होने से वह महान है । तुम छोटी उपाधि होने से छोटे हो, पर स्वरूप मे तुम छोटे नही हो । इसलिए 'तस्य ह वा एतस्य' कहा । ब्रह्मणो नाम सत्यमिति कौन ब्रह्म ? जो हृदय मे है । इसका नाम क्या है ? सत्य इस सत्य में तीन अक्षर है । स, त् और यम । सत्यम् कहते है तीन अक्षरों का क्या अर्थ है है कृपा कर के जुदा २ समझाओ ।

श्रुति भगवती अनुग्रह कर के समझा रही है कि इसमे जो सत् है वह अमृत है । तकारोपलक्षित माया और माया का कार्य यह ब्रह्माण्ड । स तो अमृत आत्मा और त् है इन्द्रिय गण संघात शरीर । इसका अधिष्ठान जो स है वो अमृत है । अमृत यह आत्मा ही है । इस का यदि भान न हो तो शरीर भी नहीं दीखता। सत् के बिना झूठ भी नहीं दीखता । जिसको सच दीखता है झूठ भी उसी को

दीखता है। यह वात अलग है कि झूठ को ही सच मान कर बैठ गये। क्यों ? अज्ञान के कारण। जैसे रज्जू को सर्प मान लिया। एक संत थे। प्राय: पैदल ही घूमने थे इस गांव से उस गांव। उनका नियम था कि गंगा का किनारा छोड कर नही जाना। रोटी भी वही खाना जहाँ तक गंगा की शुद्ध वायु मिले। एक दिन एक भक्त मिल गया। पांव पकड़ कर प्रार्थना करने लगा कि भगवन बर्षो से आप हमारा गांव छोड़ कर आए हो। अब हम लोगों नें एक बडा सुन्दर भवन बनाया है। सत्सङ्गी भी कुछ न कुछ करते ही रहते हैं। रहने की जगह भी बना कर रखते ह। आप वहीं चलो। भक्त वहुत आग्रह करने लगा। सत भी क्या करें। सोचा हमने कौन सा कोर्ट में तारीख पर पहुंचना है।

हम लोग तो भगवान की गऊएँ है। कोई खूंटा तो है नहीं जिससे बंधना है। कोई गाय किसी की होती है तो उसे उसके खुटे पर बंध जाना पडता है। संत भगबान की गऊएँ हैं। जहाँ भी जाएँगे, वही खूटे हैं। उन्होंने कहा चलो भगत। भगत ने कहा चलो गाडी भी खड़ी है। रास्ने मे ब्रह्मचर्चा भी करते जाएँगे। आराम से पहुंच जाएँगे। भक्त गाडी में बैठ कर ब्रह्मचर्चा सुनने की इच्छा करता है। 'शुभं शीघ्रं कुर्यात्' शुभ को जितनी जल्दी हो सके कर लेना चाहिए। अभी से ब्रह्मचर्चा शुरु कर दे। पूछा तेरी गाडी कहाँ है ? बोला बैल-गाडी सामने खडी है। संत बोले मुझे तों नहीं दीख रही। भक्त कहता है महाराज आपकी आंख तो ठीक है ? सामने तो खडी है बैलगाड़ी और आप कह रहे हो कि दीखती नहीं। संत वोले आंख मे क्या खराशो है ? पर गाडी कहाँ है ? सत कहते हैं तू कहता है गाडी खडी है, मैं कहता हूँ नही है। चल कर मुझे दिखा दे। भगत ने कहा अच्छा। अगर नहीं हुई तो आप मेरे मुँह पर लाफा लगा देना। संत बोले चल। भगत गया और गाडी का पहिया पकड कर बोला यह है गाडी। संत बोले यह तो पहिया है गाडी का। गाडी कहाँ है ? बैलों पर हाथ रख कर बोला यह गाडी है। यह तो वैल है। ऐसे ही जिस २ अंग पर हात रखता है, संत कहते हैं यह गाढी नहीं है। यह तो अंगों का समुदाय है। गाडी तो आप ने अनुसार दिखी नही, अब थप्पड ही लगा लो। कहाँ लगाऊँ ? मुँह कहाँ है। यह तो गाल है। मुँह कहाँ है जहा मै थप्पड लगाऊँ। मूँह तो गायब हो गया। जुदोर अंगों का नाम लेकर वस्तु है नही। केबल प्रतीति है।

वस्तु है ही नही । इसके लिए पतञ्जलि ऋषि कहते है 'शब्दज्ञानानु ाति वस्तु शून्यो विकल्प:' केवल शब्द ज्ञान है । जिस जगत को हम पकड कर बैठे है, यह विकल्प है ।

उदाहरण के लिए समझो, यह वस्त्र है । एक एक तन्तु को जुदा खीचते जाओ तो कपडा कहाँ है ? चाहे कितना भी किमती क्यों न हो । तन्तु के बिना कपडे का अस्तित्व है ही कहाँ । तन्तु ही कपड़े के आकार में भास रहा है । इसलिए कहा कि तन्तुओं का समुदाय ही कपड़ा है । 'शब्दज्ञानानुपाति' शब्द की महिमा में कपडे का भान तो हुआ । कपडा शब्द है । जैसे एक सोने से अंगूठी भी बनी, कंकण भी बना, चूडी भी बनी । पर असली तत्त्व क्या है ? अगर सोने को निकाल लो तो वह कंकण रहेगा ? कुछ भी नही बचेगा । इसलिए कहा 'शब्दज्ञानानुपाति' जिस वस्तु का नाम लिया पह केवल नाम मात्र है, है कुछ भी नहीं । केवल विकल्प मात्र है । विकल्प शब्द का अर्थ है बुद्धि के अन्दर भ्रम रूप तो हो, अन्यथा रूप भासे किन्तु अन्दर कुछ न हो । रस्सी में सर्प भ्रम हुआ । चिल्लाया सर्प, सर्प । भागा । गिर गया । चोट भी आई । किन्तु वहाँ पर सर्प नाम की कोई चीज नहीं । अगर कोई पकड़ना चाहे तो कुछ भी नहीं । यह सारे का सारा संसार विकल्प मात्र है । वेदान्त भाषा मे जो इसे मिथ्या कहा इसका तात्पर्य है कि यह मिथ्या है विकल्प मात्र है । देखने मात्र का ही है सब । वस्तु कुछ भी नही । वस्तु तो केवल सत्‌चित्‌ आनन्द स्वरूप ही है । और कुछ नही ।

स अमृत त मर्त्य । मर्त्य कहने का तात्पर्य मिथ्या से है । श्रुति ने किस को समझाना है ? जिसके जीवन मे मृत्यु भी है, अमृत भी । जो किसी को मरता हुआ देखता है, किसी को जीवित देखता है । उसी को समझाना है । अगर कोई चीज है तो वो भी मरने वाला नहीं और अगर नही है तो वो भी मरने वाला नहीं । तो मर्त्य क्या हुआ । रस्सी मे सर्प दीखा । डंडा उठाया । मारा । मर जाएगा क्या ? है ही नहीं तो मरेगा क्या ? पर दीख रहा रहा है इसलिए कहा 'न आत्मभावेन नाना इदं, न स्वेनापि कथञ्चनः न पृथङ्नाऽपृथक्किञ्चिदिति तत्त्व विद:विदु । यह जो नाना होकर भास रहा है , यह अपने स्वरूप मे नाना नही है नाना माने अनेक । अनेक नही है । यह रस्सी रुप से भी नाना नहीं और स्वरूप

मे भी नाना नही । माने सर्प रूप से भी नाना नहीं । तो क्या है ? कहते है 'न पृथङ्नापृथक्किञ्चन' जुदा हो तो पकड में आए । सपेरे ने सुना तो वीणा बजा कर चिल्लाने लगा । किसी ने कहा कोने मे है । खट् बैठ कर वीणा बजाने लगा । उसको भी दिखने लगा कि सर्प फण उठा कर नाचने लगा है । अंधेरे से उसको भी भ्रम हो गया । सर्प का स्वभाव है । कि नाचते २ आगे आ जाता है । सपेरा कपड़ा डाल कर उसे पकड लेता है और पिटारी मे बन्द कर देता है किन्तु यह सांप ऐसा है कि आगे आता ही नही । इतने मे उस सपेरा का छोकरा आ गया । लाईट फैंकी । कहाँ है सांप ? वो है । अरे, यह तो रस्सी है । तो क्या हुआ वो भासने वाला सर्प न रस्सी की शक्ल में कुछ, न सर्प की शक्ल में कुछ । फिर भी भास रहा है । इसी तरह इस सारे ब्रह्माण्ड को समझो । सारे ब्रह्माण्ड का यही हाल है ।

आज कल गवर्नमेंट जो भी बड़ प्लान बनाती है पहले उनका माडल बनाती है । जो भी वडे प्लान मे बनाना है वह पहले माडल ने दिखाती है । ऐसे ही यहाँ भी है । 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' जो (matter) तुम्हारे पिंड मे माने इस शरीर मे है वही सारे ब्रह्माण्ड से भी भरा है । इस शरीर मे से चेतन को जुदा कर दो तो देखो इस शरीर मे क्या मिलेगा । न बचपन, न कुमारावस्था, न युवावस्था और न बुढ़ापा मिलेगा । यदि वो बैठा है जो सबको देखता है पर जिसको कोई नहीं देखता । सब खोजने जा रहा है वही छिपा हुआ है । खोजने वाला स्वयं ही छिप गया है । यही आत्मा है । सत्चित् आनन्द स्वरूप तुम्हारी आत्मा ही तत्त्व है, बांकी कुछ भी नही । । महर्षि व्यास कहते हैं 'एकत्वं मक्षरं प्राहुर्नानात्वंक्षर मुच्यते, एकत्वंदर्शनं भूयात्, नानात्वं स्यादर्शन' एकत्व ही अक्षर है महर्षि सारे ब्रह्माण्ड की दृष्टि मे एकत्व दर्शन ही करते है । अपने इस शरीर के अन्दर इस एकत्व को देखते आ रहे हो । शरीर तो बदल रहा है पर जिसकी कृपा से शरीर जीवित है वो अमृत है । शरीर मे नानात्व है वह अक्षर परमात्मा है । वह अमृत है । मंत्र इस अमृत ब्रह्म का नाम सत्य कह रहा है । स त और यम । जों यम साथ मे है यह स और त दोनों को कंट्रोल करता है । यह यम माने नियंत्रण महत्त्वपूर्ण है । स अमृत है । त मर्त्य है । यम दोनों का कंट्रोल करता है । उदाहरण के लिए समझो यह सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा तुम्हारी ।

इस आत्मा का आभास पडा बुद्धि में। श्रुति कहती है 'यो मनसोऽन्तरो यमयति बृहदारण्यक उपनिषद् अन्तर्यामी ब्राह्मण का यह मंत्र है। 'यं मनो न वेद यस्य मनः शरीरं यो मनसोऽन्तर यमयत्येष स आत्मान्तर्याम्यमृतः' वो परमात्मा मन के अन्तर स्थित है और मन से न्यारा है।

दृष्टान्त के लिए जैसे तुम्हारे घर मे दर्पण पडा ह। उसके सामने खडे हो जाओ। तो तुम दर्पण से न्यारे हो। क्योंकि निर्मल वस्तु तुम्हारे प्रतिबिम्ब को खींचेगी पर अपने स्वरूप से तुम न्यारे हो। इसी तरह यह परमात्मा तुम्हारे मन के अन्द प्रतिबिम्बित हो रहा है। भास रहा है। यह मन बडा निर्मल है, इसलिए वो परमात्मा इसमें दीख गया। श्रुति कहती है 'मनसोऽन्तरो' मन के अन्दर है। पर मन से न्यारा है। यह मन उसको नहीं जानता क्योंकि मन उसका शरीर बन गया है। मन के अन्दर आत्मा का आभास आया तो यह मन चेतन हो गया। मन जब शरीर से मिला तो शरीर चेतन हो गया। देखो कितना हरा भर लगता है। किन्तु जहाँ चेतन आत्मा ने छोडा फिर देखो। इस शरीर को तो (working office) समझो। जैसे अपना कोई मित्र हो पर दफ्तर (office) मे ही मिले। घर कभी आवे ही नहीं तो क्या कहेंगे? अफिस के समय आया तो कुछ न कुछ काम ही लेगा। यह शरीर तो दफ्तर (office) है। जो भी प्रिय सम्बन्धी पति पत्नी, बेटा बेटी भाई मां बाप सब यहाँ अफिस मे ही मिलते है। प्यार से भी मिलेंगे कभी गुस्सा आ गया तो झगडे से भी मिलेंगे किन्तु मिलेंगे शरीर से ही। इसके आगे (black out) कर रखा है। इसके आगे कोई अपना नहीं।

थोडी देर के लिए हम गाढ निद्रा में जाते है तो दया करके नहीं छेडते कि चलो सोया पडा है किन्तु यदि बेहोश हो गया तो कहेंगे कि दफ्तर(office) मे है नही। कहाँ चला गया। दफ्तर (office) को ही उठा कर हास्पिटल ले जाते है डाक्टर को पैसे भी देते हैं, हाथ भी जोडते है। ढूंढो इसको कहाँ छिपा कर बैठा है। चोरी कर के भाग गया है। किन्तु जब तक वह खिडकी नही खोलेगा, दिखेगा किसी को? मन रूपी खिडकी खोलेगा तो आंख भी खुल जाएगी। सारे दफ्तर (office) के किवाड खुल जाएंगे।

चेतन के बिना कोई वस्तु सत्य नहीं। उसी के नाम मे हम एक दूसरे मे मिल रहे है। उसके नाम के बिना हम किसी से नहीं मिलते। जो कुछ उसके अतिरिक्त है वह रब विकल्प है। इसलिए महर्षि पातञ्जलि कहते है।

"शब्दज्ञानानुपातिवस्तुशून्यो विकल्पः" शब्द मात्र से वस्तुका बोध तो हो रहा है पर वस्तु है नहीं। उदाहरण के लिए समझो "एषा वन्ध्या सुतो याति, शशशृङ्गो धनुर्धर" वह दे ो वन्ध्या ा पुत्र खरगोश के सिंग घनुप लेकर जा रहा है। कितना बडा शू बीर है। शब्द मे वस्तु का भान तो हो रहा है किन्तु अर्थ नहीं है। शब्द ी बडी महिमा है। जरा सा गलत शब्द बोलो तो हृदय मे चोट लगती है। जरा प्रिय शब्द बोलो तो हृदय हरा भरा हो जाता है। गलत शब्द हृदय की खुशी को ा जाता है, जैसे सूर्य ी धूप लोगों कीं क्या हालत करती है। प्रिय शब्द से रोया हुआ आदमी भी हंसने लगता है। इस प्रकार शब्द का महत्त्व होत तो है। व्रह्या ा बेटा जा रहा है। 'एष बन्ध ासुतोयाति' िन्तु है कुछ ी नहीं सुनने ाले के सा ने ए. शूरवीर का बेटा खडा हो जाता है। यह ि ल हे। िस दु नया मे हम रहते है, यह शशश्रृङ्ग जैसा नहीं है। यह सच्च नहीं फिर भी सत्य जैंसा दीखता है। जैसे गुलाब का फूल है, अगर इस ी एक २ पखुडी ींच लो तो फूल हाँ रहैगा। इसलिए यह केवल देखने मात्र का है। पखुडी रहे ी तो ाह बढा सुन्दर फूल है। जिसको देंगे वह खुश हो जाएगा। इसलिए मंत्र ने कहा है "यो मनसोऽन्त यम ति" मन के अन्दर है। मन मे न्यारा है। 'यं मनो न वेद' मन उसको नहीं जानता। जानने का अधिकार मन ने अपने हाथ मे ही रखा है। भगवती को नहीं दिया। उसने कहा उस ो जादेने की ड्यूटी हमारीं। तुत्र भिन्न २ आकार बनाती जाओ। हम समझते जाएंगे। बस यह मा ा भगवतीं भिन्न २ आो ार बनाती जा हैं।

जैंसे अपना शरीर है, इस शरीर मे हम जन्म से रह रहे है। खाना पीना सुन्दर वस्त्र दि ी व्यवस्था कर रहे है किन्तु यह नहीं जानता की हमारे ऊपर इतनी कृपा कौन कर रहा है। इसने कहा कि भगवन जानने की ड्यूटी आप ही राखो बाकी हमारा नाम ही आपका नाम होगा। हमारा रूप ही आपका रूप है। नर्मदेश्वर घीसते २ देवता बन जाता है। जैसे पत्नी पति के लिए घिसती

जाती है । इसी तरह यह शरीर तुम्हारे लिए घिस रहा है: किन्तु जानेगा तुमको कोई शरीर के नाम से ही । कोई शरीर के मोह से जानेगा कोई शरीर के आकार से ।मूर्दे पूरी परौठे खा रहे है । पर कब खायेंगे ? जब तुम्हारी छाया मे बैठेंगे । यह बताओ तुम सिद्ध हो कि नहीं । मान लो सायं काल का समय हो । मुर्दाघाट के पास कोई सिद्ध हो । दो तीन मुर्दे भी आ जाएँ । पच्चीस पचास आदमी भी उनके साथ । सिद्ध ने खीर पकाई और सबसे कहा खाओ । उन्होंने कहा कैसे खाएँ वह देखते नहीं मूर्दे जलाने आए है । सिद्ध ने कहा इनलोंगो को भी खिलाएँगे । सिद्ध ने लात मारी कि उठो मुर्दो खा र खाओ । सब मुर्दे एक २ करके बैठ गये । यह बताओ यह सब लोग खुश होंगे कि नहीं । सब हाथ जोडकर कहेंगे कि तुम तो भगवान हो । तो इसने दो तीन नो ही उठाया है । तुम्हारे भगवान ने कितने मुर्दे उठा रखे है ? सबको बढिया २ खिला रहा है ।इसके ध्यान से जो सिद्ध हुए उनको तो मानते हो । पर जो असली सिद्ध है उसको सिद्ध मानता ही नहीं । और कोई संत अगर सिद्ध हो भी गया है तो उसी के ध्यान से सिद्ध हुआ है । सिद्धि नहीं बाजार मे तो बिकती नहीं । इस आत्मा से बडा कोई सिद्ध नहीं कोई और बडा सत्य नहीं । सही सत्य है । मुमुक्षु अपनी सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा मे मन को लगाता रहे ।

यह मन का भी नियन्ता है । मन का नियन्चण कर रहा है । मन का नियन्ता अन्तर्यामी है । परमात्मा इस जगत का नियन्ता है ।उस परमात्मा के हाथ मे ही इस जगत का कंट्रोल है । जीवों के हाथ मे तो थोडा २ शासन है । वो इतने मे ही किसी को जीने नहीं देना चाहते । तो सारे ब्रह्माण्ढ का नियन्त्रण अगर जीवों के हाथ मे हो तो बडा मुश्किल है । इसलिए यह मंत्र स्पष्ट करता है '' तद्यत्सद्यमहरहर्वा एवंवित्स्वर्गलोकमेति ।'' ब्रह्मवित् जो है प्रतिदिन स्वर्ग जाता है । अहरहर का अर्थ प्रतिदिन है । यहाँ वह स्वर्ग नहीं । किन्तु हृदय के अन्दर प्रवेश करता है । जैसे सामान्य प्राणी सुषुप्ति मे हृदय मे प्रवेश करते है । पर बंधे २ जाते है । जैसे अपराधी की आँख पर पट्टी बांधकर underground महाराजा के पास ले जाया है ऐसे ही यह जीव अविद्या मे बंधा हुआ रोज हृदय रुपी गुफा मे जाता है । वहाँ का आनन्द प्राप्त करता है । पर जानता कुछ नहीं । किन्तु यह ब्रह्मवित् जो आत्मवेत्ता है, यह रोज समाधि

मे हृदयाकाश मे प्रवेश करता है। और यह जानते हुए कि 'ब्रह्मैवाहस्मि' 'आत्म वाहस्मि' महान आनन्द का अनुभव करता है। वह महान गूढ़ तत्त्व को समझता हुआ कि आत्मा क्या है आनन्द का अनुभव करता है।

कल और इसकी व्याख्या करेंगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

७-५-८८

प्रवचन सं० २९

"ॐ तानि ह वा एतानि त्रीण्यक्षराणि सतीयमिति तद्यत्सत्त''''महरहर्वा एवंवित्स्वर्गं लोकमेति।''"ॐ अथ य आत्मा स सेतुर्विधृतिरेषां लोकानामसम्भेदाय नैतं सेतुमहोरात्रे तरतो न जरा न मृत्युर्न शोको न सुकृतं न दुष्कृतं सर्वे पाप्मानोऽतो निवर्तन्तेऽपहतपाप्मा ह्येष ब्रह्मलोकः॥"

(छान्दो. ८-३-५।८-४-१)

विचार कर के आए हैं कि बुद्धिमान मनुष्य क्या चाहता है ? मुझको कभी दुःख न हो ।बुद्धिमान मनुष्य की भगवान से यह मांग है कि हमको सदा सुख ही देना । दुःख नहीं देना । श्रुति कहती है कि वेटा वो सुख तो तेरे पास ही है। तेरे हृदय मे छिपा कर रखा है और तुम बाहर खोजते रहते हो । किस्से तो सुनते ही रहते हो एक सेठ कलकत्ते से बम्बई के लिए फर्स्ट क्लास में चला। रुपया जेब मे रख लिया । किसी जेब कतरे को मालूम हो गया । वह भी सेठ के पीछे लग गया । सेठ भी समझ गया । वह रात को रुपये उसी चोर के तकिए के नीचे रख दिया और तान कर जो जावे । चोर ने देखा कि सेठ तो तान कर सो रहा है । उठ कर उसका सारा माल तलाश लिया । पर कुछ नहीं मिला । अपना बिस्तर तो उसने देखा नहीं था । खोज खाज कर हार गया और अपना भाग्य को कोस कर सो गया । सवेरे चोर उठ कर बाथ रूम गया तो सेठ ने अपना माल निकाल लिया । चोर के सामने ही रुपये निकाल कर गिनने लगा । रात को फिर चोर के तकिए मे छिपा दिया और आप सो गया । चोर ने सेठ का सारा सामान टटोल लिया पर रुपया वहाँ हो तव मिले उसको । सबेरे चोर बाथ रूम गया और सेठ ने अपना रुपया निकाल लिया । और फिर गिनने लगा । चोर हार कर पूछ ही लिया कि बताओ यह रुपया तुम रखते कहाँ हो मैं तो खोज २ कर थक गया । सेठ बोला हम भी कोई ऐसे ही सेठ थोड़े बने है । हम भी आदमी देख लेते है । रखते कहाँ है यह तुम्हें कैसे बता दे । चोर बोला यह मेरी बडी भारी हार ह कृपा कर के मुझे वता दो । सेठ ने बता दिया कि रात को मैं रुपया तेरे तकिए मे रख देता रहा क्योंकि वहाँ तू खोजेगा नहीं । चोर ने सेठ को नमस्कार किया कि आप तो हमारे गुरु निकले ।

ऐसे ही यह जीव जहाँ सुख रखा है वहाँ तो खोजता नहीं । जहाँ केवल सुख की छाया मात्र है, यह विषय क्या हैं रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श, सब ऐसे ही हैं । जैसे समुद्र में गोता खोर गोता लगाते रहते हैं । ही यह जीव भी इन विषयों के समुद्र मे गोते लगाता रहता है और जहाँ सुख रखा है वहाँ खोजता ही नहीं। उसने तुम्हारे हृदयाकाश मे, दहराकाश मे सुख रखा है। सत् चित् आनन्द स्वरूप यह आत्मा ब्रह्म वही पर है । इस आत्मा का नाम है सम्प्रसाद । सम्प्रसाद इसलिए कहा कि इसी के प्रसाद से सब खुश होते हैं । इसके लिए दृष्टान्त देकर

आए है कि मान लो अपना कोई प्रिय वन्धु वेहोश हो जाते। सही माने मे देखो तो हैं तो वह अभी अन्दर ही। छोड़ कर गया नहीं कहीं। तो भी जो आएगा दुःखी हो जाएगा। यह आंख की खिडकी से तुमको देखता नहीं। आंख खोल कर देखते है और स्वाद लेते है। आंख की खिड़की से हम एक दूसरे को देख कर प्यार करते है। बात करते है। यह आनन्द है। पर जब आंख से नहीं देखते तो जैसे कोई दरवाजा बन्द कर के अन्दर बैठ जाए। घर मे आदमी दो प्रकार से दरवाजा बन्द कर के बैठता है। या तो गुस्से मे आ जायगा तो दरवाजा बन्द कर के बैठ जाएगा या एकान्त चाहेगा तो। पुराने जमाने क्रोध आने पर अलग कमरे जाकर बैंठ जाते थे। घर मे एक कोप भवन बना होता था। जब कोई उस कमरे मे जाकर बैठ जाता था तो घर वाले समझ जाते थे कि यह क्रोध मे है।

एक सेट थे। फर्स्ट क्लास सेठ वो जों अपना बंगला बना कर रहे। जो किराए के वंगले मे रहे वह दूसरा दर्जाका(second class)सेठ। आज कल यह भाषा थोडी उल्टी हो गई है।पहला(first)क्लास सेठ किराए के वंगले में रहे और दूसरादर्जाका(second class)अपने बंगले मे।एकदूसरादर्जाका(second class) सेठ आया और बोला नीचे का तला(ground floor) तो खाली ही पड़ा है। मेरे को दे दो तो मैं आ जाऊँ। सेठ ने कहा ठीक है। किराया निश्चित किया और सामान लेकर आ गया और रहने लगा। एक दिन दूसरा दर्जाका(second class) सेठ ने सेठानी के गले में पांच हजार का हीरों का हार उसके गले में डाल दिया। उस जमाने मे पांच हजार। क्या तारों की तरह हीरे चमक रहे है उसमे झट वह ऊपर गई और वोली बिमला देखो मेरा सेठ कैसा हार लाया है। हार देख कर सेठानी की आंखें खुली की खुली रह गई। सोचने लगी यह किराए का सेठ इतना बढिया हार ले आया। सेठानी ने घर मे एमरजैंसी लगा दी। बत्ती नहीं जलेगी। सेठ से कोई वात नहीं करेगी। सेठ आया। देखा कि घर मे अंधेरा हो रहा है। नौकर से पूछा उससे इशारे से मना कर दिया। इशारे से बता दिया बोलना मना है। नौकरानी से पूछा सेठानी कहाँ है? ऊपर इशारा कर दिया। कोप भवन में है। समझ गया। पैर कांपने लगे। ऊपर तो जाना ही पडेगा। उपाय कुछ था नहीं। धीरे से दरवाज़ा खट खटाया। सेठानी ने फूंकार मारी चले जाओ जहाँ से आए हो। सेठ बोला गड़बड़ी हो गई है तो क्षमा

कर दो धीरे से मनाया दरवाजा खोला । देखा क्या रूप बनाया है । केस खुले हैं, उल्टी खाट पर सोई है । पूछा मेरी क्या गल्ती है यह तो बताओ । बोली कितने बरस हो गये मेरी बांह देखो एक सोने की चूड़ी भी नही । किराएदार को देखो अपनी सेठानी को पांच हजार का हार लाकर पहनाया है । सेठ बोला बस यह बात है । मैं तेरे लिए पच्चीस हजार का बनवा कर लाऊंगा । सेठानी खुश हो गई । आलू के परौंठे बने । प्यार से खाया और सो गये ।

सवेरे दुकान पर गया । सिर पकड़ कर बैठ गया । सोचने लगा कि समस्या को कैसे सुलझाया जाए । उसका मित्र आ गया । पूछा क्या बात है ? घर मे कुछ गड़बड हो गई है । हाँ हो तो गई है पर मैंने एक्सीडेंट सम्भाल लिया है । पर सौदा महंगा पडा । पच्चीस हजार का हार सेठानी को देना पडेगा । मित्र ने कहा बस इतनी बात हैं, मैं पांच सौ मे काम कर दूंगा । मित्र बडा होशियार था। तुम रात्रि से उसको प्रकाश मे पहनाना और समझा देना कि दिन में पहने नहीं । बोला ठीक है । बस पांच सौ रुपये का हार बढिया डिब्बे मे बन्द कर के ला दिया। सेठ ने जाकर सेठानी को पहना दिया । छमछम कर के नीचे उतरी और उसको दिखा कर आई जिसने उसकी छाती मुंग दला था । बोली देखो । यह पच्चीस हजार का है । मेरा सेठ बनवा कर लाया है । ऊपर आकर हार उतार कर रख दिया और काम मे लग गई । नौकर ने हार इधर उधर कर दिया । इधर बारह बजे सेठ खाना खाने आया । देखा कि सेठानी रो रही है । पूछा क्या हुआ ? रोते २ कहती है वो हार जो आप मेरे लिए लाए थे न वो । क्या हुआ ? चोरी हो गया । वो हार गया रोती जा रही है और बोल रही । अब देखो सेठ हस रहा है और सेठानी रो रही है । क्योंकि सेठ की नजर मे पच्चीस हजार का हार नही है । केवल पांच सौ का है । वह झूठा समझ कर हस रहा है । वह सच्चा समझ कर रो रही है । इसी तरह अज्ञानी की दृष्टि में यह संसार सच्चा है, नाम रूप सच्चा है । इससे मिलने वाला सुख भी सच्चा है । इसलिए वह शोक, मोह, चिन्ता मे रहता है । ज्ञानवान की नजर मे यह झूठा है । कुछ भी नही है । इस का जो सुख है वो भी झूठा है । शोक मोह चिन्ता भी झूठे है । यह नाम रूप प्रपंच सामने आता जाता है । किन्तु इससे उसको कोई सुख नही । वह इसको मिथ्या समझ कर मस्त रहता है । इस आत्मा का महान आनन्द को सम्प्रसाद कहा

है । आत्मा को सम्प्रसाद समझता है । इस आत्मा के ऊपर कोई आनन्द नहीं । उस आनन्द स्वरूप आत्मा के लिए अब मंत्र कहता है 'य आत्मा स सेतु विधृति' ।

यह बडी महत्त्व पूर्ण बात यहाँ श्रुति स्पष्ट कर रही है । यह आत्मा सेतु है । सेतु नाम है पुल का (Bridge) का । उसका अर्थ है । बडी २ नदियों पर जैसे पुल बांध देते है तो एक चींटी भी उस पुल से उस महान नदी को पार कर लेती है । आराम से सैंडिल पहन कर टप टप कर के पार चली जाएगी । इसको सेतु मिल गया । नदी की कितनी गहराई है । कितनी भयंकर नदी है । इसका कोई भय नहीं उसे । किन्तु सेतु नही मिले तो हाथी भी इस नदी को पार नहीं कर सकता । इसी तरह यह जो माया का समुद्र है, जिस संसार मे हम लोग रहते है यह माया का समुद्र है । इसको पार करने के लिए यह आत्मा सेतु है । जो श्रद्धाशील मुमुक्षु इस आत्मा को पकड लेगा वह इस संसार समुद्र से पार हो जाएगा । नही तो वह जन्म मरण से छुट्टी नहीं पा सकता । आचार्य आद्य गुरु श्री शंकराचार्य जी कहते हैं ।

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं, पुनरपि जननीजठरे शयनं । इह संसारे खलु दुस्तारे, कृपया पारे पाहि मुरारे । शंकराचार्य अपने समय के महान दार्शनिक हुए । केवल भारत के हीं नहीं विश्व के आज के दार्शनिक मुक्त कंठ से प्रशंसा करते है कि श्री शंकराचार्य का दर्शन ही आज मानव को शान्ति मानव को शान्ति प्रदान कर सकता है । बाकी सबने तो अपने २ बाडे बना रखे है । भेद में सुख नहीं । सुख तो अभेद मे है । मान लो एक विशाल आम का पेड़ है । शाखा प्रशाखा है । कितने फल लगे है । एक ही शाखा को पकड कर बैठ जाए कि यह हमारी है, तो उसके कितने फल । और एक कहे कि यह सारा वृक्ष हमारा है । इसका अर्थं क्या है कि सारे फल उसी के है । उसको भेद करने की जरूरत नहीं । एक फल मे जो स्वाद है, सारे फलों में वही स्वाद है । मान लो हापुस या लंगडा है या दशहरी है । जो स्वाद एक आम का है वही सैकडों आमों मे भी है । इस पेड़ की शाखा, इसके पुत्र और फिर उनके ऊपर लगे हजारों फल लगें है । लगाया तो एक बीज था । ऊपर कितने फल है ? लाखों लाखों । इन लाखों फलों

मे दशहरी का जो रूप था वही रूप है , जो रंग था वही रंग है, जो गन्ध था वही गन्ध है । जो स्वाद एक दशहरी का था वही इन सबका है । फिर उनको एक मान या अनेक । एक हीं कहना होगा । जब एक दशहरी पेड के ऊपर हजारों फल हैं वह एक ही है, दूसरा नहीं तो इस संसार वृक्ष जो ब्रह्म वृक्ष है, इसका बीज कौन है ? ब्रह्म । इन सारे शरीरों को इसके फल मानो । इनके अन्दर जो रस है, वह कौन है? वही ब्रह्म रस है । इन सबको एक मानोगे कि अनेक ? इसलिए कहा 'एको देव: सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी, सर्वभूतान्तरात्मा' । सबके अन्दर जो तत्त्व है वह एक है ।

श्वेताश्वतरोपनिषद् की श्रुति है एक ही देव सब भूतों के अन्दर गूढ है, माने छिपा हुआ है । सर्व व्यापी है । जैसे अपने शरीर मे देखो नख से शिख तक एक ही चेतनता के अन्दर यह शरीर है । यदि एक हाथ को ही चेतन छोड़ दे तो हाथ सुखी लकडी जैसा हो जाएगा । डाक्टर को पैसे भी दोगे और कहोगे कि इस हाथ को काट दो । कितना कीमती है पर हाथ है, इसलिए कीमती नही है । चेतनता हैं इसलिए अच्छा है । ' कर्माध्यक्षः सर्वभूतादिवासः । सर्व भूतादि वासः का मतलब है 'सर्वाणि भूतानि अधिवास्यति' सम्पूर्ण भूतों को आश्रय दे रहा है । जैसे अपने शरीर को ही समझो । बाहर जाने की जरूरत नहीं । ठीक है इस शरीर कों अन्न चाहिए, वस्त्र चाहिए, रहने के लिए जगह चाहिए । पर चेतन नहीं हो तो क्या चाहिए । बस थोडी सी लकडी चाहिए । लोगों गायब कर देना है कि तुम अब हमारे साथ रहने के काबिल नही रहे । इसलिए आत्मा से ही दोस्ती करो, जिसके बिना कोई हमारा नहीं, जिस के रहने मे सब हमारे । वो आत्मा । चेतन अगर छोड़ दे तो मुर्दे का कौन दोस्त है । वेद मंत्र कहते है, ऐसी भावना करो ' आत्मैवाहमस्मि ' ' ब्रह्मैवाहमस्मि ' आत्मा ही मैं हूं । 'मैं ब्रह्म हूं ।'

जो रूप मेरा दीखता है वह केवल दिखने मात्र का है । जैसे थोक के व्यापारी थोक का नमूना (sample) दीखाते है । इसी तरह वो जो अन्दर बैठा है वह असली है । उसने पहले बचपन का (sample) दिखाया । उसने कहा अच्छा थोडी देर से ले लेंगे । थोडी देर मे कुमारावस्था का नमूना दिखा

दिया । वह धीरे २ पसन्द करता गया और कहता गया अभी रहने दो । थोडे दिनों मे जवान हो गये । साधारण (simple) मे यह सुन्दरता किस की है ? (packing) की कि जो अन्दर बैठा है उसकी ? अन्दर तो माल है, जो जो अन्दर है, वही सुन्दर है । बाहर की (packing) तो सिर्फ यह दिखलाने के लिए है कि अन्दर वाला कितना सुन्दर है । अन्दर से सुन्दर है तभी बाहर से सुन्दर दिखाई दे रहा है । बुद्धिमान ऐसी आत्मा को पकडे । इस आत्मा को पकड़ेगा तो पार हो जाएगा इसलि इसको सेतु कह रहे है ।

नदी की धारा मे कोई बह गया । किनारे की घास फूस पकड़ता गया और वह छूटती गई । यह बहता गया । जब तक कोई मजबूत चीज हाथ मे नही आएगी तब तक बहता ही चला जाएगा । जन्म की लहर मे ऊपर आ गया । दीख गया तो ढोलक पीटने लगे । मरण की लहर आई । नीचे दब गया तो लगे स्यापा पीटने मर गया, मर गया । आंख बन्द कर के देखो कि जो अभी तक हमारे बीच मे था १०० वर्ष से साथ था । वह अभी २ जाने कहाँ चला गया । कुछ पता नहीं । जो हमारा था अब वो हमारा नही । अब मान लो कि पड़ोसी के घर जन्म गया और तुमको स्वप्न मे दीख गया कि बेटा मैं पड़ोसी के घर आ गया हू । पड़ोसी के घर बेटे का जन्म हो गया । तुम लेने पहुंच जाओ । वहाँ जा कर कहो कि आपके घर जो बेटा जन्मा है वह तो मेरा बाप है तो वो क्या कहेगा? वेदान्त भाषा मे इस को दृष्टि सृष्टिवाद कहा । जिसकी दृष्टि मे जो चीज आई उसकी दृष्टि मे वह चीज आ गई । उसकी दृष्टि मे वह उसका बेटा है । गरीब पड़ोसी के घर जन्म ले लिया अगर उसीको स्मृति हो जाए कि यह करोडों की सम्पत्ति हम छोड कर आए है । वह आकर कहने लगे कि बेटा यह सम्पत्ति मेरी है । मैंने इतना धन कमाया था तुम 10% ही हमको दे दो । तो दोगे क्या ? मान लो वह कोर्ट मे केस कर दे तो । वर्तमान थे जो केस है उनकी सुनवाई तो होती नहीं बरसों तक । यह जन्म जन्मातर के केस चल पडे तो कोई गवर्नमैंट यह फैसले कर नहीं सकती । इसलिए यह माया बडी चतुर है । कहाँ जाओगे, कुछ पता नहीं । कहाँ से आए है वो दरवाजा भी बन्द । यह बीच मे ही केवल जुगनू की तरह हम लोगों की हालत है । थोडा सा प्रकाश थोडा सा अन्धेरा । विवेक

आया तो थोडा सा प्रकाश दीख गया । हम लोग खुश हो गये । और कही विवेक पीछे हट गया तो रोना शुरु कर दिया । शोक मोह मे चले जाते है । इसलिए बुद्धिमान को इस सत्य को स्वीकार करना पडेगा कि इस आत्मा से परे कोइ नही है । इसलिए कहा 'य आत्मा सेतुर्विधृतिरेषाम्' यह आत्मा विधृति 'विधारणा' यह आत्मा ही सर्वाधार है । कहते है अगर आत्मा सर्वाधार ही हो तो कोई भूत नहीं बचेगा ।

अपने शरीर मे ही देख लो । तुम्हारे शरीर मे पृथ्वी है, तुम्हारे शरीर मे पानी भी है, अग्नि भी है, वायु भी है और आकाश भी है । तुम इन सबको धारण करने वाले हो । तुम धारण कर रहे हो तो पृथ्वी की जगह पृथ्वी मस्ती से पडी है । जल की जगह जल मस्ती से चल रहा है । अग्नि की जगह अग्नि अन्दर पडा हुआ है वायु की जगह वायु । आकाश की जगह आकाश पडा है । पांचो भूत तुम्हारे शरीर मे क्या मस्ती से खाना दाना ले रहे है । किन्तु जिस समय चेतन आत्मा छोड देता है उस समय क्या होता है ? पानी पृथ्वी को खा जाएगा । अग्नि पानी को खा जाएगा । अग्नि को वायु खा जाएगा । वायु को आकाश खा जाएगा। आकाश को महाकाश खा जाएगा । सड़ जाएगा कि नहीं । इसलिए मंत्र आत्मा को 'विधृति' शब्द से कह रहा है । और यह बात भी स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि आत्मा जब नहीं रहेगा तो जो लोग यह कहते है कि यह कब्र मे पड़ा रहेगा । on the judgement day the God will come and will take all the souls.

यह आत्मा पत्थर के नीचे पड़ा रहने वाला नहीं । उन्होंने ऐसे विचारों को मान लिया है, (fit) कर लिया है । ठीक है यह मनुष्य विचारों का पुतला है इसमे जैसे विचारों को (fit) कर लो, ऐसे ही विचारों को पकड़ लेता है । जैसे यह टेप रिकार्डर हमारी बगल मे पड़ा है । जैसा हम बोलेंगे वैसा ही वह टेप कर लेगा । गलत बोलेंगे तो गलत टेप हो जाएगा । यह टेप उन विचारों को बदल नही सकता । तो हम इस टेप रिकार्डर से अधिक क्या हुए ।

किसी मुर्दे को अग्नि मे रखो । कब तक रहेगा । थोड़ी देर मे साफ हो जाएगा । तभी आपने विचार किया कि यह पृथ्वी भी अग्नि ही है किन्तु यह

ठण्डी अग्नि है । धीरे २ वस्तु को खाता है । यह जल भी तो अग्नि ही है । यह भी खत्म कर देता है । अग्नि तेजस्वी है इसलिए वह जल्दी (matter) को खा लेता है । अपना हिस्सा निकाल कर दूसरों का हिस्सा दूसरों को बांट देता है । एक शव्द मे ऐसा समझो एक बुढ्ढा हो, हाथ कांप रहे है । उसको कोई चीज बांटने के लिए दे दो । पहले ही हाथ काप रहे है वह कितनी देर मे वाटेगा । पर एक छोकरे के हाथ अच्छे है वह झट से टुकडे कर केबांट देगा यह पृथ्वी बुढ्ढे के कंपवात वाले हाथों की तरह है । यह किसी चीज को जल्दी बांट नही सकता । अपना हिस्सा भी जल्दी नहीं ले सकती । वायु का हिस्सा वायु को जल्दी नही दे सकता । अग्नि का हिस्सा अग्नि को जल्दी नहीं दे सकता इसलिए पृथ्वी मे किसी मुर्दे को गाढो तो उसे (dust to dust) होने मे कम से कम दो चार महीने तो लग ही जाते है । अग्नि फुर्तीला है इसलिए खट से बांट देता है । इस प्रकार विवेक करे । आप लोग काठमाण्डू मे रहते हो यह (world) का एक शहर है । आप लोग पढे लिखे हो यहाँ जो आए हो तो कैसे आए हो ? पैरो ने रास्ता देखा है यहाँ का ? प्रकाश सन्यास आश्रम किधर है ? यह पैरो ने देखा है ? आए तो पैरो से ही हो पर ले कौन आया है ? अन्दर जो बैठा है, उसने कहा कि इधर चलो, तो पैर चल दिए । तो जिस की इच्छा से यहाँ आए हो उसी की इच्छा से जाओगे भी । तो यह बताओ कि उसकी इच्छा को खत्म कर के कब्र मे कैसे गाढ कर रख दोगे ? उसकी इच्छा को खत्म करने का कौन सा रास्ता है तुम्हारे पास ? जब तक उस ज्ञान मे नही पहुंचोगे तुम्हारी गति नहीं रुकेगी । और गति नही रुकेगी तो तुम चलते ही जाओगे । जिधर इच्छा खींचेगी उधर ही चले जाओगे ।

'इच्छानाशो हि मोक्षः' तुम इच्छा को खत्म कर दोगे तो तुम्हारी गति रुक जाएगी । यह वैदिक दर्शन है । तुमको किसी की प्रतीक्षा की जरूरत नही । इच्छा ही संसार है । वेदान्त विद्या इसी बात को स्पष्ट करती है कि तुम अगर उस सत्य को को समझ जाओगे तो यह इच्छाएँ तुमको छोड़ देगी । और नही तो यह इच्छाएँ तुमको छोड़ने वाली नहीं ! इसलिए विवेकशील इस सत्य को स्वीकार करें । इसलिए आत्मा का नाम पड़ विधृति । मंत्र स्पष्ट करता है कि यह आत्मा

ही सबका आधार है। जैसे यह शरीर इस आत्मा के आश्रय मे ही टिका हुआ है इसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड उस विराट का शरीर है। अगर विराटात्मा इसको छोड देगा तो यह ब्रह्माण्ड भी ऐसे ही खत्म हो जाएगा। विराटात्मा और तुम्हारी आत्मा एक ही है। इसलिए मंत्र कहता है 'य आत्मा स सेतुर्विधृतिरेषां लोकानाम सम्भेदाय' आगे मंत्र कहता है नैतं सेतुमहोरात्रे तरतो' इसकी व्याख्या कल पर छोड़ दें तो अच्छा होगा।

अब सीधे होकर बैठो और ऐसी धारणा करो यह आत्मा सेतु है, यह आत्मा ही धारण करने वाला है सारे ब्रह्माण्ड को। जो सारे ब्रह्माण्ड को धारण करने वाला है 'वो आत्मा मैं हूँ।'

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

८-५-८८

प्रवचन सं० ३०

"ॐ नैतं सेतुमहोरात्रे तरतो न जरा न मृत्युर्न शोको न सुकृतं न दुष्कृतं सर्वे पाप्मानोऽतो निवर्तन्तेऽपहतपाप्मा ह्येष ब्रह्मलोकः।"ॐ तस्माद्वा एतं सेतुं तीर्त्वाऽन्धःसन्ननन्धो भवति विद्धःसन्नविद्धो भवत्युपतापी सन्ननुपतापी भवति तस्माद्वा एतं सेतुं तीर्त्वापि नक्तमहरेवाभिनिष्पद्यते सकृद्विभातो ह्येवैष ब्रह्मलोकः॥"

(छान्दो ८-४-१।८-४-२)

विचार आया 'यद्सारभूतं तदुपासनीयं' इस जगत मे जो सार भूत है वह उपासनीय है । सार वो है जिसके रहने से निस्सार भीं प्यारा लगे । जैसे यह अपना शरीर ही है । आत्मा के रहने से ही यह शरीर प्यारा लगता है । आत्मा अगर इस शरीर को छोड दे तो बच्चा शरीर भी प्यारा नही लगता । आत्मा रहेगा तो सौ साल तक भी शरीर प्यारा लगेगा । तो सोचो सार क्या है ? हम किससे मिलते है ? किसी मुर्दे के पास किसी को अकेले बैठने को कहो तो कितना भी प्यारा होगा वो नही बैठेगा । इसलिए सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा ही सार है । इस आत्मभाव को मुमुक्षु केसे पकडे, इस आत्मा के स्वरूप का निश्चय कैसे करे ? छान्दोग्य उपनिषद के सातवें अध्याय मे पहले आया है 'आत्मैव .... स स्वराट् भवति' मुमुक्षु क्या समझे ? हमारे ऊपर कौन है ? आत्मा ही है । ऊपर का तात्पर्य इस जीवात्मा के ऊपर । आगे भी वही है । पीछे भी वही है । उत्तर भी वही है दक्षिण भी वही है । चारो ओर है । 'आत्मैवेदं सर्वं' 'ब्रह्मैवेदं सर्वं' यह सब आत्मा ही है । और कुछ भी नही है ।

इस रहस्य को स्पष्ट करते हुए महर्षि उद्दालक अपने पुत्र श्वेत केतु को समझाते हैं । इसी छान्दोग्य उपनिषद के छठे अध्याय में कहते हैं यह मनुष्य तब तक निश्चिन्त नहीं होगा, तब तक शान्त नही होगा, जब तक अपनी आत्मा को समझेगा नही । देखते नही बडे २ लोग कितने कितने (body guards) लिए घूमते हैं । मरने से सब डरते हैं, चाहे कोई दुनियाँ का कितना बड़ा आदमी हो । किन्तु मृत्यु से कोई बच नहीं सकता । मृत्यु से बाहर जाने का रास्ता यह नही कि तुम्हारे चारों ओर (body guards) हों । सत्य को जानो तो मृत्यु का भय नहीं रहेगा । वो कौन सा सत्य है जिसके रहने से सभी प्रिय लगते हैं । कोई तो है । बेटा हो, बेटी हो, मां हो पिता हो । तभी तक प्यार करते हैं जब वो अन्दर बैठा है । महर्षि कहते हैं बेटा अपनी इस आत्मा को समझो किन्तु श्वेतकेतु की समझ में नहीं आता इसलिए कहता है भगवन मेरे लिए पुनः कहो । महर्षि कहने लगे बेटा सेंधा नमक का इतना बडा टुकड़ा पानी मे रख कर आओ। सायंकाल को रख कर आया । प्रातःकाल कहा कि जाकर निकाल लाओ । सायं

काल को रख कर आया । प्रातःकाल कहा कि जाकर निकाल लाओ । सायंकाल

जो नमक पानी मे रखा था वो ले आओ । वह गया । घडे मे हाथ डाला वहाँ नमक तो है ही नही । यह घबराया कि महर्षि कहेगें तुमने लवण रखा ही नहीं । कमजोरी जब आती है तो श्वेतकेतु सिर खुजाता है । महर्षि बोले क्या बात है 'तत्र जले लवणं निक्षिप्तवानमस्मि, इदानीं तत्र तुनोपलभ्यते' महर्षि समझ गये । कहने लगे चल मैं समझाता हूँ । नीचे से पानी लेकर आचमन करो । 'कथमृइति? लवणमिति मध्य भाग से लेकर आचमन करो कैसा है ? लवणमिति तब महर्षि ने कहा जिसको तुमने रखा था वो यही है । पहले तुम हाथ से पकड़ सकते थे । आंख से देख भी सकते थे । आकार भी दीखता था । 'इदानीम अत्रमपिलीयते' अब वह इसमे लीन हो गया है । सूक्ष्म हो गया । अब आंख से दीखेगा नही । हाथ से पकड़ मे नहीं आएगा । उपायान्तर से देखना पडेगा । 'श्रद्धत्स्व सौम्य' हे सोम्य श्रद्धा करो । ब्रह्म भी जगत मे ऐसे ही मिला हुआ है । बहुत से लोग कहते हैं कि भगवान दीखता नही । दिखाओ आंख से, तब माने ।

कौन सी आंख उस सर्व व्यापी आत्मा को देखेगी ? भगवान वाली आंख उसको देख नहीं सकती । सब कुछ आंख से ही देखने की इच्छा मत करो । एक दवाई की गोली है । उसमे रोग को दूर करने की शक्ति है । पर तोड़ने पर दीखेगी नहीं । आंख से नहीं दीखेगी पर शक्ति है तो सही उसमे । परमात्मा ने तुमको सुन्दर बुद्धि दी है , इन्द्रियां तो थोडे से विषयों को पकड़ने की शक्ति रखती हैं और वह भी तब विषयों को पकडेगी जब यह स्वयं आत्मा की पकड़ मे होंगी । गाढ निद्रा में सो गये तो आंख देखती है ? कान सुनता है ? जरा सा नींद मे पीछे हटे कि इन्द्रियाँ काम करना बन्द कर देती हैं । तुम्हारे करंट से तो इन्द्रियाँ काम करती करती हैं । ऐंसी वो आत्मा है । मूमुक्षु इस आत्मा मे मन देवें ।

विद्वान अपनी आत्मा मे ही रमण करता है । दूसरे लोग आनन्द लेते है पर ज्ञानी अपनी आत्मा का ही आनन्द लेता है । अगर तुम्हारे अन्दर आनन्द है तो बाहर से भी आनन्द ले सकते हो । यह बताओ कि तुम्हारे अन्दर शान्ति है तो किसी से प्यार से बोलोगें । अगर तुम्हारे अन्दर अशान्ति है, दुःख है तो आनन्द के बाजार मे भी चले जाओ तुमको आनन्द नहीं मिलेगा । इसलिए कहा

है आत्मरति, आत्मक्रीड: 'स स्वराड्भवति' यह अब स्वतंत्र है जैसेलोक मे किसी राष्ट्र का महाराजा होता है। वह अपने राज्य मे जहाँ चाहे स्वतंत्रता से जा सकता है। पर प्रजाजन स्वतंत्र नही है। प्रजाजन राजा की आज्ञा से ही कुछ कर सकते है। अपने आप कुछ करेंगे तो राजा ब्रेक मारेगा। जैसे गाडी चलती है। ड्राईबर गाड़ी चलाता है कि गाड़ी ड्राईवर को चलाती है ? गाड़ी जब ड्राईवर को चलाने लग जाए तब क्या होगा ? महाराजा गाड़ी का ड्राईवर है। वह स्वतंत्र है इच्छा होगी तो गाड़ी चलाएगा। इच्छा होगी तो खड़ी कर देगा। इसलिए कहा 'स स्वराड्भवति' 'तस्य सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति' श्रुति कहती है कि यह जो आत्मवेत्ता है इसको अब किसी लोक में कोई बन्धन नहीं। बन्धन तो जीव को होता है। जीव का कर्म होता है। कर्म ही बन्धन है उसका। जब तक वह अज्ञान मे रहेगा कर्म चलता ही रहेगा। अपने से पूछो कि हम कौन है ? कहता है नही जानते। यह जो 'नहीं जानते' बोल रहा है, यह जान कर बोल रहा है कि बिना जाने बोल रहा है। जो अपने को भी नहीं जानता वह कितना ठीक है ? किसी से पूछो भाई साहब। तुम कौन हो ? कहता है पता नहीं। कहाँ जा रहे हो ? पता नहीं। उठे जूता पहना और चल दिए। तो लोग क्या समझते हैं ? (mad) हो गया। ऐसे को कोई घर से भी नहीं निकलने देगा लौट कर कहाँ आएगा ? जिसको जाने का पता नही वह लौटेगा कहाँ ? यह अविद्या जब तक बैठी है तब तक यह जीव पागल ही है। मरेगा, इसको पता नहीं। कहाँ जन्म लेगा, इसको पता नहीं। कहाँ जाएगा, इसको पता नहीं कहाँ से आया है, इसको पता नहीं।

किसी जन्म में इसका कोई महान पुण्य जाग्रत होगा। उस जन्म में इस को ब्रह्म विद्या मिलेगी। शास्त्र से गुरु से इसको आत्मविद्या, ब्रह्म विद्या मिलेगी। जैसे छोटा बच्चा गली मे भटक जाए और कोई वृद्ध माता उसको पकड़ कर घर पहुंचा देती है। इसी तरह यह ब्रह्म विद्या इसको पकड़ कर मोक्ष की ओर ले जाएगी। 'स ह्येवैं आत्मा' मंत्र आत्मा के महत्त्व का व्याख्यान करता है। यह संसार अपने आप में कुछ भी नहीं। जैसे अपने शरीर को ही समझो। भोजन की कमी नहीं, वस्त्र की भी कमी नहीं। रहने की जगह की कमी नहीं। पर यह सब कुछ होने पर भी क्या यह शरीर आत्मा के बिना जीएगा। मुर्दे को तो रात भर

रखना भी मुश्किल है। इस चेतन आत्मा के करंट के बिना कुछ भी नहीं। उस की महिमा मे ही सब चल रहा है। 'स य एषो ऽणिमा तत्सत्यं स आत्मा' महर्षि कहते हैं कि यह सारा ब्रह्माण्ड उसकी सत्ता मे ही जी रहा है। जसे वो नमक पानी में डाला था किन्तु पानी मे ही लीन हो गया। अब वह आंख से नहीं दीखता, हाथ से पकड़ मे नही आता। इसी तरह उस संसार के अन्दर वो परमात्मा भी मिल गया। वो हाथ से पकड़ मे नहीं आएगा। आंख से दीखेगा नहीं। जीभ से तुम उसका स्वाद भी नहीं ले सकते कि वो परमात्मा खट्टा है या मीठा है। 'दृश्यते त्वग्रया बुद्ध्या' श्रुति निर्देश करती है 'त्वग्रया' तीक्ष्ण जो बुद्धि है, वह इसका अनुभव करेगी। 'स य एषो ऽणिमा तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो' अणिमा माने सूक्ष्म है। सूक्ष्म माने वह किसी इन्द्रिय का विषय नहीं। बल्कि यह इन्द्रियाँ उसकी सत्ता मे काम करती हैं। 'तत्सत्यं' वह सत्य है वो आत्मा तू है। जब वो आत्मा तू है तो अपने को क्या कहोगे? ब्रह्माहमस्मि'

बहुत से लोग कहते है, यह निर्गुण निराकार कैसा है? कोई आकार उसका देखने मे आना चाहिए। तो आकार कैसा मानोगे। मान लो कोई शेर है। यहाँ नैपाल के जंगल मे (Tiger) है भक्त बन गया मान लो। वह भगवान की अगर मूर्ति बनाएगा तो कैसी बनाएगा। भेड़ की शक्ल मे अगर मूर्त्ति बनाए कि बकरे की शक्ल मे। भेड़ की शक्ल तो बनाने मे रहा क्यों कि वह उसका भोजन है। तो अपने जैसा ही भगवान बनाएगा शेर। हम लोग एसे शेर से क्या कम है? हमने भी भगवान की शक्ल अपने जैसी बना ली। थोडा बुद्धि से विचार से विचार करो! उस सत्य को समझो। यह जड़ चेतन संघात उस सत्य की छाया मे है। तो वो सत्य कहाँ है? किस लोक मे है। वो किसी एक देश मे मे नहीं। किसी एक काल मे नहीं। किसी एक लोक मे नहीं। वो सत्य सर्व देश, सर्व काल, सर्व लोक मे व्याप्त है। यह बताओ तुम्हारा अहं कहाँ है? तुम्हारे अहं का क्या अर्थ है? तुम्हारा यह सीमित अहं मिथ्या है। जो अहं सर्व देश मे है, सर्व काल मे है, सर्व लोक मे है सीधे यही स्वीकार करो कि 'मैं ब्रह्म हूँ'। मुमुक्षु ऐसी ब्राह्मी भावना करे। ऐसी ब्रह्मी भावना करेगा मृत्यु भी तुम को नमस्कार करेगा। कि अब हम तुम्हारे पास नहीं आएंगे। अब हम तुम्हारा आर्डर मानेंगे। श्रुति है आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन। यह विद्वान माने

आत्मवेत्ता जब इस महान ब्रह्म को जान जाता है तो 'न विभेति' भय नहीं रहता। मृत्यु तो तुम्हारी (Servant) हो जाएगी। 'नैतं सेतुमहोरात्रे तरतो न जरा न मृत्युर्न शोको न सुकृतं न दुष्कृतं'।

यह मंत्र व्याख्या करता है। कल इस आत्मा को सेतु कहा था। जैसे बड़ी नदी पर पुल ढाल दो। संसार समुद्र से पार होने के लिए जो इस आत्मा को पकड़ लेगा तो पार हो जाएगा। यह जीव जन्म जन्मान्तर से कमजोर पड़ा हुआ है इसको जब कोई आत्मवेत्ता यह बतलाएँगे कि तू ब्रह्म है बेटा। तो यह पकड़ लेगा और माया समुद्र को पार कर जाएगा माया अब कुछ नहीं करेगी।सब से बडा मृत्यु का साकार रूप अगर है तो यह काल है। 'अहोरात्रे' यह रात दिन रूपी जो काल है वो सब जीवों को पकड़ कर खाता जा रहा है जैसे कोई बड़ा पहलवान हो। जो उसके मुक्के के सामने आया धराशायी हो गया। मुहम्मद अली खां था न वो अमेरिका का (world champion) था। यह काल भी (boxer) है जो आता है उसको ठण्डा कर देता है। उठने नहीं देता। यह काल रूपी (boxer) केवल इस आत्मा से यह घबराता है। नैतं सेतुमहोरात्रे तरतो' यह काल आत्मा को स्पर्श नहीं करता। २४ घण्टे का जो काल है यह उस आत्मा को स्पर्श नहीं करता।

जैसे मान लो कोई बडा आदमी है उसका जो (dresser) हो। बढिया २ कपडे उसको पहना दिए। ब्रश से कोट को साफ करता है। मालिक का कोट रोज ब्रश से साफ कर देता है। बदलता नहीं। रोज इस प्रकार ब्रश से झाड़ते जाओ तो क्या होगा? कोमल २ रोएँ जो होंगे वह झडते जाएँगे। धागे २ रह जाएँगे। इसी तरह यह (dresser) है तुम मालिक हो। यह तुम्हारे dresser को प्रति दिन झाड़ता जा रहा है। रात दिन ब्रश है यह तुम्हारे ड्रेस को साफ करता जा रहा है। बढिया २ रोएँ तो झाड़ते गये अब कहीं चमडी लटक रही है। कहीं हड्डी निकल रही है। बुढ्ढा बढिया के शरीर की क्या हालत होती है। ब्रश से झाड़ २ कर यह हाल कर दिया। जब तब यह कोट निकलेगा नहीं तब तक यह रोज़ झाड़ता ही जाएगा। रोएं २ निकल गये। मालिक कहेगा कि कोट बदल दो तो बदल देगा। हम लोग मरने से डर रहे हैं।

आंख बन्द कर के ध्यान करो कि कितने जन्म हो चुके हैं तुम्हारे। उन अनन्त जन्मों मे जो शरीर आए है और उन्होंने जो भोग देना था दिया है। वाद मे चले गये। १र तुम वैसे के वैसे हो। तुम अमर नहीं हो तो क्या हो? जो मरने वाले थे वो ही। जो मरने वाला नही है वो जैसे का तैसा है। इसलिए मंत्र कहता है 'न जरा न मृत्युर्न' यहाँ जरा आ कर क्या करेगी? यह जरा काल देवता की बेटी है। भागवत मे उपाख्यान है जरा का। पुत्री है चण्डदेव की। जरा जवान् हो जई। पिता ने कहा यह पुरंजन नाम का राजा है। उसकी सेना मे बडे २ शूरवीर है तुम जाओ और उनमे से किसी से भी स्वयंवर कर लो। बेटी खूब बंन ठन कर गई। जिसके सामने जाती है वही मुंह फेर लेता है।बेटी मुंह लटका कर लौट आई। पिता ने आशीर्वाद दिया। बलवान पिता था। जैसे शुक्राचार्य। उसने आशीर्वाद दिया। जाओ बेटी यह सब तुम्हारे पति है। सबके साथ तेरा स्वयंबर होगा। यह जरा भगवती पहुंच जाती है स्वयंबर करने। लोग कहते है बुढे हो गये। घर वाली आ गई। कौन भला? यह जरा स्वयंबर में आई है।

मंत्र कहता है आ तो गई है पर वहाँ तक नहीं पहुंच पाती जहाँ आत्मदेव है। 'न जरा न मृत्यु' जरा नहीं तो भाई भी नहीं। भाई कौन मृत्यु देवता मृत्यु भी वहाँ नहीं पहुंचेगा। वह भी दूर रहेगा। जो यह समझ गया कि यह अमर है तो वहाँ कौन सा शोक है? जरा भी नहीं मृत्यु भी नहीं। 'तत्र को मोहः कः शोक. ईशावास्योपनिषद में मंत्र है 'यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूद् विजायतः, तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यन्' यस्मिन् माने यस्मिन् काले।तात्पर्य है 'अहंतः ब्रह्मास्मि' यह ब्रह्माकार आबृत्ति है। इसके साक्षात्कार के समय क्या शोक है। क्या मोह है। अब तुम मृत्यु से दूर हो गये। अब तो मृत्यु भी घबराता है। हम अगर सामने आ गये तो हम भी अमर हो जाएंगे। 'एकत्वमनुपश्यतः'। न सुकृतं न दुष्कृतं' सुकृत माने धर्म दुष्कृतं माने अधर्म। धर्माधर्म भी नहीं। धर्माधर्म की पकड़ से बाहर हो गया। एक नियम है 'कारणंहि कार्य व्याप्नोति' मिट्टी से घडा बना। कारण है मिट्टी। मिट्टी ने घडे को व्याप्त कर के रखा है। धड़ा एक दिन अपनी मम्मी से झगडा कर बैठा। कहने लगा मेरे मे लोग पानी भरते हैं। मेरे मे लोग हंडी पकाते हैं। तुमतो यों ही ही। तू तो बैठी रहती है। मैं कितना

काम करता हुं । मिट्टी ने कहा अच्छा बेटा मेरा अंश वापिस कर दे । अब घडे मे से मिट्टी निकालने लगी तो बाकी क्या बचेगा ? घड़ा मिट्टी ही है । मिट्टीं ही घड़ा है । घड़ा अपने स्वरूप मे कुछ भी दही है । मिट्टी ही है । जैसे सोना ही कंकण है । सोना निकाल कर कंकण कहाँ है ?

कार्य केवल मान मात्र है । इसलिए ब्रह्म ही जगत के रूप मे दिखाई दे रहा है । 'आत्मैवेदं सर्व ब्रह्मवेदं सर्वं' यह श्रुतियाँ क्या कह रही हैं । यह जो कुछ दीख रहा है सब ब्रह्म ही है अपने शरीर को ही समझो । शरीर दीखता है कि आत्मा दीखती है ? यह जो अहमास्पद चेतन आत्मा है । शरीर के आकार मे वही दीखता है । वही प्यारा है । ठीक है किसी आकार को भाई कहते हैं, किसी आकार को बहन कहने है । किसी आकार को पति कहते है । किसी को पिता । नाम जुदा २ हैं । पर जिस आकार को या चेतन छोड देता है उसको किसी ने घर मे रखा है ?' हम भक्त किस के है ? जो दीखता है उसके कि जो नहीं दीखता उसके ? सब उसी के भगत हैं माने हम ही भक्त हम ही भगवान । 'आत्मैवाहमस्मि' ऐसी भावना अगर जीवन में करे तो इस से उत्तम पुण्य क्या होगा ? इससे उत्तम भावना क्या हो सकती है ? इसलिए मुमुक्षु सदा यहीं भावना करे ।

जहाँ भी जाओगे, जिस योनि में भी जाओगे सब तुम्हारा दूध ही निकालेंगे । एक जीव दूसरे जीव का भला करता है । चाहे हम किसी के बेटा हो या किसी के बाप हों, पति हो या पत्नी हों । जो कर्तव्य है इसको पूरा करो। बाकी तुम्हारा अपना काम यह है कि इस सत्चित् आत्मा को ब्रह्म मानो। सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा में धर्माधर्म की पकड नही है । धर्माधर्म तो अन्तःकरण मे होता हैं । अन्तःकरण माने मन बुद्धि । जहाँ तक मन बुद्धि की पकड मे हैं तब तक उसने जीव बना कर रखा है । और जब तक जीव बने हैं तब तक जन्म मरण है । ब्रह्मविद्या क्या काम करती है ? यह ब्रह्मविद्या तुमको अन्तःकरण से बाहर करती है । यह तुम्हें किसी लोक मे भेजती नहीं है । इस ज्ञान की महिमा से अपने आप इस अन्तःकरण से बाहर हो जाओगे । 'अपहतपाप्मा ह्येषलोकः । जब तक अन्तःकरण की हम पकडे रहेंगे तब कर शरीर की पकड़ में हैं । तब तक लगो

मनुष्य कहते रहेगें। कोई फोटो खींचेगा। कोई झगडा करेगा। प्रकृति के इस बगीचे मे घूमना ही पडेगा। यह ब्रह्मविद्या जो है यह हमारे स्वरूप को समझाती हैं। इसके लिए गीता में भी भगवान कहते हैं 'श्रद्धावान् लभते ज्ञानं तत्पर: संयतेन्द्रिय:' श्रद्धावान् ही ज्ञान को प्राप्त करता है। और ज्ञान को पाकर तत्पर हो जाता है। अपना अहो भाग्य मानता है कि यह जो हमको अपने स्वरूप को समझा रहा हैं। दूसरे के मुँह को तो बन्दर भी देखता है। किन्तु भाग्यशाली तो वह है जो अपनी आत्मा के असली स्वरूप को समझे।

कल और स्पष्ट करने वाले है।

हरि: ॐ तत्सत्

ॐ

९-५-८८

प्रवचन सं०-३१

"ॐ तद्य एवैतं ब्रह्मलोकं ब्रह्मचर्येणानुविन्दन्ति तेषा मेवैष ब्रह्मलोकस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ॥"

(छान्दो. ८-४-३)

इस बात को कह के आए है कि यह जो अपनी अन्तरात्मा है, श्रुति इत सत्‌चित् आनन्द स्वरूप आत्मा को ब्रह्मलोक कहती है । स एष ब्रह्मलोकः । ब्रह्म लोक कहने का तात्पर्य है हृदयस्थ चेतन । यही ब्रह्मलोक कहने का तात्पर्य है हृदयस्थ चेतन । यही ब्रह्मलोक है । ब्रह्मलोक माने सब प्राणियों के जीवन का स्थान यह ही है । इसके लिए अगर कोई दृष्टान्त है तो यह अपना शरीर ही है । तुम्हारे शरीर के लिए भोजन, वस्त्र और भूमि भी चाहिए किन्तु इस आत्मा के बिना क्या चाहिए । यहाँ नैपाल मे तो भगवान पशुपति ही सबके मालिक है । जब तक चलते फिरते रहे तब तक तो घर वाले मालिक रहे, और अब जब चलना फिरना बन्द, बोलना चालना बन्द, खाना पीना भी बन्द तो कौन मालिक ? पशुपति नाथ ही मालिक है ।पशूनाम् पति पशुपति' अहंकाराविष्ट जीवः पशु तेषां पतित्वात् । इनका वो पति है । पति शब्द का अर्थ है पाति, रक्षति इति पति । जो जीवों की रक्षा करे ।

अहंकार में फंसा हुआ जीव है तुम्हारा मन और चेतनाभास । इसकी रक्षा करने वाला जो कूटस्थ, वो साक्षी उसके आश्रय यह अहंकार करने वाला मन प्राण, बुद्धि, इन्द्रियाँ ये सब उसके आश्रय म जी रहे हैं । इसलिए कहा ब्रह्मलोकः । यही ब्रह्मलोक है जिस में तुम जी रहे हो । माने अहंकाराविष्ट जो जीव है वो सत् चित् आनन्द स्वरूप साक्षी आत्मा में जी रहा है । यह साक्षी चेतन आत्मा अमर है । यह काल की पकड़ से भी परे है । श्रुति इसकी व्याख्या करती है कि इस आत्मा को जानने की महान पुण्य है ,तस्माद्वा एतं सेतुं तीर्त्वा अन्धःसन्ननन्धो भवति विद्धः सन्नविद्धो भवत्युपतापी सन्ननुपतापी भवति' ।

मंत्र कहता है कि बेटा एतं सेतुं तीर्त्वा पि नक्तमहरेवाभिनिनिष्पद्यते सकृद्विभातो एष ब्रह्मलोकः' इस संसार समुद्र से पार होंने का मात्र यह आत्मा ही सेतु है माने bridge है । श्रद्धाशील मुमुक्षु शास्त्र से, गुरु से इस चेतानात्मा को समझे । इस लोक में अन्धा होना बडे पाप का फल मानते है । कहते है जिस ने रत्नों की चोरी की हो, हीरे जवाहरात की चोरी की हो, वह इस जन्म मे अन्धा होता है । अवस्था विकार से तो शरीर मे हेर फेर होती रहती है । वो भी कर्म का ही फल है किन्तु जो जन्म से ही अन्धा है, वह अन्धा क्यों हुआ भला ?

किसी बगीचे मे गया था जहाँ से मार खाकर आया है। श्रुति कहती है कि यह शरीर से तो अन्धा है पर यदि यह उस ब्रह्म को जान जाएगा तो यह अन्ध दोष से परे हो जाएगा। यह दोष तो तब तक है जब तक देहाहंकार है। शरीर का अहंकार जब तक रहेगा तब तक शरीर के दोष से दोषी रहेंगे। तभी तक पीडा भी रहेगी जब तक देहाहंकार मे रहेंगे। देहाहंकार से परे चले गये तो, सुषुप्ति अवस्था तुम्हारे को स्थूल शरीर के अहंकार से, सूक्ष्म शरीर के अहंकार से जुदा कर देगी। किन्तु कारण अलग नहीं करेगी। जैसे मां छोटे बच्चे को बाहर नहीं जाने देती। तो यह पाँच, सवा पांच फुट की मम्मी की जब इतनी अक्ल है तो यह माया भगवती भी मां से कम नहीं। यह इस जीव को कैसे निकलने देगी? हाँ स्थूल शरीर से बाहर कर देगी, सूक्ष्म शरीर से भी बाहर कर देगी किन्तु कारण शरीर से बाहर नहीं जाने देगी। आनन्द से गोद मे लेकर पड जाएगी। जैसे पालना होता है। स्थूल शरीर को तो रस्सी समझो। सूक्ष्म शरीर के पालमे मे डाल कर स्थूल शरीर से इसे झुलाती रहती है। इधर से उधर घूमते २ काले से गोरे हो गये। पता ही नहीं चला। इतने मे लोगों ने बाँध कर पशुपति से इकट्ठा कर दिया। क्या जीया और क्या मरा कुछ पता नहीं चला।

यह अविद्या तुमको दो शरीरों से बाहर करती है। यह ब्रह्मविद्या तुम को कारण शरीर से भी बाहर कर देती है। तब कोई काम तुम्हारा बाकी नहीं रहा। उस समय 'एतं सेतुं तीर्त्वा' तीर्त्वा शब्द का अर्थ है एतं सेतुं प्राप्तं' सेतु रूप जो आत्मा है, जिज्ञासु श्रद्धाशील ध्यान के द्वारा, तत्त्व विचार के द्वारा और बुद्धिमान गुरु के द्वारा इस आत्मा को प्राप्त करे। यह भावना दृढ करे 'अयमात्मा अहं' नाऽहं देहादिसंघातः।' मैं देहादि संघात नहीं हूँ। जिसके लिए मंत्र कहता है

यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम् ॥

परम गति क्या है? यह उपनिषद् की श्रुति है।जब यह पांच ज्ञानेइन्द्रियाँ मन के साथ अपने विषयों से हटकर आत्मा मे ही स्थित रहते है औरबुद्धि भीअपनी क्रिया(वैषयिक निश्चयात्मक व्यापार)नही करती है,तबइसको परमगति कहते हैंपहले इन्द्रियाँ अपने अपने बगीचेमें घूमती है।मन इनके पीछेरघूमता है।जैसे गऊएँ चराने

वाला वो छोटा बच्चा । यह गऊएँ जिसके बगीचे में घुस जाएँ यह बच्चा भी पीछे पीछे जाता है । इसी तरह चक्षुरूप मे गया । मन भी उनके पीछे चला गया । इन्द्रियाँ तो गऊएँ हैं और यह मन वह छोकरा समझो । श्रोत्र शब्द मे गया तो मन उसके पीछे चला गया । जहाँ २ इन्द्रियाँ गई यह मन उनके पीछे २ चला गया । वहाँ से कमाई क्या हुई ? शोक मोह की कमाई हुई । मनके अन्दर शोक आ गया, मोह आ गया, चिन्ता आ गई भय आ गया तो मन मे शान्ति कहाँ ? जैसे अभी बैठे हो । यहाँ सत्सङ्ग सुन रहे हो । विचार के जो शब्द आ रहे है, श्रोत्र मे द्वारा मन पकड रहा है । जैसे २ मन में विवेक जाग्रत होगा मन शान्त होता जाएगा । यह शान्त मन ही यह सोचेगा कि मेरा असली मालिक कौन है ? मालिक बने तो बहुत है पर असली मालिक यह आत्मा ही है तो यह मन इस आत्मा की ओर चलने लग जाएगा । जैसे २ आत्मा की ओर इसकी गति होगी तो मिथ्या देहाहंकार से बाहर होता जाएगा । लोक जीवन मे भी जाएगा तो नाम रूप को मिथ्या समझ कर काम करेगा । व्यवहार तो नाम रूप में ही करेगा पर आसक्ति नहीं रहेगीं । निरासक्त हो जाएगा । जैसे वो बैंक का कैशियर है । करोडों रुपये उसके हाथ के ऊपर से तैर कर निकल जाते है पर वह विचलित नहीं होता । जहाँ २ रुपये ने जाना है वहाँ २ भेजता है । यदि मन उसका विचलित हो गया तो नोट उसके हाथ से चिपकने लगता है । उछल कर उसकी पाकेट मे जाने लगेंगे । तो उसका क्या हाल होगा ? वहीं खड़ा है वो पकडने वाला । यह जीव भी ऐसे ही चोरी करने मे कसर नही करता ।

मुमुक्षु अपने ज्ञान की रक्षा करे । जब तक इसका ज्ञानीं ठीक हैं । इसको इनाम भी मिलेगा । जिसने अच्छा काम किया है उसका आदर भी होगा, प्रतिष्ठा भी होगी । गवर्नमेंट ने हमको जिस post पर रखा है अगर हम अच्छा काम करते है तो हमको पुरस्कार भी देती है । गल्ती करेंगे तो सजा भी देती है । उस की आँखें है कि बिना देखे दिया ? ऐसा नहीं समझो कि हमको कौन देखता है । मंत्र कहता है यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह । जब यह पांच इन्द्रियाँ अपने ज्ञान के सहित मन मे स्थित हो जाएँ, बुद्धि भी चेष्टा नहीं करे । जनक की कथा आती है । उस जमाने का सम्राट है जनक । एक बार का इतिहास है

जनकपुरी मे महर्षि अत्रि पधारे । उनके चेला चपाटे भी आए । कैम्प लग गया । चातुर्मास मे महात्मा जन एक ही जगह ठहरते है । प्रवचन होने लगे । महाराजा जनक महान तत्त्व ज्ञानी हैं रोज सत्सङ्ग सुनने जाते है । सत्सङ्ग सुनने रोज जाते है किन्तु प्रवृत्ति है । संसार की कुछ जिम्मेवारियाँ भी है, महाराजा है । कभी पांच दस मिनिट देरी हो जाती तो महर्षि भी प्रवचन शुरु करने मे देरी कर देते । राजा के ठीक होने से बहुत लोग ठीक होंगे । और जिज्ञासु भी है । जिज्ञासु का ध्यान तो रखना पड़ता है । एक दिन की बात हो तो कोई ख्याल नहीं करता किन्तु जब रोज ऐसा होने लगा तो यह तो जनता है । जनता का मुँह कौन बन्द करेगा । जनता के मन मे आ गया तो तुम्हारे पुण्यों का गान भी करेगी और पाप है तो पाप का भी गान करेंगे । कहते है, राजा है, ऐश्वर्यशाली है , इसलिए ऋषि को भी लोभ है ।

महर्षि अत्रि भी महान तत्त्ववेत्ता थे । लोगों कीं भावना को ताड़ गये । कहने से तो कोई लाभ नही । एक दिन सुन्दर प्रवचन चल रहा है 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' राजा जनक तन्मय होकर सुन रहा है । महर्षि ने योग के चमत्कार से जनक पुरी के उत्तरी भाग मे अग्नि का भान करवा दिया । जैसे कभी २ फिल्म पर्दे पर भी आप लोग देखते हैं कि अग्नि लग जाती है । वह भी देखने मात्र कीं ही होती हैं । यहाँ भी अग्नि का प्रकोप हो गया । वेग बढने लगा । हा हा कार मच गया । जहाँ प्रवचन हो रहा था वहाँ भी लोग भागने लगे । किसी का जूता छूट गया, किसीका डण्डा छूट गया । मान ही नहीं रहा । सब भागने लगे । अग्नि बढती ही जा रही है । सिद्ध अग्नि है । पास जाओ तो कुछ नहीं, दूर जाओ तो अग्नि दीखती है । जहाँ महर्षि का camp लगा हुआ था उधर भी लग गई । कुछ महात्मा भी उठ कर भागने लगे । वहाँ गये तो कुछ है ही नही । लौककर मुँह लटका कर बैठ गये । इधर हल्ला हो रहा है । राजधानी जल रही है पर जनक शान्त बैठे सुन रहे है । एक सत्सङ्गी ने पूछ ही लिया । बोले मिथिलादाहेन मह्यं किञ्चिन् न दह्यते । हे भगवन आपका दिल है कि पत्थर है । मिथिला अग्नि मे जल रही है और आपको कोई चिन्ता ही नही । वह कहता है 'क्व ममत्वं मुमुक्षूणाम् निवर्चनीय वादिनाम्' जो असल मे मुमुक्षु हैं उसको ममत्व कहाँ

है ? अहंता और ममता यह जीव के दो पैर है । अहंता को पकड कर चल रहा है 'यह मैं हूँ' । आंख बन्द हुई तो न अहंता न ममता । जब तक आंख खुली है तब तक अहंता और ममता 'यह मैं और यह मेरा' इन्हीं दो पैरो से जीव चलता रहता है । ठीक है अहंता करो ममता भीं करो पर ज्ञान के विना मत करो । ज्ञान क्या है ? यह सत्य ही ज्ञान है । ऋषि कहते है 'एकत्वंमक्षरं प्राहुर्नानात्वं क्षरमुच्यते एकत्वदर्शनं भव्यं स्यात् ' एकत्वं माने एकं, अद्वितीयं , चिदात्मानं तदक्षरं । एक अद्वितींय सत् चित् आनन्द स्नरूप आत्मा हीं सत्य है ।

यह सारा ब्रह्माण्ड हम लोगों की पकड में नहीं है । पर अपने इस शरीर को पकडो । हम सभी अपने शरीर को देखते है । अपने सारे शरीर मे घुमों । इस मे अपने २ स्थान पर सजी धजीं बैठी है यह इन्द्रियाँ इनसे पूछो, क्यों नैना देवी वहन तू अच्छी है न ? क्यों कर्णदेव भाई तुम अच्छे हो न ? कहेंगे अच्छे है । रसना देवी से पूछो बहन तुम अच्छी हो ? अच्छी हूँ । इसी तरह सारी इन्द्रियों से पूछो सब सजधज कर बैठी है । सब अच्छी है ऐंसा ही कहेगी । किन्तु यह आत्मा नहीं होगा तो कितनी अच्छी है ? अगर यह चेतनात्मा का करंट खत्म हो गया, आत्मा नही होगा तो कितनी अच्छीं है यह सब । यह प्राण जो पंखे की तरह चल रहा है । आज कल देखो कितनी गर्मी चल रहीं है । उधर रात दिन लोगों के पंखे और एअर कंडीशन चलते है । तुम्हारा यह शरीर भी, यहाँ तो भगवान ने एअर कंडीशन कर रखा है उस वंगले को । प्राण से पूछो भाई साहव तुम इतनी सेवा करते हो ? तुम क्या हो ! यह मन यह बुद्धि सब क्या है ? चेतन आत्मा के करंट से सब बडे अच्छे है । बडे महत्त्वपूर्ण है । लेकिन उस चेतन के करंट से जरा बाहर हुए, फिर क्या अच्छा है ? सब गायव है । इसलिए मुमुक्षु इस चेतन आत्मा को पकडे । गीता मे कहा है :-

'बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते'

उस जगत मे सुकृत धर्म, दुष्कृत अधर्म । अधर्म माने पाप । धर्म माने पुण्य । यह पाप और पुण्य ही जीव का बन्धन है । यह बात ठीक है । यह बात ठीक है पाप से बचने के लिए पुण्य करो । बुराई सुनने की अपेक्षा भलाई सुनो । बुराई सुन कर करोगे क्या ? संस्कार बन जाएगा । किसी की निन्दा मत सुनो ।

प्रशंसा सुनो। आगे बढोगे। सोचो, इस शरीर मे कौन श्रेष्ठ है। यह आत्मा ही सर्व श्रेष्ठ है। इस आत्मा के बिना कोई श्रेष्ठ नहीं। जिस आत्मा के बिना कोई महान नही, कोई श्रेष्ठ नही, उसको सुनो।

अपने आपको कहा fit करोगे? शरीर मे fit करोगे कि मैं शरीर हूँ, कि इन्द्रियों में fit करोगे कि मैं इन्द्रिय संघात हूँ? कि प्राण मे मिलाओगे कि मैं प्राण हूं? मन बुद्धि मे मिलाओगे? कि मैं मन हूँ। मैं बुद्धि हूँ। कहना पडेगा मैं शरीर नहीं हूं। मैं इन्द्रिय भी नहीं हूँ, मैं प्राण भी नही हूँ। मैं मन बुद्धि भी नही हूँ। क्यों? जब यह शरीर नहीं था तब भी मैं था। दुकानदार ने दुकान खोली पर ग्राहक कोई आया ही नही।कोई सौदा लेने आएगा तब न माल बिकेगा कि यु ही तोल २ कर देता जाएगा माता पिता दुकानदार है। यह ग्राहक आ गया। हमको अपना बंगला बनाना है।एक ने कहा लेजा हमारे पासतो इतना इतना ही matter है। दूसरा दयालु था। उसने कहा हम तुमको matter देंगे और जगह भी देंगे। यहाँ बैठ कर अपना बंगला बनाओ। बैठ गया और यह बंगला तुम्हारा बन गया। तो उसकी opening कहो। यह जन्म क्या है? बने बनाए बंगले की opening हो गई। पहले उसने गाना शुरु किया हाऊ हाऊ। उसके साथ सबने ढोलक पीटना शुरु कर दिया। तुम्हारे रहने से ही सब कुछ हुआ। शरीर नही था तब भी तुम थे।

शरीर थक गया। बोला कि तुम तो कभी थकोगे नही। मैं थक गया। हमको छोड दो। ठीक है हम तुमको छोड़ देंगे, पर तुमको यहाँ रखेगा कौन? हम ने उसे छोड़ दिया और आगे चल दिए। लोगों ने उसे उठा कर हरि ॐ तत्सत् कर दिया। उस चेतन से परे कोई सत्य बस्तु नही है। बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते' यह पुण्य और पाप तभी होगा जब तक आत्मतत्त्व का बोध नही होगा यह कर्म तुमको छोडेगा नहीं। जब तक आत्मतत्त्व का बोध नहीं होगा, यह कर्म का भोग चलता ही रहेगा। ज्ञानवान अपनी निष्ठा मे रहे। नाम रूप मे व्यवहार तो करना पडेगा किन्तु सत्य को भूले नहीं। जनक इसके लिए बडा उदाहरण है। राज्य के विशाल कार्य को देखता है, सबके घरों को देखना पड़ता है, सबकी चिन्ता करनी पडती है इसको। एक घर की चिन्ता करने

वाला परेशान हो जाता है, जो सबके घरों की चिन्ता करता है वही राजा बनेगा न । इतना बड़ा काम है । इतना बड़ा काम करता हुआ भी यह अंचल बैठा है । सब चिल्ला रहे है । राजधानी मे अग्नि जल रही है पर वह अचल है । इसका अर्थ यह है कि लक्ष्य जब निश्चित हो जाता है तो बुद्धि बिचलित नहीं होती । इसलिए 'धीरस्तत्र न मुह्यति' शरीर की अवस्थाएँ तो हे अर्जुन बदलेंगी । कुमार हुआ, जवान भी हुआ, धीरे २ बुढा भी हुआ । इसकी शक्लें तो बदलेंगी । ऐसी शक्लें बदलने पर भी जो मरा नहीं वो इस शरीर को छोड़ने पर भी मरेगा नहीं । बचपन को छोड़ा, कुमारावस्था को छोड़ा पर मरा नहीं । जवानी में आया, जवानी को छोडा पर मरा नहीं । जवानी गई पर इसको कोई नहीं पड़ा फर्क नही वृद्धावस्था मे आया । यह जो पापड़ तुमको अब खाने को मिला है पापड़ खाया, पानी पिया और चल दिया । थाली छोड़ कर चले गये । रसोईया रोने लगा । क्यों रो रहा है ? कहता है वो मर गया । बताओ किसका दोष है ?

बाल्यावस्था को सुन्दर रस मलाई समझो । कुमारावस्था संदेश है । जवानी को तो घेवर समझ लो । पापड़ वृद्धावस्था । बस पापड खाओ और थाली छोड़कर चल दो चुपचाप । थाली को लेकर जाने का आर्डर नहीं है ।थाली यही रहेगी । थाली कौन सी ? यह तुम्हारा शरीर । यही बैठ कर खा रहे है सब मुमुक्षु घबरावे नहीं । जो धीर है वह मोहित नही होते । जब इस ब्रह्म मे मन की स्थिति बनेगी, जब इस आत्मा को ब्रह्म कर के जानेगा, तब 'सेतु तीर्त्वाऽन्धः सन्ननन्धो भवति विद्धःसन्नविद्धो भवत्युपतापी सन्ननुपतापी भवति' मान लो इस शरीर मे कोई रोग हो गया । शरीर को काटना पड़ता है । शरीर तो कट गया । पर यह फिर भी नहीं कटा । 'सन्नबिद्धो भवति' । उपतापी शब्द का अर्थ है जैसे बुखार आ गया । रोगग्रस्त हो गया । इस के अन्दर कोई रोग नहीं लावेगा । जैसे जाग्रत में रोग का भान होगा, स्वप्न मे भी रोग का भान होगा किन्तु सुषुप्ति मे यह स्थूल शरीर से बाहर हो जाता है । रोग की पकड मे यह स्थूल शरीर है और सूक्ष्म शरीर है । जैसे सुषुप्ति मे यह अविद्या तुमको स्थूल शरीर से बाहर कर देती है, सूक्ष्म शरीर से बाहर कर देती है यह ब्रह्मविद्या तुमको जाग्रत मे ही रोग से मुक्त कर देगी ।

सुषुप्ति तो बेहोशी है । बेहोशी मे रोग से बाहर किया । जैसे क्लोरोफार्म देकर तुमको बेहोश कर दिया । अब शरीर को यदि डाक्टर कहीं से काटता भी है तो कोई पीडा नहीं होगी । ऐसे ही यह ब्रह्मविद्या एक ऐसी विद्या है जो तुमको बेहोशी मे शरीर से बाहर नहीं करेगीं । होश मे तुमको इस शरीर के अहंकार से बाहर कर देगी । यह जगत के मिथ्यात्व का निश्चय करा देगी । मिथ्या है तो मिलना क्या और रोना क्या ? शोक मोह आते है ठीक है किन्तु यह तुम्हारे अन्दर मिथ्यात्व का निश्चय करा देती है तो मान लो कोई वस्तु मिली । तुमको है कि यह मिथ्या है तो तुमको मिलने की खुशी नही होगी । खोने का दुःख भी नहीं होगा ।

ऐसा मुमुक्षु निश्चय कर के धीर हो जाता है । यह महान ब्रह्मलोक है सकृद्विभातः सदा प्रकाशवान है ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१०-५-८८

प्रवचन सं०-३२

"ॐ तद्य एवैतं ब्रह्मलोकं ब्रह्मचर्येणानुविन्दन्ति तेषामेवैष ब्रह्मलोकस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।।"

(छान्दो.८-४-३)

विचार आया, मुमुक्षु ऐसा समझे कि एक तो यह चेतन है, और एक चेतन का यह शरीर। जैसे कोई तीक्ष्ण तलवार होती है तो उसको एक म्यान मे रख देते है। कितनी भी तीक्ष्ण तलवार हो, किन्तु जब उसको म्यान मे रख देते है तो किसी को काटेगी नहीं। इसी तरह यह चेतन माया के आवरण को काटने वाला है। कितना ही घना आवरण क्यों न हो माया का यह चेतन उसको काट देता हे : उस शरीर को म्यान समझो, तलवार रखने की म्यान। वेदान्त भाषा मे इसको कोश कहते है। अन्नेन वर्धते। अन्न खाने से यह बढता है। इसे अन्न-मय कोश कहते हैं। जैसे बृद्धावस्था से यह शरीर घट जाता है। क्यों? अन्न खाना कम हो जाता है। अन्न न खाने से शरीर घट जाता है। जवानी मे आदमी जम कर खाता है। बुढापा मे जैसे डाक्टर जमूरे से पकड़ कर एक २ दांत को खींचता है तो मुँह पीला पड़ जाता है न, इसी तरह यह जरा है। यह जरा भी लेडी डाक्टर है यह भी इसके दाँत खींचती है। उसने तो इस शरीर को कमजोर कर दिया। अब कितना खाओगे। उसने तो शरीर को कमजोर कर दिया किन्तु तुम अपने ज्ञान को कमजोर मत करो। इस बुद्धिमान मनुष्य को चाहिए कि जसे अवस्था इस शरीर को जवान बनाकर बुढा वना देती है ऐसे ही हम भी इस शरीर के अभ्यास से बाहर हो जाएँ। जैसे साँप अपनी केचुली छोड़कर चला जाता है अमुक समय तक रहता है। ऐसे ही इस शरीर को सांप की केंचुली की तरह नहीं इसको जुदा करना पडेगा। जुदा करने के लिए विचार करना पड़ता है। जबतक ब्रह्म विचार नहीं करेंगे तब तक यह जुदा होने वाला नहीं। ठीक है काल देवता तो इसको जुदा कर ही देगा किन्तु सूक्ष्म शरीर से अपने को जुदा करने के लिए वैदान्त भाषा मे षड़ ऊर्मि विज्ञान रखा है। उर्मि शब्द का अर्थ लहर होता है। तरङ्ग, जैसी समुद्र मे लहरें उठती हैं, ऐसे ही तुम्हारे जीवन में माया समुद्र की छः बडी तरङ्ग है, छः लहरें हैं। यह षड़ ऊर्मि है। जन्म की लहर खट् ढोलकी बजने लगती है। और कहीं लड़की हुई तो ढोलकी कमजोर बजती है। अगर लड़का हुआ तो खुशी अधिक होती है क्यों कि प्राणियों मे अपने घर से प्रति ममत्व अधिक ज्यादा है। लड़की को तो समझते हैं, ऋण चुकाने वाला सेठ है। लेने आ गया है। जैसे वह सेठ बही लेकर आ जाता है कि ला भाई, इतना तो ब्याज हो गया है। इसी तरह लड़की है। आई है, लेकर चली जाएगी। लड़के कमाऊ

सेठ है वह कमा कर अपने घर लेकर आएँगे। बस यही भावना है, किन्तु जो ज्ञानवान सत्सङ्गी है वह दूसरे के घर को अपना ही मानते हैं।

एक सत्सङ्गी रहे बम्बई में, अब तो नहीं रहे वो। कहते हैं स्वामी जी मैंनू 50 प्रतिशत ज्ञान हो गया है। पूछा कैसे? बोले बस जो अपना है वह तो अपना ही है दूसरे के माल को अपना कर लो। यह सब आत्मा ही तो ह। आत्मा से बाहर कौन है? मैंने कहा, हाँ, आत्मा तो है किन्तु नाम रूप तो आत्मा नही। यह सब नाम रूप जगत है। इस नाम रूप जगत को अपना कर के क्या करेंगे। अपने नाम रूप की ही हम रक्षा नहीं कर पाये। बचपन आया, चला गहा कुमारावस्था आई, चली गई। जवानी आई और गई। यह बुढापा कब तक रोकेगा? इसलिए वेदान्त भाषा मे यह षडूर्मि विज्ञान है। जन्म मरण, भूख, प्यास शोक, मोह। बस इतना ही संसार है। तुम जन्म से जुदा हो, क्योंकि तुम जन्म से पहले भी थे। मरण क्या है? तुम ने इस शरीर को छोड़ दिया शरीर का वियोग हो गया। जैसे scientist आकाशा में बडे २ राकेट छोड़ते है न। अमुक सीमा तक एक राकेट ले गया। वहाँ जा कर यह राकेट निकल गया। दूसरा राकेट आगे ले जाएगा। उसी तरह यह स्थूल शरीर भी राकेट है, अमुक सीमा तक यह तुमको ले जाएगा। उसके बाद यह जुदा हो जाता है। आगे सूक्ष्म शरीर तुमको लेकर जाएगा। बह कहाँ जाएगा? जहाँ का लक्ष्य बनाओगे। मुमुक्षु मोक्ष को लक्ष्य बनाता है। 'मैं मोक्ष मे जाऊँ' इसलिए मुमुक्षु आत्मा का विचार करता है। शरीर भोग का विचार नहीं करता। इन्द्रियों के भोग का विचार नहीं करता। यह तो स्वभाव से चलता है। पशु भीं अपनी योनि के अनुसार अपना भोग ले रहे है। पक्षी अपनी योनि के अनुसार भोग ले रहा हें। इस पृथ्वी मे ही अमृत भी है, विष भी। मनुष्य ने भी अगर अपनी योनि के अनुसार खाया तो क्या गड़बड़ है?

'मैं कौन हूँ' इसको केवल मनुष्य ही जान सकता है। मनुष्य के अतिरिक्त कोई योनि नहीं इस 'मैं' को समझने के लिए। इसलिए आचार्यो ने निश्चय किया कि तुम अपने स्वरूप मे पहुंचने के लिए जन्म मरण का विचार करो। तेरा जन्म भी नही, तेरा मरण भी नहीं। तो शोक मोह क्यों करते हो। भूख प्यास

प्राण का है । प्राण खाता है, प्राण पीता है । प्राण को पानी भी चाहिए, भोजन भी चाहिए । प्राण जितना बलवान होगा उतना ही उसका भोजन अधिक होगा । बच्चा दिन खाता रहता है । दिन भर उसका production भी चलता रहता है । उसको उसके लिए खास जगह ढूंढने की भी जरूरत नहीं । प्राण बलवान होने से खाना दाना चलता है । इसलिए भूख प्यास प्राण का धर्म है । तुम प्राण नहीं हो । तुम प्राणपति हो । प्राण तुम्हारी सत्ता मे चल रहा है । तुम प्राण से न्यारे हो गये । जन्म मरण स्थूल देह का धर्म भूख प्यास प्राण का धर्म । शोक मोह मन का धर्म है । मन के अन्दर शोक आता है, मोह आता है । तुम तो मन के भी साक्षी हो । जब तुम मन के भी साक्षी हो तो शोक मोह तुम मे कहाँ से आया । यह छः ही तो संसार है । जन्म मरंण भूख प्यास, शोक मोह । सारी दुनियाँ इन्ही के घेरे मे घुम रही है । तुम इेम छहो से न्यारे हो । तो स्वरूप तुम्हारा साक्षी है । तुम सबके साक्षी हो । मंत्र कहता है 'साक्षी चेताः केवलो निर्गुणश्च' । साक्षी माने तुम साक्षी हो । चेताः माने तुम चेतन हो । केवलो माने अद्वय हो और निर्गुण हो । । तुम निर्गुण हो । माया गुणमयीं है । माया से परे होने से तुम निर्गुण हुए । ऐसी वो आत्मा ब्रह्म ब्रह्म । उस आत्मा को मुमुक्षु जाने 'यह मैं हूँ' 'अयमहमस्मि' नाहं देहादिसंघातः । मैं यह देहादिसंघात नहीं हूँ । एसा निश्चय कर के आगे चले फिर इस के मन मे शान्ति आएगी ।

बहुत से लोग कहते है महाराज जी मन मे शान्ति नहीं, सो शान्ति आएगी कहाँ से ? कोंई बाजार मे बिकती तो है नही बेचारी । इसके लिए तत्त्व विचार करो । तत्त्व विचार मे जब चलोगे तो तुम्हारे मन में शान्ति आएगी । ऐसा मत सोचो कि कोई दुःख नही होगा तब हम बडा दुःखी होंगे । कोई दुःख न होने से सुखी तो पशु भी है । हम भी अगर उतने मे ही सुखी हुए तो हमारा यह सुख पशु कोटि का ही हुआ । दुःख बैठे हो दुःख के कारण भी वैठे हैं किन्तु फिर भी तुम सुखी हो तो यह सुख तुम्हारा ज्ञान प्रधान सुख हुआ । इसलिए कहा है 'तस्माद्वा एतं सेतुं तीर्त्वाऽन्धः सन्ननन्धो भवति' उस शरीर से अपदे कों न्यारा समझो । एक मात्र यह आत्मा ही सेतु है । इस संसार सागर से पार होने का साधन है । इसलिए मुमुक्षु इस सेतु आत्मा को प्राप्त करे । यह अन्धपना कहाँ

बैठा है । यह शरीर का धर्म है । इन्द्रियों का धर्म है । अन्धा जो है यह स्थूल शरीर है । तुम इसके विकार से बाहर चले गये । तुम अपनी आत्मा में चले गये। जहाँ अन्धापन नहीं । और 'विद्धः सन्नविद्धो भवति' विद्ध माने कटा हुआ, अब तुम नहीं कटोगे । जब तुम आत्मभाव मे पहुंच जाओगे तो तुम पर कोई शास्त्र प्रहार नहीं करेगा । गीता मे देखो, कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन दोनों ओर देखता है । कौरवों और पाण्डवों की सेना समुद्र की लहरों की तरह टकराने के लिए तैयार खड़ी है । अर्जुन को मोह हो जाता है । आना भी चाहिए । यह स्वाभाविक है। स्वस्वभाव से अर्जुब के मन में मोह आ गया । किसी प्रिय को देख कर मोह हो जाना स्वाभाविक है । किन्तु कृष्ण को मोह नहीं । ज्ञान जिसका निर्मल होगा उसको शोक मोह के विषय रहने पर भी शोक नही होगा मोह नहीं होगा । असुरी शक्ति जब बढ गई है तो उसे दबाना तो पडेगा ही । वह कहते हैं झाडू तो लगाना ही पडैगा । कचरा बहुत बढ गया है ।)

कृष्ण ने क्या किया ? केवल आत्मा का ज्ञान ही दिया । और कोई matter नहीं दिया । कृष्ण को सिद्ध कहना भी अपमान की बात ह । जब उस को अवतार मानते हैं तो कौन सी सिद्धि उस में नहीं । उसमे सारी सिद्धियाँ हैं । उदाहरण के लिए अश्वत्थामा ने निश्चिय किया कि कल हमको पाँडवों मे से किसी एक का अवश्य मारना है । अर्जुन के ऊपर आग्नेय वाण छोडे अर्जुन को भस्म करके लिए । कृष्ण समझ गये । उन्होंने संकल्प किया यावान् युद्धकालस्तावान् न रथो नश्येद् जब तक युख चलेगा तब तक यह रथ नहीं बिगडेगा । दिन भर युद्ध किया । सायंकाल अपने शिविर में आएँ । भगवान् कृष्ण अर्जुन की पूरी सर्विस दे रहे हैं । जैसे कोई सेठिया हो ड्रायवर गाड़ी चला रहा है । नौकर रख हैं । पहले वह उतरेगा, गाड़ी का दरवाजा खोलेगा तब यह सेठ उतरेगा । ऐसे ही कृष्ण सर्विस दे रहे हैं । रोज स्वयं उतर कर अर्जुन की ड्यूटी देते हैं । आकर पहले खुद उतरेगा, रथ को पकड़ रखेगा । फिर अर्जुन को उतरने के लिए कहेगा । पर आज के दिन उन्होंने पहले अर्जुन को देखा । अर्जुन ने पूछा क्या बात है । कृष्ण बोले आज पहले तू उतर जा । क्यों ? हम तो रथी हैं पहले तूं उतर । कृष्ण ने कहा. रथी तो है तू पर पहले नीचे उतर

जा । अर्जुन भक्त भीं था । उतर गया । रथ से कृष्ण उतरे और रथ भस्म हो गया । कृष्ण बोले अगर पहले मैं उतर जाता तो तेरा क्या हाल होता ? इस रथ को तो अश्वत्थामा ने भस्म कर दिया था, यह तो मेरे संकल्प से टिका हुआ था । कृष्ण चाहता तो अर्जुन के कान में फूंक मार सकता था । फूंक मार देना झट अर्जुन को प्राण हो जाता । कना मना कुर्र, तू चेला मैं गुर्र । किन्तु उसने ऐसा नहीं किया । कृष्ण ने सोचा ऐसे कुछ होने वाला नहीं । इसको ज्ञान का उपदेश देना ही पडेगा । उपदेश करेंगे तो ज्ञान की बात समझानी ही पडेंगी । सिद्ध से तुम व्यामोहित हो सकते हों परन्तु ज्ञान नही हो सकता । इसलिए मुमुक्षु चमत्कार की खोज नहीं करे ।

गीता मे कहा है 'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः' शस्त्र इसको काटते नहीं । यहाँ मंत्र कहता है 'विद्धः सन्नविद्धो भवति' यद्यपि कटा हुआ है पर देहाहंकार से बाहर हो गया है,इसलिए यहाँ देह कटने से उसका क्या कटा। जैसे डाक्टर ने क्लोरोफार्म दिया । तुम को देह के अहंकार से बाहर कर दिया बेहोश कर दिया । पर वहाँ तो तुम जब ज्ञान से बाहर हो जाओगे तो देह से तुम्हारा तादात्म्य अध्यास नष्ट हो जाएगा । इस शरीर के साथ तुम्हारा तादात्म्य है । जैसे लोहा अग्नि में डालो तो लोहे का अग्नि से तादात्म्य हो जाता है ।ऐसे ही चेतन का तादात्म्य उस शरीर से हो गया । कैसा ओतप्रोत है अब शरीर में जरा भी कुछ होता है तो खट् आरोप अपने ऊपर कर लेता है । अरे तेरा पडोसी था तेरे पास रहता था । मर गया , तू क्या मर गया मरा तो पड़ोसी । हाँ तेरे पास रहता था तो इसे खाना दाना मिलता था । तेरे चले जाने के बाद इसको खाना कौन देता देता है ? 'उपतापी सन्ननुपतापी भवति' उपतापी माने शरीर में कोई रोग आ गया । उसी छान्दोग्य उपनिषद के छठें अध्याय मे बात आई 'सोम्योतोपतापिनः ज्ञातयः पर्युपासते' कोई उपतापि, जैसे परिवार ने कोई बृद्ध होवै । । माता या पिता । बृद्ध भी महाबृद्ध 80 से ऊपर फर्स्ट क्लास बुढा होता है । बुड्ढा एक दम बीमार हो गया । तो ज्ञातयः एक दम सब घेर कर बैंठ गये । बडे लडके ने पूछा, पिता जी मेरे को देख रहे हो ? छोटेने पूछा पिता जी मेरे को देख रहे हो ? लड़की ने पूछा पिता जी मेरे को देख रहे हो ? वो

बेचारी भीं पूछती है । तेरे को देखते २ तो ठंडा हो गया है बेचारा । सब अपना अपना परिचय बता रहे है इसका मतलब क्या होता है ? श्रुति कहती है कि जब शरीर छोड़ता है तो होता क्या है ? शरीर कैसे छोड़ता है ?

'तस्य यदा न वाङ मनसि सम्पद्यते न मनः प्राणे' यहाँ श्रुति वाणी का का नाम लेती है । यह सब इन्द्रियाँ अपने २ विषय की नगरी मे नियुक्त हैं । जभ शरीर छोडने लगता है तो पहले इन्द्रियाँ अपने २ विषयों को छोड कर मन मे पहुंच जाती हैं । जैसे किसी मदारीं को देखो । खेल खत्म हुआ तो सब कुछ समेट कर अपनी पिटारी मे बन्द कर लेता है । इस आत्मा से बडा मदारी कौन है ? यह सब को खेल दिखाता है । कहीं बेटा बन कर बैठता है, कहीं पति बन कर बैठता है तो कहीं पत्नी बन कर बैठा है । कहीं भाई तो कहीं बहन बन कर बैठता है । जब खेल खत्म करेगा तो सब कुछ समेटेगा कि नहीं : जितने नक्शे थे सब तो दिखा दिए । अब यह अपनी पिटारी मे बन्द करेगा । इन्द्रियों के द्वारा यह खेल दिखाता है तो अब इन इन्द्रियों को मन मे वन्द करेगा । किन्तु जब तक इन्द्रिया बाहर घूमेंगी तो आंख से देखेगा, कान से सुनेगा । हाथ पैंर भी हिलेंगे । लोग कहते है सीरियस तो है पर अभी सब से बोलते चालते हैं । पर जब इन इन्द्रियों को बाहर से खींच लेता है । माने इन्द्रियो को विषयों से खींच कर मन मे लीन कर लेता है । मंत्र कहता है 'यदावाङ मनसि सम्पद्यते' जिस काल मे अर्थात मृत्यु के समय जब वाणी मन आ जाएगी श्रुति वाणी का नाम इसलिए ले रही है क्योंकि वाणी सब इन्द्रियों की नेता है । सब इन्द्रियाँ वाणी के पीछे घूमती हैं । मृत्यु देवता लीडर को खींचता है । वाणी बन्द हो गई । 'वाङ मनसि सम्पद्यते' । वाणी मन मे आ गई । सारी इन्द्रियाँ मन मे आ गई । उस समय बाहर का देखना सुनना बोलना चालना बन्द । उस समय कहते है भाई । ऐसे ही पडे है बोलते चालते नहीं ।

एक बात याद रखो । जिस समय शरीर छूटने लगता है, जैसे हम लोग सायंकाल को भोजन कर के लेटते हैं । किसीं को लेटते ही स्वप्न होने लगता हैं । स्वप्न कैसा होगा ? जैसे संस्कार होंगे । किसी को स्वप्न हुआ कि घोर जंगल मे है, tiger सामने आ गया । देखते ही चिल्ला पड़ा । मां ने पूछा

क्या हुआ ? कहता हे शेर हैं । अरे तू तो अभी रोटी खा कर सोया हैं । शेर कहां हैं यहां ? इसी तरह याद रखना चाहिए किसी २ को तो जब शरीर छोडते हैं तो अपने की तरह आगे की योनि का सीन सामने आ जाता हैं । जो तत्त्व विचार शील होंगे, ज्ञानी होंगे, ब्रह्मविद्या के अभ्यासी होंगे । देखो सत्सङ्ग भी करना चाहिए और साथ साथ practice के लिए जप ध्यान भी करना चाहिए, नहीं तो अन्दर हृदय मे प्रवेश नहीं कर पाओगे । बाहर से बाहर ही रहोगे ।

दो मित्र रहे । अमली थे । अफीम खाते थे । सोहन सिंह और मोहन सिंह । पहले तो दोनों ने अफीम खाई । चाय भी पी । दोनों गप्पें मारते रहे । मोहन सिंह ने कहा चलो तुम को घर छोड आऊँ । सोहन सिंह को लेकर चल पड़ा । उसका घर आ गया तो मोहन सिंह कहता है, चल अब मैं तेरे को छोड़ आऊँ । वह उसको साथ लिए लौट आया । अब फिर मोहन सिंह बोला चल अब मैं तेरे को छोड कर आऊँ । ऐसे ही सारी रात बीत गई । दोनों बुड्ढे घूमते रहे । कोई भी घर नहीं पहुंचा । एक जवान लड़का मिल गया । उसने कहा तुम यहीं बैठो मैं सोहन सिंह को घर छोड़ आता हूँ । उसने कहा अच्छा । यह तुम्हारा जो सोहन सिंह है । सोहन माने सुन्दर, सिंह माने सिंह की तरह निर्भय रहने वाला । यही इसका हाल हैं । यह घर पहुंच नहीं पाया हैं । रास्ते मे ही भटक रहा हैं । इस तरह उस अवस्था मे अगर कोई भयंकर scene सामने आएगा । जैसे स्वप्न मे कोई भयंकर दृश्य सामने आ जाता हैं । किन्तु सत्सङ्गी को ब्रह्मविद्या का बोध होगा । इसलिए उसको भय नहीं होता । जो मरो २ करते रहते हैं ऐसे संस्कारों में भटकने वाले जो लोग होते है उन्हीं को ऐसे भयंकर scene उस समय आते हैं ।

'तद्यदावाङ मनसि सम्पद्यते मनः प्राणो प्राणः तेजसि तेजः परास्यांदेवतायाम्' पर देवता मे तेज चला गया । तेज शब्द का अर्थ है उदान । इन्द्रियाँ मन मे गई । मन कहाँ मिला ? प्राण मे । प्राण उदान मे गया । अब उदान इस को खींचेगा । कहाँ जाएगा ? जहाँ का संस्कार आ गया । वहीं चला जाएगा । अगर वेदान्त विद्या का होगा तो, अगर तत्त्व ज्ञान होने से विलम्ब हैं तो अच्छे माता पिता के शरीर मे पहुंच जाएगा और वहाँ बैंडिग विस्तरा लगा कर बैठ

जाएगा । आठ दस महीने बाद पुनः मनुष्य बना कर आएगा । शरीर छूटने पर पुनः मनुष्य शरीर मे आने के लिए कम से कम एक वर्ष का समय चाहिए । पहले वो अन्न जाएगा । अन्न से पिता के शरीर मे जाएगा । पिता के शरीर से मा के शरीर मे जाएगा । वहाँ भी उसको नौ दस महीने रहना पडेगा । मच्छर मक्खी बनने ने समय नहीं लगेगा ।

'स य एषोऽणिमै ...

तत्त्वमसि श्वेतकेतो'

महर्षि कहते हैं बेटा तू आत्मा ही है, तू देहादि संघात नहीं है । जो तू देखता है यह आत्मा नहीं है । श्रुति बडे महत्त्व की बात कहती है कि जिस को आत्मा कह रहे हैं वह ब्रह्म रूप है । 'एतं सेतूं तीर्त्वापि नक्तमहरेवाभि निष्पद्यते सकृद्विभातो ह्येवैष ब्रह्मलोकः' नक्तम् शब्द का अर्थ है रात्रि । हम लोग रात उसकों कहते हैं जब सूर्य अस्त होने के बाद अंधेरा हो जाता है । रात्रि क्या काम करती है ? कुछ देखने नहीं देती । और माया क्या काम करती है ? यह भी कुछ जानने नहीं देती । यह माया की रात्रि है । मान लो कोई सुन्दर हीरा है । हम उसे देखते हुए भी नहीं देखते । सत्सङ्गी हो, रोज़ सुनते हो, इस लिए जानते हो किसी सामान्य आदमी से पूछो तो शरीर का नाम और शरीर का गांव बता देगा । यह संसार अंधेरे मे ही चल रहा है मंत्र कहता है नक्तम् माने यह अविद्यारूपी रात्रि नहीं रहेगी । उसके लिए 'सकृतविभातो' सकृत माने सदा । यह तेरी आत्मा सदा प्रकाश स्वभाव है । यह कैसे प्रकाश स्वभाव है ? इस बात को कल के लिए छोड़ते हैं । अब सीधे होकर बठो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

११-५-८८

प्रवचन सं०-३३

"ॐ अथ यद्यज्ञ इत्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येव यो ज्ञाता तं विन्दतेऽथ यदिष्टमित्याचक्षते तद्ब्रह्मचर्येण ह्येवेष्ट्वात्मानमनुविन्दते ।।"

(छान्दो. ८-५-१)

विचार चल रहा है कि श्रुति भगवती मनुष्य प्राणी को इस बात को सूचित करती है कि बेटा इस संसार सागर से पार होने का कोई मार्ग नहीं है। अपनी इस आत्मा को पकड लेगा तो पार हो जाएगा। और यदि आत्मा को नहीं पकडेगा तो कोई भी तुमको पार नहीं कर सकता। देवीं देवताओं की भक्ति भी करोगें तो वह तुमको अपने पास बिठा लेंगे। देवी देवता भी अपने पुण्यों से ही बना है। जो पुण्यों से बना है वो किसी समय मे तुम्हारी शक्ल मे था। तुम्हारी शक्ल से देव भाव मे चला गया। उसकी भक्ति हम लोग करेंगे तो वो हम को अपनी बगल मे बिठा लेंगे देवता बना कर। मोक्ष मे वो नही जाने देंगे। जैसे इस लोक मे समझो जिस पार्टी मे जाओगे वह अपनी पार्टी से बाहर नहीं जाने देंगे। बाहर जाने लगोगे तो कुछ न कुछ लगा देंगे कि तुमने पार्टी का कानून तोडा है। इसी तरह इस आध्यात्मिक जगत मे भी, आधिदैविक और आधिभौतिक जगत मे भी यही है। देवता तुमको पकड लेंगे। ब्रह्मभाव की ओर चलो तो देवता भी नाराज होते है।

तस्मात् एव न प्रियं तद्मनुष्य अन्योऽसौ अन्योऽहमस्मि' देवताओं को भी यह इष्ट नहीं कि यह मनुष्य प्राणी ब्रह्मभाव को पकड कर हम से आगे निकल जाए। ऐसी भेदबुद्धि वाले 'न स वेद' वो नहीं जानता। इसलिए कहा कि इस आत्मा को जनाना मनुष्य जीवन का सब से बडा फल है इस आत्मा को जो जान जाएगा वह शरीर से अन्धा भी होगा तो वह अन्धा नहीं होगा। 'अन्धः सन्ननन्धो

भवति ।' इस शरीर के कटा हुआ होने पर भी वो कटा हुआ नहीं । इस शरीर में कोई विलक्षण रोग भी होगा तो उसको कोई भी रोग नहीं होगा । क्योंकि जब तुम आत्मभाव में चले गये तो वहाँ माया का कोई उपद्रव नहीं । इसलिए मंत्र ने अन्त मे अच्छी बात कहीं । नक्तमहर्वाभिनिष्पद्यते सकृद्विभातो ह्येवैष ब्रह्म लोक:' नक्तम् माने रात्रि । यह हमारी रात्रि नहीं । अविद्या रूपी रात्रि । अज्ञान रात्रि । 'अहरेवाभिनिष्पद्यसे प्रकाश के रूप मे परिणत हो जाएगी । इसलिए आत्मा को ही ब्रह्मलोक कह रहे है । सब प्राणी उसकी सत्ता में जी रहे है । इस आत्मा के बिना कोई जी नही सकता । 'ब्रह्मलोक: सकृद्विभातो' यह सदा प्रकाश रूप है । श्रुति कहती है इसको किसी के प्रकाश की जरूरत नहीं किसी प्रकाश उस को चाहिए, जिसके पास अपना प्रकाश नहीं है ।

यह आत्मा स्वयं प्रकाश है । इसको किसी के प्रकाश की जरूरत नहीं । इसको थोडा तर्क से समझो । पहले तो यह समझो कि जो २ संसार की वस्तु है, वो हम देखते है तब दीखती है जो इस देश मे नहीं होगी, दूसरे देश मे होगी, उस वस्तु को या तो वहाँ जाकर देखेंगे अथवा उसे यहाँ मंगवा कर देखेंगे । जो वस्तु इस काल में नहीं होगी, उसको उस काल में देखेंगे । काल की प्रतीक्षा करनीं पडेगी । उस काल मे पहुँच कर उस वस्तु को देखेंगे । देखने के बाद उस वस्तु से सुख मिलेगा । दु:ख भी मिलेगा । जो २ इन्द्रियों का विषय है उसको किसी देश में या किसी काल जाकर देखोगे । वो भी जब देखोगे, तब दीखेगा । जब तुम नहीं देखोगे तो वह नहीं दीखेगा । यह शरीर है तुम्हारा । शरीर से पूछो क्यों भाई मिट्टू, तेरे लिए हम इतने पापड बेलते है, यह बताओ कि तू हमको देखता है कि हम तेरे को देखते है ? इस शरीर को भी जब हम देखते है तभी दीखता है नहीं देखते तो नहीं दीखता । जिसको हम देखते है वो दीखता है, हम नहीं देखते तो नहीं दीखता वो हम नहीं । वो हम से जुदा । यह शरीर है हमारा । इसको हम कितने घण्टे देखते है । 18 घण्टे हम देखते है तब दीखता है हम नहीं देखते तो नहीं दीखता । पडा है , खाने को दे दिया तो खा लिया नहीं तो पडा है भूखा ही ।

मान लो 100 वर्ष की आयु है तुम्हारी 16 घण्टे रोज इसको नही

देखा । हिसाब लगाओ तो यह मूर्ख 25 वर्ष गायब रहा । अज्ञात रहा । जिसके गाने गाये जा रहे है । जिसको दूल्हा बना कर आगे कर के रखा है कि तू ही ही तो है सब कुछ । मूर्ख 25 वर्ष गायब रहा । यह इन्द्रियाँ है तुम्हारी, जो खट्टे मीठे पापड बेलती है । काला पीला दिखाती है, इसको भी हम देखते है । तब दीखती है । आंख तब दीखती है जब हम देखने है । जैसे निद्रा मे खो गये । तब आँख देखेगीं नहीं । कान सुनेंगे नहीं । जीभ में कोई स्वाद नहीं । कोई बुढ्ढा हो मान लो दादा । मां बजार से गुलाब जामुन ले आई । दादा सो गया । दांत थे नहीं मुंह मे । दादा का मुंह खुला था । मां ने दो गुलाब जामुन दिए बच्चे को । एक दादा के मुँह मे रख दिया । स्वाद कब आएगा ? मुँह मे रखते ही क्या स्वाद आ गया ? जब नींद खुली तो रसनेन्द्रिय काम करने लगी । स्वाद आने लगी । अब चिल्लाता भी जा रहा है और स्वाद भी ले रहा है इसका अर्थ यह निकला कि तुम्हारे जगे बिना यह इन्द्रियां काम नहीं करेंगीं । जो तुम्हारे बिना काम नहीं करे वो तुम नही हो । इसी तरह मन भी तुम्हारे बिना कुछ नही । निद्रा मे सो गये । मन भी पांच छः घण्टे के लिए अलग हो गया । यह जीव इस तरह चल रहा है । तुम अपने को देखोगे तब समझोगे ? कि नही देखोगे तब भी समझोगे । अपने को कभी देखने की जरुरत नहीं पडती । जैसे अग्नि स्वयं तेजस्वी है । उसको जलाने के लिए दूसरी अग्नि की जरूरत नही पड़ती । आत्मा को किसी के प्रकाश की जरूरत नही है यह स्वयं प्रकाश है । इस आत्मा के अतिरिक्त कोई भी पदार्थ प्रकाशवान नही । आत्मा को भी यदि दूसरे प्रकाश की जरूरत होती तो यह सारा ससार अन्धकारमय होता । चेतन के करंट में आने पर ही पदार्थ प्रकाशित होते है । 'न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं, नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः' ।

अहं रूप से जब आत्मा मान है तब 'इदं मम' यह मेरा है 'इदं त्वं' यह तेरा है का भान होगा । आत्मा से अनात्मा का प्रकाश होगा । किन्तु तुमको अपने स्वरूप को प्रकाशित करने की जरुरत नही । यह स्वयं प्रकाश स्वरूप को जब मुमुक्षु समझ जाएगा तो वह मोक्ष में चला जाएगा । किन्तु यह स्वयं प्रकाश जो स्वरूप है यह माया के घेरे मे है माया का हिमालय है । इसलिए स्वयं प्रकाश होते हुए भी यह जीव नहीं जानता । इसके लिए एक दृष्टान्त संत लोग देते है

जैसे तुम्हारी 4 मंजिल की (Building) है। (first floor) है उसमे मच्छर मक्खी है। नाना प्रकार की व्याधियां है रहना तो पड़ेगा। और कोई साधन नही। वहाँ रहोगे तो वह मच्छर मक्खी आदि जीव परेशान करेंगे। दूसरा जो मंजिल है वहाँ मच्छर मक्खी कम है किन्तु अन्धेरा है वहाँ। तीसरा मंजिल शान्त और स्वच्छ है पर प्रकाश वहाँ भी नहीं है। अंधेरा है वहाँ भी। चौथी मंजिल बन्द है। वहाँ ताला लगा हुआ है। वहाँ प्रकाश भी है, मच्छर मक्खी भी नहीं है। बड़ी शान्त अच्छी जगह है पर यह कभी ऊपर गया ही नही। कभी दरवाजा ही नहीं खोला। तीन मंजिल मे ही घूम २ कर आयु पार कर ली। ऐसे ही अपने जीवन मे समझो। यह चार मंजिल की बिल्डिग कोई और नहीं। तुम्हारा शरीर ही। यह जाग्रत अवस्था इसका (ground floor) है। कहोगे यह मच्छर मक्खी क्या है तो यह चिन्ता जो जो है यह क्या काम करती है ? चिता तो मरने पर जलाती है पर चिन्ता जीते जी ही जलाती है। मच्छर जैसे खून पीता है यह चिन्ता भी ऐसे ही खून पीती है। राग है, शोक है, मोह है, क्रोध है यह सब कीडे है। काटने वाले है। इनके बीच मे रहते हुए थोड़ा सा सुख भी मिला दुःख भी। (Second floor) स्वप्न है। निद्रा मे सोया स्वप्न मे चला गया। अंधेरा तो यहाँ है ही मच्छर मक्खी तो नहीं है पर कुछ तो है ही यहाँ भी यहाँ भी थोडा सुख होता है दुःख भी होता है। यहाँ भी परेशान है। कुछ उपद्रव होता ही है। तीसरा मंजिल सुषुप्ति है यहाँ मच्छर मक्खी कुछ नहीं पर अधेरा तो है। प्रकाश यहाँ भी नहीं है। आनन्द तो आया पर आने पर भी उसने समझने कुछ नहीं दिया। कौन सा आनन्द है। जैसे आया वैसा ही चला गया। आनन्द तो दिया पर कुछ समझे बिना ही वापिस कर दिया। चौथा मंजिल ब्रह्म पद है। तुरीय पद है। इस चौथे पद का दरवाजा बन्द है। 'अमात्रश्च चतुर्थोऽव्यवहार्यः प्रपञ्चोपशमः शिवोऽद्वैतः शास्त्र से, गुरु से दरवाजे को खोलना है। यह जो तुरीय आत्म पद है, यहाँ यह मुमुक्षु पहुंचेगा तो संसार की यात्रा इसकी खत्म हो जाएगी। इसको अमात्र कहा। ॐकार की जो तीन मात्राएँ है वो सुषुप्ति तक है। इससे ऊपर वो अमात्र है।

अव्यवहार है। वहाँ कोई व्यवहार नहीं व्यवहार तो जाग्रत और स्वप्न तक ही है। 'आत्मैवाहमस्मि' महावाक्य से उत्पन्न जो ब्रह्माकार वृत्ति है, इस वृत्ति

का विषय चिन्मात्र सत्चित् आनन्द है । आचार्य कहते है 'अभेददर्शनं ज्ञानं ध्यानं निर्विषियं: मन:' भेद तो पशु पक्षी भी देख रहे है । गधा भी घोडे को देख कर कहेगा, बडा मूर्ख है । अपने को बडा समझता है किस को कहेगा । घोडे को कह रहा है । अपने को कहेगा कि बेटा हम तो इससे बढने वाले हैं ही नहीं । घोडा तो काफी बडा है । मतलब यह है कि भेद दृष्टि तो पशु पक्षी मे भी है । यह हमारा बेटा है, यह तुम्हारा बेटा है यह भेद दृष्टि तो सामान्य मनुष्य मे भी है । अगर परमार्थ में भी तुमने भेद को ही पकडा तो तुम्हारा दर्शन क्या हुआ ? दर्शन तो वो है जहां अभेद दृष्टि है । अपरमार्थ में, लोक जीवन मे जहां राग द्वेष शोक मोह आदि हैं वहाँ भेद ज्ञान है । पर परमार्थ में भी अगर तुमने यही भेद ज्ञान कर दिया तो वहीं के वहीं रहे । जैसे गाय को इस खूटे से खोल कर उस खूटे मे बांध दिया । वास्तव मे अभेद ज्ञान ही ज्ञान है । भेद ज्ञान तो अज्ञान है ।

अखण्ड तत्व का दर्शन होना चाहिए । जैसे यहां सब बैठे हैं , शरीर की दृष्टि से सब अलग २ हैं । तो भी कोई भी शरीर चेतन आत्मा से अलग नहीं, उस चेतन के बिना जीने वाला नही । उस चेतन आत्मा का कौन सा आकार है । यह आकार तो शरीर का है । आतमा जिसका कोई आकार नहीं उसमे भेद भी कैसे करोगे । यह आत्मा एक ही है । अपने अनुभव के लिए ऐसे समझो कि मिट्टी के बने हुए हजार घडे पडे है । घडे भिन्न २ आकार के होते हैं । मिट्टी को आकार तो दिया पर उसके अन्दर कवर क्या किया ? आकाश । यद्यपि घडे छोटे बडे है किन्तु घडे का आकार छोट बड़ा होने पर आकाश में क्या अन्तर पडा वहाँ ? आकाश भी छोटा बड़ा हो गया क्या ? यह छोटापन बडापन तो घडे मे है ।

जैसे इस हाल के चार कोने है । यह चार कोने आकाश मे हैं कि इस हाल मे । उपाधि का एक एक दोष है कि अपने अन्दर जो गुण होवे वह और अपने अन्दर जो दोष होवे वह उपहित मे दिखाएगी । जैसे यह चार कोने इस हाल मे हैं और दीखने लगे आकाश मे । आकाश के अन्दर कोई भेद नहीं । संख्या घडों की हैं या आकाश की ? घडों की ही है । आकाश एक ही है । वो आकाश अखण्ड तत्त्व है । उसके कोई भेद नहीं । ऐसा जो अखण्ड तत्त्व होगा उसको श्रुति

कहतो ह 'सकृत् बिभाति' यह स्वयं प्रकाश सदा प्रकाश स्वभाव ब्रह्मरूप है । वही आत्मा है ।'प्राणोह्येप: सर्वभूतेन विभाति विजानषु विद्वान् भवति नातिवादी' आत्मक्रीड आत्मरति: क्रियावान् एप' बहुत से लोग कहते हैं आत्मा की बात तो आपने की पर यह आत्मा नहीं दीखता तो है नहीं । यह बताओ जो दीखता है । यह आत्मा है, यह किसने बतलाया है । उस फुल को क्या कहोगे । आत्मा के बिना तुम को क्या दीखता है । अगर आंख मे उसकी ज्योति नही आवेगी तो यह आंख क्या देखेगी । यह आंख की ज्योति किसकी ज्योति है ? जिसकी यह ज्योति है, वो तुम हो । यह सूर्य की ज्योति तो है नहीं । चन्द्रमा की ज्योति तो नहीं । जो बिजली हमने उत्पन्न की, उसकी ज्योति भी नहीं यह । तब किस की ज्योति है ? यह अग्नि जो हमारे घर में रहता है चूल्हे मे बेचारा परौंठे बना देता है । यह अग्नि उसका प्रकाश कैसे करेगा ? इसलिए मंत्र कहता है 'न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्र तारकं, नेमा विद्युतो भान्ति, कुतोऽयमग्नि: तमेव भान्तमनुभाति सर्वं,तस्य भासा सर्वमिद बिभाति । जिसके भासने से यह सारा जगत भास मान हो रहा है। वो स्वयं भासना है, उसको किसी के प्रकाश की जरूरत नही । उसको किसी की (help) की जरूरत नहीं । 'अतिबादी न भवति' इस आत्मा की सत्ता से बाहर किसी दूसरी सत्ता को मानना ही अतिबादी है । इस आत्मा को ऐसा जान जाएगा तो 'न अतिबादी भवति' अतिबादी नही होगा । 'आत इति वदति स अतिबादी' लोग कहते है यह शरीर ही सच्चा है । शरीर ही सब कुछ है । इस शरीर से हम किसी के भाई है, किसी के पति हैं, कोई हमारा पिता बना कोई माता । किन्तु यह बताओ कि आत्मा नहीं हैं तो क्या बना ?

कभी बच्चा जन्मा । उठा कर देखा तो कुछ भी नहीं क्या करोगे ? उठा कर फैंक देते है । हम शरीर के भक्त नहीं हैं । आप लोग तो जानते हैं अच्छी तरह कि पशुपति नाथ के दरबाजे पर ले जाते हैं । 'त्वदीयं वस्तु गोबिन्द तुभ्यमेव समर्पयये' हे भगवान सम्भालो अपना माल । भक्त भोग लगाते हैं न' पशुपतिनाथ की भेंट कर दिया । लो भगवान तुम्हारा माल तुम्हारे अर्पण । सोच लो किन के भक्त हैं हम । आत्मा के विना न माता, न पिता, न भाई न बहिन । कुछ नहीं आत्मा के बिना । 'प्राणोह्येष सर्वभूतेषु भाति, बिजानन् बिद्वान् न अतिबादी भवति' ।

फिर यह किसी को नहीं कहेगा कि यह शरीर ही सब कुछ है । ऐसा विद्वान आत्मा में ही रति करेगा । आत्मा में ही क्रीड़ा करेगा । यही क्रियावान है 'ब्रह्मविदां वरिष्ठः' जो ब्रह्म को जानते हैं उनमे यही श्रेष्ठ है । सत् चित् आनन्द स्वरूप यह आत्मा ही तुरीय पद है । यही तुरीय पद है । इस मे पहुंचना है मुमुक्षु को । गौड़पादाचार्य आद्य जगद् गुरु शंकराचार्य के दादा गुरु हैं वह कहते हैं 'अन्यथा गृह्णतः स्वप्नो निद्रा तत्त्वमजानत विपर्यासे अन्यथा ज्ञान मिथ्या है, स्वप्न ही हैं जैसे है रस्सी और समझ लिया सर्प । रस्सी मे सर्प दीख गया । सपेरा वीणा बजाने लगा । आधा घण्टा वीणा बजाता रहा । लडके ने पूछा क्या कर रहे हो ? कहता है विपर्यास । अन्यथा ज्ञान 'निद्रातत्त्वमजानतः' तत्त्व को नहीं जानोगे तो यह निद्रा ही है । जैसे निद्रा मे सो जाओ तो अपन को कोई ज्ञान नही रहता । अगल बगल मे क्या है ? ज्ञान में भी वस्तु का मान नही होता । इसके लिए बड़ उदाहरण अपने जीवन मे ऐसा ही समझना चाहिए । जैसे हीरे को नहीं जानते । इस हीरे की विद्या को हम नही जानते । देखते हैं सुन्दर है, चमकीला है , पर जानते नही । हीरे की क्वालिटी (Quality) को हम नहीं जानते । 'पश्यन्नपि न च पश्यति मूढः' जानते हुए भी न जाने वह मूढ है । इसी का नाम अज्ञान है । इसीको निद्रा कहा है । अहं तो कर रहे हो पूछो कि तुम कौन हो ? कहता है नहीं जानते । इस अहंकार को, अज्ञान को क्षीण करो । इसको क्षीण करोगे, जब यह नाश हो जाएगा , तब तुम तुरीय पद, उस ब्रह्म पद में प्रतिष्ठित हो जाओगे जिस ब्रह्म के अन्दर तुमको भेद नहीं दीखेगा । भगवान कहते हैं 'सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ऐसा सत्‌चित् आनन्द स्वरूप जो है, वह सम्पूर्ण भूतों के अन्दर एक है । जहाँ कृष्ण इस बात को कहते हैं यह माम् शब्द कृष्ण के शरीर के आकार को लेकर नही कहा। आकार तो किसी एक काल मे ही रहेगा । कृष्ण हमारे बीच 125 वर्ष रहे । शरीर की बात नहीं इस चेतन की अखण्डता को लेकर कहा । उस अखण्ड तत्त्व को लेना पडेगा ।

ऐसा जो मुमुक्षु है वह व्यवहार काल मे भी मुझ अद्वितीय चिदात्मा

को जानता ह । ऐसा मत समझो कि पृथ्वी से ग्राकाश मे लटक जाएँगे तब ज्ञान होगा या जंगल में चले जाएँगे तब ज्ञान होगा । बडे २ रार्जाष ब्रह्मर्षि घरों मे रह कर भी ब्रह्म ज्ञानी कहलाए । ज्ञान के लिए जो संन्यास का विधान किया यह तो जीवन मुक्ति के ग्रानन्द के लिए किया । ज्ञान तो तुमको गृहस्थाश्रम में हो सकता है किन्तु जीवन्मुक्ति में थोडी सी कमी रह जाती है क्योंकि घर मे प्रवृत्ति मार्ग मे कोई न कोई विक्षेप होता रहता है । ज्ञानवान के सामने यद्यपि विक्षेप टिकता नहीं पर उसको ग्राने से कौन रोक सकता है । ग्ररे जब तुम जंगल में गये हो तो कभी शेर भी सामने ग्रा सकता है । उमको जंगल में कौन रोकेगा ? शेर से नही डरना बहादुरी है ग्रौर डर जाना कमजोरी है । ज्ञानवान उस शेर से नहीं डरेगा । क्यों ? उस शेर के ग्रन्दर भी तो वही । उसकी ग्रांखों मे उसको ही दीखेगा । उसके लिए शेर क्रूर कैसे हो सकता है । महर्षि पातञ्जलि कहते है, जो योगी ग्रहिंसा की प्रतिष्ठा करेगा वह सर्वभाव में चला गया । उसमे कितनी वड़ी ग्रहिंसा है किसी के लिए हिंसा है । ग्रपने शरीर में ही देखो । नख से शिख तक ग्रात्मभाव है तो कभी इच्छा हुई कि हाथ कटवा दें । दूसरे की पिटाई की इच्छा होती है । हम कितने क्षमाशील है ? ग्रपने दोष कों हम क्षमा कर देते हैं । दूसरे का दोष पकड़ने मे हम होशियार है । भयंकर शेर मे भी वही बैठा है। इसलिए शेर उसको कुछ नहीं कहेगा । इसीलिए कहा 'ग्रहिंसा प्रतिष्ठायां ... ~....

जो योगी ग्रहिंसा की प्रतिष्ठा करेगा, उसके सामने क्रूर जीव भी विरोध छोड़ कर प्रेम से रहेंगे । इसलिए यहाँ मंत्र कहता है 'सकृद्विभातोह्येषः लोकः' यह तुरीय जो ब्रह्म पद है, सत्‌चित् ग्रानन्द यह सदा प्रकाश स्वभाव है । दुनियाँ के जितने भी पदार्थ है वह सब इस चेतन के प्रकाश मे ग्राएँगे तब व्यवहार मे ग्राएँगे । प्रिय व्यवहार भी होगा, ग्रप्रिय व्यवहार भी होगा । व्यवहार क्या है ? किसी वस्तु को पकड़ लेना किसी को छोड़ देना । यही व्यवहार है । प्रिय वस्तु है तो पकड़ ली ग्रप्रिय वस्तु है तो छोड़ दी । वस यही व्यवहार है । किन्तु तुम्हारा ग्रपना स्वरूप जो है उसको न तुम पकड़ सकते हो न छोड सकते हो । यह बताग्रो ग्रपने को छोडने के लिए कहाँ जाग्रोगे ? ग्रौर ग्रपने को पकड़ने के लिए भी कहाँ

जाओगे । तो तुम्हारा स्वरूप कैसा है ? ग्रहण से भी परे है त्याग से भी परे है इसलिए कहा 'आत्म संस्थ' तदा ज्ञानं ग्रहो न तत्र नोत्सर्गा चिन्ता ..... ।

आचार्य कहते हैं ग्रहण और त्याग वहीं होगा जहाँ विकार होगा यह पुष्प देखो । रात को कली के रूप मे था । अब विकसित हो गया है । इसका ग्रहण हो गया । यही फूल जब सूख जाएगा तो हम छोड़ देंगे इसे । यह त्याग हो गया । आत्मा मे कोई विकार नहीं यहाँ ग्रहण भी नहीं त्याग भी नहीं । वो सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है । मुमुक्षु बडी श्रद्धा से इस सत्य को हृदय मे ध्यान करे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१२-५-८८

प्रवचन सं० ३४

"ॐ अथ यद्यज्ञ इत्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येव यो ज्ञाता तं विन्दतेऽथ यदिष्टमित्याचक्षते सद्ब्रह्मचर्येण ह्येवेष्ट्वात्मानमनुविन्दते ।।"

(छान्दो८-५-१)

विचार आया पहले मंत्र मे कहकर आए हैं कि इस महान आत्मा को जो मुमुक्षु जान जायगा वह इस शरीर के ताप से बाहर हो जाएगा। इन्द्रियों के दुःख से बाहर हो जाएगा। मन के दुःख से बाहर हो जाएगा। ह तीन है जो इस आत्मा को प्रभावित करते है। शरीर, इन्द्रियाँ और मन। इन तीनों के प्रभाव से बाहर होने का नाम ही मोक्ष है। किसी लोक मे जाने का नाम मोक्ष नहीं। किसी लोकादि मे जो जाने की बात है। वो तो पुण्य से स्वर्ग मे चले जाओगे और पुण्य नहीं हो सका तो मनुष्य लोक मे चले आओ। इतना भी नहीं हो सका तो पशु पक्षी योनि मे चले जाओ। इस पाप तापों से मुक्त होने के लिए इस आत्मविद्या को मुमुक्षु धारण करें। धारण करने के लिए इन्द्रिय संयम भी चाहिए। इन्द्रियोंका संयम होगा तो तुम्हारे अन्दर आत्म बल होंगा। ऋषियों ने समाधि प्रज्ञा मे इस बात का साक्षात्कार किया कि शरीर मे जो असली बल है वो क्या है ? तो कहा कि ''ब्रह्मचर्यमेव बलं'' अथर्वबेद की श्रुति है ''अधीहि भगवो ब्रह्मे ति'' शिष्य गुरु से प्रश्न करता है कि हे भगवन मेरे को ब्रह्म का उपदेश करो। 'को मे लोक इति' ''ब्रह्मचर्यमेव लोक:'' किं पुण्यमिति 'ब्रह्मचर्य मेव पुण्यम्' बेटा यह जो ब्रह्मचर्य है यही लोक है। अर्थात किसी भी लोक मे जाने की इच्छा करोगे, स्वर्ग मे जाने की इच्छा करोगे, नरक मे जाने की इच्छा तो कोई करेगा नहीं। कहीं भी जाने के लिए शरीर मे बल चाहिए। शरीर मे ब्रह्मचर्य का ही बल चाहिए। शरीर मे ब्रह्मचर्य का ही बल है। इस बल को ही तप कहते हैं। ब्रह्मचर्य तुम्हारे जीवन मे है तो शरीर मे बल होगा। इससे महान पुण्य उत्पन्न होगा। जिस लोक मे जाने की इच्छा करोगे, उस लोक मे चले जाओगे। और एक बात समझो, बहुत से लोगों के मन मे शंका होती है। ऋषियों का ज्ञान बडा निर्मल ज्ञान है वो भांग पीकर बिचार नहीं करते थे। बडे शुद्ध मन से विचार करते थे। लोग कहते हैं ब्रह्मचर्य तो साधु महात्माओं के लिए ठीक है, हमलोग गृहस्थी हैं। हमारे लिए क्या होगा ? ऐसा नहीं सोचो ऋषियों ने व्यवस्था किया है उसके लिए। 'प्रजातन्तु मा व्यवच्छेत्सी' अगर किसी भुमि मे पेड पौधे नहीं होंगे तो वह भूमि बंजर हो जाएगी। धीरे २ रेगिस्तान बन जाती है।

तुम्हारे बच्चे जो आज हैं वही कल का नेपाल है। कल का राष्ट्र है।

कल का समाज है । यही कल का धर्म है यह भी तुम्हारा बडा पवित्र कर्म है । विवाहादि भी धर्म माना गया है । उच्छंृखल वृत्ति नहीं करो । गृहस्थाश्रम मे यह उच्छंृखलता का निषेध किया । महर्षि कहते हैं:-

"परदारपरित्यागी स्वदारा ऋतुकालपरिविष्टिता ब्रह्मचारी गृहीरित:" अपने मन से दुसरे की जो बहुएँ हैं, बेटियाँ हैं, उनको अच्छी आँख से देखो । अच्छी आँख से देखोगे तो तुम्हारे मन मे निर्मलता रहेगी । नहीं तो मन मे कोई बादल आ जाएगा । बादल नहीं आना चाहिए । परदारपरित्याग: । दूसरे की जो पत्नी है, उधर नहीं देखो । और अपनी जो पत्नी है वो भी 'ऋतु कालाभिगामी" ऋतुकाल जब आता है उसी समय पत्नी के साथ सहवास करना चाहिए।बाकी दिनों मेब्रह्मचारी रहो । तुम्हारी energyबल ठीक रही कि नहीं।दोनों की energy बल ठीक रहना चाहिए। पति की भी पत्नी की भी । उस-अवस्था मे तुम्हारे शरीर से जो आत्मा प्रकट होगी वह अच्छी आत्मा होगी क्यों ? तुम्हारा मन अच्छा रहा । बल भी रहा । तेज भी रहा । जीवन का मनमाना उपयोग मत करो जीवन मे ।

यह ब्रह्मचर्य है । अब तुम संयम से आ गये । जीवन मे जितना भी आवश्यक था उतना उपयोग भी हुआ । शेष जीवन का संयम करो । शरीर बल और मनोबल दोनों रहेंगे । जीवन मे शरीर बल भी चाहिए और मनोबल भी चाहिए । दोनों की आवश्यकता है । जैसे देखो । कभी अपनी पत्नी से ही झूठ बोल गये तो जब झूठ बोलेंगे तो मुँह दूसरी ओर कर के बोलेंगे । मुँह की ओर देखेगा तो उसकी आंख बडी तीखी है । वह खिडकी से झांक लेती है कि सच कह रहा है कि झूठ बोल रहा है । तो आंख से आंख मिलाकर झूठ नहीं बोल सकते। झूठ को छिपाने के लिए फिर झूठ बोला । मन मे कमजोरी आ जाती है । कमजोरी मन मे आई तो । यदि एक बार सच बोल दिया तो छिपाने की कोई जरूरत नहीं । सच बोलने से तुम्हारा मन प्रसन्न होगा । बलवान होगा । इसलिए गृहस्थ जीवन मे जरा सा झूठ बोलने से मन कमजोर हो गया । मन मे भी बल चाहिए । सदाचार शब्द एक आम प्रचलित शब्द है जिसका अर्थ है सत् का आचार

आचार माने आचरण । सत् का व्यवहार । सत् का ध्यान रखकर आचरण करना सदाचार है । ऐसा मत सोचो कि कोई देखने वाला नहीं है । सत् को सदा पीछे रखो । एक गुरु जी थे । दो नौजवान लड़के उनके पास पहुंचे । गुरु जी हमको चेला बना लो । गुरु जी कहा अभी तुम घर मे ही रहो । अभी तुम से योग नही होगा । बुढ्ढे मे होश ज्यादा जोश कम । नौजवान मे जोश ज्यादा होश कम । छोकरे बोले गुरु जी हम अभी से कुछ योग करेंगे । तप करेंगे । बुढे होकर आएंगे तो क्या होगा ? हमको जरूर चेला बनाओ । गुरु जी ने कहा जो परीक्षा मे पास होगा वह चेला बनेगा । जो फेल हो जाएगा उसको घर लौट जाना पडेगा । बोले ठीक है । कागज की एक २ चिड़िया दोनों को दे दी । इस चिडिया को नोच नाच कर ले आओ । पर वहाँ नोचना जहाँ कोई देखने वाला न हो । एक चतुर था । उसने झट कुटिया के पीछे जाकर देखा कोई नहीं है । बस चिडिया को झट से नोच नाच कर ले आया । दूसरा विवेकी था वह जहाँ भी जाता है उसको लगता है, कोई देख रहा है । नदी के किनारे गया । जंगल से भी गया । दिन भर कुछ खाया पीया नहीं चिडिया को लिए २ घूमता रहा । सायंकाल को चिडिया लाकर गुरु जी के सामने रख दिया । गुरु जी हम जहाँ भी जाते थे वहाँ हमको ऐसा लगता था कि हमको कोई देख रहा है । हम तो इसको नोच ही नहीं पाये । आप ने कहा था जहाँ कोई देख न रहा हो वहाँ नोचना । तो हमको तो कोई भी ऐसी जगह नही मिली ।

गुरु जी बडे प्रसन्न हुए । उसको प्यार किया और बोले हाँ तू महात्मा बनने के लायक है । इसका मतलब यह है कि आँख से तो पशु पक्षी भी देख रहे है । मनुष्य भी यदि इतना ही समझे कि आँख से कुछ दीखता है कि नहीं तो क्या समझा उसने ? विवेकी का काम है कि वो सोचे कि हमारे पीछे वो अन्तर्यामी परमात्मा खडा है । हम उसकी (Guidence) मे चल रहे हैं । उपनिषद मे श्रुति बड़ी अच्छी बात करती है ।

एषा सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्‌ ... ...

यं सर्वाणि भूतानि ... ...अन्तरोयमयति

वो अन्तर्यामी परमात्मा कैसा है ? एषा सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्‌ सम्पूर्ण भूत

प्राणियों के अन्दर वो ही बैठा है। गीता मे भगवान कहते है।

'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ।।

हे अर्जुन वो ईश्वर सबके हृदय मे बैठा हुआ है। हृदय की खिड़की से बैठा झांक रहा है कि तू क्या कर रहा है। जैसे चतुर बाप अपने बेटे को देखता रहता है। बेटा जवान है तो देखता है कि बेटा कहाँ २ जाता है। कुछ गल्ती करता है तो क्षमा भी करता है। सीरियस नहीं मानता। समझाता भी है। ऐसे ही परमात्मा भी सम्पूर्ण भूतों के अन्दर बैठा है। अन्तर्यामी सर्वेभ्यः भूतेभ्यः अन्तरा। यं सर्वाणि भूतानि न वेद। यह सम्पूर्ण भूत उसको नही जानते। यह सम्पूर्ण भूत तो उसके शरीर बने हुए है। बडा दृष्टान्त तो अपना शरीर ही समझो। इस शरीर को खाना दाना भी देते हो, इससे प्यार भी करते हो। इस शरीर से पूछो, क्यों भाई तू हमको जानता है? यह कहेगा कि यह तो तुम हम को पहचानते हो तो हमकों खाने को मिल रहा है। जिस दिन तुम देखना बन्द कर दोगे, हमारा खाना दाना बन्द हो जाएगा। बेहोश आदमी को कोई खाने को देता है। बहुत होगा तो डाक्टर कोई दीवार तोड कर इन्जैक्शन के द्वारा कुछ दे देगा। हे भगवान मेरे से ऐसी आशा नहीं करना कि म आपको देखूं। बस आप ही हमको देखते रहो। आप अपना स्वरूप समझ कर हमको देखने हो कि मेरे को मिथ्या समझ कर देखते हो? देखने के दो रास्ते हैं। एक तो शरीर को यह समझना कि यही मैं और एक यह, कि यह शरीर मेरी धर्मशाला है। धर्मशाला माने क्या? धर्म माने आत्मा। शाला किसको कहते? घर वाली का जो भाई होता है। शालते, शोभते इतिशाला। जामाता ससुराल गया दो साले हैं दो सालियाँ है। बीच मे जैसे मटर गश्ती करेगा। वह उधर से छेडेगा वह उधर से। उसको भी अच्छा लगेगा। जहां कोई साला नहीं कोई साली नहीं एक सासु है और एक बुढ्ढा है। गया सासु से खाट बिछा दी, बैठ जा। मक्खियाँ उडाते रहो बैठे २। कोई है ही नहीं जिससे बात करे। साला साली शोभा होते है। कोई होता तो वह ठहर जाता दो दिन नहीं तो दूसरे दिन लौट आएगा।

इसी तरह यह शरीर तुम्हारी शाला है। मनुष्य शरीर मे जीव आएगा

तो इसका ऐश्वर्य बढेगा । यश बढेगा । कीर्त्ति बढेगी । इसलिए इसको उपदेश करना पडेगा । इसलिए ब्रह्मचर्य का वर्णन कर रही है श्रुति 'ब्रह्मलोकं ब्रह्मचर्येणानु विन्दते' जब मुमुक्षु ब्रह्मचर्य धारण करता है तो उसके द्वारा वा इस ब्रह्मलोक की प्राप्त करता है । संयम से जीवन का उपयोग भी करो । जीवन का संयम भी करो । इसलिए कहा 'धारस्य परमसारं शुक्रं तद्‌रक्ष आदरात्' शुक्रं जैसे हम भोजन करते हैं, दूध में सार जैसे मक्खन होता है इसमें gat भी नहीं । क्रीम निकला हुआ दूध है । सफेद पानी पीं लो । बडे २ शहरों मे आजकल यही होता है । जैसे इस दूध का सार मक्खन है भोजन का सार है शुक्र । 'शुक्रं तद् रक्ष आदरात्' मनुष्य इसकी रक्षा करे, आदर करे । तो तुम्हारे में बल रहेगा । रोग दूर से तुम्हारे को देखेंगे । शरीर मे बल होता है तो रोग भी डरते है । कमजोर जो होगा वह हमेशा बलवान से दूर रहेगा । मुमुक्षु बडी श्रद्धा से इन इन्द्रियों का संयम करे । इन्द्रिय जय करे । इसके द्वारा इसके अन्दर शक्ति बढेगी । मनोबल बढेगा । शरीर बल बढेगा । इस तरह सत्य को पकडो ।

'ब्रह्मचर्येणानुविन्दति तेषामेवैष ब्रह्मलोक स्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति' ऐसे जो लोक हैं, इन्द्रिय जय करने वाले उन्हीं का यह ब्रह्मलोक है जो अपनी इन्द्रियों को संयम मे रखें । एक जगह महर्षि कहते है मनुष्य प्राणी को कितना सावधान होने की जरुरत है ।

कुरङ्ग मातङ्ग पतङ्ग भृङ्ग मीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यःसेवते पञ्चभिरेवपञ्च कुरङ्ग नाम है हिरण का । पुराने जमाने मे हिरण को पकड़ने के लिए जंगल मे जाते थे । मधुर सुन्दर संगीत शुरु कर देते थे । हिरण संगीत का बडा रसिक होता है । संगीत सुनने के लिए जंगल से आकार कान खड़ा कर के सुनने लगेंगे । शिकारी गले मे रस्सी डालते जा रहे हैं । बांध कर ले जाएंगे । शब्द के स्वाद में मोहित होकर पकड़ा गया । शब्दरूपी विषय ने इसको पकड़ लिया ।

मातङ्ग हाथी को कहते है । यहाँ नैपाल मे ठोरी का जंगल बड़ा भयंकर जंगल है । एक बार हम भी फंस गये थे उसमे । पहले यहाँ आने के लिए राहदानी होती थी । गुरु जी ने राहदानी भेजी नहीं । एक महात्मा मिल गये ।

कहा चलो जंगल के रास्ते निकल चलेंगे । चल पड़े । ठोरी के जंगल से तीन दिन का चक्कर । रात मे बीच २ में पुलिस की चौकी पार करते थे । जो मिल गया खा लिया । यह भयंकर जंगल था । धींरे २ साफ कर दिया है । अब फिर ध्यान आया है कि जंगल कीं रक्षा करे । पहले इस जंगल मे लोग हाथी पकडा करते थे । हाथी पकडने के लिए बडा गढ्डा किया उसके ऊपर मंचान बना दिया । उसके ऊपर बडी सुन्दर हथिनी बना कर खडी कर दी । हाथी ने दूर से देखा । कहा यह तो हमारी friend है । सोचा ही नहीं कि friend कितनी खतरनाक जगह पर खडी है । जैसे ही चला धडाम से गडे मे गिर गया । एक हफ्ता तो हाथी से बात हीं नहीं करते । भूख प्यासा पडा रहता है बेचारा । फिर धीरे २ उसके पास जाते हैं । पानी पीने को देंगे । कुछ खाने को देंगे । बस वह समझता है कि यही हमारे हैं । हाथी बडा बुद्धिमान जानवर होता है । धीरे २ खडे हो कर बाहर निकालते है । हाथी स्पर्श सुख के पीछे गया । लोगों ने पकड लिया ।

पतङ्ग जो है इसको रूप मे बडा मोह है । दीपक की लौ का रूप इस को मोहित कर देता है । उसमे कूद पडा और पंख जल गये । यह रूप के पीछे गया । और भृङ्ग जो है भवरा यह गन्ध के पीछे सुन्दर कोमल फूल खिला हुआ है सांयकाल को भंवरा उडा और सुन्दर कमल के फूल के ऊपर बैठ गया । कमल की प्रकृति है कि सूर्य के प्रकाश मे खिला रहता है । सूर्य जब अस्ताचल की ओर गया इसने दरवाजे बन्द कर लिए । भंवरा अन्दर ही बन्द हो गया Guest तो अन्दर ही रह गया । वह चाहे तो कमल के पंख काट कर बाहर आ जाता । उड जाता । पर कहता है :

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं भास्वान् उदेष्यति हसिष्यति पङ्कजश्रीः इत्थं विचिन्तयति कोशगते द्विरेके हा हन्त हन्त नलिनी गज उज्जहार ।।

कवि इस भंवरे की कल्पना का व्याख्यान करता है । भंवरा क्या कहता है रात चली जाएगी, सुप्रभात होगा सूर्योदय होगा, कमल खिलेगा । हम उड़ जाएंगे । इधर से एक हाथी निकला । उसी रास्ते मे यह कमल भी पडता था हाथी ने इस को भी लपेट मे ले लिया । हाथी का मुँह भी गुफा ही है । यह कमलिनी जो है

इसको गज ने खा लिया। कवि कहता कहता है कितना दुःख है। भवरा सोचता ही रह गया कि हम उड़ जाएँगे।

इसका एक अर्थ यह भी समझ लो कि यह जीवात्मा तुम्हारी यह भंवरा है, यह शरीर सुन्दर कमल है। इसके अन्दर बैठ कर कहता है अभी क्या है? अभी तो हम बच्चे है। खेलने कूदने का समय है। अभी तो हम जवान है। अभी तो हमारे खाने पीने के दिन है। बुढे होंगे, खोपड़ी हिलने लगेगी। तो भगवान का भजन कर लेंगे। उधर से मृत्यु देवता ने मारा पंजा। हाथी की तरह खींच लिया। शीघ्र शुभं कुर्यात्' शुभ काम मे देरी नहीं करना चाहिए। हां कभी बुरा ही संकल्प आवे तो बोलो अभी नहीं बाद मे करेंगे। कभी २ इच्छा होती है कि आज थोड़ा सा झगडा ही करलें तत्काल करोगे तो झगड़ा बढ़ जाएगा। दीवारें भी टकराने लगेंगे। कल्पना करो कि आज नहीं करेंगे। तो मन ठीक हो जाएगा। नहीं तो उसी समय घर में अशान्ति हो जाएगी। पत्नी का खाना भी खराव, अपना भी। बच्चों की तो हालत ही खराव हो जाती है। इसलिए कभी मन मे झगडा करने का विचार आवे तो कल पर टाल दो। अच्छे काम का संकल्प आवे तो शीघ्रातिशीघ्र कर लो। बुरा संकल्प आवे तो बोलो आज नहीं कल करेंगे। इस तरह मुमुक्षु अपने स्वरूप की रक्षा करे। अपने मन को शान्त बना कर रखे।

मीन कहते हैं मछली को। यह रस की बडी शौकीन होयीं है। मछली पकडनेवाले कांटे मे कोइ खाने को चीज लटका देते हैं। मछली अपना अपना घाघरा फटकारती हुई आती है। जैसे ही मुंह मारा कि कांटा गढ गया। लगी तडपने। पर तडपने भी कौन देता है। झट से खींचकर बाहर निकाल दिया। तो कवि कहता है कि बेटी यह जीव एक २ विषय के पीछे गये। "एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पञ्चभिरेव पञ्च" मनुष्य नाम का एक ऐसा प्राणी है जो पाँचो विषयों के पीछे भागता है। जब एक एक विषय का स्वाद लेनेबालों कीं यह गति है तो जो पाँच विषयों का स्वाद ले रहे हैं उनका क्या है। एक एक विषय का स्वाद लेने वाले जीव सब चले गये। कोइ अपनी आत्मा की रक्षा नहीं कर सका।

जो प्रमादी नहीं होगा वो विषयों का सेवन करते हुए भी योग मे

रहेगा । भोग तो तब होगा जब प्रमाद होगा । नहीं तो तुम योग मे हो । तुम्हारे अन्दर विचार ठाक है, ध्यान ठीक है तो जीवन का भोग दवाई की तरह लोगे। तो यह विषय तुम्हारे जीवन की हानी नहीं करेंगे । और दवाई नहीं समझोगे, आहार समझोगे, भोजन समझोगे तो यही विषय मृत्यु रूप है । इसलिए मुमुक्षु सयम से चले । संयम ही बडा भारी तप है । विवेकशील संयम से चलेगा तो उसका ब्रह्मचर्य बन जाएगा । और ब्रह्मचर्य के द्वारा यहाँ श्रुति कहती है 'तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति' यह आत्म दर्शन उन्हो को होगा जो इस प्रकार शक्ति का संचय करेंगे । अपने जीवन को तपोमय और पवित्र बनाएंगे । सम्पूर्ण लोकों मे जाने के लिए 'कामचारो भवति ।' काम चार शब्द का अर्थ होता है कि जिस लोक मे जाने की इच्छा करेंगे वही चले जाएगें । याद रखो जो इस आत्मा मे मन लगाकर बैठा है वह किसकी इच्छा करेगा ? किसी भोग लोक मे जाने की तो कल्पना होगी ही नहीं । वह तो जो भूखा है वह भोजन की इच्छा करता है पर जिसको खट्टा डकार आ रहा है वह क्या खाने की इच्छा करेगा । वह अपने आत्मभाव मे चला जाएगा । ब्रह्मलोक मे चला जाएगा । उपाधि से मुक्त हो जाएंगा । उपाधि से जब मुक्त हो गया तो बताओ यह ब्रह्म किस लोक मे नहीं है ? वह सर्वात्मा हो गया है ।

यो मामेवमसं मूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद् भजती मां सर्व भावेन भारत ।।

'असंमूढ' जो इन विषयों के मोह मे नहीं फंसता । जानाति पुरुषोत्तमम्' जो मेरे को पुरुषोत्तम रूप से जानता है । ब्रह्मभाव को जो जानता है जब वो सर्वरूप मे है । वह मेरा भजन करता है तो जिस मूर्ति को भी नमस्कार करोगे वो उसीकी, उसी भगवान की मूर्ति है । तुमको कौन सी मूर्ति चाहिए ? झगडा भी भगवान से, प्यार भी भगवान से, भक्ति भी भगवान की । 'सर्वभावेन माम् भजति । ऐसा ज्ञानी ही मुझको बहुत प्यारा है । ज्ञानी मेरी आत्मा ही है । इस सत्य को मुमुक्षु स्वीकार करे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१३-५-८८

प्रवचन सं०-३५

"ॐ अथ यद्यज्ञ इत्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येव यो ज्ञाता तं विन्दतेऽथ यदिष्टमित्याचक्षते तद्ब्रह्मचर्येण ह्येवेष्ट्वात्मानमनुविन्दते। ॐ अथ यत्संत्रायण-मित्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येव सत आत्मनस्त्राणं विन्दतेऽथ यन्मौनमित्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येवात्मानमनुविद्य मनुते ।।"

(छान्दो. ८-५-१।८-५-२)

विचार आया। कल इस बात को कहा था, जीवन मे जो संयम है ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचर्य शब्द का एक अर्थ है, ब्रह्म वेद और ब्रह्म आत्मा। वेद को ब्रह्म इसलिए कहा कि वेद ब्रह्म का बोधक है। ब्रह्म माने आत्मा का ज्ञान प्राप्त करना है तो बिना वेद के इस आत्मा का ज्ञान होगा नहीं। इसका अर्थ यह है कि वेद एक ऐसी विद्या है, जो किसी मनुष्य के दिमाग से नहीं आई। यह किसी मनुष्य के दिमाग की विद्या नहीं है। यह ईश्वरीय विद्या है। मनुष्य के अन्दर स्वभाव से चार दोष रहते है। इसलिए मनुष्य के अन्दर जो विद्या आती है इस विद्या मे चार दोष रहते हैं। भ्रम, प्रमाद, विप्रलिप्सा और कर्णपातक। कभी तो भ्रम है। भ्रम वो है कि जो है, उसको समझा नहीं और जो नहीं है उसको सच समझ लिया। अपने अनुभव के लिए जैसे अपने शरीर को ही देखो। यहाँ जो है उसको किसी ने समझा नहीं इस शरीरको ही आत्मा समझ लिया। इसीको किसी का बेटा बेटी, पति पत्नी मान कर चल रहे है। 'वो' जब इसको छोड देगा तो इसको कौन पकडेगा ?

सामान्य कहावत है 'जा पर कृपा राम की होई ता पर कृपा करे सब कोई ।। जिसके हृदय से यह वाक्य निकला है, उसके लिए कहना पडेगा बडा मजा हुआ हृदय था ! राम माने जो सब मे रमण कर रहा है । सबके हृदय मे रम रहा है वह राम यदि उसने अपनी कृपा को खींच लिया तो कौन तुम पर कृपा करेगा? जो आत्मा है उसका नाम है ब्रह्म । इसको जानने का जो व्रत है उसका नाम ब्रह्मचर्य है । इसका अर्थ इन्द्रिय संयम है । अब यह संयम केवल किसी एक इन्द्रिय का नहीं, सब इन्द्रियों का है । सब इन्द्रियों को संयम मे रखना, फिर उनका प्रयोग करना । इस दुनियाँ मे रहते हैं तो प्रयोग तो करना ही पडेगा । वाणी से बोलना पडेगा आंख से देखना पडेगा हाथ से कुछ करना भी पडेगा । तो वह सब संयम मे हों । महर्षि कहते है :-

ब्रह्मचर्ये स्थितो धर्मः ब्रह्मचर्ये स्थितं तपः ।
तस्माद् ब्रह्मचर्यं कुर्याद् ब्रह्मचर्यं हि साधनम्ः ।

ब्रह्मचर्य ही धर्म है, तप है और धर्म का साधन भी ब्रह्मचर्य ही है । इसलिए कहा 'तस्मात् रक्षणीयं प्रयत्नतः मुमुक्षु इन्द्रिय संयम के लिए मन की रक्षा करे । शरीर के बल की रक्षा भी करो और मन की भी प्रयत्न से रक्षा करो । व्यर्थ की चिन्ता मुमुक्षु मन में नही आने दे ।

अभी हम कह रहे थे कि मनुष्य के अन्दर चार दोष है । यह जो वेद विद्या है यह बडी निर्दोष, महत्त्वपूर्ण विद्या है । भ्रम का उदाहरण तो अपना शरीर ही है जो है तो हड्डी मांस का बैंग, पर दिखाता आत्मा जैसा है । जो आत्मा है उधर ध्यान ही नही और इधर ही ध्यान है इसी से दुनियाँ चल रही है । दूसरा दोष है प्रमाद । प्रमाद उसको कहते है वक्ता बोल रहा है और सोचता है कि यह सुनने वाले कैसे समझेंगे यह गूढ विचार ? जिनको समझा रहा है उनको बुद्धू समझता है, अपने को बुद्धिमान मानता है । फिर प्रमाद नहीं होगा ? दूसरो को बुद्धू समझ रहा है अपने को बुद्धिमान । यह नहीं जानता कि जो इस रूप मे बोल रहा है वही तो उस रूप मे सुन रहा है । ऐसा आत्मभाव हो जाएगा तो प्रमाद नही रहेगा ।

विप्रलिप्सा, विप्र माने दूर, लिप्सा माने बोभ । दूरे लोभः लोभ दूर

रखा है। अभी तो लोभ नहीं है पर मन मे लोभ करता है। सोचता है आगे कुछ मिलेगा। यह दोष तो श्रोता में भी होता है। वक्ता बोलेगा तो वाणी से। वाणी स्पष्ट नहीं होगी तो जो बोलेगा वो समझ में नहीं आएगा श्रोता मे भी यह दोष होता है।

कर्णपातव; जो सुनाना चाहिए वो नहीं सुना। जो नहीं सुनना चाहिए वो सुन लिया। उलटा सुनेगा तो अर्थ भी उलटा ही लगेगा। वेद वाणी ऐसी विद्या है कि उसमे यह दोष नहीं है। मनुष्यों की जो विद्या है कि उसमे यह दोष नहीं हैं। मनुष्यों की जा विद्या है, जो मनुष्य लिखते हैं या बोलते होंगें, बहुत कम निर्दोष लेखक होंगे। निर्दोष लेखक या वक्ता वही होगा जिसको आत्मा का बोध होगा। वह जो कुछ बोलेगा, जीवों के भले के लिए, समष्टि जीवों के भले के लिए बोलेगा। अपने बच्चों का भला तो tiger भी करता है। इसलिए वेद विद्या ईश्वरीय ज्ञान है। इसकी किसी का पक्षपात नहीं। मंत्र कहता है

ब्रह्मचर्ये स्थितो धर्मः ब्रह्मचर्ये स्थितंतपः

तस्माद् ब्रह्मचर्यं कुर्याद् ब्रह्मचर्यं हि साधनम् ।।

ब्रह्मचर्य से परे उत्तम धर्म साधन कोई नहीं है। इसलिए इसको श्रुति मोक्ष का साधन कह रही है। मुमुक्षु इस ब्रह्मचर्य व्रत को पकडे। आचार्य कहते है कि जिस आत्मा को पहले सेतु कह कर आए हैं सेतु माने Bridge पुल उस पर चढ पार चले जाओ। नदी कितनी भी गहरी हो डरने को जरूरत नही। इसी तरह माया का समुद्र यह संसार है जिसकी जन्म मरण लहरें है। जन्म की लहर आई, बच्चा बाहर आ गया। ढोलकी बजने लगी। मृत्यु की लहर आ गई, दब गया। वस्तु दीख गई तो जन्म हो गया। नहीं दीखी, प्राण बन्द हो गये। कहाँ चला गया? कुछ पता नहीं। इसलिए इस माया समुद्र से पार होने के लिए आत्मा को सेतु कहा। इस आत्मा पकड लो तो पार हो जाओगे।

इस बात को समझा कर आए है। अब इस आत्मा की प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य को साधन बता रहे है। शरीर में बल नही होगा तो न तो बैठ सकोगे न ध्यान ही कर सकोगे। बुढापे से इसीलिए लोग डरते हैं। इसमे शरीर का बल नही रहता। जैसे अब आम का मौसम हैं। एक आम लो, जरा सा दबाओ,

नरम हो गया । चूस लो । चूसने के बाद क्या बचा ? बचा क्या ? गुठली और छिलका यह बुढापा ऐसा ही है । सब बेटा बेटी रस तो चूस गये मां बाप का । अब गुठली छिलाका रह गया । अब कहते है कि मम्मी कोने में बैठी रहे । डैडी क्या है dead का डैडी बन गया यही संसार है ।

श्रुति सावधान करती है 'अथ यचज्ञ इत्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव' इसकी व्याख्या करते हैं । यज्ञ शब्द को पकडते है जिसको यज्ञ कहते हैं, यह यज्ञ भी क्या है ? यह ब्रह्मचर्य ही यज्ञ है । अपने वेदों में यह यज्ञादि कर्म अति प्राचीन काल से प्रसिद्ध हैं । आगे चल कर लोगों ने यज्ञ का अर्थ समझा कि अग्नि मे स्वधा की तिल की जौ की सब मिला कर आहुति देना हीं यज्ञ है । इन्द्राय स्वाहा प्राणाय स्वाहा । तुम्हारा जो जीवन है, यह अधिभूत जीवन, अधिदैव जीवन और आध्यात्मिक जीवन । अधिभूत जीवन क्या है ? कहते हैं अधिभूत 'भूतं अधिकृत्य प्रवृत्तम् अधिभूतं । यह तुम्हारा शरीर पृथ्वी के बिना नहीं रह सकेगा । पानी के बिना नहीं रह सकेगा । अन्न के बिना नहीं रह सकेगा । शरीर तो पंच-भूतों के आधीन है । पांच भूतों अधीन जो तुम्हारा शरीर है तो तुम्हारी आत्मा इन पांच भूतों से मिली हुई है । इसलिए इन पांच भूतों की भी तुम रक्षा करो । क्योंकि तुम को पानी भी चाहिए, अग्नि भी चाहिए । पृथ्वी के अगल बगल जो चीजें हैं वो भी ठीक रहनी चाहिए । यह पांच भूत तुम्हारी रक्षा कर रहे है । पृथ्वी के अगल बगल जो चीजें है वो भीं ठीक रहनी चाहिए । यह पांच भूत तुम्हारी रक्षा कर रहे है । पृथ्वी को ठीक रखना पडेगा । नहीं तो वायुमंडल भी साफ नही रहेगा । आज कल लोग सोच रहे हैं, यह जो माया भगवती के बडे उत्पाती बच्चे हैं वैज्ञानिक । बडी जहरली गैसे उत्पन्न कर रहे हैं । विषाक्त वायु मंडल हो जाएगा तो सांस लेनी भी मुश्किल हो जाएगी । बुद्धिमान विचार कर रहे हैं कि इस प्रकार वायु मंडल को गन्दा करने का हमको कोई अधिकार नहीं। अच्छा बनाने का अधिकार तो है पर बिगाड़ने का अधिकार नहीं है । इसलिए अधिभूत जगत को ठीक रखो । अधिभूत जगत जब ठीक रसेगा तो तुम्हारा यह शरीर स्वस्थ रहेगा । अध्यात्म जगत को भी ठीक रखो । अध्यात्म जगत माने जिस आत्मा के बिना यह भूत कुछ नहीं । आत्मा के बिना यह शरीर क्या है ?

यह पृथ्वी, जल तेज, वायु, आकाश यह कुछ भी नहीं है। आत्मा है तो शरीर भी है। आत्मा है तो पृथ्वी भी है। जल भी है, वायु भी है। इस आध्यात्मिक जीवन में विस्मृति नहीं होनी चाहिए। उसके लिए सत्सङ्ग, शास्त्र, बुद्धिमान आचार्य इनका जीवन में उपयोग करो। सत्सङ्ग को बहुत से लोग कहते है It is only the way to waste the time. पर ऐसा नहीं है, यह तो तुम्हारे जीवनको अच्छा बनाने के लिए है। इस माया की दुनियाँ में जन्म हुआ है, बच्चे से कुमार हुए। कुमार से जवान हुए। जवान से बुढे। माऊंट एवरेश्ट की चोटी पर चढे। किन्तु चोटी पर जाने के बाद लोग किधर जाएंगे? ऊपर तो चढने की और जगह है नहीं अब कहाँ जाएँगे। अब birthday नीचे उतर कर ही मनाना पडेगा। बुढापे में आ गये लौटकर। अब जितने बुढ्ढा बुढ्ढी होते हैं, बच्चों की अगल बगल में बैठते है। क्यों भला? यह बुढापा क्या है? इनको बच्चे बडे प्यारे लगते हैं। क्योंकि वो जानते हैं कि अब यहीं आना है। old age is the foundation of childhood. जीवन को इस प्रकार समझो। अध्यात्म जीवन को भी समझो। जैसे २ अध्यात्म जीवन को पकडोगे तुम्हारे मन मे शान्ति आएगी। क्या सारी इच्छाएँ पूरी करके भरा है कोई आज तक? एक poison है। बो कौन सा है? आज तक उसके स्वाद का पता ही नहीं लगा पाया कोई, क्योंकि जीभ पर रखते ही मर जाता है। कोई लिख ही नहीं पाया कि इसका स्वाद कैसा है।

सारी इच्छाएँ किसकी पूरी हुई है? यह इच्छाएँ अधूरी ही रह जाती हैं। कहते हैं कि जो सत्सङ्गी है उसी की इच्छाएँ पूरी हो पाती हैं क्योंकि ज्ञान वान अपनी इच्छाओं को खत्म कर देता है। नहीं तो यह इच्छाएँ बीच में ही रह जाती हैं। यय अध्यात्म जगत। और अधिदैव जगत। यूं देखो मच्छ के शरीर मे जाकर देखो लामखूटा। उसकी आंख से अपने शरीर को देखो। तुम्हारी आयु मे यह लामखूटा तो करोडों बार जन्म लेगा और मरेगा। उसके सामने तुम अमर दीखोगे। जैसे हम लोगों को देवताओं का जीवन अमर दीखता है। देवताओं की आयु में हमारा शरीर कई बार छूटेगा। इसलिए हमारे लिए देवता अमर है। अपने से ऊँची आत्माओं से सम्बन्ध जोड़ना अधिदैव है। यह देवताओं

का जो पूजन अर्चन करते हैं यह इसलिए कि हमारा ऊपर के जगत से सम्बन्ध बना रहे । यह सम्बन्ध बना रहेगा तो हमारा जीवन ऊपर उठेगा । हमारा इस जगत से सम्बन्ध बना रहना चाहिए । हमारा मन शान्त रहेगा तो विचार अच्छा रहेगा । विचार अच्छा होगा तो वाणी से अच्छा बोलेंगे । उसके कर्म भी अच्छे होंगें । उसके जो कर्म होंगे वो 'सर्बभूतहितेरता: होंगे । समष्टि के भले के लिए होंगे ।

समष्टि कर्म ही यज्ञ है । व्यष्टि जो कर्म है वो केवल भोक्ता का है । समष्टि जीवन में अधिदैव जगत से भी सम्बन्ध है, अध्यात्म जगत से भी सम्बन्ध है । और अधिभूतों का भी सम्बन्ध है । उनका भी भोजन उसी मे से निकल कर आएगा । यह यज्ञ हो जाएगा । यह एक गूढ रहस्य है । गीता में भगवान ने कहा है :-

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञ: योगयज्ञास्तथापरे ।

स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतय: संशितव्रता: ।।

भगवान विभाग करते हैं । केवल आहुति देने का नाम यज्ञ नहीं । द्रव्ययज्ञ । भगवान ने दिया है तो तीर्थ में जाओ । अच्छी आत्माओं के लिए अपने द्रव्य का उपयोग करो । उसको कहेंगे द्रव्य यज्ञ । तपो यज्ञा: तप । इन्द्रिय संयम: । संयमी जीवन ही तप है । अपने जीवन मे तप भी करो । तुम्हारे शरीर में शक्ति रहेगी तुम्हारा जीवन संयमित होगा तो दूर तक उसका प्रभाव भी पडेगा एक चोर अगर कहीं रहता है तो उस गांव मे उस चोर का प्रभाव पड़ता है कि नहीं तो एक बुरे कर्म का प्रभाव जब इतनी दूर तक पड़ता है तो तुम्हारे जीवन के सुन्दर गुणों का प्रभाव नहीं पडेगा ? तुम्हारे गुणों का प्रभाव भी पडेगा । उस आत्मा के अगल बगल रहने वाले लोग भी धन्य हैं । उसका तपोमय जीवन है । इसलिए भगवान कहते हैं द्रव्ययज्ञ स्तपोयज्ञा: योगयज्ञास्तथापरे । योगयज्ञ: । जैसे लुहार की धौंकनी होती है ऐसा तुम्हारा प्राण नहीं है । यह बडा कीमती है करोड़पति है, प्राण बाहर गया और लौटा ही नहीं । बताओ करोडों की सम्पत्ति किस काम की ?

एक बड़ा सेठ था । आजकल चीजें तो प्राय: सभी मंहगी हैं किन्तु

heart trauble, blood pressure आदि रोग बड़े सस्ते हैं। बुढे को athack हो गया। हल्ला हो गया पुराने जमाने का बाप था। पांच सात बेटे थे। झट से सब एकट्ठे हो गये। बडे २ डाक्टरों को बुलाया। हाथ जोडे कि जो भी खर्चा होगा हम कहेगें एक बार हमारे पिता जी को होश में ले आओ। डाक्टरों ने बढिया इन्जैक्शन दिया। बुढे ने आंख खोली। डाक्टर सोच रहे हैं कि बुढे के भले के लिए कुछ बात करेंगे। मुँह में गंगाजल देंगे। राम २ करवाएँगे। पर ज्यों ही बुढे ने आंख खोली, बडा लड़का चिल्लाया पिता जी कौन से बैंक मे कितना एकाऊन्ट हैं। कहाँ २ क्या २ रखा है? यह सम्बन्धी इस लिए होते हैं? धर्म से बांधना, ज्ञान से बांधना यह बन्धु का काम है। शोक से, मोह से बांधने के लिए बन्धु नहीं होते। पर यह संसार ऐसा ही है। यह ऐंसा ही लगता है। इस मे कोई गड़बड़ नहीं। इसलिए यज्ञों का विधान किया। इन यज्ञों के द्वारा तुम्हारे मन के जो लोभ मोहादि मिथ्या दोष हैं वह कम हो जाएँगे।

उपनिषद मे एक कथा है। बृहदारण्यक देवता असुर और मनुष्य इन तीनों ने सोचा कि भगवान प्रजापति से कुछ उपदेश लेना चाहिए। प्रजापति माने ब्रह्मा। तीनों चल दिए ज्ञान लेने के लिए ब्रह्मा के पास। जिज्ञासु शिष्य की तरह बैठ गये। 'कथम् आगत:' भगवान प्रजापति ने देखा और पूछा। तुमलोग क्यों आए हो? देवताओं ने पहले हाथ जोडकर कहा, उपदेशंनोदेहि' हमको उपदेश दो। जब ऐसी प्रार्थना की तो भगवान प्रजापति बोले 'द' एतदक्षरम् उवाच।

बस 'द' शब्द ही बोला। और कुछ नहीं कहा। देवताओं से पूछा कि तुमलोग समझ गए। देवताओं ने कहा हाँ भगवन आप ने कहा है कि आपलोग दमन करो। देवताओं मे भोगाशक्ति अधिक होती है। एक बात समझो, अपने मनुष्य जीवन मे समझो जो धनी मानी लोग है, उन्हे भोगों से ही छुट्टी नहीं। देवताओं को भोग मे बडा मोह होता है। प्रजापति ने कहा ठीक समझे। इसके बाद मे असुर गये। असुरों ने भी कहा, भगवन उपदेश करो। असुरों के लिए भी 'द' अक्षर का उच्चारण किया। और पूछा कि समझ गये। कहा हाँ समझ गये। आप ने 'द' से कहा दया करो। जो असुर है उसके हृदय मे दया नहीं होती।

आदमीको मार देनातो आजकल देखो मच्छर की तरह है।प्राणी को मारने का अधिकार किसी को भी नहीं । जन्म देने का अधिकार है रक्षा करने का अधिकार है । पालन पोषण का अधिकार है किन्तु किसी प्राणी को अधिकार नहीं है । क्रूर प्रकृति का व्यक्ति यह नहीं जानता । असुर जो है वह किसी के प्राणों की परवाह नहीं करता । इसलिए असुरों ने समझता है कि हमसे दया करने के लिए कहा है । भगवान प्रजापति ने कहा ठीक समझे ।

इसके बाद मनुष्य गये । हमको उपदेश करो । उनको भी 'द' शब्द का ही उच्चारण किया । पूछा, क्या तुमलोग समझ गये । बोले हाँ 'द' से दान कहा माने तुम दान करो । मनुष्य को भगवान प्रजापति स्वभाव से लोभी समझते है । देव भोगी, असुर क्रूर और मनुष्य लोभी । लोभ को त्याग करने को तैंयार नहीं । अब देखो एक 'द' अक्षर और समझने वाले तीन तीनों ने अपने २ ढंग से उसका अर्थ पकडा । क्यों ? जिसके अन्दर जो विकार चित्त मे था वह सामने आकर खड़ा हो गया । देवताओं के सामने भोगाशक्ति । असुरों के सामने क्रूरता है इसलिए उन्होंने 'द' का अर्थ समझा दया करो । क्षमा करो । असुर असुर नहीं रहेगा । दयाशील हो गया । दया देवगुण है । दयाशील हो जाएगा । मनुष्य 'द' से दान समझा । त्याग आ जाएगा । त्याग के द्वारा इसके अन्दर तप आ जाएगा। क्षमा आ जाएगी वैराग्य आ जाएगा । वैराग्य भी तो चाहिए । क्या यह सारा सारा संसार हमारे लिए बना है ? सीट reserve कराते ही जैसे २ स्टेशन पास आता है तो सामान लपेटते है ।

वह first class की सीट है । reserve की हुई स्टेशन आ रहा है तो क्या करोगे ? अपने मन को समेटो मुमुक्षु अपने मन को संसार मे फैलावे नहीं । यह सत्सङ्ग शास्त्र और बुद्धिमान आचार्य, आचार्य का लक्षण क्या है कि यह जो संसार मे फैला हुआ मन है उसको समेटो । नही तो यह मन फैला ही रह जायगा । शरीर से चले गये पर मन से गये नहीं । मन से गये नहीं तो यहीं दीवारों मे ही घूमोगे । अब मालुम नहीं कि किस शकल मे घुमोगे । इसलिए अपने मन को समेटो । विवेकशील अपने मन को समेटेगा तो धीरे २ ऊपर उठेगा इसलिए कह रहे है यह यज्ञ है । यह ब्रह्मचर्य ही यज्ञ है । परम पुरुषार्थ साधन है ।

परम जो पुरुषाथ है वो मोक्ष है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष यह चार पुरुषार्थ माने गये है । इस लोक मे परम पुरुषार्थ क्या है । कहते है मोक्ष ही परम पुरुषार्थ है । मनुष्य सत्य को पकडें । जीवन मे सत्य को पकड कर चले । फिर अर्थ को पकडे । अर्थ माने धन और अन्य विषय । अर्थ भी चाहिए जीवन के लिए आवश्यक है । काम का अर्थ है पारिवारिक जीवन का सुख । बेटा, बेटी, माँ बाप पति पत्नी, यह सब मीठे बोले । प्रियभाषी जीव हों । सब मीठा बोलने वाले होंगे तभी पारिवारिक जीवन का सुख मिलेगा । नहीं तो घर की दीवारे भी झगडा करेगी । पत्नी पति को बडे प्यार से बोले । क्यों पति के हृदय मे उसके लिए जो प्यार है उसे मीठी वाणी से खींचती है । डाक्टर की सूई खून को खींचती है न, ऐसे ही पत्नी मीठी वाणी से उस प्यार को खींचती है । वाणी तीक्ष्ण होगी तो वह मुँह फेर लेगा । कुछ बोलेगा नहीं । इसका अर्थ यह नहीं कि पति क्रोध मे ही बोले । वो भी मीठा बोले । ठीक है शरीर से तो किसी के बेटा, बेटो, पति पत्नी बन गये पर आत्मा का क्या होगा ! आत्मा को मोक्ष मे भेजो । यह चार पुरुषार्थ है । इनमे मोक्ष ही परम पुरुषार्थ है । परम माने जिसके अन्दर कोई पुरुषार्थ नहीं है । इसलिए मोक्ष ही परम पुरुषार्थ है । और इसका साधन ब्रह्मचर्य है । कल और व्याख्या करने वाले है । अब सीधे होकर बैठो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१४-५-८८

प्रवचन सं० ३६

"ॐ अथ यद्नाशकायनमित्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तदेष ह्यात्मा न नश्यति यं ब्रह्मचर्येणानुविन्दतेऽ थ यदरण्यायनमित्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तदश्च ह वै ण्यश्चार्णवौ ब्रह्मलोके तृतीयस्यमितो दिवि तदैरम्मदीयं सरस्तदश्वत्थः सोमसवनस्तदपराजिता पूर्ब्रह्मणः प्रभु- विमितं हिरण्मयम् ।।"

(छान्दो. ८-५-३)

विचार चलता है। कहते हैं यह जो यज्ञ है,यज्ञायाचरते ब्रह्मचर्यम्' शास्त्र मे यज्ञ का विभाग क्रिया यज्ञ कितने प्रकार के है। भगवान गीता मे कहते है,-

द्रव्य यज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे

कल इसकी व्याख्या की थी। प्रधानरूप से पांच प्रकार के यज्ञ है। जिसमे दो यज्ञ तो बडे महत्त्वपूर्ण है। स्वाध्याय यज्ञ और ज्ञान यज्ञ। स्वाध्याय का अर्थ है 'स्वस्याध्याय' अपना अध्ययनकरना। अपना अध्याय क्या? पितृ परम्परा प्राप्तजो वेद शाखा है, वह स्वाध्याय है। यह जो शाखा विज्ञान हमारे यहाँ वैदिक परस्परा मे है स्वाध्ययोऽध्येतव्यः पितृ परम्परा प्राप्त वेद शाखा का अध्ययन करो। स्वा- ध्याय करो। इसका अर्थ यह नहीं कि केवल उसी पितृशाखा को ही पढो। सकल वेद राशि का अध्ययन करो। क्यों? तुम्हारे जीवन मे पांच कोश प्रधान है। अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञान मय कोश, और आनन्दमय कोश। अन्नमय कोश तो यह स्थूल शरीर है। भोजन खाते रहो यह शरीर अपने रास्ते से घटता वढता रहेगा। दूसरा है प्राणमय कोश, कर्मेन्द्रिय और प्राण, यह प्राणमय कोश जीवन की जो भी क्रिया है वह प्राण के अधीन है। क्रिया प्रधान है। शुद्ध वायु मंडल इसके लिए भोज्य है। अगर शुद्ध वायु मंडल नही मिलेगा तो प्राण नही रहेगा। यह प्रश्न केवल हमारे सामने ही नही। आज सारे विश्व

के सामने यही प्रश्न है कि यह जो बडे २ एटम बम बन रहे है, जिनकी परीक्षा हो रही है। इससे हमारे सारे ब्रह्माण्ड की जो वायु है वो दूषित हो जायगी। ब्रह्माण्ड की यह जो वायु है वही जीवन है।

एक आदमी को किसी (air tight) कमरे मे बन्द कर दो तो वह कितने दिन जिएगा ? नहीं जीएगा। ऐसा समझो केवल हमारे प्राण से ही हम जीते है। यह जो बाहर का खुला वायु है, विराट आत्मा का प्राण है। इस विराट आत्मा के प्राण से तुमको जीवन मिलेगा। यदि यह शुद्ध होगा तो तुम्हारा जीवन रहेगा शुद्ध। इसको यदि गन्दा कर दोगे तो यह जीवन भी नहीं रहेगा। यह संसार के वैज्ञानिक सोच रहे है कि हम ब्रह्माण्ड के प्राण को गन्दा न करें। इसको अच्छा बना कर रखें। इस प्राणमय कोश के ऊपर मनोमय कोश है। और विज्ञानमय कोश हैं। यह दो बडे महत्त्वपूर्ण कोश हैं। इनके लिए वेदादि शास्त्र का स्वाध्याय और सत्सङ्ग है। इनको स्वस्थ बनाकर रखना। नहीं तो मन के अन्दर अनेक प्रकार के शोक होगें। मोह होगा। नाना प्रकार के सँकल्प विकल्प होंगे। चिन्ता होगी। भय होगा। निराशा होगी। यही तो दुःख है संसार का और क्या दुःख है ? इसलिए इनको स्वध्याय चाहिए और तत्त्व विचार का ज्ञान चाहिए।

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परंतप।
सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते॥

हम बडे २ यज्ञ करते हैं। एक मजदूर है, उसके सिर पर हीरे जवाहरात का बोझ लाद दो और कहो चलो। वह चल पडा। उत्तम से उत्तम चीज उसके सिर पर रखी है और वह चल रहा है। उसको कोई ज्ञान नहीं। इसी तरह तुम भी उत्तम से उत्तम कर्म किए जाओगे और ज्ञान नही होगा। कुछ समझोगे नहीं। जैसे वह मजदूर उस बोझ को उठाए जा रहा है। उसको 15, 20 रुपये मिल जाएँगे ऐसे ही हम भी बिना समझे कर्म किए जा रहे हैं हमको स्वर्ग का भोग मिल जाएगा तो उस मजदूर और हमारे मे क्या फर्क हुआ। इसलिए अपने इस स्वरूप को समझो कि हम कौन है ? बिना समझे कर्म किए जा रहे हो पहले तो यह समझो कि हम हैं कौन ?

एक बात याद रखने की है। आत्मा के दो लक्षण किए। स्वरूप लक्षण और तटस्थ लक्षण। तटस्थ लक्षण कभी बन जाता है कभी नहीं बनता। स्वरूप लक्षण कभी नही बदलता। जैसे जगदीश वही है जो तुमको कल रोड पर तुम्हे मिला था। अब रोड पर मिला था, यह तटस्थ लक्षण हुआ। कल मिला था, अब रोड पर मिला था, आज तो नही मिलेगा। ईश्वर कौन है? कहते है जो जगत की सृष्टि करता है। यह ईश्वर का तटस्थ लक्षण है। उस ईश्वर का यदि स्वरूप लक्षण करोगे तो 'स्वरूपमेव लक्षण' जो स्वरूप है, वही स्वरूप लक्षण होगा। परमात्मा का स्वरूप है। "सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म" यह उसका स्वरूप लक्षण है। यह उसको कभी छोडेगा नहीं। कभी बदलेगा नहीं। अपने ही बारे मे सोचो। यह अहं तो करते है किन्तु यह जो अहं है इसका स्वरूप क्या है? अहं का जो स्वरूप है अहं की जगह कभी नाहं होगा? कहता है मेरे को क्या कहते हो हम तो है ही नहीं। अगर ऐसा कोई कहे तो विश्वास करोगे? यह सच बोल रहा है कि झूठ? अगर तू हैं ही नही तो बोलता कैसे है 'नाहंमस्मि मैं नही हुँ ऐसा कोई अपन को नहीं बोलेगा। क्यो? जहाँ भी होगा अहं पहले और न बाद मे आएगा। "मैं नहीं हूँ" न पहले नहीं आएगा।

दूसरे के लिए कह सकते हो कि वह नहीं है। पर तुम अपने को न कैसे कह सकते हो! क्योंकि तुम सत् हो। सत् होने न तुम्हारे पास नहीं आता। डरता है। हम नहीं जाएँगें तुम्हारे पास क्योंकि तुम सत् हो।"अविनाशी तु त द्धिद्धि" इसलिए नाहं कभी नही बोलेगा। अहमस्मि ही बोलेगा। क्यों? अपनी सत्ता, अपना स्वरूप अबाधित है। केवल यह हमारी कल्पना या बोलने की बात नही। जन्म से लेकर अबतक इस अपने शरीर को देखो। हम है तो यह शरीर बदलता जा रहा है। हमारे बिना भी बदलेगा? नही। हम है तो यह शरीर रोज रंग बदलता जा रहा है और पूछता है कि यह तुमको अच्छा लगता है। जैसे अपने घर मे देखो। पत्नी है गाँव की dress मे हीं रहती है। भोली भाली है। एक दिन पति ने कहा गांवडे की कपडे पहनती है क्या तुमको शहर जैसे कपडे पहनने भी नहीं आते? तो दूसरा (dress) बदल कर आई शहर का। पूछा क्यों अब ठीक लगती हुं। उसने फिर सिर हिला दिया। तीसरा (dress) बदल कर आई। तुमने कहा हाँ ठीक है। वह बोली यह मेरे को

ठीक नहीं लगता। तो क्या करोगे ? उसको भी तो ठीक लगना चाहिए। अब अपने शरीर को देखो। जब जन्म लिया अंगूठा चूसते रहे। धीरे २ आगे आए। कुमारावास्था आई। यह पूछता जा रहा है क्यों ठीक है न। अपने मौन उत्तर देते रहे। धीरे २ युवावस्था मे आ गये। बोले अब तो ठीक है ? कहा हाँ अब ठीक है। उसने कहा यह हमको ठीक नही लगता। शरीर ने दूसरा (dress) बदल लिया। खोपडी काली थी, सफेद हो गई। चमडी भी ढीली हो गई। अब ठीक लगता है ? नहीं। तो (get out) हो जाओ। (get out) हो गया। रोने लगे मर गया। यह शरीर इतने नक्शे बदला। इतने नक्शे बदलने मे 50, 60, 70, 80 वर्ष लग गये। इतने मे यह शरीर बिचारा घिरा गया पर तुम्हारा क्या बिगडा। तुम वैसे के वैसे ही रहे। यह जीएँ और मर गये।

यह जो 50, 60, 70, 80 वर्ष का लम्बा काल है इसमे तुम्हारे स्वरूप मे कोई फर्क नहीं पडा। अब अनुभव करो कि अगर यह तुम्हारा स्वरूप सत् नही तो सत् कौन है ? किसको सत् कहोगे ? जो हमेशा एक जैसा रहा, जिसके सामने सीन आए और बदलते गये किन्तु वो बदला। वो सत् नही तो फिर सत् और कौन है ? इसलिए आत्मा के लिए श्रुति कहती है 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म'। हे सौम्य वह सत्य है, इसको मुमुक्षु जाने। सत् के साथ मे चित् विशेषण लगा है चित् माने चेतन। यह इसका स्वरूप लक्षण है। कोई कहे कि तुम तो जड हो। एक धनी मानी सेठ रहा। नौकर बडा भोला था। मालिक के सामने कुछ बोलता ही नही था। मालिक हमेशा उसको मूर्ख कहता है। जब भी यह मालिक के सामने आवे मालिक कहे आ गये मूर्ख। हाँ आ गया मालिक। सेठ ने सोचा कि यह तो कभी गुस्सा ही नही करता, यह सचमुच मूर्ख ही है। एक दिन आया तो सेठ ने कहा मूर्ख इधर आ। सामने हाथ जोडकर खडा हो गया। सेठ ने कहा अपना हाथ इधर कर। हाथ आगें कर दिया सेठ ने अपनी अंगूठी निकाल कर उसकी उंगली मे पहना दी तेरे से बडा मूर्ख कोई मिले तो उसको यह अंगूठी पहना देना। सेठ की अंगूठी यह बडे आदर से रखता है। मम्मी की दी हुई चीज है बडें प्यार से रखता है। कई महीने बीत गये। सेठ रोज पूछे कि कोई बडा मूर्ख मिला ? कहे अभी नहीं मिला। एक दिन क्या हुआ, सेठ को हार्ट अटेक हो

गया। खाट पर पडा है। समाचार तो बिजली की तरह फैल गया। उस नौकर ने भी सुना और सेठ को देखने चला आया। सेठ आँख बन्द किए पडा है। थोडी देर मे आँख खोली तो सामने उसको खडे देखकर बोला, मूर्ख आ गया। जी आ गया। कोई बडा मूर्ख मिला? जी नहीं मिला। सेठ बोला अच्छा हम तो अब जा रहे है, जब कभी कोई बडा मूर्ख मिले जाए तो तुम यह अंगूठी उसको पहना देना। नौकर ने हैरान होकर पूछा आप कहाँ जा रहे है? मूर्ख तेरे को क्या बतावें कि कहाँ जा रहे है। नौकर ने पूछा क्या सेठानी जी भी साथ जा रही है? और कौन २ साथ जा रहा है? अरे मूर्ख कोई साथ नहीं जाता। कौन सी गाडी मे जाएँगे? सेठ ने कहा अरे मूर्ख वहाँ तो यह शरीर भी नहीं जाएगा। गाडी कौन सी जाएगी। नौकर ने फिर पूछा आप ने तैयारी क्या की है वहाँ जाने की? जरा सा कलकत्ता जाने के लिए पाकेट मनी का ध्यान रखना पडता है। किसके पास जाना है? क्यों जाना है? पहले से प्रबन्ध करना पडता है और आप यहाँ से जा रहे है। पता नहीं कहाँ जा रहे है, कुछ तैयारी भी नहीं की। झट से अगूठी निकाली और सेठ के हाथ मे डाल दी कि मेरे से बडे सेठ आप ही हो। जब जाना निश्चित है, तैयारी कुछ नहीं की तो बडा मूर्ख और कौन हो सकता है। सेठ बच गया। भाग्य का धनी था, धीरे २ ठीक हो गया। बाद मे उस नौकर को हाथ जोड कर नमस्कार करता है कि तुम मेरे गुरु हो। तुमने मेरी आँखें खोल दी है और हम तुमको मूर्ख समझते रहे।

इस प्रकार यह सत् और चित्. चित् माने चेतन। किसी को जड कहो तो यह सुनना पसन्द नहीं क्योंकि वह स्वयं जब चेतन है तो जो इसको जड बोलेगा वह स्वयं ही जड होगा। इसलिए यह आत्मा सत् है और चेतन है और तीसरा विशेषण है आनन्द। हम संसार मे जितने भी साधन पकडते है सब सुख के लिए ही करते है किन्तु यह सोचो कि तुम्हारे अन्दर सुख नही होगा तो कौन सा साधन तुम्हे सुख दे सकता है? कभी २ मन मे शान्ति नहीं होती, मन अशान्त होता है। कोई भी चिन्ता हो गई। तभी मूड मे घर आया तो पत्नी से बात नहीं करेगा। बेटे से बोलने की इच्छा नहीं होती। जाग्रत अवस्था मे तुमको सुखी रखने के लिए रूपाकार वृत्ति, रसाकार वृत्ति, गन्धाकार वृत्ति शब्दाकार और स्पर्शाकार वृत्ति बनती रहती है। यह वृत्तियाँ तुमको जाग्रदावस्था मे सुख

दुःख देती है। तुम्हारा सुख वृत्ति सुख है। यह पाँच प्रकार की वृत्तियाँ ही दुःख और सुख देती है। पर जब निद्रा मे चले गये। गाढ निद्रा मे, तो वहाँ कान सा विषय है ? रूप, रस, गन्ध, शब्द और स्पर्श कोई विषय नहीं। तीन चार घटे तक गाढ निद्रा मे रहे . इस निद्रावस्था का जो सुख है यह तुम्हारा अपना सुख है, तुम्हारा अपना आनन्द है। यह किसी विषय का सुख नहीं। कभी २ मां अपने बच्चे को गोद मे सुलाकर बाद मे नीचे सुला देता है। इसी तरह सुषुप्ति अवस्था मे यह अविद्या इस जीव को अपनी गोदी मे रख कर आनन्द देती है। स्थूल अहंकार से तो इसे बाहर कर दिया, सूक्ष्म अहंकार से भी बाहर कर दिया किन्तु उसको अपने घेरे से बाहर नहीं जाने देती। कारण शरीर के अहंकार से बाहर नही जाने देती। इसलिए यह अविद्या ही बडा भारी बन्धन है। इस अविद्या को निवृत्त करने के लिए तत्त्व विचार है। मुमुक्षु इस ज्ञान को ग्रहण करे। इसके लिए ही भगवान कहते है :—

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परंतप। ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है। शास्त्र से गुरु से इस विद्या को पढो और पकड कर ध्यान करो। यह हमलोग जो सत्सङ्ग कर रहे है, यह ज्ञानयज्ञ है। हमारी वृत्ति उस आत्मा की ओर जा रहा है जो देवों का भी देव है मंत्र कहता है "तद् ब्रह्मचर्येण ह्येवात्मानमनुविद्य" यह ब्रह्मचर्य है इस ब्रह्मचर्य का गुणगान यहाँ श्रुति कर रही है क्योंकि तुम्हारे जीवन का सारभूत अंग है यह ब्रह्मचर्य। जो कुछ भी शक्ति तुम्हारे शरीर मे है, इस ब्रह्मचर्य के अधीन है। आज का बुद्धिमान आदमी रुपये रुपये की गड्डी में से नोट तो बडी सावधानी से गिनता है, पर अपने प्राण के बारे मे कुछ नहीं सोचता। एक नोट निकालने के लिए उसे बार २ घिस कर देखता है भगवान को चढाने के लिए।

यह शरीर को पर्स समझो और यह प्राण तुम्हारा धन है। श्वास बाहर निकल गया और लौट कर नही आता तो यहाँ क्या है फिर ? इस प्राण का विचार करो। मन के बारे मे भी सोचो। ध्यान करो। यह ध्यान योग है। प्राचीन काल मे लोग जीवन के बारे मे सोचते थे। मन और प्राण के बारे मे सोचते थे। मन को केवल फुटबॉल की तरह उछालते रहने से क्या होगा ? यह

तो मदारी के बन्दर की तरह नाचता रहेगा इसके लिए गीता मे कृष्ण भगवान कहते हैं :–

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ।

मन का तप क्या है ? मन को बुद्धिमान प्रसन्न रखें । मन की विकृति के अनेक कारण हैं । अनेक साधन हैं । उन अनेक साधनों के कारणों के रहते हुए भी तुम अपने को शान्त रख सकते हो । छोटा सा दुःख या पीडा आ गई तो मन की खुशी को भागने मत दो । मन को खुश रखो । 'सौम्यत्वं सौम्यभाव । दुनियां मे दो ही प्रकार के आदमी हैं । उपकारी और अनुपकारी । दोनों जगह मन संतुलित रहे तो इसको सौम्य कहेंगें । अपने बच्चे से प्यार तो शेर भी करता है । जंगली शेर है वह क्या अपने बच्चों मे प्यार नहीं करता ? मनुष्य भी यदि इतना ही करे तो, अगर मनुष्य के मन मे भी केवल अपने ही बच्चे के लिए प्यार है तो हमारे मन मे कितना प्यार है ? हम उसकी बगल मे ही हुए । उससे अधिक कुछ नहीं । बुद्धिमान मनुष्य दूसरे के बच्चे मे भी प्यार करे । ज्ञान से आगे हो। यही ज्ञान यज्ञ है । बिना ज्ञान के व्यापकता नहीं आती । अज्ञान से संकीर्णता और ज्ञान से व्यापकता आती है । तुम्हारे मन को ज्ञान फैला देता है । ठीक है, कभी क्रोध भी आ जाता है किन्तु ज्ञानवान को क्रोध का भी संयम करना चाहिए । सभी जीव प्रतिकूल पदार्थ मे डरते हैं । भगवान कहते हैं :–

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।

कछुआ जल मे चला जा रहा हैं, अपने अङ्गों को फैलाता हुआ और समझा कि आगे गडबड है तो खट् अपने अंगों को समेट कर बैठ जाएगा । इतना भय और निर्भयता तो तामसी जीवों को भी है कि अमुक जगह पर भय हैं और अमुक जगह पर निर्भयता है । मनुष्य भी यदि इसी तरह भय और निर्भयता को पकडकर बैठ जाएतो हमारा यह भय और निर्भयता पशु पक्षियों से ज्यादा कुछ नहीं । इसलिए मनुष्य आत्मा को पकडे । आत्मा को जब पकडोगे तो तुम्हारे अन्दर असली निर्भयता आ जाएगी । जब असली निर्भयता आ जाएगी तो तुम

मृत्यु से भी नहीं डरोगे। मृत्यु देवता बल्कि तुझसे डरने लगेगा। जो किसी से नहीं डरता उससे सब डरते है और जो सबसे डरता है उससे कोई नहीं डरता बल्कि सब उसको और डराते हैं। देखो दारा शिकोह, औरङ्गजेब का बडा भाई था और इसी को बादशाह बनने का अधिकार भी था। दारा उपनिषदों का ज्ञाता था। इसको उपनिषद् विद्या मे बडी श्रद्धा थी। औरङ्गजेब बडा धूर्त था उसने मौलवियों को अपने साथ मिला लिया और उनसे कहा कि दारा शिकोह से कहे कि अमुक कलाम पढे। अगर वह नहीं पढता तो उसको मरवा दो। हमलोगों ने कभी सोचा ही कि आत्मा के अमरत्व को समझ लिया तो निर्भय होगा। उसने आत्मा के अमरत्व को समझ लिया था। इस उपनिषद् विद्या के ज्ञान मे इतनी निर्भयता आ गई थी कि मृत्यु का भी उसको भय नहीं रहा था। किन्तु राज्य का भी लोभ नहीं था।

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः

मौन का अर्थ हमलोग केवल वाणी से लेते है। किन्तु ''सगुणस्य निर्गुणस्य परमात्मनः ध्यानं मौनम्'' ध्येयाकार वृत्ति मे मन मौन होता है।परमात्मा का ध्यान करना ही मौन होना है। साथ मे कहते है 'आत्मविनिग्रहः' यहाँ आत्मा शब्द का अर्थ है, जो आत्मा की तरह दीखते हो। जैसे लोहे को अग्नि मे डाला, अग्नि जैसा ही दीखने लगा पर अग्नि बना तो नहीं। अब अपने शरीर को देखो, आत्मा अग्नि की करंट ने आने पर भी क्या यह आत्मा बन गया? गधे को बारह वर्ष घोडों के बीच रखा तो क्या वह घोडा बन जाएगा? इसी तरह इस शरीर को सौ वर्ष आत्मा के करंट मे रखा पर अन्त मे निकला क्या? मुर्दे का मुर्दा। लेकिन सौ वर्ष तक यह तुम्हारे पास रहा, तब इसको किसी ने मुर्दा नहीं कहा। तो बताओ यह चमत्कार तुम्हारा या इसका है? चमत्कार माने सिद्धि। बताओ तुम कितने बडे सिद्ध हो? जब तुम अपनी सिद्धि को भूल जाते हो तो दूसरे सिद्धों के पीछे घूमने लगते हो। वो परेशान करता है पर देता कुछ नहीं। अपने इस सिद्ध देव से दोस्ती करो। इससे मिलो और कहो, तुम्हारे बिना हमारा कौन है। जिस दिन तुम छोड दोगे सब छौड देंगें। तुम्हारी पकढ से ही सबकी पकड है।

त्वमेव माताच पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव।

वो बैठा है तो माँ भी है, बाप भी है, । वो नहीं तो कौन माँ कौन बाप वो बैठा है तो कोई बन्धु है, सखा है । वो नहीं, प्राण निकल गया और अपने भाई सामने खडे हो जाओ, भाई साहब पहचान रहे हो ? भाई साहब कहेंगे भूत भगाऐंगे । करोडों की सम्पत्ति हो और आंख बन्द हो जाने पर तुम्हारा क्या है ? बुढ्ढे ने कहीं कोने से आवाज दे दी कि बेटा यह बंगला हमने बनवाया है । हम तो यहीं रहेगे । बेटा क्या करेगा ? झट भूत झाडने वालों को बुलाएगा और दे लाल मिर्चों का धुँआ । कौन तुमसे प्यार करता है ?

वेदान्त मे एक दृष्टि सृष्टिवाद है । वेदान्त कोई गल्प गोला नहीं । समझने की विद्या है । आत्म विद्या है यह । यदा दृष्टि तदा सृष्टि । तुम्हारी दृष्टि है तो सृष्टि तुम्हारी है । दृष्टि बन्द तो तुम्हारा यहाँ कुछ नहीं । जिस घर को हम अपना घर कहते है, दृष्टि बन्द फिर वो हमारा घर नहीं । फिर जिनकी दृष्टि है उनका गर है । वहाँ बोलोगे तो भूत कहलाओगे । मुमुक्षु सत्-चित् आनन्द स्वरूप इस आत्मा का विवेक करें । यह आत्मा का विवेक करना ही यज्ञ है । मंत्र यहाँ पर कहता है इस तत्त्व की खोज करो । "यज्ञस्यापि यत्फलं तद् ब्रह्मचर्यवान् लभते" बडे २ जो यज्ञ होते है, उन यज्ञों के जो भी फल होते हैं । ब्रह्मचर्यवान् उन सब फलों को प्राप्त करता है । आचार्य कहते है कथं ब्रह्म-चर्यम् ? यज्ञ इति आह । यह बडे २ यज्ञ है यह ब्रह्मचर्य ही है । इसका तात्पर्य हुआ कि यह यज्ञ तुम्हारे जितेन्द्रिय हुए बिना नहीं हो सकते । ब्रह्मचर्य के द्वारा मुमुक्षु ब्रह्मपद पा लेता है । दिव्यलोकों को प्राप्त कर लेता है । इसलिए मुमुक्षु सदा इस बात का ध्यान रखें । आगे कल इसकी और व्याख्या करेंगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१५-५-८८

प्रवचन सं०-३७

"ॐ तद्य एवैतावरं च ण्यं चार्णवौ ब्रह्मलोके ब्रह्मचर्येणानुविन्दन्ति तेषामेवैष ब्रह्मलोकस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।।"

(छान्दो. ८-५-४)

विचार चल रहा है कि बेटा यह मनुष्य प्राणी क्या चाहता है कि मेरी आत्मा कभी मरे नही। परमात्मा की भक्ति भी करते है तो वो भी इसीलिए कि हम मरे नहीं कभी। मृत्यु से बाहर हो जाएँ। हम कभी दुःखी न हों। इस प्रकार जो व्रत है वह ब्रह्मचर्य है। जब यह व्रत धारण करेगा कि मैं मृत्यु से बाहर हो जाऊँ तो इसका अर्थ हुआ कि मृत्यु इसके पास आने वाला है। आगन्तुक है। मृत्यु स्वभाव से नहीं है। जैसे उदाहरण के लिए समझो, हम लोगों को दुःख होता है। यह दुःख है क्या ? असल में मन के प्रतिकूल जो विचार है या मन के प्रतिकूल जो वस्तु है। जो मन के अनुकूल है वह सुख है। प्रतिकूलवेदनीयं दुःखम्, अनुकूल वेदनीयं सुखम्। विचार करो कि तुम्हारे अन्दर दुःख है तो कब से दुःख है ?सोचो आत्मा का स्वरूप अनादि अनन्त है। अनादि माने इसकी कोई आदि नहीं। आदि शब्द का अर्थ समझो जैसे बच्चे के आदि उसके माता पिता है। इन आत्मा का कोई आदि नहीं। इसका कोई माता पिता नहीं इसलिए यह अनादि है। जो अनादि है वह अनन्त है। अनादि अनन्त स्वरूप में जो थोड़ा सा दुःख आ जाता है, उस दुःख में भी हम रोते है। अनादि अनन्त इस आत्मा के स्वरूप में इस थोडे से काल के दुःख को हम इतना महत्त्व दे देते है कि उसको पकड़ कर बैठ जाते है। जैसे उदाहरण के लिए समझो एक Buisness man साल भर का खाता देखकर ही profit, loss का निश्चय करता है। अब यदि वह एक दिन का घाटे का

हिसाब देख कर ही सिर पकड कर बैठ जाए तो । अरे भाई कभी २ भी होती है । साल भर का हिसाब देखा ही नहीं और एक दिन का हिसाब देखकर दुःखी हो जाता है । heart attack हो जाता है ।

इसी प्रकार यह जीव भी अपने अनन्त स्वरूप का विवेक नहीं करता और एक दिन के दुःख को दुःख मान बैठता है । इस शरीर की आयु ही कितनी है । इस अनादि अनन्त जीवम में इस शरीर की आयु कितनी है ? थोडी सी है । आत्मा का जीवन अनादि है और अनन्त है । इस थोडे से काल मे बीच २ में सुख भी मिलता है किन्तु उस सुख का भी ध्यान नहीं करता । केवल दुःख का ही ध्यान करता है कि यह दुःख आया कैसे ? महर्षि कहते है 'यावत् कुरुते जन्तुः सम्बन्धान् .... । यह जीव जैसे २ बाहर अपने प्रिय सम्बन्धो को जोडता है कहीं से शोक आएगा, कहीं से राग आएगा । कहीं से द्वेष आया । शोक बढते जाएँगे । जैसे २ बाहर सम्बन्ध जुडेंगे, रोग शोक बढते जाएंगे । जो भी शोक आया बाहर से ही आया है: तुम्हारे पास तो है नहीं । जैसे स्फटिक के पास गुलाब का लाल फूल रखा, स्फटिक देखने में कैसा लगेगा ? लाल । गुलाबी रंग रखो तो गुलाबी दीखेगा । अब कोई स्फटिक को ही देखे, फूल को नहीं और चाहे कि ऐसे गुलावी फूलों की माला मिले, तो कहाँ से मिलेगी ? यह जो स्फटिक मे लालपना दीख रहा है, यह तो आभास मात्र है । जब तक फूल का सम्बन्ध है तभी तक है । दिखने का ही है । फूल को हटाया तो लालिमा कहाँ से आएगी ? इसका अर्थ यह भी समझो कि फूल के सम्बन्ध से लालिमा तो दीखी, पर लालिमा है कहाँ ? जो दीखे और हो नहीं उस को वेदान्त भाषा मे मिथ्या कहते हैं । मिथ्या को पकड़ कर शोक मोह होता है ।

इसी प्रकार तत् तत् पदार्थों के सम्बन्ध से जीव के अन्दर दुःख दीखता है, किन्तु दुःख नहीं । 'विज्ञानं आनन्दं ब्रह्म' श्रुति कहती है बेटा यह तेरी आत्मा तो बोध रूप है । यह आनन्द रूप है । हम इसके असली स्वरूप का ध्यान नहीं कर पाते । उपाधि से दीखने वाले सुख को सुख मान लिया । उपाधि से दीखने वाले दुःख को दुःख मान लिया अपने स्वरूप का विवेक नहीं किया कि मेरा स्वरूप क्या

है ? विचार करो कि आत्मा में यदि दुःख हो या सुख हो तो देखो, जाग्रत में सुख दीखता है दुःख भी दीखता है । स्वप्न में भी सुख भी दीखता है । किन्तु सुषुप्ति में, गाढ निद्रा मे चले जाओ तो वहाँ कभी सुख या दुःख दीखा ? दो तीन घण्टे भी गाढ निद्रा में रहो तो वहाँ कोई दुःख नहीं, कोई सुख नहीं । युवा अवस्था मे नींद खूब आती है । खून गर्म रहता है । खून का ठंढा हो जाना ही बुढापा है और खून गर्म रहना जवानी है । यह प्राकृतिक नियम से युवावस्था मे खून गर्म रहता है । सब से गर्म खून बच्चे का रहता है । मां कही जो रही है तो भी बच्चा गोद मे ही सो जाता है । नींद अधिक आती है । क्यों ? उसका खून गर्म है । जवानी मे भी नींद अच्छी आती है । पर बुढापे में खून ठंडा होने लगता है तो निद्रा कम होने लगती है । फिर भी यह निद्रा का जो आनन्द है वो जाग्रत के किसी विषय जैसा नही । जाग्रत के जितने भी विषय हैं उनका सुख थोडी देर के लिए है । गीता में भगवान कहते हैं :-

ये हिं संस्पर्शजा भोगा, दुःखयोनय एव ते ।

आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुध ।।

हे अर्जुन इन पदार्थों मे कोई लाख सुख माने किन्तु इन मे सुख है ही नही । सत् लोग एक बडा अच्छा दृष्टान्त देते है । एक सेठानी है । जाडे का मौसम है । सिर धोया हुआ है । घर मे बाल सुखा रही है । हीरे की माला निकाल कर कुर्सी पर रखी है । सूर्य की चमक से हार तारों की तरह चमक रहा है । आकाश में उडता हुआ पक्षी समझता है कोई खाने की चीज है । पक्षी हार लेकर उड गया । सेठानी क्या करे हल्ला करने लगी । नौकरों को दौडाया । नौकर कितनी दूर जाते । पक्षी दूर जा कर बैंठा । एक सरोवर के किनारे एक वहुत बडा पेड था । उसके ऊपर वैठ कर पक्षीं ने उस पत्थर मे चोंच मारी । पत्थर था, वह टूटा नहीं । वह एसको वहीं छोड कर आगे उड गया । जीव को कुछ मिलता है तो पकडता है ।

हार वहीं लटक रहा है अश्वत्थ की शाखा मे किन्तु दीख रहा है पानी में । तालाब का सुन्दर जल उस हार का प्रतिबिम्ब दीख रहा है । कोई नौजवान उधर से आया । उसने तालाब के किनारे सुन्दर घास पर आराम करने के लिए

टांगे फैला दी नीचे जो दृष्टि गई तो क्या देखता है, चमकता हुआ हार पानी मे पड़ा है। झट कपडे उतार कर पानी मे घुस गया । गोते लगाता है पर कुछ मिलता नहीं। बार २ जहां हार दीखता है वहीं जाता है पर कुछ मिला नहीं। बार २ जाने पर भी मिलता नहीं। लोग इकट्ठे हो गये। सब कहते हैं कि पानी में हार है पर मिलता नहीं। एक विवेकशील ने सोचा, बात क्या है? जब दीखता है तो मिलता क्यों नहीं? उसकी खोज करना चाहिए। ध्यान से देखा। उसीका लक्ष्य लेकर ऊपर देखा तो हार तो ऊपर लटक रहा है। विचार नहीं करोगे वस्तु स्पष्ट नही होगी। विचार करोगे तो वस्तु स्पष्ट होगी।

तुम्हारी इन्द्रियों के यह जो बिषय हैं, इनको पानी का सरोवर समझो। आंख के द्वारा तुम्हारा ही आनन्द इनके अन्दर भास रहा है। कौन सा रस सुन्दर है? यह तुम्हारा ही रस सुन्दर है। कौन सा रूप सुन्दर है? तुम्हारा ही रूप सुन्दर है। जो रूप तुम्हारी आंखों मे है वही सुन्दर है। ऋषियों का बड़ा वैज्ञानिक विचार है। कोई रूप सुन्दर नहीं, कोई रस सुन्दर नहीं, कोई गन्ध सुन्दर नहीं। कोई स्पर्श सुन्दर नहीं। महर्षि याज्ञवल्क्य मैत्रेयी को आत्मा का बोध देते हुए कहते हैं रे मैत्रेयी 'सर्वेषां रूपाणाम् चक्षुरेकायनं' हे मैत्रेयी जितने भी रूप हैं वो सब तेरी आंख में बैठे हैं। तेरे को कौन सा रूप सुन्दर लगता है? जो तेरी आंख में है। 'सर्वेषांरसानाम् रसनैकायनं' रस कौन सा मीठा है जो मेरी रसना में मीठा है। 'सर्वेषां स्पर्शानाम् त्वगेऽकायन' बाहर कौन से विषय का स्पर्श प्रिय है जो त्वगेन्द्रिय में प्रिय है। जो तुम्हारी जीभ में मीठा नहीं वह कितना ही मीठा हो जैसे शर्करा के बने हुए जितने भी पदार्थ हैं यह मीठे तो लगते ही हैं पर किसी को डायबिटीज हो गई। Guest हैं यह सब। अब चीनी ज्यादा नहीं खाना। मन तो कहता है खाओ पर डायबटिज क्या कहती है? नही खाना अच्छा लगने पर भी अन्दर से उसने ब्रेक मार दिया। और एक बात। इस समय जो छोटे बच्चे हैं, बहुत से बच्चों की प्रकृति मैंने देखी है, नमकीन वस्तु प्यार से खाते हैं। यह मत समझो कि मीठा ही सब को अच्छा लगता हैं 'भिन्नरुचिर्हि: लोका' प्राणियों की रुचि भिन्न २ होती है।

यह जितने भी संसार के विषय ,हैंसेर वो तालाब में हार है औजै

दीख कहीं रहा है । इस तरह यह तुम्हारा जो आनन्द है वह आनन्द ही जिस विषय मे प्रतिबिम्बित होता हैं, वह प्यारा लगता है । तुम्हारा आनन्द जहाँ प्रतिबिम्वित नहीं होगा विषय प्यारा नहीं लगेगा जैसे शीशे में मुख देखते है । क्या दीखा शीशे में ? तुम्हारा प्रतिबिम्ब ही दीखा । मुँह तो नही दीखा । ऐसे ही यह सब विषय हैं । रूप, रस, गन्ध, शब्द और स्पर्श, यह सब शीशे ह और इन मे तुम्हारा आनन्द भास रहा है । यह दीखता तो विषय मे है और हम बार२ इन बिषयों गोतें लगाते हैं, पर मिलता क्या है ? दुःख । सुख तो मिलता नहीं । उस दुःख मे यह जीव फिर परेशान होता है । तुम्हारे स्वरूप मे दुःख नहीं है, आनन्द है । अपने आनन्द को उलटे जगह मे देखते हैं । जब उलटीं जगह देखा तो वहाँ खोजते २ परेशान हो गये । इसलिए अपने को दुःखी मानने लगे ।

उस प्रकार जीव अपने को दुःखी मान कर अशान्त हो जाता है । नाना प्रकार के उपद्रव होने लगते हैं । इसलिए विवेकशील मुमुक्षु बडे ध्यान से अपनी इस अन्तरात्मा के स्वरूप का विवेक करें । 'यहि संस्पर्शजा भोगा दुःख योनय एव ते, आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः' मुमुक्षु के अन्दर वैराग्य भी प्रकट होना चाहिए । भगवान कहते हैं यह संसार के जितने भी विषय है यह आदि और अन्त वाले हैं । आदि और अन्त वाला जो पदार्थ हैं वो तुमको अनन्त सुख कैसे दे सकते ह ? क्योंकि जो सुख हम चाहते हैं वो कैसा सुख चाहते हैं ? बहुत से लोग कहते है महाराज भगवान को किसने देखा है ? हम कहते हैं भगवान को किसने नहीं देखा ? पहले उसको बतलाओ यह सुख तुमको कहाँ चाहिए ? यहां चाहिए कि वहाँ चाहिए ? कहेगा यहाँ भी चाहिए बहाँ भीं चाहिए । यह सुख इस समय चाहिए कि उस समय चाहिए ? हमेशा चाहिए । किस रूप मे चाहिए ? सर्व रूप मे चाहिए सर्व देश में सुख, सर्व सर्व काल मे सुख, सर्व रूप मे सुख । उसीका नाम तो भगवान है , और भगवान क्या कोई भूत कि प्रेत है । विज्ञानं आनन्दं ब्रह्म । श्रुति आनन्द को ब्रह्म कह रही है । विषय का जों भी सुख होगा वह परिच्छिन होगा । जो रूप का सुख है वो रूप से परिच्छिन्न है । वो रूप होगा तो वो सुख है, वो रूप चला गया तो वो सुख भी चला गया । अपने शरीर मे ही देखो । बच्चा देखने मे कितना सुन्दर लगता है । जवान भी देखने मे सुन्दर लगता, किन्तु इस बुढापे मे क्या होता है ? सुन्दरता का भट्ठा बैठ जाता है कि

नही ? जो बडे सुन्दर लगते थे उनका क्हा हाल है ? सूर्य की धूप ने खींच लिया उसको, अब तो चमडी ही चमडी रह गई । हम रूप में अपने को सुखी मानेगे तो रूप तो अब है ही नहीं तो सुख तुमको कहाँ से मिलेगा ? रस में ही सुख मानोगे तो रस नहीं रहा तो सुख कहाँ से मिलेगा । स्पर्श मे सुख मानोगे तो स्पर्श नहीं है । गन्ध मे सुख मानोगे तो गन्ध नहीं रहा तो सुख कहाँ से मिलेगा ?

हमने अपने सुख को विषयों के साथ जो बांध दिया है यह बडी गल्ती है । इसलिए मुमुक्षु अपने स्वरूप का विचार करे । आद्य गुरु शंकराचार्य बडें सुन्दर ढंग से विचार कर कहते हैं 'का ते कान्ता कस्ते पुत्रः संसारो हि अतीव विचित्रः कस्य त्वम व कुत आयातः, तत्व चिन्तय तदिदं भ्रातः' कहते है 'का ते कान्ता' यह मेरी कान्ता है । 'कस्ते पुत्र' यह मेरा पुत्र है । यह बताओ किसको किसको कान्ता कह रहा है, वह कब से तेरी हैं ? यूं लोक जीवन मे व्यवहार के लिए ठीक है, कान्ता भी चाहिए, पुत्र पुत्री भी चाहिए । किन्तु जसे वो हमेशा से कान्ता नही ऐसे ही उससे मिलने वाला सुख भी हमेशा नहीं । अब यदि तुम यह कहो कि हमेशा इन से सुख मिलेगा, अमुक समय का सुख है, तुम ले लो आचार्य कहते हैं कि अपने स्वरूप का विवेक तो करो कि तुम हो कौन ? तेरा जन्म नही हुआ था तो कौन तेरी कान्ता थी ? कौन तेरा पुत्र था ? यह संसार वडा विचित्र है । तुम किसके हो ? कोई साईन बोर्ड लगा हैं कि हम अमुक के हैं । यदि साईन बोर्ड लगा भी हैं तो कौन सा है ? जिस Address को अपने pocket मे रख कर चलते हो । आज कल जरुरी भी है क्योंकि बडे शहरों मे कारें इधर से उधर दौडती हैं कहीं Accident हो गया तो कम से कम Address तो जेब मे पडा है, कोई सूचना तो दे देगा ।

सोचो यह Address कब से हैं ? कब तक रहनें वाला है ? कहते हैं जब से इस धर्मशाला में आए हैं । तो पहले के Address कहाँ गये ? गायब हो गये । तो यह Address भी ऐसे ही गायब हो जाएगा । कस्य त्वम् ? तुम कौन हो ? कहाँ से आए हो ? आंख बन्द कर के देखो । कोई Address है तुम्हारे पास ? अरे ठीक है, इस घर मे आ गये । ठीक हैं इस घर में मम्मी मिली

ढूँढी मिले किन्तु इस घर मे कहाँ से आए हो ? आचार्य कहते हैं भगवत्शरणा गति ग्रहण करो अन्य कोई उपाय नहीं 'भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़ मते' गोविन्द का भजन करो। इस सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा में जो भी दुःख है वह आभास मात्र ही है। इस आभास मात्र दुःख की निवृत्ति के लिए मुमुक्षु अनेक व्रतों को धारण करता है। उसके बारे मे यहाँ आचार्य विचार करते है 'यद्य संत्रायणमित्याचक्षते' संत्रायण क्या है ? परस्मात् अपरस्मात् आत्मन त्राण इच्छति' भगवान मेरी रक्षा करें। हम मन को भगवान मे बांध कर रखते है। बुद्धि को सूक्ष्म कर के हम भगवान को अलग कर के रख देते है। हे भगवान तुम तो वहीं रहना। आज कल घरों मे जगह कम ही होती है। भगवान के लिए अलग कमरा देना सम्भव नहीं। एक अलमारी का कोना भगवान के लिए अलग रख देते हैं। भगवान तुम यहाँ रहो। उसने कहा अच्छा भगत तुम जहाँ रखोगे वहीं रहेंगे। सायंकाल फिर आया, धूप दीप दिया फिर बन्द कर दिया। भगवान ने कहा अच्छा भक्त तुमने मुझको अलमारी में बन्द कर दिया मैं भी तुमको इस शरीर रूपी अलमारी मे बन्द कर के रखूंगा। तू मेरे को नहीं खोलता मैं तुमको नहीं खोलूंगा। सोचो तो सही कि भगवान को कहाँ निकाल दिया। अगर यह सोचता कि भगवान तुम तो हमारे अन्दर बैठे हो तुम प्रकट हो जाओ। ऐसा करता तब तो ठीक था। किन्तु जैसा अपने को छोटा समझा, भगवान को भी उतना ही छोटा मान लिया।

किया तो हम ने भक्ति के लिए। जैसे अपने यहाँ महाराजा हैं वो तो सारे नैपाल के महाराजाधिराज हैं। अगर कोई उनकी प्रशंसा मे कहे कि आप तो काठमांडू के महाराजा हो तो काठमांडू का महाराजा कह कर उनका मान किया कि अपमान ? इसी तरह भगवान को भी मान लिया। वो तो ब्रह्माण्डात्मा है विश्व की आत्मा है। उसको यदि अपने हृदय मे प्रकट करते तब तो ठीक था किन्तु ऐंसा नहीं कर पा रहा है। श्रुति कहती है कि ब्रह्मचर्य महान बल है इसके द्वारा शरीर महाबलशाली होता है। मृत्यु देवता भी इसको छोड़ता नहीं। यह संत्रायण शब्द है इसका अर्थ है रक्षणं आत्म रक्षणं। ऐसी इच्छा करता है कि वो परमात्मा मेरी रक्षा करे। यह भगवद् प्रार्थना जो इस प्रकार है यह भी एक प्रकार का ब्रह्मचर्य ही है। 'यन्मौनमि इत्याचक्षते' साधनों मे मौन भी एक साधन है।मौन

शब्द से हम केवल वाणी का निरोध समझ लेते है । मुख से नहीं बोलना इतना ही समझ लिया । केवल मुख से न बोलना ही मौन नहीं । आद्य गुरु शंकराचार्य कहते हैं 'मूकास्ति को वा वदनोस्ति को वा वक्तुं न वक्ता, वक्तुं न युक्त समय समर्थ जो समय पर बोल नहीं सकता वहीं मूक है । समय पर जो ठीक हो वह जरूर बोल देवे । ठीक बोलने मे संकोच मत करो । बोल दो उसमे तुम्हारा भी भला दूसरे का भी भला । यही मूकपना है । यही मौन है ।

आचार्य व्याख्या करते हैं कि आत्मा को जानने का प्रयत्न करना यही ब्रह्मचर्य है । मुमुक्षु शास्त्र से और बुद्धिमान आचार्य माने आत्मवेत्ता से इस आत्मा को जानने का प्रयत्न करे । 'तद्ब्रह्मचर्येण ह्येवात्मानमनुविद्य मनुते' इस महान व्रत के द्वारा, बुद्धिमान आचार्य के द्वारा मुमुक्षु जब इस प्रकार अपनी आत्मा को समझ जाएगा तो मुक्त हो जाएगा । मुमुक्षु अपनी इस आत्मा को जानने का प्रयत्न करे ।

यह ब्रह्मचर्य एक ऐसा साधन है कि जिस साधन के द्वारा शरीर बल, इन्द्रियबल, मनोबल यह तीन बल तुमको मिलेंगे । भगवान कृष्ण गीता मे क्या कहते हैं ।

"युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ।।"

भगवान कहते हैं कि युक्तियुक्त जीवन ही ब्रह्मचर्य है । यही योग है । ब्रह्म वानप्रस्थ या सन्यास का ही विधान है ऐसा नहीं है ब्रह्मचर्य आश्रम और गृहस्थाश्रम में भी ब्रह्मचर्य है । 'धर्माऽविरुद्धो भूतेषु कामोस्मि भरतर्षभः' धर्म के अनुरूप यह व्रत है जो लड़की का पाणिग्रहण करता है । विवाहादि करता है उस के लिए ऋतु काल का विधान है । जीवन में संयम को पकड़ो । तुम्हारे परिवार मे जो आत्मा आएगी अच्छी आत्मा होंगी । अच्छी आत्मा का लक्षण है देखने मे सुन्दर हो । वंश परम्परा, जाति परम्परा, धर्म परम्परा जो हमारी है । मर्यादा के अन्दर रहने वाली आत्मा जन्म लेगी उसको भंग करने वाली नहीं । ऐसी आस्तिक आत्मा से ही जाति का भला है, परिवार का भला है देश का भला है ।

राष्ट्र का भला होगा। इस प्रकार इस ब्रह्मचर्य व्रत का व्याख्यान करते हुए चल रहे हैं। आगे और भी कहेंगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१६-५-८८

प्रवचन सं० ३८

"ॐ अथ आत्मनस्त्राणं विन्दतेऽथ यन्मौनमित्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तद्ब्रह्मचर्येण ह्येवात्मानमनुविद्य मनुते।"

"ॐ अथ यदनाशकायनमित्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तदेष ह्यात्मा न नश्यति यं ब्रह्मचर्येणानुविन्दते॥"

(छान्दो. ८-५-२।८-५-३)

कहते हैं विवेकशील मुमुक्षु क्या सोचता है कि मेरी आत्मा की रक्षा हो। 'यत् संत्रायण' संत्रायण शब्द का अर्थ है आत्मा का त्राण। त्राण माने रक्षा। इस बात को समझाते आ रहे है कि प्राणियों के सामने मृत्यु का भय सब से बडा भय है। मृत्यु के भय से बाहर कोई नहीं। इस मृत्यु के भय से बाहर अगर कोई है तो वह है आत्मवित्। जिस को आत्मा का बोझ हो गया वह मृत्यु के भय से बाहर हो गया। और आत्मा का बोध, देखो अर्जुन के बारे मे आप सबको पता है, कुरुक्षेत्र के मैदान मे, जहाँ विशाल महाभारत का युद्ध लडा गया। जहाँ वैदिक

संस्कृति नष्ट प्राय: हो गई । इस महाभारत के युद्ध के पश्चात् हजार वर्ष तक हिन्दु जाति की हालत बडी खराब हो गई थी । यह तो आगे जाकर हर्षवर्धन आदि कुछ अच्छे राजा हुए जिन्होंने देश की उन्नति की । खैर यह इतिहास की बात है । उस महाभारत के युद्ध मे अर्जुन को भगवान कृष्ण तत्त्व का उपदेश देते है क्योंकि अर्जुन को बडा भय हो गया कि यह सब मर जाएँगे । मृत्यु का भय सब से बडा भय है ।

हम सोचते है कि जंगल मे शेर बडा भयंकर जानवर है किन्तु तुमको देखता है तो एक बार भागने की कोशिश करता है । मानो उसके पीछे मृत्यु का भय है । इतना शूरवीर जानवर है । शक्ति सम्पन्न है ! किन्तु मनुष्य प्राणी सब जीवों का सम्राट है । इस से बडा जीव कोई नहीं । इस से तो देवता भी घबराते है कि पता नहीं कौन सा मंत्र मारेगा और मुझे खींच लेगा । इसलिए कहते है कि उपासना करने लगो तो रास्ते मे देवता विघ्न करने लगते है । इस मनुय्य प्राणी को जब शेर देखता है तों वह भागता है । उसको भी मृत्यु का भय है ।जब वह देखता है कि भागने का रास्ता नहीं है तब हमारे उपर हमला करता है । आत्म रक्षा के लिए हमला करता है । तो सोचो इस आत्मा की रक्षा कौन नहीं चाहता । रक्षा का मार्ग केवल मनुष्य जाति को ही प्राप्त है । किन्तु केवल ज्ञान ही रक्षा का साधन है । यदि तुम चाहो कि कर्म करे तो केवल कर्म तुम्हारी रक्षा नही कर सकता । वह तो तुम्हारे भोग को वढा सकता है । इस लोक मे जाकर देखो जो अच्छा कर्म करता है, राजा सबके घरों मे जाकर देख तो नही सकता पर जब फूल खिलता है तो उसकी महक इधर उधर फैल ही जाती है । इसी प्रकार यह मनुष्य जब अच्छे गुणों से सम्पन्न होता है तो उसकी महक भी राष्ट्र मे फैल जाती है । राजा भी जान जाता है कि अमुक आदमी बडा अच्छा है और उसको पुरस्कार भी देता है । कहने की जरूरत नहीं कि हम अच्छे हैं, हमको इनाम दो । जब लोग एक फूल को भी समझ जाते है और उसकी मधुर गन्ध लेने के लिए चले आते है तो एक मनुष्य जब अच्छा कर्म करता है उसको राष्ट्र मे मान मिलता है तो जिसका यह जगत है वो नही देगा ?

इस सम्पूर्ण जगत का जो अधिपति है वो परमात्मा है। ज्ञानवान अपने मन को उधर फैंकता है। 'त्राणम् इच्छति' उससे त्राण की इच्छा करता है कि हे प्रभु मेरी रक्षा करो। इस लोक मे कोई तुम्हारे शरीर की थोडे समय के लिए रक्षा करता है। अन्न से, वस्त्र से या धरा आदि से किन्तु हमको शरीर मे कोई अमर नहीं बना सकता। परमात्मा की ओर जब यह जीव उठता है तो वो इसको अमरत्व की ओर ले जाता है। किन्तु अमरत्व की ओर तभी जाएगा जब यह समझेगा कि मैं मैं तो करते है। मैं मैं तो बकरी का बच्चा भी करता है, हम लोग भी मैं मैं करते है किन्तु यह 'म' है कौन ? जब इस मैं के स्वरूप को समझ जाएगा तो मृत्यु इसको नमस्कार करेगा। मृत्यु भी इसको नहीं पकडेगा। अगर मैं को नहीं समझेगा तो यह संसार के भोगों मे ही रहेगा और शोक मोह मे ही पड़ा रहेगा। इसलिए परमात्मा की ओर यह मनुष्य झुकता है। अब परमात्मा की ओर भी एक तो सामान्य श्रद्धा से भगवान के लिए भक्ति है और एक ज्ञान से झुकना है। यहां तो पशुपतिनाथ प्रत्यक्ष है। दर्शन करने वाले दो प्रकार के प्राणी भगवान पशुपति के दर्शन करते हैं। एक तो पशुपति क्या है ? यह समझ कर दर्शन करते हैं। एक जो सामने दीखता है वो पशुपति है। एक उसको चेतन परमात्मा का प्रतीक मान कर दर्शन करता है। एक सामान्य पत्थर की मूर्तिमान् कर दर्शन करता है। उस परमात्मा की महत्ता:-

य सर्वज्ञ स सर्ववित् यस्य एष महिमा भुवि,
दिव्ये ब्रह्मपुरे व्योम्नि आत्मा ह्येष प्रतिष्ठित ।।

इस जगत मे जितने भी प्राणी हैं, उन सबका जीवन दो प्रकार का है। बाह्य जीवन और अन्तर जीवन। बाह्य जीवन मे माता पिता बेटा बेटी पति पत्नी है। उसमे हम एक दूसरे को जानते हैं। मान लो कोई अपना fast friend है। वह भी जितना वाणी से बोलेगा उतना ही उसको हम समझेंगे। न उस से कम समझेंगे न ज्यादा। कम इसलिए नहीं समझेंगे कि बुद्धि अच्छी है। ज्यादा इसलिए नहीं समझेंगे कि बुद्धि ज्यादा नहीं है। बुद्धि चलते २ जब अज्ञान की दीवार से घिर जाती है तो कुछ समझ नहीं पाती। यह जीव अल्पज्ञ इसीलिए है कि अज्ञान की दीवार के सामने इसकी बुद्धि घिर जाती है। परमात्मा के सामने

कोई अज्ञान की दीवार नही है। जैसे इस समय सूर्य है। यद्यपि इसके सामने इस समय कोई रुकावट नहीं तो भी हम लोग, यहाँ इस समय आठ बजे है। इंगलैंड आदि मे इस समय लोग अंधेरे मे पडे होंगे। यहाँ उजाला है। यह बताओ कि सूर्य को किसी ने रोका है? हमारी धरती से नौ करोड मील की दूरी पर है। इस मे भी अल्प प्रकाश है। यह सारे ब्रह्माण्ड को एक साथ प्रकाशित नहीं कर सकता। और यदि सारे ब्रह्माण्ड को एक साथ प्रकाशित करता तो तुम को रात्रि कहाँ से मिलती? यह रात्रि का आनन्द देखने को नहीं मिलता। लोग कहते है जो गोरा होता है वह सुन्दर होता है। हम कहते है जो काला होता है वह बडा सुन्दर होता है।

हमारी पृथ्वी मे नौ करोड मील की दूरी पर इसको रखा है। यह परमात्मा की कितनी बडी कृपा है। अगर कहीं पास मे होता तो पूरी परौंठे की तरह सिक जाते। जरा नीचे वालों से पूछो क्या हाल है? इतनी सुन्दर जो रात्रि है, उसका सारा आनन्द खत्म हो जाता। चन्द्रमा २ करोड मील की दूरी पर है। अमुक गोलार्द्ध मे प्रकाश रहेगा। 'ज्योतिषामपि तज्ज्योति' गीता मे भगवान कहते हैं कि मैं ज्योतियों का भी ज्योति हूँ। ज्योति माने, जो महान सूर्य की ज्योति है उससे भी महान ज्योति हूँ। बृहदारण्यक उपनिषद से कहा 'यं सूर्यो न वेद यस्य सूर्यः शरीरं यत्सूर्योऽन्तरा यमयति एष आत्मान्तर्याम्यमृतः' वो परमात्मा सूर्य के अन्दर स्थित है लेकिन सूर्य से जुदा है।

अपने अन्दर भी समझो। 'यो मनसि तिष्ठन्' मन के अन्दर जो स्थित है। मन के अन्दर जितनी स्थिति है उतने अंश मे वह जीव है और मन से न्यारा जो है वो ब्रह्म है। मन से न्यारा जो तेरा स्वरूप है वो साक्षी है वो ब्रह्म है। इसलिए गुरु कहता है कि बेटा तू ब्रह्म है। ब्रह्म कहने का तात्पर्य कि मन से न्यारा जो तेरा स्वरूप है जो मन का भी साक्षी है वो ब्रह्म है। वो मृत्यु का भी मृत्यु है इसलिए मृत्यु उसे नहीं छूएगा। उधर मृत्यु नहीं जाएगा। वो सूर्य का भी नियन्ता है। यस्य सूर्यः शरीरम्। सूर्य उसको नही जानता क्योंकि सूर्य तो उस परमात्मा का शरीर बना हुआ है। क्या time से उदय हो रहा है। time से अस्त हो रहा है। time से तुमको दिन मिल रहा है time से रात्रि मिल रही

है । कितनी बडी व्यवस्था है ।

जीव के कार्य मे कभी २ अव्यवस्था भी हो जाती है । कभी २ सडक पर चलते २ गिर जाते हैं । किन्तु गिरते कब है ? जब ज्ञान मे चूक हो जाती है। हमारा ज्ञान कभी आता है, कभी जाता है । 'विज्ञानं ब्रह्म' श्रुति कहती है यह ज्ञान ही ब्रह्म है । परमात्मा ज्ञान रूप ही है । तो ज्ञान के अन्दर दोष नही आयेगा ज्ञान तो निर्दोष है किन्तु जीव जिस साधन से ज्ञान लेता है, उस साधन मे दोष होता है । जैसे आंख से देखते है, आंख मे अगर मोतिया आया तो नहीं दीखेगा । तो यह दोष आंख का हुआ कि वस्तु का ? दोष आंख का है । किन्तु परमात्मा सर्वज्ञ है उसका ज्ञान कहीं आता नहीं कभी जाता नहीं । कान से हम सुनते है । कान के पर्दे मे गडबड हो गई । शब्द का वायब्रेशन खत्म हो जाएगा । शब्द को नहीं सुनेंगे । इस का अर्थ हुआ कि ज्ञान निर्दोष पदार्थ है किन्तु जिन साधनों से हम ज्ञान लेते है उनमे दोष आ जाता है । वाणी से जैसे हम बोलते है । वाणी मे दोष आ गया तो हम नहीं बोल पाएँगे । वाणी बडा भारी ज्ञान का साधन है । वाणी से हम बोलतें है दूसरे सुनते है । दो इन्द्रियाँ तुम्हारा बडा उपकार करने वाली है । जो बुद्धिमान वाणी से ठीक बोलेगा वह दूसरे का भी भला करेगा अपना भी । यह दोनों इन्द्रियाँ जितनी अच्छी है उतनी बुरी भी है ।

एक नौजवान था । वाणी बडी कडवी थी । पत्नी समझती थी । उसने कोई बडा बहादुरी का काम कर दिया महाराजा के कान तक उसकी प्रशंसा की बात पहुंच गई राजा ने उसको इनाम देने के लिए बुलाया । पत्नी ने दो किलो मिश्री दे दिया कि इसको खाते जाना तो वाणी मीठी हो जाएगा । वह भोली भक्त थी । वह भी हरियाणे के जाट की तरह खाता गया । वहाँ जब पहुंचा तो अन्दर समाचार दिया कि अमुक व्यक्ति आ गया है । महाराजा ने बुलाया । शिष्टाचार मे नमस्कार तो करना ही था । राजा ने पूछा क्यों, यह काम तुमने किया है ? झट बोला कि मैने नहीं तो क्या तुम्हारे बाप ने किया है ? राजा ने झट 25 कोडे लगवाने की आज्ञा दे दी । अब इनाम तो क्या मिलना था उल्टे 25 कोडे खाने पडे । तो लौकिक पदार्थो से आप कहो कि हम इनको मीठा बना लेंगे तो असम्भव है । रोता है और कहता है मेरीं वाणी । तुमको इतनी मिश्री

खिलाई फिर तुम वैसी की वैसी ही रही । पत्नी बेचारी ने भी सोचा था कि वाणी मीठी हो जाएगी किन्तु वाणी वहीं वही रही । उल्टे 25 कोडे खाकर आ गया ।

यह जीव अल्पज्ञ है इसलिए यह अज्ञान के घेरे से है । परमात्मा अज्ञान के घेरे मे नहीं है । वो सर्वज्ञ है और सर्ववित् है । यः सर्वज्ञः स सर्ववित् ।सर्वज्ञ कहने का मतलब है सर्व जानाति । सारे प्रकृति चक्कर का नियन्ता वो परमात्मा सामान्य रूप से भी नियन्ता विशेष रूप से भी नियन्ता । जगत चक्कर का । जैसे अपने से ही समझो । कभी पति पत्नी के सामने नैले पर दहला मार गये । झूठ बोल गये । चतुर पत्नी पति की आंख को ताकती है । आँख मे क्या है ? झूठ है कि सच । इस आंख को सत्य की खिडकी समझो । सत्य यहाँ से झांक जाता है । आदमी जब झूठ बोलता है तो आंख नीची कर लेता है । चतुर पत्नी समझ जाती है पर कहती है जाने दो । संतोष कर लेती है । पर परमात्मा संतोष नहीं करेगा। उसने तो सच का फल अलग और झूठ का फल अलग कर के देना है । यह परमात्मा सामान्य ज्ञान वाला भी है और सर्वान्तरयामी भी है । जहाँ से झूठ निकल रहा है, वहीं वो बैठा है, सुन रहा है । उनसे कौन छिपाएगा भला ? छिपाना तो उससे है जो आंख से देख कर चलता है, कान से सुन कर समझता है। जों मन के अन्दर बैठा है, मन का नियन्ता है, अन्तर्यामी है, उससे क्या छिपाओगे ।

वह धर्माधर्म का नियन्ता है । जितने अंश मे धर्म है उतने अंश मे धर्म का फल और जितने अंश मे अधर्म है उतने अंश मे अधर्म का फल । श्रुति कहती है 'यः सर्वज्ञः स सर्ववित् यस्यैष महिमा भुवि । वो परमात्मा कैसा है ? परमात्मा की महिमा का वर्णन करता है मंत्र । भुवि माने पृथ्वी 'यस्यैष महिमा भुवि' जिस की यह महिमा है । महिमा माने दिव्य लीला । अपने लोग तो श्री कृष्ण की लीला देखते हैं और कृष्ण लीला से भी ज्यादा लीला आज कल लोग कर रहे है । परमात्मा की दिव्य लीला क्या है ? अगर एक बिजली का बल्ब fit करना हो तो कितनी wiring करनी पड़ती है । उस परमात्मा ने सारे संसार के प्रकाश के लिए सूर्य को fit किया है । इतने बडे संसार को प्रकाश कौन दे सकता

है ? आज के scientist कहते हैं हमने भगवान को हरा दिया है । किन्तु सोचो संसार को light देने के लिए उसने महान सूर्य को कैसे fit किया है । यह बताओ उसके लिए कोई wiring किया है । रात को देखो तो करोडों २ तारा गण बिजली के बल्बों की तरह प्रकाश दे रहे हैं कितनी wiring किया है वहाँ ? यह परमात्मा की दिव्य लीला है । संकल्प से सूर्य वहीं खडा हो गया । वो न इधर जाएगा न उधर जाएगा । इसलिए कहा ' सत्यकामः सत्यसंकल्पः' कहा परमात्मा क्या हैं ? सत्य काम है । सत्य संकल्प हैं । जो इच्छा करेगा वो हो जाएगा । जो संकल्प करेगा वो हो जाएगा । कितना बडा संकल्प है ? एक तारा जो पृथ्वी से बडा है एक बिन्दु जैसा दीखता है । हमको बिन्दु जैसा दीखता हैं तो सोचो कितनी hight पर वो होगा । आज तो विज्ञान इतना उन्नत है कि विज्ञान की सहायता से समझने मे बडी सुविधा है हम लोगों को । कोई २ तारा तो इतनी hight पर ह कि उसका प्रकाश तीन वर्ष मे हमारी पृथ्वी पर पहुंचता है । काश वर्ष का हिसाब है यह । मंत्र कहता है :-

"दिव्यब्रह्मपुरे " इस पृथ्वी पर यह उसकी महिमा है । इस शरीर को श्रुति ब्रह्मपुर कहती है, इसके अन्दर उससे मिलो । वह महान परमात्मा है जो सारे ब्रह्माण्ड का कर्ता हर्ता है । उसको इस शरीर से मिलो । श्रुति ने उसका (Address) पता दिया है तुमको । बुद्धिमान शास्त्र से. गुरु से इस रहस्य को जानकर धीरे २ आगे बढे । मन को लगाते रहो । लोक जीवन मे तो ठीक है, बेटे से मन लगाते हो कभी लडता है कि नहीं । पति से मन लगाते हो, पत्नी से मन लगाते हो । अपने से मन लगाओ । दूसरों से मन लगाओगे तो थोडा सुख और थोडा दुःख मिलेगा । क्या मिला ? खिचडी खिचडी मिलेगी । दाल जुदा भात जुदा बनाया नहीं । एक ही हंडी मे दोनों डाल दिए । खिचडी बन गई । उसमे थोडा घी डाला । पति प्यार भी देगा । पर कभी क्रोध भी कर दिया तो खिचडी बन गई । उसमे राम का घी डालो तो बढिया स्वाद हो जाएगा । इस संसार मे जो कुछ भी मिलेगा खिचडी की तरह मिलेगा । किन्तु अपनीं आत्मा की ओर जब चलोगे तब कोई यहाँ गुस्सा नहीं करेगा ।

श्रुति कहती है दिव्य ब्रह्मपुरे एषः व्योम्नि आत्मा प्रतिष्ठितम् इस शरीर

को श्रुति दिव्य कहती है। यह दिव्य है क्यों ? इसके अन्दर दिव्य तत्त्व का दर्शन होता है, इसलिए यह दिव्य है। 'व्योम्नि आत्मा प्रतिष्ठिता' व्योम्नि माने हृदयाकाश जिसको यहां दहराकाश कहा। इस दहराकाश मे परमात्मा का ध्यान करो। जब यहाँ उसका ध्यान करोगे तो त्राण उस परमात्मा की कृपा से इसका त्राण होगा। रक्षण होगा। इसलिए कहा इसको पाने के लिए ब्रह्मचर्य साधन है। संयमित जीवन जिसेका वह इस ब्रह्मचर्य के द्वारा विन्दते माने प्राप्नोति, प्राप्त करता है। संत्राण शब्द के द्वारा जो यह आत्मा का रक्षण है यही ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य माने ब्रह्म आत्मा तत्प्राप्त्यर्थ व्रतं ब्रह्मचर्य'' इस आत्मा की प्राप्ति के लिए जो व्रत है उसको ब्रह्मचर्य कहते है। इस ब्रह्म को पकडो।

श्रुति कहती है मौनमित्याचक्षते मौन शब्द का प्रयोग किया। मौन माने ध्यानं। उसका ध्यान करो। अब ध्यान जो भी होगा 'निर्गुणस्य सगुणस्य परमात्मना ध्यानं मौनं। सगुण साकार भाव से ध्यान अथवा निर्गुण निराकार भाव से ध्यान। लोग घबरा जाते हैं कोई सगुण कहता है कोई निर्गुण कहता हैं। तत्त्व हैं क्या ? जैसे इस शरीर को ही पकडो। यह शरीर का आकार तुम्हारा आकार हैं। पर उस शरीर के बिना भी तो तुम्हारा कोई स्वरूप है कि नहीं ? तुम्हारे होने से हीं यह शरीर घूम रहा हैं। जैसे यह घडी है, सूई जैसे २ घूम रही है समय दे रही है न। उसी तरह यह शरीर भी इस घडी की तरह घूम रहा है। एक समय यह शरीर कहता है हम बच्चे हैं तो हम बच्चे। बारह बजे कहता हैं हम जवान हो गये। वहाँ पहूँच गये लडका लडकी। धीरे २ कांटा नीचे उतर गया, सायंकाल ७ बज तो बोलते है हम बुढ्ढे हो गये। अब दिन आ रहा हैं रात आ रही है ? क्य हुआ भाई ? यह तो तुम्हारे शरीर का जो (lif time) था वो बदल गया। पर तुम्हारे स्वरूप क्या फर्क पडा ? तुम तो हो न ? तुम कहाँ गये ? बच्चे थे तो भी तुम थे। कुमार थे, तो भी तुम थे। जवान थे तब भी तुम थे। और अब बुढे हुए तब भी तुम हो। तुम्हारा वो स्वरूप निर्गुण निराकार स्वरूप है। वो अमर हैं। उसमे कोई फर्क नहीं। फर्क तो बाहर के स्वरूप मे है।

इसी तरह परमात्मा के सगुण साकार स्वरूप का ध्यान तो केवल मन्द-

बुद्धि मुमुक्षु के लिए है। जिसकी बुद्धि मोटी है। तत्त्व को नहीं पकड रही है तो उसको सगुण साकार स्वरूप का ध्यान बताते है। एक संत थे। एक महाराजा उनके प्रिय भक्त थे। महाराजा कहने लगे जो सबसे बडा देवता है उसकी मूर्ति हमे दो। संत ने अपनी झोली मे से नर्मदेश्वर निकाली और कहा लो राजन् यह सबसे बडा देवता है। राजा बडे आदर से पूजा अर्चना करने लगा। रोज नैवेद्य भी चढाए। एक दिन मूर्ख चूहा कहीं से आया और नर्मदेश्वर के ऊपर चढ कर चावल खाने लगा। राजा ने देखा और कहा अरे बडा देवता तो यही है। बस उस दिन से चूहे को बन्द करके उसकी पूजा करने लगा। भोग भी लगाने लगा। चूहा खूब हट्टा कट्टा हो गया। एक दिन बिल्ली आ गई। बिल्ली ने देखा कि यह तो बढिया भोजन है। बस आई और चूहे को सपेट लिया। राजा ने देखा और अरे बडा देवता तो यह है। बिल्ली को पकड लिला और पूजा होने लगे। बिल्ली भी खूब माल उडाने लगी। बिल्ली को कुत्ते ने झपेट मारी। राजा ने सोचा बडा देवता तो यह है। कुत्ते की पूजा करने लगा। कुत्ता भी मस्ती से से घूमने लगा। एक दिन चौके मे घुस गया। महारानी ने मारा डंडा और भगाया कुत्ते को। राजा ने देखा। बोले सबसे बडा देवता तो हमारी महारानी ही हैं। बस लगा महारानी की पूजा अर्चना करने। महारानी ने भी सोचा कान अपने आप बन गया। बडी प्रसन्न। एक दिन किसी बात पर राजा को गुस्सा आ गया। उसने रानी को भी एक लाफा दिया तो बडा कौन निकला? राजा ने समझा सबसे बडा देवता मैं हीं हुं। लौट कर अपने आप मे पहुंच गया। किन्तु इसके लिए इतना बडा चक्कर खाना पडा। सीधे २ अगर कोई कह देता तो राजा जानता ही नहीं। इसलिए जीव ठोकरे खाता है इधर से उधर घूमता है। कुछ मिलता नहीं।

इस चेतन से परे कोई नहीं। इस चेतन मे अपने मन को स्थिर करता रहे मुमुक्षु। आचार्य कहते है, बेटा देखो। यह जो तेरी ब्राह्मी निष्ठा है इसके द्वारा तुम अपनी आत्मा का ध्यान करो। गुरु से, शास्त्र से इस आत्मा को समझो उसके बाद ध्यान के द्वारा इसको हृदयाकाश मे देखो।

आगे इसीका और व्याख्यान करने वाले हैं।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१७-५-८८

प्रवचन सं०-३९

"ॐ ब्रह्मलोके तृतीयस्यामितो दिवि तदैरंमदीयं सरस्तद श्वत्थः सोमसवनस्तदपराजिता पूर्ब्रह्मणः प्रभुविमितं हिरण्मयम् । ॐ तद्य एवैतावरं च ण्यं चार्णवौ ब्रह्मलोके ब्रह्मचर्येणानुविन्दन्ति तेषामेवैष ब्रह्मलोकस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।।"

(छान्दो. ८-५-३।८-५-४)

श्रुति कहती है बेटा यह सत् चित् आनन्द रूप जो आत्मा है 'अनाशकायनमित्याचक्षते' नाशकायम् जो नाशवान हो । 'अनाशकायम्' जिस का नाश न हो । जिसकी मृत्यु नहीं । बृहदारण्यक श्रुति कहती है :-

'स व एषआत्मा महान् अजःप्राणेषु विज्ञानमयोः ह्येंषोऽन्तरोः हृदयाकाशः सर्वस्य वशी सर्वस्य ईशानः तस्मिन् शेते'

जो अविनाशी आत्मा है, जिसका नाश नहीं होता । अपने अनुभव के लिए समझो कि जन्म से अब तक जितना लम्बा जीवन है । मैं और मेरा दो ही पदार्थ है । मैं के अतिरिक्त मेरा जो है, वह पहला मेरा यह शरीर ही है । बाद मे सब सम्बन्धी हुए । कोई मां है, कोई वाप है, कोई भाई है, आगे २ नाते जुडते चले गये । यह सारे नाते इस 'मेरे' से जुडे हुए है । किन्तु मेरे से कब जुडे ? जब मैं हूँ । यह जो मेरा है । कौन ? यह शरीर । यह शरीर देख रहे हो यह तो रोज रंग बदल रहा है । बच्चा २० वर्ष मे जवान हुआ । रोज परिवर्तन हुआ तब जवान हुआ । एक दिन में तो जवान हुआ नहीं । फिर धीरे २ उसी के दांत हिलने लगे । बुढा होने लगा । फिर साठ के आस पास दादा दादी बन कर बैठ गया । परिवर्तन तो जो वाह्य शरीर है उसी मे हुआ । जो मेरा है । पर यह

वताओ कि 'मैं' में कोई फर्क आया ? जो अन्तरात्मा होकर बैठा है उस मैं में तो कोई फर्क नहीं । तो वो मैं हुआ अनाशकाय वैदिक शब्द है इसलिए 'अनाशकायम' कर दिया । गीता मे तो सीधा कहा 'अविनाशी तु तद्विद्धि' यह अविनाशी है । यह जो अनाशकाय आत्मा है यह शरीर जितना बड़ा नहीं । 'स व एषा महान् अजः आत्मा' मंत्र कहता है कि बेटा वो महान जो है वह तेरी आत्मा है । महान माने व्यापक । 'महान अजः' साथ मे अज शब्द दिया अपने अन्दर जो हम लोग जन्म और मरण को पकड़ कर बैठे हैं । वो जन्म केवल प्रतीति मात्र है । भान मात्र ही है । वास्तव मे जन्म है नहीं । आत्मा को अज कहा माता पिता के शरीर से जिसने अपने को प्रकट किया, वो था तब न उसने अपने को प्रकट किया । अगर वो हो ही नहीं तो मां बाप के शरीर मे कौन सी ताकत है जो किसी को पैदा कर दे ।

एक दुकानदार है । दुकान खोल कर बैठा है । कोई ग्राहक आया ही नहीं तो कितना सौदा बिकेगा ? कोई लेने आएगा तब तो कुछ बिक्री होगी । मां बाप तो दुकानदार है । दुकान खोल कर बैठे हैं किन्तु कोई आया ही नहीं ग्राहक तो क्या सौदा बिकेगा । सवेरे से सायंकाल तक कोई आया ही नहीं ।सवेरे से सायंकाल तक समझ लो life time पूरा जीवन अच्छा ही करते रहते है कि हमारे घर मे कोई आत्मा आवे पर कोई आया ही नहीं । माल तब बिकेगा जब कोई लेने वाला आएगा लेने वाला कोई आया ही नहीं तो कुछ बिका । रखे रखे सारा माल खराब हो गया । सड़ गया । इस तरह यहाँ समझो जो तुम्हारे से जन्म ले रहा है वह वास्तव मे जन्म नहीं ले रहा । वो अपने इस शरीर को यहाँ तैयार करवा रहा है । तुमने कहा यहां रहना पडेगा । उसने कहा ठीक है । तुम्हारी अज्ञा का पालन किया उसने । आज कल dress भी ऐसे ही चले हुए है फिल्मी । उसने कहा ऐसा dress बनाओ कि कोई सल नही पड़े । tailor बडा होशियार, बोला dress तो बन जाएगा ऐसा पर तुम्हारे ऊपर ही रख कर सीना पडेगा । जुदा सीएंगे तो मुश्किल पडेंगी । नाप लिया और उसको खड़ा कर के dress बनाया । माता पिता को तो tailor समझो । मां बडा tailor है । उसने कहा तुम यही बैठे रहो मैं तुम्हारे ऊपर ही dress सी देती हूँ । dress सिल गया तो कहा जाओ अब । चला आया बाहर । लगा रोने म्याऊँ

म्याऊँ तो लौट कर वही कहती है रोता क्यों है मैं तेरी मम्मी हूँ। मैं तेरा डैडी हूँ। यह जन्म है।

इस तरह यह आत्मा अज है। इस का जन्म नही हुआ। शरीर का जन्म हुआ। तुम्हारा स्वरूप जैसे का तैसा। इस बात को भगवान कृष्ण अर्जुन को भी समझाते है :-

न जायते म्रियते व कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।

अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्य मानेशरीरे ॥

इसका न जन्म है, न मरण है। भूत्वा भविता वा न भूयः एक बार का ही जन्म नहीं तो दुबारा जन्म कहाँ है। 'अजो नित्यः' यह अज है। अज माने जन्म से रहित है। जन्म का साक्षी जन्म से रहित है। सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है। उसकी कृपा से यह शरीर सत् मालूम पड़ता है। उनने अपने को अलग किया तो शरीर असत् मालूम पड़ा। असत् माने मुर्दा। फिर मुर्दे को कोई रखेगा घर मे ? यहाँ तो मरने के लिए पशुपतिनाथ के द्वार पर जाओ। वो भूतनाथ कहते हैं कि यहाँ आ जाओ। 'न हन्यते हन्यमाने शरीरे' इस शरीर को भले ही कोई मारे किन्तु आत्मा न हन्यते। इस आत्मा को कोई हनन नही कर सकता यह आत्मा अज है। 'यो ऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु' आत्मा के स्वरूप का वर्णन कर रही है श्रुति। प्राणों मे जो विज्ञानमय है। प्राण शब्द का अर्थ केवल मुँह से निकलने वाली हवा ही नहीं। यह सारी इन्द्रियाँ भी प्राण ही हैं। क्योंकि प्राण के बल से इनकी गति हो रही है। इसलिए सब इन्द्रियों को भी प्राण कह रहे हैं। प्राण बन्द हो गया तो आंख कैसे देखेगी ? कान कैसे सुनेगा ? वाणी कैसे बोलेगी ? प्राण अभी यहीं है किन्तु अन्दर की light off हो गई। जैसे निद्रा में ही देखो सो गये। प्राण तो चला रहा है पर आंख नहीं देखेगी। कान नहीं सुनेगा। वाणी नही बोलेगी। सब बन्द। और जब प्राण बन्द हो गये तब तो कहना ही क्या ? तब तो कुछ भी नहीं। यह तुम्हारी जो अन्तरात्मा है उसके स्वरूप का व्याख्यान करती है श्रुति। यह विज्ञान स्वरूप है 'य एषोऽन्तर हृदयाकाशः। उस आत्मा को कहाँ मिलो ? श्रुति इसका पता बता रही है किसी मित्र से मिलना हो तो उसके घर जाना पड़ेगा या उसको अपना घर बुलाना पड़ेगा। दो ही रास्ते हैं।

उसके घर मिलने जाग्रोगे तो उसका Address लेना पडेगा । उसको मिलने के लिए बुलाग्रोगे तो उसको ग्रपना Address बताना पडेगा । ग्रपना कहाँ का Adderss दोगे ? विचार करो, यह Address जिसको याद कर के रखा है, तह तुम्हारा Address है या पडोसी का ? यह Addrss तो तुम्हारे पडोसी का है । तुम्हारे ग्रागे पीछे चलने वाले नौकर का है । मालिक ग्रगर नौकर का Address दे दे तो उसको क्या कहोगे ? मिलने वाला कहाँ पहुंचेगा ? नौकर के घर । तो कहेगा कि इसका दिमाग गड़बड है । इसका ग्रपना कोई Address नही जो नौकर का Address दिया है । यह दूसरे के पते पर कब तक रहोगे । विचार करो नौकर का यह Address भी कब तक रहेगा ? कहीं नौकर ने कहा कि मैं service छोड कर जा रहा हूँ तो कौन सा Address रहेगा ।

तुम्हारा जीवन ग्रनादि ग्रनन्त है । उस ग्रनादि ग्रनन्त विशाल जीवन मे सौ पचास वर्ष का जीवन क्या है । जैसे मच्छर का जीवन है । तुम्हारी ग्रायु को देखो ग्रौर मच्छर की ग्रायु को देखो । इस तरह ग्रात्मा के ग्रनादि ग्रनन्त जीवन मे इस शरीर के थोडे जीवन को मान लिया । ग्रनादि । कब से हम हैं, कुछ पता नहीं । ग्रनन्त कब तक हम रहेंगे ? कुछ पता नहीं । तो जो ग्रनादि ग्रनन्त स्वरूप ग्रात्मा है उस मे हम इस छोटे से जीवन को महत्त्व दे देते हैं ।

ग्रपना Address ग्रपने से मिलने का नहीं । इसलिए श्रुति कहती है 'तस्मिन्शेयेते' हृदयाकाश तस्मिन् शेयेते' वह हृदयाकाश: जो है उसमे सोया पडा है । क्या सोया पडा है ? ग्रौर सब तो सोने वाले हैं ग्रात्मा भी यदि सो जाएगा तो जगेगा कौन ? ग्रपने ग्रनुभव के लिए समझो जब इन्द्रियाँ सो गई तो मुँह बन्द कान बन्द ग्रांख बन्द । काला पीला गया. खट्टा मीठा गया । किन्तु मन नही सोया तो स्वप्न हो गया । स्वप्न कीं जगत मे एक मन ही सब इन्द्रियाँ का काम कर रहा है । कोई २ नौकर ऐसा भी होता है जो पांच ग्रादमियों का काम ग्रकेले ही कर लेता है । पहलवान है । इसी तरह यह तुम्हारा मन हैं । जाग्रत मे जो काम पांच ज्ञानेन्द्रिया करती है स्वप्न मे वह मन ग्रकेला ही कर लेता है । जब काम करते २ यह मन भी थक गया तो बोला मेरे को छुट्टी दो । मिल गई छुट्टी ग्रौर चला गया गाढ निद्रा मे । दो, तीन, चार घण्टे बडे मजे की नींद ग्राई ।

जगा तो कहता है बडे आराम से सोया कुछ भी नही समझे । बड़े मजे की नींद आई ।

सोचो जो यह कह रहा है वो सोया हुआ है कि जगा हुआ ? बडे मजे की नींद आई तो कह रहा है कुछ नहीं समझा । कुछ नहीं समझे तो 'आनन्द आया' इस को समझे और 'कुछ नहीं समझा' यह समझे । अज्ञान को समझे । इसका मतलब कि आप सोये नहीं । सोचो आप कब सोये ? जाग्रत मे आप के जागने से जाग्रत का जगत, स्वप्न मे आपके मन के खेल से ही सारा खेल । सुषुप्ति मे भी आप जाग रहे है तो सुषुप्ति के आनन्द का रसास्वादन कर रहे है तो आप का सोना कब हुआ । यह जो आत्मा है सत् चित् आनन्द स्वरूप अन्तरात्मा, उस की निद्रा नहीं । निद्रा तो labour party की है । यह इन्द्रिय गण labour party है । इस शरीर को कारखाना समझो । काम चलता रहा । इन्द्रियाँ काम करती रही । इन्द्रियाँ सो गई factory बन्द हो गई । हिसाब किताब के लिए मुनीम जागता रहा । मुनीम कौन ? यह मन । जब मुनीम भी चला गया तो सेठ तो बैठा ही है । वो सोया है क्या ? वह देख रहा है कि फैक्टरी बन्द है कोई काम करने वाला नहीं । इस का मतलब यह हुआ कि तुम्हारे मे निद्रा नहीं । इसलिए उपनिषद का मंत्र है 'सकृद्विभातो एष ब्रह्मलोक:' एष ब्रह्मलोक: सकृद्विभात: माने यह सदा प्रकाशमान है । इस मे निद्रा नहीं निद्रा इसके नीचे २ ही है ।

'एषोऽन्तर: हृदयाकाश: तस्मिन् शयेते' शयेते शब्द का अर्थ है यह हृदयाकाश है इसके अन्दर मन । मन मे पहुंच कर जीवात्मा ने अहंकार कर लिया अह अहं । यहीं सोना है । अपने स्वरूप को भूल जाना ही सोना है । मन को पकड लेना ही सोना है । अब इस मन मे जीव भाव है । आभास युक्त जो मन है यह जीव है । इस आभास मन का ही जन्म मरण है । मन ने इस शरीर को छोड दिया तो मरण । मन से इस शरीर को पकड लिया तो जन्म । यद्यपि मन न मरा न जन्मा । यह माया का पुत्र है । इस का भी जन्म मरग नहीं है । शरीर का पकडना और छोडना यह जन्म मरण का आरोप है । आरोप उसको कहते हैं जो वस्तु दीखे पर होवे नहीं । रस्सी है । सर्प का आरोप हुआ । सर्प भासने लगा ।

किन्तु दीखने पर भी सर्प है नही । यहाँ हृदय मे आभास आया । उस आभास मन मे जिसका आभास आया उसमे जीवभाव का आरोप । साक्षी आत्मा मे जीवपने का आरोप। मैं संसारी हूँ । मैं कर्त्ता हूँ मैं भोक्ता हूँ । यह कर्त्ता भोक्ता सब मन के अन्दर है । उस के अन्दर नहीं । श्रुति कहती है 'सर्वस्य वशी' सब उस के वश में है । यह श्रुतियाँ कल्पना नहीं करती । अपने अनुभव मे समझो । यह शरीर है, आत्म के वश मे है तब तक रोटी खाएगा, पानी पीएगा । जहाँ आत्मा से जुदा हुआ तब यह कुछ खाने वाला है ? कोई बेटा बेटी कहेगा ? सब कहेंगे मुर्दा पडा है । माने जिसको बेटा बेटी कहते थे वो अब चला गया । इसलिए मंत्र कहता है 'सर्वस्यवशी' सब इसके वश मे है ।

तो जिसके बस मे सब है वो बडा कि छोटा ? जैसे लोक जीवन मे देखो । राजा के वश मे प्रजा होती । राजा ही सब से बडा है । विरोधी को सजा भी देगा । राजा को अधिकार है कि वह किसी को कैद भी करे । यहाँ कौन सी जेल ? यह जन्म मरण ही जेल नहीं तो और क्या है ? कैदी को जेल मे कब तक रखा जाता है ? जब तक सजा खत्म नहीं हो । सजा लम्बी होगी तो पडा है बेचारा । एक दिन कैदी बोल पडा मेरी जेल बदल दो । जब कैदी को उस जेल मे से उस जेल मे भेजेंगे तो साथ मे policeman होंगे । अगर पुलिस मैन नहीं होंगें तो कैदी भाग जाएगा । इसी तरह यहाँ भी समझो । एक शरीर से दूसरे शरीर मे जाना क्या ह ? जैल बदलना है । यह पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ पंच प्राण, मन और बुद्धि, यह तुम्हारे पहरेदार है । तुम्हारे साथ रहते है । यह सत्रह पुलिस मैन है । यह तुम्हे खाना दाना देते है । तुम चाहो कि हम भाग जाएं तो यह तुम्हें भागने नहीं देंगे । अब यहाँ से यदि कहोगे कि हमें दूसरी जगह भेज दो, अच्छे climate वाली जगह मे भेज दो । तो उसने तुम्हें मानव भूमि मे भेज दिया । मानव भूमि माने मनुष्य शरीर । यहाँ कोका कोला पीने को मिला । अच्छा climate मिला । गधे को कौन कोका कोला पिलाएगा । किन्तु पुलिस मैन ने छोड़ा नहीं । यहाँ यदि अच्छी तरह से रहेगा, यहाँ बुद्धि को शुद्ध करता है, मन को शुद्ध करता है तो जैसे २ इसका मन बुद्धि शुद्ध होता जाएगा वैसे २ इसकी कैद की अवधि कम होगी । जैसे कैदी की सजा में कमी की जाती है । अगर इसने completely शुद्ध करके मोक्ष प्राप्त कर लिया तो पूरी सजा

माफ हो गई । एष: मोक्ष: । सत्रह पुलिस मैन और पीछे कारण शरीर भी छोड देगा । अब यह मुक्त हो जाएगा । कैद से बाहर हो गया । मोक्ष मे चला गया । अब कहीं आना जाना नहीं । न तस्य प्राणा: उत्क्रामति । अब इस का प्राण कहीं जाएगा नहीं । यहाँ ही प्राण मे प्राण लीन हो जाएगा ।

ईशावास्योपनिषद् का मंत्र है :-

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।
ॐ क्रतोस्मर कृतं स्मर कृतं स्मर ।।

एक ऋषि शरीर को छोड़ता है । यह ब्रह्मवेत्ता है । प्रार्थना करता है कि यह मेरा वायु तो है यह बाहर के वायु से मिल जाए । यह वायु अमृत है । इसकी कृपा से ही यह सारा विश्व जी रहा है । अगर यह बिगडा तो बाकी कुछ नहीं बचेगा । सारा प्राणी जगत नष्ट हो जाएगा वैज्ञानिकों के सामने आज यह प्रश्न है कि आज जो हम बडे २ बमों का परीक्षण कर रहे है, इनसे वायुमडल विगडें नहीं । यह समष्टि जीवन है इसको बिगाडने का किसी को अधिकार नहीं । जो इसको बिगाडेंगा वह बडा पापी होगा। 'अथेदं भस्मांतम् इदं शरीरं' यह शरीर अग्नि मे भस्म हो जाए । मंत्र कहता है 'एष हृदयाकाश सर्वस्य ईशान: सर्वस्व अधिपति:' यह सब उसके वश से है । सबका शासक है । सारा जगत उसके शासन में है । सबका ईश्वर है सबका स्वामी है । जितने भी शरीर हैं वो सबका अधिपति है । यह सब शरीर उसकी महिमा मे ही जी रहे है उसके बिना किसी शरीर का कोई जीवन नहीं । आत्मा के बिना किसीं शरीर को वोलो तो कुछ खा ले । वह कुछ खाने वाला नहीं । ऐसी वो तुम्हारी आत्मा है । उस आत्मा से मिलने के लिए कहा है 'तद्ब्रह्मचर्येण एतमात्मानमनुविन्दते' यह ब्रह्मचर्य नाम का जो व्रत है इससे तुम्हारा शरीर बलवान होगा, इन्द्रियां बलवान होगी । तुम्हारा मन बलवान होगा । तुम्हारा मन आत्मा की ओर जाएगा ।

ऐसा जो मुमुक्षु होगा, जो इस महान व्रत को पकड कर उस आत्मा की ओर बढेगा उसकी आत्मा के लिए कहा 'न नश्यति' न मृत्यु: पश्यति । वो आत्मा मृत्यु को नहीं देखेगा । एक तो स्वयं मरता है और एक मरने वाले को बडा २

देखता है । जो मरने वाले को देख रहा है, कहते हैं उसको त्रास होता है । यदि ऐसा मेरे साथ होगा तो क्या होगा ? मरने वाला शरीर देखने वाला आत्मा । आत्मा स्वयं तो नहीं मरता किन्तु मरने वाले शरीर को खडा २ देख रहा है और सोचता है बाप रे बाप, ऐसा अगर मेरे साथ हो तो क्या होगा । जब मैं शरीर से जुदा हूं आत्मा को जान जाएगा, जब आत्म तत्त्व का बोध हो जाएगा तो समझ लेगा कि यह अभी तक मुर्दा ही था । मुर्दा ही अभी तक तुम्हारी सेवा कर रहा था । उसीलिए शिव जी को भूतनाथ कहते हैं । लोग श्मशान घाट पर रहने वाले शिव को भूतनाथ समझते है । श्मशान घाट क्या है । जहाँ मुर्दे जलें । तो यह सारी पृथ्वी ही श्मशानघाट है । देखते नहीं शरीर का क्या हाल हुआ है । सूर्य की अग्नि से सब जल रहे हैं । बच्चा था, बच्चा नहीं रहा । जवान था जवान नहीं रहा । लकडा जैसे २ जलता जाता है सिकुड़ता जाता है ।

बुढ्ढा क्या होना ? सिकुड़ना । सूर्य की अग्नि से लकडा जल रहा है । भूतनाथ से जुदा कर के देखो । यह तो भूतनाथ अन्दर बैठा है इसलिए लकड़ा जल रहा है । मुर्दे तुम्हारे नौकर है मुर्दा होने पर भी मुर्दे दीखते नहीं । बताओ यह मुर्दे सिद्ध है कि मालिक सिद्ध है ? मुर्दे पानी भर रहे है । रोटियाँ बना रहे हैं । खा भी मुर्दे रहे है । कमा भी मुर्दे ही रहे है । मालिक ही सिद्ध है तुम्हारी आत्मा । मालिक के सामने रहते हुए ही काम करते है । कुछ लोग मालिक के सामने रहने पर ही काम करते हैं । अगर मालिक नहीं तो नौकर सीढी के नीचे बीडी पीएगा । सेठ था । बढिया डनलप का गद्दा लगा था । पहले जमाने मे मखमल के गद्दे होते थे । यहाँ पाँव रखो और फिसल कर वहाँ जाए । सेठ इस पलंग पर रोज सोता था । नौकर लोचता कि इसको कितना मजा आता होगा । एक दिन सेठ कहीं बाहर गया हुआ था । नौकर उस गद्दे पर तान कर सो गया । सेठ आया तो देखा कि नौकर पलंग पर सो रहा है ।

इसी तरह यह नौकर है तुम्हारे, सेठ के पलंग पर सोते है । सेठ के होने पर खाते है । मंत्र कहता है 'तस्मात् अरण्यायनमित्याचक्षते ब्रह्मचर्यमेव तदरश्च ह वै ण्यश्चार्णवौ ब्रह्मलोके' इस विद्या को अरण्य विद्या भी कहते है । पुराने जमाने में ऋषिलोक जंगलों मे रह कर इस विद्या का अनुशीलन करते थे औ

जिज्ञासु भक्त जो होते थे, उनको देते थे । इस अरण्यक विद्या को धारण करने का साधन भी ब्रह्मचर्य है ।

इस अंश को अब कल पर छोड़ दें तो ठीक होगा ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१८-५-८८

प्रवचन सं० ४०

"ॐ तद्य एवैतावरं च ण्यं चार्णवौ ब्रह्मलोके ब्रह्मचर्येणानुविन्दन्ति तेषामेवैष ब्रह्मलोकस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।।"

(छान्दो८-५=४)

यह विचार ऐसा आया है, दूसरे शब्द मे इस विचार को समाधि भाषा कहते है । समाधि वह है कि शब्द तो कुछ हो और उसका कुछ हो । केवल शब्द के सहारे उस अर्थ तक पहुंचना बहुत मुश्किल हो जाता है । उस गूढ़ भाषा का नाम है समाधि भाषा । यहाँ मंत्र इस बात को कहता है कि बेटा यह अनाशकाय क्या है ? अनाशकाय शब्द का अर्थ । नाशकाय माने नाश होने वाला । अनाश-

कायम माने जिसका नाश न हो ऐसा स्वरूप। नाश न होने वाला जो स्वरूप है वह है ब्रह्म। यह ब्रह्म ही ब्रह्मचर्यमेव जो विवेकी मुमुक्षु अपने जीवन मे संयम के व्रत को धारण करता है वो अनाशकाय पद को पा लेता है। आचार्य इसकी व्याख्या करते है'ज्ञानाद्यज्ञः एषणादिष्ट सतस्त्राणात्सत्त्रायणं,मननात्मौनं अनाशकाद-नाशकायनं' ज्ञान से यज्ञ। यज्ञादि जो श्रेष्ठ कर्म है वह ज्ञान के बिना नहीं कर सकते। जो प्रत्यक्ष दर्शी है, प्रत्यक्ष दर्शी माने प्रत्यक्ष पदार्थ मे भोग बुद्धि वाला जो आदमी है वो उस कर्म को नहीं कर सकता। यज्ञादि कर्म जो माने गये है यह किसी प्रत्यक्ष कर्म के फल नही है। प्रत्यक्ष भोग के दाता नही। 'एषणादिष्टं एषगात इष्टं, एषणा माने इच्छा। इस जीव के अन्दर बहुत सी इच्छाएँ बैठी हैं। कौन सी इच्छा है जिसके द्वारा इष्ट की सिद्धि होवे। इष्ट का अर्थ है, प्रिय की सिद्धि। तो प्रिय की सिद्धि डाकू भी करता है। जब वह घर से चोरी करने निकलता है तो उसकी क्या इच्छा होती है कि मैं चोरी करने में सफल हो जाऊँ। पर वो इष्ट नहीं। उसको अनिष्ट कहते हैं। वह देखने में इष्ट भले ही लगे पर वह इष्ट कर्म नहीं। वो अनिष्ट कर्म है। जो आगे चल कर पिटाई करने वाला है वह इष्ट नहीं।

एक बिजनैस मैन जेब का पैसा बाजार से फैंकता है और उसके द्वारा जो मिलता है, उसमे कई हिस्सेदार होते है, हमारे जीवन मे एक-partner थोड़े ही है, कई हिस्सेदार है अपने जीवन मे सीधा सोचो तो बड़े भागीदार हैं। आज कल तो विना Partner के Buisness भी नहीं चलता। तो एक तो है परिवार का हिस्सा हमारे जीवन मे, समाज का हिस्सा हमारे जीवन मे, राष्ट्र का हिस्सा हमारे जीवन में, यह सब हिस्सेदार है। एक आदमी काम करता है और हाथ लटका कर घर आ जाए तो घरवाली कहती है यह घर है या धर्मशाला। हाथ लटका कर आ गये हो कुछ लेकर आओ। monthly जो मिलता है वो घर मे दो तो प्यार मिलेगा घर मे। यह दाल रोटी भात जो लोग खाते है यह तो पशु श्रेणी का भोजन है। उसी पौधे से पशु घास खाता है, उसी से हमारा दाल भात बनता है। आगे का हिस्सा मनुष्य का पीछे का हिस्सा पशु का। यह भोजन हमारा भोजन नहीं। मनुष्य का भोजन प्यार है, मनुष्य का भोजत निर्भयता है, मनुष्य का भोजन शान्ति है, मनुष्य का भोजन मान। चार चीजे थाली

मे आ गया। प्यार तुमको घर ही देगा। घर तुमको प्यारा लगता है जब घरवाली प्यार से बोले। बेटा बेटी पति पत्नी सब प्यार देंगे। कोई जांघ से लिपट जाए कोई गले से, तो घर मे सुख। घर में पैर रखते अगर घरवाली tigress की तरह पीछे पड़ जाए तब। कहेगा बाप रे बाप इस घर से तो श्मशान ही अच्छा है वहाँ शान्ति तो मिलेगी। घर तब ही प्यारा लगता है जब घर वाले अपना दुःख छिपा कर तुमको खुशी दें। बच्चे तुमको खुशी देते है। माता पिता हों तो वो भी खुशी देते है। यह प्यार घर मे ही मिलता है बाहर का प्यार दिखावे का होता है। तुम प्यार करोगे तो वह भी प्यार करेंगे। किन्तु घर वाले तो तुम गुस्सा भी करोगे तो भी प्यार ही देंगे।

दूसरा भोजन मान है। यह मान घर नही देगा। बेटा कितना भी बड़ा आफिसर बन जाए पर मां बेटे को मान नहीं देगी। पिता बेटे को मान नहीं देगा। वो तो Blessing देंगे। प्यार देंगे। मान तुमको समाज देगा। तुम कहो कि माता पिता मान दें तो कैसे दगे। मान तो समाज ही देता है। माला पहनाएँगे स्वागत करेंगे तो मे तुमको समाज को कुछ देना पडेगा। ऐसा मत सोचो कि हम कुछ रुपया कमा कर देंगे हाँ कभी उसकी भी जरूरत पड सकती है किसी सामूहिक काम के लिए। समाज को इतिहास चाहिए। उस इतिहास को जो व्यक्ति देगा समाज उस आदमी को मान देगा। इतिहास से जाति बड़ी होती है। समाज बड़ा होता है, राष्ट्र बड़ा होता है। जाति मान देती है जो जाति को इतिहास देता है। हिन्दु जाति का जो भूत काल का इतिहास है, सारा विश्व उस की धाक मानता है। यह ठीक है कि उसमे गिरावट भी आई लेकिन फिर भी तुम्हारा इतिहास, तुम्हारा ज्ञान बड़ा है। अगर कोई व्यक्ति ऐसा कर्म करे जिससे समाज कलंकित हो, वह यदि करोडों रुपये भी कमाता है तो कोई लाभ नहीं। उसके कर्म से समाज का मान बढना चाहिए। world के किसी भी कोने मे जाओ, अभी भी यही सुनने को मिलता है कि गोरखा शूरवीर है, गोरखा ईमानदार है। गोरखा शब्द का कितना मान है। क्या है यह ? हमने तो नही कमाया इस मान को। वो तो कमाने वाले कमा गये। किन्तु उसमान से हम अपने को सम्मानित समझते है। यह इतिहास है जाति का।

तुम्हारा तीसरा भोजन शान्ति है। यह शान्ति तुमको राष्ट्र देता है।

राष्ट्र तुमको शान्ति की नींद देता है । दो दिन नींद नहीं आवे तो जैसे वो बैंगन का मरता होता है न, वो हाल हो जाता है । शान्ति से नींद आ गई तो और क्या चाहिए ? रात की नींद खराब नहीं होनी चाहिए । रात्रि को नींद निर्भयता से आती है । अगर भय लगा रहा कि घर मे कोई चोर आ जावेगा, कोई डाकू आ जाएगा, कोई आतंकवादी आ जाएगा, तो नींद कैसे आएगी ? राष्ट्र ने तुम्हारे लिए पुलिस रखी है, मिलिट्री रखी है कि तुम निर्भय होकर रह सको । उसकी एवज मे राष्ट्र हमसे लेता भी है । tex लेती है न गवर्नमैंट । राष्ट्र के लिए राष्ट्र का हिस्सा राष्ट्र को देना पड़ता है क्योंकि राष्ट्र हम को निर्भयता देता है । प्यार निर्भयता शान्ति और मान यही तुम्हारा भोजन है इतने मे तुम्हारी life चल रही है । इतने मे तुम जी रहे हो । किन्तु जीना तो शरीर की आयु तक ही है ।

गाड़ी चली हमरी, चलते २ आगे हिमालय आ गया तो क्या करोगे ? गाड़ी छोड़नी पडेगी । गाडी से उतना पडेगा । यह शरीर क्या है ? यह भी गाडी ही है । चलते २ स्टेशन पास आ गया । गाडी की speed कम हो गई । यह बुढापा क्या है ? speed कम हो गई अब उतरने का स्टेशन आ रहा है । अब मन मे चिन्तामय । हाय अब क्या होगा ? कहाँ जाएँगे ? इसका उत्तर कौन देगा ? इस का उत्तर न परिवार देगा, न समाज देगा, न राष्ट्र देगा । इसका उत्तर धर्म देगा । इसलिए हाथ को धर्माचार मे रखा जाता है । जब हम सत् कर्म करते हैं । असल मे धर्म क्या है ? जो हमको धारण करे वो धर्म है । उस धर्म को जानने के लिए सत्सङ्ग है, शास्त्र है, बुद्धिमान आचार्य है । जैसे यह शरीर है। इसको देखो और इससे पूछो प्यारे दोस्त तेरे को बढिया से बढिया खाने को देते हैं, बढिया बंगले मे रखते है, बढिया वस्त्र पहनाते है । इतना होने से ही तुम जी सकोगे ? अगर आत्मा नहीं होगी तो इन सब चीजो के होने पर भी नहीं जीएगा । तो सोचो इस शरीर को धारण किस ने किया है ? न तो अन्न ने किया न वस्त्र ने किया । अन्न ने बल दिया । वस्त्र ने ठंडी दूर किया । घर ने बैठने की जगह दिया । किन्तु बैठने वाला होगा तब न बैठेगा । बैठने वाला है नहीं होगा तो बैठेगा कौन ?

धर्म का लक्ष्य आत्मा है । यहाँ पहुँचना है । उस आत्मा मे पहुँचने के

लिए यह ब्रह्म विद्या है। यह उपनिषद् विद्या सत्य विद्या है। इसलिए समाधि भाषा कहा। कभी २ सुनते २ समझ मे नही आता तो श्रद्धा ही पकड़नी पड़ेगी। यह ब्रह्माण्ड अनन्त है। जिस ब्रह्माण्ड मे हम रहते है यहाँ श्रुति ब्रह्मलोक का इतिहास तुम्हारे सामने रख रही है कि वहां तुमको जाना है। ब्रह्मलोक के बारे मे हम भी निश्चित नहीं है। उसके लिए श्रद्धा को ही पकड़ना पडेगा। कोई उपाय नहीं है। ऋग्वेद मे एक मंत्र आता है ऋषि प्रार्थना करते हैं। 'श्रद्धां प्रातः ह वा महे श्रद्धां मध्यदिनं, श्रद्धाँ सूर्य स्निमृति श्रद्धे श्रद्धः पेयहनः' ऋषि कहता है कि प्रातः काल हम बैठ कर जोर सध्योपासना करते है, यह क्या है? कहते है हम श्रद्धा देवी को बुलाते है। वो श्रद्धा हमारे अन्दर आवे। यु श्रद्धा शब्द, सत्य का ध्यान करने वाली वृत्ति का नाम को पकडे, झूठ को छोडे। आत्मा की शकल कौन सी? काला, गोरा, पीला। यह कल्पना करोगे तो कोई भी शकल उसकी नहीं। हाँ सारी शकलें उसी मे जीती हैं। यह श्रद्धा से पकड़ना पडेगा। श्रद्धा चित्त का सोमरस है। श्रद्धा रहित हृदय उस पेड के समान है जो अन्दर मे सूख गया है पर बाहर से हरा दीखता है। एक पेड़ होता है बडे जंगल मे जो ऊपर से हरा दीखता है पर अन्दर सूखा होता है। इसी तरह जिस आदमी के अन्दर इस अति जीवन को जानने की श्रद्धा नहीं है वह उस सूखे पेड़ जैसा है। ऋषि कहता है श्रद्धे, हमको श्रद्धाशील बनाओ। तब हम उस मूल को, उस गूढ़ रहस्य को पा सकेंगे। गीता में भगवान कहते हैं श्रद्धावान् लभते ज्ञानं, तत्परः संयतेन्द्रियः, ज्ञानं लब्ध्वापरां शान्ति नचिरेणाधि गच्छति।' श्रद्धावान मुमुक्षु ज्ञान को पाता और तत्परा संयतेन्द्रिया वो तत्पर भी होता है। जिस चीज को हम अच्छा समझते हैं उसको पाने मे तत्पर हो जाते हैं। वो हमको मिलनी चाहिए। जिस चीज को हम अच्छा नहीं समझते उस चीज को हम अपने से दूर कर देते है। यह संसार का नियम है। तो जीवन मे सोचो, आत्मा के बिना कौन प्यारा है। चेतन आत्मा जिसको छोड़ देवे, बेटा बेटी, पति पत्नी, भाई बन्धु जितने भी सम्बन्ध हैं, आत्मा के बिना हमारा कोई प्यारा नहीं। उस आत्मा का स्वरूप क्या है? यह भी तो जानना ही पडेगा। उसको समझना ही पडेगा। उसके बिना कुछ नहीं होगा। ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधि गच्छति।' ज्ञान प्राप्त कर के वो अचिरेण' माने तत्काल, शान्ति प्राप्त कर लेता है। पर शान्ति पाने के लिए यदि हम धर्म को ही लक्ष्य मान कर उधर चल पडेंगे तो शान्ति मिलेगी।

परिवार समाज राष्ट्र और धर्म। धर्म तुमको आत्म शान्ति देगा। थाली मे यदि पांच रोटी आई तो तुम्हारी कितनी रोटी है? केवल एक, एक राष्ट्र का एक धर्म का। बाकी कितनी बची? पुण्यात्मा वह है जो केवल अपना हिस्सा ले। सबका हिस्सा चुका कर बैठें हो। पापी वह जो सबका हिस्सा हड़प कर बैठ जाए और पापी को सींग पूछ थोडे ही लगी है। Scientificaly जीवन का निश्चय करो तो तुम्हें पाप नहीं लगेगा।

आचार्य भाष्य करते है 'एषणात् इष्टं ज्ञानात् ज्ञानं सत्रायणात् सत्रायणं। यह शरीर क्या है? यह सत्रायण है। सत् माने आत्मा। इस आत्मा की जन्म से रक्षा का एक मात्र साधन यह मनुष्य शरीर ही है। इस मनुष्य शरीर मे ही तुम को सत्सङ्ग मिलेगा, शास्त्र मिलेगा, बुद्धिमान आचार्य मिलेगा। पशु तो घास ही खाएँगे। सूखे या हरे घास के अतिरिक्त उनको क्या मिलने वाला है। हम उसका दूध निकालेंगे और उसको छोड़ देंगे। उनको ऐसे ही जीना है किन्तु इस मनुष्य के लिए तो बडे साधन है आत्मा के त्राण करने के लिए। 'मननात् मौनात् मौनं अनशनात् अनशकायनं।' यहाँ आचार्य कहते है अशन माने भोजन करना, अनशनात् माने भोजन न करना। भोजन न करने पर भी तुम्हारा जो चित्त है वो स्थिर रहे, उसको कहते है 'अनशनकायनं अमुक समय तक प्रकृति हमारे शरीर को बल देती है। बच्चे को पच्चीस वर्ष तक प्रकृति बढने देती है। जिता लम्बा होना होता है उतना लम्बा हो जाता है। उसके बाद प्रकृति उसको कील देती है। इसी तरह पचास वर्ष तक यदि बढता जाए तो कम से कम 15 20 फुट लम्बा तो हो ही ज़ाएगा। तो सोचो 5, 6 फुट के लिए तो bed और bed room की समस्या है। कितना खर्चा बढ जाएगा लोग कहते है भगवान हमको क्या देता है? भगवान छिपा कर देता है। दुनियाँ दिखा कर देती है।

एक फौजी रहा। कैप्टन हो गया था। पहली बार घर आया। रोटी खिलाने मां बैठती रही। बढिया गेहूँ का फुल्का बना कर दे। आज कल तो गेहुँ भी अच्छा नहीं मिलता। खूब घी डाल दे। अपनी परम्परा मे तो घी दूध ही बढिया भोजन है। मम्मी बहुत अच्छी है। एक दिन मां किसी काम मे फंस गई उसमे बहु को कहा कि तू अपने पति को खिला दे। बहु बेचारी क्या करे ? सासु

ने कहा तो खिलाना तो पडेगा ही उसने फुलका बनाया । घी उसके अन्दर ही डाल दिया जिससे कोई देखे नहीं । इस तरह उसने फुलका बना कर दिया । कहता है इससे तो मां ही अच्छी है । फुलका तोड़ा तो देखा अन्दर घी । बोला तुम तो मां से भी अच्छी हो । छिपा कर खिलाती हो । मां दिखा कर खिलाती है । यहाँ कहते है 'अनशकायम्' 25 वर्ष तक लम्बा चौड़ा हुआ । पचास वर्ष तक नीचे उतरने लग जाता है । 25 वर्ष तक प्रवृत्ति हुई । 25 से 40 वर्ष तक life स्थिर हुई । 40 से ऊपर धीरे २ नीचे उतरने लगता है । 15 वर्ष तक जवानी स्थिर रही । उतने समय तक बेटा बेटी जवान हो जाते हैं । 50 तक आते २ जीवन नीचे उतरा ।

प्राचीन काल मे यह नियम था । वैदिक सनातन धर्म में 'अरण्येर्गमन अरण्यायनमित्वा महते पुरुषार्थ साधने' जीवन मे प्रवृत्ति भी करो और निवृत्ति भी। बच्चा कटोरी भर दूध पीता है तो भी तन कर चलता है और बुढा आधा किलो भी पीले तो भी ढीला ही रहेगा । बुढा बुढ्ढी खाने पीने मे तो कसर नहीं रखते। किन्तु wastage ज्यादा निकल जाता है । थोडा सा अंश शरीर को मिला । इसका मतलब यह हुआ कि प्रकृति अब तुमको निवृत्ति की ओर ले जा रही है । जितना बल देना था दे दिया । धीरे २ अब बल वापिस हुआ तो सोचते है क्या हुआ ? 50 वर्ष के बाद वानप्रस्थ आश्रम मे चले जाओ । officer हो गया तो सिपाहियों के बीच मे बैठना उठना अच्छा नही । गवर्नमेंट उसके लिए अलग व्यवस्था करती है । माता पिता बच्चों से जुदा हो जाएँ । साल दो साल मे एक एक बार आएँगे तो श्रद्धा से नमस्कार करेंगे और तुम प्यार के साथ आशीर्वाद दोगे । साथ २ रहने से तुम्हारा हृदय भी सूख गया उनका भी । new blood और old blood साथ २ रहेंगे तो टक्कर तो होती रहेगी । एक घडा खाली और एक घडा भरा हुआ । ज्यादा आवाज कौन सा घड़ा करेगा ? मां बाप का प्यार नहीं रहा । घरों मे अशान्ति का एक कारण यह है । दुनियाँ का भला जितना था कर लिया । अब अलग होकर भाला चलाओ । भगवान का सुदर्शन चक्र तुम्हारे हाथ मे आ गया ।

इस प्रकार प्राचीन वैदिक परम्परा मे आगे सन्यास का विधान था ।

प्रवृत्ति भी होती थी निवृत्ति भी होती थी । इस प्रकार अरण्य मे जिस विद्या का उपदेश करते थे वह विद्या भी आती थी । 'अरण्यायनम्' यह ब्रह्म है यही तेरी आत्मा है 'ब्रह्मचर्य परमज्ञानस्य साधनमित्यतो' आचार्य कहते है ज्ञान का, तत्त्व का साक्षात्कार करने का साधन यह इन्द्रिय संयम है । इसलिए इन्द्रिय संयम भी करो । 'ब्रह्मविदा यत्नतो रक्षणीय' यहाँ ब्रह्मलोक की थोडी सी कल्पना कहते हैं । इसको ऐसा समझो । द्यौ मंडल । सूर्य मंडल से ऊपर जो द्यौ मंडल है उसमे ब्रह्मलोक की कल्पना करते है । कहते है 'तत्रैव चैरमिरा अन्नं तन्मय ऐरों मण्डस्तेन पूर्णमैर मदीयं तदुपयोगिना मद करं हर्षोत्पादकं सरः । तत्रैव चाश्वत्थो वृक्षः सोम सवनो नामतः सोमोऽमृतं तन्निः स्त्रवोऽमृतस्तव इति वा ।' कहते है वहाँ एक विशाल सरोवर है । वो अमृत का सरोवर है । वहाँ जाने वाला आत्माएँ उस सरोवर मे अमृतत्व का अनुभव करती । श्रुति उसको तृतीय लोक कह रही है । हमारा यह धू लोक इसके ऊपर अन्तरिक्ष लोक । सूर्य मंडल के नीचे का लोक अन्तरिक्ष लोक है । उसके ऊपर ब्रह्मलोक है । यह तीसरा लोक हो गया । श्रुति इसका व्याख्यान करती है । ऐरा मिरा शब्द का अर्थ भात का पानी होता है । उसको माड भी कहते है । उस सरोवर का पानी जो है उसको मंड कहा । 'एरमदीयं' वो मंड कैसा है ? 'हर्षोत्पादक' माने हर्ष को देने वाला है । ऐसा विचित्र वो सरोवर है । उसमे एक विलक्षण अश्वत्थ का वृक्ष है । सोमसवा सोम नाम अमृत का है अमृतमय वृक्ष है वो ।

तत्तत हि ब्रह्म लोके अरश्चह वै प्रसिद्धो ब्याअर्णं वौ समुद्रो समुद्रोपमे वा सरसी तृतीयस्यां भुवमन्तरिक्षं चापेक्ष्य तृतीया द्यौस्तस्यां तृतीयस्यामितोऽस्माल्लोका दारभ्य गम्यमानायां दिवि'

इन्द्रिय संयम शील और ब्रह्म विद्या को धारण करने वाले इस ब्रह्मलोक मे चले जाएँगे । जो मोक्ष मे नहीं जा सकेंगें तो इस ब्रह्मलोक मे जाएंगे फिर वहाँ से उनका मोक्ष होगा । शास्त्र मे इसको क्रम मुक्ति कहते हैं । सद्यविदेह उसको कहते है जो सीधे मोक्ष मे चले जाते है ।

ब्रह्मलोक का यह व्याख्वान आगे भी चलेगा ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१९-५-८८

प्रवचन सं०-४१

"ॐ अथ या एता हृदयस्य नाड्यस्ताः पिङ्गलस्याणिम्नस्तिष्ठन्ति शुक्लस्य नीलस्य पीतस्यलोहितस्येत्यसौ वा आदित्यः पिङ्गलएष शुक्लएष नील एष पीत एष लोहितः ।।"

(छान्दो. ८-६-१)

कहते ह यह मनुष्य प्राणी उस महान ब्रह्म लोक को पाता है। ब्रह्मलोक का विचार चल रहा है ब्रह्मचर्य के साधन के द्वारा यह मनुष्य उस महान ब्रह्म लोक को जाता हे। तत्त्व ज्ञान के बिना कोई वस्तु भासती नहीं। उस तत्त्वज्ञान को जाग्रत करने के लिए इन्द्रिय संयम एक बडा साधन है। उसके लिए विचार चलता है। आचार्य कहते है थोडा विचार करो। इस लोक मे किसी की प्रशंसा करनी हो, प्रशंसा भी करनी चाहिए, पत्नी अगर पति की प्रशंसा करती हो कि तुम तो शेर हो तो पति की छाती फुल जाती है। पति अगर पत्नी की प्रशंसा करता हो कि तुम तो साक्षात् लक्ष्मी हो तो वह प्रसन्न हो जाती है। प्रशंसा से सिद्धि भी होती है। भगवान की हम लोग स्तुति करते हैं यह भी प्रशंसा ही है चाहे आप वैदिक दृष्टि से सोचो चाहे लौकिक दृष्टि से।

'सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः- सहसपादः' यह मंत्र क्या है? भगवान की स्तुति कर रहा है, हे भगवान तुम हो हजारों सिर वाले हो। हजार संख्या से तात्पर्य है। अनन्त। इस बिश्व मे जितने भी सिर हैं सब उसीके हैं। जैसे कोई कोई बडा मैदान हो इस मे कोई लोक नेता आ रहा हो। लाखों आदमी इकट्ठे हों, लाखों खोपडियाँ इधर उधर घूम रहो हों पर चेतन करंट एक ही काम करता है। जहाँ से चेतन करंट गायब हुआ वहीं से खोपडी घूमना बन्द हो जाएगा। लाखों आंखे हैं, एक ही ज्योति सब जगह काम कर रही है।

मंत्र परमात्मा की कैसी स्तुति करता है सर्वभूतान्तरात्मा, जिसको किसी से पक्षपात नहीं, किसी द्वेष नहीं वो भक्त के सामने प्रकट हो जाता है।

यो माम् पश्यति सर्वत्र सर्व च मयि पश्यति ।
तस्याऽहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ।।

यहां कृष्ण अर्जुन को कहते हैं जो ज्ञानवान मेरा भक्त मुझको सर्वत्र देखता है। सब जगह देखता है, इसका तात्पर्य है कि नाम रूप दृष्टि करेगा तो भगवान नहीं दीखेगा यह नाम रूप उस अस्ति भाति और प्रिय के बिना नहीं।

अस्ति भाति प्रियं नाम रूपं चेत्यंश पञ्चकम् ।
आद्य त्रयं ब्रह्मरूपं, जगद्रूपं ततोद्वयम् ।।

अस्ति, भाति, प्रिय, नाम, रूप यह पांच चीजें है और नाम रूप से जगत भास रहा है। तीन रूपो से ब्रह्म भास रहा है जगत तो केवल नाम रूप ही है। नाम माने गुलाब रूप माने यह आकृति। किन्तु यदि अस्ति न हो तो क्या कहोगे भास रहा है ? प्रिय नहीं हो तो क्या कहोगे ? अच्छा लग रहा है या बुरा ? इसलिए existence is the life the universe. भगवान कहते है यो 'माम् पश्यति सर्वत्र' इस को वेद मंत्र कहता है सहस्रशीर्षा: पुरुष:' अस्ति भाति प्रिय रूप से ज्ञानी मुझ को सब जगह देखता है। सर्व च मयि पश्यति' सर्व क्या है ? नाम रूप। जो २ नाम रूप भास रहा है वो निराधार नहीं। इसके लिए सब से बडा दृष्टान्त यह अपना शरीर ही है। इसका नाम और आकृति। इसके अन्दर यदि चेतनात्मा नहीं तो यह कब तक खडा रहेगा ? कमर तक मिट्टी मे भी गाढ दो तो भी यह खड़ा नहीं रहेगा। उसीकी सत्ता मे यह जगत खडा है। वो है अस्ति, वो है भाति भाति माने ज्ञान का बिषय। प्रिय माने आनन्द का विषय किन्तु स्वरूप से हम उसको नहीं पकड सकते। हम लोग नाम रूप मे पकड़ते हैं। अस्ति को भी नाम रूप मे ले गये भाति को भी नाम रूप मे ले गये और प्रिय को नाम रूप मे ले गये। इसलिए नाम रूप मे मोह हो गया। जैसे अपने शरीर को ही पकडो। अस्ति ने शरीर के आकार को पकड लिया। भाति को भी शरीर के स्वरूप ने पकड़ लिया। प्रिय को, आनन्द को भी शरीर के रूप ने पकड़ लिया बस फस गये। इस शरीर को बुर्का ही समझो। बुर्के वाला कौन है ? जो अन्दर

बैठा है वह अगर नहीं होगा तो बुर्का क्या काम आएगा ?

भगवान कहते हैं मेरा जो ज्ञानी भक्त है, दूसरे भक्तों का निरादर नहीं दूसरे भक्त भी प्रिय है । ज्ञानी के अगल बगल मे ही बैठे । जो मुझ को सब जगह देखता है और सब को मेरे मे देखता है 'तस्याहं न प्रणश्यामि' प्रणश्यामि शब्द का अर्थ है 'नाहं अदृष्टो भवामि' मैं उसके लिए अदृष्ट नहीं होता । उसकी ज्ञान की दृष्टि की पकड़ मे हम आ गये । वह मुझसे अदृष्ट नहीं मैं उससे अदृष्ट नहीं हो सकता । इसका अर्थ क्या है ? अगर मैं छुपाना भी चाहूँ तो कहाँ छिपूं क्योंकि अस्ति भाति और प्रिय रूप से वह मेरे को सब जगह देख रहा है । छिपने के लिए माया का यह सब से बडा किला नाम रूप ही है । और यह अस्ति भाति मे पहुंच गया हैं तो नाम रूप मे तो इसका ध्यान नहीं है, तो मैं इसमे कैसे छिपूंगा ? यह भी मेरे मे छिप नहीं पाता क्योंकि ऐसा भक्त तो मेरी आत्मा ही ह । अपनी आत्मा किस से छिप सकता है । इसलिए 'यो माम पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति, तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ।

यहाँ आचार्य कहते है 'त्वम् इन्द्रः त्वं यमः त्व वरुणः' किसी बडे धनी सेठ को या किसी महाराजा की स्तुति करो कि हे भगवन तुम तो इन्द्र हो, तुम यमयता भी हो, राजा नियन्ता भी होता है सब का । इन्द्र भी तुम हो, वरुण भी तुम हो । अगर वर्षा न हो तो तुम्हारे मन मे शान्ति होगी ? वरुण देवता वर्षा के द्वारा तुम्हारी शान्ति उत्पन्न करता है । ऐसे ही राजा भी प्रजा के लिए शान्ति की व्यवस्था करता है । इस लोक मे पुरुषों के लिए स्त्रीयों मे आकर्षण है और स्त्रियों के लिए पुरुषों मे आकर्षण होता है । यह राग है । वैराग्य होना चाहिए। क्योंकि रागमोह मे बन्धन है । जो स्त्री ब्रह्मवादिनी होगी उसके अन्दर वैराग्य अवश्य होना । जो पुरुष ब्रह्मवादी होगा उसके अन्दर भी वैराग्य होगा । वैराग्य होना भी चाहिए । नहीं तो भोगों के पीछे ही दौड़ता रहेगा । केवल वैराग्य की ही स्तुति नहीं है । आचार्य कहते है 'ज्ञानस्य मोक्षसाधनत्वात् इष्टादि' ज्ञान के बिना मोक्ष सम्भव नही । इष्टादि के द्वारा जो प्रशसा की गई है, ज्ञान का ही प्रशंसा की गई । यह विराग मन्त्र की स्तुति नहीं समझो । वैराग्य नहीं होगा तो मोक्ष की ओर जा ही नहीं सकेगा चाहे वह ब्रह्मविद् भी क्यों न हो । एक ब्रह्मविद्

तो है जिसको देह का अध्यास ही नही है । जैसे गाढ निद्रा में देह का भान ही नही रहता । मान लो कि कभी निद्रा नही आई और बिस्तर पर लेटे है। निद्रा । आई नहीं । छोटी सी आवाज भी बुरी लगती है ।

एक ब्रह्मविद् वो है, श्रवणादि के द्वारा परोक्ष ज्ञान तो हुआ है किन्तु साक्षात्कार नहीं हुआ । जब साक्षात्कार नहीं हुआ तो राग तो रहेगा । राग है तो इसके ज्ञान मे परिपक्वता नहीं आई । पकेगा नहीं तो इन्द्रियाँ इसे विषयों की ओर खींचेगी । कठोपनिषद् मे मंत्र आया है : पराञ्चिखानि व्यतृणत् स्वयंभू

तस्मात्पराङ्पश्यति नान्तरात्मन्

'कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्ष दावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्' आचार्य कहते है जीव को प्रकट होने के लिए माता पिता की जरूरत है । 'स्वयंभू स्व सेव भवति' वो परमात्मा जब प्रकट होने लगता है तो प्रकट होने के लिए किसी मां की जरुरत नहीं । वह स्वयं अपनी शक्ति से, अपनी इच्छा से प्रकट हो जाता है । अपने अनुभव के लिय यों समझो । हिरण्यकशिपु प्रह्लाद का पिता था । उसने प्रह्लाद को तंग करने मे कोई कसर नहीं छोडी । ऐसा कठोर पिता था । बेटे को तलवार से मारने के लिए तैयार हो गया । मूर्ख तू परमात्मा का बडा गान करता है 'यह द्यौ सर्वत्र कस्मात् स्तम्भेन दृश्यते' भगवान खम्भे से प्रकट हो गये । हटने की कोशिश करता है किन्तु नृसिहं भगवान ने फुर्ती से झट पकड लिया और अपनी जंघा मे लिटा लिया । यह हिरण्याकशिपु भी एक नम्बर का भक्त तो था ही । एक नम्बर का भक्त जो होता है वो भगवान को ठग भी लेता है । इसने भगवान को ठग लिया था । कहा कि हे भगवन तुम्हारी पृथ्वी के ऊपर मेरे को तुम्हारी सृष्टि का कोई भी जीव नहीं मार सके । रात को मुझे कोई नहीं मार सके, दिन मे मुझे कोई नहीं मार सके । कैसे वरदान मांग रहा है । भगवान देते जा रहे है । भगवान कहते हैं कैसा रूप बनाना पडा । मुँह सिंह का और शरीर नर का । ऐसा विचित्र आकार बनाया । संकल्प मात्र से आकार खडा कर लिया । न घर के अन्दर, न बाहर, दरवाजे के बीच मे, न जमीन पर न आसमान पर अपने घुटने पर रख लिया । न दिन मे न रात में, संध्या के समय । इतना आवेश आया भगवान को कि नाखून से फाड़ कर अंतडियों की माला निकाल कर गले डाल लीं

भयंकर रूप धारण किया । देवता भी घबरा गये । लक्ष्मी से बोले तुम्हारे तो husband है जाकर शान्त को । पत्नी मे पति को शान्त करने की शक्ति होती है पर उसने भी मना कर दिया । पीछे हट गई । बोली बाप रे बाप । मैंने तो ऐसा रूप ग्राज तक नहीं देखा । सोचा यह भयंकर रूप जिस भक्त प्रह्लाद के लिए धारण किया है उसीको ग्रागे भेजा जाए भगवान को शान्त करने के लिए । प्रह्लाद को भेजा । भगवान शान्त हो गये भक्त के ग्रागे कोमल हो गये उल्टा कहने लगे, भक्त मुझे क्षमा करना' पहुंचने मे देर हो गई । तुमको कष्ट तो वहुत उठाना पडा । किसी मां की जरूरत ही नहीं पडी । यह माता पिता की जरूरत जीव को पड़ती है क्योंकि जीव ग्रज्ञान के घेरे मे बंधा हुग्रा है । ग्रच्छा कर्म करो। ग्रच्छाज्ञान से तुम्हारा चित्त ऊपर उठेगा ।

परमात्मा को व्यतृणत् स्वयंभू कहा । स्वयंभू माने उस परमात्मा को ग्रपनी ग्रभिव्यक्ति के लिए किसी की ग्रपेक्षा नहीं । 'स्वाभिव्यक्तौ न परामपेक्षते' शिव को भी जो शम्भु कहते है यह भी स्वयंभू है । शिव जब भी प्रकट होते हैं उनको किसी की जरूरत नहीं पड़ती । सृष्टि किया तो देखा यह बेटा जा तो रहा है पर यह इन्द्रियों के विना क्या करेगा ? इसलिए इसको इन्द्रियों की सृष्टि कर दिया । ग्रांख के विना क्या देखेगा ? इसलिए ग्रांख की सृष्टि किया । यह ग्रांख रूपी चश्मा भगवान की factory मे ही वना हुग्रा है । इसका केस देखो । पल्कें क्या सुन्दर केस है । पलक कचरे को कोने मे इकट्ठा कर देती है । यह automatic वना हुग्रा है । साफ भी हो रहा है । ग्रौर भगवान क्या करेगा तुम्हारे लिए ? यह सब भगवान का ही काम है । इसलिए भगवान ने इन्द्रियों की सृष्टि की । पर कान मे फूंक दिया कि ग्रन्दर नहीं देखना । बाहर ही देखना। ग्रगर ग्रन्दर देखोगे तो तुम भक्त वन जाग्रोगे । बाहर ही देखेगा तो वाहर ग्राएगा जाएगा । जीवों की सृष्टि क्या है ? यह जो इन्द्रियों के रसाल भोग्य पदार्थ हैं । सुन्दर वायु ।

ग्राज कल प्रचार हो रहा है कि इन भोगों को भोगते २ जब हम थक जाएंगे तो ग्रपने ग्राप समाधि लग जाएगी । समाधि क्या लग जाएगी मूर्खो वेहोश हो जाग्रोगे । जो ऐसा कर रहे है उनसे पुछो कि उनको कितनी समाधि लगी है ।

अगर भोग मात्र से ही समाधि लगती, अगर बिना तप के ही, बिना संयम के ही, बिना वैराग्य के ही समाधि लगती तो याद रखने की बात है पशु भोग भोगने मे हम से कहीं स्वतंत्र है। उनके लिए न लज्जा है न नियम। न किसी से भय। मस्ती से भोग भोगते है। मनुष्य का ऐसा कौन सा भोग है जिस मे लज्जा न हो- जिसमे भय न हो किन्तु कुछ नहीं पढे लिखे बुद्धिमान है। बात बनाना जानते है और लोग इनकी बातों मे फस जाते है। दर असल बात यह है कि इन्द्रियों को जय करना पड़ता है ठीक है। बोलना बन्द न करो किन्तु कम तो करो। वाणी से अगर झूठ ज्यादा बोलते हो तो कुछ संयम करो। धीरे २ झूठ बोलने की आदत छूट जाएगी। पूरा सत्य बोलने लग जाएँगे। इस तरह इन्द्रियों का संयम करो।

इन इन्द्रियों को इतना भोग दो कि यह थक जाएँ तो ये अपने आप पीछे हट जाएँगी। किन्तु यह अपने आप हटने वाली है नहीं। एक राजा थे। सोचा, हमारे नगर में पढे लिखे नौजवान कितने बुद्धिमान है इनकी परीक्षा करनी चाहिए उसने घोषणा करवा दी कि हमारी पांच बकरियाँ है जो नौजवान इन पांच बकरियों का पेट भर कर ले आएगा उसको लाल सोने की अशर्फी इनाम दी जाएँगी। बकरी का पेट भरना क्या मुश्किल है ? लगता है हमारे राजा की अकल मे गड़बड़ी है। सोने की लाख अशर्फी इनाम मे मिलेगी। राजा की बकरियां ले जाएंगे उन्हे खूब हरी २ घास खिला कर उनका पेट भर देंगे। पर राजा ने साथ मे यह भी कहा कि अगर बकरी भूखी रह गई तो 25 कोडे की मार खानी पडेगी कोडे मारने वाले पहलवान खडे कर दिए। नौजवान लड़के आएँ, बकरियाँ ले जाएँ। घास खिला २ कर उनका पेट भर दें और सायंकाल राजा के सामने ले जाएँ। राजा कुर्सी पर बैठे और ज्यों ही बकरियाँ आए उनके सामने हरी घास रख दें। बकरियाँ मुँह मारने लगे। बकरी एक ऐसा जानवर है कि पेट फट भी रहा होगा तो भी मुँह चलाना नहीं छोडेगी। जहाँ बकरी ने खाया, राजा समझ जाए कि बकरी का पेट भरी नहीं। कोई मारने वाले कोडे बरसाना शुरु कर दें। छोकरे की पीठ धनुष जैसीं टेढी हो जाए। सब मार खाकर सायंकाल घर लौटे। गांवमे के अच्छे अच्छे बुद्धिमान लड़के थे। सब ने बारी बारी मार खा ली।

बूढों ने एक कान्फ्रेंस कर डाली। उन्होंने कहा कि तुम्हारे यह बाल

चांदी जैसे सफेद हो गये । यह धूप मे पके हैं कि कुछ अकल भी आई है तुमको? दूसरे बुढे ने पूछा बात क्या है ? वो बोला बात क्या है, सब छोकरे मार खा खा कर आ रहे है । महाराजा ने सब की पिटाई कर डाली है । तुम लोगों में कोई ऐसा नही है जो इन बकरियों का पेट भर सके । एक बुढा तैयार हो गया । उसकी हड्डी २ दिख रही थी । बकरियों पेट भर कर लाने के लिए तैयार हो गया । राजा के पास पहुँचा । नमस्कार किया । राजा ने पूछा क्या बात है ? बोला बकरियों का पेट भरने पर लाख अशर्फी सोने की इनाम मिलेंगी ? राजा ने कहा हाँ । इनाम तो मिलेगा पर जब बकरियों का पेट भर कर लाओगे तब । बो नौजवान हो या बुढा, इससे हमें कोई मतलब नहीं । किन्तु यदि बकरी का पेट नहीं भरेगा तो मार खानी पडेगी । तुम्हारे शरीर मे मार खाने की ताकत है तो ले जाओ बकरियों को । बुढा बोला ठीक है, किन्तु हम बकरियों को आज सायं काल नही लाएँगे । सात दिन बाद लाएंगे । राजा ने कहा ठीक है । जान की बाजी लगा दी बुढ्ढे ने । बुढ्ढा तो बुढ्ढा ही था । बकरियाँ घर ले आया । जंगल कौन जाता है । घर ला कर सूखा गेहूँ का भूसा खिलाता है । सायंकाल को थोडी सी हरी घास बकरियों को दिखाता है । अगर बकरी मुँह मारती है तो एक पतली सी छड़ी से उसकी नाक पर सडाक से मारता है । बकरी की नाक पर केस नहीं होता । सूखा घास खिलाता है तब तो कुछ नहीं बोलता और हरी घास आते ही छड़ी से पिटाई कर देता है ।

एक दिन, दो दिन तीसरे तो बकरियाँ समझ गई कि सूखा खाने पर तो मार पडती नहीं । हरा खाने पर मार पडती है । तीसरे दिन वो रास्ते पर आ गई । हरा घास सामने करो तो मुँह फेर लेती है । सूखा घास डालता है तो खाने लगती है । उनका Lesson पक्का होने लगा । उस ने कहा अभी तो तीन ही दिन हुए है । ट्रेनिङ्ग तो पूरी देना चाहिए । रोज ऐसे ही करे । सातवे दिन तो ले गया राजा के सामने । महाराजा कुर्सी पर बैठ गये हरी घास आ गई। कोडे मारने वाला पहलवान भी बैठ गया । ज्यों ही महाराजा ने हरी घास की मुट्ठी आगे की । बकरी ने झट मुँह पीछे कर लिया । राजा ने बुढ्ढे की ओर देखा । बकरी हरी घांस तो खा नहीं पर इसका पेट तो भूखा है । उसने कहा

भगवन क्या खाएगी उसका पेट मैं ने press कर दिया है । इसके पेट मे जगह ही नहीं रही । बेचारी घास क्या खाएगी । राजा ने बहुत जोर लगाया पर बकरी ने उधर देखा ही नही । अब उसको तो इनाम लेने दो । अपने यह समझो कि यह पांच ज्ञानेन्द्रियाँ ही पांच बकरियाँ है । महाराजा समझो भगवान को । उसने जीव से कहा जा मूर्ख इन का पेट भरकर ले आ । मनुष्य लोक मे आया । स्वर्ग लोक मे गया । पशु पक्षियों के बगीचे मे ले गया । तरह २ के भोगों मे घुमाता रहा पर इनका पेट नही भरा । लौट २ कर जाता है और मार खाता है । इस तरह इसको कोई वेदान्त घाट पर मे ले आया । वेदान्ती बुड्ढा मिल गया । उसने कहा मैं इनका पेट भर दूंगा । तब ज्ञान रूपी कोडे लगे । इन्द्रियाँ रास्ते पर आ गई । इस प्रकार इन इन्द्रियों का संयम हुआ ।

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशेहि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठता ।

हे अर्जुन इन इन्द्रियों का संयम करो और इन को मेरे से युक्त करो । जब यह मेरे से युक्त हो जाएँगी तो जो दूरी थी मुझसे वो खत्म हो जाएगी । स्थित प्रज्ञा हो जाएगी । नहीं तो चंचलता छोडती नहीं । जिस की इन्द्रियाँ वश मे हो जाएंगी उसकी बुद्धि प्रतिष्ठित हो जाएगी । जो लोग यह कहते है कि भोग से समाधि हो जाएगी, वो कुछ नहीं । शास्त्र मे ऋषियों की जो भी व्यवस्था है वही मानने योग्य है । उसी मे जीवों का कल्याण होगा । 'कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मा-नमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्वभिच्छन्' लाखों मे कोई एक धीर मिलेगा । धीर का अर्थ क्या है ? दुःख भी है, दुःख के कारण भी है, फिर भी बुद्धि को विचलित नहीं होने देवे । दुःख नहीं है तब तो गधा भी मस्त है । दुःख न होने से ही यदि हम मस्त रहेंगे तो हमारी मस्ती और गधे की मस्ती मे अन्तर क्या हुआ ?

दुःख भी हो, दुःख के कारण भी हों किन्तु फिर भी तुम्हारी बुद्धि विचलित न हो तब तुम धीर कहलाओगे । इसलिए कहा 'धीरस्तत्र न मुह्यति' धीर को मोह नहीं होता । कोह धीर ही इस अमृतात्मा की परीक्षा करता है । 'आवृत्तचक्षुरमृतत्वभिच्छन्' आवृत्तचक्षु कहा । इसका अर्थ क्या हुआ ? आंख

बन्द करने का तत्पर्य केवल आंख बन्द करने से नही। सम्पूर्ण इन्द्रिया के ऊपर control होगा, नियन्त्रण होगा। 'सर्वाणि इन्द्रियाणि संयम्य' सम्पूर्ण इन्द्रियों के ऊपर जो कन्ट्रोल है इसका नाम ब्रह्मचर्य है। अब जो भी मोक्ष की ओर चलेगा उसे सम्पूर्ण इन्द्रियों को जय करना पडेगा। चाहे वह पुरुष हो या स्त्री हो, कोई भी हो, सम्पूर्ण इन्द्रियों को जय कर के ही मोक्ष की ओर निर्विघ्नता से जाएगा। यह आत्मा जो अमृत है, इसका साक्षात्कार करने के लिए इस तरह मुमुक्षु को करना चाहिए।

इस बात को यहाँ आचार्य कहते है ज्ञान का सहकारी साधन जो वैराग्य है उसको धारण करना चाहिए। यज्ञादि जो करता है यह भी ब्रह्मचर्य ही है। यज्ञादि के द्वारा भी इन्द्रिय संयम की प्रशंसा की है। ब्रह्मचर्य का तात्पर्य्य इन्द्रिय जय ही है। यही मोक्ष का साधन है। केवल यज्ञ से ब्रह्मलोक नहीं जा सकते। ब्रह्मलोक तो तभी जा सकोगे जब सम्पूर्ण इन्द्रिय जय होगा।

इस बात को आगे और स्पष्ट करने वाले है।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२०-५-८८

प्रवचन सं० ४२

"ॐ तद्यथा महापथ आतत उभौ ग्रामौ गच्छतीमं चामुं चैवमेवैता आदित्यस्य रश्मय उभौ लोकौ गच्छन्तीमं चामुष्मादादित्यात्प्रतायन्ते ता आसु नाडीषु सृप्ता आभ्यो नाडीभ्यः प्रतायन्ते तेऽमुष्मिन्नादित्ये सृप्ताः ॥"

(छान्दो. ८-६-२)

'ब्रह्मचर्येण विन्दन्ति तेषामेष, ब्रह्मलोकः' जो मुमुक्षु अपने जीवन मे बडे तप और संयम से रहते है वो इस महान ब्रह्म को जानते है और ब्रह्मलोक को भी पा जाते है । 'तेषामेषः ब्रह्मलोकः' ब्रह्मलोक की व्याख्या पहले भी कर के आए है । 'लोकशब्द का अर्थ अर्थ है लोक्यते भुज्यते कर्मफलं यत्र स लोकः । जैसे मनुष्य कर्म फल का भोग कहाँ होगा ? मनुष्य लोक मे । यह जो मनुष्य शरीर है, इस इस शरीर मे मनुष्य कर्म के फल का भोग होगा । हम लोगों के बहुत से कर्म पीछे पडे है । बहुत से कर्मों का फल पशु पक्षी योनि मे मिलने वाला है । किसी कर्म का फल स्वर्ग मे मिलने वाला है । किसी कर्म का फल मनुष्य योनि मे मिलने है । ऐसे बहुत से कर्म पीछे २ पडा है । ऐसा कर्मो को संचित कर्म कहते है । इस जन्म मे हम जिस कर्म का फल भोग रहे है उन कर्मो का नाम प्रारब्ध कर्म है । जन्म वायु और योग प्रारब्ध के अनुसार मिलता है । उसको भाग्य भी कहते है । भोग माने सुख दुःख । उस शरीर मे सुख भी होता है, दुःख भी होता है । इच्छा तो सबकी यही होती है कि हमे सुख ही होवे परन्तु दुःख भी अपने ही कर्मो का पार्सल है इसलिए लेना तो पडेगा ही । साधन तो सुख के ही इकट्ठे करते है किन्तु फिर भी दुःख निकल ही आता है । यह मनुश्य शरीर है । मनुय्य कर्म का फल

यहां भोग रहा है । इसको मनुष्य लोक कहते है । यहाँ कहते है 'तैषाभव ब्रह्म लोकः' ब्रह्मैव लोकः ब्रह्म समस्त प्राणियों का जीवन स्थान वो लोक ब्रह्मलोक । जहाँ पहुंच कर समस्त प्राणी अपने जीवन को पा रहे है । ब्रह्मलोक मृत्यु से दूर है ।

जैसे यह शरीर है और इस शरीर की आत्मा । जब तक यह शरीर आत्मा की करंट मे है तब तक मृत्यु इसका कुछ नहीं बिगाड सकता । तो आत्मा इस शरीर के जीने का स्थान हुआ । इस आत्मा को ब्रह्मलोक कह रहे है । जितने भी प्राणीं है, केवल मनुष्य ही नहीं, देव, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर पशु पक्षी यह सब इस आत्मा की छाया मे ही जी रहे है । इसके बिना कोई नहीं । इसलिए यह चेतन ब्रह्मलोक है । एक ब्रह्मलोक तो प्रसिद्ध है जहाँ कहा है कि जीव वहाँ जाएगा वहाँ से क्रम मुक्ति होगी । वहाँ से मोक्ष मे जाएगा । यहाँ ब्रह्मलोक का विचार किया किन्तु मुमुक्षु के लिए श्रुति विचार करती है कि मुमुक्षु क्या करे ? मुमुक्षु इसी शरीर में ब्रह्म को पाने की इच्छा करे । ब्रह्मलोक भी जाने की इच्छा नहीं करे । बडे पुण्य भी करो तो भी इसी शरीर से मुक्त होने की इच्छा करो ।

इस शरीर मे ब्रह्मदर्शन कैसे होगा ? इसके लिए श्रुति है 'यथाऽऽदर्शे यथात्मनि' आत्मनि माने हृदयाकाश मे आदर्श माने दर्पण । जैसे दर्पण मे अपना मुँह दीखता है ऐसे ही दहराकाश मे आत्मा का ब्रह्म रूप से दर्शन होगा । और बिल्कुल स्पष्ट होगा । जैसे शीशे में मुँह दीखा ऐसे ही होगा । अनुभव होगा । शरीर मे यह प्राणादि इन्द्रियादि जो कुछ भी है, सबसे न्यारा सब का साक्षी वो सत्‌चित् आत्मा ब्रह्म 'ब्रह्माऽहमस्मि' मुमुक्षु ऐसी ब्राह्मी भावना करे। ब्रह्माकार वृत्ति मे ब्रह्म साक्षातकार करे । तत्त्व का साक्षात्कार करे । इसलिए शरीर मे प्रयत्न करना चाहिए । दूसरी बात श्रुति कहती है तथा स्वप्ने यथा पितृलोके यदि मनुष्य कुछ पुण्य करता है, तो पितृलोक कहते है स्वर्ग लोक को, चला जाता है । स्वर्ग लोक मे कैसे दर्शन होगा उसके लिए कहा 'यथास्वप्ने' । स्वप्न मे स्पष्ट दर्शन नहीं होता । शरीर से भी हम स्वप्न मे अपने को देखते हैं तो ऐसा स्पष्ट नहीं देखते जैसा जाग्रत मे देखते है । अस्पष्ट भाव होता है । स्पष्ट नहीं होता । इसी प्रकार पितृलोक जाने पर आत्मा का मान तो होगा किन्तु स्पष्ट नहीं होगा ।

'यथाऽप्सु परीददृशे तथा गन्धर्वलोके' कभी२ जैसे कोई बडा तालाब हो, उसके किनारे खडे होकर देखो तो अपना प्रतिबिम्ब स्पष्ट दीखता है 'अप्सु' माने जल मे अपने शरीर को देखो तो अपने शरीर का मान तो होता है किन्तु स्पष्ट नहीं। गन्धर्व लोक मे जाओगे तो वैसा तुम को आत्मा का भान होगा। किन्तु सबसे ज्यादा स्पष्ट तुमको भान होगा या तो इसी शरीर मे अनुभव करो नहीं तो दूसरा ब्रह्म लोक मे होगा। 'छाया तपयोरिव ब्रह्मलोके' श्रुति कहती है जैसे छाया और आतप माने धूप। धूप मे चलो तो छाया दीखती है। धुप और छाया जैसे जुदा २ है ब्रह्मलोक मे जाने पर भी आत्मा और ब्रह्म का मान होगा। क्यों? ब्रह्मलोक मे जाने पर भी यह स्थूल शरीर तों बेचारा यहीं रह जायगा। आपको विदा करेगा। किन्तु सूक्ष्म शरीर नहीं छोडेगा सूक्ष्म शरीर साथ मे जायगा। अब सूक्ष्म शरीर तुमको साक्षात् भोग देने वाला नहीं। इसलिए तुमको वहाँ ब्रह्म लोक के अनुसार शरीर मिलेगा। वो शरीर कैसा होगा। जैसे स्वप्नावस्था मे गये तो वहाँ भी शरीर है। वहाँ मम्मी भी है डैडी भी है। कितने दिन मे जवान हुआ? एक सैकिण्ड का स्वप्न होता है। जैसे यह स्वप्न का शरीर है, ब्रह्मलोक मे तुमको ऐसा ही शरीर मिलेगा। आज इसकके ऊपर विचार करते है कि ब्रह्मलोक के जो भोग है वों कैसे है? उसके ऊपर भाष्यकार ने जैसा विचार किया है उसको स्पष्ट करने की कोंशिश करते है।

उस ब्रह्मलोक मे, पहले मंत्र कह कर आया है कि उसमे बडे २ समुद्र जैसे सुन्दर तालाब है। अमृत के और उस तालाब मे, यहाँ से जो पुण्यात्माएँ जाएँगी वो स्नान करेंगी। अमृतत्त्व का रसास्वाद करेंगी वो भोग कैसे है? हमारे इस लोक मे दो तत्त्व प्रधान है पृथ्वी और जल। हमारा यह पार्थिव और रक्त के रूप मे जल। ब्रह्मलोक मे जो शरीर होंगे अथवा जो भोग होंगे क्या उन मे भी पृथ्वी और जल तत्त्व भी रहेगा कि नहीं। वहाँ आपने कहा कि समुद्र है और बड़ा सुन्दर वृक्ष है और स्वर्ण मंडप का भी वर्णन किया। मानस प्रत्यय मात्र तो यह पदार्थ क्या पृथ्वी तत्त्व और जल तत्त्व से बने है अथवा मानस मात्र है। माने मन की कल्पना मात्र हैं। यदि पृथ्वी तत्त्व से बने है और जल तत्त्व से बने हैं तब तो स्थूल होने चाहिए जैसे हमारा यह स्थूल शरीर। यह पृथ्वी

तत्त्व से बना है और जल तत्त्व से बना है तो यह स्थूल शरीर स्थूल है तो आकारवाला है । आकार है तो बढता घटता भी है, विकारी है । ब्रह्मलोक के जो भोग होंगें अथवा जो जो शरीर होंगे वो भी विकारी होंगे इसलिए 'हृदयाकाश समाधानानुपपत्ति' दहर विद्या है । हृदयाकाश मे इन सब भोगों का भान कैसे होगा ? पुराणों मे महर्षि व्यास ने कथन किया है कि ब्रह्मलोक के सारे भोग न तो उत्पत्ति विनाशशील है, न साकार हैं । जैसे इस लोक के है । वो मनोमय हैं । मानस कहा । और श्रुति है 'अशोकमहिम '

वहाँ जाने पर कोई शोक नहीं होगा । वहाँ की महिमा दिव्य होगी । एक बात और भी समझो 'ऋषीणाम् .. अर्थोवाच: मनो' हम लोगों की वाणी कैसी है ? जैसा अर्थ है वैसा ही हमको बोलना पडेगा अगर अर्थ के अनुरूप हम नहीं बोलेंगे तो हमको पागलपन का टाईटल मिल जाएगा । पर ऋषि लोग, जो सिद्ध होते है जो इस स्थूल देह के अहंकार से बाहर हो जाते हैं, वो जो इच्छा होगी बोल देंगे । अर्थ उस के अनुरूप हो जाएगा । **लाहौर** का नाम लवपुर था । लवपुर का अपभ्रंश लाहौर हो गया । वहाँ का एक उपाख्यान है एक कज्जु भक्त रहता था । उसने एक मकान बनाया था ऊपर से चारों ओर से खुला चौबारा कहते थे उसे । चारों ओर से खूब हवा आती थी । चार संत उसके चौबारे मे पडे रहते थे । बडे सिद्ध सन्त वहाँ पर रहते थे । किसी भक्त ने कहा चलो संत जी बलख बुखारे चले । संत कहते है न । जो सुख चौबारे न बलख न बुखारे । कज्जु के चौबारे मे जो सुख मिलता है वह बलख बुखारे में नहीं है. । . संत वहाँ पडे है और कज्जु उनकी खूब सेवा करता है । एक दिन एक माई आ गई । खूब प्रेम से नमस्कार किया । हाथ जोड कर बोली मेरे घर मे कोई नहीं है महाराज मुझे एक बेटा दे दो । संत बोले मेरी जेब मे बेटा रखा है कि निकाल कर तुम्हे दे दूं । वो हाथ जोड कर खडी है कि आप आशीर्वाद दे दोगे तो हो जाएगा । आखिर मे दिया आशीर्वाद । पुत्र हो गया । साल भर बाद आई बच्चे को लेकर । बच्चे को ढक कर सन्त के दर्शन करवाने ले जा रही है । एक संत सीढियों के नीचे बैठे थे । उनको नमस्कार किया नहीं । अपने ध्यान मे चली गई । सत ने देखा और गुस्से मे बोले पुत्र को दिखाने जा रही है, पुत्र नही पुत्री है । संकल्प करते ही सृष्टि बदल गई । ऊपर गई तो देखा सचमुच वह तो पुत्री है । रोने लगी । संत ने कहा

अच्छा पुत्र हो जाएगा। स्वप्न मे सोते ही कितनी बड़ी सृष्टि खडी ,जाती है। जाग्रत मे एक छोटा सा मकान बनाने मे खोपडी साफ हो जाती है और स्वप्न मे इतनी बडी सृष्टि खडी करने मे कुछ भी नहीं लगती । ऐसे ही संत का संकल्प होता है। सन्त ने कहा लो बेटा हो गया। प्रसन्न होकर जाने लगी। नीचे उतरी तो डर रही थी। ज्यों ही वहाँ से निकली' सीढियों के नीचे जो संत बैठा था, बोला पुत्र लेकर जा रही है, पुत्र नहीं पुत्री है। फिर देखा तो पुत्री है। रोते २ फिर सन्त के पास गई पहुंची। सन्त ने कहा फिर लौट आई। बोली हां महाराज उन्हों ने फिर से पुत्री कर दी। संत ने कहा जा अब पुत्र हो गया पर अब उधर से मत जाना। नहीं तो मेरे लिए मुश्किल पडेगी। इस बार वह दूसरी ओर से घर चली गई।

तात्पर्य्य यह कि मन जिन का अपने अपने हाथ मे आ गया, उनमे विशेष शक्ति आ जाती। वो मन मे जो कल्पना करेंगे, वो हो जाएगा। हम लोगों का जो मन है वह अन्यथा बहुत सी कल्पनाएँ करता है। उन व्यर्थ की कल्पनाओं में हम लोगों का मन दब जाता है। हम लोगों का मन व्यर्थ की बहुत सी कल्पनाएँ तो करता है पर उतने से पूरी कितनी होती हैं? बहुत कम इच्छाएँ पूरी होती है। आती हैं और टकराती रहती हैं। किन्तु जो सिद्ध पुरुष है वह व्यर्थ की इच्छा नहीं करेंगे। और जो इच्छा करेंगे वो पूरी होंगी।

कहते कि तुम ब्रह्म लोक मे जो कल्पना करोगे वो पूरी हो जाएगी। जैसे भोगों की इच्छा करोगे जो भोग आ जाएँगे। तुमको सोचना नहीं पडेगा कि कहाँ से आएँगे। जैसे शरीर की कल्पना करोगे, कल्पना करते ही वैसा ही हो जाएगा। जैसे स्वप्न मे तुमको कल्पना करते ही शरीर मिल जाता है वहाँ किसी माँ की जरूरत नही किसी पिता की जरूरत नहीं पडती। यह जाग्रत अवस्था इन पांच भूतों के पंजे मे फंसी हुई है इस लिए जाग्रत के लिए मां भी चाहिए पिता भी चहिए। जब इन पाँच भूतों के पजे से बाहर हो जाएँगे, स्वप्न कब होता है? जब हम स्थूल शरीर से बाहर हो जाते हैं। स्थूल शरीर का सम्बन्ध स्थूल भूतों से हैं। सूक्ष्म शरीर का सम्बन्ध सूक्ष्म भूतों से है। यहाँ आप स्थूल शरीर से बाहर हो जाते है तो स्थूल सृष्टि से आप बाहर हो जाते है । स्वप्न मे जैसे पुरुष

स्त्री नदी नाले दिखाई पड़ते हैं वह केवल मन का ही आकार है 'मानसा एव आकारा: पुंस्त्र्यादय:' ऐसे ही ब्रह्म लोक मे भी हैं ।

कहते हैं यदि मानस होंगे तो पहले तो आप ने कहा कि ब्रह्मलोक मे 'सत्यकाम: सत्यसङ्कल्प' कि जो भी आप कल्पना करोगे वह सत्य होगा, सत्य काम होगा । किन्तु अगर स्वप्न जैसे होंगे तो कोई तो कोई पदार्थ नहीं होगा । स्वप्न के दृष्टान्त से तो मालूम पड़ता है कि कुछ भी नहीं है वहाँ ? 'मानसा हि प्रत्यये स्त्रीपुरुषा: स्वप्ने दृश्यन्ते' स्वप्न मे सब मानस ही है ।

जाग्रत वासनारूप: स्वप्नोदृश्य: न तु स्त्र्यादयो विद्यन्ते' जाग्रत मे जो हम स्त्री पुरुष देखते हैं । और पदार्थ भी देखते है । वही स्वप्न मे भी देखते हैं पर वहाँ न कोई पुरुष होता है न कोई स्त्री । वहाँ कुछ होंता ही नहीं । यह जगत मालूम नही पडता । स्वप्न के पदार्थ तो केवल जाग्रत के पदार्थों के फोटो मात्र ही हैं । यह तुम्हारा मन एक heavy कैमरा है । आंख से पदार्थ देखा कि फोटो अन्दर आ गया । साफ करने की भी जरूरत नहीं ।

जाग्रत मे जिन पदार्थों को हमने देखा है स्वप्न मे केवल उनके चित्र मात्र है । मन की कल्पना मात्र । कोई मेरा नहीं कोई तेरा नहीं । आचार्य कहते है कि तेरी बुद्धि अच्छी है पर तुमने बहुत कम रहा है ! स्वप्न तो केवल कल्पना मात्र है । 'जाग्रद्विषयादि: मानसप्रत्यय: इव' यह जाग्रत के जो पदार्थ है यह क्या है ? यह भी तो एक कल्पना मात्र ही है । मानस ही है । जाग्रत मे तुमको कौन प्यारा लगा ? तुम तो बहुत थोडा कह रहे हो । मन मे जो प्यारा वो बाहर भी प्यारा मन मे प्यार है तो बाहर भी प्यार से बोलते हो । मन में जो शत्रु है वो बाहर भी शत्रु है । मन मे यदि शत्रु नही तो बाहर भी शत्रु नहीं । मन जिधर घुमाता है तुम उधर ही घूम जाते हो । बैल की पूंछ होती है न । चलते चलते २ कभी पूंछ को इधर उधर फटकार रहा है । मक्खी काटती है न, तो भगवान ने चामर दे दिया, कहा जा इसे घुमाते रहना । जिधर मक्खी ने काटा उधर पूंछ फटकार दी । इसी प्रकार यह मन तुम्हें जिधर फैंकता है उधर चले जाते है । प्यार से फेंका तो प्यार मे चले गये । क्रोध से फेंका तो गुस्से मे चले गये । इसका अर्थ कि मन पर control नहीं । मन हावी हो गया । मनको

अपने ऊपर हावी न होने दो । यह मुमुक्षु का कर्त्तव्य है ।

'निवृत्तो जाग्रद्वासनाद् जाग्रद्बिषयाणाम् द्यावापृथ्वी' यह बाह्य पदार्थ सब मानस मात्र है। कार्य कारण भाव दीखता है । जैसे अंकुर से बीज और बीज से अंकुर जसे यह परस्पर एक दूसरे का कार्य कारण है । इसी तरह जितने भी जाग्रत के पदार्थ है यह स्वप्न के पदार्थो कारण बन जाते है । 'अतः मानसः इव बाह्य' यह बाह्य पदार्थ भी मानस पदार्थो की तरह ही है । परस्पर चलते रहते है । बाह्य पदार्थ भी मन के अन्दर कल्पना मात्र ही है । इन की भी कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं । कहोगे कि यदि यह सब मानस मात्र ही है तो यह जो दीख रहा है यह क्या है ? बुद्धिमान तो शंका तो होती है । एक बात समझो, जीव सृष्टि और ईश्वर सृष्टि । सृष्टि दो तरह की होती है ।

ईश्बर सृष्टि मे तो यह सब पदार्थ सब के लिए है ।तुम जैसी शकल बना कर आओगे तुम्हे वैसा ही भोजन मिलेगा । मनुष्य की शकल मे आए तो मनुष्य का भोजन बना हुआ मिला । सींग पूंछ लगा कर आए तो वैसा भोजन बना हुआ मिला । कीडा मकौडा बन कर आए तो वैसा ही भोजन बना हुआ मिला । देवता बन कर आ गये तो वैसा ही भोजन बना हुआ मिला । परमात्मा की सृष्टि में सबके लिए एक जैसा नियमहै । मान लो कोई हमारी मां है, कोई पिता है कोई बेटा है तो कोई बेटी । यह शरीर ईश्वर की सृष्टि मे बना । हमने इसको बेटा बेटी मान लिया । माता पिता मान लिया । यह मातृपना पितृपना यह जीव सृष्टि मे है । अब पुत्र है । लड़के तो बीस खडें है । पर तुम्हारी नजर किधर है जिसको तुमने पुत्र कहा, उस पर तुम्हारी नजर है । वह अगर अच्छा नहीं बोला तो दुःख, मेरा पुत्र होकर मुझ से कैसे बोलता है ? दूसरा कोई छोकरा बोलता है तो उसको तो सुना देते है । जिसको अपना कहा उससे ज्यादा सुख और उसी से ज्यादा दुःख भी । क्योंकि उसको हम अपना मन दे चुके है । इसका अर्थ यह निकला कि तुम्हारी मानस सृष्टि मे दुःख भी है तुम्हारे लिए और सुख भी है । ईश्वर की सृष्टि मे न तुमको सुख है न दुःख है । यह बात ठीक है कि वो भी तुम्हारे दुःख का निमित्त हो सकती है किन्तु वो तुमको बांधती नही । तुम्हारी सृष्टि तुमको बांधती है । इसलिए जीव को अपनी सृष्टि को मिथ्या

कहना है ।

वेदान्त जो कहता है कि सर्व मिथ्या, इसका मतलब यह है कि तुम्हारी सृष्टि मिथ्या है । तुम ने अपने मन से कल्पना कर के रखा है। तुम्हारी मानस सृष्टि ही तुम्हारे बन्धन का हेतु है इसको मिथ्या मानोगे तो मोक्ष होगा। Attachment कम हो जायगा । यही मोक्ष का हेतु हो जाएगा । परमात्मा की सृष्टि मे पृथ्वी, आकाश, वायु, जल अग्नि है यह सामान्य सृष्टि है । इसलिए जाग्रत के विषयों को हम सच्चा कह देते है । और जागृत की सृष्टि से हम स्वप्न के विषयों को मिथ्या कह देते है । एक दूसरे की अपेक्षा से सच्चा या मिथ्या कह देते है । 'विशेषाकारं माध्यमंतु सर्वेषां वाचारम्भणं विकारं' फिर भीं चाहे स्वप्न हो या जाग्रत के पदार्थ हों आकार देखने मात्र का ही है । सच्चा नहीं है । जैसे अपने शरीर मे ही देख लो न बचपन सच्चा आया था कि झूठा ? अंगुठा चुसते रहे । अब जरा चूसो तो । देखने के लिए ही हम बच्चे बने । देखने के लिए ही हम कुमार बने । देखने के लिए ही हम जवान बने । और बुढे सच्चे बने कि झूठे ? जब जवानी झूठी तो बुढापा भी झूठा ।

यह तो तुम बैठे हो इसलिए शरीर रंग बदल रहा है तुमको दिखा रहा है । जवानी का ड्रेस पहन कर आया बोला ठीक है ? झट अन्दर गया और ड्रामा मे जैसे ड्रेस बदल २ कर आते है, ड्रेस बदल कर आ गया । बोला यह ड्रेस तो जंचा नही । नहीं जचा तो get out हो जाओ । मर गया scenec बदल गया। यह दुनियाँ है । क्या मरा क्या जीआ । मुमुक्षु घबरावे नहीं । कहते हैं यह जो कुछ भी है, ब्रह्मलोक तक के जो भी पदार्थ है सब कल्पना मात्र है । पहले आचार्य कह कर आए हैं कि वो जो संकल्प करेगा, मेरे पितर खडे हो जाएँ तो पितर खडे हो जावेंगे ।

यह सब क्या है ? ब्रह्मलोक मे जाने पर तुम जो इच्छा करोगे वो सब पदार्थ तुम्हारे सामने आ जाएँगे । किन्तु सबके सब मानस ही होंगे । जाग्रत के पदार्थ भी हमारी कल्पना का साकार रूप ही है । जैसे यह आश्रम ही है, गुरु जी का संकल्प हुआ । आश्रम संकल्प रूप मे खड़ा हुआ फिर उस संकल्प को साकार

रूप दे दिया । यह दीवारे उस सङ्कल्प का साकार रूप ही है। तों हम जो सङ्कल्प को साकार रूप देते है वो इन पांच भूतों की सहायता से देते है । इसलिए यह पदार्थ उत्पत्ति विनाश वाले है । बनते बिगड़ते रहते हैं । इस शरीर को भी ऐसा ही समझो । ब्रह्मलोक के भोग सिद्ध सङ्कल्प होने के कारण न बनते हैं न बिगड़ते हैं वो भौतिक पदार्थ नहीं हैं । उनकी जब इच्छा करोगे वो आ जाएँगे । वो दिव्य भोग हैं । मुमुक्षु इन दिव्य भोगों की ओर भी मन नही देवे । कल्पना मे न जावे । मोक्ष की ही इच्छा करे । हृदयाकाश मे अपनी आत्मा का साक्षात्कार कर के यहीं से मोक्ष मे जाना चाहिए । यही प्रयत्न होना चाहिए ।

अब सीधे होकर बैठो और जोर से हरिः ॐ बोलो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२१-५-८८

प्रवचन सं०-४३

"ॐ हृदयस्य नाड्यस्ताः पिङ्गलस्याणिम्नस्तिष्ठन्ति शुक्लस्य नीलस्य पीतस्य लोहितस्येत्यसौ वा आदित्यः पिङ्गल एष शुक्ल एष नील एष पीत एष लोहितः ।।"

(छान्दो. ८-६-१)

विचार चल रहा है कि यह जीव महापुण्य कर के ब्रह्मलोक मे जाता है। ब्रह्मलोक मे जाने पर जो भोग इसके सामने आते है उनका विचार किया कि भोग कैसे है ? जैसे यह हमारी पृथ्वी है हम लोगों के सामने रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श जो भी भोग्य पदार्थ हैं, सब पार्थिव है और आप माने सब पानी से बने है । उन पदार्थों को हम लोग खाते है, किन्तु ब्रह्मलोक के जो पदार्थ है, इस बात का श्रुति ने निश्चय किया कि वो पदार्थ न तो आप्य है न पार्थिव है । इसका अर्थ यह हुआ कि जिस ब्रह्माण्ड मे हम रहते हैं रहते है वो ब्रह्मलोक इस गोलार्द्ध के बाहर है ब्रह्माण्ड का अर्थ समझो गोलार्द्ध । जीव जब वहाँ जाएका तो वहाँ के जो भोग होंगे सब मानस होंगे । इस का तात्पर्य है कि इस जीव की इतनी सिद्धि हो जाएगी इतनी शक्ति हो जाएगी कि यह जो २ भी कामना करेगा वो पूरी हो जायेगी ।

यन्न दुःखेन संभिन्नं न च सन्तमनन्तरम् ।
अभिलाषोपहीन्स्य तत्सुखं स्वपदास्पदम् ।।

महान इस दिव्य लोक का जो सुख है वो इस लोक जैसा नहीं है । 'यन्नदुःखेन संमिन्न' इस लोक का जो भी सुख है वह दुःख मिश्रित है । जितने अंश

में सुख रहता है उतने अंश मे हम लोग सुखी रहते है और जितने अंश मे दुःख है उतने अंश मे हम दुःखी हो जाते है । जैसे गुलाब का फूल कितना सुन्दर है किन्तु जहाँ यह लगा है वहाँ कांटा भी है । गुलाब कांटे में उंगली लग गई तो पीड़ा हो जाएगी । दुख हो जाएगा । हमारे जीवन में जितने भी सुख है, दुख उस की बगल में बैठा है । दुःख उस के पीछे छिपा हुआ है । जब वो प्रकट हो जाए तो सुख छिप जाएगा । जहाँ दुःख का समय गया तो सुख आ जाएगा । एक बात और समझो सुख और दुःख एक ही जगह से दोनों उत्पन्न हो रहे है सु और दु को हटा दो तो क्या रह जाएगा । 'ख' खं ब्रह्म श्रुति कहती है यह खं ब्रह्म है । ख नाम है आकाश का जैसे आकाश व्यापक है ऐसे ही यह तुम्हारी आत्मा परिपूर्ण है । जितना लम्बा चौड़ा यह शरीर है आत्मा उतनी नहीं है । यत्देव कं तदेव खं । कं शब्द का अर्थ भी सुख ही है इसलिए कहा सुख आत्मा रूप ही है ब्रह्म रूप ही है ।

मनुष्य को सुख कब होता है । जब उसकी बुद्धि शान्त होती है, प्रसन्न होती है तो सुख आता है । सब सत्सङ्गी हों । सब समझदार हो यह शरीर ही है अपना । यह कब तक प्यारा लगता है ? जब तक चेतन है, जहाँ चेतन के करंट से परे हुआ फिर यह किसको प्यारा है । तो तुम्हारे को सुख देने वाला कौन है ? यह आत्मा ही सुख देने वाला है । जब तक शरीर मे दीखेगा तभी तक प्यारा है। जहाँ चेतन आत्मा का दीखना बन्द हो गया बस फिर यह शरीर प्यारा नहीं । फिर हम इस शरीर की आहुति दे देते है । अग्नि में । यह जो ब्रह्म तुम्हारी आत्मा है खं, यह हृदयाकाश में है । हृदयाकाश मे बुद्धि भी रह रहीं है, जब यह बुद्धि सात्विक होगी तो खं के साथ 'सु' जोड़ेगी । तब सुख हो जाएगा । बुद्धि शान्त होगी, निर्मल होगी तो सुख निकल कर आ जाएगा । इसका सीधा अर्थ है कि बुद्धि अगर अशान्त हुई, अप्रसन्न हुई तो सु तो जुड़ता नही । फिर क्या जुड़ता है । दु जोड़ेगी तो जहाँ से सुख निकल कर आ रहा था वहीं से दुःख निकल कर आ जाता है ।

मनुष्य के लिए उपदेश इसलिए है कि वह अपनी बुद्धि को शुद्ध रखे । निर्मल और शान्त रखे । हृदयाकाश मे जो ख है उस आत्मा, ब्रह्म से सु मिलेगा

तो सुख मिलेगा और नहीं तो दु मिलेगा और निकलेगा यहाँ दुःख। कहीं से सुख लेने जाना नहीं है। कही दुःख लेने भी जाना नही। कोई भी दूसरी दुकान इस माया भगवती ने खोली नहीं है। केवल बुद्धिमान इस बुद्धि को ठीक रखे। अपने विचार को ठीक रखने के लिए आत्मा का विचार करो। इस आत्मा का विचार करते २ महान पुण्य से ब्रह्मलोक तक का व्याख्यान है किन्तु ब्रह्मलोक जाना कैसे है? यह विचार आ रहा है। आकाश तो खुला ही है सब जगह किन्तु heavy jet उड़ते है उनका भी रास्ता बनाया हुआ है बुद्धिमानों ने। अगर उस रास्ते से वो jet भटक जाएगा तो गन्तव्य तक नहीं जा पायेगा। इसलिए आकाश मे भी रास्ता बनाया हुआ है कि अमुक विमान को अमुक रास्ते से जाना है।

पुराने ऋषि महर्षि तत्त्व ज्ञानी हुए। उन्होंने तुम्हारे जीवन के लिए सारे प्लान बनाए हुए है। कोई भी प्लान तुम्हारे जीवन का उसके लिए अज्ञात नहीं था। इसलिए श्रुति इस हृदय को पकड़ती है। तुम्हारा हृदय नाभि से दस अंगुल ऊपर है। और गले के नीचे जो कंठ कूप है इससे दस अंगुल नीचे है। इस कंठ कूप को विशुद्ध चक्र भी कहते है। हृदय मे और हार्ट मे फर्क समझो। हार्ट heart left side मे है और यह blood pumping station है। यह हृदय तुम्हारी अन्तरात्मा का बंगला है। यह आत्मा इसमे रहता है। उस हृदय के बारे मे श्रुति व्याख्यान करती है 'अंगुष्ठमात्रपुरुषोऽन्तरात्मा सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः ततं स्वाच्छरीरात् ··· छुक्रममृतम्।

इस हृदय को श्रुति अंगुष्ठा मात्र कह रही है। मनुष्य के हृदय का जो विचार है कि यह मनुष्य के अंगुठे के बराबर है। इस हृदय मे एक सौ एक नाड़ियों का परिवेष्टव्य है। 101 नाड़ियाँ वहाँ पर लपेटा मार कर बैठी हुइ हैं। जैसे वृक्ष को लता लपेटती है। लता वृक्ष को लपेट उसके ऊपर चढ जाती है। ऐसे ही तुम्हारे हृदय को 101 नाडी लपेटे हुए हैं। 'ऊर्ध्वनालो अधः मुख' ऊपर की ओर नाल है नीचे मुख है। इस मुख मे, जैसे गऊ का स्तन होता है उसकी तरह इस मे छेद है। यहाँ शहरों मे रहने वाले तो बेचारे गाय की पूंछ भी नहीं देख पाते गऊ को तो छोड़ो। चाहते तो हैं कि हमको शुद्ध दूध पीने को मिले किन्तु वो जो दूध देगा वो कितना शुद्ध कर के देगा? उसको अपना भी तो ख्याल

हैं घर वाली भी है वह भी तो कुछ निकालेगी । एक बाबू जी थे, एक दिन बोले बेलनदास । हाँ बाबुजी । कल तुम्हारे दूध मे मेढकी का बच्चा क्यों निकला ? वह पूछता है देने कौन आया था बाबू जी ? कहा तुम्हारा लड़का ही आया था । आप जानते ही हो कुछ जेब खर्च तो मैं ही निकालता हूँ कुछ घरवाली भी निकालती है । कल वो भूरा आ गया तो pocket खर्च वह भी तो निकालेगा ।तीन२ pocket खर्च निकाल रहे है और तुम कहो कि शुद्ध दूध पीनें को मिले तो कैसे मिलेगा ? यह तो वह मूर्ख था वो जहाँ से पानी मिलाया वहाँ से मेंढकी का बच्चा भी उसमे चला आया ।

हम लोग चाहते हैं कि शुद्ध दूध मिले तो गऊ के स्तन मे घुस जाओ फिर देखो कितना शुद्ध है वह दूध । इसी तरह गऊ के स्तन की तरह है तुम्हारा हृदय । उसके अन्दर 'हिता' नाम की एक नाडी नीचे उतरती है । ऊर्ध्व नालो अधोः मुखः । इस छेद के अन्दर प्रवेश करती है । जिस समय यह नाडी अन्दर घुसती है इस नाडी को मन पकडता है । कहते हैं न हमारा मन चंचल है । यह मन वहाँ रहता है । उस नाडी को पकड कर बैठा है । उस मन के अन्दर चेतन का आभास, आत्मा का तेज । यह साक्षी है अन्तरात्मा । अपने अनुभव के लिए समझो, एक शीशा लो, उसको सूर्य की ओर करो । सूर्य का reflection आएगा । उस reflection को दीवार मे मारो जहाँ वह refletion पडेगा वहाँ प्रकाश बढ जाएगा । यूं सामान्य प्रकाश तो दीवार पर है ही । किन्तु यह विशेष प्रकाश हो गया । वो जो महान परमात्मा है, सूर्य का भी सूर्य है । जिसकी सत्ता के बिना एक कण भी नहीं हिल सकता । एक रोम को भी पकड कर खीचों तो कैसे समाचार पहुँचता है । यद्यपि बोलने के लिए मुँह बनाया है किन्तु यहाँ समाचार जाएगा तब मुँह बोलेगा । मित्र आया । आते ही बोलना ठीक नहीं समझा । उसने आते ही केस खींचा, तो झट कहोगे अरे क्या कर रहे हो ? तो बोलो विश्वात्मा है कि नहीं तुम्हारी आत्मा ? श्रुति कहती है –

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ।

यजुर्वेदीय ईशावास्योपनिषद् है । मंत्र कहता है 'ईशावास्य' बेटा यह

जो कुछ भी है यह ईशावास्य है । माने यह उस ईश्वर से व्याप्त है । जैसे इस फूल को देखो । कण २ मे रस व्याप्त है । कोई कण इसका खाली नहीं है जहाँ पानी न हो । तभी यह इतना सुन्दर लगा रहा है । इसी तरह यह सारा जगत भी है । इस जगत का कोई भी कोना उसकी सत्ता से खाली नहीं है । यह भरा हुआ जगत किसी को प्यारा नहीं लगता । जैसे मुर्दा शरीर किसी को प्यारा नहीं । देखो यह पृथ्वी कितनी सुन्दर लगती है, यह जल कितना प्यारा लगता है । यह तेज कितना सुन्दर हैं । दो घण्टे पानी न मिले तो देखो क्या हाल होता है । अग्नि न मिले तो तुम्हारे शरीर मे blood जम जाएगा । जैसे फ्रिज मे वाष्प जम जाता है ऐसे ही । यह अग्नि की ही कृपा है कि खून चल रहा है ।

यह सब भूत अपने स्वरूप से बडे सुन्दर हैं, बडे प्यारे हैं । किन्तु इन की जो सुन्दरता है, जो भी इनका प्यारापन है यह इनका स्वभाव से नहीं । अपने शरीर मे ही समझो । तुम्हारा शरीर अपने स्वरूप मे न प्यारा है न सुन्दर है । अगर चेतन तुम्हारे शरीर को छोड देवे तो शरीर कितना प्यारा है ? कितना सुन्दर है ? चेतन है तो शरीर प्यारा है । तो चेतन प्यारा है कि शरीर प्यारा ? चेतन ही प्यारा है । चेतन है तो यह शरीर भी प्यारा है । और जो प्यारे हैं वो दीखते हैं प्यारे है नहीं । जो प्यारा है वह मुँह नहीं दिखाता । जो प्यारा है उसके विना कुछ दीखता भी नहीं । इसलिए मंत्र कहता है : 'ईशावास्यमिदं सर्वं' माने नाम रूपात्मक जगत सर्व इस जगत मे जो कुछ भी है वो 'ईशावास्यं' सब परमात्मा ही है । 'तेन त्यक्तेन' मंत्र आगे कहता है, संसार के भोगों का जो राग तुम्हारे अन्दर जड जमा कर बैठा है, इस राग का त्याग नहीं करोगे, राग को छोडोगे नहीं तो तुमको भी कोई छोडेगा नहीं ।

सन्त एक बडा अच्छा दृष्टान्त देते है । पशुपति मे लाल मुँह वाले बन्दर होते हैं न । शिकारी लोग पहले जंगल मे शिकार करने जाते थे । एक बडी हंडी लेकर उसमे खाने के फल डाल देते हैं । बन्दर की आदत होती है दोनों हाथ डाल देगा । खाने की चीज लेने के लिए दोनों हाथ हंडी मे डाले । हाथ मे फल मुट्ठि बन्द कर ली । अब हाथ बाहर निकालने के लिए हाथ खींचता है । हंडी का मुँह छोटा है, मुट्ठी बन्द की हुई है, हाथ बाहर आता नहीं । लोभ के कारण

मुट्ठी खोलता नहीं। चीं चीं करता है। चिल्लाता है। समझता है कि किसी ने मेरा हाथ पकड लिया है। पकडा किसी ने है नहीं। अपने ही अपने को पकडा हुआ है। थोडी देर मे वो शिकारी आता है, गले मे रस्सी डालता है और पकड लेता है। यह जीव भी इसी तरह दो हाथों से संसार के पदार्थों को पकडता है। यह हाथ हैं अहंता और ममता। अहं भाव से शरीर को और मम भाव से इस जगत को पकडा। उसमे थोडी भक्ति भी आ जाए, थोडा परमात्मा का विचार भी आ जाए तो भी अहंता ममता से जो संसार को पकड कर रखा है मन से ध्यान भी उसीका करता है। नौजवान लडके थे। दिन भर मटर गश्ती करते रहे। सायं काल सोचा कि नौका मे बैठ कर चले जाएँ। नौका मे बैठ गये और चप्पू चलाने लगे। नौका हिलने लगी। चांदनी रात थी। नदी की लहरों मे नौका हिल रही है। खूब तेजी से चप्पू चला रहे है। वो समझ रहे है कि हमारी नौका खूब तेजी से, पूरी speed से चल रही है। रात भर इसी तरह चप्पू चलाते रहे। सोच रहे है कि बहुत दूर निकल आए है। किन्तु सबेरे देखा तो वहीं के वहीं। काश्मीर मे ही रह गये। चारों ओर पहाड और बडे २ पेड दीखने लगे। देखा तो रस्से तो खोले ही नहीं। वहीं बंधे पडे है और नौका चलाते रहे।

इसी तरह यह भक्त हृदय जो है वो परमात्मा का ध्यान तो करते है किन्तु अहंता और ममता रूपी रस्सों से बंधे पडे है तो नौका आगे जाने वाली नहीं। चार अंगुल भी नहीं मिलने वाली। इसलिए अहंता और ममता से ऊपर उठना पडेगा। पहले यह विचार करके देखो आज जो शरीर का आकार दीखता है क्या बीस वर्ष पहले यह आकार था? तीस वर्ष पहले अपने भी अंगूठा चूसते होंगे। दीखता है वह पराया निकलता है। जो दीखता है पराया वो निकलता है अपना। इसलिए उस अहंता और ममता से ऊपर उठो। सत्य की खोज करो। सत्य का बिचार करने के लिए मंत्र कहता है 'ईशावास्यमिदं सर्वं' तेन त्यक्तेन त्यक्तेन माने त्यागेन। इस अहंता ममता का त्याग करो। 'आत्मानं पालय' आत्मा की रक्षा करो। कहोगे महाराज यह आत्मा तो हमारी रक्षा करता है, हम इसकी रक्षा कैसे करे? रक्षा तो वो ही अपनी कर रहा है किन्तु इस बात को समझना है। आत्मा को समझ जाओगे तो अहंता ममता छूट जाएगी। अहंता

ममता छूट गई तो शोक मोह का आना बन्द हो जाएगा । तुम को ,किसी का जन्म मरण नहीं दीखेगा । किसी का जन्म नहीं दीखेगा तो मरण भी नहीं दीखेगा और जन्म मरण से ही तो अहंता ममता और शोक मोह है । शोक मोह का नाम ही दुःख है ।

एक बात और समझो । आज कल सर्जरी विज्ञान कितना बढ गया है आपरेशन छोटा होता है वहीं 'इन्जैक्शन' लगा कर सुन्न कर देते है । और काट पीट कर सी भी देते है । senseless कर दिया मालूम नहीं पडा । तुम क्या समझते हो पीड़ा नहीं होती ? कटा है तो पीडा भी होगी । जब होश मे आया मालूम पडी । आपरेशन बड़ा होता है तो पूरा बेहोश कर देते है । इसका अर्थ क्या है कि डाक्टर ने अज्ञान की गुफा मे तुमको बन्द कर दिया । अपना हाकी फुटबाल खेला और सी सा कर बन्द कर दिया । डाक्टर ने इतना काम तो किया किन्तु अब इस घाव को डाक्टर ठीक नहीं कर सकता अब ठीक कौन करेगा ? तुमने ही ठीक करना है । तुम रहोगे तो घाव जल्दी ठीक हो जाएगा । अगर तुम शरीर को छोड़ कर चले गये तो मुर्दा क्या करेगा ? इस प्रकार ठीक तो तुम स्वयं कर रहे हो और कह रहे हो कि डाक्टर ठीक करता है । तुम्हारा स्वरूप कौन सा है ? सत्चित् आनन्द स्वरूप तम हो । हृदयाकाश मे हिता नाम का करंट है । उस मन मे चेतन का reflection आ रहा है वो चेतन तुम्हीं हो । यह मन बडा भारी heavy कैमरा है । mirror है । बड़ा दिव्य शीशा समझो । इस मनमे दिव्यात्मा का आभास आया । यह चिदाभास सहित जो मन है यह अहं अहं करता है सामान्य अहंकार है । इस अहं का असली रूप कौन है । असली क्या है ? न तो यह मन असली न प्रतिबिम्ब असली । जिसका प्रतिबिम्ब है वो ही असली है । तो अहंका लक्ष्यार्थ कौन हुआ । न यह प्रतिबिम्ब लक्ष्यार्थ है न यह मन लक्ष्यार्थ है । लक्ष्यार्थ तो वो है जा चेतन मात्र है ।

दीखने के लिए लोग बडे सजधज कर जाते हैं । कभी २ बरात निकलती है तो जवान क्या बुढा भी सजधज कर जाते हैं । जमती निकलती सब सज कर जाएंगे । जब बारात वहाँ पहुंचती है तो कौन किसकों देखता है ? सब दूल्हे की ओर देखते है । लक्ष्य दूल्हा ही होता है । छोकरा एक आंख वाला है कि तीन

आंख वाला। सजे धजे सब है। इस से इतना ही मालूल पडेगा कि अच्छे घर के है। केवल दूल्हे को सजा कर ले जाओ और बाकी सब फटे पुराने कपडे पहन कर चले जाएँ। किसी की एक मूंछ कटी हो। किसी की दोनों मूछें साफ। देखने वाले क्या कहेंगे ? क्या पागलों का टौला है। सब सज कर गये पर देखने की चीज क्या है ? एक ही है। इसी तरह सारा ब्रह्माण्ड सजा हुआ तो है किन्तु उस एक के विना सारे ब्रह्माण्ड की कौन सी चीज सुन्दर है ? कोई भी चीज सुन्दरे नहीं। इसलिए उस एक पर नजर रख कर संसार मे play करो। कर्म तो करना पडेगा। यह सब धन्धे तो करने पडेंगे। बेटा भी बनो' बेटी भी बनो, मां बाप भी बनो वो जो एक है वो सत्चित् आनन्द स्वरूप है। नजर उस एक आत्मा पर रखो मंत्र कहता है 'अंगुष्ठ मात्र हि पुरुषोऽन्तरात्मा सदाजनानां हृदये सन्निविष्ट:' वह अगुष्ठ मात्र पुरुष इस हृदय मे प्रवेश किए हुए है। हृदय की व्याख्या पहले कर के आए है। इसमे वो आत्मा सन्निविष्ट है। इसको अपने शरीर से जुदा करो। 'मून्जादिवेषिकां धैर्येण' जुदा करने का मतलब है इसको जुदा कर के समझो। शरीर से जुदा तो मृत्यु देवता कर देगा। जहाँ इसको जुदा कर दिया यह शरीर मुर्दा समझो। फिर इसको घर मे कोई नहीं रखेगा। ऐसा जुदा नही करना। अपने को शरीर से जुदा समझना है। केवल समझ लो कि दूध मे मक्खन है। वही तत्त्व है, वही सार है।

इसी तरह अपने शरीर मे समझो। यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा ही सार है। यही तत्त्व है और यह तत्त्व ही मैं हूँ। मैं यह शरीर नहीं हूँ। यह शरीर तो मेरे पूर्व जन्म के कर्मो का बोझा है। हम उठाए २ घूम रहे है। जहाँ वो कहेगा कि भगत इसको यहाँ रख दे, वही रख देंगे। फिर यह नहीं उठाएगा। दूसरे लोग ही उठा कर ले जाएंगे। मुन्जा नाम की एक घास होती है वर्षा ऋतु में। उसको यूं पकड कर खीचो तो अन्दर से कोमल शलाका निकलती है। इसी तरह यह जो तुम्हारा शरीर है स्थूल, सूक्ष्म और कारण। उन तीनों शरीरों से से अपने को जुदा करना है। स्थूल शरीर से जुदा करने लिए तो भगवान ने एक नौकर भी रखा है। जैसे धनी मानी लोग अपने बच्चों की ड्रेस बदलने के लिए नौकर रखते है। उसको आया भी कहते है। इसी तरह भगवान ने काल देवता रखा है। वह देखता है कि ड्राईक्लीन करने से जहाँ तक काम चलता है वहाँ तक

तो चलाता है । और जहाँ देखा कि अब dry cleaning से काम नहीं चलता तो झट से खींच कर इसे निकाल दिया । दूसरा नया dress अगले स्टेशन पर मिलेगा । जहाँ नया ड्रेस पहनाया । यहाँ वाले रोएंगे और नये लोग खुशी मनाएंगे । अब बताओ मरे कि यहाँ आ गये । इसलिए मरा भी नहीं, आया भी नहीं । केवल शकल change हो गई । पहले मालिक दूसरे थे, अब दूसरे हो गये । कौन किसका मालिक इसलिए विवेकशील मुमुक्षु के लिए कहा है कि अहंता ममता से अपसे को मत बांधो । गाय की तरह मत बनो । गाय की तरह चरने गये । लौट कर फिर खूंटे से बांध दिया क्यों । आदत पड गई है । वहीं बन्धी रहती थी । जो मिलता था खा लेती थी । जब आंख खुली तो वहीं के वही । अहंता और ममता रूपी रस्सों से बंधे पडे है । समझ ही नहीं पाते कि हम है कौन ? तुम्हरे बिना न अहंता न ममता ।

श्रुति कहती है स्वशरीरात् धैर्येण मुन्जादिवेषिका बडे धैर्य से आत्मा को इस शरीर से जुदा कर के समझो । धैर्य इसलिए कहा कि चटपट कुछ होने वाला नही । बच्चे well unified होने के लिए कितने वर्ष पढना पडता है । जब कि वो लौकिक विद्या है worldly विद्या है । तो यह बताओ आत्मा के बिना कौन सी विद्या पढाई जाए । जिसके बिना कोई विद्या तुम पढ नहीं सकते, उसको पढने के लिए कितना time लगेगा । अध्यात्मविद्या विद्यानाम भगवान कहते हैं विद्याओं मे मैं अध्यात्म विद्या हुँ । जिसका मैं भला करने आता हूँ उसके सामने इस ब्रह्म विद्या के रूप में प्रकट होता हूँ । मुमुक्षु इस ब्रह्मविद्या को श्रद्धा से धारण करे । दूसरों को देखना बडा सरल है किन्तु अपने को देखना टेढा है । और दूसरी ओर अपने को देखना बडा सरल है किन्तु दूसरे को समझना टेढा है । गप्प नहीं लगा रहा । अपनी पत्नी है उसको कहो जरा सामने बैठ जाओ । वो कहेगी क्यों ? तो क्यों का प्रश्न खडा हो जाता है दूसरे को देखने में पर अपने को देखने कें लिए किसी से पूछना नहीं, किसी को कहना नहीं ।

सौर तेज नाम की नाडी आने वाली । कल उसीका वर्णन करेगे । अब सीधे होकर बैठो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२२-५-८८

प्रवचन सं०-४४

"ॐ तद्यथा महापथ आतत उभौ ग्रामौ गच्छतीमं चामुं चैवमेवैता आदित्यस्य रश्मय उभौ लोकौ गच्छन्तीमं चामुं चामुष्मादादित्यात्प्रतायन्ते ता आसु नाडीषु सृप्ता आभ्यो नाडीभ्यः प्रतायन्ते तेऽमुष्मिन्नादित्ये सृप्ताः ।।"

(छान्दो. ५-६-२)

कल विचार किया था कि यह तुम्हारी आत्मा ब्रह्म लोक कसे जाएगी। सब लोकों से श्रेष्ठ ब्रह्म लोक है। जिस ब्रह्मलोक के बारे मे थोडी सी चर्चा कर कर के आए हैं। श्रुति ने कहा था कि अंगुठे जितना बडा हृदय देश है। 'अंगुष्ठ मात्र पुरुषो अन्तरात्मा' यह अंगूठे जितना हृदय का स्थान माने हृदय अंगूठे जितना बडा। उस अन्तरात्मा को अंगूठे जितना बड़ा कह रही है श्रुति। यह यह मनुष्य का अंगूठा है। वो तो सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा, जिसका 'अहं' रूप से भान होता है। इस हृदय में उसका साक्षात्कार करो। पुरुष कह रही है। पुरुष शरीर का नाम नहीं है। पुरुष है इस चेतन का नाम। पूरयति पुरुषः। यह पूर्ण है तुम्हारी आत्मा। जिस समय यह मन को पकडती है उस समय यह जीव बनता है। तो मोक्ष क्या करना है? इसको मन से जुदा करना है। मोक्ष और कुछ भी नहीं करना। केवल इस मन से जुदा करना है। मृत्यु इस शरीर से जुदा कर देता है। मृत्यु से सारी दुनियाँ डरती है क्योंकि यह मृत्यु इस शरीर से जुदा कर देता है। जैसे हम लोग सुन्दर २ ड्रेस सिलवाते है। जब तक वो ड्रेस हम पहनते है अगर वो कहीं से फट जाती है तो फिर सिलवा लेते है।

इसी तरह यह स्थूल शरीर भी एक बडी सुन्दर ड्रेस है। डाक्टर को भी

tailor ही समझो । कहीं इस शरीर रूपी ड्रेस मे गड़वड होती है तो डाक्टर इसको ठीक करता है । जब काटने पीटने से भी ठीक नहीं होता तो मृत्यु देवता आता है । वो कहता है हम को दे दो, अब छोडो इसको । जब उसने माग लिया तो ना करना भी अच्छा नहीं । लो अब तुम ले जाओ हमने तो अपना काम कर लिया । मृत्यु देवता ने शरीर से जुदा कर दिया । लोगों ने कहा मर गया । कुछ मरा वरा नहीं । बस दीखता नहीं अब उस रूप मे । अगर दिखाई पड़ने लगे तो मर गया कोई नहीं कहेगा । किन्तु शरीर के बिना दीखना अमंगल है । लोग चिल्लाएँगे भूत हो गया है । माया ने नियम रखा कि शरीर छूटने के बाद तुम किसी को दिखाई न पडो । इसी मे कल्याण है । इसलिए अब यहां से चले जाओ ।

आस्तिक परम्परा मे जो बडे तत्त्ववेत्ता ऋषि हुए 12 दिन तक तुम्हारा श्राद्ध करते हैं । तेरहवें दिन पुत्र ने अपनी जातिवालों को, ब्राह्मणों को इकट्ठा किया । पिता को विदा दे कर हाथ जोडे । अब हमारा तुम्हारा कोई नाता नहीं । अब तुम्हारा जो लोक है तुम्हारे कर्म भोग का, उधर चले जाओ । इधर आने की जरूरत नहीं । इधर आना भी हो तो जिस शकल मे गये हो उस शकल मे नहीं आना । कभी २ बेटे का बेटा बन कर आ जाता है । पुत्री की पुत्री बन कर लौट आता है । किन्तु जिस शकल में थे उस शकल मे अब नहीं दिखाई पडते । ऐसी हालत मे यह आत्मविद्या, ब्रह्मविद्या क्या काम करती है । शरीर से तुमको जुदा नहीं करती । यह शरीर के अहंकार को मारती है । इस मन से जुदा कर देती है । जैसे इस शरीर से मनुष्य बने हम । मन ने जीव बनाया है तुम को । श्रुति ने शास्त्र ने बुद्धिमान आचार्य ने उपदेश किया, मन से जुदा तुम्हारे स्वरूप का व्याखयान किया तो क्या समझाएगा कि मन से प्यारा तुम्हारा स्वरूप ब्रह्म स्वरूप है । तुम संसारी नहीं हो । कर्त्ता नहीं हो । भोक्ता नहीं हो । ऐसा वो तुम्हारा शुद्ध स्वरूप है । उस शुद्ध स्वरूप का बोध यदि इसी शरीर मे हो गया तो मोक्ष मे चला जाएगा और यदि इस शरीर मे बोध मे कसर रहती है, अनादि काल से हम जो भोगों को भोगते चले आ रहे हैं, इन भोगों की वासना अन्दर रह जाती है कभी २ । वासना का क्षय नहीं होता इसलिए यदि थोडी सी वासना अन्दर रह गई, मोक्षगामी पुण्य तो उत्पन्न हो गया है पर यह पुण्य तुमको स्वर्ग

नहीं भेजेगा, ब्रह्मलोक भेजेगा । ब्रह्मलोक कैसे जाता है ? इसका थोडा विचार करते है । कल कहा था अगुष्ठ मात्र पुरुषोह्यन्तरात्मा यह अंगूठे जितना बडा हृदय है । 101 नाडी का जाल है जिसमे 101 नाडी हृदय का लपेटा मार कर बैठी है । आगे वर्णन है एक २ नाडी को शाखाएँ है वो 72 हजार तक माना गया है है । इतना बडा जाल इन नाडियों का इस शरीर मे है । इस जाल मे यह शरीर बंधा हुआ है । कुछ blood को फैंकने वाली नाडिया है । डाक्टर इनका विचार करता है । यूं छोटी मोटी नाडियाँ कट भी जाती है । नाडियों के कट जाने से शरीर टेढा मेढा हो जाता है । इसलिए इनका थोडा विचार करते है ।

यह जो हृदय स्थान है, इस हृदय स्थान के बारे मे कहा ब्रह्मोपासना स्थानगस्य इस हृदय मे ब्रह्म की उपासना करना चाहिए । इस ब्रह्म को दहर कहा । दहरोपासना है । इस ब्रह्म कीं हृदयाकाश मे उपासना करो । 'नाड्यो हृदयमांसपिंड सर्वगो विनिसृत:' उस हृदयपिंड से यह नाडिया बाहर की ओर निकली हुई है । इन नाडियां मे एक बात और समझो, वात, पित्त और कफ यह तीन चीजें तुम्हारे शरीर मे है । जो अन्न हम खाते है उस अन्न से पित्त बनता है बात बनता है और कफ बनता है । यह तीनों सन्तुलित रहेगी तो शरीर स्वास्थ रहेगा । पर यदि तीनों मे कोई एक बढ गया तो शरीर मे कोई बीमारी हो जाएगी । कभी पित्त बढ गया, कभी बात बढ गया, कभी कफ बढ गया तो रोग हो जाएगा । यहाँ पित्त को कहते है वो गर्म ज्यादा होता है । कहते है इस पित्त के साथ सूर्य का सम्बन्ध होता है । सौर सम्बन्ध है इस पित्त के साथ । जो नाडी पित्त को पकड कर फैंकेगी उस नाडी का सूर्य के साथ सम्बन्ध हो जाता है । पित्त की प्रधानता से वो नाडी पिङ्गला कहलाती है । पिङ्गला नाडी का सूर्य से सम्बन्ध है । इसके साथ यदि कफ की प्रधानता हो गई तो वो शुक्ल हो जाएगा । पित्त के साथ यदि वात का सम्बन्ध हो गया । तो नील वर्ण हो जाएगा । इस तरह हम लोगों के हृदय मे जो २ नाडियाँ है उनकी शक्ल भिन्न २ हो जाएगी । नाडियों की शक्ल मे भेद होगा । वात के साथ कफ मिल गया तो लोहित वर्ण हो जाएगा। माने लाल रंग की नाडी हो जाएगी । इस तरह यह बात, पित्त और कफ का प्रभाव शरीर के अन्दर होता रहता है ।

आद्य गुरु शंकराचार्य कहते है 'आदित्यसम्बन्धस्तत्तेजसो नाडीषु अनुगम्य एते वर्णा विशेषा:' आदित्य का सम्बन्ध हो गया इसलिए यह पिङ्गल वर्ण हो गई। एक बात और समझो, सूर्य के अन्दर भी आप लोगों ने सुना है, आस्तिक समाज है अपना इसलिए हम लोग ईश्वर को और ईश्वर की जो विशेषताएँ हैं उनको मानते है। आप लोगों ने सुना होगा कि सूर्य के सात घोडे होते है। माने सूर्य एक रथ पर चलता है और उस रथ में सात घोडे है। यह एक रूपक दिया है। यह नहीं कि सूर्य एक आदमी है, वो एक रथ पर बैठा है जिसके सात घोडे है। सूर्य के अन्दर सात प्रकार के रंग भासता है इन्हीं को सात घोडे कहा। और वो जो सात रंग है वास्तव मे इन्हीं की वर्षा इन वनस्पतियों मे हो रही है। इन वनस्पतियों मे जो भी लाल, पीले, नीले, हरे रंग दीखते है यह सब रंग सूर्य से हीं आते है। यह रंग कहीं और से नहीं आते। जैसे आज का विज्ञान है एक गुलाव है। उस गुलाव मे आपको लाल रंग भी चाहिए हरा रंग भी चाहिए, पीला भी चाहिए तो भिन्न २ रंगों के शीशे बांध दो। उस शीशे के Through जो सूर्य की किरण उस गुलाब के पेड कों मिली उसी २ रंग के फूल हो जाएँगें यह विलकुल वैज्ञानिक तथ्य है।

गुजरात मे जाम नगर स्टेट था। अच्छा स्टेट था। वहाँ पर बहुत पुराने समय का एक सूर्य चिकित्सा के लिए भवन बना हुआ है। आपके शरीर को सूर्य की कौन सी किरण चाहिए, रोग की दृष्टि से उस शीशे के सामने बैठ जाओ। वो भवन इस ढंग का बना है कि जैसे सूर्य की गति है गोलार्द्ध मे, ऐसे ही गोलार्द्ध मे वो शीशा घूमेगा और आपके शरीर को जो भी किरण चाहिए वो ही आपको मिलेगी। इससे रोग ठीक हो जाता हैं। सिलेरियम उसका नाम है। यह काफी पुराना बना हुआ है। अभी तक काम करता है। इस प्रकार जितने भी रंग है उन रंगों की वर्षा सूर्य से हो रही है। तुम्हारे अन्दर भी सूर्य का तेज आ रहा है, जो नाडी पित्त प्रधान है उसका पिङ्गल वर्ण हों गया है।

अगर तुम्हारा इतना सुन्दर पुण्य है और इतना सुन्दर योग है तो यह नाडी तुम्हारा सम्बन्ध सूर्य से करवाएगी और इसके द्वारा तुम्हारी आत्मा सूर्य मंडल को भेद कर आगे ब्रह्मलोक मे चली जाएगी। यह विचार आगे आने वाला

है। सूर्य का सम्बन्ध कैसे। इस के लिए दृष्टान्त देते है 'तद्यथा महापथः आततः उभौ ग्रामौ गच्छतीमं चामूं' श्रुति दृष्टान्त देती है, कोई विशाल मार्ग होता हैं लम्ब चौडा, वो इस ग्राम से उस ग्राम मे जाएगी। बीच मे चौक सा होता है। जैसे चक्रपथ है वो सब मार्गों को जोडता चला जाएगा। बीच मे चौंक भी आ जाएगा। इसी प्रकार बीच मे सूर्य है और ऊपर नीचे सब ओर रश्मियो का जाल है। इस विशाल मार्ग की तरह सूर्य की रश्मियों तुम्हारे से भी सम्बन्ध है ऊपर से भी सम्बन्ध है। सौर पिंड जो है वों तो बाल की तरह पिंड है, गोला है। तुम्हारी पृथ्वी सूर्य की अपेक्षा बहुत नीचे है। सूर्य की रश्मियाँ ऊपर भी जा रही हैं नीचे भी आ रही है। जो रश्मिया नीचे की ओर आई उनसे हमारा सम्बन्ध हो गया। जिस नाडी को पिङ्गल कह रहे है यह अध्यात्म नाडी है इससे सूर्य की रश्मि का सम्बन्ध हो गया।

'तद्यथाः महापथः आततः उभौ ग्रामौ गच्छतीमं चामुं चैवमे आदित्यस्य रश्मय उभौं लोकौ गच्छतीमं चामुं' इस लोक मे वो जो विशाल मार्ग है वो दोनों ग्रामो में जा रहा है। इसी तरह सूर्य की किरण हैं इनका तुम्हारे शरीर से सम्बन्ध हैं। तो अध्यात्म जो नाडी है तुम्हारी जिस नाडी को पिङ्गल शब्द से कह रहे हैं जिसमे पित्त की विशेषता है। उस नाडी का सम्बन्ध भी सूर्य से है। इस सम्बन्ध से जब शरीर छूटने लगता है, तो जाने के लिए मार्ग तो चाहिए, जैसे इस लौकिक जीवन मे भी देखो कहीं जाना होता है तो रास्ता तो चाहिए। मार्ग के बिना हम जा नहीं सकते। बढिया नही तो घटिया ही सही। इसी तरह शरीर छोडने के समय जब स्थूल शरीर से तुम्हारा प्राण जाएगा तो सीधा सूर्य को पार कर के ब्रह्मलोक मे पहुंच जाएगा। यह इतना महान ब्रह्मवेत्ता है कि यह साम्राज्य स्वर्ग में नहीं जाएगा। जैसे महाराजाधिराज है किसी देश मे गये तो किसी सामान्य होटल मे तो नहीं ठहरेगें। असलमे तो जिस देश मे जाएँगे उनके आतिथ्य में ही रहेंगे और यदि अपने होटल मे ही ठहरे तो किसी विशेष होटल में ही ठहरेगे। सामान्य आदमी सामान्य होटल मे ठहर जाता है। जितने ऐश्वर्य से आप चलेंगे उतने ही trigh होटल मे आपको रहना पडेगा। इस जीवन काल मे भी और इस जीवन से परे भी। सामान्य पुण्य कर के जो जाएगा वो सामान्य

लोक मे जाएगा। विशेष पुण्य कर के जाएगा तो विशेष ब्रह्मलोक मे जाएगा। उस ब्रह्मलोक में वो अनन्तकाल तक रहेगा क्योंकि उसकी कोई सीमा नहीं है। बडे आचार्यों का मत है कि जब तक ब्रह्मा की आयु है तब तक वे वहां रहेंगे। उनकी आयु अब कर्म के आधीन नही। स्वर्ग में जाने वाले जो देवता बन कर गये हैं उनकी आयु कर्म के अधीन है किन्तु यह अब केवल कर्म से नहीं गये। इनके अन्दर तो अब ज्ञान प्रकट हो गया है केवल थोडी सी कसर रह गई कि वो ज्ञान मोक्ष देने मे समर्थ नहीं हो सका। थोडी सी वासना ने घेर लिया इसलिए मोक्ष में नहीं जा सके। ब्रह्मलोक मे चले गये। ब्रह्मा की. आयु तक यहाँ रहेंगे इनके जो भोग है वो कल्पना किया और सामने वो भोग आ गये। यह उपन्यास की कल्पना नहीं कर रहे। जैसे भोजन कर के बिस्तर मे गये। स्वप्न मे जैसे विचित्र भोग देखते हो। किसी २ को लगता है कलकत्ता मे घूम रहे है। किसी को लगता है बम्बई मे घूम रहे हैं। कोई २ हिमालय मे पहुंच जाते हैं। जो गर्मी से परेशान हैं वो हिमालय की कल्पना कर के हिमालय मे पहुँच गये। ठंडी ठंडी वायु का सेवन कर रहे हैं। यह क्या हैं? तुम्हारे मन की कल्पना ही तो हैं।

यह तुम्हारा शरीर भी तुम्हारे मन की कल्पना का बाजार ही हैं। मन जो बुद्धिमान अच्छे विचारों में रखे। मन को यदि अच्छे विचार मे रखोगे तो मन अच्छा संकल्प करेगा। अच्छे विचार अच्छे संकल्प में नहीं रखोगे तो यह मन फिर अपने आप चलेगा। माया पुत्र है, यह जीव को पता नहीं कहाँ ले जाएगा उपनिषद में ही छटे अध्यायमे एक कथा आती है। जैसे आज कल डाकू किसी बडे सेठ को पकड कर जंगल में ले जाते। गान्धार देश था जहा की गान्धारी थी। यह पहले हिन्दु राष्ट्र था। गान्धार देश से एक बडे धनी मानी को डाकू ने पकडा और जंगल मे ले गये। आंख पर पट्टी बांध कर ले गये। आज कल तो ले जाकर पैसे की मांग करते है। उन्हो ने मांग कुछ नहीं किया। घोर जंगल मे ले जाकर एक विशाल पेड के साथ बाँध दिया। हाथ पैर बांध दिए। आंखों पर भी पट्टी बंधी है। इतना अच्छा था कि मुँह खुला था। चोर वहाँ इसको छोड कर चले गये। वहाँ से बचाओ २ चिल्लाता है। 'बद्धोहमस्मि' गान्धार

देश से लाकर मुझे यहाँ चोरो ने बांध दिया। अब यहाँ कौन सुने ? घोर जंगल था। आज कल तो हम ने उदारता से जंगल काट कुट कर साफ कर दिए हैं। पर पुराने जमाने में जंगल काटना पाप समझा जाता था। यह जंगल के पेड पौधे भी सब जीव है तामसी कर्म का भोग भोग रहे है। उनको भी जीने का अधिकार है। आयुर्वेद मे विधान है किसी भी पेड से कुछ काटने के पहले हाथ जोड कर उस पेड से क्षमा प्रार्थना करो कि हम अमुक काम के लिए यह काट रहे है। वडा विज्ञान था वो।

इधर यह चिल्ला रहा है, एक दिन, दो दिन, तीन दिन किसी ने आवाज सुनी। वह ढूंढते २ वहाँ आया और देखा कि पेड में आदमी बंधा हुआ है। उसने उसे देखा, रस्सा खोला, आंखों की पट्टी खोली और कहा कि भगवान इस दिशा मे गान्धार है। इधर तुम चले जाओं। काफी दूर है। एक दिन मे तो यह पहुंचा नहीं सकता। तो जैसे बुद्धिमान 'ग्रामाद्ग्रामं गान्धन् पृच्छन् गान्धारानेव सम्पद्येत' पूछता गया। लोग बताते गये कि इधर गान्धारन् है चले जाओ। तो यह पूछता है गान्धार पहुंच जाता है इसी प्रकार 'आचार्यवान् पुरुषो वेद' गुरु परम्परा से जिसने इस ब्रह्मविद्या को प्राप्त किया है वो इस ब्रह्म को जानेगा। यहाँ पर तुम्हारा पूर्व जन्म का जो कर्म है, जैसे उस चोरो ने गान्धार देश से ला कर बांध दिया था, ऐसे ही यहाँ पर भी है। इस शरीर को इस जंगल का बृक्ष समझो। इसके साथ तुम को कर्म रूपी चोर ने तुम्हें बांध दिया। तो भी भाग्य समझो यह चोर खराब नहीं है। अच्छे शरीर से बांधा है। इस मनुष्य शरीर के साथ तुम्हे बांधा है तो बढिया खाने को मिल रहा है। वाणी बोलने के लिए मिली है। हाथ सुन्दर कर्म करने के लिए मिले हैं। पैर सुन्दर स्थान मे जाने के लिए मिले है। सुन्दर विचार करने के लिए बुद्धि दे रखी है। इतनी facilities तुमको दे रखी है। यह जन्म की कृपा नहीं है। यह पूर्व जन्म के महान कर्म की कृपा है। ज्ञान की कृपा है कि तुमको उसने बडे सुन्दर शरीर मे बांध दिया है। हमारी आंखे तो खुली हुई हैं। किन्तु यह खुली आंखे भी बन्द ही हैं। आंख बन्द कर के देखो और अपने से पूछो कि 'मैं कौन हूँ' तो क्या कहोगे ? कहते हैं नहीं जानते। तो यह क्या है ? अज्ञान की पट्टी से ज्ञान

चक्षु बंधा हुआ है । उस ज्ञान चक्षु को बुद्धिमान आचार्य खोलता है कि बेटा 'स य एषोऽणिमा स आत्मा' हे सोम्य वो जो महान आत्मा है अणिमा माने सूक्ष्म है। महर्षि उद्दालक इस प्रकार श्वेतकेतु को उपदेश करते हुए समझाते है । 'तत्सत्यं' वो आत्मा ही सत्य है । यह जो दीखता यह सत्य नहीं है । 'स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो' महर्षि कहते है हे श्वेतकेतु वो आत्मा तू है । तू यह शरीर संघात नहीं यह जो लम्बा चौडा शरीर दीख रहा है तू यह नहीं । तू तो आत्मा ही है ।

इस लोक मे किसी से उसका Address पूछो और वह दूसरे के घर का Address बता दे । तो उसको क्या कहोगे ? सोचो अभी ही अपना Address देते तो वो किसका देते हो ? पता तो पडोसी का बता दिया तो मिलने वाला पूछता २ कहाँ पहुंचेगा ? पडोसी के घर । तो तुमको क्या कहेगा ? यह 50, 60 बर्ष का सारा Address उस पडोसी का ही है । इसी का जेब मे लिए २ घूमते है । आज कल फैशन है Address जेब मे रखना पडता है अपने सही Address की खोज करो । इस ब्रह्मविद्या के द्वारा उस सत्य की खोज करनी है । उस सत्य का पता मिल जाने से फिंर आने जाने की बात नहीं रहती। महर्षि कहते हैं कि बेटा 'तत्त्वमसि' वो सत्य तू ही है, तू वही आत्मा है । यहाँ पर जो सौर मंडल का हमारी इन नाडियों से सम्बन्ध है जो सौर तत्त्व को खींचने वाली हैं । यह जो सूर्य की रश्मियाँ है वो दोनों ओर जा रही है । 'उभौ लोकौ गच्छतीममुंच । वो जो रश्मियाँ है हमारी नाडियाँ है इन रश्यियों से सूर्य से मिल गई । सूर्य की रश्मियो का सम्बन्ध हमारे शरीर की नाडियों से हो गया । प्राण जब यहाँ से जाएगा इन नाडियों के द्वारा उन रश्मियों का पकडेगा । सूर्य मंडल का भेंदन कर के उपर चला जाएगा ।

महर्षि कहते है द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमंडल भेदिनौ, पारिव्राड् योगी यस्तुरणाभिमुखे हतः ।। एक तो यति । यति माने सन्यसी । परिव्राड् जिसके अन्दर योग है । योग माने ब्रह्माकार वृत्ति जिसकी है । वो जो मुमुक्षु है वो सूर्य मंडल का भेदन करेगा । 'यस्तु रणाभिमुखेहतः' अथवा जो रण मे, युद्ध मे लड़ते २ शत्रु के सम्मुख प्राण छोडेगा । भागते हुए नहीं । जो लड़ते २ संग्राम

मे मरेगा । शूरवीर की गति उसको मिलेगी । अपने राष्ट्र के लिए अपने धर्म के लिए, अपने समाज के लिए अपने प्राणों की बलि दे रहा है । आहुति दे रहा है । अपने लिए नहीं लड़ रहा इसलिए उसका इतना बडा पुण्य हो रहा है । जाति को सम्मान भी चाहिए, जाति को त्याग भी चाहिए । दूसरा जो है वो तप में है, त्याग मे है । यह जो उपनिषद विद्या है यह कोई मामूली खोज नहीं है । जगत मे मे सब से प्यारा अगर कुछ है तो कौन है ? बेटा बेटी, पति पत्नी सब बडे प्यारे है किन्तु आत्मा अगर नहीं होगा तो कौन कितना प्यारा है ? आत्मा के बिना न मां न पिता, न बेटा न बेटी । तो पहले क्या चाहिए ? आत्मा ही चाहिए । तो आत्मा कितना महान है ? उस आत्मा की खोज जिन्हों ने की वो कितने महान हैं ? इसलिए दूसरे देशों के विद्वान भी मुक्तकंठ से उस उपनिषद् विद्या की प्रशंसा करते हैं । यह विद्या ऐसी विद्या है जिस विद्या के पाने से मनुष्य जीवन की असली शान्ति पाता है । कृतार्थ हो जाता है । हिन्दु जाति की जो सारे विश्व मे प्रशंसा है यह क्यों है ? उन महान ऋषियों की कृपा से है जिन्हों ने अपने जीवन को तप और त्याग में लगाया और इस महान विद्या की खोज की ।

ब्रह्मलोक की बात चल रही है आगे और बिचार चलेगा ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२३-५-८८

प्रवचन सं०-४५

"ॐ तद्यत्रैतत्सुप्तः समस्तः सम्प्रसन्नः स्वप्नं न विजाना-
त्यासु तदा नाडीषु सृप्तो भवति तं न कश्चन पाप्मास्पृशति
तेजसा हि तदा सम्पन्नो भवति ।।"

(छान्दो. ८-६-३)

विचार है कि यह तुम्हारी आत्मा ब्रह्मलोक कैसे जाती है ? उसके बारे मे विचार चल रहा है । अनादि काल से जीव अविद्या के घेरे मे है । अविद्या कर्म काम उपासना आश्रय हैं । इतना बडा जंगल है । सब से प्रधान अविद्या है अविद्या माने igynorance पूछा कौन है ? कहते हैं नहीं जानते । नहीं जानते, यह जानते हैं । यह नहीं जानना भी जानता है । अविद्या का साक्षी अविद्या से परे है । इसलिए कहते हैं यह जीव अविद्या से बंधा हुआ है । यह अविद्या का बन्धन ऐसा है, एक विशाल हाथी है । किसी रस्से से बांध दो तो वह अपनी ताकत के बल से रस्से को तोड़ सकता है किन्तु यह अविद्या का बन्धन ऐसा है कि इसको तोड नहीं सकते । हाथी जैसा बल होगा तो भी यह टुटने वाला नहीं । जैसे अपने अनुभव मे समझो, मान लो एक सेठ का लड़का है । बहुत कम बच्चे समझदार होते है । लाड़ प्यार मे पलते हैं । घर में खाने पीने की कभी नहीं रहती इसलिते पढ़ते भी नहीं । अज्ञान मे ही रह जाते हैं, मूर्ख ही रह जाते हैं । सेठ जो वुढ्ढा है, सोचता है, हमारा एक ही बेटा है । जो कमाना नहीं जानता, खर्च करना भी जानता नहीं । जो कमाना जानता है वो खर्च करना भी जानता है । सम्पत्ति मे बडी मेहनत करनी पड़ती है । कोई यूं ही तो नहीं आती कि हिमालय मे पानी बरसा और सम्पति आ गई । उसके लिए मेहनत करनी पडती है । सेठ ने सोचा कि मेरा लड़का मेरे मर जाने के बाद सब उडा देगा । और यह भूखा नंगा ही

रह जाएगा। इसलिए बुद्धि की मांग है कि कुछ बुद्धि का चमत्कार छोड़ कर जाओ कि बेटा यदि उस चमत्कार से कुछ समझ जाएगा तो समझ जाएगा और ज्ञान यदि नहीं आता तो हजार जन्म मे नहीं आता। आने लगेगा तो एक सैकिण्ड भी नहीं लगता।

सेठ ने विचार किया कि क्या करना चाहिए ? बडा आलीशान बंगला बना हुआ है। उसमे एक मोटा सा लकड़ी आदमी की शकल का बनवा कर अन्दर से पोला करवा दिया। उसके अन्दर कीमती रत्न हीरे आदि भर दिए। छोकरे को पता नहीं लगने दिया। ऐसा pack कर दिया कि किसी को मालूल भी नहीं पडे और उसको आंगन के बीच मे गाढ दिया कि सब को दीखता रहे। क्योंकि उसके बीच मे धन गाढ रखा है। बही में लिख दिया कि कभी धन की कमी लगे, धन की जरूरत पडे तो तो खम्बा शाह सेठ से ले लेना। खम्बा शाह का Address तो कुछ लिखा नहीं। कालान्तर में सेठ बेचारा तो चला गया। जाना तो था ही क्योंकि यह तो मुसाफिर खाना है, जाना तो है ही सबको, सेठ भी चल बसा। लड़का सेठ बन गया। लगा दोस्तों के बीच बैठ कर धन उड़ाने। थोडे ही समय मे सारा धन उड़ा दिया। हालत खराब होने लगी। सोचा कि बही में देखूं शायद पिता जी ने कहीं किसी को कुछ दे रखा है। ढूढने पर खम्बा शाह का नाम मिला लेकिन Address तो कुछ हैं नहीं नहीं। लड़का परेशान हो गया। पर कहीं पता न चला। सेठ का एक मित्र था। एक दिन उस ने सोचा क्या बात है लड़का इतना परेशान क्यों हो गया। चल कर पता करूँ। मित्र का लड़का है, अपने बेटे जैसा ही है। उससे मिल कर पूछना चाहिए। गया। लडके ने बडा आदर किया और अपनी परेशानी बता दी। खम्बा शाह का पता पूछा। घर के अन्दर बाहर घूलने लगा। अन्दर गया तो देखा, एक लकडी का आदमी बना हुआ खड़ा है। सेठ समझ गया कि हो न हो यही होगा। पास जाकर देखा। एक मुक्का मारा। बुढा केवल देखने का बुढा थोडे ही था अकल से भी तो पका हुआ था। पोली लकड़ी का आवाज बदली हुई होती है। बुढ्ढा जान गया और आकर लड़के से बोला कि खम्बा शाह का पता तो मिल गया लेकिन देख बेट एक बात हमारी माननी पडैगी। तुम्हें हम खम्बा शाह से मिला देते है। लडका बड़ा प्रसन्न हो कर अंकल २ कहता है। अंकल शब्द का अर्थ है

जो गोदी मे खिलावे वह्‌ अंकल होता हैं। चाचा को भी अंकल बोलते हैं। बेटा बोला अंल मानुंगा। तो भीतर जाकर उसको बतो दिया कि यह तेरा अंकल खडा है। इसके अन्दर। यही खम्बा शाह है। इसी में सब धन रखा है किन्तु तुमको अब सोचना पडेगा कि धन को कैसे खर्च करना हैं। मूर्खता से चलेगा तो कुछ नहीं हो। अज्ञान से ही वो गरीब था। ज्ञान हो गया तो धनी हो गया।

यह तो दृष्टांत था। इसी तरह यहाँ भी समझो। परमात्मा को सेठ समझो और जीव को समझो छोकरा। समझ लिया कि यह मूर्ख है क्योंकि अविद्या काम, कर्म और संस्कार इसके पीछे पडे हैं। अविद्या पीछे पडी है। अहं २ तो करता जाता है, हम कौन हैं? जानना नहीं। इस अविद्या के साथ है। काम माने जन्म जन्मान्तर की कामना, वासना पडी हैं इसके अन्दर। जन्म जन्मान्तर के कर्म इसके अन्दर पडे हैं। जन्म जन्मातर के संस्कारी से बंधा है यह जीव। इनसे बंधा २ यह जीव जहाँ भी जाएगा इतना बन्ध इसके साथ रहेगा। अविद्या काम कर्म और संस्कार इसको छोडेंगे नहीं। जब अविद्या कटेगी तो संस्कार कटेंगे तो कर्म कटेगा। कर्म कटेगा तो वासना कटेगी। किन्तु एक बात ध्यान देने की है कि ब्रह्मलोक जाने वाले कें यह सब वहीं कट जाएँगे क्योंकि ब्रह्मलोक जाने वाला अभी सूक्ष्म शरीर के अन्दर है। जो कोक्ष में जाएगा वो सूक्ष्म शरीर से बाहर हों जाएगा। लेकिन ब्रह्मलोंक जाने वाला अभी सूक्ष्म शरीर में ही है।

पांच ज्ञानेन्द्रियाँ पांच कर्मेन्द्रियाँ, पंच प्राण, मन बुद्धि यह सत्रह तत्त्वों का सूक्ष्म शरीर और इसके साथ अविद्या माने कारण शरीर। यह दो नहीं कटेंगे। महान पुण्य था किन्तु थोडी इसके अन्दर वासना रह गई तब न ब्रह्मलोक गया वहाँ भी तो भोंग है। जो यहां से सद्य मोक्ष मे जाएगा सद्य माने इसी शरीर से मोक्ष मे जाएगा उसके ये कट जाएंगे। जो यह समझ कर जाएगा यह सत् चित् आनन्द शुद्ध, बुद्ध स्वभाव जो आत्मा है इसके अन्दर जन्म हे ही नहीं। 'सतो मायया जन्म तत्त्वान्नैवयुज्यते' आचार्य कहते हैं 'सतो मायया जन्म' उदाहरण के लिए समझो। कभी २ पर्दे मे समुद्र का सीन सामने आ रहा है, पर पर्दा सूखा है। वहाँ एक भी पानी की बूंद नही। कभीं अग्नि लग गई। ऐसा लगता है कि सब जल गया, किन्तु पर्दे पर कुछ होता है क्या? दीखता हैं। कभी २ नौजवान

को दो चार पहलवान डंडा लेकर पीट रहे हैं एक हरियाणा का जाट रहा । फिल्म देख रहा था । एक छोकरे के पीछे चार पांच जवान पीटने लगे । इसकी नसों का खून उबला कि एक छोकरे को चार पांच पीट रहे हैं । वह भूल गया कि फिल्म हाऊस मे बैठा हुआ है । इधर उधर देखा सब चुप चाप बैठे हैं । यह चिल्लाया, अरे हीजड़ो । देखते नहीं हो एक छोकरे को कितने लोग पीट रहे हैं । एक डंडा लेकर पर्दे मे मारा कि interval हो गया । सब साफ । भौचक्का रह गया । सब उसीका शो देखने लगे । यह सब अज्ञान से ही हुआ । उस ज्ञान हीं नही रहा ।

इसी तरह यह जो सत् है उसको फिल्मी पर्दे की तरह तरह निर्मल समझो । इससे जो जन्म दीखता है वो माया मात्र है । जैसे अभी लडके की पिटाई हो रही थी । समुद्र लहराता हुआ दीख रहा था । किन्तु न तों वहाँ लडके की पिटाई हो रही थी, न समुद्र ही था । पर्दा साफ ही हैं । जिस समय दीख रहे थे उस समय भी कुछ नहीं था । इसी तरह यह तुम्हारी आत्मा भी उस पर्दे की तरह निर्मल है । शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव है । इसके अन्दर जन्म जरा मरण आदि विकार कुछ भी नही है । इसलिए गौड़पादाचार्य कहते है :-

सतोहि मायया जन्म युज्यते मैव तत्त्वत: ।
तत्त्वतों जायते यस्य जातं तस्य हि जायते ।।

यदि तत्त्वत: जन्म मानोगे तों जन्म तो उसी का हुआ जो पहले ही था। केवल उपन्यास की घटना है ऐसा मत समझो । अपने शरीर को ही समझो । यह मान लो शरीर है, माता पिता के अनुग्रह से बना, किन्तु हम थे तब न यह शरीर बना । यदि हम न होते तब ? तो जन्म तुम्हारा हुआ कि शरीर का ? तुम तो अज के अज हों । इसलिए मुमुक्षु को ऐसा मानना पडेगा कि सत् जो है उसका जन्म नहीं । जन्म नहीं तो मरण भी नहीं । माता पिता ने किसको जन्म दिया ? इस शरीर को तुम्हारे रहने पर ही इस शरीर का जन्म हुआ । इस कवर का ही जन्म हुआ । और इसके जन्म को हमने अपना जन्म भान लिया । बस गल्ती यहीं हो गई । यह जो कहता है अपने हां हां करते चले जा रहे हैं । किन्तु विचार से जब देखोगे तो जन्म तुम्हारा नहीं शरीर का ही हुआ । जन्म केवल माया

मात्र ही है ।

असतो मायया जन्म तत्त्वतो नैव युज्यते । कहोगे कि असत् का जन्म हुआ । तो असत् का जन्म भी नहीं । सत् का जन्म नहीं हुआ तो असत का भी जन्म नहीं । जैसे लोक मे प्रसिद्ध है बंध्या , जिसका कोई बेटा बेटी न हो उस स्त्री को वंध्या कहते हैं, वंध्या मारे रूकी हुई है, इससे कुछ भी नहीं हुआ । वंध्यापुत्र प्रसिद्ध है, बंध्यापुत्र का जन्म होने वाला है क्या ? इसलिए आचार्य कहते हैं 'असतो मायया जन्म' न मायामय जन्म है और न तत्त्वतः जन्म है । तत्त्वतः मानें वास्तविक दृष्टि से । सत् के अन्दर जो जन्म की प्रतीति हुई वह मायिक है । जैसे उस पर्दे पर जो समुद्र की प्रतीति हुई वो मायिक हुई । अग्नि की प्रतीति मायिक है । ऐसे कैमरे से शूटिंग किया तुमको मालूम पडा कि यह समुद्र है, अग्नि है किन्तु है कुछ भी नहीं वहाँ । जब दृष्टि कैमरे की पकड से बाहर गई तो न समुद्र और न अग्नि । इसी तरह तुम्हारी यह अन्तरात्मा, इसके अन्दर माया भगवती ने यह मायामय संसार खडा कर दिया । मान लो, कल्पना करो कि यह अपना शरीर ही है, इस बात को हमने कई बार समझाया है । इस शरीर को एक बार बच्चा कर के दिखाया, हम उसको बच्चा कर के मानते भी रहे, अंगूठा भी चूसते रहे किन्तु सच्चे बच्चे बने कि झूटे ? देखने के ही बने थे । जवान लडके को अगर कोई बच्चा कहे तो आंख टेढी कर के देखेगा । उसको यह ज्ञान नहीं कि पिछले घाट पर बच्चे ही रहे । अब जवान दीखता है । उसीको २० बर्ष बाद देखोगे तो क्या हुआ ? जवानी का भट्ठा बैठ गया बुढ्ढे को जवान कहोगे तो बिगडेगा । सफेद चद्दर ओढ कर बैठ गया । जवान थे तब थे । ठीक है हमने शुद्ध दूध पिया है, पानी वाला नहीं पिया । आज कल तो पानी वाला ही मिलता है । बोतल की मम्मी हैं । पीओ तो तुम्हारी मर्जी दहीं पियो तो नहीं पियो । क्या करेगा बेचारा पीना ही पडेगा । तो असत् पदार्थ को तुम दिखा नहीं सकते । वंध्या पुत्र को माया के द्वारा भी तुम नहीं दिखा सकते । तत्त्वतः होना तो दूर की बात है । मानो नृसिंह । मनुष्य के सींग नहीं होते । एक शृङ्गी ऋषि का नाम सुनने में आता है किन्तु उसके बाद उसका कोई बेटा भी सींग वाला नहीं हुआ । यदि कोई कहे कि मेरी छाती मे पीडा हो रही है । डाक्टर ने कहा नर का सींग

घिस कर लगाओ पीडा दूर हो जाएगी। तो नर का सींग कहाँ खोजोगे ? न नर का सींग मिलेगा, न लेप होगा और न तुम्हारी पीडा दूर होंगी।

मिथ्या मे और असत में फर्क होता है। मिथ्या तो दीखता है किन्तु जैसा दीखता है वैसा होता नहीं। जैसे यह गुलाब का फूल है। कितना सुन्दर दीखता है किन्तु सायंकाल को इसकी पंखुडी २ अलग हो जाएगी। समझे हम सत् निकला असत् पदार्थ वो जिसका अस्तित्त्व ही नजर न आवे जैसे गगन कुसुम। अहा आज तो आकाश की ओर मैंने देखा क्या सुन्दर कमल के फूल खिले थे। ऐसा कोई गप्प मारे तो ? फूल अगर कोई होगा तो किसी पेड पर होगा। आकाश में कहाँ फूल लगेंगे। या बंध्यापुत्र कहे या शशशृङ्ग कहे। यह पदार्थ असत्य कहलाते हैं। किन्तु जो तुम्हारा आत्मा सत् चित् आनन्द स्वरूप है, जिसमे जन्म जरा, मरण कुछ नहीं मायिक है। मायामात्र है।

तुम्हारे अन्दर माया की फिलम चल रही है। उससे अहंता और ममता की गाडी आगे वढ रही है। अन्त मे न मैं निकला न मेरा। शरीर ने कहा मैं, शरीर के सम्बन्धो ने कहा मेरा। न मेरा निकला न तेरा। जिस Address को अभी तक पकड कर चल रहे हैं। आंख वन्द हो गई तो लौट कर तो आओ उस Address तक। क्या भूत का title मिलेगा। कहेंगे हमारे पिता जी भूत हो गये। लौटने का अधिकार नहीं। शुद्ध बुद्ध मुक्त चिन्मय अद्वय आत्मा है। इस आत्मा को पकडो। एक ने मूल पकडा कि यह मेरा पेड। एक ने शाखा पकड ली कि यह शाखा मेरी। दूसरे ने दूसरी शाखा पकड ली कि यह मेरी। तीसरे ने तीसरी शाखा पकड ली यह हमारी। इस तरह शाखा से शाखा पकडते गये। किन्तु जिसने मूल पेड का पकडा है उसका सारा पेड है। और जिसने शाखा पकडी उसका कुछ भी नहीं।

इस ब्रह्माण्ड का मूल क्या है ? तुम्हारी आत्मा। गीता में कहा 'ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्त्थ प्राहुरव्ययम्, छन्दासि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्' ऊर्ध्व मूल है यह तुम्हारी आत्मा। ऊर्ध्वमूल का अर्थ यह नहीं कि मूल ऊपर है। आचार्य ऊर्ध्वमूल का अर्थ करते है अतिश्रेठत्वात्, अति व्यापकत्वात् अति महत्त्वात् सब से श्रेष्ट हैं यह सब से व्यापक है। मायावि माया के कार्य से

व्यापक है। सब से पवित्र है यह इसलिए मूल है। जैसे लोक जीवन मे समझो राजा को हम सबसे ऊपर मानते है तो क्या वो हिमालय पर खडा है ? है तो हमारी तरह ही पृथ्वी पर रह रहा है किन्तु श्रेष्ठता मे वह हम से ऊपर है। ऐश्वर्य मे वह हम से ऊार है। परमात्मा ने उसको नरेन्द्र बनाया हम को नर बनाया इसलिए उसमें श्रेष्ठता है। राजा होने का अर्थ यह थोडे ही है कि वह 15 फुट का है और हम 5 फुट के। गुणों से वह श्रेष्ठ है, गुणों से वह ऊपर है, गुण से, ऐश्वर्य से, कर्म से वो महान है।

इसी तरह यह जो परमात्मा है यह माया और माया के प्रपञ्च से महान है। इसके जैसा कुछ नहीं। जैसे इस शरीर को ही समझो, आत्मा के होने से यह इतना प्यारा हैं। किन्तु जब आत्मा के प्यारे पन की पोल खुल जाती है तब यह किसी को प्यारा नही। छूता भी नहीं कोई इसको। माया और माया का प्रपञ्च हीन है। यह सब उससे नीचे है, अपकृष्ट है। इसकों अश्वत्थ कहा 'अश्वत्थं प्राहु' अश्वत्थ का अर्थ 'स्वस्वरूपंन तिष्ठति' यह संसार वृक्ष है। जैसे यह शरीर, उस का जो स्वरूप आज है वह कल नहीं रहेगा। देखते २ जवान बूढा हो गया। बच्चा जवान हो गया। क्यों भाई तुम कौन हो ? बच्चे भी तुम बने। अंगूठा चूसते रहे। जवान भी तुम वने और बूढे भी तुम ही बने। अवस्था तो यह सब सब तुम्हारी ही हैं। पर इन में से कौन सी शकल तुम्हारी है।

जैसे खाने बैठो तो, अच्छी २ चीजे है बढिया परौठे है, गुलाब जामुन हैं। बढिआ २ माल तो चला गया इस पेट रूपी कूएँ मे और थाली मे आ गया पापड। पापड को उनके मुकाबले में रखोगे कि उनसे ज्यादा कि उनसे कम। पापड तो उनके लिए व्रश है। क्या यह परौंठे का काम देगा। कोई मित्र खाने पर बुलाव और पापड ही सेंक कर खाने को देने लगे। न पूरी न परौंठा न साग और कुछ। केवल पापड़ ही पापड़ रख दिया। ज्यों पापड कम हो और लाकर रख दिया। खाने के लिए तो खा हीं रहा है पर कहता है क्या कर रहे हो ? कुछ खाने की चीज भी दोगे कि नहीं। खाता हुआ भी खाने की चीज नहीं समझता। यह तुम्हारा बुढापा भी पापड ही समझो। मारवाड का खाने का ढंग हमने पसन्द किया है। आप तो सब उसी मे, पूरी उसी मे, परोंठा उसी मे, साग

उसी मे, अटरम सटरम सब उसी में। किन्तु मारवाड मे पहले सब अच्छी २ चीजे देंगे। पापड़ last में। एक दम मुँह और गला साफ। न खांसी न खुर्रा। यहाँ पापड भी खाएँगे तो तल कर खाएँगे। पानी पीओ और खौं खौं करते रहो। माया भगवती को पक्की मारवाडिग ही समझो। यह last में पापड देती है। पापड को last item समझो। पापड जब आ गया थाली तो समझो every item has come सब कुछ थाली मे आ चुका है। अब कुछ बाकी नहीं। अव रसोडे की ओर नहीं झांको। बस यह बुढापा पापड है माया भगवती के रसोडे का। पापड जब आ गया तो बुढ्ढा बुढ्ढी मस्त हो जाएँ। ब्रह्मीभावना करे। शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव चिद्घन अद्वय स्वरूप 'आत्माहमस्मि' ब्रह्मैवाहमस्मि यह भावना करें।

अविद्या काम कर्म वासना का जो जाल बना हुआ था वो यहीं से कट जाएगा। फिर तो यहीं से मोक्ष हो जाएगा। नहीं तो महान पुण्य होने से यह ब्रह्मलोक जाएगा। ब्रह्मलोक की चर्चा चल रही है कि ब्रह्मलोक कैसे जाएगा? उसके लिए आचार्य कहते है 'तद्यथा महापथ आगत उभौ ग्रामौ गच्छन्तीमं चामुं च' जैसे कोई महापथ हो जिसको राजपथ कहते कहते हैं उस मे जैसे कोई पूर्व को रास्ता गया गया कोई उत्तर का रास्ता गया। कोई इधर गया, कोई उधर गया। इसी तरह यह ब्रह्मलोक को जो महापथ है, इस मे सूर्य की रश्मियाँ हमारी ओर भी आ रही है, ऊपर की ओर भी जा रही है। यह जो ब्रह्मवेत्ता है, यद्यपि अभी इसमे कुछ वासना का संस्कार वाकी है, यह इन सूर्य की रश्मियों के द्वारा ब्रह्मलोक में चला जाएगा आदित्य द्वार का भेदन करेगा। आदित्य इसको रोकेगा नहीं। सूर्य से सारी रश्मियाँ फैली हुई है। 'आसु नाडीषु सृप्ता:' वो रश्मियों का जाल जो नीचे आया है वो हमारी जौ-तेजोमयी नाडियाँ है, जिन में कफ की प्रधानता है। सौर नाडी। उस सौर नाडी को सूर्य की रश्मियाँ मिलेंगी। इनसे इनका आदित्य से सम्बन्ध हो जाएगा। आदित्य शब्द का अर्थ है अदनात् आदित्य। जो सब को खा जाए वो आदित्य। जैसे अपने शरीर को देखो और आदित्य की ओर देखो। यह हमारी आयु को खाता जा रहा है। जैसे बहुत बढिया हलुवा हो, घी जिसमे तैर रहा हो। तीनों चीजें बराबर। घी

चीना और सूजी । सुन्दर हलुवा है । इसको खाने लगो तो धीरे २ कटोरी खाली होती जाएगी । इस शरीर को कटोरी समझो । बाल्यावस्था, कुमारावस्था, युवावस्था यह तीनों चीजें बराबर समझो । धीरे २ सूर्य खींच रहा है । कहते है बुढ्ढे हो गये । बुढ्ढे क्या हो गये ? चोर खा गया घर मे घुस कर और तुमको पता ही नहीं चला । इसलिए इसका नाम आदित्य रखा है बडी श्रद्धा से सत् चित् आनन्द स्वरूप शुद्ध मुक्त स्वभाव चिद्घन अद्वय स्वरूप 'आत्मैवाहमस्मि' ब्रह्मैवा-हमस्मि ऐसी मुमुक्षु भावना करे । महान तप के द्वारा जो ब्रह्मलोक जाने वाला है उसे कल के लिए छोड़ो । उसको कल लेकर चलेंगे ब्रह्मलोक ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२४-५-८८

प्रवचन सं० ४६

"ॐ अथ यत्रैतदबलिमानं नीतो भवति । तमभित आसीना आहुर्जानासि मां जानासि मामिति स यावदस्माच्छरीरादनुत्क्रान्तो भवति तावज्जानाति । ॐ अथ यत्रैतदस्माच्छरीरादुत्क्रामत्यथैतैरेव रश्मिभिरूर्ध्वमाक्रमते स ओमिति वा होद्वा मीयते स यावत् क्षिप्येन्मनस्तावदादित्यं गच्छत्येतद्वै खलु लोकद्वारं विदुषां प्रपदनं निरोधोऽविदुषाम् ।।"

(छान्दो. ८-६-४।८-६-५)

यहाँ मंत्र समझा रहा कि इस शरीर से जुदा कैसे होंगे ? ब्रह्मलोक का वर्णन चल रहा है । ब्रह्मलोक जाने के लिए शरीर से जुदा तो होना पडेगा । ब्रह्मलोक वही आत्मा जा सकेगी जो शरीर से जुदा होने अभ्यास करेगी । जैसे मृत्यु देवता ने जुदा तो किया किन्तु अज्ञान से जुदा किया । अज्ञान से जुदा तो हो गये किन्तु इससे लाभ कुछ नहीं हुआ । फिर जन्म लेना पडेगा । यह तो ऐसा ही है जैसे डाक्टर किसी आपरेशन के लिए रोगी को बेहोंश कर के इस शरीर से जुदा कर देता है । और फिर अपनी मर्जी से खेलता है इस शरीर के साथ । मोटी २ हड्डियाँ ऐसे ही थोडे कट जाती है । बडी मेहनत करनी पडती है डाक्टर को । तो जैसे डाक्टर ने क्लोरोफार्म देकर मन को स्थूल शरीर से जुदा कर दिया ऐसे

ही यहाँ श्रुति सुषुप्ति का दृष्टान्त देकर समझाती है । सुषुप्ति मे प्रकृति तुमको रोज इस स्थूल शरीर से दो चार घण्टे के लिए इस शरीर से जुदा कर देती है । तो तुम्हें सुषुप्ति का वो आनन्द मिलता है जिसकी कोई उपमा नहीं जाग्रत अवस्था मे जो जो भी आनन्द है वो थोड़ा २ आनन्द है उसको क्षणिक आनन्द कहते है । जाग्रत मे तुमको सुखी करने लिए परमात्मा ने पांच ज्ञानेन्द्रियाँ लगा रखी है न तो अधिक समय तक रूप हमको सुखी कर सकता है, न रस ही अधिक देर तक सुख दे सकता है । अपने अनुभव के लिए कितनी ही मीठी चीज खाओ, जब तक जीभ में स्वाद है तभी तक अच्छी लगती है । बाद में वो रसगुल्ला ही फीका हो जाता है । जाग्रत मे कोई भी इन्द्रिय तुमको ज्यादा देर तक सुखी नहीं कर सकती ।

परमात्मा ने जाग्रत मे पांच ज्ञानेन्द्रियाँ तुमको जुदा २ स्वाद देने को रखी है । जैसे भोजन ही करने लगते हैं तो कभी अचार लेते है, कभी चटनी लेते हैं । कभी पापड़ का टुकडा लेते है । कभी रोटी कभी भात लेते है । माने जुदा चीजें लेते है । खीर की कटोरी रखी हो तो बीच २ मे उधर भी हाथ जाता है । मालपूआ रखा हो तो वो भी स्वाद लेते है । एक में ही अगर हाथ डालोगे तो स्वाद नहीं आएगा । जाग्रत अवस्था मे शोक संताप दुःख, चिन्ता भय यह सब विकार चलते रहते है । इन विकारों से जुदा करने के लिए सुषुप्ति अवस्था है । सुषुप्ति तुमको दो शरीरों से जुदा कर देती है स्थूल और सूक्ष्म । तीसरा शरीर है कारण शरीर वो विश्राम का स्थान है । यह जो दो शरीर है स्थूल और सूक्ष्म यह समझो परमात्मा ने तुम्हारे working office बनाए है । जीवन जीवन का धन्धा इन दो शरीरों मे ही चलता है । इसलिए उपनिषद् में श्रुति आई 'यत्र सुप्तो न कञ्चन काम कामयते न कञ्चन स्वप्नं पश्यति तद् सुषुप्तम्' जिस अवस्था मे न कोई कामना रहती है न कोई स्वप्न ही रहता है । उस सुषुप्ति अवस्था में मन अपने कारण अविद्या में लीन हो जाता है । मन जब अविद्या मे लीन हो गया तो यह जो बाहर के जितने भी कारण है तुम्हारे, करण माने साधन यह सब पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ करण है । हाथ यूं गिर जाएगा । हाथ उठेगा नहीं । जिसका हाथ यूं हो गया उसके हाथ मे क्या रखोगे । इन्द्रियाँ सब

काम करना बन्द कर देगी। आंख रूप देखना बन्द कर देगी। कान सुनना बन्द कर देगे वाणी बोलना बन्द कर देगी। बाहर की दुनियां वन्द हो गई। बाहर के करणों का उपसंहार हो गया।

उस अवस्था का वर्णन है। बृहदारण्यक श्रुति है। इस आत्मा की महिमा का व्याख्यान करती है 'अनन्वागतं पापेनअनन्वागतः पुण्येनः तीर्णा विगतः सर्वान् शोक।न हृदयस्थो भवति' पाप से यह अनुगत नही, पुण्य से अनुगत नहीं। इस जाग्रत अवस्था मे कुछ पुण्य हो रहा है। कुछ पाप हो रहा है और उस पाप और पुण्य को पकड़ने वाला कौन ? यह मन और बुद्धि किन्तु सुषुप्ति अवस्था मे यह मन उस अविद्या मे चला गया। अब बाहर से न पाप को पकडेगा न पुण्य को पकडेंगा। किसी को नहीं पकडेगा। 'अनन्वागतं पापेन अनन्वागतं पुण्येन' पाप से अनुगतं नहीं।माने पाप से लिपाय मान नहीं।पुण्य से यह लिपायमान नहीं।इस का अर्थ यह समझो कि यह पाप पुण्य कहाँ तक है। ये मन बुद्धि तक पकडेंगे। यह पाप पुण्य जो हमारे जीवन मे होते हैं यह जाकर मन बुद्धि को पकडते है। पुण्य भोग आया तो मन बुद्धि को स्वच्छ बना देगा। अनुभव करो, कल्पना नहीं है। हम बैठे २ कल्पना नहीं कर रहे है। पारिवारिक जीवन मे पति पत्नी प्रिय सम्बन्ध है। पत्नी प्यार से बोले तो चित्त प्रसन्न होता है। पर यदि कड़ुवा बोले तो मन जैसे आरे से कट जाता है। जैसे आरा लकड़ी को चीरता है इसी तरह।

दुःखी मन नीचे दबता है, सुखी मन ऊपर उठता है। इसी तरह पुण्य आएगा तो मन को ऊपर उठाएगा और पाप आएगा तो मन को नीचे गिराएगा। उसी का प्रभाव है कि मन तामसी योनियों मे, पशु पक्षी योनि मे प्रवेश कर जाता है।

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ।।

गीता- तामस योनि में जो मन गया वो कौन सा मन है। तमोगुण की वृद्धि हो गई। पाप ने तमोगुण की वृद्धि कर दी। ऐसा जो मनुष्य होता है उसमे आलस्य बढ जाता है। प्रमाद बढ जाता है। निद्रा बढ जाती है। बैठे २ सो

जाएंगा । हे भारत, यह सब बांधने वाले विकार है । पाप पुण्य मन बुद्धि के अधिकार तक है । इसलिए कहा 'अनन्वागतं पापेना अनन्वागतं पुण्येनः' सुषुप्ति में जीव मन बुद्धि से अलग हो गया अर्थात् मन दहराकाश मे, हृदयाकाश मे चला गया । इस दहराकाश मे जाकर मन अविद्या मे लीन हो गया । किन्तु चेतन जो जींव बना वो किस सम्बन्ध से बना ? मन के सम्बन्ध से । इसके लिए दृष्टान्त समझो जैसे मुख का प्रतिबिम्ब शीशे मे देखते हो । जब शीशे को हटाया तो ' तिबिम्ब कहाँ जाएगा । अपने बिम्ब मे लीन हो जाएगा । जब तक शीशा रहेगा तब तक प्रतिबिम्ब उसमे दीखेगा । शीशे से शिकायत करेगा कि हाय तुम्हारे बिना हमारा कोई आश्रय नहीं । बिम्ब के बिना प्रतिबिम्ब का कोई आश्रय नहीं, इस बात को न जान कर ही ऐसा कहता है । वास्तव मे शीशा तो देखने मात्र के लिए है । इसी तरह इस मन को तो बडा सुन्दर शीशा समझो । इस मन के अन्दर उस चेतन आत्मा का आभास आ रहा था । प्रतिबिम्ब । मन के सम्बन्ध से, इसके द्वारा साक्षी कूटस्थ आत्मा मे जीव भाव का आरोप हो रहा था । किस मे आरोप हो रहा था ? जिसका वो प्रतिबिम्ब है । यद्यपि जीवपना था साभास मन मे, उसी मे अहं अहं हो रहा था । उसी मे जीवपना है, उसी मे संसारी पना है यहाँ से वहाँ सरकता है, वहाँ से यहाँ सरकता है । ससारी है । नाना प्रकार के शोकादि विकार भी उसी मे है । साक्षी जो चेतनात्मा है, उसमे कुछ भी नहीं । कुछ न होते हुए भी आरोप उसमे हुआ ।

जैसे अनुभव के लिए समझो । कभी शरीर मे बडा बुखार आ गया । 4,5 डिग्री बुखार है और चिल्ला रहा है । जनरल वार्ड मे था । और रोगी भी थे । डाक्टर ने सोचा कि यह बहुत चिल्लाता है, दूसरे रोगी भी दुःखी हो जाएंगे। नींद का इन्जेक्शन दे दिया । अब वो सो गया । अब क्या हुआ ? बुखार उतर गया क्या ? ज्वर तो वहीं शरीर मे पडा है पर ज्वर को पकडने वाला मन अब वहाँ रहा । ज्वर को पकड़ने वाला कौन था ? मन । मन को बेहोश कर दिया डाक्टर ने तो शरीर का बुखार मस्ती से पडा हुआ है शरीर मे और उसको पकडने वाला मन बेहोश है । इसी तरह मन के अन्दर जो जीव भाव है उस जीवभाव का आरोप हो रहा था उस साक्षी चेतन मे । मैं संसारी हुँ, मैं सुखी हूँ, यह जो

आरोप है यह एक के पीछे एक चलते है । तो सत्सङ्ग से, बुद्धिमान आचार्य क्या होता है कि जो दु,ख जहाँ है उसको वहीं रहने दो । उसको दूसरी जगह जाने मत दो । जैसे मान लो पक्का फर्श है, माताएँ क्या करती है, झाड़ू मार के कचरे को एक कोने मे कर देती है । अब वो सारे घर मे नहीं फैलेगा । एक कोने में पडा है । इसी तरह मुमुक्षु भी इस बात का निश्चय करे कि जो दोष जहाँ है उसको वहीं रखे । मन के अन्दर संसारी पना है । मन के अन्दर ही यह सारा संसार का खेल है । उसका आरोप आत्मा में नही करे । यह सत्सङ्गी का पहला कर्त्तव्य है । यह सत्सङ्गी का लक्षण है जब आत्मा मे आरोप नहीं करोगे तो अपने को क्या कहोगे ? शुद्धोऽहम, बुद्धोऽहम्, चिदात्माऽहम् । अपने को शुद्ध बुद्ध ही कहोगे । क्योंकि जो भी दोष आ रहा था वो तो मन के सम्बन्ध से आ रहा था । शरीर के सम्बन्ध से आ रहा था ।

मां मदालसा अपने बच्चों को कैसा उपदेश करती है । मदालसा कोई छोटी मोटी स्त्री नहीं थी, महारानी थी । प्रकृति का स्वभाव उसने उसे मां बनाथा । बच्चे का स्वभाव है रोना, वह रोएगा । किसी का भी बच्चा हो, चाहे महाराजा का हो चाहे गरीब का हो । किन्तु यह मां कहती है शुद्धोसि बुद्धोसि निरञ्जनोसि, संसारमायापरिवर्जितोसि । संसारस्वप्नं त्यज मोहनिद्रां, मदा-लसा वाक्यमुवाच पुत्रम्।। रे बेटा तू तो शुद्ध है, तू रोता क्यो है ? यह जो अन्तरात्मा है इसी के करट से यह शरीर शुद्ध है । कितना पवित्र है । वो मां अपने बच्चे को समझा रही है गोद मे लेकर । अभी बच्चा दूध पीता है । उसे समझा रहीं है कि तू शुद्ध है तो यह तेरा शरीर शुद्ध है । इसको कहते हैं स्वरूप लक्षण । तटस्थ लक्षण जो होगा वो अलग होगा । शुद्धोसि बुद्धोसि कहने का तात्पर्य है स्वरूप परिचय दे रही है । तेरा स्वरूप शुद्ध है । शुद्ध स्वरूप है बेटा तेरी शुद्धि से यह मुर्दे भी शुद्ध हो रहे हैं । पवित्र लग रहे है । साथ मे कहती है बुद्धोसि । तेरे को ज्ञान कहीं से लेना नहीं पडेगा तू तो बोधरूप ही है । तेरे को ज्ञान कहीं से लाकर देना नहीं । जैसे कोई कहे कि अग्नि जलाना है अग्नि तो अग्निरूप ही है । इसको जलाने के लिए दूसरी अग्नि की जरूरत नहीं । पानी को पानी से धाओगे क्या ? पानी को पानी से धोने से साफ हो जाएगा । इसी तरह

यह तेरी आत्मा बोधरूप है। बोधरूप आत्माको बाहर से ज्ञान देने की जरूरत नहीं। बाहर से जो विकार आते हैं उनको हटाना पडेगा। इन विकारों को दूर करने की जरूरत तो पडेगी विकार तो मिथ्या आरोप है। मिथ्या आरोपित विकार को हटाना है।

साथ मे कहती है तू निरञ्जन है। निरञ्जन माने तू माया से परे है। यह जो माया का विकार है तू इन से परे है। संसारमायापरिवर्जितोसि। तुम संसार की माया से परे हो। संसारस्वप्नं त्यज मोह निद्राम्। यह संसार क्या है? यह संसार स्वप्न है, अपने जीवन मे समझो। मां की गोद वाला शरीर सच्चा कि आज जिस अवस्था मे हो जिस शकल में बैठे हो यह सच्ची। सच्चा किसको कहोगे। जैसे cent रखा शीशी मे तो उड जाता है। शीशी खाली हो गई। इस तरह यह शरीर रूपी बोतल है। कुमारावस्था रूपी cent उड गया। बाल्याकाल रूपी cent उड़ गया। जवानी रूपी cent उड़ गया। बुढापे मे शीशी खाली। किसी बुढ्ढे को कहो जल्दी उठो घर में अग्नि लग गई। किसी बुढ्ढे को बुलाने गये कि घर मे आग लग गई है जल्दी चलो। तो वो क्या कहता है कि तेरे कह देने मात्र से हम कैसे उठ जाएँगे। बैठने का अभ्यास तो बहुत पुराना है। एक दम कैसे जाएगा। घर जल रहा है फिर भी जल्दी नहीं उठ रहा है। इसी तरह जीव का भी अनादि काल का जो अभ्यास है यह जल्दी कैसे छूट सकता है। अहं भाव जल्दी छूटता नही। इस शरीर, जिसको हम लोग पकड कर बैठे है, उसका जन्म भी तो हुआ था कि नहीं? अंगुठा चूसते रहे। क्या हुआ? शास्त्र उसी बात का उपदेश करेगा जो तू कर सकता है, जो तेरे ज्ञान मे आ सकता है। जैसें परिवर्तन इस शरीर का स्वभाव है इसको समझने में क्या गड़बड है। जब तू समझ जाएगा तो इस परिवर्तन से घबराएगा नहीं। इसलिए विवेकशील इस सत्य को समझे। श्रुति है 'यह सुप्तो न कञ्चन कामं कामयते न कञ्चन स्वप्नं पश्यति तत्सुषुप्तम्' माने उस अवस्था में क्या हुआ? मन जहां अविद्या मे लीन हुआ, आभास अपने स्वरूप मे लीन हो गया। पहले भी श्रुति आई है 'हिरण्यनिधि निहितं क्षेत्रज्ञा उपर्युपरि सञ्चरन्तो न विन्देयुरेवमेवेमाः सर्वाः प्रजा अहरहर्गच्छन्त्य एतं ब्रह्मलोकं न विन्दन्त्यनृतेन हि प्रत्यूढाः। जैसे भूमि के अन्दर

स्वर्ण निधि दबी पडी है । दों आंख से देख कर चलने वाले प्राणी, उस भूमि के अन्दर कितनी स्वर्ण निधि है , कितना वो खजाना है, नहीं जानते । पता उस विद्वान को लगेगा जो भूगर्भ विद्या को जानता है । जो भूगर्भ विद्या को नहीं जानता, दो आंख से ही देखता है वो तो पत्थर मिट्टी ही देखता । ऊपर २ से ही आएगा जाएगा । दो आंख से पशु पक्षी भी देख कर चल रहे हैं हम भी अगर दो आंख से ही देख कर चलेंगे तो हमारी दृष्टि कितनी बडी हुई । पशु पक्षी जित्तनी ही । इसलिए मंत्र कहता है जो अज्ञान के घैरे मे ही हैं, ऊपर २ से ही चले जाएंगे नहीं जानते । यह सारी प्रजाएं ब्रह्मलोक जाती हैं किन्तु जानती नहीं । 'न विन्दन्ति ।

इसका मतलब हुआ कि मन के सम्बन्ध से जो आभास आया था वो मन के हटने से अपने कूटस्थ स्वरूप मे चला गया । प्रकृति ने तुमको ब्रह्मलोक समझा दिया । अब तुम ब्रह्मलोक चलो । दो चार घण्टे जब गाढ निद्रा मे पडे रहे तुम को वहाँ कौन सा दुःख हुआ ? सुषुप्ति जैसा कोई आनन्द है ही नहीं । जाग्रत के भोगों मे आनन्द उसीको आता है जिसको गाढ निद्रा मे सुषुप्ति का आनन्द मिला है । जाग्रत अवस्था मे जहां २ भी आनन्द मिला यह जो सुषुप्ति का आनन्द महान आनन्द है । शक्कर जो अपने आप मे ही मीठी है उसको मीठा करने के लिए दूसरी शक्कर डालनी पडेगी क्या ? वो तो अपने आप ही मीठीं है । किसी चीज मे भी डाल दो, मीठा कर देगी । इसी तरह यह आत्मा आनन्द स्वरूप है इसको आनन्द बनाना नहीं बस समझना है । आत्मा का आनन्द जिसमे जिसमे भी मिलेगा उसी को आनन्द रूप कर देगा । बाह्य विषयों से 'उपसंहृत्य सर्वकरणवृत्ति' यह जो इन्द्रिय करण रूपी वृत्ति है उसका उपसंहार करो इस आत्मा मे । मंत्र कहता है 'स्वप्नं न विजानाति तद्येत्तै तत्सुप्तः समस्तः सम्प्रसन्नः' बाह्य इन्द्रिया जब अपना काम करना बन्द कर देंगी, अपना काम करना कब बन्द करेगी ? जब मन अपना office बन्द करेगा । स्वप्न क्यों होता है ? जब मन अपना office बन्द नहीं करता । इन्द्रिय बन्द हो गई, शरीर बन्द हो गया किन्तु मन बन्द नहीं हुआ । तो मन तुमको स्वप्न दिखाएगा । स्वप्न के बाजार मे ले जाएगा । जैसे जाग्रत में प्रिय अप्रिय का संयोग वियोग हुआ ऐसे ही स्वप्न मे भी

संयोग वियोग दिखाएगा । तो उस समय स्वप्न का कोई दृश्य रहेगा ? तत्र सुप्त स्वप्नं न विजानाति समस्तः सम्पसन्नः' तदासु नाडीषु सुप्तो भवति तत्र कश्चन पाप्मा स्पृशति तेजसा हि तदा सम्पन्नो भवति ।। यह जो विलक्षण नाडी है हृदय में जो सौर तेज को पकड कर हृदय में प्रवेश करने वाली है। यह मन उस नाडी को पकड कर हृदय मे प्रवेश कर गया और अपने कारण अविद्या में लीन हो गया । आभास अपने कूटस्थ आत्मा चला गया । यह sound sleep है । अब तुमको इस ने शरीर से जुदा कर दिया । अब तुम को न जाग्रत न स्वप्न दोनों अवस्थाओं से दूर हो गये । तीनों शरीरो से जुदा हो गये । स्थूल और सूक्ष्म कितने कोशों से जुदा हो गये ? चार । अन्नमय कोश से जुदा हो गये । प्राणमय कोश से जुदा हो गये । मनोमय कोश से जुदा हो गये और विज्ञानमय कोश से जुदा हो गये । किन्तु यह आनन्दमय कोश बैठा है । यह बन्ध है । यह आनन्दमय कोश पकड़ना जानता है किन्तु छोडना नहीं जानता । जैसे चीटा होता है न 'मकोडा' उसने अगर किसी को काट लिया, बडे जोर से काटता है । उसको वहाँ मे हटाने लगो तो खोपडी अलग हो जाएगी उसकी । आधा आधा शरीर कट के अलग हो जाता है ।

सत्सङ्ग से, शास्त्र से और गुरु के ज्ञान से यह आनन्दमय कोश छोड देता है । यह आनन्दमय कोश कट जाएगा । उपनिषदों मे और अन्य शास्त्रो में इसकी भूरिशः प्रसंशा किया । इसलिए कहा कि मुमुक्षु ऐसा प्रयत्नशील होवे । 'स्वप्नं न विजानाति आसु नाडीषु सृप्तो भवति तत्र कश्चन पाप्मा स्पृशति तेजसा हि तदा सम्पन्नो भवति ।' यह जो सौरतेज से पूर्ण नाडी है, इस नाडी के द्वारा मन दहराकाश में प्रवेश कर गया । अब इसको कोई पाप नहीं पकडेगा । इसका मतलब यह है कि वहीं तक पकडता है जहाँ तक मन है । मन का अहंकार है, बुद्धि का अहंकार है । तो स्थूल शरीर में होने वाले कर्मो के पाप पुण्य वहाँ तक लगाकर बैठे है । वहीं तक पकड़ने हैं । जब हम इससे भी परे चले गये तब कुछ नहीं । 'न कश्चन पाप्मा स्पृशति तेजसा हि तदा सम्पन्नो भवति' वो जो सौर तेज है, जिसके द्वारा पहले कह कर आए । पीत प्रधान होने से पिङ्गल वर्ण हो गई । कफ प्रधान होने से वो नाडी शुक्ल वर्ण हो गई और वात प्रधान होने से

नील वर्ण हो गई। यह नाडियों का रंग बतलाया। जो सौर तेज से व्याप्त नाड़ी है यह पिङ्गल नाम की नाड़ी है। यह नाड़ी हृदय देश मे चली जाती है। उसको पकड़ कर यह मन अविद्या मे लीन हो गया। उस समय न कोई पाप पकडेगा न पुण्य पकडेगा। यह आत्मा के महान आनन्द मे रहेगा। प्रकृति के नियम से यह स्थूल शरीर से और सूक्ष्म शरीर से जुदा हो गया। ऐसे ही महान तत्त्व विचार से अपने को स्थूल देह से जुदा करो। यदि स्थूल शरीर से अपने को जुदा कर लोगे तो उस समय तुम ब्रह्मलोक में चले जाओगे।

आगे समझाने वाले है। अगर स्थूल देह से अपने को जुदा नहीं कर सके तो केवल मर कर जाओगे। माने केवल प्राण को ही छोड़कर जाओगे क्योंकि स्थूल शरीर का अहंकार बना हुआ है और हाल वही होगा कि यहाँ से निकले और वहाँ घुस गये। जैसे चूहे को जमना ने पिजरे में फंसाया और बिमला के घर के सामने जाकर छोड दिया। वह उस घर में घुस गया। बिमला ने भी पिंजरा मंगाया और चूहे को पकड़ कर कमला के घर में छोड़ दिया। उस पिंजरे निकले और उसमे घुस गये। बस चूहे की तरह बार २ मरो और बार २ जन्मो। पुनरपि जननं पुनरपि मरणं, पुनरपि जननीजठरे शयनं। इह संसारे खलु दुस्तारे कृपया पारे पाहि मुरारे।

पुनः २ जन्म मरण का चक्कर है। भगवच्छरणागति को धीरे २ मुमुक्षु पकड़ता रहे, मोक्ष हो जाएगा इस मे कोई शंका नहीं।

अब ध्यान करो।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२५-५-८८

प्रवचन सं० ४७

"ॐ तमभितः असीना आहुर्जानासि मां जनासि मामिति स यावदस्माच्छरीरादनुत्क्रान्तो भवति तावज्जानाति । ॐ अथ यत्रैतदस्माच्छरीरादुत्क्रामत्यथैतैरेव रश्मिभिरूर्ध्वं आक्रमते स ओमिति वा होद्वा मीयते स यावत्क्षिप्येन्मनस्तावदादित्यं गच्छत्येतद्वै खलु लोकद्वारं विदुषां प्रपदनं निरोधोऽविदुषाम् ॥"

(छान्दो. ८-६-४ । ८-६-५)

बिचार आया कि जो जीव का महान पुण्य कर्म होगा और जिसके हृदय में यह आत्मविद्या आ गई है , किन्तु आत्मविद्या आने पर आत्मविद्या के साक्षात्कार की जो स्थिति बननी चाहिए उस स्थिति में कुछ कमी रह गई है । उस कमी का भी अर्थ है । कुछ वासना इसके अन्दर जन्मान्तर की रह गई है, इस कमी के कारण यह आत्म ब्रह्म है यह साक्षात्कार उसको हुआ नहीं । किन्तु पुण्य महान होने के कारण यह जीव सामान्य स्वर्ग मे नहीं जाएगा । इसको ब्रह्म लोक जाना है । यह विचार हम कर रहे है । प्राणियों का शरीर कैसे छूटता है श्रुति उसको प्रकट करती है कि जिस समय यह शरीर छूटने लगेगा, तो अपने अनुभव के लिए समझो जैसे राष्ट्रों मे कभी लडाई भी होती है आपस में, कभी ऐसा भी होता है कि हमारी सेनाएँ शत्रु के राज्य में प्रवेश कर गई । शत्रु ने समझ लिया कि सेना मजबूत है सामना करना कठिन है, तुम्हारी बात मान ली उसने । किन्तु जहा हमारी फौज पहुँच गई है वहाँ से पीछे नहीं हटेगी । वहीं डेरा डाले पड़ी रहेगी । वहीं उनका खाना पीना पहुँचता रहेगा । दोनों राष्ट्रों मे

सन्धि हो जाएगी। जो हिस्सा राष्ट्र का जीत लिया गया है वो वापिस कर दिया जाएगा। भले ही लड़ाई में जीत लिया था। आगे के लिए आपस में लड़ाई नहीं करेंगे। गवर्नमैंट कमांडर इन चीफ को आर्डर करेगी वो आगे अपने कमाँडर को आर्डर देगा कि सेना को पीछे लौटा लो। तब वो सेना लौटाएगा। और फिर अपने उस आफीसर के सामने जाकर सैल्यूट मारेगा कि हमारी सेना और सामान लौट कर आ गया। यह नियम लोक में। इसी तरह अपनी बात भी समझो। यहाँ भी इन्द्रियगण अपने २ क्षेत्र मे बैठ कर अपना २ काम कर रहे है। चक्षु इन्द्रिय यहाँ बैठ कर अपना काम कर रहा है। श्रोत्रेन्द्रिय यहाँ बैठ कर अपना काम कर रही है। जाग्रतावस्था है इस मे सब इन्द्रियाँ अपना २ काम कर रही है। इसमे खट्टा भी मिला, मीठा भी मिला। सुख भी मिला, दुःख भी मिला। गये तो सुख के लिए थे पर मिल गया दुःख भी। यह तुम्हारे कर्म का भोग है। इसको प्रारब्ध भी कहते है। कहते हैं यह प्रारब्ध का भोग भोगता हुआ जा रहा है।

इसकी अवस्था, बच्चा बच्चे से कुमार, कुमार से जवान और जवान से वुड्ढा हो गया। अवस्था तो बढेगी जैसे यह गुलाब का फूल है, कल कली के रूप में था यह रात को विकसित हुआ। यहाँ तक आ गया। थोड़ा सा आगे चलेगा तो झड़ जाएगा। इसकी पखुड़ी २ बिखर जाएगी एक भी पंखुडी इसमे नही रहेगी। यह हमारा जीवन भी इस गुलाब के फूल की तरह है। जब खिल जाता है तो सब प्यार से देखते हैं। जब सूख गया तो वृद्धावस्था में चला गया। वृद्धावस्था मे जाने का मतलब यह है कि शरीर कमजोर हो गया। भोजन तो वही खाते हैं जो बचपन में खाते थे किन्तु बच्चा खाता है। दूध पीता है तो उसकी सारी शक्ति खींच लेता है कुमार खाता है वह भी भोजन की सारी शक्ति खींच लेता है। जवान खाता है तो वह भी भोजन की सारा शक्ति को खींच लेता है किन्तु उन्ही पदार्थो को हम वृद्धावस्था में खाते है पर पूरी शक्ति को नहीं खीच पाते। wastage ज्यादा निकल जाता है। पचा ही नहीं। वो ही दूध घी भात दाल बचपन मे खाते रहे, वहीं जवानी मे। खाते तो बुढापे में भी वहीं रहे पर शरीर ढीला होता जा रहा है। इसके लिए और भी बहुत सी चीजें खाते हैं कि शरीर कसा रहे किन्तु कैसे कसा रहेगा। प्रारब्ध भोग में जब आया कि अब यह

ढीला होना है तो कसेगा कहाँ से ? एक दिन उसने कहा कि अब मेरे को यह शरीर छोड़ देना चाहिए। शरीर छोड़ने वाले जीव तीन प्रकार के हैं। एक ऊर्ध्वगति से, ब्रह्मलोक जाने वाला है। एक मध्यम मनुष्य योनि मे आने वाला और एक अधोगति तामस योनि पशु पक्षी योनि में जाने वाला है। यह तीन प्रकार के जीव है। जो ब्रह्मलोक जाने वाले है वो महान है, तत्त्वज्ञानी हैं। साक्षात्कार मे कसर रह गई। जो मनुष्य योनि में आने वाला है उसमे ज्ञान और अज्ञान दोनों मस्ती मार रहे है। ज्ञान भी है अज्ञान भी है। यह मनुष्य योनि ऐसी ही है। कुछ यह पुरानी कमाई खाता है कुछ नई कमाई भी करता है। इससे ऊपर देव योनि इस से नीचे पशु पक्षी योनि और बीच में यह मनुष्य योनि।

गीता के चौदहवें अध्याय में भगवान कृष्ण स्पष्ट समझाते है

''ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः

जघन्यगुणवृत्तिस्था अधोगच्छन्ति तामसाः ।।''

जिन्होंने सत्त्वगुण की विशेषता को प्राप्त कर लिया है सत्त्वगुण जिन के अन्दर बढ गया वो ऊर्ध्वं गच्छन्ति' वो ऊपर जाएँगे। ऊपर जाने वाले भी दो है। एक समान्य स्वर्ग मे रह जाएगा। और दूसरा ब्रह्मलोक मे जाएगा। और मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः। राजसाः माने रजोगुण प्रधान। मध्ये माने बीच की योनि ! राजस वो है जो रजोगुण प्रधान है। मनुष्य योनि को बीच की योनि माना है। 'अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा, गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः अधश्च मूलान्यनुसंततानि, कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ।।'' पन्द्रहवें अध्याय में भगवान ने कहा। संसार को वृक्ष शब्द से कह रहे है। वृक्ष शब्द से कहने का अभिप्राय है वृश्चु छेदने धातु है। पाणिनी के व्याकरण में वृश्चु। यह वृक्ष जैसे प्रतिक्षण बदल रहा है। देखते ही देखते वो महान परिवर्तन हो गया। देखते ही देखते वो महान वृक्ष सूख गया। बुढढा भी हो गया। यह संसार. वृक्ष ऐसा ही है। इस संसार वृक्ष को भी परिणामी, प्रतिक्षण बदलने वाला कहते है। इसका अभिप्राय यह है कि विवेकी संसार के इस स्वरूप का विचार करके अपने मन में वैराग्य को धारण करे। मन के अन्दर मोह नही भरे। जैसे कोई बढिया बैग होता है। बैग

मे हम लोग अच्छी से अच्छी भरते है। यूं बाजार मे तो सभी तरह की चीजे हैं। रद्दी से रदी चीजें भी है किन्तु जिन चीजों को हम को आवश्यकता होती है उन्हीं चीजों को भरो। रद्दी चीजें भरने से क्या लाभ ? और बैग में जगह भी तो उतनी ही हैं।

यह संसार भी ऐसा ही है। उपर नीचे इसकी शाखाएँ फैली हुई है। इस संसार के स्वरूप का विचार कर के अपने मन मे वैराग्य को धारण करो। सारे संसार के भोग तुम्हारे लिए ही नहीं है। और अगर भोगने भी लगो इन भोगों को भोगने के लिए कितने जन्म लोगे। ? मन को reserve कर के रखो। भोगों को औषधि की तरह लो। भगवान कहते हैं अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा' अर्जुन तुम कहां हो ? बीच मे। यह मनुष्य योनि बीच में हुई। मनुष्य योनि से नीचे भी संसार की शाखाएँ, मनुष्य योनि से ऊपर भी संसार की शाखाएं फैली हुई है। मनुष्य योनि से ऊपर देव योनि और नीचे पशु पक्षी कीट पतंग आदि योनियाँ। 'गुणप्रवृद्धा विषयप्रवाला: । भगवान कहते है यह जो त्रिगुणात्मक प्रकृति है, इन तीन गुणों से इस की शाखाएँ वढती ही जा रही है। यह जो पांच विषय हैं रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श 'विषयप्रवाला:' जैसे वृक्ष में पुराने पत्ते झड़ जाते हैं और वसन्त ऋतु में नये २ पत्ते आने लगते है। जैसे हम लोग पुराने वस्त्र उतार कर नये वस्त्र पहनते है ऐसे ही प्रकृति नियम से dress change कर देती है। अमुक time तक ड्रेस पहनाती है फिर उतार कर नया पहना देती है। पत्र जो सुन्दर था सुखा दिया। जो पुष्प जहाँ बडा सुन्दर लगा हुआ था उसको सुखा दिया और फल भी जहाँ लगे थे उन्हे वहीं सुखा दिया। नये पत्र आ गये। नये पुष्प आ गये। नये फल भी आ गये।

जैसे हम लोग नये वस्त्रों मे प्रसन्न होते है ऐसे ही यह वृक्ष भी नये २ वस्त्र पहनते हैं और प्रसन्न होते हैं। इनके अन्दर भी जीव है। यह नये २ वस्त्र लोगों के मोह का कारण हो जाते हैं। इन विषयों को देखकर यह प्राणी मोह मुग्ध हो जाते हैं। विवेकहीन हो जाते हैं। इसलिए कहा 'अधश्चोर्ध्वं विषयप्रवाला: । यह विषय प्रवाल है। यह बढते जाते हैं तोडते जाओ बढते जाते हैं। इनको तोड़ कर फैंक देने से भी यह कम नहीं होंगे। इसलिए कहा 'कर्मानु

बन्धीनि मनुष्यलोके । इस प्रकृति मे जैसा है ऐसा ही इस शरीर मे चले जाओ ।

यह मनुष्य शरीर बीच में है । इस शरीर को मनुष्य को छोड़ना पडेगा। जो सत्य कर्मा है, सात्त्विक कर्म कर के जिसने पुण्य कमाया है । सामान्य स्वर्ग मे जाना पडेगा तो बेहोश होकर तो जाना ही पडेगा । इस शरीर को बेहोश तो करना पडेगा । और ब्रह्मलोक को जाना होगा तो भी इस शरीरको बेहोश तो करना पडेगा । क्योंकि इस शरीर को बेहोश किए बिना बाहर कैसे निकलेगा । मंत्र है 'यत्रतदबलिमानं जीतोभवति तमभित आसीना आहुर्जानासि मां जानासि मामिति स यावदस्माच्छरीराद्नुत्क्रान्तो भवति तावज्जानाति ।।' मंत्र कहता है यह शरीर तो कमजोर हो गया । लेट गया खाट पर 'तमभित आसीना' उसके प्रिय बन्धु भी है जो बैठे है उसके चारों ओर । माता पिता भाई बन्धु सभी प्रिय बन्धु है । जब देखा कि ऐसे लेट गया है खाट पर तो चारो ओर से घेर कर बैठ जाते हैं । 'जानासि मां जनासि मां ।' बडे लडके ने कहा, पिता जी मेरे को देखते हो ? छोटे लड़के ने पूछा, पिता जी मेरी ओर ध्यान है ? बहु ने कहा, और वो बुढिया बेचारी भी एक कोने मे खड़ी थी । उसने पूछा मेरे को पहचानते हो सब अपना २ परिचय पूछ रहे है । अरे भाई क्या देखेंगे ? उपनिषद में आया 'तस्य यावन्नवाङमनसि सम्पद्यते मनः प्राणें प्राणतेजसि' जब तक यह इन्द्रियाँ अपनी जगह को छोड़ कर मन मे नहीं जाएंगी, तब तक यह इन्द्रियाँ बाहर ही घूमेंगी । मिलिट्री का दृष्टान्त था न । भले ही हानि भी हो पर रहेंगे मोर्चे पर ही । किसी ने पूछा, मुझे पहचाना ? बुढ्ढे ने सिर हिलाया । वाणी नहीं चली । बुढ्ढे का दोस्त बुढ्ढा । वो भी आ गया । उस मित्र को देख कर आंखों से पानी आ गया । धीरे से कहता है, इसका ध्यान रखना । पत्नी का । उसने कहा मैं रखूंगा । जब कि यह इन्द्रियाँ अपनी जगह छोड़ कर मन मे नही जाएँगी तब बाहर का व्यापार वन्द नहीं होगा । जब इन्द्रियाँ मन में चली जाएँगी, 'तस्ययदा वाङमनसि सम्पद्यते' श्रुति वाणी का नाम लेती है क्योंकि यह वाणी लीडर है सब इन्द्रियों की । वाङ कहने का तात्पर्य्य केवल वाणी से ही नहीं, सारी इन्द्रियों से है । मन officer है । मन के अन्दर सारी शक्ति चली गई ।

यह बात याद रखने की है जिस समय शरीर छूटने लगता है उस समय

जिस योनि में जाना होता है, वो योनि सामने आ जाती है। पर केवल उसी को उसका दर्शन होता है। दूसरे लोग जो हैं उनको नहीं होगा। अगर वो योनि सुन्दर है, बड़ी प्यारी है, तब तो बोलते २ शरीर छोड़ देगा। मान लो, कल्पना करो दिव्य शरीर सामने आ गया। तेजोमय, चमकीला। देव योनि बड़ी महत्त्वपूर्ण योनि है, तो खट शरीर छोड देगा। कहते है बोलते २ चला गया। किन्तु ऐसा शरीर नहीं आया, तामसी योनि का शरीर आ गया। जैसे कोबरा है या tiger है, तो जीव उसको चाहता नहीं तो बेहोश हो जाएगा। बेहोशी की हालत में यह शरीर छोडेगा। महाभारत में कैसा चक्रव्यूह द्रोणाचार्य ने रचा था। अभिमन्यु उसके अन्दर फंस गया। मूर्ख बाहर निकलना जानता नहीं। उसी चक्रव्यूह के अन्दर मारा गया। इस शरीर को भी माया भगवती का चक्रव्यूह समझो। यह जीव इसके अन्दर अभिमन्यु है। अनादि अनन्त जन्मों से यह जीव द्रोणाचार्य के किले मे फंसा हुआ है। एक से निकलता है तो दूसरे मे फंस जाता है। इस से बाहर निकलने की अकल ही नहीं। शास्त्र से, सत्सङ्ग से, बुद्धिमान आचार्य से इस आत्मा का कभी विचार ही नहीं किया. इन भोगों मे ही रहा, जीया और मर गया। जो राजस तामस विकारों मे ही रहेगा। जीव बेहोश हो जाएगा।

आज कल तो डाक्टर जल्दी प्राण छोडने भी नहीं देते। आक्सीजन आदि की नालियाँ लगा दी। नकली सांस चल रही है। वो बेचारा जाना भी चाहता है पर जाने भी कोई नहीं देता वो world famous film star राजकपूर पड़ा है न दिल्ली में। डाक्टर प्राण छोडने भी नहीं देते। इतने साधन विज्ञान ने खडे कर दिए है कि शरीर छोंड़ना भी मुश्किल है। लेना भी मुश्किल। मनुष्य बनना भी मुश्किल, मनुष्य शरीर से निकलना भी मुश्किल। किन्तु जो सत्सङ्गी है, आत्मविद्या का अभ्यासी है उसको जैसे इस शरीर मे रहने मे दुःख नहीं वैसे ही इस से निकलने मे भी दुःख नही है क्योंकि शोक मोह से रहित होकर जीआ है वो। और जो शोक मोह से रहित होकर जीआ है उसको इस शरीर से निकलने में क्या कठिनाई है। वो इस शरीर को जल्दी छोड़ देगा। महाभारत में आया है 'ततः सत्यवतः कायापाशबद्धमसङ्गमंगुष्ठ मात्र पुरुषं निचकर्ष त् यमोवला त्।' सत्यवान की काया से यमराज ने अंगुष्ठ मात्र पुरुष को

जबरदस्ती खींचा । इसका तात्पर्य क्या है कि प्राण तो जाएंगे ही । तुम कितना ही अन्दर बेहोश होकर पडे रहो । अन्दर पडे रहने से काम नहीं चलेगा । इसलिए सत्सङ्गी, विवेकशील सत् चित् परमात्मा का ध्यान करता हुआ जीवन में चले और अमृत विद्या को पकडे । यह जो ब्रह्मविद्या है यह अमृत विद्या है । इस विद्या के द्वारा तत्त्व की छान बीन करता रहे । तो जीवन में भी गड़बड़ नहीं जाने मे भी कोई गड़बड़ नहीं ।

'वाङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणे प्राणः तेजसि' जहाँ शरीर छोड़ने लगे तब क्या हुआ ? वाणी मन में आगई । यहाँ केवल वाणी से ही तात्पर्य्य नही । वाणी परिलक्षित सारी इन्द्रियाँ मन मे आगई । जैसे दो जादूगर होता है न । उसने पिटारी के अन्दर सब कुछ रखा होता है । जादूगर पिटारी रखता है । खेल दिखाना होता है तो सारा सामान बाहर निकाल लेता है । खेल दिखा कर लोगों को प्रसन्न करता है और जो कुछ मिलता है लेकर चल देता है । इसी तरह यह जीव खेल दिखाने के लिए सब इन्द्रियों को बाहर निकालता है । सब इन्द्रियों के द्वारा सब व्यवहार करता रहता है । एक दूसरे का भला, एक दूसरे का बुरा । जब खेल ख़त्म हुआ सारी इन्द्रियाँ मन रूपी पिटारी मे बन्द कर दी । इसलिए कहा वाक् से उपलक्षित सारी इन्द्रियाँ मन मे आगई । मनः प्राणे मन प्राण में जाएगा । मन संकल्प प्रधान है । याद रखो मन संकल्प करेगा और चलेगा । कहाँ जाना है यह बुद्धि ने निश्चय करना है । माने विज्ञानमय कोश । मन ने संकल्प किया कि चलो । कहाँ चले ? यह बुद्धि ने निश्चय किया । जाने की सारी क्रिया प्राण द्वारा होगी । प्राणमय कोश । प्राण क्रिया प्रधान है । ब्रह्म लोक भी जाना होगा तो प्राण के बल से जाओगे । इसलिए ऋषियों ने प्राणायाम योग पर बल दिया । 'प्राणजयान् मृत्युजयः' । जो योगी प्राण को जय कर लेगा वह मृत्यु को जय कर लेगा । हम लोग इस प्राण की ओर ध्यान ही नहीं देते । सोचते है इस हंडी को भर दो बस हो गया । केवल हंडी को भरने से काम नहीं चलता । मुमुक्षु थोड़ा प्राणायाम भी करे । थोडा ध्यान भी करे । और मंत्र जप भी करे । अपने यहाँ यज्ञोपवीत होता है तो कहते है थोडा प्राणायाम करो । आजकल तो कोई सीखने की जिज्ञासा भी नहीं करता । पुराने जमाने में एक बड़ी

प्रक्रिया थी प्राणायाम की ।

प्राण क्रियाप्रधान है । मन ने संकल्प किया । बुद्धि ने निश्चय किया कि अमुक जगह जाना है अब प्राण ने पकड़ लिया । जिस योनि में जाना है वो सामने खड़ी हो चुकी है । मन प्राण में जाना है वो सामने खडी हो चुकी है ।मन प्राण मे आ गया किन्तु मन तब उत्क्रमण करेगा जब उदान इसको बल देगा । जो वायु नाभि से कंठ तक है वह उदान है । यह उदान ऊपर उठेगा तो अपान ऊपर उठेगा । और उदान ऊपर नहीं उठेगा तो अपान वायु ऊपर नहीं उठेगा । अपान यदि बलवान हुआ तो उदान को नीचे की ओर खींच लेगा । तो प्राण का क्या हाल होगा ? प्राण भी नीचे खींच जाएगा । जब प्राण नीचे खिच गया तो मल द्वार से निकलेगा या मूत्रद्वार से निकल जाएगा । प्राण यदि मलद्वार से निकलेगा तो दस्त हो जाएगा और मूत्रद्वार से निकला तो पेशाब हो जाएगा । तो समझ लो यहाँ से निकला है । यह तामस गति है । इस तामसी गति से बचाने के लिए जिनको हम स्वजन कहते, बन्धु कहते हैं, कैसी सुन्दर प्रक्रिया करते हैं । विष्णुपाद में डाल दिया । पैर में पानी डालते हैं । मुँह मे भी पानी डालते है । काहे कें लिए । पैर मे पानी डालने का विज्ञान है कि पैर ठंडे होंगे तो अपान ऊपर उठेगा । अपान ऊपर उठ कर उदान से मिलेगा । उदान प्राण से मिलेगा तो प्राण ऊपर से बाहर जाएगा । ऊपर से प्राण निकलना भला है । यह अच्छी गति का बोधक है । उसकी गति अच्छी होगी । अच्छीं योनि मे जाएगा । और यदि प्राण नीचे से गया तो यह अधोगति है, तामस गति है । पहले कहा

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः

जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ।

'तामसाः अधो गच्छन्ति' । यह तामस गति न हो ऊर्ध्व गति को पकड़ने के लिए यह जो भाई बन्धु होते है । देखो मनुष्य प्राणी माता पिता, बेटा बेटी भाई बन्धु जो है प्रिय सम्बन्धी, हम सब एक दूसरे के लिए प्राणों की आहुति देते है । यह किस दिन के लिए देते हैं ? जिस दिन हम यहाँ से जाएं हमको स्वागत करके विदा करो । प्यार से विदा करो । यह नहीं कि केवल मरने की प्रतीक्षा करो और बाद मे ढोल बजा दो । किया कुछ नहीं केवल ढोल बजा दिया । बुड्ढा

बुढ्ढी मरते हैं तो ढोल बजाते है । यह नहीं । जिस समय प्राण निकलने लगे उस समय उनकी बुद्धि इतनी अच्छी हो, अपनी वैदिक परम्परा में यह है, कि कोई गीता पढता हो । कोई रामायण पढता हो, वेद मंत्र पढता हो । कुछ तो कान मे जाए इनके । यह अपने दरवाजे बन्द कर रहा है तो कुछ इसके अन्दर जाए । जो इस शरीर मे आया है वो इस शरीर को छोड कर जा रहा है, इसलिए उसका भान कर के विदा करो । स्वागत करके विदा करो । इस शरीर मे आने पर जब हमने उसको प्यार दिया तो इस शरीर को जब वह छोड कर जा रहा है तो भी उसे प्यार से विदा करो । परिवार में बेटा बेटियों का काम होता है कि कुछ अच्छा सुनाओ उसको जिस से उसकी अच्छी गति बने ।

'प्राण: तेजसि' यहाँ तेज शब्द का अर्थ है उदान । यह उदान तेजोमय है यह अपान को ऊपर खींचेगा । अपान प्राण में मिल कर ऊपर से बाहर जाएगा 'तेज: परस्यां देवतायां' अथ न जानाति' यहाँ से वो परा देवता आत्मा जो अहं अहं कर के बैठा है मन ने सैल्यूट मारा कि भगवन सब तयारी हो गई । चलें । अब every thing is o. k. ? उसने कहा हां तैयार है चलो । अथ न जानाति दरवाजे बन्द । अब बाहर देखना सुनना बन्द हो गया और यह यहाँ से 'चक्षुषो वा मूर्ध्नो वा अन्येभ्योपि वा शरीराङ्गेभ्य: उत्क्रामति विद्या कर्माणि पूर्वप्रज्ञा च' शरीर के अवययो में तम छा गया । विद्या और कर्म इसके अगले जन्म का आरम्भ करेंगे । 'पूर्वप्रज्ञा च' पूर्व जन्म के जो संस्कार है यह अगले जन्म का आरम्भ करेंगे । हम सोचते है कि इस विचार को कल के लिये छोड़ दें । समय के साथ चलना चाहिए । कल उसके ऊपर और विचार करेंगे । अब सीधे होकर बैठो ।

हरि: ॐ तत्सत्

ॐ

२६-५-८८

प्रवचन सं० ४८

"ॐ अथ यत्रैतदस्माच्छरीरादुत्क्रामत्यथैतैरेव रश्मिभि-रूर्ध्वमाक्रमते स ओमिति वा होद्वा मीयते स यावत्क्षिप्येन्म-स्तावदादित्यं गच्छत्येतद्वै खलु लोकद्वारं विदुषां प्रपदनं निरोधोऽविदुषाम् ।।"

(छान्दो८-६-५)

विचार चल रहा है कि ब्रह्मलोक कैसे जाएंगे । ब्रह्मलोक जाने का जो मार्ग है उसके बारे में हम लोग विचार कर रहे है । कल यह बात आई थी कि कोई भी मनुष्य सामान्यतः ऐसा कहो कि कोई भी जीव जब इस शरीर को छोड़ता है चाहे वो पशु ही हो तो भी इस शरीर को बेहोश कर देगा । बेहोश क्या करना है ? जैसे यूं समझो हमारा यह भूमंडल है हमारा यह गोलार्द्ध है । इसमे इस समय सूर्य का उदय हो रहा है । सूर्य का उदय होना क्या है कि सूर्य की रश्मियाँ इधर आई तो उधर रात हो गई । अमेरिका आदि देशो मे इस समय रात होगी । सूर्य की रश्मियाँ आने पर दिन और जाने पर रात । ऐसे ही यह शरीर क्या है ? पृथ्वी मंडल ही है । इस शरीर को पृथ्वी मंडल ही समझो । जाग्रदवस्था मे आत्मा की light इस स्थूल शरीर पर आ गई । इस शरीर मे जो यंत्र परमात्मा ने fit किया है । यंत्र क्या है मन और इन्द्रियाँ ही सारे यंत्र है । लाईट light को आंख ने पकडा तो रूप देखने लगे । light को कान ने पकडा तो शब्द सुनाई पडा । light ने वाणी को पकडा तो करंट है तो वाणी बोलेगी । जैसे माईक है हमारे सामने । हम तो धीरे २ बोलते है किन्तु यह माईक सौ गुणा हमाने शब्द को बढा रहा है । माईक मे electric करंट है । करंट बन्द हो गया तों माईक

की बोलती वन्द । ऐसे ही यह वाणी भी क्या है ? माईक ही है । रात में निद्रा मे मन जो है हट जाता है । मन हृदय देश मे चला जाता है । मम्मी की गोद मे सों जाता है । मम्मी कौन ? अविद्या । मन अविद्या मे लीन हो जाता है ।

तुम्हारी आत्मा आनन्द स्वरूप है । अब दुःख कहाँ है । दुःख तो आया दूसरे से । अपने लोक जीवन मे अनुभव करो आज तक world का जितना भी बडा इतिहास है कोई ऐसा मनुष्य मिला जो अपने से दुःखी हुआ हो ? दूसरा प्यार से बोला तो सुखी हो गया और क्रोध से बोला तो दुःखी हो गये । तो दुःखी जो हुए तो अपने से हुआ या दूसरे से ? अपने से कोई दुःखी नहीं होता । इसका कारण क्या है ? अपना जो स्वरूप है वो तो आनन्द स्वरूप ही है । उसमे दुःख कहा है ? दुःख तो तब आया जब दूसरों से अपने मन को मिलाना शुरु किया । कोई प्यार से हमारे मन को पकडता है तो सुख । कोई क्रोध से हमारे मन को पकडता है तो दुःख हो गया । यही दुःख की व्याख्या है । इसलिए हृदय मे जाकर आनन्द ही आनन्द है ।

यहाँ विचार किया कि जब तुम ब्रह्माकार वृत्ति को जाग्रत करोगे तो अपने से तुमको आनन्द ही आनन्द मिलेगा । दुःख मिलेगा ही नहीं । ब्रह्माकार वृत्ति को जाग्रत करते २, शरीर की तो आयु है, आयु समाप्त हो गई । अब जाना तो पडेगा तो यह जो ब्रह्मवेत्ता है 'आत्मैवाहमस्मि' 'ब्रह्मैवाहमस्मि' ब्रह्माकार वृत्ति को जाग्रत करते २ लम्बा जीवन व्यतीत किया है । अब इस शरीर को छोडेगा । अन्दर से यह सावधान है । यह समझ गया है कि मैं इस शरीर को छोड रहा हूँ । ऐसी ज्ञान की निष्ठा बन जाती है किसी किसी की । ऋषीकेश में एक महात्मा थे । बडे अच्छे थे । बडे ब्रह्मवेत्ता थे । सवेरे के समय आश्रम के जो सचालक हैं । कोठारी को बुलाया । पूछा भोजन मे कितनी देर है । उसने कहा अभी तो काफी देर है । करते २ दस बजे । ग्यारह बजे पंक्ति लगती है आश्रम मे । फिर बुलाया। पूछा ? पंक्ति लगने वाली है । अच्छा । सब खाकर उठ गये । उसके बाद कर्मचारी वर्ग खाते हैं । सब कर्मचारी वर्ग खा चुके ? कहा हाँ सब लोग खा चुके । कहते हैं बुलाओ सबको । सब आए तो बोले आप सब के बीच मे हम आए थे । बडे प्यार से रहे । अब हम जा रहे हैं । आप सबको ॐ नमो नारायणय।

बडे प्यार से नमस्कार किया और शरीर छोड दिया। देखो। कितना कन्ट्रोल रहा। प्राण तो सवेरे से ही जा रहा था किन्तु रोक लिया प्राण को। ब्रह्मवेत्ता थे। सोचा सब का भोजन खराब कर के कैसे जाओगे। विदा होकर जाना है। सबको खिला पिला कर सबको बुलाकर नमस्कार किया। फिर गये।

यह जो ब्रह्मवेत्ता है यह जब शरीर से मन को पीछे हटाएगा तो शरीर बेहोश हो जाएगा। किन्तु उस समय 'ॐ इत्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्' गीता में भगवान कहते है यह ब्रह्मवेत्ता जो ब्रह्मलोक को जा रहा है वो ॐकार अक्षर शब्द को पकड लेगा। एक तो सद्य मोक्ष में जाने वाला है वह तो इसी शरीर से मोक्ष मे चला जाएगा। यह सद्योमुक्ति है। और यह ब्रह्म लोक के द्वारा मोक्ष मे जा रहा है। ब्रह्मलोक मे जाकर अनन्त काल तक वहाँ रहेगा। फिर मोक्ष मे चला जाएगा। इसका फिर जन्म नहीं होगा। किन्तु जो सामान्य स्वर्ग में जाएगे वे लौट कर आएंगे। स्वर्ग मे अपने महान पुण्यों का जो फल है उसका अनुभव करता है फिर पुण्य समाप्त होने पर यहाँ मर्त्य लोक मे चला आता है। हाल तो बुरे ही है। जैसे कूएँ मे रहट के द्वारा लोटे भर कर बाहर आए फिर खाली हो गये। खाली होकर उल्टे मुँह लौट गये। इसी तरह यहाँ से महान पुण्यों कि फल से स्वर्ग गया और फिर लौट आया। 'गतागतं कामकामा लभन्ते' जो वासनाओ से घिरे हुए है वो बार २ जाते हैं, आते है। कभी गये कभी लौट कर आ गये। यह आना जाना उनका बन्द नहीं होता। ब्रह्मलोक जाने वाला ब्रह्मवेत्ता फिर लौट कर नहीं आता। क्योंकि इसकी जो दृष्टि है वह तत्त्व में ही है।

वासना जब पकड कर रखती है तो आगे जाने नहीं देती। यह अपना काम करती है। जैसे अपने अनुभव के लिए समझो एक व्यापारी है। व्यापारियों की दृष्टि होती है कि यह काम करेंगे तो आगे लाभ होगा। एक नगर का राजा वृद्ध हो गया था। अवस्था तो शरीरों की होती ही है। व्यापारी ने सोचा कि राजा की आयु तो बहुत हो ही चुकी है। हो सकता है इसी सर्दी मे प्राण छोड दे। उसके मन मे संकल्प आया कि सामान्य लोगों को तो सामान्य लकडी से जलाते हैं। किन्तु महाराजा के लिए को चन्दन की लकडी चाहिए। चन्दन की

लकडी तों खरीद कर रख ली । अपने गोदाम मे चन्दन की लकडी भर ली । धीरे २ जाड़ा आया और पार भी हो गया किन्तु महाराजा जैसे का तैसा ठीक ठाक चल रहा है । व्यापारी के मन मे धुक २ होने लगी । महाराजा का कान भी गर्म नहीं हो रहा । और हमारी यह चन्दन की लकडियाँ ऐसे हीं भरी रहेंगी यह कहाँ बिकेंगी ? राजा बुद्धिमान था । रोज रात को हाथी पर सवार होकर अपने नगर मे घूमता था । उस व्यापारी की दुकान कोने मे थी । महाराजा का हाथी जब उसकी दुकान के पास पहुँचे तो उनका हाथ स्वत: ही तलवार की ओर जावे । कई दिन ऐसा ही हुआ ? महाराजा के मन मे विचार उठा कि क्या बात है । अमुक कोने मे जो दुकान है जब वहाँ मेरा हाथी जाता है तों मेरा हाथ तलवार की ओर उठ जाता है । मेरे अन्दर यह हिंसा का भाव, क्यों आता है । बडा जब भगवान किसी को बनाता है तो यूं ही थोडे बना देता है । बुढे मंत्री को बुलाया कि जाकर पता करो क्या बात है । मंत्री भी बुढ़ा था । वह भी कम बुद्धिमान नहीं था । उसने सोचा यदि सीधा उसकी दुकान पर जाकर पूछा तो उसको संदेह होगा । सबकी दुकानों पर जाकर पूछने लगा कि आप लोंगों को राज्य की ओर से कोई कष्ट तो नहीं है । राज्य की ओर से कोई सहायता की जरूरत तो नहीं है । इस तरह पूछते २ उसकी दूकान पर पहुँचा । पूछा कहो साहू जी राज्य की ओर से आपको कोई कष्ट तो नहीं है । कोई कष्ट हो तो राज्य उसको दूर करेगा । बोला कोई कष्ट नहीं खूब मजे में है । पर व्यापारियों का पैसा चलता फिरता रहे तो ठीक होता है । अगर पैसा कहीं रुक जावे तो ठीक नहीं होता । जैसे पांनी चलता रहता है तो अच्छा रहता रहता है । कुछ चंदन की लकडी मोल ले ली थी । वो ऐसे ही पडी है बिकती नहीं । मंत्री समझदार तो था ही, समझ गया कि चन्दन की लकडी इसने काहे के लिए ली थी । उससे कहा ठीक है अगर ऐसी बात है तो तुम वो सारी लकडी सरकारी गोदाम मे भेज दो और पैसा खजाने में से ले आओ । और वहाँ से चला आया । उसने लकडी गोदाम मे भेज दी और खजाने से पैसा ले लिया । मंत्री ने राजा से कुछ कहा नही । राजा ने भी नहीं पूछा । इसी तरह कई कई महीने बीत गये ।

अब राजा उधर जाता है, पर कोई प्रभाव नहीं होता । बहुत दिन बीत

गये । एक दिन मंत्री ने पूछा महाराज अब कैसा है ? आप उधर से जाते हैं तो आपका हाथ तलवार पर जाता है कि नहीं ? राजा ने कहा नहीं अब कोई बात नहीं होती । हम तो भूल ही गये उस बात को । तब मंत्री ने वो किस्सा सुनाया कि उसने चन्दन की लकडी ले भी थी । पैसा बन्द हो गया था । उसको चिन्ता थी कि लकडी कब बिकेगी । हमने सारी लकड़ी चन्दन की खरीद ली और उस को पैसा दे दिया ।

तो देखो ! हृदय हृदय से बोलता है । हिंसा हिंसा को बुलाती है । उसके अन्दर हिंसा बैठी थी इसलिए राजा भी हिंसा को बुलाता है । राजा के हृदय मे भी हिंसा जाग्रत होती है । यह wireless system यहीं से निकला है । उसके मन मे हिंसा है इसलिए राजा के मन मे भी हिंसा जाग्रत होती हैं । इसीलिए कहा कि अपनी भावना को शुद्ध रखो । इस लोक मे जीने के लिए भी हम यदि दूसरे के लिए अच्छी भावना रखेंगे तो हमारे लिए अच्छी भावना आएगी । दूसरे के लिए भावना अच्छी नहीं रखेंगे तो हमारे लिए अच्छी भावना कहाँ से आएगी । यह भावनामय जगत है । इसी तरह यहाँ ब्राह्मी भावना की बात है । मुमुक्षु ब्राह्मी भावना करे । 'आत्मैवेदं सर्वं' 'ब्रह्मैवेदं सर्वं' 'तेन तत्पश्यन् निहितं गुहायां यस्मिन् विश्वं भवत्येकनीड स ओतश्च प्रोतश्च' वेन नाम का एक ऋषि हुआ । यह राजा था । बेन तत्पश्यन् निहितं गुहायां यस्मिन विश्वं भवत्येकनीडं' उस बेन ने हृदय के अन्दर गुफा मे साक्षात्-कार किया । यह सारा ब्रह्माण्ड पक्षी के घोंसले की तरह है । घोंसले को संस्कृत में नीड़ कहते हैं । वह कहता है हम लोक रोज इस हृदय मे जाते हैं । इस हृदय को नीड़ समझो । रोज हम इस मे जाते हैं । संसार कहाँ दीखता है ? कहाँ भासता है संसार । इसी तरह ब्रह्म को श्रुति नीड़ कह रही है । सारे जीवों को पक्षी की उपमा दे रही है । उस ब्रह्मरूपी नीड़ मे यह सब जीवरूपी पक्षी जा रहे हैं । इस तरह महान् ऋषि बेन जो है उस ब्रह्मवेत्ता ने महान ब्रह्म का साक्षात् कार हृदय मे किया । साक्षात्कार कर के कहता है यह विश्व हृदय मे लीन होता है और प्रकट भी होता है । जैसे हम लोग हृदय मे गये और जाग्रत मे बाहर आ गये । महाप्रलय में यह सारा ब्रह्माण्ड उस ब्रह्म में लीन हो गया और सृष्टि काल मे बाहर आ गया ।

'स ओतश्च प्रोतश्च विभु प्रजासु' वो जो विभु है परमात्मा वह सब प्रजाओं मे ओत प्रोत है। ऐसा महान वो जो ब्रह्म है। उस ब्रह्म का साक्षात्कार करने वाला जो ऋषि है वो जिस समय प्राण छोडता है तो शरीर को बेहोश कर देता है। हृदय के अन्दर हिता नाम की नाडी को मन पकड लेता है। यह सौर नाम की नाडी है। इस नाडी का सम्बन्ध सौर जगत से है। जैसे एक पिता यहाँ से अपने बेटे को अमेरिका भेजता है। यहाँ से ही फोन पर उससे बात भी कर लेता है। फोन पर बात कर रहा है। टेलीफोन सेट तो यही रखा है और बात कर रहा है वहाँ बैठे बेटे से तो क्या समझते हो तुम्हारा यह सम्बन्ध सूर्य से बना हुआ है। बुद्धिमानों ने इस सम्बन्ध को समझ लिया है। इस बात को ब्रह्मवेत्ता भी जानता है कि अमुक नाडी के द्वारा यह सम्बन्ध है। इसलिए इसको जाने मे कोई तकलीफ नहीं। इसका रास्ता खुल गया है। मंत्र कहता है 'यत्रै तदस्माच्छरीरादुत्क्रामत्यथैतैरेव रश्मिमिरुर्ध्वमाक्रमते'। यह जो रश्मि है सूर्य की पिङ्गला और हिता नाम की से इसका नाता है। यह मन उस नाडी को पकड लेता है इसके द्वारा इसका सौर मंडल से सम्बन्ध हो जाता है। और सूर्य मंडल जो है यह ब्रह्मलोक का द्वार है। इसके द्वारा ऊपर कोई नहीं जा सकता। जो इस क्रम से शरीर छोडेगा वहीं जा सकता है। श्रुति कहती है 'हिरण्यमये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलं तच्छुभ्रं तज्ज्योतिषां ज्योति' मंत्र कहता है वो हिरण्यमय माने ज्योति स्वरूप। हिरण्य नाम है सोने का। सोना इतना चमकीला है इसलिए वह आंख को खींच लेता है। जिसकी आंख को सोना खींच ले वो हिरण्याक्ष है। हिरण्याक्ष उसी को कहते हैं। आज भी ऐसे बहुत से लोग है। वो त्रेता युग वाला ही हिरण्याक्ष नहीं। 'हिरण्मये परे कोशे' यह हिरण्मय है, ज्योति स्वरूप है। यहाँ हिरण्मय क्या है? तुम्हारी बुद्धि का नाम है हिरण्मय कोश विज्ञान मय कोश। यह बुद्धि जीव को ऊपर उठने नहीं देती। अपने से नीचे रखती है। वो कहती है कि यदि यह जीव ऊपर चला गया तो मैं तो ऐसे ही रह जाऊँगी। जो मुमुक्षु बुद्धि को जय करेगा उसको बुद्धि नहीं बोलेगी। श्रुति क्या कहती है 'विरज' रजोगुण से परे है। यहाँ रजोगुण है नहीं। अतिशांत, अति निर्मल। रजोगुण मे ही चंचलता होती है। बुद्धि में जितनी चंचलता होती है सब रजोगुण के कारण ही होती है। अब रजोगुण चला गया तो मन शांत हो गया। अति

ग्रानन्द रूप की स्थिति है यही मन के ग्रन्दर कोई विकार भी नहीं ग्राएगा। विकार तभी ग्राएगा जब मन में रजोगुण होता है। वो महान ब्रह्म विरज हैं, रजोंगुण से रहित हैं।

श्रुति उस ब्रह्म को ग्रागे कहती है निष्कलं। ब्रह्म का नाम निष्कल है कला कहते हैं ग्रवयव को। जैसे यह फूल है। प्रत्येक पंखुडी इसकी कला है। कला मिल कर यह फूल बना। कला माने ग्रवयव। यह कला मिल कर इतना बडा फूल बना। नैपाली में कला लडकी को कहते हैं। वो भी माता पिता का ग्रवयव है। एक २ बेटा बेटी को घर से बाहर निकाल दो तो तुम्हारे पास क्या बचा। यह हरा भरा बगीचा तो बेटे बेटियों ने ही बना रखा है। ग्रब एक २ कर के भगने लगे तो क्या है तुम्हारे पास में। नये २ बच्चे राष्ट्र मे नहीं ग्राएंगे तो बूढा बूढी क्या करेंगे? यह कितने दिन हरा रखेंगे इस बगीचे को। इसलिए नई २ ग्रात्माएँ भी ग्रानी चाहिए। यह जो ब्रह्म है यह निराकार ह। इस में कोई ग्रवयव नहीं।

एक बात याद रखने की है कि निराकार के बिना साकार नही। निराकार है तो साकार भी है। ग्रौर निराकार नहीं तो साकार भी नहीं। जैसे यह शरीर है तुम्हारा। यह उस निराकार ग्रात्मा से ही हरा भरा है। निराकार ग्रात्मा के बिना यह साकार शरीर कुछ भी नहीं। ग्रात्मा नहीं तो कितने दिन रखोगे इस शरीर को? 'तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिः' श्रुति कहती है बडा शुभ्र है, स्वच्छ है। ज्योतियों की ज्योति है। सूर्य का भी सूर्य है। यह सूर्य भी इसकी कृपा से ज्योति स्वरूप है। ज्योतिष्मान् है। ऐसी ज्योति स्वरूप तुम्हारी ग्रन्तरात्मा है। यह जब सौर नाडी के द्वारा सूर्य से सम्बन्ध कर लेती है तो इस ब्रह्म--वेत्ता को सूर्य मंडल पहुंचने मे देरी नहीं लगती। जैसे ग्रांख झपको। उतनी देर मे यह सूर्य मंडल पहुंच जाता है। 'रश्मिभिरूर्ध्वमाक्रमते स ग्रोमिति वा होद्वामीयते स यावत्क्षिप्येन्मनस्तावदादित्यं गच्छत्येतं' ग्रन्तिम शब्द यह ब्रह्मवेत्ता क्या कहता है? ॐ कहता है। तो सोचो कितनी होश है इसको। नहीं तो शरीर छोडने से पहले बेहोश हो जाते हैं।

'ग्रोमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरनमामनुस्मरन्' गीता में भी भगवान कहते

हे मुमुक्षु 'ॐ' शब्द का उच्चारण कर के शरीर को छोडे । 'मामनुस्मरन्' ॐ का स्मरण करतें हुए केवल 'ॐ' का उच्चारण ही काफी नहीं । योग दर्शन में महर्षि पतञ्जलि कहते है 'तस्यवाचक: प्रणव:' उस परमात्मा का बोधक शब्द 'ॐ' है । इस 'ॐ' शब्द का जप करे । तज्जपस्तदर्थभावनम् गुरु के द्वारा इसके अर्थ को समझे । केवल जप नहीं करे । 'तदर्थभावना' अर्थ को जान जाएगा तो अर्थ को जान कर उसकी भावना करते हुए जप करे ।

'प्रियनाम ग्रहणे यथा लोक: प्रसीदति इति
एवं भगवान् ॐ कारेति ग्रहणे प्रसीदति ।''

जैसे आज कल लोग कीटू कहते हैं विटू कहते है नया नाम अच्छा होता है । मां ने बुलाया कीटू विटू बडे प्यार से कहता है, हाँ मम्मी । मैं आया । कोई अच्छा नाम रखें तो अच्छा भाव आए पर आज कल के नाम तो ऐसे ही हैं । कहते हैं यथा नाम तथा गुण: पहले कहते थे जगदीश। जगत् का ईश । तुम को कितना बडा बना दिया । जगत् का स्वामी । तुम जगत् के स्वामी हो । जगत् को एक तरफ कर दिया । इसका मान होता था । कमला कहते ही कमल नाम का जो फूल होता है वो कितना निर्दोष होता है । कितनी सुगन्ध है इसकी । इसका नाम लेते ही तुम्हारे जीवन मे इतना सुन्दर सुगन्ध इतना सुन्दर रूप भासने लगता है । कीठू से क्या रखा है ? क्या निकलेगा इसके अन्दर से ? 'ॐ' भगवान का प्रिय नाम है । बडा प्यारा नाम है । भगवान् प्रसीदति । इस प्रकार 'ॐ' का जप भी करे और इसके अर्थ की भावना भी करे । अकार, उकार, मकार यह तीन मात्राएँ है । इन तीनो मात्राओं का स्थूल, सूक्ष्म ओर कारण । स्थूल माने यह स्थूल ब्रह्माण्ड । सूक्ष्म माने समष्टि सूक्ष्म शरीरात्मा । और कारण माने माया । मायापति ईश्वर । यह स्थूल सूक्ष्म और कारण । इन से परे तुरीय पद माने ब्रह्म पद । ॐ में बिन्दु भी तो है । यह बिन्दु किसको लक्षित करता है । जिसको यह बिन्दु लक्षित करता है वो है तुम्हारा असली स्वरूप । इसको समझने के लिए, इसके लिए माण्डूक्योपनिषद् महत्त्वपूर्ण है । इस में इस ॐ की विशद व्याख्या है । 'यावत्क्षिप्येन्मनस्तावदादित्यं गच्छत्येतद्वै खलु लोकद्वारं विदुषां प्रपदनं निरोधोऽविदुषाम् ।' कहते है कितनी जल्दी वहाँ पहुँचेगा । जरा सा मन का

संकल्प किया उतने मे ही पहुँच जाएगा यह आदित्य मंडल जो है यह लोक द्वार है। इसमे जो महान विद्वान है, ब्रह्मवेत्ता है वो ही जा सकेगा। विदुषां जो अविदुषाम् है उनका निरोधक है। वो नहीं जा सकेंगे। इसका अर्थ निकला कि तुम्हारे हृदय में १०१ नाडियां है। उन मे से एक नाडी ऊपर को उठती है। इस को सुषुम्ना भी कहते हैं। यह नाडी ऊपर मूर्धा मे जाती है। इसको सौर नाडी भी कहते है। इस नाडी के द्वारा, जिस समय यह ब्रह्मवेत्ता शरीर छोड़ने लगेगा तो इसका सम्बन्ध सूर्य से हो जाता है। और आंख पलके इतनी देर मे यह सूर्य मंडल पहुंच जाता है। यह सूक्ष्म शरीर लेकर जाता है क्योंकि इसका ब्रह्मलोक का भोग बाकी है। जो मोक्ष मे जाएगा उसका सूक्ष्म शरीर यहीं भंग हो जाएगा। कारण शरीर अति दुर्बल हो जाएगा। हम लोगों का कारण शरीर अज्ञान जो है वो अज्ञान हमको जगह २ दबाता है। किन्तु ब्रह्मवेत्ता को यह अज्ञान दबाता नहीं। जैसे यूं समझो किसी कालेज से कोई बुद्धिमान प्रोफैसर अमुक subject का lecture देता है तो वो बुद्धिमान उस subject को पढा हुआ है। यद्यपि उसकी पकड ढिली हो गई है उसका ज्ञान भी कहीं २ रुकता है किन्तु students जो उसको सुन रहे हैं, उनको जैसा अज्ञान ने पकडा हुआ है इसको ऐसा नहीं पकडा हुआ है। इसी तरह यह जो ब्रह्मलोक जा रहा है यह अज्ञान की पकड मे पूरा नहीं है और जो स्वर्ग जा रहा है वो अज्ञान की भी पकड मे हैं, सूक्ष्म शरीर की पकड मे भी है। इसलिए वो 'उत्क्रमणे भवन्ति उत्क्रमणे भवन्ति' बार २ आएगा। बार २ जाएगा। इसका आना जाना यंत्रवत् चलता रहेगा।

मुमुक्षु 'आत्मैवाहमस्मि' ऐसी भावना निरन्तर करता रहे। आगे कल इसकी और व्याख्या करेंगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२७-५-८८

प्रवचन सं०-४९

"ॐ तदेष श्लोकः । शतं चैका च हृदयस्य नाड्यस्तासां मूर्धानमभिनिःसृतैका । तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति विष्वङ्ङन्या उत्क्रमणे भवन्त्युत्क्रमणे भवन्ति ।। ॐ य आत्मापहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्य संकल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्यः स सर्वांश्च लोकाना प्नोति सर्वां कामान्यस्तमात्मानमनुविद्य विजानातीति ह प्रजापतिरुवाच ।।"

(छान्दो. ८-६-६।८-७-१)

इससे पहले विचार करके आए हैं कि ब्रह्मलोक को कैसे आएगा यह जीव । ब्रह्मलोक जाने का रास्ता कहाँ से है ? इस रास्ते का व्याख्यान किया । इस बात को भी कहा कि जिस समय यह जीवात्मा इस शरीर को छोडने लगेगा । यह याद रखो आप लोग सत्सङ्गी हो, भगवान के प्रेमी हो । आत्मा परमात्मा के ऊपर कोई ज्ञान नहीं । दुनियाँ मे यह सब से बडा ज्ञान है । इस बात को निश्चित समझो । अगर किसी जगह जाना पडा तो जिस घर को हम अपना समझते है, उस घर को छोडने के समय कुछ होता है कि हाय दो महीने के लिए हम घर छोड़ रहे हैं और पीछे की चिन्ता करने लगते हैं किन्तु सब से बड़ा घर यह शरीर है । इस मनुष्य शरीर से बडा कोई घर नहीं है । यह घर है तो वो घर भी है । जिस समय यह जीवात्मा इस घर को छोडने लगता है उस समय बृहदारण्यक श्रुति है 'हृदयाऽग्रे प्रद्योतते' जब आत्मा इस शरीर को छोडने लगता है तो हृदय के सामने लुप २ प्रकाश होने लगता है। यह जीवात्मा तैयार हो

गया कि इस शरीर को छोड कर जाना है । पहले तो वाहर से इन्द्रियों को खींच कर मन में पहुंच जाएगा । मन यह संकल्प करेगा कि जाना है । कहाँ जाना है ? यह निश्चय बुद्धि ने करना है । एक दम बुद्धि के सामने वो दृश्य आ जाएगा । बादल सा आता है किस योनि मे जाना है ।

मन संकल्प प्रधान, बुद्धि निश्चय प्रधान, ज्ञान प्रधान और प्राणक्रिया प्रधान । आने जाने मे यह तीन ही प्रधान हैं संकल्प ज्ञान और क्रिया । तो यहाँ से जहाँ भी जाना होगा यह प्राण के हाथ मे, प्राण मन के हाथ मे और मन बुद्धि के हाथ मे । मन ने जिधर का संकल्प किया, मन बुद्धि के हाथ में है । इसलिए अच्छा सोचो, अच्छा समझो और अच्छा करो । अच्छा करना वो क्रिया । अच्छा समझना वो ज्ञान और अच्छा सोचना जो है वो संकल्प है । उस समय जब यह निश्चय हो गया कि चलना है, जब यह समझ लिया कि जाना है तो 'हृदयाग्रे प्रद्योतते' हृदय के आगे light आ जाएगी । ' तं विद्या कर्मणी पूर्व प्रज्ञा और विद्या के अनुसार जैसी इसकी विद्या होगी जैसा कर्म होगा उसी पद मे जाएगा । इस वात को कल भी कहा था । यदि कर्म सकाम पुण्य है और ज्ञान इतना ऊँचा नहीं तो ब्रह्मलोक नहीं जाएगा । स्वर्ग लोक चला जाएगा। यदि कर्म सत्त्व प्रधान है राजस भी है और ज्ञान गौण रूप से है तो यह मनुष्य-योनि मे जाएगा और यदि कर्म तामस है ज्ञान पीछे दवा हुआ है तो पशु पक्षी योनि मे चला जाएगा । वहाँ अपने तामस कर्म का भोग खत्म करेगा फिर पीछे मनुष्य योनि मे आ जाएगा । इसलिए कहा कि मुमुक्षु सत्सङ्ग करे, जप ध्यान करे और इसके द्वारा सत्य को समझे । पूर्व जन्म के संस्कार भी अन्दर बैठे हैं । हम अपने कर्मो द्वारा उन को वल देते हैं । जगाते हैं । अपने अनुभव के लिए समझो, घर मे ही देखो अच्छी वाणी सुनने को मिले तो सुख होता है । पत्नी यदि पति से प्यार से बोले तो मन प्रसन्न होता है कि नहीं ? क्रोध से बोले तब ? अपने बेटा बेटी ही है, प्यार से बोलते हैं तो अन्दर से प्रसन्नता होती है । गुस्से से बोले तब? वाणी मे बडी शक्ति होती है । इसलिए वाणी को सुन्दर बनाओ । यही तुम्हारे अन्दर सुन्दर ज्ञान को बढाने वाली है । वाणी को अगर बिगाड़ देंगे तो ज्ञान भी बिगड़ जाएगा ।

इस प्रकार मनुष्य भी बना, स्वर्ग गया, ब्रह्मलोक गया, इस बात को समझा कर आए है। एक मंत्र आया है 'एष सम्प्रसादोऽस्मात् शरीरात् समुत्थाय परं ज्योतिरूपसम्पद्य स्वेनरूपेणानिष्पद्य' इस श्रुति पर पहले भी विचार किया है। 'एष सम्प्रसादो' यह सम्प्रसाद है। यहाँ सम्प्रसाद शब्द से श्रुति कहती है कि जिस अवस्था मे यह जीव अच्छी प्रकार से प्रसन्न हो जाए वो सम्प्रसाद अवस्था है। ऐंसी अवस्था लोक जीवन मे तुमको सुषुप्ति मे परमात्मा ने दी है। और आध्यात्मिक जीवन में ब्राह्मी अवस्था दिया है। ब्राह्मी वृत्ति का ध्यान करते २ जब वृत्ति ब्रह्माकार बनेगी तो यहाँ सम्प्रसाद हो जाएगा। जन्म जन्मान्तर के कर्म क्लेश जो होते हैं वो इस ब्रह्माकार वृत्ति से कट जाते हैं। जैसे यह शरीर है। परिवार मे माता पिता बेटा बेटी पति पत्नी एक दूसरे को देख कर खुश होते हैं तो बताओ यह किसको देख कर प्रसन्न होते हैं ? जो अन्दर बैंठा है, वो दीखा तो प्रसन्न हुए कि इस हड्डी मांस के पुतले को देख कर ? कोई बेहोश हो जाए तो सबकी खुशी गायब हो जाती है कि नहीं। कोई अपना बेटा है, मां है, पति है या पत्नी है बेहोश हो गया। उसकी वगल मे जो खुश होकर बैठा था अब खुशी नहीं रही। क्यों ? क्योंकि खुशी का साधन नही है। जिससे खुशी मिल रही थीं वो वहाँ नहीं है खुशी होती है आत्मा के दर्शन से। उस आत्मा का दर्शन हुआ नहीं। दरवाजे बन्द कर के बैठा है। आँख से उसकी रोशनी नहीं आई। मुँह मे वो चमक नहीं। हाथ हिलता नहीं। सबकी खुशी गायब । और उसी समय मान लो होश आ गया तो सब खुश हो जाते हैं। कहते हैं ठीक हो गया, ठीक हो गया। डाक्टर को भी बुलाने की जरूरत नहीं। खट से सब प्रसन्न हो जाते हैं। इसलिए कहा 'एष सम्प्रसादो' सम्प्रसाद माने अच्छी तरह से प्रसाद। माने सम्यक प्रसाद। जब चेतन से करंट मिल जाता है तब सम्प्रसाद होता है। बाकी जगत् के विषयों से मिलना तो थोडे समय का प्रसाद होता है। वो सम्प्रसाद नहीं। जैसे कुत्ते की पूंछ को थोडे समय के लिए पकडा तो सीधी हो गई और छोडी तो फिर टेढी की टेढी। यह क्षणिक खुशी है। जगत में जीवन की जो भी खुशी है ऐंसी ही खुशी है। थोडी देर के लिए खुशी है। इसको खुशी नहीं मानते। यह आत्मा ही सम्प्रसाद है। इस आत्मा के ऊपर कोई सम्प्रसाद नहीं।

पहले विचार किया 'अस्मात् शरीरात् समुत्थाय अब कहा इस शरीर से

ऊपर उठो। कैसे उठोगे ? जैसे कोई बिस्तर से उठ जाता है, ऐसे उठोगे ? इस शरीर में अहंकार करके बैठा है यह जीव। मां के पेट मे ही आया था तो शरीर को लपेट लिया था अपने ऊपर। शरीर से इतना मिला हुआ है कि इस शरीर से उठने की अकल ही नहीं। किन्तु माया भगवती ने कुछ अकल तो रखी है फिर भी। तुम्हारे को रोज जो निद्रा देतीं है, यह किस लिए है कि शरीर से ऊपर उठो। माया भगवती रोज तुमको शरीर से ऊपर उठाती है। किन्तु होश नहीं रहने दिया। जगे तो फिर जाकर शरीर से चिपक गये। यह तो माया भगवती ने एक ऐसा सूत्र दिया तुमको कि इस शरीर से तुमको जुदा भी कर देती है और मिला भी देती है। यह जों सत्सङ्ग अपने करते है यह इसलिए है कि विवेकी सत्सङ्गी जो है वो ज्ञान से इस शरीर से ऊपर उठे। जो सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा को जानता है वो इस से न्यारा है। गुरु ने कहा बेटा तुम ब्रह्म हो, तो इसका अर्थ निकला कि तुम शरीर से न्यारे हो। तुम शरीर नहीं हो। तो उस स्वरूप का ध्यान करो तो देह अहकार से बाहर चले जाओगे इस शरीर से ऊपर उठ जाओगे।

'अस्मात् शरीरात् समुत्थाय परं ज्योतिरुपसम्पद्य' जो दिव्य ज्योति है एक तो आत्मा की ज्योति है जो दिव्य है और एक सूर्य चन्द्रमा की ज्योति। आत्म ज्योति के मुकाबले में यह सूर्य चन्द्रमा की ज्योति कोई काम की नहीं। तुम्हारी आत्म ज्योति जो है यह पांच भूतों से विलक्षण है। सूर्य चन्द्रमा की जो ज्योति है यह भूतों की ज्योति है। पंच भूतो के अन्तर्गत है। आत्म ज्योति साक्षी है। तुम्हारा शरीर पांचभूतों का मक्खन है। जैसे अपने दूध मे से मक्खन निकालते हैं कि नहीं इसी तरह यह शरीर तुम्हारा पंचभूतों का मक्खन है। पर यह मक्खन भी कब तक अच्छा है जब तक आत्मा इस मे है। आत्मा इस में नहीं है तो यह सड़ जाएगा। वो आत्म ज्योति पंचभूतों का साक्षी पंचभूतों से न्यारा है। ऐसा सब से न्यारा जो आत्मा है मुमुक्षु इस आत्मा को जाने। सो सम्प्रसाद है।

'कथं वा तदधिगम्यः' मुमुक्षु इस सम्प्रसाद को कैसे जाने। 'कथं वा तदधिगम्य' इसका अर्थ है कि इस सम्प्रसाद की प्राप्ति का साधन क्या है ?

एक बात समझो ।

" अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम्
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रह: ।।"

जो मुमुक्षु है, साधक है, मोक्ष की ओर चल रहा है । यहाँ से बाजार भी जाते हो तो pocket money देखनी पडती है । जो धन यहाँ कमाया है वो तो एक पैसा भी काम नहीं आएगा । मोक्ष को ओर जाने के लिए कौन सा धन काम आएगा ? यहाँ की कमाई का एक पैसा भी काम नहीं आएगा । यह बात ठीक है कि इस पैसे से कुछ सत्कर्म कर सकते हो । कुछ पुण्य कमा सकते हो । किन्तु पैसा तो जहाँ का तहाँ ही रहेगा । तुम्हारे साथ जाने वाला नहीं । जैसे किसी वस्तु का सैंस निकालो । वस्तु जहाँ की तहाँ ही रहने दो आज कल तो विज्ञान है, वस्तु का सार खींच लो । यह पुण्य कमाई क्या है ? सार खींच लेना है । सार खींचना है , इसलिए यह धनादि साधन है । किन्तु इस धनादि से ऐसा पुण्य प्राप्त करो कि वह पुण्य तुम्हारा आगे काम करे । इस धन से पाप मत होने दो । अपने अन्दर ऐसे गुणों की सृष्टि करो जो गुण तुमको ऊपर उठावें । आगे गिरावें नहीं । जैसे अपने अनुभव के लिए समझो गंगा जैसी कोई बडी नदी हो । बच्चे तो तैरना जानते नहीं । आज कल वो रबर ट्यूब बनी हुई है । उनको छाती से बांध कर रखते है । यह ट्यूब उनको ऊपर उठा कर रखती है । डूबने नहीं देती । ऊपर उठाए रखती है । दूसरा कहता है हम यह ट्यूब नहीं बांधेगे । हम तो पत्थर बांधेगे । तो वो पत्थर क्या काम करेगा ? वो ऊपर तैरने नहीं देगा । तैरने तो वही देगा जो स्वयं तैरेगा । जो स्वयं डूबेगा वो तुमको भी डुबाएगा । यह तामस कर्म पत्थर की तरह है । या लोटे की तरह है । यह तुमको डुबोएंगे । और जो सात्त्विक कर्म है यह उस ट्यूब की तरह है । यह तुमको उठा कर रखते हैं । डूबने नहीं देते ।

'आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रह:' मुमुक्षु का लक्षण भगवान् साफ करते हैं । मानी माने मान वाला । एक तो मान होता है जिसको कहते है अभिमान । अहंकार । मुमुक्षु अहंकार नहीं करे । मैं इतना बडा हूँ । मेरा इतना धन है । यह अहंकार मुमुक्षु नहीं करे । तेरा कुछ भी नहीं है यहाँ । इस अभिमान

से बाहर निकल आओ । ठीक है, भगवान की कृपा है जो कुछ भी है । दूसरी चीज क्या है ? मान माने माप । यह शरीर पांच फुट लम्बा है । किसी ने पूछा तो बोला छः फुट । यह शरीर का माप है । यह जो छ फुट का माप है यह तुम्हारा है या शरीर का ? यह शरीर तो तुम्हारा पडोसी है । माप है पडोसी का और बता रहे हो । अपना । तुम्हारा पडोसी तुम्हारे पास, पड़ोस में रह कर दूध के कुल्ले कर रहा है । पानी के नहीं । पानी तो गड़बड़ है । इस शरीर को तुम ने अपना मान लिया है । माल है तो पडोसी का और मान रहे हो अपना तो कितना ईमानदार है यह ? ईमानदार का लक्षण क्या है ? जिसका माल है उसीका माने वो ईमानदार । और जो दूसरे के माल को अपना मान ले वो ?

कोई लड़की वाले आए लड़के वाले के यहाँ देखने । थे तो गरीब ही पर घर अच्छा था । बोले यह पडोस का बंगला भी हमारा ही है । किराए पर दिया हुआ है । लड़की वालों ने सोचा कि पार्टी मालदार है । साथ वाला बंगला भी अपना ही है । मालूम तब पडा जब शादी हो गई । तो सोचो लडकी का बाप क्या कहेगा ? इसी तरह यह शरीर के माप को अपना बता रहा है । माप तो है शरीर का और कह रहा है अपना । यह जो झूठ जो बोल रहा है इसका कुछ पाप होगा कि नहीं ? भगवान् कहते हैं पहले मुमुक्षु इस पास से बचे । यह मेरा नहीं । 'अमानित्वं' अमानी बनो । दूसरा है दम्भ । दम्भ एक दोष है । अदम्भित्वं अपने को दूसरे के सामने बडा कर के बताना दम्भ है । जो अपने से महान है उनके समीप रहने से दम्भ नहीं रहता । अपने से किसी बडे के पास जाते हैं या मान लो गुरु के पास जाते हैं तो अहंकार दम्भ नहीं रहता । गुरु के पास अहंकार क्या करना । चलो जैसा है, है ही । जो गुण कर्म और ज्ञान से महान हैं उनके समीप रहने से दम्भ, अहंकार नहीं रहता । 'अहिंसा' साथ मे कहा अहिंसा । कायिक वाचिक और मानसिक हिंसा से बचो । तीन प्रकार की अहिंसा । अपनी काया मे बुरा कर्म नहीं करे, वाणी से बुरा बोले नहीं और मन के अन्दर बुरा संकल्प नहीं होने दे । मन मे दया रखो । तो हिंसा नहीं होगी । दयाशील बनो । दयाशील बनोगे तो हिंसा, यह चित्त का क्रूर भाव है, यह नहीं बनेगा । क्षान्तिरार्जवं । शान्ति कहते हैं जब मन मे कोई विकार न हो । देखो

जब कोई दुःख नहीं तो गधा भी सुखी है । क्या वढ़िया घास खा रहा है । चीं चुं चीं पूं गा रहा है । यह सुख तो गधे जैसा सुख है मनुष्य का सुख जो है वो दुःख भी है, दुःख का कारण भी है फिर भी सुखी है, हृदय को सम्भाल कर चल रहा है । फिर भी समझदारी से चल रहा है । तुम अपने मन को सम्भालो इसको क्षान्ति कहा । साथ मे भगवान कहते है आर्जव ऋजु सरल । चित्त से कोमल बनो । कठोर नहीं । चित्त से कोमल होना पुण्य का फल है । चित्त से कठोर होना यह पाप का फल है । इसलिए चित्त को मक्खन की तरह कोमल बनाओ । ठीक है , मां बच्चे पर गुस्सा भी करती है किन्तु आंखों मे गुस्सा है, मन में प्यार है । मन के अन्दर गुस्सा नही है । इसलिए मुमुक्षु, व्यवहार काल मे कभी गुस्सा भी करना पडता है, तो दयापूर्ण गुस्सा करे । अपने बच्चों पर तो दयापूर्ण गुस्सा करते ही हैं अगर कोई third person भी हो, वो हमारा नहीं भी है, मान लो वो हमारे देश का भी नहीं हैं, हमारी जाति का भी नहीं, पर मनुष्य तो है वो । वो भी तुम्हारे प्यार का अधिकारी है । अपनी जाति वालों से हम मीठी वाणी बोलें और दूसरी जाति वालों से नहीं बोलें तो ? वन्दरों का प्यार है , पशुपति जाओ किसी वन्दर के बच्चे को पकडो, सब वन्दर तुम्हारे आगे पीछे आ जाएंगे । विवेकशील को ऐसा समझना पडेगा। मन के अन्दर ऐसा ऋजु भाव हो । एक दम कोमल भाव चित्त में होना चाहिए ।

'स्थैर्यमात्मविनिग्रह' । ज्ञान दाता जो गुरु है उसकी उपासना करो । उसकी उपासना करने का मतलब है उसकी सेवा करो । उसकी बात सुनो । उस की बात सुनो । उसका आशीर्वाद प्राप्त करो । क्यों ? तुम्हारे जीवन में Guidence भी चाहिए । वो भाग्यशाली हैं जिनको कोई ज्ञान दाता गुरु मिला है । मार्ग दर्शन करने वाला । देखो एक बात समझो, कृष्ण को हम लोग अवतार मानते है । वो कृष्ण अर्जुन के साथ ही रहता है साथ ही घूमता है । साथ ही वैठता है, खाता है, पीता है, सोता है । कुरुक्षेत्र के मैदान मे अर्जुन रोने लगा। भगवान ने देखा कि यह तो first class मूर्ख है । इसको तो ज्ञान ही नहीं है । तो भगवान ने ज्ञान का उपदेश करना शुरु किया । अगर समझते तो कृष्ण के अन्दर सिद्धि की कमी नहीं थी । बडी सिद्धियाँ थी कृष्ण के अन्दर । किन्तु यूं

फूंक मार कर या नाटक चेटक के द्वारा अर्जुन को कुछ किया नहीं। कोई सिद्धि नहीं दिखलाई। अर्जुन को सीधा ज्ञान का उपदेश किया। इसका अर्थ है कि गुरु ज्ञान का उपदेश करेगा तभी ज्ञान होगा। यह ज्ञान दाता गुरु की जो शास्त्र में इतनी महिमा गाई है वो कोई झूठी नहीं है।

गुरुर्ब्रह्मा: गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वर:

गुरु: साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम: ।।

यह प्रशंसा झुठी नहीं की गई। ज्ञान के बिना कौन है तुम्हारा? ज्ञान की बडी कृपा है कि सब तुम्ह प्यार करते है। प्राण अगर तुमको छोड देगा तो कौन प्यार करेगा? भगवान कृष्ण अर्जुन को ज्ञान देने लगे। क्या ज्ञान दिया? तो भगवान इस आत्मा के स्वरूप को समझ.ने। सब से पहले कहते है :-

अविनाशी तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्

विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति

यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जिस से व्याप्त है वो अविनाशी तत्त्व है। वो एक अमर तत्त्व है। इस अव्यय परमात्मा का विनाश कोई कर नहीं सकता। हे अर्जुन तुम इसको अविनाशी समझो। अर्जुन ने कितनी विद्वानों जैसी बाते भी की। भगवान साथ मे क्या कहते है।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे

गतासूनगतासूँश्च नानुशोचन्ति पण्डिता:

तू पण्डितों जैसी बात तों करता है किन्तु पण्डित तू है नहीं। जो अशोच्य है उन का तू शोक करता है। भीष्म पितामह हैं द्रोणाचार्य हैं। बडे है, ठीक है। उन मे मरने वाला कौन है? जो दीखता है वो मरने बाला है या जो नहीं दीखता वो मरने वाला है। दीखता तो शरीर है और शरीर तो मुर्दा है ही। यह मरने वाला नहीं। जिसके बिना मुर्दा मुर्दा नहीं दीखता वो कौंन है? वो आत्मा है। भी मरने वाला नहीं। वो आत्मा तु है इसलिए कहा :-

गतासूनगतासूँश्चनानुशोचन्ति पण्डिता:

जिनके प्राण चले गये हैं, और जिनके प्राण नहीं गहये हें विद्वान इनके लिए शोक नहीं करते। अर्जुन तब प्रार्थना करता है 'कार्पण्यदोषोपहतस्वभाव:,

पृच्छामित्वांधर्मसंमूढचेता: । यच्छ्रेय: स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे, शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्'।। मैं बडा कृपण हो गया हूँ । अर्जुन कहता है हे भगवन् मैं बडी कृपणता से व्याप्त हो गया हूं । हाथ की कृपणता को वडी कृपणता मत समझो । आदमी अपने हाथ को उदारता के लिए एक दिन नहीं उठाएगा, दो दिन नहीं उठाएगा । पर कभी मन में आ जाएगा कि चलो हाथ से कुछ शुभ कर्म कर लें । किन्तु बुद्धि से कुछ नहीं समझने का नाम कृपणता है । संसार को तो रोज समझते है रोंज भूलते है । बुद्धि से उस सत्य को भी तो समझो । अपने शरीर को ही देखो कितने रंग वदल रहा है । अपने को बच्चा समझ कर बैठे । अंगुठा चूसते रहे । फिर अपने को कुमार कुमारी समझने लगे । कुछ पढने लिखने स्कूल कालेज गये । फिर जवान हो गये । तो क्या सीट रीजर्वेशन हो गया । वैठ गये किन्तु जव स्टेशन आ गया तो reservation का क्या होगा । सामान लपेटना पडेगा। सीट छोडनी पडेगी । स्टेशन आ गया है । आगे हिमालय है । गाडी ने जाना नहीं आगे । यह संसार है । देखते २ हम किसी के नहीं, हमारा कोई नहीं । इसलिए मुमुक्षु वडे विवेक से चले ।

यहाँ अर्जुन कर रहा है कि भगवान हम बुद्धि से कुछ नहीं समझ रहे । कृपण हैं । मेरा चित्त धर्म में विमूढ हो गया है । मैं आप से पूछता हूँ । जो आप ने निश्चय किया है वो मेरे लिए कहो । वही ठीक है मेरे लिए । हम आपके चेला हैं 'शिष्यस्तेऽहंशाधिमां त्वां प्रपन्नम्' अभी तक अकडता रहा । क्या है ? किन्तु अव कहता है मेरे को समझाओ । इसलिए इस सत्य के ऊपर कुछ भी नहीं है । ज्ञान को तो पकडना ही पडेगा । यह ज्ञान के साधन है । 'स्थैर्य' माने स्थिरता । ठीक है वात एक दिन समझ में नहीं आई तो दूसरे दिन समझ में आवेगी । घबडावे नहीं । जव समझने के लिए वैठे हैं तो जरूर समझ में आएगा । सुनने वाला कौन है ? जो बोल रहा है वही सुनने वाला है । बाहर के आकार जुदा है इनको जुदा रहने दो ।

इन साधनों को जीवन मे पकडो । 'आत्मैवाहमस्मि' 'ब्रह्मैवाहमस्मि' मुमुक्षु एसी भावना को धीरे २ दृढ करता रहे । आत्मा के अधिगम के, माने बोध क यह उपाय है और साथ मे उपाय क्या है ? परम ज्योति रूप सम्पद्य स्वेन

रूपेणनिष्पद्य एष आत्मेति' इस शरीर के अहंकार से बाहर होकर अपने स्वरूप का बोध प्राप्त करो। जिस स्वरूप का बोध करना है वो स्वरूप क्या है? अभी तक तो माने अज्ञान काल मे तो इस शरीर के आकार को ही अपना मानते रहे। पर शास्त्र या सत्सङ्ग के द्वारा यह ज्ञान हुआ कि यह शरीर का आकार हमारा स्वरूप नहीं। तुम्हारा स्वरूप है आत्मस्वरूप। उस आत्मा का क्या लक्षण करेंगे? यह प्रश्न आ रहा है। कहते हैं यह आत्मा शरीर से न्यारा है। उस आत्मा के स्वरूप का बोध कैसे होगा? आचार्य कहते हैं कि इन सब प्रश्नों का उत्तर मुमुक्षु को देना चाहिए भगवान प्रजापति ने एक कथा का उपदेश किया है। वो कथा यहाँ सुनाएँगे। यह आख्यायिका, आख्यायिका माने कथा 'विद्या-ग्रहणविधि प्रदशनार्थ' क्या है, भगवान प्रजापति ने ब्रह्मविद्या का एक लम्बा चौडा lecture दे डाला। इन्द्र और विरोचन की कथा है। इन्द्र और विरोचन ने कैसे इस ब्रह्म विद्या को गुरु से प्राप्त किया। कल इस बात को और समझाएगे। अब सीधे होकर बैठो।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२८-५-८८

प्रवचन सं०-५०

"ॐ तद्धोभये देवासुरा अनुबुबुधिरेते होचुर्हन्त तमात्मानम-न्विच्छामो यमात्मानमन्विष्य सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामानितीन्द्रो हैव देवानामभि प्रवव्राज विरोचनोऽसुराणां तौ हासंविदानावेव समित्पाणी प्रजापति--सकाशमाजग्मतुः ।।"

(छान्दो. ८-७-२)

विचार आया कि मुमुक्षु इस हृदयाकाश में हृत्पुण्डरीक में प्रवेश करे। और इसमे प्रवेश करके सत् चित् आनन्द स्वरूप जो आत्मदेव है उसका साक्षात्-कार करने का प्रयत्न करे। जो उस महान ब्रह्म मे प्रवेश कर गया उसके लिए कहा कि उसका सद्योमोक्ष हो जाएगा। माने इस शरीर से ही मोक्ष हो जाएगा। उसको दूसरा शरीर लेना नहीं पडेगा। दूसरी बात कही कि यदि कोई संस्कार रह गया तो यह ब्रह्मलोक जाएगा। ब्रह्मलोक की जो गति है उस गति का भी व्याख्यान किया। ब्रह्मलोक कैसे जाएगा ? हम लोगों का जो शरीर है इसमे हिता नाम की जो नाडी है हृत्पिड में। उस सम्बन्ध सौर मंडल से है। यह सौर नाम की जो नाडी है, इसका सूर्य से सम्बन्ध है। सूर्य का तेज इसमे व्याप्त है। वो ऊर्ध्वगामी जो नाडी है वो मूर्धा की ओर जा रही है। दूसरे शब्द में यह सुषुम्ना नाडी है। इस नाडी के द्वारा ब्रह्मलोक चला जाएगा। वो सूर्य मंडल का भेदन करके चला जाएगा। 'क्षिप्येत्मनः मन द्वारा संकल्प करते ही। अपने अनुभव के लिए जैसे आंख की पलक मारने हो, इतनी देर मे यह ब्रह्मलोक पहुंच जाएगा।

बहुत समय नहीं लगेगा। ऊर्ध्वगामी हो जाएगा।

इसके लिए जो आत्मविद्या है मुमुक्षु इस विद्या को कैसे ग्रहण करे ? इस विधि का प्रदर्शन करना होगा। आचार्य से कैसे ग्रहण करे इस विद्या को। 'विद्या ग्रहण सम्प्रदान विधि प्रदर्शनार्थ स्तुत्यर्थ' यह ब्रह्मविद्या कितनी विलक्षण है, कितनी शक्तिशाली है। इसकी स्तुति भी आवश्यक है। जैसे लोक मे समझो कोई छोटा सा भी काम करें तो उसकी प्रशंसा करते है। प्रस्ताव पास करते हैं। तो जो विद्या इस जीव को जन्म मरण के वन्धन से मुक्त कर दे, ऐसी विचित्र जो विद्या होगी, उसकी प्रशंसा भी तो आवश्यक है। कहोगे प्रशंसा से विद्या का क्या है तो प्रशंसा से विद्या का कोई लाभ नहीं किन्तु इसका अभिलाषी जो जिज्ञासु है उसकी विद्या मे प्रवृत्ति तो होगी और यह प्रवृत्ति होनी भी चाहिए। विद्या मे प्रवृत्ति के लिये उस जिज्ञासु के अन्दर श्रद्धा को उत्पन्न करना पड़ता है। जो श्रद्धा से इस विद्या को ग्रहण करेगा उसके अन्दर जाकर यह विद्या अज्ञान को दबाना प्रारम्भ करेगी। जैसे २ अज्ञान दवेगा वैसे २ यह प्रकाश मे आता आएगा। और अपना मोक्ष करने मे समर्थ हो जाएगा। इसके लिए बृहदारण्यक उपनिषद्, यजुर्वेदीय कण्वशाखा का उपनिषद् है उसका नाम ही बृहदारण्यकं, जो पेडों का जंगल नही ज्ञान का विशाल जंगल है। वहाँ एक मंत्र आता है, वो मंत्र कहता है कि तुम यहाँ क्या करके जा रहे हो ? कुछ कमाया और कुछ खाया। भगवान ने कहा जाओ और इस हंडी को भर कर ले आओ। जिस हंडी के अन्दर वडे २ राष्ट्र समा जाते है, चले जाते है। किन्तु यह हंडी भरती नहीं। इसलिए विवेकशील समझदारी से चले। मंत्र है 'यो ह वा अस्मान् लोकाः स्वंलोकमदृष्ट्वा प्रैति स एनमविदितो न भुनक्ति यथावेदोवान मनस्कः यथा वा कृतं कर्म यद्यवार्पिडनेनवित् महत् पुण्य कर्म करोति तद्धान्तते ... .आत्मा इत्येव मवलोकमुपासीत'।

मंत्र साफ बोलता है तेरे को कर के क्या जाना था? जो मुमुक्षु 'अस्मान् लोकः स्वलोकमनुपश्य प्रैति' इस लोंक मे आया तो था किन्तु इस लोक मे यह इन्द्रियों के जो विषय है उन्हीं की छान बीन करता रहा। यह काले पीले रूपों को ही देखते २ इन आंखों को शीशा बना दिया। मेरा असली लोक कौन सा है?

जो दीखता है यह लोक मेरा है या जिसके विना नहीं दीखता, कुछ भी नहीं दीखता जिसके विना, जिसके विना सुनता नहीं कुछ भी, जिसके विना समझता नहीं कुछ भी, वो लोक मेरा है ? अपने लोक की कोई खोज ही नहीं किया। अगर यह आत्मदेव नही होवे तो यह आंख तुम्हारी कौन सा रूप देखेगी ? कान क्या सुन लेगा ? वाणी क्या बोलेगी ? यह बतलाओ क्या यह शरीर खाने से जी रहा है ? अच्छे पकडे पहनने से जी रहा है ? या हम लोग अच्छे वंगले मे रहते है इसलिए जी रहा है ? या हमारे भाई वन्धु बहुत अच्छे हैं इस से जी रहा है ? किसी से नहीं जी रहा। जिससे जो जीए, जीवन ले वही उसका लोक है। यह शरीर तो अन्न भट्ट है। इससे पूछो क्यों जी अन्न भट्ट। लगडाती हुई एकादशी कितने दिनों में आती है उससे पहले दिन ही हम सोच लेते हैं कि by pass कौन सा होगा ? कहती है पेड़ा खा लूंगी। उसने कहा मैं तो साबूदाने की खी पीलूंगी। यह शरीर केवल अन्न मात्र से नहीं जी रहा। यह इस चेतन से जी रहा है। तुम्हारे जीने का लोक माने इस शरीर को लेकर के तुम्हारा लोक कौन सा हुआ ? यह आत्मा ही है। जब तक इसके करंट मे रहेगा, जीएगा। 'असमान् लोका' कोई बड़े से वडा सिद्ध भी कहेगा तो भी मरेगा नहीं जब तक चेतन के करंट मे है। अरे तू इस मनुष्य लोक मे आया किन्तु इसमे आ कर भी तूने उस अन्तरात्मा रूप अपने लोक को देखा ही नहीं और 'स एनमविदितो' चल पडे यहाँ से। मंत्र कहता है इसने कुछ नहीं समझा। 'न भुनक्ति न आत्मानम् पालयति' वो इस आत्मा का न भोग करता है न पालन करता है। इस आत्मा का वो पालन नहीं करता। पालन क्या करना है आत्मा के दर्शन से जो जन्म मरण से जो अपनी रक्षा करनी थी वो नहीं की। उस आत्मा के करंट मे तो यह सब शरीर इन्द्रियाँदि पल रहे है कोई आत्मा को हमने पालना नहीं है उसकी कृपा से तो यह सब पल पल रहे हैं। देह अहंकारी जो है। किन्तु उस आत्मा को समझा ही नहीं। तो जाओ, वार २ जन्मों और बार २ मरो 'न भुनक्ति न पालयति' कौन तुमको बचावे वाला है। 'यथा वेदवानुक्तवा'। मंत्र प्रक्रिया समझाता है, जैसी यह वेद विद्या है, बडी विलक्षण है। सारे संसार को एक तरफ रखो और वेदविद्या को एक ओर रखो। ऐसी श्रेष्ठ विद्या है। जिस विद्या के द्वारा यह संसार क्या है, यह समझ मे आता है। संसार की आत्मा क्या है ? यह समझ में आता है। ऐसी

पवित्र विद्या । जब तक गुरु के मुख से सुनोगे नहीं तो यह विद्या तुमको समझ मे नहीं आएगीं । अगर गुरु मुख से वेद का श्रवण नहीं किया तो मंत्र पढना भी नहीं आएगा । वैदिक मंत्र पढ़ने की भी एक प्रक्रिया है । उच्चारण करने की भी एक प्रक्रिया है । नहीं तो मंत्र स्वर से हीन हो जाएगा 'मंत्रहीनो स्वरतो वर्णतो वायजमान ...' मंत्र स्वर हीन हो जाएगा । वर्ण से हीन हो जाएगा । अगर मिथ्या वासनाओं से मंत्र का प्रयोग करोगे तो 'यजमानमहिनस्ति वाग्वग्रो न तमर्थमाह यथेन्द्र शत्रु '

वृत्रासुर अपने समय का महान शूरवीर था । मामूली नहीं था । वो वृत्रासुर बडा यज्ञ करता है । किसके लिए यज्ञ करता है ? इन्द्र को मारने के लिए इन्द्र ही हमारा शत्रु है । और कोई हमारा शत्रु नहीं । उस इन्द्र को हम मार देंगे । शत्रु शब्द का अर्थ है शातयति । शत्रु । इन्द्र शत्रु यहाँ सभास मे भेद हो गया 'इन्द्रः शत्रु शातयत' इन्द्रस्य शत्रु इन्द्र शत्रु यह नहीं हुआ । षष्टि नहीं हुई। वहुव्रीहि हो गया । इन्द्र बलवान् हो गया । वृत्रासुर के सामने खडा हो गया । स्वरभेद होने से अर्थ भेद हो गया । यज्ञ करता है वृत्रासुर शक्ति मिलती है इन्द्र को । इन्द्र बलवान हो गया । वृत्रासुर मारा गया । अर्थ को समझो । स्वर को समझो । तब बल मिलेगा । इसलिए कहते है गुरुमुख से मंत्र को सुनो, उसके अर्थ को समझो । उसकी विधि को समझो । यह बात निश्चित है, लोक विद्या भी जब तक किसी के मुख से न सुनी जाए तो नहीं आती तो यह जो इतनी ऊंची, श्रेष्ठ अध्यात्म विद्या है यह कैसे आ जाएगी । इसलिए श्रुति कहती है 'यथा वेदोवानुक्तः यथा व कृत कर्म ।' जिसने वेद सुना नहीं उसको वेद विद्या आने वाली नहीं । और तो क्या, आज कल आप लोग तो जानते हैं कि बेटियों को भी कालेज यूनिवर्सिटी से पढाना ही पड़ता है । और यह बेटियाँ है भी बडी होशियार ।' बडी ट्रेन्ड है लेकिन है तो धान के पौधे की तरह बेचारी । यहाँ से उखाड कर वहाँ लगाया तभी फल आएगा । डवल M. A. शादी हो गई तो सास पापड सिकवाएगी । मारवाड़न सास होगी तो यदि पापड़ कहीं जल गया तो कहेगी मम्मी गधेडी है पापड़ सेकना भी नहीं सिखाया । पापड अच्छा सिक गया तो कहेगी बडी अच्छी मां की बेटी है । यह बेटी जो थी इसकी सास जरा दूसरे ढंग की थी । कहा बेटी जहा सा आटा मल दे । बेटी जो आटा मलने लगी तो पानी ज्यादा हो

गया। और आटा डाला तो पानी कम हो गया। फिर पानी डाला तो आटा कम हो गया। सास ने पूछा बेटी क्या कर रही हो ? बोली कुछ नहीं जरा पानी ज्यादा हो गया तो आटा डाला। पानी कम हो गया फिर पानी डाला तो आटा कम हो गया। खैर सासने आटा ठीक कर दिया। फुल्ला सेकने लगी तो तीन २ कोने निकलने लगे। यह क्या है ? मम्मी आज कल फैशन है। जल गया तो मां मैं खालूंगी। फिर जल गया। तीसरा भी जल गया बोली मां मैं खालूंगी। सास बोली सारे तु ही खा लेगी तो मैं क्या खाऊंगी ?

यूं फुल्का सेकना या आटा मलना कोई बडी बात नही किन्तु इसके लिए भी ट्रेन्ड होना पडता है। एक सेठ था बम्बे का ड्रायवर को टाईम दिया एक बजें का। ड्रायवर आया नहीं। सेठ गुस्से मे इधर उधर घूमता है। सवा बज गया १५ मिनट ऊपर हो गये। सेठ बाहर निकलता है। ड्रायवर नहीं दीखता गाडी मे बैठ जाता है पर चलाने की हिम्मत नहीं। बताओ उसके हाथ किसने बाधे है ? अज्ञान ने। उसने गाडी चलना सीखा ही नहीं। जिसने जो कर्म कभी किया ही नहीं वो यदि उस काम को करने लगेगा तो वह सफल नहीं होगा। उसमे मृत्यु तक भी हो सकती है। इसी प्रकार जिसने इस आत्मा को कभी समझा ही नहीं, कभी सुना ही नहीं। केवल शरीर को ही देखते रहे। इस शरीर को तो गधा भी देखता है, पशु पक्षी भी इस शरीर को समझते है। हम भी इस शरीर को ही देखते रहे। हम रोटी खाते हे वो घास भूसा खाते हैं, फर्क क्या पडा ? बच्चे की प्यार वो भी करता है हम भी करते है। क्या फर्क पड गया ? पशु मे और मनुष्य मे फर्क तो तब मालूम पडेगा जब तुम अपनी आत्मा की ओर मन दो। सोचो कि हम कौन है ? इस शरीर को तो पशु भी देखते है। अपनी योनि के अनुसार भोग लेकर वो जी रहे है। हम भी अपनी योनि के अनुसार भोग लेकर जा रहे है। आंख बन्द कर के वह गया आंख बन्द करके हम भी चले जाएंगे। फर्क क्या पडा? कमाया, कुछ खाया पीया, कुछ पुण्य कर्म भी किया किन्तु उसका result क्या हुआ ? जैसे दस हजार मे एक गाय ले आए उसके गले मे रेशमी रस्सा डाला। रेशमी रस्से से बंधी है। बंधी तो खूटे से ही है। इसी तरह महान पुण्य करके अगर तुम स्वर्ग भी चले गये तो क्या हुआ ? इस गाय की तरह ही तो हो।

कहोगे महाराज रस्सा तो दीखता नहीं । यह वासना जो स्वर्ग की है यह रस्सा नहीं तो और क्या है । स्वर्ग की वासना से तुम स्वर्ग को चले गये । वहाँ पुण्य भोग किया । कुछ काल तक वहाँ का सुख भोखा । जब कर्म का फल समाप्त हो गया तो उल्टी हंडी की तरह लौट कर आना पडेगा । खाली हंडी फिर नीचे लौट आएगी ।

"ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं, क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।" मंत्र तुमको बहकाता नहीं । झूठ मूठ बोल कर यह नहीं कहता कि तुमको ऐसा करना है । 'अन्ततः अस्य क्षीयते' समझता तुमको जरूर है, चाहे इस जन्म मे समझो चाहे अगले जन्म में समझो । बिना समझे कुछ होगा नहीं ।

बडे से बडे पुण्य भी होंगे तो उनका भी अन्त जरूर आएगा । उनकी इतिश्री जरूर होगी । क्योंकि जिसका शुरु का काल है उनका अन्त का काल भी निश्चित है । शरीर से पूछो कि मेरे प्यारे मित्र तुम हमको कहां मिले थे । अपना Address तो बताओ । यह क्या बताएगा । यह बतलाएगा कि फलां पिता से मिले थे । फलां मम्मी से मिले थे और तब से तुमको उठाकर चल रहे है गध की तरह । उसकी एवज मे तुम खाना दाना हमको देते हो, बाकी जो कमाया धमाया है वो यहीं रह जाएगा । इसमें तेरा क्या है ! पुण्य कर्म किया है तो उसका भोग अगले स्टेशन पर ले लेना । मेरे को तुमने भूखा टट्टू समझा । अपने को तुमने समझा ही नहीं । मेरे को भी तुमने नहीं समझा । रोज रोटी खाते है, तो भूखा समझते है तभी तो खाते है । पेट भरा हो तो जरा खा कर दिखाओ मेरेको ? जैसे इस शरीर को हमने टट्टू समझा । टट्टू तो जानते हो न गधे की गुरुभाई है । उसको घास भूसा खिलाते हो इसको पूरी परौंठा खिलाते हैं । अहं २ तो करते हो किन्तु यह अहं है कौन ? इसको समझो । बुद्धिमान इस अहमास्पद आत्मा से मिले । 'आत्मा इत्येव स्वलोकमुपास्य' ।

'क्षीयतैव' अन्ततः इस महान पुण्यों का क्षय होगा । तेरे पास कुछ नहीं रहेगा । मंत्र कहता है तेरे जाने का लोक कौन सा है ? आत्मा । नाम रूप का मैदान है । नाम माने शब्द रूप माने आकार । आकृति । इस नाम रूप मैदान मे हम लोग, जैसे मैंदान मे घूमने फिरने जाते है । इस विषयों के जंगल मे ही घूमते

रहते है । बच्चे बने बच्चे नहीं रहे । कुमार बने कुमार नहीं रहे । जवान बने जवान नही रहे । बुढे बने बुढे नहीं रहे । भगवान गीता मे कहते है :-

"देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ।।"

विवेकशील जो मुमुक्षु है वो समझे कि जब बच्चे से कुमार हुए तो डरे नहीं । कुमार से जवान हुए तो नहीं डरे । जवान से बुढ्ढे हो गये तो ? कुमार से जब जवान हुए थे तो कोई शोक प्रस्ताव पास किया था ? जवानी जब ढलने लगी तो थोड़ा २ मन से होने लगता है कि हाय क्या होगा ? कुछ शेरदिल माऊंट एवरेष्ट की चोटी पर चढ गये । इधर उधर घूमे भी । गवर्नमैंट ने टी. वी. पर दिखाया भी । सब देखने वालों मे उनकी धाक मानी कि हाँ वीर है । किन्तु जब नीचे उतरे तब कितनों को दीखे ? इसी तरह यह जवानी क्या है ? यह माऊंट एवरेष्ट है । अब तुम माऊंट एवरेष्ट पर चढ गये इसका मतलब यह निकला कि अब तुम सबको दीखते हो । किन्तु नीचे जब उतरा तब ? नीचे उतरना क्या ? जब बुढा बुढी हुए तब । धर्मनिष्ठ हो छोकरा छोकरी तो देखते हैं नहीं तो कहते है, भगवान् जल्दी उठाले । यह संसार है । यह दीखने मे कुछ है और वास्तव मे कुछ और ही है । इसलिए बुद्धिमान मनुष्य को संत कहता है कि केवल कुछ पुण्य कर्मो के भरोसे अगर तुम अमरत्व पाना चाहो तो यह होने वाला नहीं है । पुण्य कर्मो से तुम स्वर्ग जा सकते हो अमर नहीं हो सकते ।

'आत्मा इत्येव स्तल्लोकमुपासीत' इसलिए विवेकशील बुद्धिमान निश्चय करे कि मेरा कौन सा लोक है । हम किस लोक मे जी रहे हैं ? कहते है आत्मा मे आत्मा के बिना यह शरीर जिएगा नहीं । इस चेतन आत्मा के बिना तुमको कौन जीवित रख सकेगा ? सारे world मे घूम आओ अभी तक कोई इन्जैक्शन बना नहीं । बडे २ सिद्ध भी इसको अमर नहीं कर सकते । जिसको जानने मे लोग सोचते है कि हमे क्या मिलेगा ? उसी की कृपा से तुम जीवित हो । क्या नहीं मिलेगा यह तो कहो किन्तु क्या मिलेगा ऐसा मत कहो इस आत्मा का अनुग्रह यदि तुम्हारे ऊपर है, तब तुमको सब कुछ मिलेगा । क्या नहीं मिलेगा ? इस आत्मा के अनुग्रह से यदि तुम वंचित हो गये तो कुछ नहीं मिलेगा । कहोगे

महाराज यह आत्मा अपने अनुग्रह को हमसे कब छीन लेगा तो सुनो आत्मा अपने अनुग्रह को कब छीन लेगा। जैसे एक आदमी बेहोश हो गया। देखो शरीर तो वहीं पडा है, इन्द्रियाँ भी वहीं है किन्तु अब न यह देखता है न सुनता है। इसको कहते है आत्मानुग्रह से हीन हो गया है। आत्मा की कृपा तब समझो जब आंख हमारी ठीक से देखे, कान हमारा ठीक से सुनें, वाणी हमारी ठीक बोलें, मन हमारा ठीक समझे। तो समझो कि आत्मा का अनुग्रह है हमारे ऊपर जो ठीक light दें रहा है। यदि उसने अपनी light खींच लिया। यह हमारे सामने माईक पडा है। हम धीरे से बोलते है तो यह माईक electric करंट से यह जोर से कर के सुनता है।

इसी प्रकार यह शरीररूपी बंगला है। इसमे आत्मा के करंट से यह सारे यंत्र चल रहे हैं। आंख देख रही है, कान सुन रहा है, वाणी बोलती है, यह यंत्र टीक से काम कर रहे है। जिसके अनुग्रह से यह सब हो रहा है वो है आत्मा इस आत्मा मे विवेकशील मुमुक्षु मन को लगावे। वो आत्मा ही तेरे जाने का लोक है। मंत्र कहता है तेरे जाने का लोक कौन सा है है? कहते है आत्मा ही है। 'आत्मा इत्येवमुपासीत' कहोगे कैसे जावें ? तो रोज निद्रा मे जाते हो तो जब सो जाते हो तों शरीर को छोड़ कर अन्दर गये कि नहीं। इस स्थूल शरीर को छोडा, सूक्ष्म शरीर को भी छोडा। कितने कोश दूर चले गये? चार कोश से पार हो गये। अन्नमय कोश से पार हो गये, प्राणमय कोश से पार हो गये, मनोमय कोश से पार हो गने और विज्ञान मय कोश से पार चले गये।

Sound Sleep मे इस शरीर से चार कोश पार चले गये। पांचवे कोश मे जा कर बैठ गये। एक बार नारद विष्णु लोक पहुंच गये। देखा तो सब flats खाली पडे है। स्वामी जी गप्प लगा रहे है, गप्प नहीं बात समझा रहे है। नारद बोले भगवान यह स्वर्ग के दिव्य flats खाली कैसे पडे है? भगवान कहने लगे आज कल मृत्यु लोंक मे ऐसे दिव्य भोग है, ऐसे दिव्य यंत्रो का अविष्कार हो चुका है और उनमे लोग ऐसे चिपक गये है कि कोई इधर आना ही नहीं चाहता। नारद बोले भगवन क्या कह रहे हैं? मुझ अज्ञा दो तो मैं जाऊँ और जाकर ले आऊँ। भगवान बोलें जाओ। नारद गये। एक बडा विशाल

मन्दिर है । भक्तों की टोली कीर्तन कर रही है । मेरी तरह lecture दिया और कहा चलो आपको भगवान विष्णु बुला रहे हैं वैकुण्ठ में । मेरे साथ चलो । कुछ तो वहीं कहने लगे क्या हम तुम्हारी तरह बाबा जी है ? आगे नहीं पीछे नहीं चल पडे । हमारे तो बेटा बेटीं है । उनको छोड कर कैसे चल पडें । कुछ ने कहा चलो। फिर १०००, ५०० भक्त तैयार हो गये । चल पडी पार्टी । भगवान ने देखा, भगवती से बोले यह भक्तों का टोला आ रहा है जरा जाकर देखो यह ठीक वैकुण्ठ आ रहे है कि लोभ मे ही घूम रहे हैं ? लक्ष्मी ने जाकर रास्ते मे ताम्बे की वर्षा कर दी । तांबा तो आज कल बडें काम की चीज है । कुछ लोग इकट्टा करने लगे। नारद ने कहा अरे यह क्या कर रहे हो । आगे चलो भगवन आप तो फक्कड है । आपको क्या पता तांबा कितने काम आता है ? कुछ लो तो वहीं तांबा इकट्ठा करते रहे और कुछ आगे बढे । आगे देखा तो चांदी की वर्षा होने लगी । लोग फिर रुक गये । इकट्ठा करने लगे । नारद ने फिर एक lecture दिया । उत्तर तो वही था । आप तो बाबा जी है, आपको क्या पता चांदी कितनी महंगीं चीज है । नारद चुप । कुछ वहीं रुक गये कुछ पचीस पचास आगे बढे । आगे सोने की वर्षा कर दिया । लोग तो टूट पडे । बस बाबा अब तो आगे नहीं जाएंगे । नारद ने बहुत समझाया कि भगवान की माया है इसके चक्कर मे नहीं पडो । थोडे से लोग आगे चले तो हीरों की वर्षा होने लगी । अब तो कहते है नारद जी आपको नमस्कार है । हींरा तो बहुत कीमती है हमको लेने दों । अब दो चार ही रह गये ।

'मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिन्माम् वेत्ति तत्त्वतः' तांबे की वर्षा है, कुछ लोग तो स्थूल शरीर मे ही आसक्त है । कुछ आगे बढे तो प्राणमय कोश मे रह गये । कुछ और आगे बढे तो मनोमय कोश मे आसक्त होकर रह रहे । नावल आदि उपन्यास आदि क्या है मन की उडान ही है । यही सोने की वर्षा है । जो कुछ और आग बढे वो बुद्धि मे आसक्त होकर रह गये । विज्ञानमय कोश मे । जों और आगे बढें वो आनन्दमय कोश मे रह गये । वैकुण्ठ तो कोई विरला ही पहूंचता है । वैकुण्ठ क्या है ? जहां कोई कुण्ठा नहीं रही । विगत, कुण्ठा वैकुण्ठः। अविद्या नहीं रही ऐसा सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है । बुद्धिमान मनुष्य जो जो भी इच्छा करेगा वो प्राप्त करेगा । इसलिए बुद्धिमान मुमुक्षु अपनी आत्मा

मे ही अपने मन को लगाव । केवल शरीर मे ही नहीं घूमे । जैसे कोई कीडो शरीर पर चढ गई । परिक्रमा करती रही और उतर गई बाद मे । इसी तरह हम भी यदि केवल शरीर की ही परिक्रमा करते रह गये तो कुछ नहीं होगा ।

इसलिए धीरे २ अपने मन को आत्मा मे लगाओ ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२९-५-८८

प्रवचन सं० ५१

"ॐ य आत्मापहतपाप्मा · · · · · · प्रजापतिरुवाच ।।"

(छान्दो. ८-७-१)

बडी सुन्दर कथा है । भगवान प्रजापति सोचते है कि हमारे ये बेटे बेटियाँ बहुत बढ गये है । बडे हो गये है । मनुष्य है, देवता है असुर है, यह सब भगवान के बेटे बेटियाँ है । तो भगवान ने निश्चय किया कि माता पिता का यह कर्त्तव्य तो ठीक है कि अपने बच्चों के खाने पीने का प्रवन्ध कर दें ऐश आराम की सामग्री इकट्ठी कर दिया । बढिया से बढिया भोग और सुन्दर रहने के लिए

flats भी बनवा दिए । तो यह माता पिता ने इन बच्चों को क्या दिया ? ये भोगों में जिएगे और आंख बन्द कर के यहाँ से चले जाएँगे । इन्हों ने बच्चों को ऐसा कोई ज्ञान नहीं दिया जिस से ये अपना आत्मा का उद्धार कर के यहाँ से जावें। किन्तु भगवान प्रजापति ने सोचा कि हमारे बच्चों को आत्मविद्या आनी चाहिए । आत्मविद्या के परे कोई विद्या नहीं । जिस विद्या के द्वारा आत्मा का मोक्ष हो । मुण्डकोपनिषद् मे कहा 'स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठां' । ॐ ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता, वो जों ब्रह्मा है, देवताओं मे सब से प्रथम है । दूसरे जो देवता है वो पुण्यों के बल से देवता बने हैं किन्तु ब्रह्मा पुण्यों के बल से नहीं बने । वो तो ईश्वर कोटि मे है विश्वस्य कर्ता भुवनस्य वो इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को खडा करने वाला है । इस ब्रह्मा से पहले ईश्वर की स्थिति, प्रसंग से थोडा इस विचार को देखते है । देखो यह नेपाल है । यह तो हिमालय है यहाँ तो रोज बादल आते है । और पानी का छिड़काव कर के चले जाते है जिससे आपको यहाँ गर्मी परेशान नहीं करे । उधर दिल्ली की ओर देखो, सूर्य अपनी विशाल रश्मियों को लेकर आकाश को तपा रहा है । इस समय उधर कोई बादल नहीं है आकाश सूर्य के तेज से तप रहा है । सूर्य अपने तेज से जहाँ से भी पानी मिलता है खींच रहा है । अपनी रश्मियों से पानी खींच रहा है । कहीं रस नहीं रहा । इस समय आकाश के अन्दर कोई रंग रूप दिखाई नहीं पडता । इस समय यह आकाश निराकार है । और निर्गुण है । किन्तु अभी कुछ दिनों से ही मानसून हवाएँ चलने वाली है । वो मानसून जिस समय चलेगी सूर्य की किरणों के अन्दर जो जल है, उस जल का मंथन करेंगी । मंथन करने से वो बादल बन जाएगा । जो पानी है वो बादल के रूप मे आकाश में प्रकट हो जाएगा । जैसे ही वो बादल आकाश मे आना शुरु होंगे उनके अन्दर ही बिजली का करंट fit किया हुआ है । जिससे यह बादल कहीं बर्फ बन कर गिर गया तो हाल क्या होगा ? इस बिजली के करंट से पानी ओल बनकर नीचे नहीं गिरे । इस समय समूचा आकाश देखने मे बड़ा सुन्दर लगेगा । बादलों से घिरा हुआ, बिजली चमक रही है बादल चारों ओर दौड़ रहे है । अब आकाश मे आकार भी दीखने लगा । इसी प्रकार जिसको ब्रह्म कहते है वो अपने स्वरूप मे निर्गुण है निराकार है । किन्तु यह जो जीव है, जो महाप्रलय मे चले गये थे । इस समय उनके कर्म जब मानसून की

तरह प्रकट हो गये । माया का बादल सामने आने से जो निराकार था निर्गुण था वह सगुण हो गया । क्योकि माया गुणमयी है ।

मंत्र परमात्मा के स्वरूप का व्याख्यान करता है दिव्योह्यमूर्तः पुरुषः । मंत्र परमात्मा से बात करता है कि आप तो दिव्य है और अमूर्त पुरुष हैं । जैसे कोई आपस मे बात करता है ऐसे ही यह मंत्र परमात्मा से कह रहा है कि आप तो दिव्य है, अमूर्त हैं, आपका कोई स्वरूप पकड़ मे आता नहीं । आपको पवित्र होने के लिए किसी अन्य की जरूरत नहीं । अपने शरीर को ही समझो आत्मा के करंट से यह शरीर कितना पवित्र है । कितना दिव्य लग रहा है । कितना सुन्दर लग रहा है, किन्तु यह जो दिव्यता है, यह जो पवित्रता है, यह किसकी है ? आत्मा की । मंत्र कहता है कि आप अमूर्त हो । ऐसी प्रशंसा कर रहा है । उस समय यह परमात्मा सगुण निराकार रूप हो गया । यह जो मन्दिर मे शिवलिंग है यह उस सगुण निराकार परमात्मा का प्रतीक है । मूर्ति कैसी है ? गोल मटोल बीज रूप परमात्मा । जितने भी बीत है वो गोलमोल ही होते है । खाने की जितनी भी चीजे है जैसे सेव है, मौसम्मी है, संतरा है, ज्वार, बाजरा, मक्का, धान जो भी है गोल मोल है । गोलमोल बीज में दो चीजे है । छिलका और अन्दर का तत्त्व । अब छिलके को तुम खेत में लगाओ और अन्दर के तत्त्व को खा जाओ तो कुछ होगा ? या अन्दर का तत्त्व खेत मे लगा दो और छिलका उतार कर खा जाओ तो भी कुछ नहीं होगा । दोनों को साथ मे जाना पडेगा, तब होगा। इसी तरह निराकार जो परमात्मा है माया के आने से जगत का बीज बन गया । इसलिए मन्दिर मे भी जो शिवजी का प्रतीक है वो गोल है । बीज रूप सगुण निराकार तत्त्व है । किन्तु जो दूसरे सम्प्रदाय है, अज्ञान का पहाड उनके अन्दर बैठा है । उनके अन्दर यह विचार कि स्त्री को शिवजी की पूजा नहीं करनी चाहिए । क्यों ? यह स्त्री पुरुप का चिह्न है । ऐसी गन्दी भावना उनके अन्दर आगई । जो वैदिक रहस्य को जानते नहीं उनके अन्दर ऐसी मनमानी भावना है । यह कल्पना ही है । 'विद्याकामाः शिवं यजन्तः' शिव सगुण निराकार है जो मुमुक्षु ब्रह्मविद्या को इच्छुक हो वो शिवजी का पूजन करे ।

गुणमयी माया के आने से ब्रह्म सगुण तो हो गया किन्तु आकार कुछ

नहीं था ।जब आकार कुछ है नहीं तो यह इस बात का सूचक है कि यह निराकार है । अब शिवजी को भोग लगाना हो तो थाली किधर रखोगे ? भोग लगाने के लिए थाली उत्तर दक्षिण, पूर्व अथवा पश्चिम जिधर से चाहो उधर ही थाली रख दो । यह जो शिवजी का रूप है यह ईश्वर है । मायापति है । श्वेताश्वेत्तर उपनिषद् मे कहा :-

मायांतु प्रकृतिं विद्यात् मायिनं तु महेश्वरम्

प्रकृति जो है यह माया है और मायापति शिव है । महेश्र है । 'तस्यावयवभूतै-स्तु व्याप्तं सचराचरं ।' यह ईश्वर है मायापति यह इच्छा करेगा, एकोऽहं वहुस्याम प्रजाय' मैं अब वहुत हो जाऊं । मायारूपी मेघ जब आया तो आकाश जैसे आकारमय दीखने लगा, ऐसे ही यह ईश्वर जो है, माया के आने से सगुण निराकार बन गया । इसने इच्छा की 'वहुस्याम' वहुत हो जाऊँ । वहुस्याम होने के लिए कुछ सामग्री चाहिए तो इन पचभूतों की सृष्टि की । पृथ्वी, जल तेज, वायु, आकाश । 'तस्माद् वा एतस्मात् आत्मनःसकाशात् आकाशः सम्भूतः' 'आकाशाद् वायु' वायोरग्निरग्नेरापोपृथ्वीऽद्भ्यः स वा एष पुरुषः अन्न रसमयः ।'

इसको कहा सूक्ष्म भूत वीज । पांच भूतों की सृष्टि किया । बीज रूप । पांच चीजों के बीज समझ लो । जल का वीज, तेज का वीज, वायु का वीज, आकाश का वीज, पृथ्वी का वीज । वस इसके बाद ईश्वर चुप हो गया । आगे वीज भूतों का मन्थन करने से विशुद्ध सत्त्वगुण प्रकट हुआ । किसने भला ? पांच भूतों के मन्थन करने से, सूक्ष्म भूतों का, जैसे दही का मन्थन करने से मक्खन निकलता है न, ऐसा इन भूतों का मन्थन किया तो पांचोभूतों के विशुद्ध सत्वगुण से मन बुद्धि की सृष्टि हुई । जुदे २ पांच भूतों के सत्त्वगुण से पांच ज्ञानेन्द्रियों की सृष्टि हुई । जुदे २ पांच भूतों के रजोगुण से पांच कर्मेन्द्रियों की सृष्टि । पांच भूतों के मिले हुए सत्त्वगुण से मन बुद्धि की सृष्टि और पांच भूतों के जुदे २ रजोगुण से कर्मेन्द्रियाँ । पांच भूतों के मिले हुए रजोगुण से प्राण की सृष्टि कितनी सृष्टि हो गई ? पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, पंचप्राण, मन और बुद्धि । सूक्ष्म शरीर । समष्टि सूक्ष्म की आत्मा हिरण्यगर्भ । व्यष्टि सूक्ष्म शरीर की आत्मा जो बना वो

जीव । तो मोक्ष इस जीव का होना है, इसको लौटना है एक से समष्टि भाव मे । ज्ञान ठीक है । जो कट कर अपने को जुदा मान लेता है, उसका ज्ञान बिगड़ा है जो अपने को सब से अलग करके बैठा है । सब को लात मारता है बस मैं और मेरा । वो दुःखी रहता है । जिसने एक बुद्धि, एक मन, एक सूक्ष्म शरीर को पकड लिया वो जीव । इसके अन्दर शोक है, चिन्ता है, भय है । यह जीव है । यह बन्धन मे आ गया । इसको अज्ञान ने घेर लिया है ।

जो सम्पूर्ण भूतो की आत्मा वो हिरण्यगर्भ है यह है ब्रह्मभाव । पहले जो शिव था, सूक्ष्म शरीरों की आत्मा बनने मे अब ब्रह्मा बन गया । यह ब्रह्मा अब प्रजापति बना । यह प्रजापति इन भूतों को फिर से मिला कर पंचीकरण करेगा । पंचीकरण से फिर यह स्थूल ब्रह्माण्ड की सृष्टि करेगा । स्थूल ब्रह्माण्ड की जब सृष्टि की चतुर्दश भुवनों की सृष्टि । समष्टि स्थूल ब्रह्माण्ढ की आत्मा ब्रह्मा अब विष्णु हो गया । विराट हो गया । समष्टि स्थूल ब्रह्माण्ड की आत्मा विराट । पहले क्या था । निर्गुण निराकार । शिव बना तो सगुण निराकार । और ब्रह्मा बना तो, ब्रह्मा की मूर्तिपूजा नहीं । ब्रह्मा तुम्हारी बुद्धि का अधिष्ठात्री देवता है । इसलिए केवल यज्ञादि कर्म मे ब्रह्मा को महत्त्व दिया गया है । क्यों ? बुद्धि के बिना यज्ञादि कर्म होगा नहीं । इसलिए ब्रह्मा की मूर्ति पूजा का विधान नहीं । केवल पुष्करराज मे ब्रह्माका एक मन्दिर है । आगे स्थूल ब्रह्माण्ड मे ब्रह्मा ही विष्णु हो गया । यह सगुण साकार हो गया । सगुण साकार का भक्त विष्णु को नमस्कार करेगा । सगुण निराकार का भक्त शिव को नमस्कार करेगा । वैसे प्रतिष्ठा ब्रह्मा की भी बडी है किन्तु मूर्ति रूप से ब्रह्मा की कहीं पूजा नहीं । जो निर्गुण निराकार की ओर चलता है, इसका यह अर्थ नहीं कि यह ब्रह्मा को नहीं मानता या यह शिव को नहीं मानता, यह कुछ नहीं, वो सब को मानता है । ब्रह्म विद्या के द्वारा आत्मा की ओर चलता है । क्यों ? अगर वो शिव बना तो माया उपाधि के कारण ही बना । ब्रह्मा बना तो सूक्ष्म शरीरोपाधि से बना । विराट, विष्णु बना तो स्थूल ब्रह्माण्ड उपाधि से बना । इसका मतलब स्पष्ट है कि यह भेद उपाधि मे ही है तत्त्व में भेद है नहीं ।

अब इधर स्थूल ब्रह्माण्ड की ओर से चलो तो तुमने विराट विष्णु की

स्तुति किया 'सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्ः' यह मंत्र पुरुष सूक्त का मंत्र है। मंत्र विराट पुरुष की स्तुति करता है कि हे भगवन आप सहस्रशीर्षाः है। अनन्त सिर आपके है। जैसे बडे मैदान की कल्पना करो। लाखों आदमी वहाँ इकट्ठे हैं। ऐसा सोचो लाखों खोपडियाँ वहाँ घूम रही है। खोपडियाँ तो अलग २ है किन्तु अन्दर जो करंट है वो तो एक ही है। यह करंट है विराट अब उस विराट विष्णु की उपासना करने वाला झगड़ा किस से करेगा ? किससे द्वेष करेगा ? जब सब में उसका भगवान बैठा है। पहले तो चेतन रुप मे दीखने वाले शरीरों के अन्दर जो बैठा है उसका वर्णन किया। अब सम्पूर्ण भूमि को आवृत्त करके दश अंगुल की दूरी पर आप जाकर बैठ गया। 'त्यतिष्ठत्दशागुलं' मंत्र की व्याख्या करने वाले कुछ इस प्रकार भी करते हैं भगवान दशों दिशाओं से ऊपर है। तो नीचे कौन है ? और दशों दिशाओं से ऊपर भगवान को देखने उस का बाप गया था ? कि वहाँ उसका डेरा लगा है। तो जब तक वेद को गुरु परम्परा से गुरुमुख से नहीं सुनेगा तब तक अर्थ स्पष्ट होगा नहीं। श्रुति इस मंत्र की व्याख्या करती है। दश अंगुल की दूरी पर बैठा है, इसका विधान ध्यान की दृष्टि से किया। हृदय को श्रुति दश अंगुल दूरी पर बताती है। नाभि से हृदय दस अंगुल की दूरी पर है। इधर कंठकूप से नीचे दस अंगुल पर हृदय है। कंठ कूप से दस अंगुल पर आज्ञाचक्र। कंटकूप विशुद्ध चक्र यहाँ से दस अंगुल पर आज्ञाचक्र भृकुटी के मध्य मे। आज्ञाचक्र से दस अंगुल की दूरी पर सहस्रार। ऐसा उस विष्णु का ध्यान करो। अपने शरीर मे यह ध्यान के स्थान है। इस स्थानों पर विष्णु का ध्यान करो। यह पवित्र स्थान है। एक बात याद रखने की है, इस भूमि पर जहाँ २ ऋषियों ने सात्विकता पाई, पवित्रता विशेष पाई, उस भूमि को तीर्थ कहा। सब भूमि को तीर्थ नहीं कहा। भूमि के अमुक भाग को ही तीर्थ जैसे हरिद्वार, काशी, बद्रीनाथ, प्रयाग है।

'तरति अनेन तीर्थं' जिसका आश्रय लेकर, जिसको पकड कर जीव तर जाए इस संसार से, उसकी तीर्थ कहा। यह तो भूमि के तीर्थ हुए, किन्तु तुम्हारे इस शरीर मे जो दस अंगुल की दूरी पर ध्यान के स्थान है यह तुम्हारे शरीर के तीर्थ है। हृदय मे ध्यान करो, आज्ञा चक्र में ध्यान करो। इनको पकड कर जो

मुमुक्षु ध्यान करेगा वो तत्काल शान्ति को पायेगा । उसका ज्ञान राग, द्वेष, घृणा से रहित होगा । उसका ज्ञान सुन्दर होगा, निर्मल होगा । इस प्रकार यह तीर्थ है । 'त्यतिष्ठद् दशगुल' कहा । अब ध्यान दो । विष्णु को देख कर बाद में ब्रह्म को देखो, बाद में शिव को देखो । ब्रह्मा कहाँ पड गया ? ब्रह्मा पड़ गये बीच मे । बीच में पड़ गये इससिए लोगों ने विष्णु को लिटा दिया । विष्णु की नाभि से ब्रह्मा की उत्पत्ति बता दी । ब्रह्मा की सृष्टि ।

शिव की स्तुति है 'दिव्योह्यमूर्त: पुरुष:' आप दिव्य हो अमूर्त हो ।

दिव्यो ह्यमूर्त: पुरुप: सबाह्याभ्यन्तरो ह्यज: ।
अप्राणो ह्यमना: शुभ्रो ह्यक्षरात् परत: पर:।।

'स बाह्याम्यन्तरो ह्यज:' अज कहा । आप मे जन्म नहीं साथ मे कहा बाहर भीतर से । यह जीव दृष्टि है । जीव के लिए कुछ बाहर है कुछ भीतर है किन्तु भगवान के लिए बाहर क्या और भीतर क्या ? आकाश के लिए बाहर भीतर क्या ? आकाश सब जगह परिपूर्ण है । ऐसे ही वो परमात्मा सब जगह परिपूर्ण है । मुमुक्षु ऐसा उसके स्वरूप को समझे । 'अप्राणो ह्यमना: शुभ्रो ह्यक्षरात परत: पर:' वो शिव जो है वो क्या है ? 'अप्राणो ह्यमना' प्राण का साक्षी प्राण से न्यारा । मन का साक्षी मन से न्या । मन को जिस ने पकडा वो जीव हुआ । तो जीव कौन ? जिसने मन को पकडा । यह जीव बन्धन मे । अब इससे छूटने के लिए मन से जो परे है उसका ध्यान करो । तो यह मन उसको छोड़ देगा । 'शुभ्रो ह्यक्षरात् परत: पर:' अक्षर से भी वो परे है । यहाँ अक्षर शब्द का अर्थ है यह माया जो है, यह जीव को जल्दी नष्ट होते हुए दीखती नहीं इसलिए श्रुति यहां इस माया को इस अविद्या को अक्षर कह रही है ।

गीता के पन्द्रहवें अध्याय में कहा :-

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षर: सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ।।

दो पुरुप है इस लोक में । एक क्षर और एक अक्षर । क्षर तो प्रतिक्षण परिवर्तित होता रहता है । प्रतिक्षण परिवर्तन हो रहा है इन भूतों का और हम तो अपने शरीर में ही देखें । Shaving करो और देखो दो चार घण्टे बाद ही हाथ फेरो

अपने चेहरे पर परिवर्तन हुआ कि नहीं ? तुम जो भोजन खा रहे हो और यह जो मशीन है पेट, रस वन रहा है, रक्त बन रहा है, मांस बन रहा है, चर्वी वन रही है, मज्जा बन रहा है, हड्डी बनं रही है और शुक्र वन रहा है। तुम्हारे शरीर को रोम भी चाहिए तो यह केस वन रहे है । Scientist हैं, उनको बोलो तो factory खोल केस बनाने की ? क्या तुम्हारी factory चल रही है, केस वन रहे है। उनको बोलो ऐसा chemical तैयार करो कि काले को सफेद कर दे। तो सफेद को काला तो करते है किन्तु काले को सफेद करने का कोई मसाला नहीं उनकी factory मे। देखो काला सफैद भी हो रहा है। यह विचित्र रचना है परमात्मा की। इसलिए मुमुक्षु इस परमात्मा का चिन्तन करे ऐसी वो तुम्हारी अन्तरात्मा है। उसका ध्यान करे मुमुक्षु। जो ब्रह्म विद्या काम है वो मोक्ष काम है। वो direct ब्रह्म को नमस्कार करेगा।

ब्रह्मा को, विष्णु को, शिव को, सब देवी देवताओं को भी नमस्कार करेगा। उसके मन मे किसी के लिए घृणा नहीं, द्वेष नहीं। किन्तु मन उसका सीधा उधर ही जाएगा। हम चाहते किसको है ? जो हमारा प्यारा है। नजर उधर ही जाएगी। यह स्वभाव है। पारिवारिक जीवन मे भी देखो, नई २ लड़की आई है ससुराल। कोई देवर है, कोई जेठ है, देवरानी है, ननद है, जेठानी है, सास है ससुर है। सासु की देवरानी भी है उससास कहते है। तो यह सासु के पास बैठती है, सब से प्यार से बोलती भी है, सेवा भी सबकी करती है। पर आई किसके लिए है ? सब करते हुए भी इसका ध्यान किधर है ? जिसके लिए आई है, ध्यान उसकी ओर ही रहता है इसका।

इसी तरह सोचो कि यहाँ किसके लिए आए हो ? यह जो ऊपर २ देखते हो इसके लिए आए हो ? या जिसके बिना कुछ नहीं दीखता उसके लिए आए हो ? जिसके बिना कोई हमारा नही, जिसके रहने से सब हमारे उसी के आए है। हम भी कौन है। हम वो ही है। इसलिए मुमुक्षु को वडी सावधानी से इस सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा मे मन को स्थिर करना है। धीरे २ करो। एक दिन मे करने का धन्धा नहीं। रोज २ करो। बाकी जीवन के लिए जितना हो सकता है उतना अच्छा करने का प्रयत्न करो। कर्म से विमुख होने की जरूरत

नही। कर्म भी करो किन्तु दृष्टि तत्त्व मे रखो।

'स्वल्पमपि धर्मस्य त्रायते महतोभयात्' थोडी भी यदि ज्ञान मे स्थिति बन जाएगी तो भगवान कहते हैं कि मृत्यु के भय से त्राण देगी। महान भय से त्राण मिलेगा। इसलिए धीरे २ मुमुक्षु आगे चले।

यहाँ पर भगवान प्रजापति ने सोचा कि ये देवता हमारे बडे बेटे, मनुष्य हमारे बेटे यह असुर हमारे बेटे, यह सब हमारे बेटे बेटियाँ है। इन सब के सामने भोगों का तो हिमालय खड़ा है, ऐसी विद्या देनी चाहिए जिसके द्वारा यह मोक्ष मे आ जाएँ। किन्तु प्रजापति बडे होशियार थे वो, जानते थे कि जो भोगासक्त लोग है, उनके पास जाकर यदि कहोगे कि क्या रखा है इन भोगों में, तुम सत् चित् आनन्द रूप आत्मा की बात सोचो। तो भोगी कभी नहीं सुनेगा। उल्टा कहेगा कि मेरा दिमाग खराब हो गया है। इसलिए पास जाकर उनको उपदेश मत करो। शास्त्र का नियम भी यही है 'न पृष्टः कस्यचित ब्रूयात् न चान्यायेन पृच्छतः' जब तक जिज्ञासु कुछ पूछे नही तब तक कुछ बोलो मत। जैसे अपने अनुभव मे समझो, कृष्ण अर्जुन को कितना प्यार करते थे। अर्जुन भी सब कुछ कृष्ण के लिए करता है किन्तु कभी कृष्ण ने अर्जुन को आत्मा की बात समझाई? कभी नहीं। कुरुक्षेत्र के मैदान मे जब देखा कि यह तो कोरे का कोरा है, और उसने जिज्ञासा की तब आत्मा का उपदेश किया।

भगवान प्रजापति भी इस सत्य को जानते थे कि इनके पास जाकर इन को कुछ समझाना ठीक नहीं। किन्तु माता पिता यह तो चाहते ही है कि उनके बच्चों को अच्छी बुद्धि आवे। इसलिए प्रजापति ने घोषणा कर डाली 'य आत्माऽपहत पाप्मा·····' बहुत लम्बी घोषणा कर डाली। नुस्खा बता दिया कि जो आत्मा को जान जाएगा वह सब पा जाएगा। सब जान जाएगा। देवताओं की भी यही इच्छा थी कि सब कुछ पा जाएं। भोगी की इच्छा होती है कि सारी सत्ता हमारे हाथ मे ही आ जाए। देवताओं मे खलबली मच गई। कि हाय! ऐसी विद्या भी है जिसके पाने से सर्व लोक सर्व भोग हमारे हाथ मे पहुंच जाएंगे। असुरों मे भी खलबली कि ऐसी विद्या हमने तो नहीं सुनी जिसके पा जाने से सारे लोक और सारे भोग हमारे हाथ मे आ जाएंगे। देवता भी भोगी, असुर भी भोगी

दोनो की यही इच्छा कि सारे भोग हमारे हाथ मे ही आ जावें । दोनों मे खलबली मच गई भगवान प्रजापति की घोषणा से । उन्होंने नुस्खा बता दिया 'य आत्मा ऽपहत पाप्मा सर्वाँश्च कमान् सर्वाँश्च लोकान प्राप्नोति अब बताओ इस आत्मा को जानने के लिए सब तैयार होंगे कि नहीं । देवताओं ने खट् मीटिंग कर डाली। असुरों ने भी कान्फ्रेंस कर डाली कि हम लोगों मे ज्येष्ठ श्रेष्ठ कौंन है ? देवताओं मे तो नरपति इन्द्र ज्येष्ठ श्रेष्ठ है और असुरों मे विरोचन था । प्रह्लाद का बेटा। देवताओं ने फैसला कर डाला कि हमारे राजा इन्द्र को जाना पडेगा । असुरों ने भी बिरोचन को चुन लिया ।दोनों तैयार हो गये भगवान प्रजापति के पास आत्म-विद्या जानने के लिए जाने को । किन्तु रास्ता तो लम्बा है इसलिए आज उसके लिए सामग्री इकट्ठी करो । कल आगे चलेंगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

३०-५-८८

प्रवचन सं० ५२

"ॐ य आत्माऽपहतपाप्मा . . . . जग्मतुः ।।"

(छान्दो. ८-७-१।८-७-२)

विचार है, कल इस बात को कहा था कि इस लोक मे जो अच्छे माता पिता है वो सोचते है कि इस लोक मे जो भी अच्छे से अच्छा भोग है वो तो यह लेंगे ही, किन्तु हमारे बेटे बेटियों को वो कर्म भी मिलना चाहिए जिस कर्म के मिलने से उनकी आत्मा परलोक मे भी महान होकर जाए । इस लोक मे महान होने की बात नहीं । इस लोक मे तो जो तुम्हारे सहायक है, तुम्हारे माता, पिता भाई, बन्धु वों इस लोक मे तो तुम्हें महान बनने का प्रयत्न करेंगे ही किन्तु परलोक मे तुम्हारी आत्मा महान होकर जावे, इसके लिए तुम्हे स्वयं कुछ करना पडेगा । सत्य को जीवन मे समझना चाहिए, जिस सत्य से परे कोई नहीं । माता पिता कोशिश करते है बच्चो को समझाने की । तो सोचो वो प्रजापति भगवान ब्रह्म जो सब का पिता है उसकी भी इच्छा हुई कि हमारे यह जो बच्चे हैं, इन बच्चों को भोग तो जो भी है मिलेगा ही, देवों को देव योनि के अनुसार, असुरों को असुर योनि के अनुसार भोग मिलेगा, किन्तु उनको ऐसी विद्या मिले कि जिस विद्या के मिलने से इनकी आत्मा का मोक्ष हो जाए तो यह विद्या भी इनके अन्दर डाल दी जाए । जों भोग मे प्रमादी व्यक्ति है, जो भोगासक्त है, उसके अन्दर रजोगुण की विशेषता होती है । रजोगुण वैसे तो बडा अच्छा है ,किन्तु यह भोगा-सक्ति को बढाता है । गीता में कहा भी है :-

'सत्वं सुखे संजयति रज: कर्मणि भारत' सत्वगुण क्या काम करता है ? रजोगुण तो कर्म मे आसक्ति को बढाता है किन्तु सत्वगुण विषयसुख से आसक्त कर देता है । विषयसुख के आगे यह समझना ही नहीं चाहता कि कोई सत्य भी है । यह बताओ कि विषय है तब हम है कि हम है तब विषय है ? तुम्हारी आंख में light है तब रूप है । आंख में light ही नहीं तब कौन सा रूप अच्छा है । यह नहीं सोचता कि हम भोक्ता है, तब विषय हैं । बुद्धिमान सोचने का कष्ट नहीं करता । इसी को दुर्भाग्य कहते हैं । भगवान प्रजापति सोचते है कि हम यदि देवों के पास जाकर उनको समझाने की कोशिश करेंगे, तो देवता उसको पकडेंगे नहीं, क्योंकि सुख मे उनकी आसक्ति है । असुरों की भी वो ही हालत है । वो भी नहीं समझेंगे । इसलिए दूर से ही एक घोषणा कर डाली ।

'य आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः

सत्य कामः सत्यसंकल्पः सोऽन्वेष्टव्यः' संसार मे अगर कोई सत्य तत्त्व है तो वो आत्मा है। जिस आत्मा के जान लेने से 'सर्वांश्च भोगान् सर्वांश्च कामान्नाप्नोति' यह जीव क्या चाहता है, सारे संसार के भोग उसकी मुट्ठी में आ जायें। सारा संसार हमारी मुट्ठी में आ जाए। जीव की यह स्वाभाविक इच्छा है। जीव यद्यपि अल्पज्ञ है, अल्प शक्ति है, तो भी यह सारे लोकों को अपनी मुट्ठी मे रखना चाहता है। यह महत्त्वाकांक्षा है सबकी। चाहे वो देवता हो चाहे असुर हों, यही चाहता है कि यह सारे लोक हमारे हो जाएँ। सारे भोग हमारे हो जाएँ। यह जो घोषणा हुई तो देवताओं ने उसको सुना कि ऐसी वो आत्मविद्या है कि जिसको जानने से सारे लोक हमारी सत्ता मे आ जाएँगे। सम्पूर्ण भोग हमें मिल जाएँगे। देवताओं ने भी सुना, असुरों ने भी सुना। असुरों मे खलबली मच गई। देवताओं मे भी खलबली मच गई। असुर देवताओं को दबाना चाहते हैं। देवता असुरों को दबाना चाहते हैं। देव बुद्धि की विशेषता होती है जिज्ञासा। जानने की इच्छा। असुरों भी जिज्ञासा तो होती है किन्तु उनकी जानने की इच्छा जल्दी शान्त हो जाती है। देव बुद्धि जब तक असली तत्त्व मे नहीं पहुँचती जब तक असली सत्य को नहीं पकड़ती तब तक शान्त नहीं होती।

अब देवताओं ने इन्द्र से प्रार्थना की कि आप देवताओं के राजा हैं। आप को अधिकार है सब चीज समझने का क्यों नहीं आप भगवान प्रजापति के पास जा कर इस विद्या को प्राप्त करते। आप भगवान प्रजापति के पास जाओ, वहाँ जाकर उस विद्या को सीखो और आकर हम सबको भी समझाओ। देवताओं ने ऐसी प्रार्थना किया इन्द्र से और इन्द्र तैयार हो गये। समाज में बड़ा बनना कोई खाला का बाड़ा नहीं है। उसकी कुछ ड्यूटी होती है। उसको सब से आगें जाना पड़ता है। इन्द्र न तो कर नहीं सकता, बड़ा था। हां कर दिया। इधर असुरों का सम्राट प्रह्लाद का पुत्र विरोचन था असुरो ने उस विरोचन को तैयार किया कि आपको इस सत्य को जानना चाहिए। जिस विद्या के जानने से सम्पूर्ण भोग मिलेंगे और सम्पूर्ण लोकों मे हमारा शासन होगा। उस विद्या को आप जानें। विरोचन भी तैयार हो गया। यह दोनों तैयारी कर रहे हैं।

'य आत्माऽपहत पाप्मा' पहले इन शब्दों का अर्थ समझना पड़ेगा।

'आप्नोति ह वैं इदं सर्वं स आत्मा' इस सम्पूर्ण नाम रूप कों जो अपनी सत्ता मे व्याप्त कर के रखे उसको आत्मा कहते है । आत्मा कोई रोने गाने वाले का नाम नही । इस शरीर मे बैंठ कर थोडी देर में खुश हो गये थोडी देर मे रोने लगे । आत्मा उसको कहते हैं जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपनी सत्ता मे रखे । अपनी सत्ता से बाहर किसी को नहीं जीने दे । उसकी सत्ता से बाहर जो जाएगा वो मुर्दा हो जाएगा । अपना शरीर ही सब से बड़ा दृष्टान्त है, जरा सा इस आत्मा की सत्ता से बाहर गया तो यह मुर्दा बन जाएगा । इसको कोई नहीं पूछेगा । 'यदाप्नोति यदादत्ते यश्चात्ति विषयानिह यच्चास्य सन्ततो भावो तस्मादात्मेति कीर्त्यते' यह आत्मा तुम्हारी इस शरीर के अन्दर । इस शरीर के अन्दर तीन को प्रधान माना है । ज्ञानेन्द्रियाँ कर्मेन्द्रियाँ और मन । इन तीनों का नियन्ता बना हुआ है । ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा 'यदाप्नोति' विषयों को पकडता है । जैसे कोई बच्चा हो, यह मत सोचो कि जवान आदमी को ही लोभ होता है या बुढ्ढा होने पर ही लोभ बढता है, बचपन में ही सद्गुण या दुर्गण आरम्भ हो जाता है । मन के द्वारा यह भोक्ता बना हुआ है 'यश्चात्ति विषयानि' खा रहा है । मन बेहोश हो गया तो क्या खाओगे ? मन बेहोश हो गया एक आदमी का, यह मत सोचो कि मुँह का छेद इतना बडा है इसलिए हम खा लेंगे, तो किस मुँह से खाएगा । मन ठीक नहीं होगा तो कुछ नहीं खा सकोगै । इसलिए यह जो मन है यह ही भोक्ता है । किन्तु यह मन भी तभी तक भोक्ता है जब तक तुम्हारे करंट मे है । जब तक भी तभी तक भोक्ता है जब तक तुम्हारे करंट मे है । जबतक चेतन आत्मा के करंट मे है तभी तक भोक्ता बना हुआ है । मैं संसारी हूँ, मैं भोक्ता हूँ, मैं जन्म मरण वाला हूँ, मैं सुखी हूँ, मैं दुःखी हूँ, यह पच्चासों तरह के आरोप अपने ऊपर लाद कर चल रहा है । आरोप सब आत्मा में हो रहा है 'यदाप्नोति यदादत्ते, यच्चात्ति विषयानिह तस्मादात्मेति कीर्त्यते'

ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा विषयों को ग्रहण करना, कर्मेन्द्रियों के द्वारा विषयों को लेकर आना और मन के सम्बन्ध से भोक्तापन आना । किन्तु फिर भी अहं अहं अहं अहं यह अहंकार वृत्ति निरंतर आ रही है । यह अहमाकार वृत्ति जब तक है, तो आंख भी देखेगी, हाथ भी काम करेगा, मन भी क्रियाशील रहेगा ।

और यह गायब हो गई तो आंख ने क्या देखा है ? और हाथ ने क्या काम करना है ? मन भी क्या करेगा ? इसलिए ऐसी है वो तुम्हारी आत्मा सत चित् आनन्द स्वरूप। 'यश्चास्य सन्ततो भावस्तस्मादात्मेति कीर्त्यते' इसलिए इसे आत्मा कहते हैं। अब इस आत्मा के स्वरूप का व्याख्यान हम नहीं कर रहे, भगवान प्रजापति इस आत्मा का व्याख्यान कर रहे हैं। किसको भला ? देवताओं को और असुरों को। किन्तु पास जाकर नहीं। दूर से कह रहे है। दूर से इसलिए कह रहे ह कि यदि इनकी आत्मा जीवित होगी तो यह सत्य सुनने के लिए तैयार हो जाएँगे। जो भोग मे डूब जाता है वो भोग मे तो जागता रहता है किन्तु ज्ञान के लिए मुर्दा हो जाता है। वो ज्ञान को नहीं सुनेगा। ज्ञान मे वह मुर्दा हो जाता है। वो यह नहीं जानता कि सब कुछ ज्ञान से ही होता है। आंख देखती है तो ज्ञान से, कान शब्द सुनते है तो ज्ञान से, वाणी बोलती है तो ज्ञान से, मेरा तेरा करते तो ज्ञान से। बेहोश आदमी क्या करता है ? बेहोश आदमी की आंख देखती है ? या कान सुनता है ? तो यह आत्मा ही है जिसके करंट से सब कुछ होता है। 'य आत्मा' यह शब्द महत्त्वपूर्ण है। भगवान प्रजापति इस आत्मा की व्याख्या करते हैं तो कहते है 'य आत्माऽपहतपाप्मा' अपहतानि पापकर्माणि सर्वाणि' जितने भी पाप कर्म है, उनसे अपहत हैं, उनसे परे है उनकी पकड मे आत्मा नहीं कर्मों की पकड मे कौन है ? अन्त: करण, मन। किसी ने प्यार से बोला। तो खुश कौन मन। किसी ने गुस्से बोला तो दुःखी कौन ? मन। आत्मा तो केवल साक्षी मात्र है। यह बताओ भूख किसको लगी। यह हंडी खाली हो गई तभी न भूख लगी। हंडी खाली हुई तो भूख किस को लगेगी ? यह सब परमात्मा ने जुदे २ यंत्र fit कर के रखे हैं। यह बताओ जब heavy jet आकाश मे उड़ता है तो patrol कितना खाता है। वो सारे का सारा शरीर नहीं खाता jet का engine खाता है जो jet के सारे शरीर को उठा कर चल रहा है।

इस तुम्हारे jet को, स्थूल शरीर को कौन उठा रहा है ? इसका इंजन मन है। आत्मा सत्ता मात्र है। आत्मा कुछ काम नही करेगा। संत लोग कहते है कमाएगी दुनियाँ खाएँगे हम। आत्मा की सत्ता में काम करने वाले सब। आंख देखने वाली, कान सुनने वाला, वाणी बोलने वाली उसकी सत्ता मे काम करने

वाले बहुत है। हाथ काम करने वाले, पैर चलने वाले। जहाँ उसने सत्ता खींच ली तो labour party मुर्दाबाद। अब इन मुर्दों को घर मे कोई नहीं रहने देगा। कहेंगे ले चलो। इस प्रकार यह आत्मा तो केवल सत्ता मात्र है। इन्द्रियाँ काम करेंगी। मन काम करेगा। इन्द्रियाँ जो कर्म कर रही है इनका प्रभाव कहाँ तक है ? केवल अन्तःकरण तक। मन तक ही इनका प्रभाव है। तुम्हारे शरीर से कभी धर्म होता है। कभी अधर्म भी होता है। जैसे मनुष्य जरुरत होती है तो सच वोलता है और जरुरत होती है तो कभी झूठ भी बोल लेता है। जहाँ सच बोलने की जरुरत होगी वहाँ सच ही बोलेगा। झूठ नहीं बोलेगा। सत् कर्म नाम है धर्म का और असत् कर्म नाम है अधर्म का। कहीं लोभ मोह मे आ गया तो अधर्म भी होता है। बुरा कर्म भी करेंगे कोई अच्छा निमित्त आ गया तो अच्छा कर्म भी करेंगे। तुम्हारे जीवन मे जितने भी शुभ अशुभ कर्म है सब की गति कहाँ तक है ? अन्तः करण तक। मन बुद्धि तक। यह धर्माधर्म जाकर मन बुद्धि तक ही प्रभाव डालते हैं। मन बुद्धि जब तक तुम्हारे को छोड़ेंग नहीं, तब तक मोक्ष मे नहीं जा सकते। मन के अन्दर ही धर्म है मन के अन्दर ही अधर्म है। दोनों ही मन के अन्दर बैठे हैं। किन्तु तुम्हारे स्वरूप मे न धर्म है न अधर्म तो तुम धर्मा-धर्म से परे हुए कि नहीं ? यह आत्मदेव धर्माधर्म से परे है। धर्माधर्म उसको छू नहीं सकता।

अन्यत्र धर्मादन्यत्राधर्मादन्यत्रास्मात्कृताकृतात्।
अन्यत्र भूताच्च भव्याच्च यत्तत्पश्यसि तद्वद ।।

नचिकेता जिसको भगवान धर्मराज स्वयं आत्मा का उपदेश कर रहे हैं उन यमराम से नचिकेता पूछता है कि मेरे को जो गूढ रहस्य है वो समझाओ। 'अन्यत्र धर्माद्' जो धर्म से परे है, अधर्म से भी जुदा है। उस आत्मा का उपदेश करो। धर्माधर्म तो क्या करेगा तुमको ? बांध कर अपना भोग देगा। जैसे किसी प्रिय मित्र के पास जाओ। जाते ही कहो कि आज तो खाएँगे नहीं। सुनेगा किन्तु भूखा नहीं रहने देगा। कुछ न कुछ खाने को अवश्य देगा। कहेगा ऐसा कैसे होगा। इसी तरह यह जों तुम्हारी आत्मा है, सत्चित् आनन्द स्वरुप है और धर्माधर्म दोनों अन्तःकरण मे हैं। इसको अनुभव करने के लिए अपने शरीर को

पकडो । शरीर मे एक दिन बचपन था, कुमारावस्था थी । एक दिन जवानी थी । यह जवानी शरीर मे थी कि तुम्हारे मे ? जवानी जब तक शरीर मे घूम रही है लोग तुम्हें आगे बिठाएंगे । प्यार से बोलेगे । और एक दिन कपडे की तरह निचोंड दिया और किनारे मे रख दिया । कहेंगे बुढ्ढे हो गये । क्या बुढ्ढे हो गये । वो रस था तुम्हारा वो निचोड लिया और तुमको किनारे कर दिया । तुम अपने को बुढ्ढा कहने लगे । किन्तु तुम्हारे स्वरूप मे क्या अन्तर पडा ? तुम्हारे स्वरूप मे कोई फर्क नहीं पडा । बच्चे थे तब भी तुम्हीं थे । कुमार हुए तब भी तुम्हीं थे । जवान हुए तब भी तुम थे और अब बुढापे मे भी तुम हो कि नहीं ? जब तक कुछ न कुछ खाता रहेगा तब तक ठीक । खाने का कर्म खत्म हो गया खाना पीना बन्द हो गया । आंख बन्द हो जाएगी । इस शरीर को कोई नहीं रखेगा । 'कृताकृतात्' नचिकेता कहता है, भगवान जो धर्म से भी जुदा है अधर्म से भी जुदा है और कृत माने कर्म और अकृत माने कुछ कर्म नहीं । इन दोनों से भी परे है । 'अन्यत्र भूताच्च भव्याच्च' भूत माने जो हो चुका है भव्य माने जो होने वाला है । जो इन दोनों से परे है । इस प्रकार जो आप देखते है वो मेरे लिए कहो।यह है जिज्ञासा।जिज्ञासा जिसकी हो उसको कहते है जिज्ञासु।ऐसी इच्छा करो।इन्द्रियों के जो विषय है उनको तो इन्द्रियाँ पकड़ ही लेती है।उनको जाननेकी क्या इच्छा करते हो । बच्चा अगर आज किसी चीज को नहीं समझता तो कल समझ जाएगा । यह जो सत्य है आत्मा । इसको जानने की मुमुक्षु जिज्ञासा करे ।

यहाँ कहते है 'अपहतपाप्मा' यह आत्मा कैसी है ? अपहतपाप्मा है । इसके अन्दर कोई धर्माधर्म नहीं है । यहाँ पर मंत्र जो पुण्य कर्म है उनको भी 'पाप्मा' शब्द से कह रहा है । क्यो ? अपने अनुभव के लिए समझो जो गरीब लोग हैं जब वो अपराध करते है तो पुराने जमाने में उनको लोहे की हथकडी से बाँधा जाता था और राजा या धनी मानी व्यक्ति कोई अपराध करता था तो उस को गिरफ्तार करने के लिए सोने की हथकडी भेजी जाती थी ।उनकी इज्जत की जाती थी । किन्तु सोने की हथकडी ने क्या काम किया ? जो लोहे की हथकडी ने किया । वही सोने की हथकडी करेगी । बन्धन मे दोनों बराबर है । रंग रूप मे दोनों जुदा हैं । इसी तरह तुम्हारे यह पाप कर्म तो लोहे की हथकडी है और पुण्य कर्म जो है वो सोने की हथकडी के बराबर है । पाप कर्म तुमको पशु पक्षी योनि

मे ले जाएंगे और पुण्य कर्म तुमको देवयोनि मे ले जाएंगे। सुन्दर मनुष्ययोनि मे ले जाएंगे। मान लो देवयोनि मे भी गये तो रहना तो उसी शरीर मे पडेगा। अब शरीर कों बदल सकोगे क्या ? नहीं। पाप कर्म ने tiger बना दिया। tiger बन गया तो tiger के शरीर मे रहना पडेंगा। मान लो हम लोग मनुष्य शरीर मे है तो जब तक इस शरीर का भोग है तब तक इसी शरीर मे रहना पडेगा। गला फाड़ २ कर चिल्लाते रहो 'यह आत्मा ब्रह्म है' जैसे हम गला फांड़ कर चिल्ला रहे है, पर यह शरीर क्या कहता है ? यह मनुष्य शरीर हमसे ज्यादा होशियार है। वो कहता है आप बोलते तो जाओ। सत्सङ्ग मे बैठ कर हम भी सोचते हैं कि पहुच गये है। किन्तु पीछे ? कुत्ते की पूंछ जब तक पकडे रखो सीधी रहती है। जहाँ छोडी वैसे की वैसी। आप लोग भगवान के भक्त है ऐसे सत्सङ्गी नहीं है, किन्तु सावधानी के लिए बोलना पड़ता है। इस सत्य से परे कोई सत्य नहीं है। सत्य को स्वीकार करो।

यह जो आत्मा है अपहत पाप्मा है। इस वाक्य से प्रजापति ने क्या समझाया ? यह धर्म की पकड़ मे भी नहीं। अधर्म की पकड़ मे भी नहीं। दोनों से परे है। किन्तु धर्माधर्म अपना भोग देने के लिए आगे रहते है। यद्यपि इसके अन्दर धर्माधर्म है नहीं फिर भी जो जन्म मरण चल रहा है इसके प्रभाव मे ही चल रहा है। अन्तःकरण मे होने के कारण अन्तःकरण इसको छोडेगा नहीं। तब तक जिस योनि मे अन्तःकरण जाएगा, आत्मा की वही योनि मानी जाएगी। अपहतपाप्मा, विजरो, विमृत्यु आगे शब्द आया विजरो। इसके अन्दर जरा नहीं। जरा नाम है वृद्धावस्था का। श्री मद्‌भागवत मे यह जरा चण्डदेव की पुत्री है। जरा जवान हो गई। अपने पिता से कहती है, मेरा स्वयंबर कर दो चण्डदेव ने कहा, पुत्री पुरंजन नाम का राजा है, उसकी सेना मे बडे २ वीर योद्धा है। तुम वहाँ जाओ। उनसे तेरा स्वयंबर हो जाएगा। जरा गई। किन्तु वहाँ किसी ने इसकी ओर देखा भी नहीं। यूं हाथ कर लेता है। इस जरा ने समझा मेरा बडा अपमान हो गया। मैं क्या करूँ ? बडे बाप की बेटी भी बडी होती है। पिता के पास आकर बोली पिता जी मेरी ओर कोई नहीं देखता। पिता ने कहा यह जितने भी है, सब से स्वयंबर करो। किसी को नहीं छोडना। जीव भागता रहता है। बचपन से कुमारावस्था मे, कुमार अवस्था से जवानी मे, जवानी की ओर भाग

गया । जवानी से भाग कर कहाँ पहुँचा ? जहाँ जरा पहुंची हुई थी । वो पहले ही वहाँ बैठी थी, वहीं आ गया । उससे झट से जयमाला डाल दी । जा बेटी तेरेको आर्शीर्वाद है । कि सबका तुमसे स्वयंबर होगा । यह सब तेरे पति है । आत्मा ही है जो इस जरा से परे है । जरा तो उसको पकडती है जो देहाभिमानी है । जो इस देह अभिमान से परे हो गये हैं उनको जरा नही पकड़ती । उनको कुछ नहीं बोलेगी । यह आत्मा क्या है । विज्वर: है यहाँ कोई ज्वर भी नही है ज्वर माने रोग । विगत: ज्वर: विज्वर: यहाँ जरा भी नहीं है । जरा कहाँ घूम रही है ? स्थूल शरीर मे । तुम यह स्थूल शरीर नहीं हो । तुम तो स्थूल शरीर की आत्मा हो । इसलिए तुम्हारे मे जरा नहीं । जहाँ जरा हैं वहीं उसका बाप भी बैठा है । स्थूल शरीर मे ही जरा है इसलिए काल देवता भी यहीं है । वह भी अपनी बेटी के साथ ही रहता है । जरा कहाँ बैठी हैं ? स्थूल शरीर मे । तो मृत्यु भी स्थूल शरीर मे ही है । भगवान ने हमारे लिए dresser रखा है । काल देवता को । जैसे बडे लोग अपने बच्चों के कपडे बदलने के लिए आया रखते हैं । बस dress को बदल दिया । लोगों ने हल्ला कर दिया । मर गया । कुछ मरा नहीं वो जैसे का तैसा है इस सत्य को प्रकट करते हुए कहते है 'विमृत्युर्विशोको' इसमे न जरा है, न मृत्यु है , न शोक है । तुम तो अमृत हो ।

हे सौम्य तुम अमृत हो । अपने इस अमृतत्व को मुमुक्षु ग्रहण करे । अब सीधे होकर बैठो । जोर से हरि: ॐ की ध्वनि करो और अपने इस अमृत स्वरूप का ध्यान करो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

३१-५-८८

प्रवचन सं०-५३

"ॐ य आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको ... ..

.. . . जग्मतुः ।।"

(छान्दो. ८-७-१)

विचार चल रहा है। श्रुति भगवती कहती है कि बुद्धिमान मनुष्य प्राणी खोज तो करता है। बिना खोंज किए इसका कल्याण नहीं। खोज यह करता रहता है। श्रुति भगवती कहती है कि खोज यह क्या करता है ? इन्द्रियों के जो भोग है उन्हीं की खोज करता है। कभी रूप की, कभी रस की, कभी गन्ध की, कभी शब्द की और कभी स्पर्श की खोज करता है। इन्हीं की खोज मे चलते २ बहुत महत्त्वपूर्ण जीवन का अन्त हो जाता है। महर्षि कहते हैं :–

"आयुष्क्षणैकोपि सर्वैरत्नेन लभ्यते

स वृथानियतेन प्रमादी नराधस"

आयु तुम्हारे प्राण के अधीन है। 'यावान्प्राणो देहे वसति तावानायु' जब तक इस शरीर मे प्राण बैठा है तब तक यह शरीर जीएगा। कुछ खाएगा पीएगा। इस शरीर के जो प्रिय बन्धु है, बेटा बेटी, पति पत्नी वो पास मे बैठेंगे। किन्तु यदि यह प्राण शरीर को छोड दे तो इस मुर्दे के पास कौन बैठेगा ? जिस समय प्राणों ने छोड़ दिया। उस समय कोई बड़ा धनवान भी होगा अर्बो रुपये जिसके पास है वो कहें कि हम अपनी सारी सम्पत्ति देते है हमको प्राण लाकर दो तो विश्व कीं कौन सी मारकीट मे प्राण का व्यापार होता है। सोचो कितना बडा धन है यह प्राण ? इस world की किसी भी market मे यह प्राण मिलने वाला नहीं। कितना कीमती प्राण है। एक प्राण बाहर गया और लौट कर नहीं आया

तो कौन तुम्हारा है यहाँ पर ? 'स वृथा नियतेन' उस कीमती रत्न को जो केवल इन इन्द्रियों के भोगों मे ही वृथा नष्ट कर देता है । व्यर्थ प्राण रूपी धन को खो रहा है । आयु का एक भी क्षण दुनियाँ की सारी सम्पत्ति देने पर भी नहीं मिलता। छोकरा पालक का साग लाने के लिए मां के पर्स मे से हीरा निकाल कर ले गया । हीरा साग के बदले ले आया । घर का लड़का है तो भी मां उस लड़के को क्या कहेगी ? एक किलो पालक के बदले हजारों का हीरा दे दिया । उसको इसकी कोई कीमत नहीं थी । वो अज्ञान मे था । ignorance था । उसको इतना ज्ञान नहीं था कि हीरा इतना कीमती होगा । यहीं समझने का result है कि इतना कीमती हीरा फैंक आया । इसी प्रकार यह तुम्हारा जो प्राण है यह हीरे से भी कीमती है । यह हीरा तो मारकीट मे मिल जाएगा किन्तु यह हीरा कहाँ मिलेगा ? दुबारा जन्म लोगे तब तुमको सुव्यवस्थित प्राण मिलेगा । अच्छी जन्म मिल गई तो । अगर मम्मी कहीं सींग पूंछ वाली मिल गई तो बुरा हाल है । इसलिए कहा 'स वृथा नियतेन स प्रमादी नराधमः' जो प्राण को व्यर्थ मे नष्ट करता है वो प्रमादी है । और मनुष्यों मे अधम है, नीच है । जैसे पशु जब देखो हरी घास की ओर ही मुँह मारता है यह भी ऐसा ही करते है । केवल अपने भोग की ओर ही उनका मन है । 'मैं कौन हूँ' यह नहीं जानता । इसलिए इसलिए कहते हैं :–

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधतः

कठोपनिषद् की श्रुति है । मुमुक्षु को सावधान करते हुए कहती है उठो, जागो । यह जीव अज्ञान की निद्रा मे सोया हुआ है । 'अनादि मायया सुप्तो यदा जीवो: प्रबुध्यते' यह जीव अनादि काल से सोया हुआ । अनादि माया की निद्रा मे सोया हुआ है । निद्रा का काम है कुछ समझने नहीं देना । यह कुछ समझता भी है तो वो नहीं समझना ही है । जैसे स्वप्न होता है न । खा पीकर सोए और क्षण भर मे देखा कि लन्दन मे घूम रहे हैं । जो हजारों मील दूर है । यहाँ अपने मित्र के साथ घूम रहे हैं । किन्तु जरा आंख खुली तो क्या देखा ? कहाँ निकले ? लन्दन मे या बिस्तर मे । कहते है यहाँ ही हृदय के अन्दर हिता नाम की जो नाड़ी है उसी मे मन के द्वारा स्वप्न देख रहे है । ऐसी हिता नाम की नाड़ी मे वो फिलम हाऊस है । माया का वहाँ तुमको नाना प्रकार के Scene दीखेंगे । तो जो

जाग्रत मे बाहर दीखा, स्वप्न मे वो मन के अन्दर दीखा। जब कुछ नहीं दीखा तो गाढ निद्रा कहेंगे। यहाँ भी ऐसाही है। माया की निद्रा मे या तो कुछ नहीं समझता या जो नहीं है उसको ही समझता है। जैसे इस शरीर को ही मैं कर के समझता है कि यही मैं हूं। जो है उसको तो नहीं समझा और शरीर को ही सब कुछ समझता है। गधा नाम का जो जानवर है न वो भी अपने को शरीर के आकार का समझ रहा है। गाय है, भैंस है, घोड़ा है पशु पक्षी सब अपने शरीर के अकार को समझ रहे है पशु को जब जरूरत पडती है तो क्या पूंछ फटकारता है। जरूरत पडती है तो कान फटकारता है। जरूरत पडती हैं तो हरी घास खाता है। जरूरत होती है तो पानी पीता है जरूरत होती है तो सो जाता है। एक मनुष्य भी यदि इतना ही करता है तो पशु मे और उसमें फर्क क्या है? दो बच्चे इसके हैं दो बच्चे उसके भी हैं। यहाँ तो family planning है वहाँ तो family planning भी नहीं है। सोचो तो यह मनुष्य पशु से भी गया बीता है।

मंत्र कहता है उत्तिष्टत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत। उठो, जागो, इस माया की निद्रा से ऊपर उठो। आचार्य से ज्ञान का वरदान प्राप्त करो। इसके ऊपर कोई वरदान नहीं। सबसे श्रेष्ठ है इस जगत मे ज्ञान। ज्ञान गायब हो जाए तो कहेंगे बेहोश हो गया। तो बेहोश को घर मे कौन रखेगा ? राजकपूर को देखो world famous आदमी है, अस्पताल मे पड़ा है। हजारों रुपये कमाए है, अपने बन्धुओं को खिलाया भी किन्तु बेहोशी मे यहाँ अस्पताल से भर्ती कर दिया। किसी ने घर मे नहीं रखा। यह शरीर कीमती नहीं। कीमती तो ज्ञान है। ज्ञान ठीक है तो घर मे रह सकते हो। ज्ञान ठीक नहीं तो घर मे भी नहीं रह सकते। इसलिए ज्ञान के असली स्वरूप को समझने का नाम सत्सङ्ग है। सत्सङ्ग कुछ सुनने का नाम नहीं। ज्ञान के असली स्वरूप को समझो।

"क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया
दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति"

बहुत से ऐसे विद्वान भी हैं जो कहते हैं भक्ति बडी सरल है। ज्ञान बडा कठिन हैं। ज्ञान की ओर नहीं जाना। बेहोशी बडी अच्छी है। उसी मे रहना, होश मे

नहीं आना । बताओ ऐसा कहने वाले का ज्ञान कितना अच्छा है। ठीक ज्ञान है यह ? अगर कोई चौबीस घण्टे की बेहोशी मे ही रहे तो सोचो उस लड़के से प्यार करेगा ? जब तक होश मे नहीं आओगे तब तक कौन सा काम होने वाला है। इस आत्मा को मोक्ष की ओर जो चलना है, यह बडा कठिन है। तलवार की धार पर चलना है। बिना ज्ञान के तू चल नहीं सकता। 'दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति' अन्धे को कहो कि दौड लगाओ तो कितनी दौड लगाएगा ? ज्ञान के बिना भक्ति भी क्या करोगे ? कुछ समझना हो है नहीं और बिना समझे कुछ होना नहीं। इसलिए कहा 'प्राप्य वरान्निबोधत' इस बात को निश्चय समझो कि ज्ञान के बिना कुछ नहीं होगा।

आजकल की दुनियाँ मे साईकिल कोई बडी सवारी नहीं है किन्तु बिना ज्ञान के तुम साईकिल भी नहीं चला सकते। तो भगवान की ओर कैसे जा सकोगे 'दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति' ऋषि कहते है रास्ता कठिन है। यहाँ मंत्र कहता है 'य आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको' यह आत्मा अज है, धर्माधर्म से परे है, जरा रहित है यह धर्माधर्म और जरा स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर तक ही है। साक्षात् आत्मा के अन्दर कोई धर्म नहीं कोई अधर्म नहीं। वेदान्त मे एक षट् उर्मि विज्ञान है। षट् माने छः उर्मि माने लहरे तरङ्ग। जिस प्रकार समुद्र मे लहरे उठती हैं। इसी तरह माया के समुद्र मे यह छः प्रकार की लहरे हैं। waves है। तरङ्ग है। पहली जन्म की तरङ्ग है। जन्म अब आया तो जन्म के आते ही भूख प्यास की लहर आ जाती है। जन्मते ही बच्चा रोता है। क्यों ? बच्चा इसलिए रोता है कि भूख लगी है। उसका मुँह साफ करो और कुछ दो उसको। सीवर लाईन भी ठीक है कि नहीं ? यह भी देखना पड़ता है। नई २ बिल्डिग बन कर आई है। सारी फिटिंग ठीक है कि नहीं देखता पड़ता है। हम समझते हैं हमारी अकल बडी है। हमने यह काम किया है। देखो कितना बडा system है। सीवर लाईन साथ मे ही fit कर दिया। जन्म और जन्म के साथ भूख प्यास की लहर। यही बड़ा दुःख है। आज दुनियाँ भूख प्यास के पीछे दौड़ रही है। जन्म और जन्म के साथ ही भूख प्यास। कहाँ हमारी भूख पूरी होगी ? कहाँ हमारी प्यास पूरी होगी। देख रहे हो, कैसा कां कां कर रहा है।

प्यास लगी तो कां कां करता है। यहाँ नेपाल मे तो कोका कोला भी मिलता है नीचे तो कोका कोला भी नहीं मिलता। जन्म हुआ स्थूल शरीर मे तो मरण भी यहीं है। जन्म मरण स्थूल शरीर का धर्म। भूख प्यास प्राण का धर्म और शोक मोह मन का धर्म। बताओ इस से अधिक संसार क्या है? अगर जन्म तुम्हारा नहीं हो जन्म तुम्हारा हुआ तो भूख प्यास आई। भूख प्यास आई तो शोक मोह भी आया। अगर जन्म तुम्हारा नही तो मरण भी नहीं। जन्म तुम्हारा नहीं तो भूख प्यास भी तुम्हारी नहीं। और भूख प्यास नहीं तो भूख प्यास के पीछे काला पीला भी नहीं। तो शोक मोह तुमको कहाँ से आएगा। भूख प्यास की पूर्ति मे मनुष्य काला पीला कर डालता है। कहता है कौन देखता है? यह उसको पता ही नहीं कि देखने वाला अन्दर ही खिड़की से झांक रहा है। एक आदमी झूठ बोल कर स्वयं अपने से पूछे कि मैं ठीक कर रहा हूँ कि गलत? तो अन्दर क्या कहेगा? समर्थन नही करेगा। अन्तरात्मा कहेगी कि यह गलत है। सच बोलेगा तो कहेगा ठीक है। झूठ बोलेगा तो नहीं।

जज के सामने एक आदमी झूठ बोलता है तो जज उसकी face nea-ding करता है। क्यों? अगर ठीक बोल रहा होता तो चेहरे पर चमक रहेगी और यदि गलत बोल रहा होगा तो खट् जज पकड़ लेगा। ज्ञान मे गड़बड़ हुई। झूठ बोलने वाले का चेहरा मुर्झा जाता है। अन्दर वाला लाफा भी लगाता है। झूठ को समझने वाला अन्दर ही बैठा है, उसके लिए कही बाहर जाने की जरूरत नहीं। इसी तरह तुम्हारे अन्दर ज्ञान है उसके ऊपर शोक मोह के पत्थर पडे हैं। अज्ञान की शिलाएँ अनादि काल से पडी हैं। इनको हटाना तो पडेगा। इनको तोडे बिना ज्ञान मे नहीं पहूंचोगे। ज्ञान मे नहीं पहूँचोगे तो reality of life क्या है, यह समझ नहीं पाओगे। दोनों आंख बन्द कर के चले गये। पशु अपना घास भूसा खा कर चला जाएगा यह मनुष्य पूरी परौंठा खा कर चला जाएगा। फर्क कुछ नहीं पडेगा। दोनों ही आंख बन्द कर के चले जाएंगे। मनुष्य का जन्म तो तब सफल है जब यह जाने कि मैं कौन हूं? 'who is myself?' अगर ऐसा कुछ समझेगा तो ठीक है नहीं तो पशु मे और मनुष्य मे कोई फर्क नहीं। इस लिए श्रुति कहती है 'य आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽ

पिपासः' विजिघत्सा खाने की इच्छा का नाम है । तो भोजन खाना और पीना । षट उर्भि विज्ञान की ही व्याख्या यहाँ श्रुति करती है । आत्मा के अन्दर मृत्यु नहीं मृत्यु तो स्थूल शरीर मे है । जरा भी स्थूल शरीर मे है । विजिघत्सा खाने की इच्छा प्राण मे है । पिपासा पीने की इच्छा । खाने पीने की इच्छा प्राण में है । खाना पीना प्राण का धर्म है ।

आत्मा प्राण नहीं । यह तो प्राणपति है । प्राण का नियन्ता है । और कहा विशोका: विगता: शोका: । जन्म मरण भूख प्यास शोक मोह यह षट उर्भि है । शोक मोह मन का धर्म है । तुम सब से न्यारे सब के साक्षी हो । तुम्हारे अन्दर यह कुछ भी नहीं है । यह जो तुम्हारी आत्मा है सत्यकाम; सत्यसङ्कल्पः है । सत्य काम है । इसके अन्दर जो इच्छा आएगी वो सत्य इच्छा होगी । श्रुति ब्रह्म को कहती है सत्यकाम: । जो इस आत्मा से मन को मिलाएगा वो सत्यकाम हो जाएगा । उसकी इच्छा सत्य हो जाएगी । जो इस ब्रह्म से मिलेगा । श्रुति से, शास्त्र से बुद्धिमान आचार्य से इस ब्रह्म को समझेगा, इसका जो ध्यान करेगा, वो भी सत्यकाम हो जाएगा । उसकी जो इच्छा होगी वो इच्छा पूरी हो जाएगी । इसलिए कहा वो सत्य काम है । सत्यसङ्कल्पः जो सङ्कल्प करोगे वो सत्य हो जाएगा । इच्छाएँ मनुष्य के मन के अन्दर बहुत सी बैठी हुई है जब तक इस आत्मा से हम नहीं मिलेंगे तब तक इस अन्तःकरण के अन्दर, जैसे बरसात मे पानी पड़ा, घास हुई और सूख गई । इसी प्रकार इस मन के अन्दर इच्छाएँ आती जाती रहेंगी । नाना प्रकार की इच्छाएँ आएंगी और जाएंगी । यह सारी इच्छाएं यह सारी इच्छाएँ सत्य नही होंगी । क्योकि सत्य से तो हम मिले ही नहीं । बढिया खाते हो क्या इसलिए यह शरीर जी रहा है, या बढिया कपडा पहनते हो इसलिए जी रहा है, या बढिया बंगले मे रहते हो इसलिए अच्छा है । अगर चेतन आत्मा इसको छोड दे तो कौन रखेगा मुर्दे को ? इस मुर्दे को सजाने से क्या होगा इसलिए विवेकशील अंधेरे मे रहने की कोशिश नहीं करे । इस प्रकाश को इस सत्य को पकडो । इस सत्य के बिना यह झूठ चलने वाला नहीं । 'सत्यकामः सत्य सङ्कल्पः सोऽन्वेष्टव्य विजिज्ञासितव्यः।

भगवान प्रजापति घोषणा कर रहे हैं । मैंने पहले भी इस बात को कहा

देवताओं के पास जाकर के कुछ नहीं कहा । दूर से lecture मार दिया । वो जानते हैं कि भोगा सक्त जो प्राणी हैं उनके पास जाकर अगर कुछ उनको समझाने की कोशिश करोजे तो वह कहेंगे कि तुम्हारा दिमाग creck हो गया है दुनियाँ मे इतनी सुन्दर चीजे काहे के लिए है ? हमको इतना सुन्दर क्यों बनाया है ? यह सब हमारे लिए है । किन्तु विवेकशील इसकी खोज करे । यह सब कुछ नहीं है । यह सत्य कौन सा है ? 'अन्वेष्टव्यः दिजिज्ञिसितव्यः' आत्मा की खोज करो । जो आत्मा जन्म मरण से परे है, भूख प्यास से परे है, शोक मोह से परे है, उस आत्मा को श्रुति से, शास्त्र से बुद्धिमान आचार्य से माने ज्ञान दाता गुरु से जानने का प्रयत्न करे । सोऽन्वेष्टव्यः विजिज्ञासितव्यः विशेषेण जिज्ञासितव्यः । विशेषण लगाया यानि विशेष रूप से इसको जानने की इच्छा करो । जिज्ञासा करो । वैसे तो हम जिज्ञासा करते ही है । छोटी मोटी चीजों के लिए भी जानने की इच्छा करते हैं किन्तु श्रोत्रिय ब्रह्म निष्ठ ब्रह्म वेत्ता गुरु से, ज्ञान दाता जो गुरु हैं उनके पास जाकर इस आत्मा के लिए जिज्ञासा करो । इसका फल कहते हैं 'यस्त्वात्मानमनुवद्य व्रजति स सर्वांश्च कामान् सर्वांश्च लोकानाप्नोति' मंत्र कहता है कि श्रुति के द्वारा और बुद्धिमान आचार्य से इस आत्मा को समझ कर जो जान लेता है वो सम्पूर्ण लोकों को सिद्ध कर लेता है । अर्थात जिस लोक मे जाने की इच्छा करेगा, सङ्कल्प करेगा, उस लोक मे पहुंच जाएगा । जिस भोग की इच्छा करेगा, उसको पा जाएगा । इसका अर्थ क्या समझे ? जो भोगासक्त प्राणी है वो सारे लोकों को अपना बनाना चाहता है । सारे भोगों को पाना चाहता है । प्रजापति ने कहा कितुम इस ज्ञान को तो पकडो, तुम सब लोकों को पा जाओगे, सब भोगों को पा जाओगे । देवताओ के अन्दर तो खलबली होने लगी क्योंकि सम्पूर्ण भोगों को अगर रुपये पैसे से मोल लेने जाओगे तो इतना धन किसके पास है इस दुनियाँ मे । एक छोटा सा भूमि का टुकडा लेने मे तो इस खोपडी से बाल साफ हो जाते हैं । कितनी जमीन ले लोगे भला ? तो सम्पूर्ण भोग । बडी मुश्किल है ।

यहाँ काठमांडू मे ही हम देख रहे हैं कहते हैं जो जमीन पहले तो हजार की थी अब पचास हजार की हो गई है । देवताओं ने सोचा बडी अद्भुत घोषणा

है । असुरों ने भी सोचा कि अद्भुत घोषणा है भगवान प्रजापति की 'सर्वांश्च लोकानाप्नोति ।' सम्पूर्ण भोग उसके हो जाएँगे, सारे भोग उसके हो जाएँगे । इसका अभिप्राय समझ लो । मान लो एक मैदान मे दस लाख आदमी खडा है कभी २ वडी कान्फ्रेंस होती हैं । खोपडियाँ सब जुदा २ है, आकार भी जुदा है, देखने मे कोई सुन्दर भी है, कोई देखने मे वदसूरत भी हैं किन्तु इस सब खोपडियों के अन्दर जो करंट है, वो एक है कि अनेक ? जो उस करंट मे पहुंच जाएगा उस की सारी खोपडियाँ हो जाएगी, उसके सारे मन हो जाएंगे । सारी खोपडियाँ उस की ही हो जाएंगी । सारे मन उसके हो जाएँगे । सारे शरीर उसके हो जाएंगे । तो यह वतालाओ जव सारे शरीर उसीके है तो उनके सारे मुँह भी उसके हो जाएँगे । सारे मुहों से जाने वाले पदार्थ किसके होंगे ? उनका स्वाद किसको मिलेगा ? उसीको मिलेगा कि नहीं ?

एक जीभ के स्वाद मे फंसे हुए तुम मदारी के बन्दर की तरह दौड लगाते रहते हो । तो इस विद्या के द्वारा जो सारे भोग तुम्हारे हो जाएँगे । तुम्हारे अन्दर सर्वात्मभाव प्रकट हो जाएगा तो कौन सी चीज तुम्हारी नहीं रहेगी । प्रजापति कोई हिमालय में गांजा पीकर गप्प नहीं रहे थे ।

'सर्वांश्च कामान् सर्वांश्च लोकानाप्नोति'

प्रजापति इतना कहे कर चुप हो जाते है ।

अव सीधे होकर बैठो और मन को आत्मा में ले जाओ ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१-६-८८

प्रवचन सं० ५४

"ॐ य आत्माऽपहत पाप्मा .... जग्मतुः ।।"

(छान्दो ८-७-१)

इस बात को सुन कर आए कि भगवान प्रजापति ब्रह्मा ने एक बडी घोषणा की कि जिस आत्मा के बिना यह सम्पूर्ण संसार कुछ नहीं । दृष्टान्त के लिए अपने शरीर को ही पकडो । आत्मा के बिना यह शरीर कुछ नहीं । यह मुर्दा हो जाता है । इस आत्मा को हमारे जो यह बच्चे हैं, यह देवता और असुर, भगवान ब्रह्म की तों यह सब सन्तान है । देव मनुष्य और असुर । वेद मे कथा आती है, जैसे इस लोक मे किसी पिता की बहुत सन्तान हो । पुराने जमाने का पिता है । पिता की बहुत सन्तान है । एक दर्जन बच्चे तो मान ही लो । बच्चे जब छोटे होते हैं तो जैसे डाल दिए पडे रहते है । किन्तु वहीं बच्चे जवान हो जाते हैं तो सब अपनी २ सुविधा चाहते है । हमारे लिए अलग २ flats होने चाहिए । जुदा २ bed room की सबकी सुविधा होनी चाहिए । देव, पितर असुर, मनुष्य और पशु पक्षी यह पांच प्रकार की ब्रह्मा की प्रजा है । यह पांचो प्रजापति की सन्तान है । एक बार यह सब इकट्ठे होकर भगवान प्रजापति के पास पहुंचे । और हाथ जोड कर प्रजापति भगवान से सब प्रार्थना करने लगे ।

देवता असुर पितर मनुष्य और पशु सब हाथ जोड कर खडे है और

भगवान प्रजापति से प्रार्थना करते है । 'देहि यथाजीवामः' हे भगवन हम लोग क्या चाहते हैं ? 'देहि यथा जीवामः' आप हमारे लिए अन्न और प्रकाश दो चीजों की व्यवस्था कर दीजिए । सब जीवों को यह चाहिए । सब मिल कर बोलने लगे । भगवान प्रजापति ने कहा, एक २ कर के बोलो । असुर तो हट्टे कट्टे थे शरीर से खट् आगे आ गये । हे भगवन हमारे लिए बोलो । भगवान ने कहा जरा अपना डील डौल तो देखो । पहले जो तुम्हारी अपेक्षा कमजोर है, उन की व्यवस्था होनी चाहिए । तुम्हारी व्यवस्था सब से पीछे होगी । देवता आकर खडे हो गये । "देहि" हे भगवन हमारे लिए कुछ करो । हम असुरों से तो कमजोर है । भगवान बोले 'हुतं प्रहुतं अन्ने' तुम्हारे लिए यज्ञ मे जो हुत और प्रहुत आहुतियाँ दी जाती है वो तुम्हारा अन्न है । सूर्य तुम्हारा प्रकाश है । देवताओं को कह दिया । देवता चुप हो गये । पितर कहने लगे, भगवन हमारे लिए भी अन्न और प्रकाश की व्यवस्था होनी चाहिए । तुम्हारे लिए महीने में एक बार खाने को मिलेगा । पितरों के लिए स्वधा । 'पितृभ्यः स्वधा' अमावस्या के दिन खाने को मिलेगा और चन्द्रमा तुम्हारा प्रकाश हैं । तीसरा नम्बर मनुष्यों का आ गया । मनुष्यों ने कहा भगवन हमारे लिए भी प्रकाश और अन्न की व्यवस्था होनी चाहिए । मनुष्यों के लिए भगवान प्रजापति कहते है 'नमः अन्नम् अग्निः प्रकाशः' तुम्हारे लिए अन्न क्या है ? नमः अन्नः याद रखो मनुष्यों के लिए, यह बात समझने की है नमः जो है यही भोजन है । नमः का अर्थ है नमस्कार । मनुष्य ऐसी सद्गुणी बने, ऐसी सत्कर्मा बने, ऐसी सद् ज्ञानी बने जिससे दूसरे लोग उस का सम्मान करें । तब नमः उनका भोजन बनेगा । और दूसरे लोग तिरस्कार करे अपमान करें, घृणा करे तो उनको भोजन नहीं मिलेगा । इसलिए मनुष्य का कर्त्तव्य है कि सुन्दर गुणों चयन करे । सुन्दर कर्म को पकडें । सुन्दर ज्ञान को पकडें । जिससे लोक परलोक मे उसका सम्मान बढे । इसलिए मनुष्य के लिए कहा नमः अन्न अग्नि प्रकाशः । अग्नि के बिना मनुष्य रह नहीं सकता । अग्नि उसका प्रकाश कहा । मनुष्य कों अग्नि मिलना चाहिए । मनुष्य के सुकर्मो का विस्तार होते रहना चाहिए । अच्छे गुणो का विस्तार होते रहना चाहिए । अच्छे ज्ञान का विस्तार होते रहना चाहिए । नहीं तो यह मनुष्य अपने मनु भाव से नीचे गिर जाएगा । मनुष्य का अर्थ क्या ? मनुष्य 'मनो अपत्यानि' मनु नाम का

प्रजापति उस की सन्तान 'अपत्यानि मनुष्य । जो मनन शील है वो मनुष्य । मनन किसका करना है ? सांसारिक भोगों का नहीं । अपने २ भोगों का विचार तो सब करते हैं । पशु पक्षी भी करते है । बल्कि हम लोगों की अपेक्षा इन पक्षियों का अच्छा है । यहाँ तक कि जंगल का राजा जो शेर है न, वो भी बडा है । शेर को भी भूख लगती है और वो भी मारकिटिंग करने के लिए जंगल चल पडता है । देखता है कि कहाँ रखा है हमारा ? देखा, एक पेड़ पर लाल मुंह के बन्दर भरे पडे हैं । उसका भोजन ही है । शेर उस बृक्ष के नीचे जमीन मे नाक देकर फुंकार मारता है । तीन चार वार ऐसा किया तो पेड़ से बन्दर ऐसे टपकते हैं जैसे पके हुए आम गिरते है । ज्यों ही बन्दर पेड़ से नीचे टपके एक को मारेगा, ज्यादा को नहीं । टपकने को तो बीसों टपक गये लेकिन वो एक दो का ही कोका कोला पीएगा कोका कोला तो उसने पी लिया बाकी घरवाली के लिए ले गया । उसे भी तो खिलाना पडेंगा । वो बिचारी भी तो भूखी है । बच्चे भी हैं उसके । पर देखो कितना व्यवस्थित नियम है । अगर चाहता तो सबको मार सकता था, किन्तु नहीं मारा । प्रकृति का नियंत्रण है उस पर । सबको नहीं मारेगा । एक दो को ही मारेगा । जितनी जरूरत है उतना ही मारेगा । उससे ज्यादा नहीं । उतना मारा बस खतम । सोचो लोभी भी है किन्तु लोभ का भी कंट्रोल है ।

इधर मनुष्य प्राणी के क्या हाल हैं । जितना इसको खाने मिलता है उससे ज्यादा यह इकट्ठा करना चाहता है । इसकी वासना का अन्त नहीं । वासना बढाता जा रहा है । अगर ऐसा हीं ज्ञान पशुओं के अन्दर होता तो सोचो जैसा मनुष्यों ने बैंक खोल रखे हैं, खाया सो खाया बाकी बैंक मे जमा । ऐसा ही यदि पशु पक्षी भी करने लगे तो हालत क्या होगी संसार की । मनुष्य को समझना पडेंगा कि हमारे अन्दर गुणों की वृद्धि कैसे हो ? हम क्या मनन करें । भोगों का मनन तो पशु पक्षी भी कर रहे हैं । अगर मनुष्य भी अपने भोग का ही मनन करे तो यह पशुओं की पंक्ति मे ही बैठा हुआ है । उससे ऊपर नहीं । मनुष्य तो वो है जो 'उसका' मनन करे जिसके बिना यह जी नहीं सके । अन्तरात्मा यदि न हो तो, यदि अन्तरात्मा नाम का मनु न हो तो इस शरीर का क्या हाल होगा ? भले ही यह हाथी जितना बल रखता हो उतना बल भी शरीर मे क्यों न हो, आत्मा

न हो तो धडाम मे गिर जाएगा । इसलिए कहां आत्मा का मनन करने से ही मनुष्य बनता है 'मननात् मनुष्यः' उसीका मनन करने से मनुष्य है, इसलिए उस की ही मनन करो ।

जो भेद दर्शन करता है, यह मैं और यह मेरा, यह मेरा और यह तेरा । ऐसा जो भेद करता है । जो वास्तव मे इसका है उसको तो देखता नहीं और जो इसका नहीं है उनको बडा मानता है । जो है उसको देखता नहीं और जो नहीं है उसीको देखता है । जैसे अपने शरीर मे ही समझो । इस शरीर मे जो सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है उस आत्मा की ओर तो ध्यान नहीं देता और इस हड्डी मांस के थैले की ही तोलता चला जा रहा है । स्टेशन पर भी जाएगा तो झट कांटे पर खडा हो जाएगा । कोई कहेगा अस्सी किलो कोई कहेगा पचास kg कोई पच्चीस kg ही है कहेगा बहुत कम है । विवेकशील मनुष्य को इस आत्मा से दोस्ती करनी पडेगी । तब नमः इसका जो अन्न है, भगवान प्रजापति ने इसके लिए जिस नमः नाम के अन्न का निर्देश किया है । वो इसको मिलेगा । नमः शब्द का अर्थ है इसको सम्मान मिलना चाहिए । कहा भी है 'मानम्हि महतः धनम्' मान ही धन है । बाहर का धन, धन नहीं । अगर समाज मे मान नहीं रहा, राष्ट्र मे मान नहीं रहा, जाति मे मान नहीं रहा तो तुम्हारे पास क्या है ? 'नमः इति अन्नं' भगवान प्रजापति ने नमः अन्नं का निर्देश किया है, किन्तु यह नमः रूपी अन्न तभी मिलेगा जब तुम इस तत्त्व को समझोगे । इसका मनन करोगे । बृहदारण्यक उपनिषद् में महर्षि याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी को इस तत्त्व का उपदेश किया । मैत्रेयी को उपदेश करते हुए कहते हैं "ब्रह्म.........

वेदान वेद.........

वेदान वेद.........

भूतानि भेद.........

इदं ब्रह्म.........

इमानि सूर्याणि भूतानि यद्यमात्मा"

यहाँ ब्रह्म शब्द का अर्थ है ब्राह्मण जाति । जो ब्राह्मण जाति को अपने से जुदा कर

के देखेगा तो वो जाति उसको तिरस्कृत कर देगी। भेद दर्शन ही तो अपमान है, और अपमान क्या है ? अपने पारिवारिक जीवन मे ही समझो। माता पिता भाई पुत्र पुत्री है, अगर किसी मे भी भेद बुद्धि आ जाएगी तो उसको अपने से जुदा समझोगे और परस्पर जीवन का सुख खत्म हो जाएगा। झगडा हो जाएगा। मां अपने जवान बेटे के अन्दर अगर कहीं शका कर बैठे कि मेरा लडका बिगड गया है। अगर उसको कहीं शंका हो गई तो अपनी चूडियाँ छिपा कर रखेगी। कभीर मौके पर पहनेगी और ताला लगा कर बक्से मे रखेगी। जो तुम्हारे शरीर से प्रकट हुआ वो अब तुम्हारा चोर हो गया। भेद होने के कारण वो चोर हो गया। उसको मां प्यारी नही। मां को बेटा प्यारा नहीं। पुत्र को पिता प्यारा। पिताको पुत्र प्यारा नहीं। इसलिए भेदको हटाओ। भेद ही तिरस्कार का हेतु है। 'ब्रह्म तं पुरादात्' क्षत्रिय जाति इसका तिरस्कार करेगी। जो इस क्षत्रिय जाति को अपने से अलग मानेगा। क्षत्रिय को जो अपने से जुदा मानेगा यह उसका तिरस्कार करेगा। वेदादि शास्त्र को जो अपने से जुदा मानेगा यह वेदादि शास्त्र उसका तिरस्कार करेगा। विद्या जीवित तत्त्व है। विद्या को क्या केवल अक्षर जानते हो या केवल शब्द ही है। इस विद्या को जो अपने से जुदा मानेगा यह विद्या उसका तिरस्कार करेगी।

'लोका अन्यत्र लोकानुवेद' यह जो लोक है, दूसरे प्राणी समझो, इनको अपने से भिन्न कर के जो देखेगा, यह उस प्राणी का तिरस्कार करेंगे। जो इनको अपनी आत्मा के रूप मे देखेगा, उसका सब मान करेंगे। यह भूत उसका तिरस्कार करेंगे जो इन भूतों को अपने से अलग समझेगा।

और तो क्या है, यह जो कुछ भी है 'इदं क्षत्रं इदं ब्रह्म इमं लोका इमे वेदा इमानि भूतानि इदं सर्वं यदमयात्मा' मंत्र संग्रह कर के सब कुछ एक बात मे बोल रहा है कि यह जो आत्मा है यही सब कुछ है। इसका एक अर्थ स्पष्ट रूप मे यह समझो कि यह जो कुछ भी है, सबका सब जो भी नाम रूप है। यह शरीर है, यह हमारा ही शरीर तो इतने आकार मे तो हमारी बुद्धि घूम ही रही है, इसलिए इस शरीर को ही सब कुछ मान कर हम लोग मस्ती से चलते हैं किन्तु

पशु भी अपने इतने से शरीर को ही मान कर चलने वाला ह । हमने भी इतने शरीर को ही आत्मा माना तो हमारे मानने मे और पशु के मानने में फर्क क्या हुआ ? क्यों हमको मनुष्य कहते है ? क्यों हमको ज्ञानवान् कहाँ ? उसको पशु क्यों कहें ? इसलिए इस शरीर की आत्मा को इस शरीर के आकार से बाहर निकलो । और इसको समष्टि नाम रूप की जो आत्मा है उसके हाथ जोडो । वो तुम्हारा राग जाएगा, तुम्हारा द्वेष जाएगा । तुम्हारे मन मे जो मिथ्या विकार विकार है वो ठंडे हो जाएगे । फिर पीछे तुमको शान्ति क्यों नहीं मिलेगी । एक घर के अन्दर मान लो 15, 20 आदमी हैं बडा परिवार है । उस परिवार के अन्दर एक ऐसा है जो सब को अपना ही रूप देखता है । कोई चीज उसको मिलती तो वह सब मे बांट कर खाता है । तो सारे घर के प्राणी उसका ख्याल रखते है कि देखो उसने खाया कि नहीं ? एक ऐसा है जो पाते ही गप्प कर जाता है चाहे वह कोई भी तो उसको कोई नहीं पूछेगा । सब कहेंगे वो तो पेटू है । पेटू तो अपना ही ख्याल करेगा । किन्तु जो दूसरों को खिला कर खाता है उसका सब ध्यान रखेंगे । इसलिए शरीर के आकार की महिमा नहीं । महिमा तो तुम्हारी है । प्रतिष्ठा तो तुम्हारी है । इसलिए मनुष्य जो बुद्धिमान प्राणी है उसके लिए कहा 'नमः इति अन्नम्' मान ही इसका भोजन है । यह नमः मनुष्य का अन्न है । और प्रतीक्षा पशु भी खडें के । कहने लगे हम भी तो आपके बेटे हैं । लम्बी पूंछ लटका कर कान फटकार रहे हैं । सींग लगे हैं । भगवान प्रजापति ने पूछा क्या बात है ? बोले भगवन हम लोगों को भी अन्न दो, प्रकाश दो । भगवान प्रजापति बोले । तुम्हारे खाने पर कोई कंट्रोल नहीं । जब भूख लगे और जब मिले तभी खाना शुरु कर दो । चाहे रात्रि के बारह बजे हों चाहे दिन के । तुम्हारे लिए कोई नियम नहीं । मनुष्यों से कहा तुम्हारे को दो बार खाने को मिलेगा । चौबीस घण्टे मे दो बार । पितरों को कहा एक महीने मे एक बार अमावस्या के दिन खाने को मिलेगा । देवताओं से कहा तुम्हारे लिए हुत और प्रहुत है । मंत्र की आहुति ही तुम्हारा अन्न है और पशुओं से कहा तुम्हे पूरी छुट्टी है तुम जब मिले तभी शुरु कर दो । यथा कामं यथारुचिः । तुम्हारे लिए कोई काल बन्धन नहीं । कोई नियम नहीं । उन्होने कहा भगवन हमारा प्रकाश क्या होगा । बोले यह प्रज्ञाशील मानव हो तुम्हारा प्रकाश है । देखते नही हो मनुष्य सब पशुओं को

अपने वश में कर लेता है। गाय को अपने बस मे कर लेता है। भैंस को अपने वश मे कर लेता है। उससे जन्मा बच्चा, यह बताओ दूध बच्चे का है कि तुम्हारा ? किसी भी मां का दूध है, वो उस के बच्चे का ही है। बच्चे को स्तन दिखा देते है और दिखा कर उसको तो पीछे बांध दिया। बछडा तों दूर हो गया और अपने एवज मे बछडा बन जाते है। हंडी फंसा कर दूध निकाल लेते हैं। गाय का दूध निकाल लिया। दयालु होने से थोडा सा उसके लिए छोंड देते हैं। उसको घास भूसा भी खिलाते है एवज मे। पानी दिया। उसका बछडा बेचारा ताकता रहता है। इस प्रकार कहा कि मनुष्य तुम्हारा प्रकाश है।

असुरो ने कहा हे भगवन बडी उदारता से आपने सबकों बांटा। हम प्रतीक्षा मे बैठे हैं। हमको क्या मिला ? भगवान प्रजापति कहने लगे, तुम्हारे लिए तो मैंने बडे सुन्दर अन्न की व्यवस्था की है। तुम्हारे अनुरूप ही व्यवस्था किया। काम, क्रोध, लोंभ मोह, दम्भ, पाखण्ड, ईर्ष्या, द्वेष यह सब तुम्हारा भोजन है। असुरों को देखो, कितना हसुआ मिला। महाघोर अन्धकार ही तुम्हारा प्रकाश है। असुर तो प्रसन्न होकर नाचने लगे। हमारे लिए तो सबसे अच्छी व्यवस्था किया। दुनियाँ मे जितने बुरे काम है, लोग छिप कर करते हैं। अंधेरे मे करते हैं कि प्रकाश मे करते है ? अंधेरे मे छिप कर ही करते हैं। पाखण्ड, दम्भ जो भी है दूसरे की आंख बचा कर करता है। यह आसुरी वृति है। आत्मा के पतन के लिए है। बुद्धिमान इस आसुरी प्रकृति से बचने की कोंशिश करे। आसुरी वृति से बचने की कोशिश करेगा तों देववृत्ति मे आ जाएगा। आत्मा के यथा स्वरूप को बोंध होगा।

यह आत्मा सत् चित् आनन्द स्वरूप है। इसकों जन्म मरण वाला मान लिया। जिसके अन्दर जन्म मरण है नहीं, उसकों जन्म मरण शील मान लिया। उसका birth day मनाना शुरु कर दिया। कहते हैं आज हमारा birthday है। यह बताओं जब birth हुआ था तब तुम वहाँ थे कि नहीं ? तों birth day तुम्हारे होने पर ही मनाया गया कि नहीं होने पर मनाया गया। जब तुम वहाँ पहले ही थे तों जन्म किसका हुआ ? जो नहीं था उसका या जों था उसका? तो कहना पडेगा कि जन्म तों हुआ शरीर का किन्तु अज्ञानी जीव उस शरीर कों

ही अपना रूप मान बैठता है यही गडबड है । उस शरीर को मार पडती है कर्मों की और उस मार से यह दुःखी हो जाता है । कौन सा बडा पाप इससे नहीं हुआ सबसे बडा पाप है इस आत्मा को न समझना । 'चौरेण आत्महारिणा' दूसरे की चोरी करना, थोडा सा पैसा किसी का चुरा लेना यह कोई बडी चोरी नहीं है । किन्तु किसी की आत्मा की चोरी कर के चल देवे तो है न बडा पाप ? श्रुति कहती है तेरी आत्मा सत् चित् आनन्द स्वरूप है । इसके स्वरूप को समझा नहीं । माने इस आत्मा की चोरी किया । यही आत्मा की चोरी है कि इस आत्मा के स्वरूप को नहीं जाना । किसी का थोडा सा धन चुरा लिया । अब जंगल में इधर उधर मारा २ फिरता है । चोरी किया । थोडा धन तो उसके हाथ गया किन्तु अपने बच्चों के बीच मे बैठ कर दो रोटी भी नहीं खा सकता । मारे २ भटकता है इधर उधर । इसी तरह जो इस आत्मा को नहीं समझेगा । नाना प्रकार के भोगों मे ही आसक्त रहेगा, वो कभी पशु बनेगा, कभी पक्षी बनेगा, कीट पतंग बनेगा । मारा २ भटकेगा । कभी किसी योनि मे जाएगा तो कभी किसी योनि मे जाएगा । यह मारे २ भटकना नहीं तो क्या है ? आत्मा रूपी धन को चुरा कर कर यह भाग रहा है । इसलिए मंत्र कहता है आत्मा रूपी धन का हरण करने यह चोर है ।

'किं तेन कृतं पापं चौरेणा आत्महारिणा' इसने कौन पाप नहीं कमाया । बडे से बडा पाप कर डाला । आप लोग भाग्यशाली मुमुक्षु हो आप लोग इस आत्मा के रहस्य को समझने के लिए प्रयत्नशील हो । यहाँ आते हो कि हमको समझाओ । यह कम भाग्य की बात नहीं है । यह सब से बडा पुरुषार्थ है जीवन का । बाकी रोना गाना तो है ही । कहां नहीं गाता रोता यह जीव । भोग मे कभी पड जाने पर जीव स्वर्ग मे भी रोता है । वो कोई महत्त्व की बात नहीं ।

इस प्रकार यह जो असुर है यह दम्भ पाखण्ड छल कपट नाना प्रकार का जो अज्ञान रूपी अन्धकार है उस अन्धकार मे यह भटकते फिरते है । मनुष्य सावधानी से इस आत्मा की ओर चले । इस असुरी वृत्ति से ऊपर उठे । यहाँ पर भगवान प्रजापति कहते है 'आत्मनात्माऽन्वेष्टव्यः विजिज्ञासितव्यः' इस आत्मा की

बुद्धिमान खोज करे। यही एक नियम है। इस आत्मा की विजिज्ञासा करे। शास्त्र से श्रुति से, बुद्धिमान आचार्य से। ब्रह्म वेत्ता की शरण में जाकर इस आत्मा की खोज करे। जब तक आचार्य के मुख से सुनोगे नहीं, नियम से नहीं सुनोगे नहीं यह ब्रह्मविद्या तुम्हारे अन्दर प्रकट नहीं होगी।

इसलिए जिज्ञासा करो। इसको जरुर सुनो। ऐसा जो आत्मा को जानने वाला है 'स सर्वांश्च कामान् सर्वांश्च लोकानाप्नोति' वो सम्पूर्ण लोको को प्राप्त करता है। सम्पूर्ण भोगों को पा जाता है। इस अंश में देवता और असुर दोनों ही बराबर हैं। सब चाहते हैं कि सारे भोग हमको मिल जाएँ। किन्तु यहाँ वह अभिप्राय नहीं कि तुमको सारी दुनियाँ मिल जाएगी। जब तुम इस ब्रह्म को आत्म रूप कर के जान जाओगे तब तुम ब्रह्माण्डात्मा बन जाओगे। यह तुम्हारी आत्मा ब्रह्माण्डात्मा ही है। जैसे तुम शरीर की आत्मा बने तो यह शरीर तुम्हारा बन गया ऐसे ही तुम्हारी सत्ता मे जी रहा है कि नहीं? इसी प्रकार जब तुम ब्रह्माण्डात्मा बन जाओगे तो ब्रह्माण्ड तुम्हारा शरीर हो जाएगा। और तुम अल्प परिच्छेद से बाहर हो जाओगे। यही तुम्हारा मोक्ष है। अब इस रहस्य को आगे स्पष्ट करेंगे। अब सीधे होकर बैठो।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२-६-८८

प्रवचन सं०-५५

"ॐ य आत्माऽपहत पाप्मा विजरोविमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसङ्कल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्यः स सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामान्यस्तमात्मानमनुविद्य विजानातीति ह प्रजापतिरुवाच । ॐ तद्धोभये देवासुरा अनुबुबुधिरे ते होचुर्हन्त तमात्मानमन्विच्छामो यमात्मानमन्विष्य सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामानितीन्द्रो हैव देवानामभि प्रवव्राज विरोचनोऽसुराणां तौ हासंविदानावेव समित्पाणी प्रजापतिसकाशमाजग्मतुः । ॐ तौ ह द्वात्रिंशतं वर्षाणि ब्रह्मचर्यमूषतुस्तौ ह प्रजापतिरुवाच किमिच्छन्ताववास्तमिति तौ होचतुर्य आत्माऽपहत पाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसङ्कल्पः सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्यः स सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामान्यस्तमात्मानमनुविद्य विजानातीति भगवतो वचो वेदयन्ते तमिच्छन्तावावास्तमिति ।।"

(छान्दो ८-७-१।८-७-२।८-७-३)

भगवान प्रजापति ब्रह्मा ने सोचा कि हमारी सन्तान जो यह देव असुर और मनुष्य है, इनके अन्दर वो विद्या प्रकट होनी चाहिए जिस विद्या से इनका मोक्ष हो जाए। गिरने के लिए कोई प्रयत्न करना नहीं पड़ता किन्तु उठने के लिए तो प्रयत्न करना पड़ता है। संसार मे जो जरा जन्म मरण है इसके लिए तो कुछ नहीं करना पड़ता। इस शरीर के अन्दर, हम लोग इतने यहाँ बैठे हैं, अच्छी उमर भोग कर बैठे हैं, क्या बुढ्ढा होने के लिए कहीं जाने की जरूरत है? अमुक जगह में जाने से बुढापा आ जाता है। किसी देश मे जाने से यदि बुढापा आता हो तो वहाँ कौन जाएगा? कोई भी वहाँ जाने के लिए तैयार नहीं होगा। दूर से ही नमस्कार करेंगे। क्या ऐसा भी कोई देश है जहाँ बुढ्ढे हो ही नहीं। सभी देशों मे बच्चे होते हैं, सभी देशों मे जवान होते हैं और सभी देशों मे बुढ्ढे भी होते है। बूढा होने के लिए कोई प्रयत्न करने की जरूरत नहीं।

बुढ्ढा होने का अर्थ क्या है? यहाँ से गायब हो जाना। आयु से Scene drop हो गया film खत्म हो गई अब कहाँ जाओगे? भगवान प्रजापति ने सोचा कि बार २ जन्म लेना, बार २ मरना। पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनं' आचार्य कहते है बार २ जन्म लेना, बार २ मरना और बार २ मां की गोद मे जाकर सो जाना अच्छी मां मिल गई तो ठीक है किन्तु यदि मां सींग पूंछ वाली तो तुम तो बेटे का क्या हाल होगा? वो ही हाल होगा वो भी सींग पूंछ लगा कर आएगा। इसलिए भगवान प्रजापति ने इस बात का निश्चय किया कि इस प्राणी जगत के अन्दर एक ऐसी विद्या भी होनी चाहिए जिसे पकड श्रद्धाशील मुमुक्षु इस संसार सागर से पार हो जाए। इस जन्म मरण के चक्कर से दूर हो जाएगा। इसलिए भगवान प्रजापति ने इस आत्म विद्या का उपदेश किया। इस संसार मे कोई अच्छी चीज हो या बुरी, साक्षात् कोई किसी से भले ही न बोले तो भी करण परम्परा से आ जाती है।

भगवान प्रजापति ने जिस समय इस आत्मविद्या का उपदेश किया 'य आत्माऽपहतपाप्मा' तो साक्षात् देवताओं को नहीं कहा। असुरों को भी नहीं कहा। तो भी करण परम्परा से उनके पास पहुंच गई कि भगवान प्रजापति ने ऐसी विद्या की घोषणा है कि जिसके पा जाने से 'सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामान्' सम्पूर्ण

लोकों की सिद्धि हो जाएगी । सम्पूर्ण भोगों की सिद्धि हो जाएगी । ऐसी वो श्रेष्ठ विद्या है ।इसलिए कहा 'तद्धोभये देवा असुरा अनुबुबुधिरे' मंत्र कहता है कि भगवान प्रजापति ने जो कहा, उस घोषणा को देवों और असुरों, दोनों ने सुना । देव और असुर कर्ण परम्परा से इस बात को समझ गये कि ऐसी विद्या है जिस विद्या के आने से सम्पूर्ण भोगों और सम्पूर्ण लोकों की सिद्धि हो जाती है । संक्षेप मे एक बात समझो, जीव की हार्दिक इच्छा क्या है ? जीव की हार्दिक इच्छा है कि सम्पूर्ण जगत के सम्पूर्ण भोग हमारी मुट्ठी मे आ जाएँ । यह जीव की बडी इच्छा है । आज भी ऐसे लोग हैं जो यह चाहते हैं कि यह सारे लोक हमारी मुठ्ठी मे आ जाएँ तो बतालाओ कि देवताओं से बडा और असुरों से बडा महत्त्वाकांक्षी कौन होगा इस दुनियाँ मे ? सब पर हावी होने की इच्छा होती है इनकी आज भी है ही । अमरीका रशिया पर हावी हो रहा है । रशिया अमरीका हावी हो रहा है । सारे world पर छा रहे है ये लोग कि हमारी मुट्ठी से बाहर कोई नहीं जावे । देवताओं ने और असुरों ने भी सुना कि ऐसी वो अद्भुत विद्या है । जिसके पाने से सम्पूर्ण लोक हमारे हो जाएगें, सम्पूर्ण भोग हमारे हो जाएंगे । उस विद्या को जरूर सीखना चाहिए । सीखने के लिए देवताओं ने भी इच्छा किया कि उस आत्मा को अवश्य जान लेना चाहिए । जिससे सम्पूर्ण लोकों की और सम्पूर्ण भोगों की सिद्धि हो जाएगी । उसको जरूर प्राप्त कर लेना चाहिए ।

अब समस्या यह आई कि जब तक भगवान प्रजापति की शरण में नहीं जाएंगे । तब तक यह विद्या मिलने वाली नहीं है ब्रह्मसूत्र के भाष्य मे आद्य गुरु शंकराचार्य ने लिखा है ।

'मेधावी सन्नपि स्वतंत्रेण, ब्रह्मन्वेषणं न कुर्यात्' कोई बडा बुद्धिमान भी भी हो तों भी स्वतंत्र ब्रह्म की खोज नहीं । करना चाहिए । माने गुरु मुख से उपनिषद् विद्या का श्रवण करो पहले गुरुमुख से उपनिषद विद्या का श्रवण करोगे तो यह विद्या फलेगी । यूं कहो कि गीता प्रेस गोरखपुर की पुस्तक उठाई और लगे उपनिषद् पढने, तो उससे काम नहीं चलेगा । इसलिए यहाँ देवता विचार करते है कि जब तक इस विद्या को हम लोग सीखेंगे नहीं, हमारे सम्पूर्ण भोग अपूर्णं है । हमारी सम्पूर्ण इच्छाएं अपूर्ण हैं । इसलिए भगवान

प्रजापति ब्रह्मा के पास चले । किन्तु यदि सब के सब चल पड़ेंगे तो वहाँ इतनी जगह नहीं है। असुरों में भी यह बात आगई। असुरों ने भी सोचा कि इस विद्या को सीखना तो जरूर है किन्तु असुर भी यदि सबके सब चल पड़ेंगे तो वहाँ इतनी जगह नहीं होगी। असुरों मे प्रधान असुरों का राजा विरोचन है। देवताओं में प्रधान इन्द्र है। जो लीडर होता है उसीको आगे चलना पड़ता है। देवताओं ने इन्द्र से कहा कि आप जाओ और इस विद्या को सीख कर आओ। और अब हम लोगों को आकर समझाओ। इसी प्रकार असुरों ने विरोचन से कहा कि आप जाओ और इस विद्या का पता लगाओ 'इन्द्रो ह वै देवानामभिप्रवव्राज विरोचनोऽसुराणां तौ हाऽसंविदानावेव समित्पाणी प्रजापतिसकाशमाजग्मतुः।' श्रुति में आया 'तौ ह समित्पाणी' जैसे गुरु की शरण जाता है शिष्य तो समित्पाणी होकर 'विनयेन गुरु अभिगन्तव्यः' कहते हैं बडी विनम्रता से गुरु की शरण में जाओ। 'ॐ ब्रह्म विद्या त्रैलोक्यादपिऽधिकतरः' इस ब्रह्म विद्या को ऋषि सारे जगत के, तीन लोकों के राज्य से भी अधिक महत्त्वशाली कहते हैं। इन्द्र को देखो, कितना बडा है देवलोक का राजा है। मामूली तो नहीं है किन्तु इस विद्या के लिए दीन बन गया है। और विरोचन भी कम नहीं है किन्तु इस विद्या के लिए वो भी दीन है। भाष्यकार व्याख्या करते हुए लिखते है 'विनयेन गुरुः अभिगन्तव्यः' गुरु की शरण में विनय पूर्वक जाओ त्रैलोकी का राज्य भी तुम्हारा है तो भी इस विद्या के विना तुम्हारे जीवन की value नहीं है क्योंकि शरीर के बल से तो शिशु भी जी रहा है। अगर तीन लोक का राज्य पाकर भी तुम केवल शरीर के बल से ही जीए तो तुम्हारे जीने मे और पशु के जीने मे क्या फर्क पडेगा। जब तुम इस आत्मा को जान जाओगे तीन लोकों से बाहर हो जाओगे। तीन लोकों मे तो जन्म है, जरा है, और मरण है। यह चालू रहेगा। इसको कौन रोकने वाला है। जरा जन्म मरण चलता ही रहेगा। उस अमृतत्व को पाने के लिए तीन लोको से बाहर ही जाना पडेगा। तीन लोकों से बाहर निकलोगे तो अमृतत्व मिलेगा। इसलिए गुरुशरणागति का विधान किया।

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो

निर्वेदमायान्नास्त्यकृतः कृतेन

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्

समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् ।।

तद्विज्ञानार्थं माने ब्रह्मविज्ञानार्थं । सारे ब्रह्माण्ड के अन्दर कोई सत्ता है तो चेतन आत्मा ही है । आत्मा से परे कोई सत्य चीज नहीं । सारी दुनियाँ मे खोज करो । जैसे अपना शरीर ही है । देखने में कितना सुन्दर है किन्तु अगर आत्मा इस मे नहीं तो मुर्दा कितना प्यारा है ? किसी ने मुर्दे को रखा है ? आज तक मुर्दे से किसी ने प्यार नहीं किया । बड़े २ प्यार करने वाले हुए इस दुनियाँ मे, किन्तु तभी तक प्यार किया जब तक वो सत्य इसके अन्दर दीखा । इसलिए इस सत्य को जानने के लिए श्रुति कहती है 'गुरुमेवभिगच्छेत्' गुरु की शरण मे जाने से ही यह बोध होगा । और कहीं जाने से नहीं होगा । यह अर्थ है 'गुरुमेवाभिगच्छेत्' गुरु उस विद्या को देगा जिस विद्या के पाने से तुम इस देहंकार से बाहर हो जाओगे । जैसे थोडी देर के लिए समझो, इस शरीर को एक गुफा समझो या इसको दूसरे शब्द मे रबर का थैला समझो । इस थैले के अन्दर घुस कर बैठे हो और उस भगवान के भक्त बन जाओ । तो भगवान को मिलने के लिए कहाँ बुलाओगे ? भगवान से बोलो कि हे भगवन हम इस रबर के थैले मे बन्द है ।तुम इसके अन्दर आकर मेरे से मिलो । यह बतलाओ कि भगवान की अकल क्या तुम से भी कम है ? तुम तो फंसे ही पडे हो, वो भी फंसे आकर ? सोचो, जो विश्वात्मा है, विश्व की आत्मा । वो इस छोटे से शरीर मे कैसे घुसेगा ? तो वो यही कहेगा कि तुम इस थैले से बाहर निकालो । हमसे मिल जाएगा । एक बात और । किसी आकाश को घडे के अन्दर भरो । बैठ कर यूं करो । कोई पूछे कि क्या कर रहे हो तो कहो आकाश को घडे के अन्दर भर रहा हूं । सुन कर क्या कहेगा कोई ? यही न कि कोई screw ढीला है । जैसे घट के अन्दर आकाश नहीं भरा जाएगा ऐसे ही तुम्हारा जो घडा है यह शरीर, इस शरीर के अन्दर उस विश्वात्मा को कैसे भर लोगे ? अगर तुमको इस विश्वात्मा से मिलना है तो उस घडे की सीमा से बाहर आना पडेगा । अब बाहर कैसे जाओगे ? इसे तोड कर तो आ नहीं सकोगे । तोड कर जाओगे तो मुश्किल पडेगी।इस देहाहंकार को इस विद्या से नष्ट करो । ब्रह्मविद्या, आत्मविद्या से इस शरीर के अहंकार को नष्ट कर दो । और

आत्मा के सत् चित् आनन्द स्वरूप का बोध प्राप्त करो । गुरु उस स्वरूप का बोध होता है । जब इस स्वरूप का बोध हो जाएगा तो तुम इस देहाहंकार से बाहर हो जाओगे । यह बात ठीक है कि यह शरीर एक दिन जवान था । जवान था तो जवानी का अहंकार था । किन्तु जब बुढापे मे गया तो जवानी का अहंकार अपने आप बादल की तरह उड जाता है । जब इस शरीर से हम जुदा हो जाएँगे तब तो शरीर का अहंकार छूट ही जाएगा किन्तु फिर जिस शरीर मे जाओगे वहाँ fit हो जाओगे । चूहे की तरह फंसता जा रहा है, छूटता जा रहा है । माया भगवती बडी चतुर है । अहं अहं जो कर रहा है चूहा नहीं तो क्या tiger है । माया ने चूहे दानियाँ रखी हैं ।

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं, पुनरपि जननी जठरे शयनं
इह संसारे खलु दुस्तारे, कृपया पारे पाहि मुरारे ।

कोई उपाय नहीं है । यह पुनः २ जन्म मरण का चक्कर है । इस से कोई मुक्त नहीं कर सकता । एक मात्र इसमे छूटने का साधन भगवच्छरणागति है । 'गुरु मुखाद्धिगाताहि विद्या साधिष्ठं प्रापत्' गुरु के मुख द्वारा जब इस विद्या को सुनोगे तो यह विद्या बलवती होगी ।

यहाँ इन्द्र और विरोचन भगवान प्रजापति के पास जैसे जिज्ञासु शिष्य गुरु के पास जाता है, ऐसे ही दोनों के दोनों चले जा रहे हैं । किन्तु एक देवता है और दूसरा है असुर । दोनों जा रहे हैं । इन्द्र ने देखा, विरोचन है । विरोचन स्वभाव से ही देवताओं का शत्रु । विरोचन ने देखा कि इन्द्र जा रहा है । इन्द्र स्वभाव से ही असुरों का दुश्मन । तो दुश्मन तो दोनों है किन्तु समझ गये कि जिस विद्या को हम सीखने जा रहे हैं इसी विद्या को सीखने के लिए यह भी जा रहे है । इसलिए दोनों हृदय से जो वैर था, जो ईर्ष्या थी, जो द्वेष था वो एक दम ठंडा हो गया । इसका अर्थ है कि इस आत्मविद्या को पाने से चित्त में शान्ति होगी । आत्मविद्या की ओर जब सङ्कल्प होगा तो संसार मे सत् और असत् का विवेक होगा । सत् असत् का विवेक होने से चित्त मे वैराग्य उत्पन्न होगा । यह सारे संसार के भोग हमारे लिए ही नहीं है ऐसी भावना उत्पन्न होगी और चित्त सत् की ओर झुकेगा । असत् से दूर हटेगा । यदि यह कहो कि अपने आप ऐसा

हो जाएगा तो अपने आप क्या होगा ?

चर्मवद् यदाकाशं वेष्टयन्ति मानवा:
तदायव अविद्याया दुखस्यान्तो भविष्यति ।

श्रुति कहती है अगर तुम ऐसा सोचो कि दु:ख का अन्त अपने आप हो जाएगा, उस परमात्मा को जानने की जरूरत नहीं तो कितना बड़ा सिद्ध भी हो किन्तु अगर वह कहे कि इस आकाश को चमडे की तरह लपेट कर बगल मे दबा लेगा तो क्या यह सम्भव है ? कोई इतना बड़ा सिद्ध आज तक विश्व के इतिहास में हुआ नहीं । इसलिए असम्भव कल्पना नहीं करो जीवन में । सम्भव कल्पना कर के सत्य की खोज करो । जो कभी होने वाला नहीं उस की कल्पना मत करो । कब तक कोरी कल्पनाओं से अपने को खुश करते रहोगे ? ऐसी इच्छा मत करो कि आकाश को हम चर्मवत् लपेट कर बगल में दबा कर चल देंगे ।

अन्यथा सन्तमात्मानम् अन्यथा या प्रतिपद्यते
किं ते न कृतं पापं चौरेणाआत्महारिणा ।।

श्रुति कहती है यह तेरी जो आत्मा है सत्‌ चित्‌ आनन्द स्वरूप । इसका स्वरूप है कुछ, और तुमने समझ लिया है कुछ और इसके असली स्वरूप को न समझ कर नकली स्वरूप को समझ लिया तो क्या होगा ? जैसे कोई असली हीरा है । उसके असली स्वरूप को नहीं समझें तो वो हीरा हमारे हाथ से निकल जाएगा । दूसरा जो जानकार है वो ले लेगा और हम खाली के खाली रह जाएँगे । इस तरह तुम आत्मा की चोरी करोगे तो तुम आत्मा के चोर बनोगे । क्यों ? इसके स्वरूप को तुमने समझा नहीं और इसको लिए २ इधर से उधर घूम रहे हो । नाना योनियों में भटक रहे हो । कभी इस गुफा में छिप जाओ कभी उस गुफा में छिप जाओ । इन नाना योनियों को क्या समझो ? नाना योनियों की जो मम्मीयां हैं, यह क्या है ? यह गुफा है पहाड की । यह जीव इन मे अपने को छिपा रहा है । यह तरह छिपता जा रहा है, मरता जा रहा है । कभी मनुष्य योनि मे, कभी पशु पक्षी योनि मे, कभी देवता भी बना । इस आत्मधन का जो चोर है 'किं ते न कृतं पापं' उसने कौन सा पाप नहीं किया ? कितना पापी है वह । विवेकशील बड़ी श्रद्धा से इस सत्‌ चित्‌ आनन्द स्वरूप आत्मा को जानने की इच्छा करे । आत्मा के बिना

कोई हमारा नहीं न हम किसी के प्यारे हैं। इस आत्मा की कृपा से ही हम किसी के प्यारे है और कोई हमारा प्यारा है।

इन्द्र यद्यपि महान शक्तिशाली है और देवताओं का राजा है। इधर विरोचन भी महान शक्तिशाली है। यह असुरों का राजा है। दोनों महान शक्ति शाली हैं और दोनों ही आत्मा को जानने के लिए भगवान प्रजापति की शरण गये। यद्यपि दोनों के हृदय मे एक दूसरे के प्रति इर्ष्या थी असुरों की इन्द्र के प्रति ईर्ष्या और इन्द्र की असुरों के प्रति ईर्ष्या। क्यो ? दैवी शक्ति और आसुरी शक्ति परस्पर एक दूसरे के ऊपर हावी होना चाहती हैं। इसलिए जो ईर्ष्या थी उनके अन्दर जो विरोध था एक दूसरे के प्रति, इस विद्या को सीखने का संकल्प करते ही वो द्वेष समाप्त हो गया। विरोध खत्म हो गया। 'द्वात्रिंशतं वर्षाणि ब्रह्मचर्यमुषतुस्तौ प्रजापतिरुवाच'

दोनों ब्रह्मलोक पहुंच गये। भगवान प्रजापति ने यूं घूर कर देखा। जैसे कोई असली बाप नहीं होता, छोकरे की गल्ती तो है पर यूं कहना नहीं चाहता कि तुमने गल्ती की है किन्तु उसको घूर कर देखता है। बेटा समझ जाता है कि पिता का मूड वजनदार है। प्रजापति समझ गये कि ये उस विद्या को सीखने आए हैं। उस आत्मविद्या को सीखने तो आए हैं किन्तु इनके हृदय मे नम्रता तो आई नहीं। इसलिए इनसे बात ही मत करो और इन्हें देखो कि यह हमारे यहाँ कैसे रहते हैं। इनके रहने के ढंग को देखो। यह यहाँ अपने २ ढंग से रहते हैं या हमारे ढंग से रहते हैं। प्रजापति ने उनसे बात ही किया। यह लोग क्या करें ? ब्रह्मचर्य धारण करके जैसे शिष्य गुरु कुल मे रहते हैं ऐसे नित्य नियम से रहने लगे। और तप करने लगे। आज कल लोग सुन कर घबरा जाएँगे कि कितना धैर्य था उनमे जो इस तरह वहाँ ब्रह्मचर्य धारण कर के पडे रहे। आज कल तो थोडा सा समय है सत्सङ्ग का, इतने सत्सङ्ग के time के लिए भी आना लोगों को बोझ लगता है। इन दोनों का क्या हाल हुआ इसके लिए श्रुति कहती है 'ॐ तौ ह द्वात्रिंशतं वर्षाणि ब्रह्मचर्यमुषतुस्तौ' वह वहाँ बत्तीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण कर के बैठे रहे। 'त्रिंश माने तीस द्वौ माने दो'। तीस और दो बत्तीस वर्ष तक इन्होंने ब्रह्म चर्य का पालन किया। भगवान प्रजापति ने इनकी ओर देखा ही

नहीं । क्यों ? कच्चे घडे का हिसाब पता नहीं चलता । कच्चे घडे को बजाओ तो आवाज नही निकलती और पके घडे को ठोको तो आवाज निकलेगी । भगवान प्रजापति समझ गये कि यह कच्चे चेले नहीं हैं । यह धैर्यशाली हैं, विद्या को धारण जिज्ञासु है । इनके अन्दर धीरज है । विद्या को धारण करने के लिए मनुष्य में धैर्य भी भी चाहिए । सीधी सी बात समझो, आज कल स्कूल कालेज मे जो विद्या पढाई जाती है । उस विद्या के बल से आजका बुद्धिमान आज भी संसार के जो बडे २ पद है, उन पदों पर हावी होकर बैठा है । वो विद्या जो उसने प्राप्त की है वह विद्या उसको सुन्दर से सुन्दर भोग, मान प्रतिष्ठा सब कुछ दे रही है। अगर यह विद्या उसके पास नहीं होती तो उस फुट पाथिया भाई, जो फुट पाथ पर बैठा है और रोटी मांग कर खा रहा हैं मे और इसमे क्या फर्क है । अगर यह छोकरा पढा लिखा नहीं होता तो यह क्या था ? उस विद्या के कारण ही देश ने, जाति ने, समाज ने उसका मान किया और विद्या की कृपा से ही यह ऊँचा पद पा गया ।

इस लोक कि विद्या तुमको इस लोक मे भोजन देगी । अध्यात्म विद्या तुमको मोक्ष देगी । तुम को भोजन भी देगी । भूखा नहीं मरने देगी । मान भी देगी, प्रतिष्ठा भी देगी । इससे ऊपर यह तुम्हें मोक्ष देगी । इसलिए यह अध्यात्म विद्या सब विद्याओं मे श्रेष्ठ है । भगवान गीता मे कहते है 'अध्यात्मविद्या विद्यानाम्' विद्याओ मे मैं अध्यात्म विद्या हूं । इसका अभिप्राय यह भी समझो कि भगवान की जिसके ऊपर कृपा होती है उसी को यह अध्यात्मविद्या मिलती है। अध्यात्मविद्या आत्मविद्या । इस आत्मविद्या के द्वारा यह ऊपर उठ जाएगा । स्वयं भगवान ने अर्जुन को इसका उपदेश किया । किन्तु सब जगह भगवान स्वयं तो प्रकट होता नहीं इसलिए गुरु की सृष्टि भी परमात्मा ने किया । जगत मे कोई गुरु भी चाहिए । कोई ब्रह्मवेत्ता चाहिए, जों जगत मे इन प्राणियों को समझावे । इसलिए उस ब्रह्मवेत्ता को भी महान कहा और गुरु की बडी स्तुति की । 'गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः' शास्त्रों ने उसकी महिमा का गान किया ।

ईस प्रकार यह इन्द्र और विरोचन दोनों बडे धैर्यवान् हैं । धैर्य्य को धारण कर के बैठे है । भगवान प्रजापति ने सोचा कि पूछो तो सही कि यह किस

अभिप्राय से आ कर बैठे है ? 'तौ ह उचतु:' इन्होंने भी सोचा कीं जब भगवान पूछ रहे हैं तो हमको बोलना चाहिए । 'भगवो वचो वेदयन्ते तमिच्छन्ताववास्ते-मिति' है भगवत आप की जो घोषणा हुई है ' या आत्माऽपहतपाप्मा' इस घोषणा को सुन कर हम आए हैं । ऐसी अमृतविद्या को पाने के लिए हम लोग आए हैं । आप अगर ऐसी विद्या की घोषणा नहीं करते तो हम लोग काहे कों आने वाले थे । इस वाणी को सुनने के लिए हम लोग बैंठे हैं । ब्रह्मचर्य्य को धारण किया है । आपने पूछा इसलिए हमने कह दिया नहीं तो और वैंठे रहते । भगवान प्रजापति ने कहा अच्छा है कि आप लोग तप कर के बैठे हो । हम भी आपको उपदेश करेंगें किन्तु आज नहीं । कल करेंगे ।

आज तो सीधे होकर बैठो और जोर से हरिः ॐ कहो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

३-६-८८

प्रवचन सं०-५६

"ॐ तौ ह द्वात्रिंशतं वर्षाणि ब्रह्मचर्यमूषतुस्तौ ह प्रजापति-रुवाच किमिच्छन्तावावास्तमिति तौ होचतुर्य आत्मापहत-पाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोकोविजिघत्सोऽपिपास: सत्यकाम: सत्यसंकल्प: सोऽन्वेष्टव्य: स विजिज्ञासितव्य: स सर्वाँश्च कामान्यस्तमात्मानमनुविद्य विजानातीति भगवतो वचो वेदयन्ते तमिच्छन्तावावास्तमिति ।।"

(छान्दो. ८-७-३)

प्रसंग आया देवताओं का राजा इन्द्र और असुरों का राजा विरोचन, इन दोनो ने भगवान प्रजापति की घोषणा सुनी 'यस्तमात्मानमनुविद्य विजानातीति' तो देवताओं मे और असुरों में बडी खलबली मच गई कि ऐसी विचित्र विद्या को अवश्य प्राप्त करना चाहिए । जिस विद्या को प्राप्त करने से 'सर्वान् लोकानाप्नोति सर्वाँश्च कामान्' तो सब तो जा नहीं सकते । देवताओं का प्रधान इन्द्र और असुरों का प्रधान विरोचन । दोनों को भगवान प्रजापति के पास जाना पड़ा । क्यों ? लीडर जो होता है उसे पहले गिरफ्तार किया जाता हे । चलो खोपडी भी बचेगी और जेल मे नाम भी होगा । सुरक्षित भी रहेंगे । यहाँ ऐसी खतरे की तो कोई बात नहीं थी किन्तु विद्या को जानने के लिए तप तो करना पडेगा । बत्तीस वर्ष

तक दोनों ने ब्रह्मचर्य धारण कर के तप किया। सेवा करते है और वहाँ रह कर विद्या की जिज्ञासा करते है। जैसे साधक गुरु के पास आश्रम में रह कर सेवा भी करते है और विद्या भी प्राप्त करते है हैं। भगवान प्रजापति ने बत्तीस वर्ष तक ही नहीं की। तुम्हारा खाने दाने का क्या प्रबन्ध है यह भी नहीं पूछा। कहोगे इतना अन्याय ? अन्यान की बात नहीं है। भगवान प्रजापति जानते हैं कि दोनों राजा हैं। दोनों महान ऐश्वर्य्यशाली हैं। इन्द्र भी कम नहीं, विरोचन भी कम नहीं। दोनों अहंकारी भी बहुत है। तो दोनों के अहंकार की dry clealing किया। सफाई तो करना पडेगी। जब तक अहंकार अन्दर है तो विद्या को जानने नहीं देता। इसलिए भगवान प्रजापति ने इनसे कोई बात ही नहीं किया। बत्तीस वर्ष में जाकर इनसे पूछा कि आप लोग यहाँ क्यों आए है ? क्या है ? यह लोग भी समझ गये कि भगवान प्रजापति प्रसन्न है हमारे ऊपर। तो कहने लग, भगवन आपकी वो बड़ी घोषणा कि जो इस महान आत्मा को जान जाएगा वह सब कुछ पा जाएगा, सम्पूर्ण लोकों को प्राप्त कर लेगा। हम लोग इसीलिए आए है। प्रसग से एक बात यह भी समझो कि जीव की वासना का इतना बड़ा जाल है कि आकाश भी छोटा हो जाता है उसकी वासना के आगे। जीव इच्छा करता है कि सम्पूर्ण भोगों पर हमारा अधिकार हो जाए। सारी दुनियाँ हमारी मुट्ठी में आ जाए। सम्पूर्ण ऐश्वर्य हमारा हो जाए। यह जीव की इच्छा है। किन्तु एक बात और समझो, यह सम्पूर्ण भोग और सम्पूर्ण ऐश्वर्य, जीव के ज्ञान मे नाम रूप ही है। किसको बस मे करना चाहता हे जीव ? नाम रूप को। जैसे माली सवेरे उठते ही सुन्दर बगीचे मे गया तो उसकी दृष्टि कहाँ थी ? खिले हुए जो सुन्दर पुष्प है उन पुष्पों पर है। कोई झाड़ सूख भी रहा है, उस झाड़ पर नजर नहीं है। नाम रूप पर ही नजर है क्योंकि वो जानता है कि नाम रूप हा मेरा भोग है। जीव की वासना भी नाम रूप में ही है और भगवान प्रजापति की घोषणा है 'सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामान्' 'तो भगवान प्रजापति का अन्दर से अभिप्राय यह था कि जो आत्मा में पहुंच जाएगा वो सम्पूर्ण लोकों मे पहुंच जाएगा। उसकी सम्पूर्ण वासनाओं को सिद्धि हो जाएगी। इसका अर्थ क्या है ? कि जो आत्मा मे पहूंच जाएगा वो सम्पूर्ण वासनाओं के जाल से बाहर हो जाएगा जब कोई वासना ही नहीं रहेगी तो कौन सी चीज चाहिए तुमको ? सारी

वासनाओं की पूर्ति से हो गई कि नहीं ? जब तुम आत्मा रूप ही हो गये तो कौन सा ऐसा लोक है जो आत्मा के बिना जी रहा है ? तुम सम्पूर्ण लोकों में पहुंच गये । सम्पूर्ण लोकों की तुम आत्मा बन गये । अभिप्राय तो यह था, किन्तु इस गूढ़ अभिप्राय को तो यह समझे नहीं । इन्होने समझा कि सम्पूर्ण भोग हमें मिल जाएंगे, सम्पूर्ण लोक हमारे हो जाएंगे । इस आत्मा को जान लेने पर यह सब कुछ हमारा हो जाएगा । सम्पूर्ण लोकों में हमारा राज्य हो जाएगा ।

इन्होंने प्रार्थना किया कि हे भगवन हमारे को यह आत्मविद्या समझाओ उस आत्मा को जानने के लिए हमने बत्तीस वर्ष तक महान तप किया है । छोटे मोटे किसी ने नहीं, देवराज इन्द्र ने और असुर राज विरोचन ने किया है ।इसलिए यह बडे तपस्वी हो गये है, शुद्ध कल्मष हो गये हैं । कल्मष नाम है पाप का । पाप से भी पवित्र हो गये हैं । 'तौ ह प्रजापतिरुवाच' भगवान प्रजापति उपदेश करते है । तुम दोनों सावधानी से ऐसा समझो 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यत एष आत्मेति होवा चैतदमृतमभयमेतद् ब्रह्मेत्यथ' इस आंख के अन्दर वो ही पुरुष तो दीख रहा है । ब्रह्म का तात्पर्य तो यह है कि इस आंख को तो खिड़की समझो। जैसे किसी बडे महल की खिड़की से बाहर की ओर झांक कर देखते है न । इस शरीर को तो बड़ा सुन्दर महल समझो और यह आंख रूपी खिड़की से जो पुरुष झांक रहा है वही तो आत्मा है ।

'यो चक्षुषितिष्ठन् चक्षुषोऽन्तरं यंचक्षुर्नवेद यस्य चक्षुःशरीर यो चक्षुषः ऽन्तरो यमयत्येष स आत्मान्तर्यम्यमृतः' यजुर्वेदीय कण्वशाखा का उपनिषद है बृहदारण्यक उपनिषद है । बड़ा विशाल उपनिषद है । मंत्र कहता है 'यो चक्षुषो-तिष्ठन्' देखो तो सही वो अन्तरात्मा इस नेत्र में विराजमान होकर अपने कों इस से जुदा रखता है ।'यं चक्षुर्नवेद यस्य चक्षुःशरीरं' चक्षु उसको नहीं जानता क्योंकि चक्षु उसका शरीर बना है । यह चक्षु शरीर अपने इस आत्मा को नहीं जानता । इसके लिए बडा दृष्टान्त तुम्हारे पास तुम्हारा शरीर ही है । अपने इस भोजन भट्ट शरीर से पूछो, तेरे को इतना श्रम करके हम लोग जितने भी यहाँ बैठे हैं, सब अच्छी आयु का लाभ लेकर ही बैठे है, तुमको भोजन खिलाते है । तू हमको जानता भी है कि हम कौन है ? तो यह कहेगा हे भगवन यह पहचानने की ड्यूटी

हमारी नहीं है। हमारी जो ड्यूटी है वो हम कर रहे हैं। वो नहीं करे तो देखो अगर कोई पूछे तुम्हारी शक्ल कैसी है तो हम खट् अपना मुँह आगे कर देते हैं। हमारी शक्ल ही उसकी शक्ल है। कोई पूछे तुम्हारा नाम क्या है ? हम खट् से अपना नाम बता देते है। हमारा नाम ही तुम्हारा नाम है। इतना त्याग कर के बैठे हैं। मैंने अपना नाम तुमको दे दिया। अपना रूप तुमको दे दिया। बाकी हम से। एवज में रुखा सूखा जो तुम देते हो वो मैं खा लेता हूँ। कभी कहा कि कढा प्रसाद दो हमको ? जो देते हो हम खा लेते है। हमको जान कर क्या करना है। इतना त्यागी नौकर कहाँ मिलेगा तुमको ? फिर पूछते हो हम कौन हैं ? हम को क्या करना जान कर ?

किसी बडे सेठ को आ गया बिजनेस में घाटा। नौकर अपनी बंसी बजा रहा है। सेठ अपनी खोपडी पकड कर बैठा है। पचास लाख का घाटा हो गया। नौकर मस्ती से बैठा है। खाना दाना सेठ को दे दिया। खुद बढिया भोजन करता है। बस काम हो गया। सेठ ने कहा मूर्ख तेरे को कुछ पता भी है, क्या हुआ है ? बाबू जी क्या हो गया है ? पचास लाख का घाटा हो गया है। वो बोला यह सब तो आपका हुआ है। हमारा क्या हुआ ? घाटा हुआ आपको। हमारी तनखवाह तो मिलने वाली है। हमको क्या घाटा हुआ ? वही हाल है इस शरीर का। यह शरीर कहता है कि मेरी यह ड्यूटी नहीं है कि आपको जानूं। आप अपने आप ही जानो अपने को। भगवान प्रजापति उपदेश कर रहे है, इन्द्र और विरोचन दोनों को कह रहे हैं कि वो सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा चक्षु में विराजमान है और चक्षु, से न्यारा है। चक्षु उसको नहीं जानता। यह चक्षु का अन्दर से नियन्ता है 'इतरेषः ते आत्मा' यही तेरी आत्मा है यह अमृत है, अभय है, यही ब्रह्म है। 'अमृत भूमाख्यं ब्रह्म' जिसको पहले भूमा कह कर आए हैं। यही व्यापक ब्रह्म है। इसी ब्रह्म की मुट्ठी में यह सारी दुनियाँ घूम रही है। यह भूमाख्य जो ब्रह्म है, यही अभय पद है। इसके होने से ही हम से किसी को भय नहीं लगता किसी से कहो तो जरा मुर्दे के पास अकेले बैठे तो चाहे वो हमारा कितना भी प्यारा रहा हो, मुर्दे के पास अकेले कोई नहीं बैठगा। यह मुर्दा किसी को थोडे ही प्यारा है। प्यारा था तो था। अब बैठने के लिए

तैयार नहीं । 'अभयं एतद् ब्रह्मेति' यही अभयपद है, यही ब्रह्म है ।

ऐसा जो उपदेश किया, इन्द्र ने विरोचन का सिर पकड़ा और उसकी आंख मे झांकने लगा । आंख के अन्दर जो झांका तो विरोचन की आंख में क्या दीखा ? छाया । विरोचन की आंख में छाया पुरुष दीखा । छोटे बच्चे को गोद मे लो और उसकी आंख में अपनी आंख को लगा दो । उसकी आंख मे अपने मुख का प्रतिबिम्ब दीखेगा । आंख में जो दीखा तो यह क्या दीखा ? अपने ही मुख की छाया दीखी । इन्द्र ने समझा अरे यही तो आत्मा है । 'एषोऽक्षिणि पुरुषः' दिख तो रहा है अहा मेरे को आत्मा का दर्शन हो गया । विरोचन ने कहा, मेरे को भी तो दिखाओ । विरोचन ने इन्द्र को पकड़ कर यूं देखा । तो विरोचन को भी दर्शन हो गया । दर्शन तो हो गया किन्तु फिर भी दृढता नहीं हुई । संशय रह गया । इसलिए यहाँ प्रश्न करते हैं । 'एतदमृतमभयमेतद ब्रह्मेति अथ योऽयंभगवोऽप्सुपरिख्यायते यश्चायमदर्शे कतमएष'भगवन थोड़ा और स्पष्ट करो । ब्रह्मा ने कहा क्या बात है ? हे भगवन 'योऽप्सुपरिख्यायते' वड़े निर्मल जल में खडे होने पर भी तो दीखता है । किसी तालाब के किनारे पर खडे हो जाओ और जल में झांक कर देखो तो प्रतिबिम्ब तो उस जल मे भी दीखता है । 'यश्चायमादर्शे' दर्पण के सामने खडे हो जाओ तब भी दीखता है । दर्पण मे भी अपना पूरा शरीर दीखता है । तो इन मे से आत्मा किसको कहेंगे । प्रजापति ने सोचा कि किसी मे आत्मा कहें और किसी मे न कहें यह तो ठीक नहीं है । इसलिए कहते है 'एषु सर्वेषु अन्तः परिख्यायते' इस सब मे वो दीख रहा है । दर्पण में भी दीख रहा है । जल में भी दीख रहा है । किन्तु इन सब के अन्दर दीखा क्या ? छाया पुरुष अपनी भाषा मे कहो तो प्रतिबिम्ब दीखा । विरोचन ने इन्द्र की आंख में देखा । इन्द्र ने विरोचन की आंख मे देखा । और निश्चय करने के लिए पूछा । बडा प्रश्न आ गया । कहने लगे ठीक है ।

भगवान प्रजापति ब्रह्म आत्मा का उपदेश कर रहे हैं । इन्द्र और विरोचन जिसको सुन कर के आत्मा समझे वो तो मिथ्या समझना है । भ्रम मात्र है । शीशे में देखने की अपेक्षा यह मुख तो लाख दर्जे अच्छा है । शीशे वाले मुख की क्या value है । कहते है ऐसा प्रजापति ने क्यों नहीं कहा कि यह मिथ्या दर्शन

है तुम लोगों का । सत्य दर्शन नहीं है । ऐसा क्यों कह दिया कि यह नहीं है । ऐसा तो कोई लोभी गुरु होवे तो भले ही शिष्य को बोल देवे । प्रजापति तो ईश्वर के स्वरूप में हैं । आचार्य कहते हैं, इन्द्र और विरोचन दोनों ही अपने को महा पंडित मानते हैं । वो देवताओं के अन्दर अपने को ऐश्वर्यशाली मानता है । सर्व श्रेष्ठ मानता है । उसके अन्दर कितना अभिमान है । विरोचन असुरों मे श्रेष्ठ है और सब तरह का ऐश्वर्य उसके पास भी है । कोई कम नहीं वो भी ऐश्वर्य और ज्ञान के अहंकार में । अगर कहां जाए कि बुद्धू हो तुम दोनों नहीं समझे आत्मा को तो यह अपना अपमान समझेंगे । और उस अपमान में खिन्न हो जाएंगें । अगर जोश मे आकर लौट ही गये तो और विमुख हो गये तो । आचार्य कहते हैं कभी गुरु भी थोड़ा नम्र हो जाता है तो शिष्य की बात की रक्षा के लिए उसकी झूठी बात भी मान लेता है । यह बताओ, जैसे बेटा है कभी बाप के सामने अड़ गया अपनी मनवाने के लिए तो बाप मानेगा बेटे की बात कि नहीं । कभी उसकी बात बात भी मान जाओ । अकड में नही रहे कि हम बाप हैं । बहु है, जवान पढी लिखी कभी कहे कि सासु जी तुमको नहीं पता, आप तो बीस वर्ष पहले की बात करती है । अच्छा बेटी बाद में बात करना । थोडा मुँह को बन्द करना चाहिए । तो आत्मा कीं रक्षा होगी । हम भी अहंकार करेंगे कि हम तो बाप है हम तो सासु है, हम तो मां है । तो बेटा बिगड़ जाएगा उधर बहु बिगड़ जाएगी । तो क्या करोगे ? इसलिए गुरु को भी कभी चिन्ता करनी पड़ती है । शिष्य बिगड़ जाएगा तो क्या होगा ? नहीं तो विद्या खत्म हो जाएगी ।'रक्षणीयाः शिष्याः इति मन्यते' । प्रजापति ने भी सोचा कि दो ही तो हमाहे चेले है और दोनों को अपने पांडित्यका, अपने ऐश्वर्य का महान अहंकार भी है । अभिमान है । इनको अगर कहेंगे कि तुम बुद्धू हो, कुछ नहीं समझें तो यह लौट कर चल देगे । प्रजापति मानते हैं कि इनकी आत्मा की रक्षा करनी चाहिए । कुछ बोलना ठीक नहीं इस लिए कह दिया कि हां जो दिखा वो आत्मा ही है । आंख की खिड़की में जो दीखा वो आत्मा ही है दर्पण में, जल मे इन सब के अन्दर जो दीखा वो आत्मा ही है । और कुछ नहीं ।

'एतेषु सर्वेष्वन्तः यत्परिख्यायते तदात्मा ब्रह्मेति' इसलिए भगवान प्रजा-

पति ने इस समय इनको कोई और शब्द नही कहा । अगर कह देते 'मूढौ युवाम्' तुम दोनों बुद्ध हो तो कहगें यह विद्या है कि आत्महनन करना है । यह कहीं चमक कर चल दिए तो यह ठीक नहीं होगा । प्रजापति ने एक दृष्टान्त मन मे रखा है । इस दृष्टान्त के द्वारा इनके मोह को भंग करेंगे । आगे आने वाला है 'उदशराव आत्मानमन्वेक्ष्य यदात्मनो न विजानीथस्तन्मे प्रब्रूतमिति' उदशराव उसको कहते है जैसे घडे में पानी भर देते हैं । छोटे २ कुल्हड़ होते हैं न, उनको शराव कहते है संस्कृत में । प्रजापति कहते हैं कि यह दृष्टान्त तो हम आगे देने वाले है अभी तुम दोनों एक काम करो । बोले क्या करना है तो कहा एक कुल्हड़ में पानी भर कर ले आओ और उस कुल्हड़ के पानी से दोनो अपना २ मुँह देखो। जो नहीं समझो वो मेरे से पूछो । इन्द्र और विरोचन बडे कुल्हड़ मे पानी भर लाए और उस जल में दोनों ने अपना २ मुँह देखा । बडे प्यार से देखते ही रह गये । इन्द्र अपने को देख रहा है । विरोचन अपने को देख रहा है । मुँह कोई हटाता ही नहीं । किं पश्यथ' तुम लोग क्या देखते हो ? यह बताओ कहते हैं हे भगवन् 'सर्वमेवमिदं आवाम् भगवन् आत्मानं पश्याव:' अब तो हम अपनी आत्मा को देखते हें । पूरी आत्मा का दर्शन हमारे को हो रहा है ! लक्षण बतलाते हैं । बत्तीस वर्ष वहाँ रह चुके हैं । उस समय वहाँ नाई भी नहीं पहुंचे थे । तो मुँह का क्या हाल था एक छोटा मोटा झाडू ही हो गया था । हाथ पांव भी नाखूनों का क्या हाल हो गया होगा ? सब नाखून भी बढ गये थे । बालों का जंगल हो गया था फिर उसके अन्दर शेर भी घूम रहे होंगे । जो यूं देखा तो देख कर खुश हो रहे हैं । विरोचन भी देख रहा है, इन्द्र भी देख रहा है । 'आलोमभ्य: प्रति रूपमिति' यह जो लोम है माने केश, यह भी दीख रहे हैं । प्रजापति का अभिप्राय तो यह था उदशराव दृष्टान्त मे कि जिस समय यह देखेंगो, मुख दीखेगा केश लोम वाला तो मुख को तो यह अपना स्वरूप मानेगे किन्तु यह केश लोम और नाखून तो अपना स्वरूप नहीं है । जब चाहेंगे तब इनको काट देंगे । माने यह तो अपने से जुदा है ही ।

यहाँ प्रजापति का अभिप्राय था कि जिस समय यह अपना नख और केश वाला स्वरूप देखेंगे तो समझ जाएँगे कि यह केश लोम और नाखून वाला गये

जैसा रूप आत्मा कैसे बन जाएगा। यह शरीर शीशे में भी दीखा। मुँह भी दीखा केश दीखे नख भी दीखे। वो हम नहीं। इतना मान तो इनके अन्दर स्वयं होना चाहिए। इसी तरह यह यह दीखने वाला शरीर भी हम नहीं। आत्मा नहीं। यह ब्रह्म नहीं। ऐसा मान इनको होना चाहिए। इस क्रम से धीरे २ इनकी जिज्ञासा ऊपर की ओर उठनी चाहिए।

सर्वभूतस्थितं यो माम् भजत्येकत्वमास्थितः

सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते।

गीता में भगवान कह रहे हैं, अर्जुन। सम्पूर्ण भूतों के अन्दर मैं स्थित हूँ। जो दीखेगा वो तो इन भूतों का आकार प्रकार ही दीखेगा। चेतन आत्मा का तो कोई आकार नहीं दीखेगा। यह शरीर दीखेंगे। यह आकारों का बगीचा जीता हुआ दीखेगा। सम्पूर्ण भूतो में, जो नाम रूप की दृष्टि से जुदा २ है किन्तु 'मैं' उसके अन्दर एक हूँ एकत्व स्वरूप को ग्रहण करेगा। इसी तरह यहाँ भगवान प्रजापति ने कहा 'य एषोऽक्षिणि पुरुष एष आत्मेति' इसका अर्थ क्या हुआ? यह आंख के अन्दर जो छाया पुरुष दीखा, वो आत्मा नहीं। किन्तु इस आंख से जो देखता है जो अक्षिणि पुरुष है। यह चक्षु में आत्मा है जो प्रतिबिम्ब दीखता है वो मिथ्या है वो सत्य नहीं है। ऐसा इनको समझ में आना चाहिए। इसलिए प्रजापति ने इन को मूर्ख नहीं कहा। मूर्ख कहेंगे तो यह भटक जाएँगे। इनकी आत्मा की रक्षा के लिए ही ऐसा नहीं कहा। और भगवान प्रजापति के मन मे यह भी है कि चलो इस दृष्टान्त से नही समझे तो दूसरे दृष्टान्त से समझाएँगे किन्तु आज नहीं। कल समझाएँगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

४-६-८८

प्रवचन सं० ५७

"ॐ उदशराव आत्मानमवेक्ष्य यदात्मनो न विजानीथ स्तन्मे प्रब्रूतमिति तौ होदशरावेऽवेक्षाञ्चक्राते तौ ह प्रजापतिरुवाच किं पश्यथ इति तौ होचतुः सर्वमेवेदमावां भगव आत्मानं पश्याव आलोमभ्य आ नखेभ्यःप्रतिरूपमिति।।
ॐ तौ ह प्रजापतिरुवाच साध्वलङ्कृतौ सुवसनौ परिष्कृतौ भूत्वो-दशरावेऽवेक्षेथामिति तौ ह साध्वलङ्कृतौ सुवसनौ परिष्कृतौ भूत्वोदशरावेऽवेक्षाञ्चक्राते तौ ह प्रजापतिरुवाच किं पश्यथ इति ।।"

(छान्दो. ८-८-१।८-८-२)

इस बात को कह कर आए हैं कि भगवान प्रजापति ब्रह्मा ने यह सोचा सम्पूर्ण भूत प्राणियों का हित करने वाली जो विद्या है वह ब्रह्म विद्या है । आत्म विद्या का जिसको बोध नहीं है वो इस संसार मे बार २ जन्मेगा और मरेगा । इस लिए प्रजापति यह विचार करते है कि हमारे बडें जो यह बेटे है देवता है, असुर हैं और तीसरे मनुष्य भी है । इस सब को वो विद्या आनी चाहिए जिस विद्या से इनका मोक्ष भी होवे । भोग, जन्म मरण यह तो हो ही रहा है । जन्म मरण तो होता ही रहेगा । इस जन्म मरण की निवृत्ति कब तक नहीं होगी जब तक यह अपनी आत्मा को नहीं समझेंगे । उपनिषद में बड़ा विज्ञान है । श्रुति है 'तयो ह वैं तत्परं ब्रह्मवेदं ब्रह्मैव भवति नाऽस्याऽवित् ब्रह्मकुले भवति' तरतिशोकमात्मवित्।

इस ब्रह्म को जो जानता है वो ब्रह्म ही हो जाता है। वो शोक से पार हो जाता है और श्रुति तो यहां तक घोषणा करतीहै कि ऐसा ब्रह्मवेत्ता अगर गृहस्थ जीवनमे है, घर में रहने वाले जो लोग है उनको ज्ञान नहीं होता, ऐसी बात नहीं है। बडे २ ऋषि घर में मे रह कर ही ब्रह्मज्ञानी कहलाए । तत्त्वज्ञानी कहलाए। ऐसा ब्रह्मवेत्ता यदि घर में भी है तो उनके तत्त्वज्ञान से बड़ा फल यह होगा कि इसके कुल में अब्रह्मवित् कोई नहीं होगा। जो भी होगा पुत्र या पुत्री के रूप से वो ब्रह्म को जानने वाला होगा। आत्मवेत्ता होगा। और यदि ऐसा विरक्त ज्ञानी होगा तो उसके भी शिष्य प्रशिष्य होंगे वो ज्ञानी होंगे। आत्मा को जानने वाले होंगे। 'नास्य कुले अब्रह्मवित् भवति' तरति शोकं तरति पापम्।'

श्रुति ज्ञान का फल बतलाते हुए कहती है कि वो शोक को पार कर जाएगा। यह संसार और कुछ भी नहीं। शोक का नाम ही संसार है। शोक सीमा से बाहर हो गया तो संसार में डूब गये और शोक की सीमा से बाहर हो गये तो समझो ज्ञान में दृढता हो गई। उस तत्त्वज्ञान में तुम्हारी पहुंच हो गई 'तरति शोकं तरति पापम्। नाना प्रकार के जन्म जन्मान्तर के जो कर्म है पापरूप इन पाप रूपी कर्मों को पार कर जाएगा। 'गुहाग्रन्थिभ्यो: विमुक्तोऽमृतो भवति' गुहग्रन्थि, गुहा शब्द का अर्थ है गुफा। जैसे पहाड़ मे जाओ तो कोई लम्बी गुफा है। मीलों लम्बी गुफा है। कुछ पता नहीं यह गुफा कब से है। बाहर से अगर देखो तो कुछ तक ही दिखेगा, आगे अन्धेंरा ही अन्धेरा है। कितना अन्धकार है कुछ पता नहीं। इसी तरह यह जो शरीर है, यह दीखने वाला शरीर इसको तो तो गुफा को गेट समझो। यह अन्नमय कोश इसके अन्दर प्राणमय कोश। तो देखो अन्दर चला गया कि नहीं। और अन्दर गया तो मनोमय कोश। और अन्दर चलो तो विज्ञानमय कोश। कितने कोश हो गये ? इस शरीर को श्रुति गुफा कह रही है। विज्ञानमय कोश आता है। इस के अन्दर बुद्धि आपको मिलेगी। बुद्धि माने 'बोधयति अर्थान्' अर्थ का बोध देती है, विषय का परिचय देती है। जैसे बडे २ लोग बाहर से आते हैं तो गवर्नमेंट उनकी Guidance के लिएGuidesरखती है। इनका मार्ग दर्शन करो। ऐसे ही बुद्धि तुमको परिचय देती है। यह बुद्धि तुम को समझांती है कि यह है, यह है। किन्तु किस चीज को समझा रही है ? नाम

रूप को। इस नाम रूप का द्रष्टा कौन है ? देहको बुद्धि नहीं बतलाएगी।

आचार्य गुहा शब्द का व्याख्या करते हैं 'गुह्यात् धर्माधर्मं' जीव के धर्म अधर्म को छिपाती है। बुद्धि जीव को न धर्म को देखने देती है न अधर्म को देखने देती है। न पुण्य को देखने देती है, न पाप को देखने देती है। इसलिए इसको गुहा कहते हैं। जैसे, घर के दृष्टान्त से समझो, चतुर पत्नी अपने पति को घर के अन्दर कुछ समझने नहीं देती। बैठे २ आराम से रोटी खाओ। बाहर के कीडों से तुम्हारा दिमाग खराब हो ही रहा है। घर के छोटे २ कीडों को रहने दो। मैं ही उठालूंगी। घर के अन्दर उसको कुछ नहीं समझने देती। इसी तरह यह जो जीवात्मा है, इसकी घरवाली है बुद्धि। यह न तो जीव के धर्म को देखने देती है, न अधर्म को। घर में कितना रुपया है, पत्नी पति को नहीं बताती। रुपया नहीं है तो भी पति को पता नहीं लगने देती। रुपया नहीं है तो ब्लड प्रेशर बढ जाएगा और रुपया बहुत है तो निर्द्वन्द्व हो जाएगा। वह पति को निर्द्वन्द्व भी नहीं बनने देती और उसका ब्लड प्रेशर भी नहीं बढाती। ठीक ठाक रहे बस इतना ध्यान रखती है। इसी तरह यह बुद्धि इस जीव को धर्म को भी नहीं देखने देती और अधर्म को भी नहीं देखने देती। धर्म दीख जाएगा तो भोग में प्रमादी हो जाएगा और कहेगा क्या कमी है मेरे में ? और अधर्म देख लेगा, पाप देख लेगा तो परेशान हो जाएगा, हाय इतना पाप है। इतना अधर्म है। ब्लड प्रेशर बढ जाएगा। इसलिए माया ने अपनी बेटी से कहा कि यह दो चीजें तू अपने हाथ में ही रख। 'गुह्यति धर्माधर्मं' धर्म और अधर्म, पुण्य और पाप को छिपा कर रखती है, इस लिए बुद्धि का नाम पड़ गया गुहा।

आचार्य दूसरी व्याख्या करते हैं 'गुहति' बुद्धि को गुहा क्यों कहा ? 'ज्ञातृ ज्ञेय ज्ञान पदार्थान् इति' गुहा कहते हैं ज्ञाता कौन है ? इसको छिपाती है। यह अहं अहं तो करते हो किन्तु यह अहं है कौन ? नहीं जानते। ज्ञेय माने मेरे को क्या जानना है ? इसको छिपाती है। किस से जानना है इस ज्ञान को भी छिपाती है। 'गुहति ज्ञातृ ज्ञेय ज्ञान पदार्थान् इति गुहा।' यह इस रहस्य को छिपाकर रखती। तू ज्ञाता है, यह तेरे ज्ञेय पदार्थ हैं, यह ज्ञान है, इसको यह नहीं जानने देती। यूँ ज्ञातापन भी हो रहा है। ज्ञान भी सामने स्पष्ट हो रहा है,

ज्ञेय भी स्पष्ट हो रहा है। विषयों के राग में, विषयों के मोह मे, विषयों के शोक मे यह इनके भेद को स्पष्ट नहीं होने देती। इसलिए यह बिचारा जीव का जीव ही रहता है। उमर भर इस शरीर में जिया और धीरे से एक दिन निकल गया। जैसे पशु अपने शरीर में जीता है, अपनी योनि के अनुसार भोजन भी लेता है और एक दिन निकल गया और रह गया। उस शरीर से फिर किसी को प्यार होता नही।

यह मनुष्य शरीर भी ऐसा है। हम लोग भी एक दिन निकल जाएँगे। यह मनुष्य शरीर भी पड़ा रह जाएगा। इसलिए बुद्धिमान जिज्ञासु इस बात को समझें। वो इस बुद्धि रूपी गुहा मे प्रवेश करे। 'गुहाग्रन्थिभ्योः विमुक्तः' ग्रन्थि माने गांठ। वो गुहा ग्रन्थि से विमुक्त हो जाता है। गुहाग्रन्थि क्या है? जैसे यह मेरे हाथ मे पुष्प है गुलाब का। इसको देखो। यह कितना सुन्दर खिला हुआ है। किन्तु रस और पुष्प के आकार मे एकात्मकता हो गई कि नहीं। रस जुदा नहीं दीखता पुष्प जुदा नहीं दीखता। उसको तादात्म्य ग्रन्थि कहते हैं। दूसरे शब्दों मे ऐसा समझो। लोहे को अग्नि में डालो। थोड़ी देर मे लोहा अग्नि के रूप मे हो गया। लोहे का अग्नि से तादात्म्य हो गया। लोहा अग्नि के रूप मे हो गया। लोहे के आकार मे अग्नि दीखने लगी। लोहा गोलाकार है तो अग्नि गोलाकार दीखती है। लोहा अगर लम्बा है तो अग्नि लम्बाकार मे दीखेगी। माने अग्नि लोहे के आकार मे आ गई। लोहा अग्नि के आकार मे आ गया। यह तादात्म्य ग्रन्थि है यह परस्पर तादात्म्य है, तद्रूपपा है। उसको कहते है ग्रन्थि। इसी तरह यहां समझो। बुद्धि जड़ है, आत्मा के तादात्म्य से चेतन बन गई। बुद्धि के ऊपर यह जो लम्बा चौड़ा लरीर है, बुर्का तो आप जानते ही है किसको कहते हैं। बुर्का आंखो वाली बड़ी दुनियां है। बुद्धि रूपी जीव के उपर यह शरीर रूपी बुर्का रखा हुआ है। किन्तु बुद्धि ने अपने प्रभाव से इस बुर्का को भी हरा भरा कर दिया है। चेतन हो गया यह शरीर। जरा भी जड़ दीखता है? जरा से हाथ पैर ठंडे होने लगे तो यहाँ नैपाल में तो सीधी बात है, घर मे मरने नहीं देते। मरने के लिए पशुपति नाथ का guest बनना पडेगा। उन्होंने कहा पड जा नीचे जाकर। वागमती कहती है आ तेरे को नहला दूं। नहलाते २ ठंडा कर दिया। ऐसी हालत

में यह जो बुद्धि के साथ मे चित्‌अचित्‌ का तादात्म्य है, चिदचिदअध्यास है । चित्‌ माने चेतन और अचित्‌ माने जड़ । इस चित्‌ को तो अग्नि जैसा समझो । बुद्धि को लोहे जैसा समझो । लोहा अग्नि मे जाकर अग्नि जैसा हो गया । इसी तरह यह बुद्धि चेतन आत्मा के करंट में जाते ही चेतन जैसी हो गई । बुद्धि आत्मा जैसी हो गई । यह शरीर देखते हो कैसा चेतन हो गया । बुद्धि ने इस शरीर को पकडा और यह शरीर भी चेतन जैसा हो गया । किन्तु यह चेतन नहीं है । जैसे अग्नि के करंट में गया हुआ लोहा अग्नि के आकार मे तो दीखता है, किन्तु अग्नि से बाहर निकालने पर लोहा लोहा ही दीखेगा इसी तरह चेतन के करंट से जरा सा बाहर गया तो देखो तो शरीर की शकल कैसी हो जाती है । इतनी भद्दी शकल । इतनी बदसूरत शकल । इतनी बदबू देने वाला शरीर , उस चेतन आत्मा के करंट मे इतना सुन्दर लगे । इतना प्यारा लगे । इतना सम्मोहक लगे' तो सोचो यह आत्मा कितना प्यारा होगा ? कितना सम्मोहक होगा । जिसके दरवाजे पर पडे २ मुर्दे इतने सुन्दर लगे वो कितना प्यारा होगा ? इस शरीर से यह दुनियाँ यूं ही प्यार नहीं करती है । प्यार तो इसलिए करती है कि उस प्यारे की छाया इसके लपर पड़ रही है । नहीं तो मुर्दे को कौन पूछने वाला है । चाहे वो मुर्दा कितने बडे महलों में रहने वाला हो । वो आत्मा है, इसलिए प्यारा है । उस आत्मा को जानो ।

भगवान प्रजापति उपदेश कर रहे है । प्रजापति ने घोषणा की कि जो इस आत्मा को जान जाएगा वो सम्पूर्ण भोगों को पा जाएगा । इसलिए इन्द्र और विरोचन दोनों प्रजापति से प्रार्थना करते हैं कि हे भगवान इस आत्मा को हम लोगों को समझाओ । प्रजापति पहले समझा कर आए है 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते स आत्मा' इसकी व्याख्या कल किया था । इस आंख मे जो पुरुष दीखता है । इसका अर्थ यह समझो कि इस आंख में से, इस आंख के द्वारा जो पुरुष देखता है, 'यश्चक्षुषितिष्ठन्‌ चक्षुषोऽन्तरो यं चक्षुनं वेद यस्य चक्षुः शरीरं यश्चक्षुन्तरोयमयति तेषां ते आत्मान्तर्याम्यऽमृतं'

चक्षु के अन्दर बैठ कर जो इस जगत का द्रष्टा बना हुआ है किन्तु जो इस चक्षु से जुदा है और इस नेत्र का नियन्ता है । यह नेत्रो तो उसका शरीर

बना हुआ है और इस आत्मा को नहीं जानता, वो मेरी आत्मा कौन है ? आत्मा को यह शरीर नहीं जानता। ऐसी तुम्हारी अन्तरात्मा है। इस तरह जब कहा तो वो बोले हम को और स्पष्ट करके समझाओ। यह लोग क्या समझे ? इन्द्र ने विरोचन की आंख मे झांका और विरोचन ने इन्द्र की आंख में। तो इनको जो छाया पुरुष दीखा तो बोले कुछ दीखा तो है। एक बात यों समझो कि इन्द्र दैवी प्रकृति का होने के कारण आसुरी प्रकृति का विरोधी है और विरोचन आसुरी प्रकृति का होने से दैवी प्रकृति का विरोधी परस्पर विरोधी होने पर भी दोनों जिस ब्रह्मविद्या को सीखने आए हैं एक ही गुरु के पास। इससे जो उनका परस्पर द्वेष था वो खत्म हो गया था। एक अर्थ यह भी समझो कि ब्रह्मविद्या से चित्त मे जो झूठा राग, झूठा द्वेष है उसकी निवृत्ति हो जाती है।

मित्र किसी को भी बनाओ। मित्र बनना भी चाहिए किन्तु 'यानि कानि च मित्राणि कर्त्तव्यानि शतानि च' जैसे सैकडों मित्र बनावे पर सच्चा मित्र तो कोई ही नहीं बनता है। कुछ काम चलाऊ मित्र भी चाहिए। कुछ उसका भला तुम करो कुछ तुम्हारा भला वो करेगा। उसको काम चलाऊ मित्र कहते हैं। किन्तु दुश्मन किसी को मत बनाओ। दुश्मन कब नहीं बनेगा ? जब इस आत्म का बोध होगा। आत्मा से झगडा नहीं है। झगड़ा तो दोषों से है। दोषों से लड़ो। दोष किसी के अन्दर भी हो, चाहे अपने अन्दर ही हो तो उसे भी दूर करने का प्रयत्न करो। अपने प्रिय के अन्दर यदि कोई दोष हो तो उसको दूर करने का प्रयत्न अवश्य करो।

यहाँ इन्द्र और विरोचन जो परस्पर विरोधी हैं अब उनसे विरोध नहीं। क्यों ? आत्मविद्या ने समझा दिया कि आत्मा एक ही है। जो इस शरीर में हम हैं उस शरीर मे भी हम है। इस शरीर मे यदि हम प्यार करते हैं तो उस शरीर में भी प्यार करें। इन्द्र और विरोचन दोनों बडे प्यार से एक दूसरे की बात सुन रहे हैं। उसकी आंख में उसने झांका, उसकी आंख मे उसने झांका। और इस तरह झांक कर कहते हैं कि भगवन समझ मे तो आ रहा है। दर्शन तो हुआ आत्मा का। भगवान प्रजापति ने सोचा कि यह तो छाया को पकड कर बैठ गये हैं। किन्तु स्पष्ट उनसे कुछ बोला नहीं प्रजापति ने। गुस्सा नहीं कर रहे। क्यों ? वो

जानते है कि इन्द्र भी महान ऐश्वर्यशाली है और विरोचन भी कम ऐश्वर्यशाली नहीं । दोनों ही महान ऐश्वर्यशाली हैं । अपने को पंडित भी मानते है। वैसे गुरु कभी चेले पर गुस्सा भी करते हैं किन्तु भगवान प्रजापति जानते है कि अहंकारी होने के कारण यह कुछ सहन नहीं कर सकेंगे ।

बृहदारण्यक उपनिषद में एक बडी अच्छी कथा आती है । वहाँ भी इन्द्र की ही बाते है । इन्द्र सोचता है कि ब्रह्मवेत्ता दध्यङ्ङथर्वा नाम के ऋषि है । उन के पास ब्रह्मविद्या सीखने जाना चाहिए । इन्द्र चला गया महान ऋषि के पास । दध्यङ्ङथर्वा ऋषि उपदेश देने लगे ।उपदेश यदि देना होगा तो तुम्हारे पास दृष्टि एक और पदार्थ दो । बाहर और भीतर । बाहर को छोडे बिना भीतर कैसे आओगे । जैसे थोडी देर के लिए समझो, कहते है बेटी क्या होती है? यह बेटियाँ धान के पौधे की तरह होती हैं । जैसे धान के पौधे को एक जगह से उखाड़ कर दूसरी जगह लगाओ तों फल देता है । उसी तरह यह बेटियाँ भी है एक जगह तो लगीं । अब यहाँ से उखाड़ कर दूसरी जगह लगेंगी तब फल देंगी । जाति समाज और धर्म की बडी सेवा करेंगी । इसी तरह तुम्हारा यह मन भी बाहर के जगत में गडा हुआ है जब तक वहाँ से उखाड़ोगे नहीं तो अन्दर आत्मा मे कैसे लगाओगे इसलिए मन को उखाड़ना पडेगा । यह अगर संसार मे अनुराग वाला है तो भीतर आत्मा का प्यार तो इस मन मे होगा ही नहीं । इसलिए दध्यङ्ङथर्वा ऋषि ने सोचा कि इन्द्र का मन तो बाहर के भोगों मे रमण कर रहा है। इन भोगों से वैराग्य भी इन्द्र के मन मे होना चाहिए । बाहर से मन को अन्दर लाने के लिए प्रधान साधन वैराग्य ही है । जब तक वैराग्य नहीं होगा तो मन बाहर के भोगों से हटेगा नहीं । दिखने में बाहर का ही प्यारा लगता है किन्तु 'वो' अन्दर है इस लिए बाहर भी प्यारा लगता है । अन्दर वो नहीं है तो बाहर की कौन सी चीज प्यारी है ? मुर्दे की आंख से देखो तो कुछ दिखाता है ? किन्तु तुम्हारी आँख से दीखता है कि नहीं । वो अन्दर है इसलिए बाहर दीखता है । इन्द्र को उपदेश देते हुए वो कहने लगे हे इन्द्र तू स्वर्ग के भोगों जो सुख लेता है कुत्ता अपने भोग मे उतना ही सुख लेता है । ऋषि ने इन्द्र के अन्दर वैराग्य को जाग्रत करने के लिए ऐसा कह दिया कि तेरे भोग में और कुत्ते के भोग मे क्या अन्तर है ? तुम अरों

कुत्ता दोनों बराबर हो। ठीक है तुम स्वर्ग में रहते हो।

वस इतना जो कहा कि इन्द्र मचल गया। बाप रे बाप यह इतने बड़े पुण्यों का फल स्वर्ग का सुख, और ऋषि ने उठा कर इसको कुत्ते से मिला दिया। इन्द्र बोला बस गुरु जी अपना मुंह बन्द करो। अब मैं नहीं सुन सकता। अब मैं यह विद्या जानना भी नहीं चाहता। आ गया वो तो अपने स्वरूप में। किन्तु यह भी कहे देता हूँ कि आप अब इस ब्रह्मविद्या का उपदेश किसी को भी यदि देंगे तो मैं आपका सिर काट लूंगा। इन्द्र ने कह दिया कि मैं आपका सिर काट लूंगा। आज से आप किसी से बोलना भी नहीं। मैं आपके मुँह पर ताला कर जा रहा हूं। चेला मूर्ख हो गया तो ऋषि क्या करे? इधर क्या हुआ, अश्विनी कुमार देवताओं के वैद्य हैं। बडे प्रभावशाली भी हैं लेकिन देवता उनको अपने समान मानने को तयार नहीं। उसने सोचा इन्द्र ने क्या समझा है, हम इस ब्रह्मविद्या को सीख कर आएँगे तब तो मानेंगे यह लोग। दध्यङ्ङथर्वा ऋषि से प्रार्थना किया कि भगवन् हमको ब्रह्मविद्या का उपदेश करो। ऋषि बोले कि समझाने को तो हम तैयार हैं किन्तु इन्द्र से झगड़ा हो गया है और उसने कह दिया है कि यदि इस मुख से तुम किसी को भी ब्रह्मविद्या का उपदेश करोगे तो मैं तुम्हारा सिर काट लूंगा। इसलिए हम क्या करें? अश्विनी कुमार बडे समर्थ थे उन्होंने कहा गुरुजी इसकी आप चिन्ता न करें। हम आपका यह सिर काट कर कहीं सुरक्षित रख देंगे। आज कल की भाषा के अनुसार आपरेशन करेंगे। कोई दूसरा सिर आपको लगा देंगे। उससे आप हमको ब्रह्मविद्या उपदेश कीजिए और जब इन्द्र आपका वो काट देगा तो हम आपका असली सिर लाकर आपको लगा देंगे। देखो कितना सर्जरी विज्ञान था। ऐसा मत सोचो की उपनिषदों मे गप्प लिखी है। आज का बुद्धिमान जो शोक मोह मे ग्रस्त प्राणी है, छोटी मोटी बातों में जो शोक मोह मे फंस जाता है, वह इतना अच्छा आपरेशन कर रहा है तो उस समय उन लोगों के लिए कुछ भी असाध्य नहीं था। अश्विनी कुमारों ने दध्यङ्ङथर्वा ऋषि का सिर निकाल कर सुरक्षित रख दिया और घोडे का सिर लाकर उन पर fit कर दिया। उस सिर से उन्होंने अश्विनी कुमारों को ब्रह्म विद्या का उपदेश किया। घोड़ बब करने लगा और वो समझने लगे। इसे हयग्रीव कहते हैं। इन्द्र को पता चला कि

ऋषि उपदेश कर रहे हैं। इन्द्र ने उसका सिर काट लिया। अश्विनी कुमारों ने उनका सिर सुरक्षित तो रखा ही हुआ था। लाकर सी दिया। उस प्रकार यह ऋषि ने उपदेश किया। ऐंसी कथाएँ कोई उपन्यास नहीं है, गप्प नहीं है। यह तो वेद की प्रधान श्रुति की बात है।

इधर भगवान प्रजापति ने 'उदशरावे आत्मानमन्वीक्ष्य' तुम लोग उदशराव मे सुन्दर जल भर कर ले आओ भाषा मे कुल्हड भी कहते है उसमे देखो और जो नहीं समझो वह मुझसे पूछो। उसमे देखा तो फिर वही छाया पुरुष दीखा। शरीर के लोम दीखने लगे। हाथों के बढे हुए नाखून भी दीखने लगे। और वो ही सब कुछ दीखने लगा। भगवान प्रजापति ने पूछा कि तुम लोग जो देख रहे हो यह क्या देख रहे हो ? 'आत्मानं पश्याव:' हम आत्मा को देख रहे हैं। प्रजापति अन्दर ही अन्दर गुम हो गये। इनकी बुद्धि काम नहीं कर रही।

केश दीख रहे है नाखून दीख रहे है तो जैसे यह लोम और नाखून आत्मा नहीं ऐसे ही यह दीखने वाला शरीर भी आत्मा नहीं। इसको यह लोग क्यों नहीं समझ रहे। प्रजापति के दिल मे दु:ख भी हो रहा है किन्तु कुछ बोले नहीं। बोले तो अच्छा नहीं लगता। इन्द्र और विरोचन से बोले कि अब अपनी दाढी और मुंछ साफ करो। दाढी मूंछ के बाल बहुत बढ गये थे। बढिया सुन्दर कपडे धारण करो। अलंकार भी पहनों। इन लोगों ने सफाई की और सुन्दर वस्त्राभूषण धारण किए। अब अपने उदशराव मे देखो वह तत्काल गये और अपने को उस उदशराव मे देखा। प्रजापति ने फिर पूछा 'किं पश्यथ' हे भगवन् अब हमको सुन्दर वस्त्राभूषण से सुसज्जित शरीर दीख रहे हैं। यहीं आत्मा है। प्रजापति का अभिप्राय था कि पहले दाढी मूंछ के बाल थे। अब उनको काट दिया है। सुन्दर अलंकार धारण किए है तो जैसे वो रूप हमारा नहीं था वैसे ही यह सुन्दर स्वरूप भी आत्मा नहीं है। जो यह दीख रहा है प्रतिबिम्ब मात्र है, केवल छाया पुरुष दीख रहा। इन मे कोई भी आत्मा नहीं है। जिस आत्मा को तुम लोग जानने की इच्छा कर रहे हो वो आत्मा यह नहीं है किन्तु उनकी बुद्धि तो छाया पुरुष पर ही रुकी हुई थी। जैसे शीशे मे तुम अपना मुँह देखते हो तो जो कुछ

भी दीख रहा है यह प्रतिबिम्ब है । छाया पुरुष ही है । मुख नहीं, मुख की छाया है । इसी तरह जो कुछ भी तुम देख रहे हो यह प्रतिबिम्ब ही है ।

भगवान प्रजापति ने देखा कि यह लोग आगे से कुछ बोल नहीं रहे । गम्भीरता से देख रहे है तो प्रजापति ने कह दिया है कि जाओ जों देखा है यही आत्मा है । 'हो वाचैतदमृतमभयमे एतद ब्रह्मेति' दोनों ने शान्तहृदय हो कर भगवान प्रजापति को नमस्कार किया और चल पडे ।

आगे कल बोलेंगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

५-६-८८

प्रवचन सं० ५८

"ॐ तौ होचतुर्य थैवेदमावां भगवः साध्वलङ्कृतौ सुवसनौ परिष्कृतौ स्व एवमेवेमौ भगवः साध्वलङ्कृतौ सुवसनौ परिष्कृताविस्येष आत्मेति होवाचैतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति तौ ह शान्तहृदयौ प्रवव्रजतुः। तौ हान्वीक्ष्य प्रजापतिरुवाचा नुपलभ्यात्मानमननुविद्य व्रजतो यतर एतदुपनिषदो भविष्यन्ति देवा वाऽसुरा वा ते पराभविष्यन्तीति स ह शान्तहृदय एव विरोचनोऽसुराञ्जगाम तेभ्यो हैतामुपनिषदं प्रोवाचात्मैवेह महय्य आत्मा परिचर्यः आत्मानमेवेह महयन्नात्मानं परिचर न्नुभौ लोकाववाप्नोतीमं चामुं चेति ॥"

(छान्दो. ८-८-३।८-८-४)

विचार आया जीवन मे जो असली सत्य है उस सत् को जानने की इस बुद्धिमान मनुष्य को इच्छा है। यह इच्छा स्वभाव से ही होती है। जैसे झूठ से घृणा स्वभाविक ही होती है। झूठ बोलने वाला भी झूठ को अच्छा नहीं समझता। वो भी झूठ से घृणा करता है। वो जानता है कि झूठ पाप है, सत्य पुण्य है। इस सत्य को जानने की इच्छा होना स्वाभाविक है। इन्द्र और विरोचन भगवान प्रजापति के पास असली सत्य क्या है यह जानने के लिए गये और वहाँ बत्तीस वर्ष तक तप किया। ब्रह्मचर्य धारण कर के वहाँ रहे। गुरु शुश्रुषा करते रहे।

भगवान प्रजापति को अपना गुरु मान कर उनकी सेवा करते रहे । तब भगवान प्रजापति ने उपदेश किया 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते एषआत्मा।'यह जो आंख के अन्दर पुरुष दीखता है, यद्यपि प्रजापति ब्रह्म का अभिप्राय है कि जिसकी कृपा से आंख देखती है वो आत्मा है, ब्रह्म वो है । किन्तु इन्होंने क्या निश्चय किया कि आंख के अन्दर जो छाया पुरुष दीखा वो ही आत्मा है । जैसे शीशे मे हम लोगों के मुख की छाया दीखती है ऐसे ही आंख के अन्दर भी छाया दीखी । वो ही ब्रह्म है । ऐसा इन्होंने विपरीत समझ लिया । इसलिए पूछ बैठे भगवन वो आंख मे भी दीखता है, जल मे भी दीखता है ।स्वच्छ दर्पण मे भी दीखता है वो ही आत्म, है ? बोले हां वो ही आत्मा है वो ब्रह्म है । किन्तु फिर भी प्रजापति ने सोचा, इनको आत्मा का ऐसा बोध होना चाहिए जिससे इनका भ्रान्त ज्ञान खत्म हो जाए । भ्रान्त ज्ञान क्या है ? जो आत्मा नहीं है उसको आत्मा मानना ही भ्रान्त ज्ञान है । तो भगवान प्रजापति ने कहा कि सुन्दर कपडें पहनो, दाढी मूंछ साफ करो और अपने को सजाओ । फिर देखो अपने को । जो नहीं समझो वो फिर पूछो ।

प्रजापति का अभिप्राय है कि जैसे अच्छे कपडे और अलङ्कार पहने वो भी दर्पण मे दीखता है किन्तु वों तो आत्मा नहीं है ऐसे ही इनको यह भी समझ मे आना चाहिए कि । यह दीखने वाला शरीर भी आत्मा नहीं । वेदान्त मे तीन प्रकार के अधिकार बतलाए है । उत्तम अधिकारी, मध्यम अधिकारी और कनिष्ठ अधिकारी । उत्तम अधिकारी वह है जो साधन तो कर चुका है किन्तु साक्षात्कार नहीं हुआ । अपने अनुभव के लिए समझो, जैसे ऋषि वामदेव हुए । बडे ब्रह्मवेत्ता थे । वेदान्त विषय मे बडे श्रद्धावान थे, निष्ठावान थे । किन्तु वेदान्त विद्या को सुनते २ भी साक्षात्कार नहीं हुआ । कोई ऐसी कर्म बैठा है जिसने एक जन्म और लेना ही है । वामदेव का शरीर छूट गया । दूसरी जगह मां के शरीर में प्रवेश कर गया । मां के पेट में पांच महीने के बाद बच्चे का प्राण संचार होने लगा । बहुत से लोगों की गलत घोषणा है कि जीवात्मा बाद में आता होगा । जीवात्मा बाद मे नहीं आता । जीवात्मा पहले पिता के शरीर मे अन्नादि के रूप मे प्रवेश करता है । पिता के शरीर से मां के शरीर मे चला जाता है । पिता के

शरीर में शरीर को बनाने की शक्ति नहीं है। वहाँ से थोड़ा सा matter उसे मिल जाता है। मां के शरीर मे जाकर मां की factory में बैठ कर अपना शरीर बनाता है। सोचो तो जो इतना सुन्दर शरीर बना रहा है वो कितना बुद्धिमान होगा ? बुद्धू का अर्थ बुद्धिमान करना पड़ेगा। हम लोग समझते हैं यह बुद्धू है। इसकी बुद्धि छिपी हुई है। पांच महीने मे पूरा शरीर बन जाता है। जहाँ पूरा शरीर बना प्राण संचार हो जाता है। प्राण शरीर को पकड़ लेता है। बच्चा हिलने लगता है। चतुर मां इस बात को समझ जाती है। उस समय उस को कैसे चलना चाहिए ? धीरे २ चलना चाहिए तीखा, कड़वा, गर्म पदार्थ नहीं खाना चाहिए। भोजन का भी विचार है। बच्चे के शरीर मे मां का खाया हुआ ही जा रहा है। तो यह जो वामदेव है, मां के पेट में जब इसके शरीर मे प्राण संचार हुआ तो इसको साक्षात्कार हो गया और कहने लगा मैं ही मनु था मै ही सूर्य हूँ। मैं ही विश्वात्मा हूँ। मां के पेट मे ही यह बोलने लगा। तो जैसे पहाड़ की अन्धेरी गुफा के अन्दर से बोले और दरवाजे पर कोई कान लगाकर सुने तो सुनाई पड़ता है। इसी तरह इसकी मां जहाँ भी बैठती है अन्दर से शब्द आता है। एक दिन उसका पिता मां के पेट में कान लगा कर सुनने लगा। अन्दर से शब्द आया "मनुरहमहं विश्वात्मा" पिता से रहा नहीं गया। उसने कहा मां के पेट मे रहने वाला कोई भी जीव बोलता नहीं। तुम जो बोल रहे हो तुम कौन हो ? भूत हो कि कोई प्रेत हो। यह कहता है 'आत्माऽहमस्मि, ब्रह्मैवाहमस्मि, मुझे अपनी महिमा का भान हो रहा है। पिता कहता है नहीं। तुम कोई भूत या प्रेत ही हो। वामदेव ने कहा अमुक गांव में हमारे पूर्व परिवार के सम्बन्धी हैं। उनसे पूछो कि वामदेव नाम का कोई ऋषि हुआ है कि नहीं ? वो अगर हाँ कहें तो मैं वही वामदेव हूँ। कोई कसर रह गई थी इसलिए हम उस अनुभूति मे नहीं पहुंचे जिसमे आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है। अविद्या का घेरा खत्म हो जाता है। हम अविद्या के घेरे से बाहर नहीं आ सके। इसलिए आपके घर आना पड़ा। पिता धैर्यशाली था। गांव में जाकर पूछा तो पता चला कि हाँ वामदेव नाम के ऋषि थे। सात आठ महीने पहले ही शरीर छोड़ा है।

प्रसङ्ग से याद रखो कि शरीर छूट जाए और पुनः मनुष्य शरीर में ही

आना पड़े तो लौट कर आने मे कम से कम एक वर्ष लग जाता है । अन्न म चला जाएगा । फल मे चला जाएगा । पानी में चला जाएगा । जिस पिता से जन्म लेना होगा उस पिता के शरीर मे अन्न, फलफ़ूट अथवा पानी द्वारा चला जाएगा। उसके शरीर के अन्दर refined हो जाएगा । रस बनेगा । रस का रक्त बनेगा, मांस, मेद, मज्जा एक प्रकार का लोशन ही समझो । कभी २ हड्डी टूट जाती है तो डाक्टर उसको set कर के पट्टी बांध देता है । उसके बाद डाक्टर कुछ नहीं करता । अन्दर जो लोशन बनता है, उसी से हड्डी जुड़ जाती है । हड्डी जोड़ने वाला तो अन्दर ही बैठा है । वो किसी को दीखता ही नही । सब समझते है डाक्टर ने हड्डी जोड़ दी है । यह मज्जा जो है यह फिर refined होकर शुक्र बनता है । जीवात्मा जिसने तुम्हारे से जन्म लेना है उस शुक्र में पहुंच जाएगा । वहाँ से मां के शरीर मे जाएगा । वहाँ अपने शरीर का निर्माण करेगा तब जन्म होगा । तो सोचो अन्न से शरीर मे गया । रस, रक्त, मांस मेद, हड्डी मज्जा और शुक्र । इस तरह refined होता गया । कोई बड़ा ही तीव्र भाग्यशाली होगा । क्यों इस पृथ्वी में चला गया और वहाँ से अन्न के रूप मे आने में ही चार छः महीने चाहिए । वहाँ से पिता के शरीर में गया । वहाँ से मां के शरीर मे गया । वहाँ 9, 10 महीने चाहिए शरीर बनने के लिए । इस तरह पुनः जन्म लेने के लिए कम से कम साल डेढ़ साल का समय तो चाहिए ही । पशु पक्षी योनि में जल्दी आ जाएगा । सब योनियों मे जो जायस्व म्रियस्व उपनिषद् में कहा । 'अरमणीयाचरणा जायस्व म्रियस्व" ह्यसुरमणीया योनिमापद्येयमब्राह्मण योनि क्षत्रियोनिवैश्ययोनि । अथ येकपूयचरणाः कपूययोनिमापद्ये श्वानयोनि शूकर योनि चाण्डालयोनि ।" मंत्र कहता है जिन का आचरण पवित्र है । जिनके कर्म बड़े निर्मल है वो किसी पवित्र ब्राह्मण के घर मे जन्म लेगा । अथवा पवित्र क्षत्रिय के घर मे चला जाएगा या वैश्य के घर में जन्म लेगा । और जो 'रमणीय चरणा' नहीं है । कपूयचरणा हैं । जिनका कर्म निन्दित है वो कूकर शूकर योनि में चला जाएगा । तो जीव के कर्मों के अनुसार जीव की योनि का विभाग किया।

ऋषि वामदेव बड़ी पवित्रात्मा है । बड़े पवित्र परिवार मे आया और गर्भ मे ही साक्षात्कार हो गया । माने उसका एक कर्म ऐसा था जिसने उसको

यह जन्म देना ही था। श्रवण चाहे जितना भी करे । वहाँ जाते ही साक्षात्कार हो गया। इसको कहते है उत्तम अधिकारी। उत्तम अधिकारी को ज्यादा सुनने की जरूरत नहीं पड़ेगी। गुरु के मुख से महावाक्य का उपदेश सुनते ही साक्षात्कार हो जाएगा। वामदेव ने गुरु के मुख से महावाक्य का उपदेश तो सुना किन्तु साक्षात्कार होने से पहिले ही शरीर छूट गया। तो वामदेव को देखो मां के पेट मे जाकर साक्षात्कार हो गया। उसका जो पिता था उसने सोचा कि मेरा जो अभी पुत्र बन रहा है, उसका पुराना घर और परिवार कहाँ है। ऐसी महान आत्मा है। किसी महान आत्मा के परिवार में जन्म लेने का भी अर्थ है कि हम अपने को महान बनाएँगे तो कोई महान आत्मा आएगी। अपने अनुभव के लिए समझो, चोर का मित्र चोर ही बनेगा। बिजनेस मैन का पुत्र बिजनैस मैन ही बनेगा। जो ईमानदार है उसका मित्र ईमानदार ही बनेगा। सर्विस मैन है तो उसका पुत्र सर्विस मैन ही बनेगा। इसका अर्थ है कि जिस स्थिति में हम होंगे उसी स्थिति का आदमी हमारे पास आता है। इसी तरह मरने के बाद हमको उतने बडे ज्ञान वाला पिता, वैसी ही माता के पास जाना होगा। जितने बडे ज्ञान में हम जाएंगे। इसलिए मुमुक्षु को हर तरह से अपने को सुन्दर सुकर्मा और सुज्ञानी बनाते जाना चाहिए। यह नहीं सोचना चाहिए कि आगे क्या होगा ? आगे क्या होगा ? यह हमारे ऊपर नहीं है, इसका नि त्ता हो पीछे बैठा है। वो सबको आटोमैटिक भेज रहा है। यह आटोमैटिक आज कल नया शब्द आया है। किसी को कुछ करना नहीं पडेगा। Automatic बच्चे बने। Automatic कुमार बने। Automatic जवान हुए और Automatic ही बुढ्ढे बनते जा रहे हैं। बुढ्ढे बनने के लिए कुछ सोचना पडेगा ? नहीं। उसकी factory में सब कुछ Automatic हो रहा है। Automatic ही washout हो जाएगा। यह माया है।

यहाँ भगवान प्रजापति चाहते हैं कि इन्द्र और विरोचन दोनों ही आत्म ज्ञान वाले हो जाएं। इन दोनों को ठीक से आत्मा का ज्ञान हो जाए। इसलिए बोल कुछ नहीं रहे। क्योंकि इन्द्र भी महान ऐश्वर्यशाली है और बिरोचन भी उनको अपने बल पौरुष और ऐश्वर्य का अहंकार भी है। प्रजापति संकेत तो कर

रहे हैं 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते'। सत्य का ही संकेत कर रहे हैं। किन्तु इस सांकेतिक भाषा को यह लोग नहीं समझ रहे। इसलिए दृष्टान्त बदल २ कर दे रहे हैं। बदल २ दृष्टान्त देते हुए अन्त मे कहते हैं चलो अब तुम अपनी २ दाढ़ी मूंछ साफ करो। साफ सुन्दर वस्त्र पहनो। सुन्दर अलंकार धारण करो और फिर देखो तो जरा। क्या दीखता है? वह लोग सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करके देखते हैं और उनको वह सब कुछ दीखता है जो उन्होंने पहना हुआ है।

भगवान प्रजापति ने पूछा 'किं पश्यथ' बोले हम सब कुछ देख रहे हैं। सुन्दर वस्त्र देख रहे है। आभूषण देख रहे हैं। प्रजापति बोले 'एष आत्मा' यही आत्मा है। भगवान प्रजापति का अभिप्राय तो यह था कि जैसे केश दीखे, नख दीखें तो वह आत्मा नहीं है जैसे ही यह सुन्दर वस्त्राभूषण जो देख रहे हो यह आत्मा नहीं है। ऐसे ही यह दीखने वाला जो शरीर है यह भी आत्मा नहीं हैं। यह मिथ्या दर्शन है। इस मिथ्या दर्शन से बाहर निकलो। किन्तु यह इसी को आत्मा मान रहे हैं तो भगवान प्रजापति ने कह दिया कि ठीक है चलो यही आत्मा हैं। 'एष आत्मेत्यमृतमयं' यही आत्मा है, यही अमृत पद है, यही अभय पद है। दोनों ने भगवान प्रजापति को नमस्कार किया, परिक्रमा की और चल पडे।'तौ ह निरीक्ष्य' भगवान प्रजापति ने यूं देखा कि यह तो कुछ भी नहीं समझे और यूं ही चल पडे। इनका जो दर्शन है वो तो झूठा है। मन मे कहा 'आत्मानमननुविद्य व्रजतां' आत्मा का ब्रह्म स्वरूप समझने के लिए आए थे किन्तु समझे कुछ भी नहीं और बिना समझे ही चले जा रहे हैं। अपनी ओर से इनको युक्ति से तर्क से समझाने का प्रयत्न किया किन्तु यह समझ नहीं पाये। और चल पडे। 'एतदुपनिषदो भविष्यन्ति' भगवान प्रजापति कहते हैं कि अब तो उपनिषद ऐसी होगी कि या तो देवता जीत जाएंगे या असुर जीत जाएंगे। या आसुरी शक्ति बलवती होगी या देव शक्ति बलवती होगीं। यह लग एक दूसरे को हरायेंगें। इधर विरोचन ने अपनी speed तेज कर ली। उसने समझा कि असली सत्य को तो हमने जान ही लिया है। किन्तु इन्द्र धीरे २ चल रहा है। 'स ह शान्त हृदय एवं विरोचनोऽसुरान्जगाम'।

देखो एक बात समझो। आसुरी बुद्धि प्रत्यक्ष भोग से ज्यादा विश्वास

रखती है। देव बुद्धि प्रत्यक्ष भोग मे ज्यादा विश्वास नहीं करती। वह प्रत्यक्ष भोग से ऊपर रहती है। आसुरी बुद्धि प्रत्यक्ष भोग को पाकर प्रसन्न होती है। देव बुद्धि प्रत्यक्ष भोग को पाकर भी संतुष्ट नहीं होती। उसमे यह जिज्ञासा होती है कि इम और सत्य को समझें आसुरी बुद्धि मे जिज्ञासा नहीं होती। वह भोगों मे अधिक स्वाद लेने की कोशिश करती है यहाँ इन्द्र और विरोचन दोनों भगवान प्रजापति से सुन कर चल दिए। विरोचन जल्दी जा रहा है। उसने समझा कि जो दीख रहा है यही आत्मा है। उसने यह नहीं सोचा कि दर्पण मे तो केश और नाव भी दीखे। वस्त्र भूषण भी दीखे किन्तु यह सब तो आत्मा नहीं है। तो यह हड्डी मांस का ढैग जो शीशे में दीखा यह आत्मा कैसे है? विचार नहीं किया। इन्द्र धीरे २ जा रहा है। वह गम्भीर है वह विचार रहा है कि यह शरीर आत्मा कैसे हो सकता है। एक बडे विद्वान पंडित थे। उनके दो चेले थे। दोनों को वह पढ़ाते थे। दोनों का पाठ जुदा २ है। एक छोकरा आया उसको थोड़ी देर पढ़ाया और छुट्टी कर दी। दूसरा आए तो उसको एक २ घण्टा पढ़ावे उन पंडित जी की जो घरवाली थी उसने सोचा कि मेरे पति अन्याय करते हैं। एक को तो जल्दी भगा देते है और दूसरे को घण्टा २ बैठ कर पढ़ाते हैं। दोनों ही इनके शिष्य है यह अन्याय है। बस भन्ना गई। आज रोटी नहीं बनेगी। खाना दाना बन्द। आज खाना नहीं बनेगा। पंडित जी बेचारे खाने के time पर ही अन्दर जाते थे। गये तो वो रूठ कर बैठी है। क्या बात है, आज खाना वाना कुछ नहीं? बोली आज खाना नहीं मिलेगा। वो बोले क्या बात है, आज खाना क्यों नही मिलेगा? क्या कोई व्रत है? बोली न तो कोई व्रत है, न पर्व है। तुम जो यह घोर अन्याय कर रहे हो, इसलिए खाना नहीं बनेगा। उसने कहा, क्या अन्याय किया है मैंने? मैंने तो कोई अन्याय नहीं किया। वो कहती है एक छोकरे को तो घण्टा २ मथापच्ची करते हो और दूसरे को पांच दस मिनिट में ही भगा देते हो। यह तो बौद्धिक डकैती है। पंडित जी बोले बस इतने के लिए खाना बन्द है। ऐसा करो अब तुम खाना दाना ठीक करो और आज तुम स्वयं इसकी परीक्षा कर लेना कि इसको एक २ घण्टा क्यों पढ़ाता हूँ और उसको जल्दी क्यों भगा देता हूँ। पुरुष फुसला लेता है स्त्री को। खाना दाना ठीक करो। उसने खाना दाना ठीक किया। दोनों ने खाया। पंडित जी ने कहा मैं अन्दर बैठ जाता

हूँ और तू दरवाजे पर खड़ी हो जा छोकरे जब आते है तो कह देना 'भट्टस्य कट्यां सरटः प्रविष्ट' कटि कहते हैं कमर को। भट्ट की कमर मे सरट घुस गया है। सरट कहते हैं गिरगिट होता है न। कभी लाल हो जाता है, कभी हरा, कभी नीला, रंग बदलता रहता है। 'कृकलासा' बस तुम ऐसा बोल देना। बस उस दिन को जो भोलानाथ चेला था वो ही बेचारः पहले आ गया। माता जी दरवाजे पर ही मिल गई। नमस्कार किया और पूछा भट्ट जी कहाँ है? बोली 'भट्टस्य कट्यां सरटः प्रविष्ट' भट्ट की कमर मे तो सरट घुस गया है। वो यूँ आकाश की ओर देखने लगा। फिर बोला तो आज की छुट्टी होगी। चल दिया। आगे कुछ सोचने की आवश्यकता ही नहीं समझी। गुरु पत्नी को नमस्कार किया और गया। इतने में दूसरा आ गया। उसको भी कहा 'भट्टस्य कट्यां सरटः प्रविष्ट' भट्ट का कमर मे सरट घुस गया है। बोला 'छिद्राऽभावे कथं सरटः प्रविष्ट' वो सरट घुसने की जगह तो है ही नहीं। कमर में कोई छेद तो है नहीं फिर सरट कैसे घुस गया? पंडित जी वहीं से चिल्लाए मैं अभी आता हुँ। तुमको पढ़ाने के लिए। बेटा तू पास हो गया परीक्षा में। और पत्नी को समझाया कि देखा इसको एक घण्टा नहीं पढ़ाऊँ तो क्या दीवार पढ़ाऊँ। वो छोकरा तो पत्थर की शिला की तरह है। यह बुद्धिमान है। वो संतुष्ट हो गई कि विचार ठीक बैठता है।

इसी तरह इन्द्र बड़ा गम्भीर होकर सोच रहा है हम गुरु जी के पास आत्मा विद्या सीखने आए थे। पर क्या समझे। विरोचन तो मस्ती से मूछों पर ताव दे कर कहता है, हमने सत्य को पा लिया है। जल्दी २ असुरों के बीच मे पहुंचता है और कहता है हमने आत्मविद्या समझ लीं। अब कोई चिन्ता नहीं करो। 'आत्मानमेवेह मह्यात्मान् परिचरन्' रहस्य हमने समझ लिया है यह जो दीख रहा है बस यही आत्मा है। इसलिए इस आत्मा को खूब सजाओ और इस आत्मा खूब सुन्दर बनाओ। बढ़िया भोजन दो सुन्दर वस्त्र पहनाओ अलंकार पहनाओ। जो इस आत्मा को ठीक रखेगा वो इस लोक मे भी सुखी रहेगा, परलोक में भी सुखी होगा। इस प्रकार यह विरोचन का lecture चल रहा है।

कल और विस्तार से समझाने वाले हैं।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

६-६-८८

प्रवचन सं० ५६

"ॐ तस्मादप्यद्येहाददानमश्रद्दधानमयजमानमाहुरा-
सुरोबतेत्यसुराणां ह्येषोपनिषत्प्रेतस्य शरीरं भिक्षया वसने-
नालङ्कारेणेतिसँस्कुर्वन्त्येतेन ह्यमुं लोकं जेष्यन्तो मन्यन्ते।।"

(छान्दो.८-८-५)

विचार चल रहा है कि इन्द्र और विरोचन दोनों प्रजापति के पास ब्रह्म विद्या को सीखने के लिए गये थे। भगवान प्रजापति ने एक ही शब्द 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते' कहा। कि भाई देखो 'एषोऽक्षिणि पुरुषो' यह जो आँख के अन्दर पुरुष दिखाई देता है, यही ब्रह्म है यही आत्मा है। जैसा शीशे में मुँह दीखता है ऐसी छाया दीखी। इन्द्र ने विरोचन की आँख में देखा विरोचन ने इन्द्र की आँख मे देखा। एक छाया दीखी दोनों को। पहले तो यह यह बात याद रखो कि इन्द्र और विरोचन दोनों विरोधी है क्योंकि इन्द्र देव शक्ति प्रधान है और विरोचन असुर शक्ति प्रधान है ' परस्पर दोनों एक दूसरे के दुश्मन हैं। किन्तु यह इस ब्रह्मविद्या को सीखने के लिए एक महान गुरु के पास, भगवान प्रजापति ब्रह्म के पास। तो बैरभाव भूल कर आत्मभाव मे आ गये। पहले दृष्टान्त से जब भगवान प्रजापति ने देखा कि यह समझे नहीं तो दूसरा दृष्टान्त दिया। उदशराव का। कटोरे मे साफ जल भर उसमे अपने वस्त्राभूषणों से अलङ्कृत शरीर को देखो। जो नहीं समझो वो हम से पूछो। उसमे देखा। भगवान प्रजापति ने पूछा क्या देखते हो। बोले सब दीख रहा है। इस प्रकार दृष्टान्त से दो तीन बार समझाया और यह दोनों ऐसा समझें कि इन्हे आत्मा का

दर्शन हो गया । दोनों 'शान्तहृदयौ प्रवव्रजतुः' शान्त हृदय होकर वहाँ से चल पडे । प्रजापति ने यूं ताका ! कि यह दोनों तो कुछ भी नहीं समझे और बिना कुछ समझे ही लौट रहे हैं । यह तो छाया पुरुष को ही आत्मा समझ रहे हैं । प्रजापति अपने मन मे कहते हैं 'अनुलभ्यामानम अननुविद्य व्रजत' एतदुपनिषदो भविष्यति' तब हो या असुरी उपनिषद हो जाएगी या दैवी उपनिषद हो जाएगी एक को पराधीन होना पडेगा । अगर असुरों की उपनिषद हो जाएगी । अपने अनुभव के लिए भी समझो सोचते होगे कि यह विरोचन कब हुआ और यह इन्द्र कब हुआ, और उनकी कथा हम लोगों के लिए अभी तक चल रहीं है । विरोचन वो है जो इन्द्रिय प्रधान जगत मे घूमता है । इन्द्र वो है जो ज्ञान प्रधान जगत मे रहता है । अब तो इन्द्र और विरोचन पास मे ही हुए । ख्याल है दूर नहीं हैं । विचार करो अहं अहं तो करते हो किन्तु यह अहं है क्या ? मैं देखता हूँ, मैं खाता हूँ, मैं जाता हूँ । यह मैं २ तो ठीक है किन्तु इस अहं को क्या माने ? विरोचन दर्शन में विरोचन के पक्ष मे जो हैं वो कहते हें कि इस शरीर के अतिरिक्त और कुछ नहीं । यह शरीर ही 'अह' है । विरोचन के पक्षधारी शरीर को ही आत्मा मानते है । और कोई दूसरा आत्मा नहीं । इसलिए इस शरीर को विरोचन कहता है खूब सजा कर रखो । खूब बढ़िया २ इसको माल मसाला खिलाओ । आज कल तो विरोचन के पक्षधारी बहुत है । किन्तु जरा विचार करो कि अगर इस शरीर को ही 'अहं' माने कि यह शरीर स्वरूप ही हम हैं तो बिचार करना पड़ेगा कि इस शरीर का कौन सा स्वरूप है ? मां के पेट से जब बच्चा आया तो वो भी शरीर का एक स्वरूप था । दो साल बच्चा शरीर भी शरीर का एक स्वरूप था । कुमारावस्था का शरीर भी शरीर का एक स्वरूप था । युवावस्था का शरीर भी शरीर का एक स्वरूप था । फिर धीरे २. खाता पीता तो वही है किन्तु फिर भी सूखता जा रहा है । बुढ्ढा बुढ्ढी यूं ताकते है और कहते हैं हमारा कौन है ? क्या होगा ? एक दिन इस मुख में कितनी ताकत थी और अब सूखते जा रहे हैं । यह पूछो उस विरोचन से कि इन मे से कौन सा शरीर का स्वरूप तुम्हारा है ? स्वरूप शब्द का अर्थ क्या भला ? स्वस्वरूप य न परिवर्तते इति स्वस्वरूप जो अपना निज रूप हो । जिसका परिवर्तन न हो । वो अपना स्वरूप । जल से पूछो कि तुम्हारा क्या स्वरूप ? अपने अनुभव से सोचो।

'शीतलं जलं' जल का स्वरूप शीतलता है। अग्नि से जल को गर्म भी कर दो त। भी जल किधर लौटता है ? अग्नि ने गर्म कर दिया तो क्या हमेशा गर्म ही बना रहेगा ? नहीं पुनः शीतल होता जाएगा। फिर अपने स्वरूप शीतलता की ओर लौटता है क्योंकि यह जल का स्वरूप है जो जल को नहीं छोड़ता। अग्नि का स्वरूप है जलान। 'दहन लक्षणा अग्नि' जो पास मे आए उसे जला देना। इस अग्नि को हिमालय मे ले जाओ तो क्या यह अग्नि ठंडा हो जाएगा ? जैसे का तैसा ही रहेगा। अग्नि अपने स्वरूप को नहीं छोडेगा। वहाँ भी अग्नि मे हाथ डालोगे तो अग्नि जलाएगा। चाहे माऊँट ऐवरेष्ट का बाप हो। 'स्वरूपतत न व्यभिचरति'। जो कभी भी अपने स्वरूप से हटे नहीं अपने स्वरूप को छोड़ नहीं। अपने आश्रय को छोड़े नहीं। वो स्वरूप है। तो लोक दृष्टि मे जो पदार्थ है जिन्हे हम मिथ्या भी कहते हैं, उनका स्वरूप भी जो परमात्मा की ओर से निश्चित है वो बदलता नहीं। वो जैसे का तैसा ही रहता है। वायु द्रव्यं पृथ्वी सुदृढा। पृथ्वी अगर दलदल हो जाए तो, जहाँ पांव रखो अन्दर धस जाएगा। तो पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों का क्या हाल होगा ? इस पर रहले वाले प्राणी सब अन्दर घुस जाएँगे। जिस परमात्मा ने इस पृथ्वी की सृष्टि किया उस इसका ऐसा स्वरूप बनाया जिससे किसी को कोई खतरा नहीं दीखता। देखते नहीं कैसी बड़ी २ गाड़ियाँ दौड़ती चली जा रही हैं। इंजन दौड़ चले जा रहे है। बडे २ शूरवीर आए जो पृथ्वी को हिलाने की शक्ति रखते थे। तो भी पृथ्वी जैसी की तैसी ही है। पृथ्वी का स्वरूप यदि ऐसा न होता तो आज का विज्ञान तो ठंडा हो जाए। बड़े २ शहरों में तो सौ २ मंजिल की बिल्डिंग्स बन रही हैं। जिसका किसी काल मे और किसी अवस्था मे भी परिवर्तन न हो 'तत्स्वरूप'। अगर शरीर के स्वरूप मे इस आत्मा को मानो तो शरीर तो जन्म से अब तक कितने स्वरूप बदल चुका है। उनमें से कौन सा आत्मा है। कहोगे कि जो भी स्वरूप बदला वो आत्मा ही है। तो तुम्हारा यह जो आत्मा होगा। यह कैसा होगा ? यह विनाशी होगा। बचपन का स्वरूप नष्ट हो गया। युवावस्था का स्वरूप भी नष्ट हो गया। तो वो आत्मा भी नष्ट हो गया। ऐसे ही यह वृद्धावस्था का स्वरूप भी नष्ट हो जाएगा। तो क्या आत्मा निरात्मा हो जाएगा ? विरोचक कहता है कि हाँ मरने के बाद क्या रहता है ? पुरानी परम्परा मे घी

दूध का भोजन में विशेष महत्त्व था। 'यावज्जीवेत् घृतं पिबेत्' सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्' मांसाहारी लोग कम थे। दूध घी फल फ्रूट आदि अधिक खाए जाते थे। कहा जाता था। जब तक जीओ जगत मे सुख पूर्वक जीओ। 'ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्' ऋण लेकर भी घी पीओ। इससे तुम्हारे शरीर में बल फुर्ती उत्साह तेज सब आएगा। सामान्य आस्तिक प्रवाद है कि यदि ऋण कर के भरोगे तो तेली का बैल बनकर चुकाना पडेगा। सब से गन्दा जीवन तेली के बैल का है। तेली कोल्हू मे बैल को जोतता है और उसकी आंखों पर पट्टी बांध देता है। क्योंकि रास्ता तो उतना ही है और बैल को दिन भर घुमाना है। आँख खुली रख कर अगर वह घूगा तो उसको heart attack हो जाएगा कि दिन भर हम घूमें फिर भी वहीं के वहीं खडे है। घूमते रहो तुम को देखने की जरुरत नहीं। आँख बन्द कर दी।

यह माया भगवती भी ऐसे ही करती है। इस जीव को कोल्हू का बैल बना कर रखा है। कहोगे वो कैसे महाराज ? आँख बन्द कर के देखो हम पूर्व जन्म में कहाँ थे ? कुछ पता नहीं। क्या ऐसा मानोगे कि पूर्व जन्म मे हम नहीं थे ? थे। किन्तु पता नहीं कहाँ थे। उधर से आंख बन्द कर दिया आंख बन्द कर के ध्यान करो कहाँ जाओगे ? माने आगे की आंख भी बन्द। पीछे की आँख भी बन्द। वर्तमान मे लुप-लुप करते रहो। उतने मे ही हम लोग तीन लोकों को मुट्ठी मे करने की कोशिश करते है। इतने ज्ञान मे ही संसार को पाना चाहते हैं। जुगनू कीड़े की तरह ही लुप-लुप हो रहा है। इधर से भी आँख बन्द उधर से भी आँख बन्द, और घूमते रहो। तो तेली के बैल से क्या फर्क है हमारे मे। तेली के बैल जैसा ही यह माया घुमाती जा रही है कि घूमो बेटा इसी चक्कर मे। इसलिए आस्तिक समाज मे यह विश्वास है कि किसी के ऋणी होकर भरो नहीं। नहीं तो तेली के बैल बन कर ऋण चुकाना पड़ेगा।

इस बैल भाव से, इस पशु भाव से ऊपर उठने के लिए, बाहर निकलने के लिए यहाँ ब्रह्मविद्या का विचार है। जब इस ब्रह्मविद्या का विचार करने लगे तो विरोचन कहता है कि यह शरीर ही तो आत्मा है। शरीर को ही पकड़ लिया

विरोचन ने । और यहाँ कुछ मिला नहीं क्योंकि शरीर तो विनाशी है ।'भस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुत:' आत्मा अगर शरीर ही तो जब इस शरीर को जला दिया तो यह लौट कर अब आएगा नहीं । इसलिए कुछ लौटाने की चिन्ता नहीं करनी चाहिए । प्रत्यक्ष देहात्मवादी । देह को ही आत्मा मानने वाले प्रत्यक्ष देहात्मवादी । जो आस्तिक है वो तो विचार करेंगे । कहते हैं यदि इस शरीर को ही आत्मा मानोगे और कहोगे कि शरीर भस्मी भूत हो जाएगा और लौट कर नहीं आएगा । जन्म नहीं होगा । यह अर्थ निकला तो यह जो जन्म हो रहा है, यह क्या है ? देखो एक का जन्म तो राजमहल मे हो रहा है और एक का फुटपाथ पर हो रहा है । यह क्या है ? यह बताओ उसको फुटपाथ पर किसने रखा और उसको राजमहल मे ले जाने वाला कौन ? एक तो मम्मी भी फुट पाथ पर पड़ी है बेचारी मिट्टी मे । कपड़ा भी उसके शरीर पर नहीं है । कोई उसको देखने वाला भी नहीं है । और इस तरह वह जन्म ले रहा है । यह सब क्या है ?

बीरबल और अकबर का बड़ा इतिहास है । दोनों एक बार घूमते २ गांव की तरफ चले गये । वहाँ क्या देखा कि गांव की एक स्त्री थी उसको प्रसव हुआ और तुरन्त ही वह अपने बच्चे को साफ कर के डलिया मे डाल दिया और उठकर अपने काम मे लग गई । इसने तुरन्त बच्चे के जन्म के बाद बच्चे को साफ करके रखा और स्वयं काम में लग गई । अकबर ने वह सब देखा और बड़ा हैरान होकर बीरबल से बोला बीरबल इसमे इतनी ताकत है जो अभी २ बच्चे को जन्म दिया है और तत्काल काम में लग गई है। राजमहल में हम इतनी व्यवस्था करते है यह सब बेकार है । अकबर ने आकर आर्डर दे दिया कि महल में सब व्यस्था बन्द कर दी जाए । रानियों को जो भी facialities दी जाती हैं सब बन्द कर दी जाए । बेगमें तो घबरा गई । उन्होंने झट बीरबल को बुलवाया और रोनें लगी । सब जानती थी कि बीरबल के बिना कोई हमारी समस्या का हल नहीं कर सकता । हम बाजरे की सूखीं रोटी कैसे खाएँगी । जहाँ गेहूँ का नरम फुल्का भी कड़ा लगता था वहाँ बाजरे को सूखी रोटी कैसे खाई जाएगी । वो कम सुकुमार थोडे ही थी । लखनऊ की बात तो याद होगी । नवाब लोग बडे सुकुमार होते थे । नवाब साहब नाक बन्द कर के बैठें थे । इतने में एक दोस्त आ गया ।

उसने पूछा, नवाब साहब नाक क्यों बन्द कर के बैठे हैं ? नवाब साहब बोले कल गीले पैर से एक बिल्ली कमरे में घुस आई थी । इससे जुकाम हो गया । दूसरे ने यह सुनते ही छींक मार दी । उसको सुनते ही जुकाम हो गया। तो दोनों में सुकुमार कौन हुआ ? आपस में Compitition चलती है । एक दूसरे को बुद्धू बनाते रहते थे ।

इसी तरह ये बेगमें बेचारी भी सुकुमार तो थी हीं । बीरबल को बुला कर कहा यह समस्या है, हम लोग क्या करें ? बीरबल ने कहा आप लोग घब-राओ नहीं, मैं सब ठीक कर लूंगा । बीरबल ने जाकर राजमहल के बगीचे मे पानी देना बन्द करवा दिया आज से किसी पेड़ पौधे को पानी मत दो । सब मालियों ने पेड़ों को पानी देना बन्द कर दिया । बड़ा वजीर था । उसका हुकुम तो मानना ही था । पानी देना बन्द । राजमहल का बगीचा सूखने लगा । अकबर ने देखा तो बिगड़ा नौकरों पर यह सब क्या है ? राजमहल का बगीचा और पेड़ सब सूख रहे हैं । तुम लोग पानी क्यों नहीं देते । इन्होंने कह दिया कि बीरबल ने मना कर दिया है । बीरबल को बुलाया कि पानी के बिना पेड़ पौध कैसे हो रहे हैं ? यह आर्डर कैसे दिया ? यह किया क्या है ? बिना पानी के यह राज-महल का बगीचा हरा भरा कैसे रहेगा ? बीरबल बोला जहाँ पनाह जंगल के पेड़ पौधों को पानी कौन देता है ? वो बिना पानी के हरे भरे रह सकते हैं तो यह पेड़ पौधे भी वैसे ही बिना पानी दिए ही हरे भरे क्यों नहीं रह सकेंगे ? अकबर बोला बीरबल तुम हो तो बुद्धिमान पर बात कभी २ मूर्खो जैसी कर देते हो । यह तो पाले हुए पेड़ पौधे हैं । कोई तो गमलों के अन्दर है, इन्हें तो रोज पानी देना पड़ता है । बीरबल कहता है तो वो जो जंगली स्त्री को देख कर आपने रानियों का खाना दाना बन्द कर दिया है । वो तो गांव की स्त्री है उसको तो जन्म से अभ्यास पड़ा हुआ है मेहनत करने का, भूखे रहने का किन्तु यह तो महलों में रहने वालियां रानियां है इन्हें रोज इतनी facilities मिलती है इसी से यह हरी भरी है । अकबर ने सोचा बात तो ठीक है उस को सुविधा मिलनी चाहिए । यह जंगल के पेड़ तो है नहीं । यह कैसे सहन करेंगी । अबकर का दिमाग ठण्डा हुआ । इस प्रकार कभी २ आदमी गल्ती भी कर जाता है । उस गल्ती का परि-

णाम भी भोंगना पड़ता है उसको । तो यहाँ सोच जो यह राजमहल में आ गया और वो फुटपाथ पर पड़ा है इसका नियन्ता कौन है ?

आत्मा यदि शरीर के साथ ही मर गया तो यह राजमहल में क्यों गया और वो फुटपाथ पर क्यों बैठा है ? उसको किसने बिठाया है ? इसका नियम क्या है ? इसलिए जो आस्तिक है वो यह मानता है कि एक तपस्वी है, पुण्यकर्मा है । पुण्य कर्म कर रहा है । तप कर रहा है । अगर मरने के बाद इसके फल मे भद न होवे तो 'कृतनाशोऽकृताभ्यागम' दोष आता है ।

एक तपस्वी है जो पुण्य कर्म कर रहा है । एक महापापकर्मा है पाप में रत है । अनाचारी है, दुराचारी है । दोनों में क्या फर्क है ? जो पुण्य कर्मा है उसकी आत्मा परलोक मे भी महान होकर जाएगी । आस्तिक समाज मे यह बड़ा भारी विश्वास है कि वर्तमान कर्म का फल तो उनको भोगना ही पडेगा । आस्तिक समाज यही फर्क मानता है कि जो अनाचारी है, पाप कर्मा है, बुरे कर्मों में रत है वो वर्तमान में भले ही कुछ करे किन्तु अनाचारी की यहाँ भी निन्दा है । कौन बुरे कर्मों की प्रशंसा करता है ? देखने में भी आता है कि जो पाप कर्मों में रत है उसका यहाँ भी तिराका होता है , घृणा है । और जो तपस्वी है सत्कर्मा है, सदाचारी है उसकी यह भी प्रशंसा है । प्राचीन काल से भी बडे २ सदाचारी हुए हरिश्चन्द्र जैसे । आज तक हम लोग उनके गाने क्यों गाते हैं ? हरिश्चन्द्र कोई बाप था हमारा ? अभी तक हम लोग उनके नाम से अपने २ गोत्र का नाम लेते हैं । संकल्प में उन ऋषियों का नाम लेते हैं । क्यों ? अमुक गोत्र उत्पन्नोहम् अमुकनामाऽ हम् ? संकल्प करते हो कि नहीं ? क्यों ? उस ऋषि ने उतना तप किया है । गोत्र शब्द का अर्थ है 'गावो त्रायन्ते इति ' जैसे गवर्नमेंट पैन्शन नहीं देती ? क्यों देती है पैन्शन ? गावा गाय को भी कहते हैं । यह लोग गाय की रक्षा करने वाले ग्वाले नहीं थे । 'गाव इन्द्रियाणि' इन इन्द्रियो की रक्षा जिस ऋषि ने की । इस बुद्धि को भी गौ कहते हैं । इस बुद्धि का भी त्राण जिन्होंने किया । त्राण क्या किया ? बार २ जन्म मृत्यु से मुक्त किया । इन्द्रियों को विषयों के राग द्वेष से मुक्त करना ही इन्द्रियों को मोक्ष में भेजना है । इस जीवन

में कौन धनी मानी उदार है जो अपने नौकरों को पैन्शन देकर घर भेजे कि इसने जीवन भर हमारा काम किया है। हमारे लिए हड्डियाँ जिसी है । अब इसकी हड्डियों में बल नहीं रहा तो घर में खाएगा क्या ? तो आराम से खा सके इतना इसको मिलना चाहिए ।

गवर्नमेंट भी इसीलिए पैन्शन देती है कि इसने राष्ट्र के लिए अपना सारा जीवन रस दिया है तो अब यह घर बैठ कर आराम से दो रोटी खा सके । वह ईमानदार धनी मानी है जो अपने नौकरों के घरेलू जीवन की चिन्ता भी करे। इसी तरह यह इन्द्रियाँ तुम्हारी नौकर हैं। उदार मना वो ज्ञानी है जो इन इन्द्रियों को मोक्ष में भेजे । इन्द्रियों का अर्थ क्या समझे । पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच प्राण मन और बुद्धि । इतनों को मोक्ष में भेजना पड़ेगा । इनकी जो बड़ी मम्मी मम्मी है, बड़ी मम्मी कौन अविद्या, वो कहगी में भी इनके साथ ही जाऊँगी । मैं नहीं रहूँगी इनके बगैर । वो भी चली जाएगी । अविद्या भी चली गई । इसको कहते हैं विदेह मोक्ष । विदेह कैवल्य । इस विदेह कैवल्य में मुमुक्षु जाता है, विरोचन नहीं जाता । यह तो कीड़ी की तरह शरीर पर घूम कर एक दिन मर जाएगा । जैसे कोई कीड़ी शरीर पर चढ़ी और सारे शरीर का चक्कर मार कर चली गई । यह बिरोचन एक दिन शरीर के भोग को भोग कर ठंडा हो जाएगा । इन्द्र ज्ञान का अभिलाषी है । इसलिए वह अपनी शुद्ध बुद्धि के द्वारा एक दिन तत्व को पा जाएगा । इन्द्रः आत्मा । जीवात्मा । शुद्ध ज्ञान जब इस इन्द्र को को मिल जाएगा तो यह मोक्ष में चला जाएगा । आगे यह आने वाला है कि इसने भगवान प्रजापति ब्रह्मा से शुद्ध ज्ञान प्राप्त किया । किन्तु विरोचन तो यही रह गया । इसलिए विरोचन को समझा रहे हैं कि अगर तुम केपल देह मात्र आत्मा मे ही रहोगे 'कृतनाशोऽकृताभ्यागम कृतस्य कर्मणः नाशः अकृतः भोगः' यह बड़ा भारी दोष है । जो महान पुण्य कर्म है मरने के बाद अगर उसको कोई फल नहीं होगा तो यह कृतनाश दोष है । और जिस ने कुछ नहीं किया उसको कुछ मिल जाता है तो यह अकृताम्यागमा दोष आ जाएगा । बौम्बे जैसे शहर की कल्पना करो । एक का जन्म तीस मंजिले पर हो रहा है । अब सुविधाएँ मिल रही हैं । उसकी मम्मी तीस मंजिले पर बैठी है तो उसको किसने lift दिया ? और उसी

बिल्डिग के नीचे फुटपाथ पर भी उसी समय एक बच्चे का जन्म हो रहा है। तो उसे वहाँ किसने लाकर रख दिया। इन सब से तो देहमात्र आत्मा नहीं माना जा सकता। किन्तु जो विरोचन के पक्ष के अनुयायी हैं वो तो इसी बात को मानते हैं कि यह देहमात्र ही आत्मा है और कुछ भी नहीं।

विरोचन ने असुरों के बीच मे जाकर बड़ी कान्फ्रेंस कर डाली। 'विरोचनोऽसुरान्जगाम' कहा कि हम आज ही आए हैं। प्रजापति ब्रह्म से आत्मविद्या सीख कर आए हैं। यह शरीर ही आत्मा है। यही ब्रह्मविद्या है। इसलिए इस शरीर को दुःख नहीं देना चाहिए। इसको खूब सजाओ, अलंकृत करो। खूब बढ़िया २ माल खिलाओ। यह आत्मा महान है। इस शरीर की खूब सेवा करो। जो इस शरीर की खूब सेवा करेगा वह दोनो लोक पा जाएगा। 'इमंचामुंच' 'आत्मैवेह महय्य आत्मा परिचर्यः आत्मानवेवेह महय्यन्चात्मानं परिचरन्नुभौ लोकानवाप्नोति' प्रजापति भगवान ने कहा है कि इस आत्मा रूपी शरीर को ही पूजा करो। जो इस आत्मा की पूजा सेवा इस तरह से करेगा वो लोक परलोक दोनों पा जाएगा। ऐसा प्राणी जो आज भी बहुत कुछ पकड़ कर बैठा है वो जुठे हाथ से कौवे को भी उड़ा नहीं। दाल भात खा रहा है। कौआ आ कर कांव २ करने लगा तो कहता है मैं कैसे उड़ऊँ कोई दाना गिन जाएगा तो। कंजूस कहा बतलाओ यह कंजूस क्या छोड़ने वाला है। यह तो अपने भोग का ही ख्याल करेगा, दूसरे के प्राण की चिन्ता यह नहीं करेगा। 'अश्रद्दधानमयजमानमाहुः' यह किसी को कुछ दे नहीं सकता और अश्रद्धा करेगा। श्रद्धा आज तो हो नहीं सकती किन्तु अश्रद्धाशील न होवे जीवन में विश्वास राखे कि पूर्व में अच्छा किया है तो अच्छा मिल रहा है। यह शरीर जब छूट जाएगा तो खूब सजाएँगे इसको सुन्दर अलंकृत करेंगे। इसे अन्तिम संस्कार कहते हैं। यहाँ श्रुति कहती है बस इतने से ही हमने इस लोक को जीत लिया है? अपने आप को हरा कर चल दिए, यह माया की नगरी है। जीत तो क्या लिया। इसलिए श्रद्धाशील मुमुक्षु को अपनी आत्मा की खोज करनी चाहिए।

इन्द्र आगे सिर खुजाते २ खड़ा हो गया । कल इन्द्र लौट कर आने वाला है और भगवान प्रजापति से पूछने वाला है कि भगवान मेरेको क्या समझाया है आपने ?

अब सीधे होकर बैठो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

७-६-८८

प्रवचन सं०-६०

"ॐ अथ हेन्द्रोऽप्राप्यैव देवानेतद्भयं ददर्श यथैव खल्वयम-स्मिञ्छरीरे साध्वलङ्कृते साध्वलङ्कृतो भवति सुवसने सुवसनः परिष्कृते परिष्कृत एवमेवायमस्मिन्नन्धेऽन्धो भवति स्रामे स्रामः परिवृक्णे परिवृक्णोऽस्यैव शरीरस्य नाशमन्वेष नश्यति नाहमत्र भोग्यं पश्यामीति । स समित्पाणिः पुनरे-याय तं ह प्रजापतिरुवाच मघवन्यच्छान्तहृदयः प्राव्राजीः सार्धं विरोचनेन किमिच्छन् पुनरागम इति ॥"

(छान्दो ८-९-१।८-९-२)

कल इस बात को कहा कि विरोचन ने यह समझ लिया कि यह शरीर ही आत्मा है, यही ब्रह्म । इसके लिए भगवान ब्रह्मा ने कई दृष्टान्त भी दिए कि जिससे यह देहात्मभाव से ऊपर उठें । विरोचन का मन शरीर को ही आत्मा मान बैठा और उसने निश्चय कर लिया कि यही अमृत है यही अभयपद है । इन्द्र और विरोचन दोनों नमस्कार करके चल दिए । भगवान प्रजापति ने देखा कि यह तो बिना समझे ही जा रहे हैं किन्तु कुछ बोल नहीं सकते क्योंकि इन्द्र और विरोचन दोनों ही महान एश्वर्यशाली है । और अभिमानी हैं । मायिक ऐश्वर्य भी अधिक हो तो जीव के मोक्ष में बाधक बन जाता है । भगवान प्रजापति ने मन में इतना ही कहा कि या तो आसुरी उपनिषद् बढ़ जाएगी या दैवी उपनिषद् बढ जाएगी । विरोचन असुरों से पहुंचा और lecture देना शुरु कर दिया कि यह शरीर ही आत्मा है । यही ब्रह्म है । खूब खाओ पीओ और मौज करो । इसके सिवाय और कोई आत्मा नहीं हैं । इन्द्र भी साथ में चला तो गया था किन्तु कुछ दूर जाकर इसके मन में विचार आया कि तू क्या समझ कर लौटा है ? यहाँ समझना यह है कि देव बुद्धि में और आसुरी बुद्धि में भेद क्या है ? देव बुद्धि जो होगी वह सात्विकी बुद्धि होगी । सात्विकी बुद्धि के अन्दर चिन्तन होता है।

गीता में ज्ञान के तीन भेद किए । सात्विक ज्ञान, राजस ज्ञान और तामस ज्ञान । सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्विकम् भगवान कहते हैं'सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते' सम्पूर्ण भूतों में एक भाव अव्यय' एक अव्यय भाव, एक अविनाशी भाव है, ऐसा जिस ज्ञान से दीखे वो सात्विक ज्ञान है सात्विक ज्ञान तुमको अनेकता में एकता का दर्शन करवाता है । किन्तु राजस ज्ञान जो होगा

"पृथक्त्वेन् तु यज्ज्ञानं नानाभावान् पृथग्विधान्
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम्"

जो ज्ञान जुदा २ पदार्थों का प्रकाश करता है, माने जो पदार्थों में एकता को नहीं पकड अनेकता को ही पकड़ता है वो राजस ज्ञान है । उसको राजस ज्ञान कहेंगे । जो ज्ञान शरीर में ही आसक्त कर देवे, इसके ऊपर कुछ समझने ही न देवे, वो

तामस ज्ञान है । यह तामस ज्ञान अति मन्द है । इसकी अपेक्षा राजस ज्ञान ठीक है । सात्त्विक ज्ञान अति मन्द है । इसकी अपेक्षा राजस ज्ञान ठीक है । सात्त्विक ज्ञान सबसे महत्त्वशाली है । इस सात्त्विक ज्ञान में सम्पूर्ण भूतों मे एक अव्यय भाव को पकड़ता है । अविनाशी भाव को पकड़ता है । यह जो इन्द्र है, यह तो देवता है । इसका ज्ञान सात्त्विक है । सात्त्विक ज्ञान होने से भी यद्यपि अभी तक एक अव्यय भाव मे तो नहीं पहुंच पाया था किन्तु खोज में तो लगा हुआ है । रास्ते में जा रहा था सिर पकड़ कर सोचने लगा कि तू क्या समझ कर लौटा है ? 'अप्राप्यैव देवानेतद्भयं ददर्श' इन्द्र अभी रास्ते में ही है । देवताओं के पास नहीं पहुंचा उसने भय देखा । यह क्या भय देख रहा है कि तू समझ कर क्या आया है ? अभी कुछ भी नहीं समझा । 'यथैव साध्वलङ्कृतो अलङ्कृतो भवति' । भगवान प्रजापति ने कहा था 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो' इन्द्र ने झट विरोचन की आंख मे देखा तो उसे एक छाया पुरुष दीखी । विरोचन ने भी इन्द्र की आंख में देखा उसे भी छाया दीखी । इन्द्र कहता है कि यह वो छाया मात्र है । यह तो कुछ भी नहीं है । छाया पुरुष मे भ्रम हो जाएगा इसको दूर करने के लिए भगवान प्रजा-पति ने उदशराव का दृष्टान्त दिया । जल से भरा हुआ कुल्हड़ है प्रजापति ने कहा इसमे देखो । देखा । पूछा क्या है ? बोले वैसी छाया आकृति दीखती है । कहा सुन्दर अलंकार और वस्त्रों से सुसज्जित होकर फिर देखो । देखा ता छाया पुरुष में सुन्दर अलंकार दीखते हैं । अब सुन्दर कपडे पहनो, कंठलंगोट लगाओ और सूटिड़ बूटिड़ होकर शीशे के सामने खड़े होकर देखो । वहाँ भी सूट बूट समेत सब दीखता है । इसलिए कहा यह क्या है ? शरीर को सजाया तो छाया पुरुष भी सज गया । सुवसने सुवसन, परिष्कृते परिष्कृत अलंकृते अलंकृत । कपड़े में कहीं सल नहीं पड़ना चाहिए ।

इन्द्र मन में विचार करता है कि यह क्या दर्शन हुआ । अन्धेऽन्ध । अगर यह शरीर अन्धा है तो छाया है तो छाया पुरुष भी अन्धा स्रामे स्रामः । स्राम शब्द का अर्थ है, जैसे जुकाम होता है तो नाक में से पानी आता है, आंख में से पानी आने लगता है । उसी स्थिति में शीशे के सामने खड़े हो जाओ तो शीशे में भी वैसा ही दीखता है । परिवृक्ण परिवृक्णः । परिवृक्ण शब्द का अर्थ

होता है कट जाना । जैसे माताएँ साग आदि काटती हैं तो कभी उंगली कट जाती है । जुदी नहीं हुई पर कट गई । छाया मे जो दीखा तो उसकी उंगली भी कटी कटी हुई है । खून निकल रहा है । 'अस्यैव शरीरस्य नाशमन्वेष नश्यति' शरीर के नाश से नाश दीखा । वो भी नाश हो गया । इसलिए 'नाहमत्र भोग्यं पश्यामि' भोग्यं माने फलं । इस ज्ञान का मैं यहाँ कोई फल नहीं देखता हुँ । भगवान प्रजापति से जो ज्ञान लिया उस ज्ञान से कोई लाभ नहीं हुआ । कुछ भी नहीं मिला । पिता ने तो बहुत कुछ दिया पर हम खाली हाथ लौट रहे हैं । बस इन्द्र ने सिर नीचा किया और पीछे लौट पड़ा । लौट पड़े और यही निश्चय किया कि गुरु जी के पास जाना है स समित्पाणि पुनरागमति तं ह प्रजापतिरुवाच' प्रजापति तो खड़े ही थे । देख ही रहे थे कि कोई लौटता है कि नहीं । क्योंकि उनको भी इस बात का दुःख था कि हमने जो उपदेश किया उसको इन्होंने उल्टा ग्रहण किया देखा कि इन्द्र बड़ी श्रद्धा से विनय से शिष्य रूप धारण कर के पुन: लौट आया । इन्द्र में श्रद्धा थी इसलिए छाया जैसी थी वैसा ग्रहण कर दिया और विरोचन ने देह को ही आत्मा समझ लिया । छाया आत्मा नहीं किन्तु जिसकी यह छाया है वो आत्मा है ऐसा ग्रहण कर लिया । उदशराव का जो दृष्टान्त प्रजापति ने दिया वहाँ भी इन्द्र ने छाया को ही आत्मा माना । छाया आत्मा को ग्रहण किया । क्यों ? उसकी श्रद्धा बनी हुई है उसको यह लगता है कि इस छायात्मा का क्या हुआ ? इन्द्र को दोष दृष्टि हो गई । विरोचन ने तो शरीर को ही आत्मा मान लिया । इसलिए इसे दोष दर्शन नहीं हुआ । शरीर को आत्मा मानने में क्या हानि है । यह दोष दर्शन नहीं हुआ । इन्द्र ने सोचा कि छाया को आत्मा मानना व्यर्थ है इसलिए वह लौट कर चला आया ।

भगवान प्रजापति पूछते हैं किमिच्छन् ? तुम तो बड़े शान्त हृदय हो कर लौट गये थे । विरोचन के साथ चले गये थे । 'किमिच्छन् पुनराऽगमत' इन्द्र कहता है भगवन् यह जो आपने ज्ञान दिया है । इसका मुझे कोई फल नहीं दीखा। इस शरीर को सजाओ तो छाया पुरुष सजा हुआ दीखता । अच्छे वस्त्र पहनो तो अच्छे वस्त्र पहने हुए इसमें दीखता है । शरीर कहीं से कटा पिटा गया तो छाया पुरुष भी कटा हुआ दीखता है । अगर कोई और दोष है तो वो दोष भी छाया

पुरुष मैं दीखता है । 'अस्य शरीरस्य नाशमन्वेषनश्यति नाहमत्र भोग्यं पश्यामि' यह शरीर जब नष्ट हो जायगा, छाया पुरुष खत्म हो जाएगा । इसका [illegible] अर्थ और समझो कि किसी पदार्थ का बोध होने के लिए तीन चीज का बोध होना आवश्यक है । स्वरूप ज्ञान, लक्षण ज्ञान और प्रमाण ज्ञान होना आवश्यक है । आत्मा का स्वरूप क्या है ? आत्मा का लक्षण क्या है ? इस के स्वरूप का प्रमाण क्या है ? इसके सामने आत्मा का कोई स्वरूप भी नहीं आया । कोई लक्षण भी नहीं आया । कोई प्रमाण भी नहीं आया अब इन्द्र जैसे महान देवता के लिए अगर ज्ञान नहीं होगा तो और किसके लिए शक्य होगी ? आत्मा का वो स्वरूप जिसको जानने के लिए इन्द्र गया था वो कौन सा स्वरूप ? स्वरूपं स्वरूपं 'स्वरूपं तदन्न व्यवर्तते' जो अपने स्वरूप में परिवर्तन न होने देवे वो अपना निज स्वरूप। इस शरीर के स्वरूप को देखो तो यह रोज परिवर्तित हो रहा है । फिर भी तुम्हारी यह जो स्वरूपानन्द आत्मा है, 'अहं' इसके स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं हुआ कोई फर्क नहीं आता । जो अपरिवर्तित स्वरूप है वो सत् है वो चित् है वो आनन्द स्वरूप है ।

आज को एक आदमी बेहोश पड़ा है । आंख खुल गई तो सब खुश हो गये । दरवाजा बन्द कर के बैठा था । जो आयेगा किसी को नहीं देखेगा । अब दरवाजा खोल दिया तो जितने प्रिय बन्धु बाहर बैठे थे, प्रसन्न हो गये । इस लिए सच्चित् आनन्द स्वरूप है । यह तुम्हारा स्वरूप है । और लक्षण भी यही है । 'स्वरूपं लक्षणं' लक्षण का भेद करते हैं आचार्य तटस्थ लक्षण और स्वरूप लक्षण तटस्थ लक्षण जिसके रहने से यह शरीर प्यारा । [illegible] प्यारा है इसलिए यह शरीर भी प्यारा है यह तटस्थ लक्षण हुआ । 'यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते' जिस शरीर में यह सब भूत प्राणी जन्म ले रहे हैं । वो परमात्मा है । ब्रह्माण्ड शरीर में जो परमात्मा है वो एक शरीर में जो आत्मा है । स्वरूप लक्षण हो गया । यह अमृत है प्रमाण भी हो गया । श्रुति भगवती कहती है 'न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्र तारकं: नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः। सूर्य प्रकाश करता है किन्तु केवल रात्रि के अन्धेरे को ही दूर करता है किन्तु इस अहमास्पद आत्मा की ओर सूर्य की दृष्टि नहीं । सूर्य का प्रकाश जड है । सब का प्रकाश करते हुए

भी कुछ प्रकाश नहीं इसका । तुम्हारी आंख से जो प्रकाश हुआ वो अन्धेरे का भी प्रकाश और प्रकाश को भी प्रकाश है । कोई कहे कि अंधेरे का प्रकाश करो तो क्या करोगे ? टार्च ले आओगे । टार्च ले आने से अन्धेरे का प्रकाश दूर कहां होगा ? वो तो रते २ भग जाएगा । ज्ञान ही है जो अन्धकार का भी प्रकाश है और प्रकाश का भी प्रकाश है । ज्ञान के अतिरिक्त और कोई प्रकाश नहीं ऐसा । वो ज्ञान तुम्हारी का ही ज्ञान है । सूर्य इस आत्मा को प्रकाशित नहीं कर सकता ।

''नेमा विद्युतोभान्ति कुतोऽयमग्निः' यह चन्द्र और तारा गण कुछ भी प्रकाश नहीं करते । न यह विद्युत । यह मेघों के अन्दर जो विद्युत घूमता है यह भी नहीं । यह अग्नि देवता तो हमारे घर के चूल्हे में रहता है । आज कल तो वो चूल्हा भी नहीं । आज कल तो गैस है । पूरी परांठे बनाने वाला अग्नि क्या जानेगा । 'तमेव भान्तमनुभाति सर्वम्' यह रूप से भास हुआ तो अन्य रूप से वस्तु दीखेगी । यह मेरी है । एक जो बेहोश है, उस को भद रूप से, यह चीज मेरी भान होगा ? जो घर के दरवाजे बन्द कर के बैठ जाए, यह हमरा, यह हमरो, तो रोज करते हो किन्तु जब आंख का दरवाजा बन्द कर लिया तो यह बाहर का कुछ नहीं दीखता । इसी तरह अगर वो और अन्दर अपने दरवाजे बन्द कर लेता है । एक हफ्ते से बेहोश पड़ा है तो 'यह मेरा है' कहां से दीखेगा उसे । लोकभाषा में कहावत है कि निगाह चुकी माल दोस्तों का ।

रेलवे स्टेशन पर कहीं थूल से पड़ जाओ । नींद आ गई । जब आंख खुली तो लट्ठा पट्टा सब गायब । क्यों ? तुम्हारी आंख से बाहर हो गया था । यहां भी क्या है ? सौ वर्ष तक इस घर में देख रहा था । अब उसकी आंख बन्द हो गई । तो उस घर में अब क्या है उसका । घर की चीजें तो सब उनकी हैं जिनकी आंख खुली है । वस्तुएं उन्हीं की । जिनकी आंख बन्द हो गई उनका कुछ भी नहीं है । अब वह अगर पहले कोने में कहीं आवाज करे कि बेटा हम यह घर नहीं छोड़ेंगे । तो बेटा क्या कहेगा ? पिता जी भूत हो गये । अहं के बिना मम कुछ नहीं । 'तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति' उसका

भान होने से ही सबका भान है । यह मेरा यह तेरा, उसके प्रकाश से ही सब भासेगा । उसके प्रकाश के बिना कुछ नहीं । वो आत्मा है तभी तक सब कुछ है ।

महाभारत मे एक कथा आती । सुयज्ञ नाम का एक राजा हुआ । बड़ा धर्मात्मा, शूरवीर राजा था । यह संसार है । यहाँ रात भी चाहिए दिन भी चाहिए । शान्ति भी चाहिए झगड़ा भी चाहिए । अनादि काल से इस संसार में युद्ध भी होते रहते हैं । सुयज्ञ नाम का राजा बड़ा शूरवीर था । इसके राज्य पर शत्रु ने हमला कर दिया । पुराने जमाने में नियम था कि राजा युद्ध मे आगें रहता था । आज कल तो छोटे २ सिपाही आगे अफीसर पीछे रहते है । मरें तों छोटे किन्तु उस जमाने मे जिसका माल है वों आगे । राजा तलवार लेकर आगे रहता था, लड़ता था । राजा मारा तो सेना मे भगदड़ मच जाती थी । आज कल ऐसा कुछ नहीं । सीनियर मारा गया तो जूनियर सीनियर हो जाएगा । वो सुयज्ञ नाम का राजा युद्ध भूमि मे लड़ते २ मारा गया । सिर जुदा शरीर जुदा । लड़ाई खत्म हो गई । सेना भाग गई । हजारों लोग मारे गये । पड़े हैं मैदान में । इधर राजमहल मे पता लगा तो रानियाँ और सम्बन्धी राजा के शरीर को खोजने के लिए चल पडे । खोजते २ उनको राजा का शरीर मिल गया । सिर जुदा धड़ जुदा । सब सम्बन्धी चारों ओर से घेर कर बैठ गये और रोने लगे । राजा का शरीर बीच में पड़ा है । जीवों को शोक भी होता है । इनको रोते २ एक दिन दो दिन, तीन दिन हो गये । यह शरीर तुम्हारे रहने से सौ वर्ष भी चलेगा किन्तु तुम्हारे बिना चौबीस घण्टे भी रहने वाला नहीं । सड़ जाएगा । शरीर सड़ गया दुर्गन्ध मारने लगा । किन्तु सम्बन्धी हैं कि रोते ही जा रहे हैं । आत्मा है तो तो शरीर सड़ेगा नहीं । आत्मा के बिना यह शरीर मुर्दा है । प्रत्यक्ष अनुभव हो जाना चाहिए कि आत्मा ही अमर है । तुमको कोई सिद्ध की जरूरत है, सिद्ध तो तुम्हारे अन्दर हो बैठा है । उस सिद्ध से मिलो । उससे अपने मन को मिलाओ । जिसकी छाया मात्र से मुर्दे मुर्दे नहीं रहे, वो सिद्ध नहीं तो कौन है ? राजा का शरीर दुर्गन्ध मारने लगा । सब बैठें हैं । यमराज ने देखा । सुन्दर ब्रह्मचारी का रूप बनाया । सोच, इनको व्यामोह हो गया है । इन्हें कुछ समझाना चाहिए ।

सुन्दर बाल ब्रह्मचारी का रूप बनाया, मृगचर्म लपेटा। एक लंगोटी लगाई। हाथ में कमण्डुल पकड़ा हुआ, छलांग लगा कर राजा के शरीर के पास पहुँच गया। शरीर की ओर पीठ कर लिया और इनकी ओर मुँह करके ठाह मार कर रोने गला। जब कोई नई बात होती है तो मन की वृत्ति बदल जाती है। सबने देखा कि यह हमारी ओर मुँह कर के रो रहा है। राजा की ओर तो पीठ किया हुआ है। बोले वटु तुम किसको रो रहे हो? बटु कहते हैं ब्रह्मचारी, छोटा बच्चा होता है उसको, तुम किसे रो रहे हो? हम तो राजा को रो रहे हैं। यह बोला मैं तुमको रो रहा हुँ। हमको क्यों रो रहे हो? हम कोई मरे है क्या? बोले मरने वाले वो हो, इसलिए हमने अभी से तुम्हारे लिए रोना शुरु कर कर दिया है। पूछ तुम हो कौन? जो इस तरह रो रहे हो। बोले हम रोदन महासंघ के मैम्बर है। रोने वाली पार्टी। आज कल तो पार्टी बहुत हैं। हमारा धन्धा है जहाँ कोई गडबड हो वहाँ जाकर रोना। यहाँ क्यों रो रहे हो? तुम लोगों को रो रहा हूँ। यह अटपटी बातें सुन रोना तो बन्द हुआ। अब उससे पूछने लगे कि यह बताओ तुम हो हो कौन? तुम किस को रो रहे हो? यह कहता है कि तुम्ही सच बताओ कि तुम किसको रो रहे हो? राजा सुयज्ञ को रो रहे हो तो राजा तो तुम्हारे सामने पड़ा है। रोने की क्या जरूरत है? वो तो सामने पेटा पड़ा है। कहते हैं लेटा तो पड़ा है किन्तु जो पहले हंसता था, बोलता था, देखता था, खेलता था अब वो कुछ भी नहीं। इसलिए रो रहे है। वो कहने लगा वो खेलने वाला, वो बोलने बाला, हंसने वाला तो चला गया। वो तो जीवात्मा था। वो तो मरा नहीं। जब वो मरा ही नहीं तो तुम रो किसको रहे हो? शरीर को रो रहे हो तो वह तुम्हारे सामने पड़ा है। यह तो पहले से ही मरा मुर्दा था। आत्मा के रहते भी शरीर तो अपने स्वरूप म मुर्दा ही है। इसके लिए क्यों रोते हो। और आत्मा तो मरता ही नहीं इसलिए इसके लिए रोना बनता ही नहीं। इस तरह भगवान यमराज ने उन सब घर वालों को उपदेश किया।

"योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिन:
स्थाणुमन्ये नसंयन्ति यथाकर्म यथाश्रुतम्।"

यथा श्रुत का अर्थ है जैसा जिनका ज्ञान है, जैसा जिनका कर्म है 'योनिमन्ये

प्रपद्यन्ते' बहुत से लोग भाग्यशाली होते है । जिनके कर्म अच्छे होते हैं, जिनका ज्ञान अच्छा होता है । आगे मनुष्य योनि प्राप्त करते हैं । क्योंकि उनका ज्ञान और कर्म दोनों ही अच्छे हैं । । ज्ञान और कर्म यह दो ही हैं जो आगे योनि को शुद्ध करने वाले हैं । ज्ञान की हम परवाह नहीं करेंगे । कर्म की हम परवाह नहीं करेंगे तो कौन तुम्हारी चिन्ता करने वाला है । थोड़ा कर्म ठीक होगा तो गाय या भैंस का बच्चा बन कर आ जाओगे'। गधा बन कर आ जाओगे । यह भी योनि ही हैं । उनसे नीचे नम्बर तीन हो जाएगा । तो पक्षी योनि मे चले जाओगे । दो पंख लग जाएंगे । और जम्बो जैट की तरह आकाश मे उड़ते रहोगे । इंजन फेल हो जाएगा तो गिरेगा जम्बोजैट बेचारा । वो ही हाल होगा । 'योनिमन्ये प्रपद्यन्ते' इस तरह उपदेश करने से उनका जो शोक मोह दूर हुआ और वो लो लोग आत्म प्रज्ञा मे आ गये । बुद्धि मान जब आत्मा प्रज्ञा मे आ जाएगा तो शान्त हो जाएगा । निश्चिन्त हो जाएगा । 'तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः'

यहाँ इन्द्र को शंका हो गई कि हमको तो आत्मा को जानना था किन्तु हमने कुछ नहीं जाना । हमको ज्ञान का कुछ फल नहीं मिला । भगवान प्रजापति ने कहा अच्छा तुम बत्तीस वर्ष के लिए और डट जाओ । पहले कितने वर्ष बैठे थे ? बत्तीस वर्ष । और अब बत्तीस वर्ष और तप करो । ऐसे काम नहीं चलेगा । इसी तरह बैठो । तुमको और समझाने वाले हैं । इन्द्र बस ध्यान लगा कर बैठ गया कि गुरु महाराज की आज्ञा है कि ध्यान लगा कर बैठो ।

आगे कल समझाने वाले हैं ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

८-६-८८

प्रवचन सं० ६१

"ॐ स होवाच यथैव खल्वयं भगवोऽस्मिञ्छरीरे साध्वलङ्कृते साध्वलङ्कृतो भवति सुवसने सुवसनो परिष्कृते परिष्कृतः एवमेवायमस्मिन्नन्धेऽन्धो भवति स्रामे स्रामः परिवृक्णे परिवृक्णोऽस्यैव शरीरस्यनाशमन्वेष नश्यति नाहमत्र भोग्यं पश्यामीति ।। ॐ एवमेवैष मघवन्निति होवाचतं त्वेव ते भूयोऽनुव्याख्यास्यामि वसापराणि द्वात्रिँशतं वर्षाणीति स हापराणि द्वात्रिंशतं वर्षाण्युवास तस्मै होवाच ।।"

(छान्दो. ८-६-२।८-६-३)

भगवान प्रजापति ब्रह्मा ने इन्द्र और विरोचन को इस आत्मा का उपदेश किया। 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते ··' उन्होंने आत्मा का उपदेश तो ठीक ही किया, गलत नही किया किन्तु दोनो चेलों ने इसे उलटा ही ग्रहण किया ।'अक्षिणि पुरुषो' आंख का दृष्टा है, वो आत्मा है। इसकी व्याख्या कर के आए हैं। यह जो आंख का द्रष्टा है, जिससे आंख देखती है 'एष आत्मा' ऐसा कहा। इस में कोई झूठी बात नहीं है। 'प्रकर्ष आधार वशः गुणाः' गुण का प्रकर्ष आधार बश होता है। जैसा आश्रय होता है वैसे ही गुण का प्रकाश होता है। जैसे एक बड़े पवित्र विचार का व्यक्ति है। उसको थोड़ी बात भी समझाओ उसको अपनी बुद्धि में बैठा लेगा। और एक उतने अच्छे विचार का नहीं, उसे कितना भी समझाओ,

वह थोड़ी सी समझ पायेगा। दूसरे शब्दों में ऐसा समझो कि कोई सुन्दर कपड़ा है इस पर चित्रकारी करो तो अधिक सुन्दर दिखेगा। यह हिमालय है, यह माऊंट एवरेस्ट है, यह लोग चढ़ने वाले हैं। किन्तु एक वस्त्र मैला है, गन्दा है, फटा भी है। उसमे कोई चित्रकारी करोगे तो मैली नजर आएगी। जो वस्त्र स्वभाव से सुन्दर है, उस पर की गई चित्रकारी सुन्दर लगगी और जो स्वभाव से ही मैला है उस पर की गई चित्रकारी भी मैली ही दिखेगी। इसी प्रकार जितना ऊँचा तुम्हारा चित्त होगा उतनी ही ऊँची बात उसमें समझ में आएगी। चित्त जितना निम्न श्रेणी का होगा, डल (dull) होगा तो ऊँची से ऊँची बात भी कम समझ में आएगी। पकडेगा ही नही या उल्टा पकड़ेगा।

विरोचन भी है तो असुरों का सम्राट और ऐश्वर्य और बल में भी कम नहीं। जहां ऐश्वर्य अधिक होता है वहाँ भोगासक्ति भी ज्यादा होती है। उसका मन भोग में बंधा हुआ है। और इन्द्र का भी क्या कहना है वो भी देवराज है, कम नहीं है। उसकी भी वही हालत है। फर्क इतना ही है कि विरोचन का भोग आसुरी भोग है और इन्द्र का दैवी भोग है। दिव्य गुणों वाला भोग हैं, किंतु मोह में कोई कमी नहीं थी। इसलिए विरोचन ने समझा कि छाया पुरुष को छोड़ कर शरीर को ही आत्मा मान लिया जाये। और इन्द्र ने छाया पुरुष को पकड़ा इसलिए उसको दोष दृष्टि हो गई। सात्त्विक तो है। उसने सोचा यह क्या ज्ञान हुआ। सुन्दर कपड़े पहनो तो छाया पुरुष भी सुन्दर कपड़ों मे दीखा। अगर शरीर मे कोई व्याधि है तो यह भी ऐसा ही दीखता है। यह हम क्या समझे? यह तो इसका सब कुछ शरीर के अधीन है। किसका? छाया पुरुष का। इन्द्र ने सोचा। इसने सोचा यह ज्ञान नहीं है। हम अभी पूरे नहीं पहुँचे। लौट कर चला आया। बड़ी श्रद्धा से आया जैसे कोई शिष्य बड़ी श्रद्धा से समित्पाणि होकर गुरू के पास आता है। 'मघवञ्छान्तहृदय।' मघवा नाम इन्द्र का है, तुम तो विरोचन के साथ बड़े शान्त हृदय होकर चले गये थे। अब लौट कर आ गये? अन्दर से तो खुश हो रहे हैं। जैसे कोई जवान बेटा हो, पहले तो बाप की बात सुने ही नहीं तो खेद तो होता है किन्तु लौट कर आ गया तो बुढा अन्दर से खुश होता है। ऊपर से लाल आंखे दिखाता है। यह प्रजापति भी उस बुढ्ढे से कम थोडे ही

हैं । अन्दर ही अन्दर प्रसन्न हो रहे हैं कि यह लौट कर आ गया अब यह ब्रह्म विद्या के असली तत्त्व को पायेगा । और विरोचन तो शरीर पर ही रह गया। शरीर के बल से जीएगा । शरीर के ऊपर ही घूमेगा और चला जाएगा । शरीर अच्छा है तो यह अच्छा दीखता है और शरीर कटा पिटा है तो यह कटा पिटा दीखा । इसलिए प्रजापति चाहते हैं कि धीरे २ स्थूल से सूक्ष्म में चलो । सूक्ष्म से स्थूल मे मत आओ । जैसे जो पहले कहा 'य एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते' इसका अर्थ तो यह था कि इस आंख के अन्दर जो छाया पुरुष दीखता है। जैसे छोटे बच्चे को गोद में लो, उसकी आंख मे आंख लगाकर देखो । उसकी आंख में तुम्हारी छाया दीखेगी । तुम्हारी जो छाया बच्चे की आंख मे दीखी यह स्थूल ही की तो दीखी न । बस विरोचन के साथी उस स्थूल को ही आत्मा मान लेते हैं।

किन्तु यहाँ प्रजापति भगवान कहते हैं कि स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलो। जब सूक्ष्म में पहुँच जाओगे तो तुम्हारा मन वहाँ रुक जाएगा । यदि पहले ही सूक्ष्म की बात करोगे तो लौट कर स्थूल की ओर आ जाओगे । क्योंकि सारा व्यवहार तो स्थूल से ही होता है। बेटा बेटी माता पिता लोक जीवन में जो भी सम्बन्ध है वो स्थूल शरीर के बिना नहीं है । तो स्थूल शरीर में मोह कर के बैठ जाएगा । इसलिए कहा कि स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलना है। पुराने जमाने मे कहा करते थे कि इतनी घोड़ा अच्छा होता है। उस जमाने में घोड़ों के बिना काम नहीं चलता था लोग घुड़ सवारी करते थे । इसलिए कहावत है कि अमुक देश के घोड़े अच्छे होते हैं । जैसे सौराष्ट्र में काठियावाडी । तो होता यह था कि पच्चीस पचास घोड़ो के बच्चों को इकट्ठा खाना दाना दिया जाता था । एक को किले की दीवार के अन्दर बन्द रखा जाता था । किले के बाहर एक बड़ी खाई । दूसरी बड़ी खाई । तीसरी बडी खाई । उन खाईयों मे पानी भी भरा रहता था । जब देखा कि दो तीन वर्ष का हो गया है तो यह देखने के लिए कि कौन फुर्तीला है, कौन बढ़िया है, उस किले की दीवार के एक ओर तोप चलाई जाती थी । धम से जोर की आवाज होती है । डर के मारे बच्चे उछले । जो खाई को भी पार कर गया दूसरी, तीसरी भी पार कर गया वो असली घोड़ा माना जाता था । वो पास माना जाता था । बहुत से दीवार पर ही लटके रह

जाते थे। बहुत से खाई में फंस जाते थे। वो फेल। यह घोड़ा किसी काम का नहीं।

इसी तरह यहाँ भी समझो। यह माया भगवती को काम मत जानो। इसने तीन खाईयां इन घोडों के लिए रखी हैं। घोड़ा भी यहीं है। खाईयाँ भी यहीं हैं। जीवात्मा को घोड़ा समझो। पहली खाई यह स्थूल है। बहुत से जीव इसी म फंस जाते है उनको पता ही नहीं कि आगे क्या है? इस स्थूल शरीर के ठाठ बाट में ही सारा जीवन पार कर जाते हैं। कुछ विवेकशील बचते है यहाँ से तो सूक्ष्म शरीर की खाई में फंस जाते है। सूक्ष्म शरीर पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, पच प्राण मन और बुद्धि सत्रह तत्व का सूक्ष्म शरीर। इसी में फंस गये। देखते नही हो बहुत से मन की कल्पना में उलझे रहते है। एक बड़ा स्टार चला गया बेचारा। बहुत काम किया उसने। यह फिल्मी स्टार क्या है? पढ़े लिखे विद्वान भी नावल आदि पढते हैं। सूक्ष्म शरीर का प्रधान पार्ट तो मन ही है। उसी की कल्पना मे जीवन पार हो जाता है। जो इस खाई से थोड़ा आगे निकला वो आनन्दमय कोश में फंस गया। खाना और सोना। खूब खाओ और सो जाओ। सोने मे ही आनन्द है। कितना सोना है इसकी भी व्यवस्था नहीं है। सूर्योदय से पहले उठना चाहिए। तब तुमको ठीक सोमरस मिलेगा। 'अग्नि सोमात्मक जगत' सोम का प्रतीक है चन्द्रमा। जिस जगत में रहते हो वह जगत क्या है? अग्नि सोमात्मक है। अग्नि का प्रतीक है सूर्य। आज का बुद्धिमान सूर्य में तो दिन भर घूमता रहता है किन्तु रात को बक्से में बन्द। यह सीमेन्टेड घर क्या है? just like a box किवाड़ खिड़कियाँ बन्द कर लेते है और पंखे चला देते हैं। सोम कहाँ से मिलेगा? सोम का प्रतीक तो चन्द्रमा है। चन्द्रमा की किरणों के द्वारा जो सोमरस तुमको मिलना चाहिए वो मिला नहीं। चांदनी मिली नहीं। पुराने जमाने में लोग सवेरे तीन बजे उठते थे। एक बुढा रहा। सवेरे तीन बजे उठ जाए और तीन मील घूमने रोज जाए। हाथ में लोटा भी लिया हुआ है। जिस में दो किलो पानी भरा है। लोटा उठाया और चल दिए दो मील। पेट भी साफ और शरीर भी स्वस्थ। एक दिन की बात है, छोटी बेटी थी पौत्री उनकी। उसने उनके लोटे मे रंग डाल दिया। बुढे को पता नहीं था। दो ढाई

मील तो चल कर गया। फिर कहीं जंगल के किनारे बैठा। पानी लिया। उठा देखा तो जमीन लाल। बाप रे बाप मेरी तो आंतड़ियाँ फट गई। सारा खून निकल गया। दुःखी हो गया, हाय २ करने लगा जैसे तैसे उठ कर चला आया। लोटे को छोड़ कर तो कैसे आता। साथ ही लेता आया। जैसे ही घर के दरवाजे में घुसा, तो बुढ़िया आंगन मे झाड़ू दे रही थी। लोटे को तो बुढे ने यूं दे मारा बुढ़िया अगर जीती हो बुड्ढा बड़ा नखरेबाज होता है। नखरा करेगा उसके सामने। यूं गिर पड़ा उसके सामने। बुढ़िया ने भी झाड़ू यूं फैंका और दौड़ कर आई। बोली क्या बात है? उठा कर ले आई और खाट पर लिटा दिया। बुड्ढा बोला कृष्ण की मां आज तो कुछ भी नहीं हो रहा। सारा खून निकल गया। उसने झट् बड़े लड़के को उठया कि जल्दी जाकर वैद्य को बुला लाए। थोड़ी देर में छोकरी उठ कर आई। दादा की खाट के नीचे देखा तो वह लोटा नहीं। वहीं दरवाजे में खड़ी २ सिसकी मार कर रोने लगी। दादी ने पूछा क्यों रो रही हो? दादा की खाट के नीचे मैंने लोटे लाल रंग घोल कर रखा था। वहाँ अब लोटा ही नहीं बुड्ढा चौंका झट बोला कृष्ण की मां अब मैं ठीक हो गया हूँ। वैद्य को मत बुलाओ। उसने सोचा कि वैद्य आएगा तो चार पाँच रुपये ले जाएगा।

बताओ यह रोग कहाँ से आया? भ्रम ही सबसे बड़ा रोग है। जो नहीं था वो समझ लिया। जो था वो नहीं समझा। तो तुम्हारे दुःख के लिए कोई सच्ची वस्तु ही हो, ऐसा जरूरी नही है। यह माया भगवती तुम्हारे सामने देखने की चीजे ही देती है। यह गुलाब का फूल देखो। कितना सुन्दर है। किन्तु देखने का ही है। सायंकाल तक कुछ भी नहीं रहेगा। पंखुड़ी २ हो जएगी। पर सत्ता का विचार ही नहीं करेंगे तो यह जड़ पदार्थ तो पकड़े ही रहेंगे। कौन छुड़ाएगा इनसे? कोई छुड़ाने वाला नहीं। इसलिए स्थूल से सूक्ष्म की ओर आओ। भगवान प्रजापति का अभिप्राय है कि स्थूल से सूक्ष्म की ओर आओगे तो तुम्हारी आत्म दृष्टि बनेगी।

इन्द्र को स्थूल से सूक्ष्म की ओर ले आने के लिए भगवान प्रजापति कहते है 'एवमेवैषमघवन्निति होवाचैतं त्वेव ते भूयोऽनुव्याख्यास्यामि वसाप-

राणि द्वात्रिंशतं वर्षाणीति स होपराणि द्वात्रिंशतं वर्षाण्युवास' भगवान प्रजापति परीक्षा ले रहे हैं । यहाँ तप करवा रहे हैं । बिना तप के भी विद्या ठहरती नहीं । इसलिए कहा बत्तीस वर्ष और बैठ कर तप करो । तब हम तुमको समझाएँगे । फिर हम तुम्हारे लिए व्याख्यान करेंगे । जिज्ञासु भी दृढ़ प्रतिज्ञ होना चाहिए । दृढ़ हृदय दृढ़ संकल्प होना चाहिए । चंचल चित्त होगा तो कुछ नहीं करेगा । स्थिरमति होगा तो कुछ पकडेगा । किसी कालेज मे भी study कहते हैं तो देखने में आता है कि जो स्थिरमति लड़का होता है वो प्रोफेसर का भी प्रोफेसर बन जाता है । किन्तु जो स्थिरमति नहीं होगा वो केवल पास भी होगा तो third division होगा । वहा lecture देने वाला प्रोफेसर तो एक ही था । पढने वाले लड़के जुदा २ थे । यहाँ पर भी भगवान प्रजापति कहते हैं हे इन्द्र तेरे लिए अब हम इस बात को स्पष्ट करते हैं 'इत्येष आत्मेति होवाचैतदमृतमभय-मेतद् ब्रह्मेति स ह शान्तहृदयः प्रवव्राज ।।' फिर उपदेश किया पहले स्थूल को पकड कर समझाया था अब सूक्ष्म शरीर को पकड़ कर समझाते हैं । भगवान प्रजापति कहते है 'य एषस्वप्ने महीयमानश्चरत्येष आत्मा होवाच' स्वप्न मे जो महिमाशील है । अपनी महिमा में विचरण करता है । वो आत्मा है । माने जाग्रत के शरीर से न्यारा कर दिया उसको । इन्द्र को जाग्रत के स्थूल जगत से स्वप्न के सूक्ष्म जगत मे ले गये । स्वप्न जो होगा वो सूक्ष्म शरीर से भासमान होगा । वहाँ स्थूल शरीर काम नहीं करेगा । वहाँ मन काम करेगा, बुद्धि काम करेगी आनन्द भी वहाँ काम करेगा । दूसरे शब्दों में ऐसा समझो कि स्वप्न में चार कोश काम करते हैं । प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय यह चार कोश स्वप्न मे काम करते हैं । जाग्रत मे पांचो कोश काम करते है । अन्नमय कोश भी काम करता है । प्राणमय भी जाग्रत मे काम करता है । मन भी जाग्रत मे काम करता है । बुद्धि भी जाग्रत मे काम करती है । आनन्दमय कोश अविद्या भी वहाँ काम करती है । स्वप्न में स्थूल शरीर काम नहीं करता ।

अब स्थूल से सूक्ष्म में जाकर 'एष आत्मेति होवाच ।' हे इन्द्र 'य स्वप्ने महीयमानश्चरत्येष आत्मा होवाच।' स्वप्न मे जो अपनी महिमा मे विचरण करता है वो आत्मा है । स्वप्न में महिमा क्या है ? तो देखो जाग्रत में एक छोटा सा

मकान बनाना पड़ता है तो, बाम्बे के रहने वाले हैं, बड़े शहरों के लोग उनको एक flat बनाना पड़े तो खोपड़ी के बाल साफ हो जाते हैं । वहाँ बिल्डिंग बनाना तो बड़ा मुश्किल है । और यहाँ स्वप्न मे देखो हिमालय जैसे पहाड़ खड़े हो जाते हैं, बड़े २ शहर बन जाते हैं । यह सारी सृष्टि किसकी है ? इधर समुद्र लहरा रहा है । यह तुम्हारी सृष्टि है । तुम इस सृष्टि के कर्त्ता हो । अपनी सृष्टि के कर्त्ता होकर अपनी ही सृष्टि में विचरण करते हो । ईश्वर में और तुम्हारे में क्या फर्क है । सोचो । जैसे ईश्वर अपनी सृष्टि कर के उसमे विचरण कर रहा है । कोई बड़ा सिद्ध, आज कल सिद्ध मानते है उसको जो कोई बड़ा जादू का खेल कर के दिखा दे । उसको कहते हैं तुम तो भगवान हो ।आज कल भगवान बहुत है । तो स्वप्न मे सारी सृष्टि जो बनी यह किससे बनी । हिमालय जैसे पहाड़ है , बड़े २ जंगल है, उसके अन्दर शेर भी घूम रहा है । यह सब क्या है ? तुम्हारे मन का आकार है । सब तुम्हारे मन की सृष्टि है । उसके अन्दर कही शेर के रूप मे तुम घूम रहे हो । कहीं तुम आदमी के रूप मे दीख रहे हो । दोनों आकार तुम्हारे हैं । तुम एक आकार मे शेर भी हो, दूसरे आकार मे आदमी भी हो । इतनी बड़ी सृष्टि तुमने की हुइ है । इतनी बड़ी सृष्टि करने वाला असिद्ध कैसे होगा ? यह सिद्धों का भी सिद्ध है । किन्तु हम लोग इस बात को समझते नहीं । इसलिए गड़बड़ होती है, और कुछ नहीं । 'एषस्वप्ने महीयमानश्चरत्येष आत्मा एतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति' अरे इन्द्र यही आत्मा है । यही अमृत है ।, अमृत में से अ निकाल लिया तो क्या बचा ? मृत माने मुर्दा । तो पहले जीता था ? मुर्दा जिसके करंट मे जाकर मुर्दा नहीं रहा वो कितना बड़ा सिद्ध है । 'अ' के करंट मे गया । अ माने आत्मा । अ के करंट मे जाने से ही यह मुर्दा मुर्दा नहीं रहा । जो आएगा प्यार करेगा । कोई झगड़ा भी करेगा । किन्तु झगड़ा भी तभी तक करेगा जब तक आत्मा के करंट मे रहेगा । जहाँ आत्मा के करंट से जुदा हुआ कि दुश्मन नहीं । दुश्मन कहता हुआ भी प्यार कर रहा है । कहता है था तो दुश्मन किन्तु चला गया । अब क्या झगड़ा । अब कोई झगड़ नहीं । यही अमृत पद है, यही अभय पद है । पति पत्नी प्रिय सम्बन्ध हैं किन्तु मुर्दे पति के साथ में पत्नी अकेले बैठने को तैयार नहीं । 'भार्या बिभ्यति तस्मिन्काये' आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं कि इतना प्यार करने वाली पत्नी भी जब शरीर

छोड़ देता है तो उस काया से वो डरतीं। यह काया ? वो पति तो चला गया। इसका अर्थ क्या है ? यह काया पति थोडे ही है। अब देखने मे कितना भयशील है। कितना बदसूरत है। तो इतने भयंकर को, इतने बदसूरत को जिसने इतना सुन्दर बना रखा, इतना प्यारा बना कर रखा। वो स्वयं कितना सुन्दर होगा ? कितना प्यारा होगा ? सोचो अपने मन में। ऐसा वो आत्मा है। 'अभयं ब्रह्मेति' वो अमृत है, अभय है, ब्रह्म है। दूसरा और कोई नहीं है। इन्द्र ने सूक्ष्म दृष्टि से इस पर विचार किया। इन्द्र के मन मे जो बुखार था कि मैं कुछ नहीं समझा। अब उसको बोध होने लगा। 'सशान्तहृदयः प्रावव्राज' शान्त हृदय से भगवान प्रजापति को नमस्कार किया और चल दिया। चल तो पड़ा किन्तु फिर भी देवता है, मनन करता हुआ जा रहा है। श्रवण के बाद मनन भी जरूरी है।

महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं हे मैत्रेयी 'आत्मा व अरे श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः' तू सुन तो सही। दूसरों के गाने सुनते २ तो बुढे हो गये। अपने गाने भी तो सुनो। कि तुम कौन हो ? 'आत्मा व अरे श्रोतव्यः' इस आत्मा का श्रवण करो। मन्तव्यः यह क्या है ? श्रवण ही नहीं मनन भी करो। इसके लिए आचार्य कहते हैं 'श्रोतव्य श्रुति वाक्येभ्यः मन्तव्योश्चोपपत्तिभि' आत्मा का श्रवण श्रुति वाक्य के द्वारा करो। तो तुम्हारे अन्दर शक्ति प्रकट होगी। श्रवण मनन और निदिध्यासन तीनों चीजे हो गई। यह तीन चीजे जब मिल जाएगी तो तत्त्व की अनुभति हुए बिना नहीं रहेगी। असली तत्त्व स्पष्ट हो जाएगा। इसलिए इन्द्र श्रवण भी कर रहा है, मनन भी कर रहा है। 'एतद्भय मन्ददर्श अप्राप्यवेदावन्' अभी रास्ते मे ही है। उसको तो भय दीखा। क्या हमने समझा . गुरु जी से हम क्या समझ कर आए है ? हम कुछ भी समझ कर नहीं आए। उसके लिए कहते है 'भयं ददर्श' यह बात ठीक है, यह शरीर अन्धा है किन्तु जब स्वप्न देखेगा तो स्वप्न मे अन्धा अन्धा नहीं रहता। स्वप्न मे जब देख रहा है तो इसका मतलब है कि अन्धा नहीं है। जाग्रत अवस्था मे बीमार भी है। स्वप्न मे स्वस्थ ही दीखेगा। बीमार नहीं। इतना तो समझ मे आया कि जाग्रत के शरीर से तो यह जुदा है, इसके दोषों से देह दूषित नहीं है 'नवधेनाऽस्य हन्यते' जाग्रत के शरीर को किसी ने मारा तो चोट लग गई तो स्वप्न मे अपने शरीर को ठीक समझेगा। स्वप्न मे

वो मारा या पिटा हुआ नहीं दीखेगा।

इन्द्र कहता है फिर भी स्वप्न मे गड़बड़ तो है। अगर कोई डंडा लेकर पीटे उस समय स्वप्न में, तो पीड़ा तो होती है। चोट तो लगती है। जंगल में जा रहे है, tiger है तो भय भी लगता है। दुःख भी हुआ। मालूम पड़ा कि हमने आत्मा को नहीं समझा। यह तो मेरे को डरपोक आत्मा नजर आया। स्वप्न मे जो मैंने देखा वो आत्मा ता डरने वाला है। भयभीत होने वाला है, तो अभय पद मे नहीं डहुंचे हम। 'एतदमृतमभयमेतद्ब्रह्मेति।' प्रजापति ने तो कहा था। ब्रेक लग गई। यह अमृत कहाँ है? अभय कहाँ है? अभी हमारा दर्शन अधूरा है। अभी हमने आत्मा को कुछ नहीं समझा। श्रुति स्पष्ट करती है 'न बधे नास्य हन्यते ध्नन्ति' शब्द का अर्थ है यदि कोई इसको मारता है तो मार का अनुभव होता है 'विच्छादयति' इसको भयभीत करता है। 'अप्रियवेत्ताइव' कोई वस्तु प्रिय नहीं है वो अप्रिय लगती है। इसको स्वप्न मे 'रोदिति' रोने लगता है तो जाग्रत मे और स्वप्न में क्या फर्क पड़ा। यद्यपि जाग्रत की अपेक्षा स्वप्न सूक्ष्म है किन्तु सूक्ष्म होने पर भी विकार तो है। हम तो उस आत्मा को चाहते है जिस में कोई विकार नहीं। इस शरीर में नाना विकार है। नाना विकारों के रहते हुए भी आत्मा निर्विकार है। एक दिन यह शरीर मर जाएगा तो भी चेतन आत्मा जैसे का तैसा ही निकल जाता है। अच्छा भाई तू रहने नहीं देता और तू हमारे रहने के लायक भी नहीं रहा इसलिए अब हम यहाँ से चलते है। 'न अत्र भोग्यं पश्यामि न फलं पश्यामि'

इन्द्र ने समझ लिया कि हमारा यह ज्ञान भी लंगड़ा है। इसमे कोई फल नहीं। 'अभयपदंन पश्यामि' यह अभयपद नहीं है इन्द्र ब्रेक मार कर खड़ा हुआ और धीरे २ पीछे लौटा। आज ब्रह्मा के पास पहुंचने वाला नहीं। यह पहुं-चेगा कल। अब सीधे होकर बैठो।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

९-६-८८

प्रवचन सं० ६२

"ॐ य एष स्वप्ने महीयमानश्चरत्येष आत्मेति होवाचैतद-मृतमभयमेतद् ब्रह्मेति स ह शान्तहृदयः प्रवव्राज स हा-प्राप्यैव देवानेतद्भयं ददर्श तद्यद्यपीदं शरीरमन्धं भवत्यनन्धः स भवति यदि स्राममस्रामो नैवैषोऽस्य दोषेण दुष्यति।।न वधे-नास्य हन्यते नास्य स्राम्येण स्रामो घ्नन्ति त्वेवैनं विच्छादयन्ती वाप्रियवेत्तेव भवत्यपि रोदितीव नाहमत्र भोग्यं पश्यामिति ।।"

(छान्दो. ८-१०-१।८-१०-२)

विचार चल रहा है कि स्थूल से सूक्ष्म में आना । भगवान प्रजापति इस बात को पहले से कहते आ रहे हैं "एषोऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते ।" यद्यपि इन्होंने बात तो सीधी बतलाई थी कि यह आंख जिसकी कृपा से देखती है वो ही आत्मा है । किन्तु जो शिष्य हैं जिज्ञासु उन्होंने केवल छाया पुरुष को पकड़ा । यथाश्रुत जो अर्थ है उसको नहीं पकड़ा मानै आंख के अन्दर जो छायारूप पुरुष है वो आत्मा है । उदशराव का दृष्टान्त दिया और भी दृष्टान्त दिए । सुन्दर वस्त्र भी पहने और इन सब के द्वारा विरोचन का निश्चय हो गया कि यही आत्मा है । तो विरोचन तो बेचारा पहले ही चला गया । किन्तु इन्द्र ने सोचा यह क्या आत्मा है ? हमारे पास कुछ भी नहीं । यह छाया पुरुष है यह तो दोषपूर्ण है । शरीर मे

जो भी दोष है वह सब छाया पुरुष मे दीखेगा। शरीर लंगड़ा है तो यह छाया पुरुष भी लंगड़ा ही दीखेगा।तो आत्मा का ज्ञान तो अपने को हुआ नहीं। तो फिर चलो। इन्द्र देवता है। देवता होने के कारण सात्त्विक बुद्धि है। जिज्ञासा है सत्य को जानने की। इसलिए लौट आया और लौट कर बोला भगवन् हमको तो कुछ भी नहीं समझा। यह हमने क्या समझा यह तो जैसा शरीर है वैसा ही दोषयुक्त छाया पुरुष दीखता है। यह आत्मा तो अमर आत्मा नहीं। भगवान प्रजापति ने कहा तब इन्द्र तुम 'द्वात्रिंशतं वर्षाणि' बत्तीस वर्ष तक और तप करो। जिज्ञासु शिष्य जैसे गुरु के पास रहते हैं इन्द्र इसी प्रकार बत्तीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण कर के फिर बैठ गया। एक बात और समझो जिज्ञासु मे धैर्य भी होना चाहिए। धूर्तता तो चट से पट होती है किन्तु अच्छाई चट से पट नहीं होती। श्रुति कहती है 'शान्तो, दान्त उपरतस्तितिक्षु: समाहितो भूत्वात्मन्येवात्मानं पश्येत्' मुमुक्षु शान्त होवे। मन के अन्दर अनावश्यक चंचलता नहीं होवे। मन मे जो अनाश्यक चंचलता होगी वो न यहाँ का रखेगी न वहाँ का रहेगी। भोजन भी करो तो मन शान्त नहीं होगा तो तुमको भोजन मे भी स्वाद नहीं आएगा। जों हमारे शरीर के लिए आवश्यक है। मन को स्थिर नहीं रखोगे तो उसमे तुमको स्वाद नहीं आएगा। इसलिए मन को स्थिर रखना पडेगा। तो उस सूक्ष्म रूप को समझने के लिए मन को क्यों स्थिर नहीं रखे। जो दीखता है वो कुछ नहीं है। एक दिन बच्चे दीखते रहे इस शरीर मे, तो वो बच्चे सच्चे दीखे कि झूठे दीखते रहे ? एक दिन कुमार कुमारी देखते रहे इस शरीर में, क्या बच्चा उछलता है, छोकरा छोकरी दिन भर दौड़ते रहते हैं अब वो उछलने कूदने की अवस्था यूं निकल गई। कुछ पता चला ! फिर जवानी आ गई, हम बडे खुश होते रहे कि यह युवावस्था वड़ी अच्छी है किन्तु जवानी का मामला भी गोल हो गया। अब तो यह सुखी पेड़ है। देखते नहीं हो डबल रोटी सूख जावे महीने पन्द्रह दिन की। एक खड्डा इधर पड़ा है एक खड्डा उधर पडा है। इधर से उठी है उधर से दबी है। यह हालत हो जाती है शरीर की। फिर हम अमर रहना चाहते है कैसे रहोगे अमर ? यह अमृत्व होने का लक्षण नहीं। अमरत्व का लक्षण तो तब आएगा जब अमरतत्व को पकड़ों तो। इसलिए कहा 'शान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षु:।' श्रुति कहतीं है मुमुक्षु शान्त होवे दान्त होवे।

दान्त का लक्षण है संयमशील हो। ठीक है यह इन्द्रियाँ अपने २ विषयों में जाती हैं। जीभ है तुम्हारी, सुन्दर रसाल पदार्थ खाने वाली है किन्तु सुन्दर रसमलाई जीभ के सामने करो तो कितनी खाएगी। एक, दो, तीन, चार। बहुत पेटू होगा तो कुछ ज्यादा खा लेगा। किन्तु जीभ भी खाते २ फीकी हो जाएगी। स्वाद नहीं रहेगा। मीठी चीज खाते २ जीभ फीकी हो जाती है तो थोड़ा उसको चटनी देनी पड़ेगी, थोड़ा अचार देना पड़ेगा। जैसे चाकू को सान चढ़ाते हो इसे तेज करने के लिए। इसी प्रकार भोजन करते समय चटनी अचार जीभ पर लगाते हो। काहे के लिए? जीभ को तीक्ष्ण करने के लिए। कि जीभ से पहले जैसा स्वाद फिर मिले।

'शान्तो दान्त उपरतः' शान्त होवे। दान्त माने दमनशील हो। उपरतः उपरत का अर्थ है इन्द्रियों पर कंट्रोल हो। यह संसार है। जन्म से अब तक ससार की वस्तुओं को प्यार करते हो। किन्तु यह सोचो कि इस संसार मे कौन सी वस्तु है जो तुम से प्यार करती है। यह तुम्हारा शरीर भी तुम से प्यार नहीं करता। हालांकि इस शरीर को हमने अपना स्वरूप ही समझ कर रखा है। एक दिन यह भी कहेगा जाओ। जैसे पिंडदान करते हैं तो बाद में नदी में जाकर पिंडो को डाल देते है कि। ऐसा ही उस पिंड की तरह यह शरीर भी कहेगा कि तुम जाओ। हम नहीं जाएंगे। इसको बेचारे को कौन रहने देता है। इसलिए कहा शान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षुः। तितिक्षा शब्द का अर्थ है सहनशील हो। कभी गर्मी भी आएगी। कभी ठंडी भी आएगी। गर्मी आए तो सहन करो। ठंडी आए तो भी सहन करो। घबराओ मत। यह भूत अपने अपने समय मे बदलते रहेंगे। कभी गर्मी आएगी इन भूतों से, कभी ठंडी आएगी इन्हीं भूतों से। इस लिए मुमुक्षु तितिक्षाशील भी बने।

'शान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षुः समाहितोभूत्वा' समाहित शब्द का अर्थ है सम्यक आहितः। अच्छी तरह से मन को आत्मा में समाहित करो। स्थिर करो यदि आत्मा के बिना यह शरीर प्यारा हो तो आत्मा की जरूरत है ही नहीं तुमको किन्तु आत्मा के बिना यह शरीरी एक दिन भी रहने वाला नहीं। एक दिन तो

क्या, एक क्षण भी नहीं रहेगा। जिस आत्मा के बिना इस शरीर को कोई प्यार नहीं करे। वो हम हैं। यह आत्मा हमारा स्वरूप है। मुमुक्षु यह निश्चय करे कि वो आत्मा हम हैं। 'आत्मन्येवात्मानं पश्येत् समाहितः' श्रुति कहती है आत्मने माने शुद्ध मन के अन्दर आत्मा का दर्शन करे। यह मन तुम्हरा heavy mirror है। जैसे आज कल बडे २ घरों में दीवारों में शीशे होते हैं। शीशे के सामने खडे हो जाओ। तो पूरा शरीर दीखता है। मन एक ऐसा शीशा है जिसमे आत्मा का साक्षात् दर्शन हो जाता है। आंख से देखना नहीं है, आपने अनुभव करना है। क्या अनुभव करना है? 'देहादि व्यतिरिक्तो अयमहमस्मि'। ओ हो देहादि से न्यारा यह आत्मा मैं ब्रह्म हूँ। मुमुक्षु ने ऐसा निश्चय करना है। जब देहादि से न्यारा यह आत्मा मैं ब्रह्म हूँ तो यह शरीर, देहादि संघात मैं नहीं हूँ। यह शरीर तो देखो जन्म से लेकर अब तक कितनी शकलें इसने बदली हैं। बदलने का अर्थ क्या? नैपाली मे थप कहते है। पहली २ शकल भरती गई दूसरी थप होती गई। बचपन भरा कुमारावस्था थप। कुमारावस्था भरी जवानी थप। जवानी भरी तो सूखा पापड़ आ गया। सूखा पापड़ खाओ कुट २ करेगा। अब सूखा पापड़ ही आने वाला है।

मारवाड़ का यह सबसे बढिया नियम है बढिया २ चीजें पहले खाओ last में पापड़ आएगा। बादामी रंग का सिका हुआ पापड़ खाओ ऊपर से पानी पीओ। यह जो पाईप है गले का, जिसमे घी तेल गया है। पापड़ ने खुराक कर दिया। साफ कर दिया ब्लाटिंग पेपर की तरह। न खासी न खुर्रा। हम लोग तो मिला जुला कर सब खाते है, ऊपर से पानी पीते है पाईप मे कहीं घी तेल जम गया बस खांसी शुरु हो गई। माया भगवती को भी पक्को मारवड़िन समझो। यह last मे तुमको पापड़ खिलाती है। पापड़ जब थाली मे आया तो समझो कि every item has come. जो कुछ भी भंडार मे बना है, सब आ गया है। ऐसे ही बुडापा जब आ गया तो समझो कि माया के रसोड़े मे जो कुछ बना है वो सब आ गया है। फिर मनको कहीं नहीं फसाओ। क्यों न उस सत्य को पकड़ो जिस सत्य के बिना न हम किसी के न कोई हमारा वो सत्य प्यारा है। न तो कोई हमारा और हम भी किसके हैं। आत्मा के बिना कौन हमारा है? यही

मुमुक्षु को निश्चय करना है । कि 'यही आत्मा मैं हूँ' । जिसकी कृपा से लोग हम को प्यार करते है और हम भी इसी की कृपा से ही किसी को प्यार करते है । 'आत्मैवाहमस्मि' ब्रह्मैवाहमस्मि ।' ऐसी आत्मा को जानने के लिए मुमुक्षु को धैर्य भी धारण करना चाहिए । भगवान ब्रह्मा इन्द्र के उस धैर्य की परीक्षा ले रहे हैं कि इन्द्र में कितना धैर्य है । इस सत्य को जानने की इसकी कितनी इच्छा है । इन्द्र बैठे गया बेचारा क्या करे ।

इन्द्र को भगवान प्रजापति स्थूल से सूक्ष्म मे ले गये थे । यह स्थूल शरीर से तो न्यारा है । यह तो दीखा किन्तु सूक्ष्म शरीर में भी इन्द्र को एक बड़ा दोष दीखा । वहाँ भी जैसे जंगल मे जा रहे है और कोई tiger दीखा तो भय तो लगा । और स्वप्न मे जब कोई पकड़ कर पिटाई करने लगे तो पीड़ा भी होता है । रोता भी है । इन्द्र ने सोचा कि यहाँ तो भय है । उन्होंने कहा था 'अभयं वै ब्रह्म' कहा तो था कि आत्मा अभय पद है । तो इन्द्र को लगा कि स्वप्न मे जो आत्मा दर्शन मेरे को हुआ यह ठीक नहीं है । यह आत्मा भी ठीक नहीं । अभी और समझाना बाकी है इसलिए लौट कर चला आया । प्रजापति ने पूछा क्या बात है ? बोला भगवन मैंने कुछ नहीं समझा । प्रजापति बोले फिर बत्तीस वर्ष और तप करो । इन्द्र बैठ । फिर उपदेश करते हैं 'तस्मै होवाच तद्यत्रैतत् सुप्तः समस्तः सुप्रसन्नः स्वप्नं न विजानाति एषआत्मेति होवाच ,' एतदमृतमभयमेतद् ब्रह्मेति ।' इन्द्र अब ऐसा समझो । पहले कहा था न, कल ही कहा था कि ईरानी घोडे दुनियाँ मे प्रसिद्ध है । उनके बच्चे किले के अन्दर बन्द रहते हैं । किले से बाहर तीन खाईयाँ खोदते हैं । जब कि बच्चा दो तीन वर्ष का हो गया है । बाहर तोप का शब्द करते है । वो उछल कर छलांग लगाते है । जो किले की दीवार को पार कर गया । आगे खाई है उसको पार कर गया । दूसरी खाई है, उसको पार कर गया । तीसरी खाइ को भी पार कर गया तो यह निकल जाएगा । यह असली घोड़ा बनेगा । नहीं तो घोड़ा टट्टू बनेगा टट्टू माने लद्दू घोड़ा । जो आएगा इसके ऊपर सामान लादेगा । जो एकाध खाई पार कर गया तो रसाले का घोड़ा बनेगा मिलिट्री में रसाला नहीं होता ? वो रसाले का घोड़ा बनेगा । और जो तीनों खाई पार कर गया है वो असली घोड़ा है । वो तोप का घोड़ा बनेगा ।

उसकी ड्यूटी होती है तो को खींच कर मोर्चे पर ले जाना । तोप के गोले चल रहे हैं, घोड़ा वहीं खड़ा रहेगा । इसका कान भी गर्म नहीं होता । घोड़ा हिलेगा नहीं । इसी तरह मनुष्यों मे भी तीन प्रकार के घोड़े है । एक तो लट्टू टट्टू है । उस बेचारे को फुर्सत हीं नहीं । इधर से उधर और उधर से इधर बस इसीमे पार हो जाएगा । रसाले का घोड़ा क्या करता है । time पर मैदान मे जाकर left, right कर लेता है । इसी तरह दूसरे प्रकार का जो मनुष्य है वह समय पर कर्म कर लेंगे किन्तु जहाँ है वहाँ से आगे नहीं बढेंगे । वहीं के वहीं खडे रहेंगे । आगे कोई प्लान नहीं । और तीसरे है ज्ञानी । यह माया के तोप के गोले चलाते रहते हैं किन्तु यह ज्ञानवान है तोप का घोड़ा । इसका कान भी गर्म नहीं होगा ज्ञानवान डरता नहीं । श्रुति कहती है 'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन' ब्रह्म ज्ञानी जो है इस ब्रह्म के ज्ञान को, आनन्द स्वरूप की जब जान जाता है तो मृत्यु से भी भयभीत नहीं होता । जिनके आगे पीछे guns घूमती है वो भी मृत्यु के भय से कितने भयभीत रहते है ।

एक फुट पाथ पर बैठा है वो निर्भय है । ऐसा नहीं है कि यह guns हमारी रक्षा करेंगी । मृत्यु के हाथों से कोई भी रक्षा नहीं कर सकता । मृत्यु के लिए कोई भी स्थान दूर नहीं है । मनुष्य हाथो से कोई दूर भी हो सकता है । जो मनुष्य आत्म ज्ञान वाला है यह इस मृत्यु के भय से भयभीत नहीं होता । स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर होते है । भगवान प्रजापति इन्द्र को स्थूल के सूक्ष्म मे ले गये है । अब कारण मे चलते हैं । कारण है अविद्या । अविद्या को कारण शरीर कहते है । 'यस्मात् कारणात् संसाप्रवृत्तिः' ।यह संसार मे हमारी जो जन्म और मृत्यु की प्रवृत्ति है । इसका कारण कौन है ? इसका कारण है अविद्या Ignorance जैसे थोड़ी देर के लिए समझो भोजन करने लगे, तो भोजन कब तक करोगे । जब तक चौके मे खाने की चीजें है ? तब तक खाते जाओगे कि बीच मे ही बन्द कर दोगे ? कब तक खाना है ? बगल मे बैठा है एक, क्या वो कहेगा कि भाई बस करो । जब तृप्त हो जाओगे । ज्ञान हो गया कि पेट भर गया तो खाना बन्द । तो एक भोजन करने की जो क्रिया है, वो कब बन्द हुई ? जब ज्ञान हो गया कि पेट भर गया । अब और खाना ठीक नही । मेरे हाथ से खाले । एक

ग्रास मुश्किल से लोगे । थाली छोड़ कर भाग जाओगे । संस्कृत में एक कहावत है हा हा दद्यात् हूं हूं दद्यात् न दद्यात् सिंह गर्जनम् कहते हैं कब तक परोसना ? ले भाई, हा हा करे तो परोसते रहो, हूं हूं करे तो भी परोसते रहो जब सिंह की तरह गरजे तो परसना बन्द 'ज्ञाने सर्वक्रिया परिसमाप्यते' ज्ञान होने पर क्रिया खत्म होती है । ज्ञान जब तक नहीं होगा क्रिया चलती रहेगी, समाप्त नहीं होगी ।

एक लड़का है । एम. ए. पास कर गया । अब क्या करेगा ? फिर कहो कि हम तो ABC पढेंगे फिर एम. ए. करेंगे । तो दूसरा subject पकड़ो । इसमे तो तू एम. ए. हो गया । ज्ञान में ही सारी क्रियाएं समाप्त होती हैं । किन्तु यह 'पुनरपि जननं पुनरपि मरणं' यह पुनः जन्म और पुन २ मरण जो हो रहा है, इसकी समाप्ति कब होगी ? जब यह अहमास्पद आत्मा का ज्ञान हो जाएगा तब । 'अहमहमस्मि' तब यह चक्कर समाप्त हो जाएगा । नहीं तो... ! एक दिन देवर्षि नारद कैलाश पहुंच गये । त्रिलोकगामी है । माता भगवती बैठी है ।भोला नाथ कहाँ है ? कहने लगी कहीं बाहर गये है । उनके गले में काहे की माला है ? बोली मुण्डों की माला है । बोले यह मुण्ड कहाँ से आए जानती हो ? बोली मेरे को कुछ पता नहीं । बोले बताऊँ ? हां बताओ । बोले भोलानाथ को तुम से बहुत प्यार है । इसलिए जब २ तुम मरती हो, तुम्हारी खोपड़ी निकाल कर रख लेते हैं । यह सब तुम्हारी ही खोपड़ियाँ है । हैं ? हाँ । बस भगवती तो नाराज होकर बैठ गई । मैं मरती रही, जन्मती रही । मैं मर गई तो खोपड़ी गले में डालते गये। मेरे को मुक्त क्यों नहीं ? भोलानाथ आए देखते हैं कि यहाँ तो शक्ल बिगड़ी हुई है । पूछा क्या बात है ? देवर्षि नारद आया था क्या ? हाँ आए थे । क्या कहा ? कहा क्या, यह मेरी खोपड़ियाँ काट २ कर गले मे रखते रहे । यह मुण्ड माला क्या है ? मेरे से इतना किया किन्तु मेरे को मुक्त क्यों नहीं किया ?

देवर्षि नारद की यह प्रसिद्धि रही कि वो जिस घर मे पहुच गये वहाँ थोड़ी सी गर्मी बढ जाती है । पार्वती नाराज हो रही कि मेरे को मुक्त क्यों नहीं

किया ? बोले हाँ भगवती बात तो ठीक है किन्तु यह बतला कि तू ने कभी ज्ञान की चर्चा भी की । तू । तो ठाट बाट में डांस डिनर क्लब life में ही घूमती रही कभी मोक्ष की इच्छा ही नहीं की । कभी चर्चा ही नहीं की तो मैं क्या करूँ । अब देख मैं तेरे को अमरत्व की कथा सुनाता हूँ । अमर नाथ जी की कथा है । तू हूं २ करती रहना । हूँकार मारती रहना । कथा सुनाना शुरु किया कुछ समय तक तो हूं हूं करती रही । बहुविघ्नानि श्रेयसे । श्रेय में जो महान होते हैं उनको भी बडे विघ्न आते हैं । आ गई नींद और भगवती सो गई । अमरत्व की कथा बीच में ही रह गई । इधर कथा चलती रही और सुग्गे ने हुंकार मारना शुरु कर दिया । वो ही शुकदेव मुनी बने । शुकदेव मुनि की कथा भी बीच मे ही है । वो शुकदेव आगे व्यास मुनि के पुत्र बने । और जन्मते ही ज्ञान हो गया । इस ज्ञान के बिना अमरत्व नहीं होगा । जन्म लेने के लिए तुम करोड़ों जन्म ले सकते हो । बहुत मम्मीआं है । यहाँ मम्मी डैंडी की कमी नहीं । किन्तु अमरत्व नहीं होगा । इस अमरत्व के लिए भगवान प्रजापति कहते हैं, हे इन्द्र 'तत् सुप्तः समस्तः सम्प्रसन्नः' जहाँ सो गया, तो अब कोई इन्द्रिय काम नहीं करेगी । ज्ञानेन्द्रियाँ भी वन्द, कर्मेन्द्रियां भी बन्द । प्राण चलता रहेगा । मन भी वन्द, बुद्धि भी वन्द । ऐसी यह सुषुप्ति अवस्था है । इस अवस्था में तुमको कोई दुःख नहीं । जो भी दुःख है वो ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा है, कर्मेन्द्रियों के द्वारा है । मनके द्वारा है और बुद्धि के द्वारा है । गाढ़ निद्रा में sound sleep में कोई दुःख नहीं । क्यों ? वहाँ दुःख देने वाला कोई नहीं । मनुष्य का स्वभाव है कि इन इन्द्रियों से ही सूख लेना चाहता है । यह इन्द्रियाँ सुख देती है तो दुःख भी यही इन्द्रियाँ देती है ।

सुन्दर रूप आंख से देखता है तो खुशी होती है, आनन्द होता है । किन्तु सुन्दर रूप से दु;ख भी होता है । सुन्दर शब्द को कान मे सुनता है तो उस से आनन्द मिलता है किन्तु दुःख भी तो होता है । जो भी इन्द्रिय का विषय है, इस जीभ से सुन्दर रसाल पदार्थ खाते हो, इससे सुख मिलता है । किन्तु दुःख भी तो होता है । बहुतो को मिर्ची खाने की आदत होती है । मुँह से मिर्ची को कटा, सी सी करता है और खाता भी जा रहा है । बताओ सी सी क्यों कर रहा है । दुःख भी हो रहा है, स्वाद भी आ रहा है । तोबेचारा दुःख को देखे कि स्वाद को

देखे । मन जो है, यह अच्छी कल्पना करेगा तो सुख होगा, बुरी कल्पना करेगा तो दुःख होगा । इसलिए जाग्रत मे दुःख और स्वप्न मे दुःख । सुषुप्ति मे कोई दुःख नहीं । क्यों ? वहाँ दुःख देने वाले सब गायब है । वो सुषुप्ति अवस्था है आनन्द मयी स्थिति है । 'यत्रैतत् सुप्तः समस्तः सम्प्रसनः स्वप्नं न विजानोत्येष आत्मेति होवाच' श्रुति कहती है सूषुप्ति अवस्था ऐसी है । यहाँ को स्वप्न नहीं । कोई कामना नहीं । उस समय जो आनन्द है वो रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श, किसी विषय का आनन्द नहीं है । तो यह आनन्द किसका हुआ ? ऐसा मत सोचो कि यह अज्ञान का आनन्द है । अज्ञान का आनन्द नहीं । अज्ञान तो ब्रेक मारता है आनन्द मे । एक किमती हीरा है, किन्तु हमको उसका ज्ञान ही नहीं । किसी ने लाकर कर हाथ में रख दिया तो हमको क्या आनन्द है उसका । हाँ इतना ज्ञान है कि वह कीमती हीरा है । कितने लाख का हीरा हमारे हाथ मे रखा है जब तक इसका ज्ञान नहीं तब तक उसका आनन्द नहीं । जब किसी ने बता दिया कि यह पचास लाख का है तो छिपा कर जेब मे रखेगा । भाग कर घर आएगा । आंखें आकाश में तैरमे लगेंगी । वस्तु कितनी कीमती है, यह वस्तु के देखने से मालुम पडेगा । वस्तु दीखेगी ज्ञान से, ज्ञान नहीं तो कुछ भी नहीं । इसलिए सुषुप्ति अवस्था में अविद्या का आनन्द नहीं हैं । यह आनन्द तुम्हारी आत्मा का है । इस लिए कहा 'आनन्दो ब्रह्मेति विजानति' यह ब्रह्म ही आनन्द रूप है । 'एतस्यैव आनन्दस्य अन्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति' श्रुति कहती है इस आनन्द की मात्रा को पकड़ कर अन्य जीव जी रहे हैं । अर्थात जाग्रत मे जो आनन्द है वो आत्माको ही आनन्द है । स्वप्न में भी जो आनन्द है वो आत्मा का ही आनन्द है । आत्मा अगर शरीर को छोडे तो मुर्दे में किसी को आनन्द होता है ? तो अभी तक जो आनन्द आता रहा वो मुर्दे का आता रहा कि उसका आता रहा ? उसी स्वरूप का आनन्द आता रहा । किसी मित्र को अपने घर मे बुलाओ । खाने के लिए बढ़िया भोजन परोस दो और मीठे की जगह एक चुटकी चीनी रख दो । तो तुम्हारी ओर यूं देखेगा कि इसका दिमाग तो ठीक है । भात भी रखा है, दाल साग भी रखा हुआ है । मीठे की जगह रख दी चीनी की चुटकी । अरे भाई मीठा खाना है तो अब उसको अमृती जलेबी के रूप मे रखते, रस भरी रसगुल्ला के रूप मे रखो । लड्डू के रूप में रखते । और किसी मिठाई के रूप में रखते । किन्तु तुमने

तो मीठे को असली स्वरूप में रखा है। चीनी मीठे का असली स्वरूप है। कहता है अहा! कितनी बढ़िया मिठाई बनी है। अरे सबमें क्या है? चीनी ही तो रही। मनुष्य जो है वो नकली रूप से असली को चाहता है। असली रूप से असली को पकड़ना तो बुद्धिमान का काम है। जैसे यह शरीर है, तो असली स्वरूप में क्या शरीर प्यारा है? तुम्हारी शकल से यह आंख प्यारी है? जरा मुर्दे की आंख में देखो तो कितनी प्यारी है? भयंकर। तह लगता है। मुँह नहीं देखता। और जीवित प्राणी की आँख देखो! कितनी सुन्दर है, कितनी प्यारी है। यह उसीका सौन्दर्य है, उसीका आनन्द दीख रहा है।

असली आनन्द को पकड़ना बुद्धिमान का काम है। असली को नकली बना कर लेना यह मन्द बुद्धि काम है। और असली नकली दोनों का आनन्द न लेना यह जड़बुद्धि का काम है। मनुष्य कभी असली को नकली बना कर भी आनन्द नहीं ले पाता। तो यह सब आनन्द उस ब्रह्म का ही आनन्द है, आत्मा का ही आनन्द है। यह आत्मा ही अमृत है, यही अभयपद है। 'शान्तहृदयः प्रवव्राज' इन्द्र ने जब ऐसा सुना तो शान्त हृदय हो कर भगवान प्रजापति को नमस्कार किया और चल पड़ा। फिर भी देवता ह, विचरा चल पड़ा कि तु क्या समझ कर आया है। रास्ते में ही फिर रुक गया। अरे ब्रह्म ने जो समझाया है मालूम पड़ा कि हम असली तत्त्व को नहीं समझ पाये। यह तो अस्तित्व ही गायब हो गया। जाग्रत में हम शरीर को अपना कहते रहे यह अपना नहीं निकला। स्वप्न में हम छाया रूप देखते रहे। वो भी अपना नहीं रहा। अब यहाँ तो आज अन्धेरी गुफा में बन्द कर दिया ब्रह्मा ग्र। यह सुषुप्ति क्या है? जैसे पहाड में अन्धेरी गुफा होती है न। वहाँ न मेरा न तेरा कुछ भी नहीं समझे। बस इन्द्र वहीं रुक गया। इन्द्र वहां रुका और और हम लोग यहाँ ध्यान करने लगे। आगे कल चलेंगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१०-६-८८

प्रवचन सं०-६३

"ॐ स समित्पाणिः पुनरेयाय तं ह प्रजापतिरुवाच मघ-वान्यच्छान्तहृदयः प्राव्राजीः किमिच्छन्पुनरागम इति स हो वाच नाहं खल्वयं भगव एवं सम्प्रत्यात्मानं जानात्ययमह-मस्मीति नो एवेमानि भूतानि विनाशमेवापीतो भवति नाहमत्र भोग्यं पश्यामीति ॥"

(छान्दो. ८-११-२)

भगवान प्रजापति ने पहले सूक्ष्म में आत्मा का उपदेश किया। क्योंकि यह जीव जल्दी सत्य में प्रतिष्ठित नहीं होता। सत्य की ओर धीरे २ चलता है। अगर छत पर चढ़ना हो तो सीढ़ियाँ लगी हैं। सीढ़ियों में धीरे २ पैर रखते २ ऊपर चले जाते है। या आजकल वैज्ञानिक युग है lift लगी है, उससे ऊपर चले जाओगे। इसी तरह इस शरीर को भी क्या समझो ground floor है। यहाँ से उठोगे तो सूक्ष्म मे जाओगे। lift लगानी पडेगी। सूक्ष्म से उठोगे तो कारण में जाओगे। भगवान प्रजापति ने कल कारण में पहुंचाया था कारण शरीर क्या है? अविद्या भगवतो कारण शरीर। उस कारण शरीर मे जाने से क्या होगा। जिस समय कारण शरीर में पहुच जाता है तो अहं गायब हो जाता है। अहं अहं जो करते हो इस अह भाव का लोप हो जाता है। इस अहं भाव का लोप होने से इन्द्र को बड़ा भय लगा। इन्द्र सोचने लगा कि बिना अहं के ज्ञान से किस वस्तु का मान होता है। 'सति ज्ञाने ज्ञातुः सद्भावो दृश्यते।' ज्ञान होने पर ज्ञाता का सद्भान अनुभव होता है। अगर ज्ञान नहीं है तो ज्ञाता है,

इस बात का क्या प्रमाण ? बिना ज्ञान के कौन वस्तु दीखती है तुमको ? सुषुप्ति मे जो चले जाना है, वो क्या है ? ज्ञान को लोप कर दिया तो ज्ञान के लोप होने से अहंभाव का भी लोप हो गया । इन्द्र को लगा कि मेरा तो सर्वस्वनाश हो गया । 'सर्वेन्द्रिय गुणाभास सर्वेन्द्रिय विवर्जितं' । गीता मे कहा इन्द्रियों में गुण भी है और दोष भी । गुण का प्रकाश भी वही कर रहा है और दोष का प्रकाश भी वही कर रहा है । यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है, यह कैसे जाना ? जैसे अपने अनुभव में समझो । आंख मे अगर कोई रोग है तो उसको कौन बताएगा ? क्या डाक्टर बताएगा ? बडा डाक्टर तो स्वयं अन्दर बैठा है । जो अपने आप अपना डाक्टर नहीं, उसका दूसरा कौन डाक्टर बनेगा ? इन्द्रिय शब्द का अर्थ है "इन्दयति अर्थान् इति इन्द्रियाणि" इन्दयति दीपयन्ति । जैसे मान लो गुलाब का यह फूल है हमारे हाथ में, तो इसके सुन्दर रूप को प्रकट करने वाला कौन है ? आँख है । इस सुन्दर फूल की ओर कान लगओ । यह कान बेचारा क्या करेगा ? कान शब्द को तो पकडेगा किन्तु रूप को नहीं पकडेगा । इसलिए जिस इन्द्रिय का जो विषय है वो इन्द्रिय उस विषय को पकडेगी । तो सम्पूर्ण इन्द्रियों के गुणों को और दोषों प्रकाश करने वाला यह तुम्हारा आत्मा है ।

भगवान कृष्ण कहते है, यह तेरी आत्मा है "सर्वेन्द्रिय गुणाभासं" सम्पूर्ण इन्द्रियों के गुणों को और दोषों को प्रकाशित करने वाला है । और सम्पूर्ण इन्द्रियों से न्यारा है । सर्वेन्द्रियविवर्जितः इन्द्रियों से न्यारा होते हुए भी "असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुण भोक्तृच" असक्तं असक्त शब्द का अर्थ है असंग । यय आत्मा असङ्ग है । असङ्ग का अर्थ होता है कि संग नहीं है । दीखता है कि सङ्ग है किन्तु जिस समय शरीर छोडने लगता है उस समय कुछ रह जाता है इसमे ? जैसे यह इतना लम्बा चौड़ा शरीर है, और इस शरीर मे 50 वर्ष 80 वर्ष या 100 वर्ष तक भी रहा तो आत्मा जब शरीर को छोडने लगता है तो शरीर के किसी अंग थोडा सा आत्मा बचता है ? हाथ में या पैर में या नाक में या कान में ? भाई पैर मे चेतनता रह गई और तो चली गई या मुख तो ठीक है किन्तु बाकी शरीर मर गया । ऐसा कभी होता है । निकल गया ? कि यह आत्मा अपने स्वरूप से असङ्ग है । ठीक है कर्म ने इसको बांध दिया है । इस शरीर के साथ बंधा पडा

है और मैं २ करता जा रहा है । किसी जंगली जानवर को ले आओ पकड़कर और बांध दो किसी खूंटे से । जब तक रस्सी है तब तक सो खूंटे के अगल बगल घूमता रहेगा । जब रस्सी टूट गई तब रहेगा वहाँ ? इसी तरह इस शरीर को खूंटा समझो । और यह जीब माया के जंगल का जानवर । जानवर का मतलब जानवाला । वर माने श्रेष्ठ जान माने प्राण । अर्थात यह आत्मा ही श्रेष्ठ है । यह सब से श्रेष्ठ है इससे श्रेष्ठ को नहीं है । इसके करंट में यह शरीर भी श्रेष्ठ है । किन्तु जिस समय शरीर को छोड़ने लगेगा जरा भी देर नहीं करेगा, कहते है वो तो बात करते २ चले गये । और कोई तो ऐसा है कि छोड़ तो रहा है किन्तु छूटता नहीं । मोह रुपी रस्सी ने पकड़ लिया है । इसका अथ क्या है कि जा रहा है किन्तु नहीं जाने दे रहा है वो । भगवान कहते हैं "असक्तं सर्व भृच्चैव निर्गुणं गुण भोक्तृच" असक्त कहा । कैसा ही प्यारा शरीर हो उसमें यह असक्त होकर रहता है असङ्ग होकर रहता है । इसके लिए दूसरा दृष्टान्त है "पद्मपत्र-मिवाम्भसा"

कहते हैं कमल का पत्ता जल के अन्दर रहता है । उसका भोजन भी जल है । एक खाने का बड़ा शौकीन । भण्डार में ही बिस्तर लगा कर पड़ा है कि मैं और जगह जाऊँगा ही नहीं । खाने को जहाँ है वहीं हम रहेंगे । अब जो भी चीज बनेगी उसके मुँह से बच सकती है क्या ? तो औरों का वजन यदि 50 kg है तो इसका 60 या 80 तो लिख ही लो । जितना ज्यादा खाएगा उतना बजन भी तो बढेगा । यह कमल का पत्ता भंडार मे ही डेरा डाले पड़ा है । इसका भोजन क्या है ? पानी ही है कमल का पत्ता हाथी के कान जैसा बड़ा होता है । और पत्तों को देखो तो बिल्ली के कान जैसे छोटे २ होते हैं । पर यह कमल का पत्त हाथी के कान जैसा बड़ा होता है ल पर क्या मजाल जो इसके ऊपर एक भी बूंद पानी टिक जाए । यही खूबी है इसकी । और पत्तों पर पानी पडे तो वो तर हो जाएँगे । भीग जाएंगे किन्तु कमल का पत्ता, पानी की एक बूंद भी कोई टपका देगा तो । कथा सुनते ही रहते हो । कृष्ण ग्वाल बालों के साथ माखन की चोरी की चोरी करने के लिए गया । ग्वाल बालों के तो मुँह मे लगा दिया और अपने खाया भी और मुँह साफ कर लिया । तो लाफा किसको पडेगा । जिसके मुँह में

मक्खन है या जिसका मुँह साफ है ? बड़ा होशियार है कृष्ण । जो बेचारे होशियार नहीं थे उनको लाफा खाना पड़ा । कृष्ण की होशियारी को पकड़ो । खाओ, पर लबेड़ो मत अपने । 'असक्तं सर्वभृच्च' सर्वभृत् का अर्थ है सर्वं विभृति । विभृति का अर्थ है धारण करना और पोषण करना ।

इसे शरीर को धारण भी वही कर रहा है और पोषण भी वही कर रहा है । कौन ? आत्मा । यह नहीं कि हम बढ़िया भोजन खाते है इसलिए शरीर चल रहा है । यह भी नहीं कि सुन्दर वस्त्र हम पहनते हैं । यह भी नहीं कि बढ़िया बंगले में हम रहते हैं । यहाँ से वहाँ चले जाओ और वहाँ से यहाँ चले आओ । दीखता तो यह है कि पैर चल रहा है किन्तु यदि वो अन्दर वाला बन्द कर दे तो। यह सब उस चेतन के करंट से चल रहा है । उठाता उसी ने है । चला वही रहा है । इसको मालिक कहते हैं । चल रहा है नौकर किन्तु मालिक के बिना नहीं । अगर मालिक के बिना कहीं नौकर चलने लगे तो तो मालिक का क्या हाल होगा? "आसक्तं सर्व भृच्चैव निर्गुणं भोक्तृच" उसकी सत्ता म ही सब होगा । प्राचीन काल का बड़ा इतिह स है । असुर और देवता प्रकृति से ही दूसदे के विरोधी हैं । असुर देवताओं के विरोधी है और देवता असुरो के विरोधी है । देवता जरा शरीर से कमजोर हैं । असुर सब तरह से हट्टे कट्टे हैं । बलवान हैं ।देवताओं ने भगवान से बड़ी प्रार्थना की । भगवान प्रसन्न हो गये । बोले क्या बात है ?. भगवन जब भी यह असुर हमारे ऊपर आक्रमण करते हैं, जो कुछ हमारे पास होता है यह छूट कर ले जाते हैं । हम तो महात्मा के महात्मा ही रह जाते हैं । हमको ऐसी शक्ति दो कि हम असुरों पर विजय पा सके । भगवान ने आशीर्वाद दे दिया कि जाओ तुम असुरों से लड़ो । तुम जीत जाओगे ।

,केनोपनिषद् सामवेदीय तलवकार शाखा का उपनिषद् है । उसमे यह कथा है । देवता असुरों से लडे और जीत गये । भगवान का आशीर्वाद था । जीत गये तो विजयोत्सव मनाना पडेगा । सब देवता मिल कर उत्सव मनाने लगे। प्रशंसा भी करनी पड़ती है कि अमुक leader की leader ship मे यह काम हुआ । देवता कहने लगे 'अस्माकमेवऽयं विजयः, अस्माकमेवऽयंमहिमा' यह

हमारी बड़ी विजय है । हमारी बड़ी महिमा है । सब प्रशस्ति के प्रस्ताव पास होने लगे । इन्द्र बड़ा बलवान है । फलाना देवता बड़ा बलवान है । प्रशंसा होने लगी । भगवान ने सोचा यह देवता सात्त्विक बुद्धि प्रधान हैं । और सात्त्विक प्राणियों में अगर अहंकार बढ गया तो सात्त्विक भाव नष्ट होकर राजसभाव में चले जाएँगे । देवताओं का पतन हो जाएगा । तो जैसे घनघोर बादल हो और उसके अन्दर बिजली की रेखा चमक जाती है, इस तरह जहाँ देवता कान्फ्रेंस कर रहे थे एक तेजोमय विद्युत पुंज खड़ा हो गया । जमीन से लेकर आकाश तक जैसे अग्नि के पुंज होता है, विचित्र बिजली की तरह तेजोमय पुंज खड़ा हो गया । देवताओं ने यूं देखा तो घबरा गये । 'किमिदं' यह क्या है ? देवबुद्धि का लक्षण है जिज्ञासा होना । और आसुरी बुद्धि का लक्षण है आसक्ति होना । वह किसी चीज की तह में नहीं जाएगा । देवताओं में जिज्ञासा हुई कि यह तेजोमय पुंज क्या है ? विचार करने के लिए किसको भेजें ? तो तेजस्वी होता है या जिसको leader ship का अहंकार होता है, यद्यपि पार्टी अभी उसे leader मान नहीं रही किन्तु उसे अहँकार हो गया कि मैं महान हूं । अग्नि, उसको तेजस्वी होने का अहंकार है वह अपने को सब से तेजस्वी समझता है । तो हुआ कि इस समय अग्नि अपना तेज दिखावे । अग्नि ने भी सोचा कि अब यह देवता फंस गये हैं और मेरी leader ship में ही देवताओं को मोक्ष मिलेगा । मेरा भी महत्त्व बढ़ जाएगा ।

'अग्ने एतद् विजानीयं किं एतद् यक्षमिति' जरा जाकर पता तो लगाओ कि यह महान यक्ष है क्या ? यक्ष माने पूजनीय विशेष क्या है ? अग्नि बड़े अहंकार में आकर चल पड़ा । सोचता जाता है, यह देवता मेरे को अभी तक कुछ समझते नहीं थे । अब मालूम पड़ेगा । तेजी से चला तो सही किन्तु जैसे २ आगे जाता है चाल ढीली होती जाती है । जैसे हिमालय की ओर बढो, कितने ही गर्म देश से चलो किन्तु जैसे हिमालय की ओर बढोगे ठंडी बढ़ती जाएगी । हिमालय में पहुंचते २ क्या होगा ? जो केवल एक धोती पहने हुए है, एक जाकेट पहने हुए है वो पीपल के पत्ते की तरह कांपने लग जाएगा । ठंडी के मारे यूं कांपेगा । अग्नि भी कांप रहा है, चलकर यक्ष के सामने खड़ा हो गया । यक्ष ने

पूछा, 'काऽसि ?' तुम कौन हो ? 'अग्निरहमस्मि' मैं अग्नि हूँ । अहंकार तो था ही, कहीं यक्ष यह न समझ बैठे कि चूल्हे मे पूरी परौंठा बनाने वाला अग्नि हूँ । तो झट बोला कि 'जातवेदात्राहमस्मि' मैं तो जातवेदा अग्नि हूँ।मैं केवल दाल भात बनाने वाला अग्नि नहीं हूँ ।यक्ष ने पूछा, 'तस्मिन् कि वीर्यम्' तेरे मे क्या पराक्रम है ? कहा कि हे भगवन् जो भी इस पृथ्वी पर है, मैं सब कुछ जला सकता हूँ । यक्ष ने उसकी ओर घास का तृण फेंका 'तदद्दहेति' अग्नि ने मारा जोर लेकिन तृण तो जला ही नहीं जैसे का तैसा रखा है । अग्नि ने सोचा, मेरे मे तो कुछ भी नहीं । यूं सिर लटका कर चला आया । आदमी काम कर के आता है तब तो सिर ऊंचा कर के यूं आता है । दोस्तो से shakehand भी करेगा छाती से छाती भी मिलाएगा किन्तु हार कर आता है तो चुप चाप कोने मे बैठ जाएगा। अग्नि भी आकर कोने मे चुप चाप बैठ गया । देवता समझ गये कि इससे कुछ हुआ नहीं । नम्बर दो का जो leader है वायु देवता,'वायो एतद् जानीहि किमे-तद्यक्षमिति' वायु ने देखा अच्छा मौका मिला । अब मैं अपना महत्त्व दिखलाता हूँ । वायु चल पड़ा । किन्तु वायु भी जैसे आगे जाता है उसकी हालत भी खराब हो रही है । जब वहाँ पहुंचता है वायु तो स्तब्ध हो गया ।

'कोऽसि?' तुम कौन हो? वायु बोला 'वायुर्वाऽहमस्मीति' कहीं यह न सोचे कि पंखे की वायु है।मातरिश्वावाऽहमस्मीति' मातरि अन्तरिक्षे स्वयति गच्छति ।' इस अन्तरिक्ष में आजादी से विचरण करने वाला वायु हूँ । मैं पंखों का वायु नहीं हूँ । 'तस्मिन् त्वयि कि वीर्यम् ? तुम्हारा क्या पराक्रम है 'यदिदं पृथिव्यां तं सर्वमाददामीति'हे भगवन् यह सब कुछ जो भी पृथ्वी में हैं,सबको उडा कर ले जा सकता हूँ । वो ही तृण, जो पहले अग्नि के सामने फेंका था, फेंक कर कहा कि लो इसको उड़ाओ।वायु ने कितना जोड लगाया किन्तु तृण तो टस मे मस न हुआ। इसका एक अर्थ यह भी समझो यह तुम्हारा हाथ है, आजकल दुनियाँ में बाक्सिग का खेल चल गया है । मुक्के मार २ कर अगले का दिमाग खराब कर देना । तो दिखता तो है किन्तु अन्दर चेतन अगर करंट को खींच ले तो हाथ में कितनी ताकत रहेगी ? तो यह ताकत उसकी है या हाथ की ? हाथ मे उसके बिना कुछ भी ताकत नहीं है । इसी तरह समझो world के अन्दर जो भी शक्ति है वह

सब परमात्मा की शक्ति है। चाहे वो वायु हो, चाहे वो अग्नि हो। अगर यह चेतन आत्मा अपनी करंट को खींच लेगा तो तुम्हारे में कुछ नहीं रहेगा। इसके लिए बड़ा दृष्टान्त यह तुम्हारा शरीर है। अगर यह चेतन आत्मा अपनी शक्ति खींच लेगा तो यह मुर्दा शरीर कितनी दूर जाएगा। इस मुर्दे को कोई चलने भी देगा। बेटा बेटी कहेंगे यह मुर्दा शरीर कहाँ भागे जा रहा है ? मारो डंडा। डंडा मार गिराएंगे। माने क्या है कि चेतन के बिना यह जड़ जो माया है, इस का हिलना डुलना अमंगल समझा जाता है। चेतन के बिना यह शरीर क्या है ? माया का पुतला ही है। चिता में जब मुर्दा रखते है तब आधी लकड़ी नीचे और आधी ऊपर। लो सो जा भाई, तेरा बिस्तर लग गया, आधी लकड़ी ऊपर डाल देना क्या है ? जैसे बिस्तर मे सो कर कम्बल या रजाई नहीं ओढ़ते। रजाई की तरह ऊपर से दबा देना। फिर अग्नि लगा देते हो कि रजाई ठडी नहीं हो। इसका मतलब क्या है कि यह कहीं अग्नि के ताप से उठ कर बैठने लगे तो जन्म भर उसका भय नहीं जाता। इसलिए ऊपर से दबा देते हैं। तो परमात्मा की शक्ति हीं सब जगह काम करती है। अभी तो देवताओं मे इन्द्र बैठा है। देवताओं ने सोचा कि हम सब में इन्द्र ही बड़ा है। बड़ा बनना कोई खाला का बाड़ा है क्या ? इन्द्र को जाना पड़ा। जैसे ही इन्द्र आगे बढ़ा 'तस्मात् तिरोदधे।' महान यह जो यक्ष था वो गायब हो गया। गायब हो गया तो इन्द्र ने सोचा कि मेरा तो बड़ा अपमान हो गया। अग्नि ने बात चीत की। वायु ने भी बात चीत तो की किन्तु मेरे को तो ठीक से देखने को भी नहीं मिला। बातचीत तो दूर रही।

इन्द्र ने यूं आकाश की ओर आंख उठाई और खड़ा हो कर ध्यान करने लगा। 'कस्मिन् आकाशे ?' इन्द्र ने जैसे ही यक्ष का ध्यान किया तो भगवती उमा 'हैमवती' बडे सुन्दर स्वर्णभूषण सुन्दर वस्त्र सुन्दर रूप बना कर नीचे उतरी और इन्द्र के सामने खड़ी हो गई। जैसे ही वो प्रकट हुई इन्द्र ने पूछा हे मां यह कौन है। उमा भगवती ने इन्द्र को उपदेश किया कि इन्द्र यह तो ब्रह्म है। जिस ब्रह्म की शक्ति से तुमने असुरों पर विजय पाई जिसकी कृपा से तुम मे इतनी शक्ति आई वो ब्रह्म तुम्हारे सामने प्रकट हुआ था। किन्तु जब

तुम्हारी विजय हो गई तब तुम अपनी विजय के गाने गाने लगे। तुम ब्रह्म को तो भूल ही गये। इसलिए ब्रह्म ने तुमको समझाने के लिए अपना स्वरूप दर्शन दिया। जब इस तरह उमा भगवती ने इन्द्र को उपदेश किया तो इन्द्र को ब्रह्म का ज्ञान हुआ। 'तस्मात् इन्द्र ज्येष्ठ श्च श्रेष्ठ श्च सम्बभूव' इन्द्र इसलिए देवताओं में ज्येष्ठ हो गया। इसके बाद अग्नि और इसके बाद वायु को भी ज्येष्ट श्रेष्ठ माना। 'तद्धितदिति उपासितव्यं तद्ब्रह्मेति उपासीत।' माने केवल ब्रह्म ही उपासना के योग्य है। ब्रह्म ही माननीय है। इस शरीर के अन्दर चिन्तनीय कौन है ? अगर आत्मा नहीं तो किस शरीर को प्यार करोगे ? यह ठीक है कि हम इस शरीर को ही आगे करते हैं किन्तु आत्मा के बिना इस मुर्दे शरीर से कोई हमारा relation नहीं। बेटा बेटी पति पत्नी सब जगह सबमे पहले आत्मा ही चाहिए। इसलिए कहा कि 'तद्ब्रह्मेति तदुपासनीयम्' यही उपासनीय है।

यहाँ इन्द्र के सामने बड़ी समस्या खड़ी हो गई। जिस समय उस कारण शरीर के अन्दर माने अविद्या के अन्दर कहा कि यही ब्रह्म है यहाँ कोई स्वप्न नहीं है। वहाँ कोई स्वप्न तो नहीं है। यह बातें तो ठीक हैं किन्तु वहाँ ज्ञाता का मैं रूप से कोई भान ही नहीं। 'मैं' रूप ही गायब। ज्ञान नहीं ज्ञाता कौन ? नाति ज्ञाने ज्ञातु दृष्टान्ते। भय हो गया। कहता है मेरा तो अस्तित्व ही खतम हो गया। 'स समित्पाणिः पुनरेयाय' पुनः जिज्ञासु बन कर आ गया। हे मघवन् तुम तो बड़े शान्त हृदय होकर चले गये थे। 'किमिच्छ पुनरागमः' अब किस इच्छा से आया है ? 'सम्प्रत्यात्मानं जानात्ययमहमस्मीति' मैं तो कुछ भी नहीं जानता हूँ कि कौन ? क्योंकि उस सुषुप्ति अवस्था मे तो 'मैं' का ज्ञान ही नहीं है। 'मैं' का ज्ञान है जाग्रत में, मैं का ज्ञान है स्वप्न मे। सुषुप्ति मे तो मैं ही गायब हो गया। जब मैं ही नहीं तो क्या बचा अब मेरे पास। जीरो हो गया। क्लीन आऊट हो गया। क्या हमने ब्रह्म को पाया। 'एतदमृतमभयं एतद्ब्रह्मेति' कोई मेरा भी नहीं रहा। कोई तेरा भी नहीं रहा। sound sleep मे पड़े हैं। शरीर से कभी २ वस्त्र भी हट जाता है। कपड़े का मान भी नहीं होता। गधेड़ा पड़ा है, उसको अपने शरीर को भी होश नहीं। कोई ब्रह्म नहीं मालूम पड़ा। 'सम्प्रज्ञातविनाशनेवापीतो' कुछ मेरा ख्याल करो। इन्द्र कितने वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण कर चुका

है ? 96 वर्ष तक ब्रह्मचर्य धारण कर चुका है । बत्तीस वर्ष तो विरोचन के साथ ही रहा । और दो बार अकेले गया । 96 वर्ष हो गये । भगवान प्रजापति कहते हैं 'एवमेवमेतदनुव्याख्यास्यामि' । तेरे को हम फिर समझाएँगे । देखो गुरु उदार होना चाहिए । बोलने में कभी आलस्य नहीं करे । उदार नहीं होगा तो वाणी का कृपण होगा । इसलिए आचार्यों ने गुरु का लक्षण किया 'पदवाक्यप्रमाणज्ञेन आचार्येण परम कारुणकेन' पद वाक्य, वाक्य शास्त्र, प्रमाण शास्त्र इन तीन शास्त्रों का ज्ञाता हो । विद्वान होना चाहिए । जो आत्मविद्या का उपदेश करने वाली आचार्य है । पहले तो शब्द विद्या का ज्ञाता हो । पद शास्त्र व्याकरण को और प्रमाण शास्त्र तर्क को । मीमासा दर्शन को तो आचार्य इन सब शास्त्रों का ज्ञाता होना चाहिए । नहीं तो यह जो सत वचन कहेगा । यह सत वचन कुछ समझ कर करते हैं या यूं हीं सतवचन कहते जाते हैं । एक विद्वान थे । प्रवचन कर रहे थे। जिज्ञासु भी बडे अच्छे थे । जब कुछ कहे तो बोले सतवचन । विद्वान ने गप्प लगानी शुरु की । बोले हिमालय मे मधु मक्खियाँ निकली । बोले सतवचन । मधु मक्खियों ने आकाश को ढक लिया । सतवचन । वो मधु मक्खियाँ मुज्जफरनगर गुड़ की मंठी मे पहुंच गया । सतवचन । गुड़ की पांच सेर पक्की भेली होती है । एक २ मक्खी एक २ पांच किलो गुड़ को भेली उठा कर उड़ गई । बोले सत-वचन । विद्वान बोले हा सतवचन । कुछ तो सोचो, मक्खी भला सेर गुड़ की भेली उठा कर कैसे उड़ जाएगी ? श्रद्धा भी चाहिए । सतवचन भी ठीक है किन्तु साथ में विवेक भी चाहिए ।

भगवान प्रजापति इन्द्र से फिर कहते हैं 'तस्माद्वावर्षाऽपराणि पञ्चव-र्षीणीति स ह पराणि पञ्चवर्षाण्युवास तान्येकशतं' पांच वर्ष और तप करो । जल्दी बाजी नहीं करों । कितने वर्ष हो गये ? एक सौ एक वर्ष इन्द्र ब्रह्मचर्य धारण कर के इस ब्रह्मविद्या को सीखने के लिए भगवान प्रजापति के पीछे २ घूमता रहा । भगवान प्रजापति धीरे २ इसको ऊपर उठाते रहे । बच्चा यदि आज जन्मे और एक ही दिन मे छः फुट लम्बा हो जाए तो कौन मां प्रसन्न होगी ? यह तो प्रकृति है जो धीरे २ देती है और लेती भी धीरे २ है । पच्चीस वर्ष इसने जवान बनाने में लगाए । बुढ्ढा बनाने मे कितने वर्ष लगाएगी ? पचास वर्ष तक

बुढापा आने लगेगा। तब तक तुम दादा दादी बन जाओगे। अब ह'य दया मत करो। पापड़ खाओ और चुप चाप बैठ जाओ। इन्द्र एक सौ एक वर्ष तक भगवान प्रजापति के पास ब्रह्मचर्य धारण कर के रहे। किन्तु अभी ब्रह्मविद्या का उपदेश आगे धीरे २ कर रहे हैं।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

११-६-८८

प्रवचन सं०-६४

"ॐ एवमेवैष मघवन्निति होवाचैतं त्वेव ते भूयोऽनुव्याख्यास्यामि नो एवान्यत्र तस्माद्वसाऽपराणिपञ्च वर्षाणीति स हा पराणि पञ्च वर्षाण्युवास तान्येकशतं सम्पेदुरेतत्तद्यदाहुरेकशतं ह वै वर्षाणि मघवान्प्रजापतौ ब्रह्मचर्यमुवास तस्मै होवाच ॥"

(छान्दो. ८-११-३)

इन्द्र ने इस बात को कहा कि हे भगवन सुषुप्ति मे जब निर्देश किया। 'यत्र सुप्त सम्प्रसन्नः स्वप्नं न विजानाति' जिस सुषुप्ति अवस्था में जब सो जाता है तो बडा प्रसन्न हो जाता है। 'न स्वप्नं विजानाति' कोई स्वप्न भी वहां नहीं देखता। ऐसी वो जो अवस्था है वो आनन्दमयी अवस्था है 'एष आत्मेति होवाच एतदमृतमभय' भगवान प्रजापति ने स्पष्ट किया कि यही आत्मा है, यही अमृत है और यही है। इस बात को इन्द्र ने मन मे विचारा। इन्द्र ने इस बात का मनन किया कि हमने क्या समझा? यह जो सुषुप्ति अवस्था है, यह कारण अवस्था है। यह सुषुप्ति अविद्यामयी है। कारण शरीर अविद्या प्रधान है। 'कारणं यस्मात् संसारे प्रवृतिः' संसार की प्रवृति का कारण अविद्या है। जब तक अविद्या पीछे हटेगी नहीं तब तक चलते ही रहना पडेगा। इस बात को समझाते आ रहे हैं कि जब तक अज्ञान है तब तक क्रिया है। जहाँ अज्ञान हटा और ज्ञान मे आए तो क्रिया निवृत हो जाएगी। अपने रोज के अनुभव से ऐसा समझो। भोजन करने बैठे है। भोजन की क्रिया चल रही है। अन्न खा रहे हो। बगल मे भी कोई बैठा है, तो जो बगल में बैठा है जब वो मना करेगा तब खाना बन्द करोगे? कि तुम्हारे में स्वयं तुष्टि, तृप्ति आ जाएगी तब खाना छोड़ना है। वो जो बगल मे बैठा है, उसके मना करने पर कि बस अब मत खाओ, खाना नहीं छोड़ता। क्यों? अभी तुमको और खाने की जरूरत है। यदि तुम्हारी तृप्ति बुद्धि जाग गई तो कोई कितना ही प्यारा क्यों न हो, कितना ही आग्रह क्यों न करे, तुम नहीं खाओगे। थाली छोड कर भाग जाओगे। इसलिए कहा। 'ज्ञाने सर्वक्रिया परिसमाप्यते' ज्ञान होने पर ही सम्पूर्ण क्रिया समाप्त हो जाती। ज्ञान जब तक नहीं होगा क्रिया चलती रहेगी। यहाँ इन्द्र को कहा कि जिस अवस्था मे कोई चिन्ता नहीं कोई शोक नहीं। बडा प्रसन्न है। आनन्द मे है। बस वही ब्रह्म है 'एष आत्मा'। वो अवस्था निकली सुषुप्ति और सुषुप्ति वो अवस्था है जो अविद्या प्रधान है। इन्द्र ने यहाँ अनुभव किया कि यहां तो मैं ही गायब हो गया है। जाग्रत में अहं अहं करते रहे स्वप्न में भी अहं अह तो करते रहे किन्तु यहाँ तो यह अहं ही नहीं रहा। इस अहं के गायब हो जाने से बचा भीं कुछ नहीं। इन्द्र लौट कर आ गया। भगवान प्रजापति ने पूछा 'किमिच्छन् पुनरागमः?' बोला भगवन् हम तो कुछ नहीं समझे।

भगवान प्रजापति ने कहा कहा है इन्द्र तेरे को हम पुनः समझाएँगे 'नो वसापराणि' देखो वक्ता के अन्दर कितना निश्चित प्रमाण प्रधान ज्ञान है या वक्ता संशय में बोलता है यह उसकी वाणी से स्पष्ट हो जाता है। अगर वक्ता कहे कि 'इदं सत्यं' यही सत्य है। इसके अतिरिक्त दूसरा कोई सत्य नहीं है मतलब शास्त्र प्रज्ञा है। यदि वक्ता कहे यह भी हो सकता है तो इसका अर्थ कि वक्ता स्वयं निश्चित नहीं है। यदि वह स्वयं अनिश्चित है, दृढ नहीं है है तो सुनने वाला दृढता कैसे पा सकता है। यहाँ भगवान प्रजापति कहते है 'नो इव अन्यत्र एतस्मात् न किंचित्' इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं। जो कुछ मैंने तेरे को समझाया है, इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है किन्तु यह विद्या बिना तप किए अन्दर जमती नहीं। विद्या को तो रहने दो अगर कोह झूठ भी बोले तो वो झूठ भी बिना समझे एक दिन मे अन्दर जमता नहीं। इसके लिए भी समय की अपेक्षा है। तो वो सत्य एक दम कैसे जम जाएगा। सत्य के लिए भी कुछ करना पडेगा। इसलिए भगवान प्रजापति ने कहा पांच वर्ष और बैठना पडेगा। थोडा सा मैल रह गया है इसलिए और तप करना पडेगा। इन्द्र साधारण नहीं है। देवताओं मे भी श्रेष्ठ है, राजा है। उस देवता को भी उस परम सत्य मे पहुँचने के लिए कितना तप करना पड़ा, कितना परीक्षा से जाना पड़ा, तो सामान्य प्राणियों के लिए: जो सामान्य संसारी जीव है, जिनको थोडी २ देर मे शोक आता है, थोडी २ देर मे मोह आता है वो अगर ऐसा तप नहीं करते, ऐसी तितिक्षा जीवन मे नहीं करते, तो सत्य की खोज मे आगे कैसे बढगे। यह विद्या बडी महत्त्व पूर्ण है। बडे पुण्यों का फल है इन्द्र का, इन्द्रपद से ऊँचा कोई पद नही। स्वर्ग भी जाता हो तो इन्द्र बनना कोई खाला का बाड़ा नहीं। किन्तु उस इन्द्र पद की अपेक्षा भी यह ब्रह्म विद्या बडी है। यह अर्थ है क्योंकि इन्द्र जानता है कि ठीक है हम इन्द्र तो बन गये पर इस पद से एक दिन नीचे भी गिर जाएंगे। कहाँ जाएँगे ? यह अमृत विद्या यदि मेरे में आ जाएगी तो पद से गिरने नहीं देगी। मेरे को उठा कर रखेगी। मोक्ष में ले जाएगी। इन्द्र पद जो है वो तो यही है। जब तक इस पद पर हो खाना दाना ठीक चलती रहेगी। किन्तु उस मृत्यु की चपेट से, मृत्यु के पंजे से बाहर तो इन्द्र पद नहीं है। वहाँ भीं मृत्यु का भय तो है 'इन्द्र पदादपि अतिगुरूतरब्रह्मविद्या।' यह इन्द्र पद श्रेष्ठ है किन्तु यह

ब्रह्मविद्या इस इन्द्र पद से भी गुरुतर है। श्रुति इस बात को भी स्पष्ट करती है कि इन्द्र तुम जरुर बन जाओ किन्तु उस इन्द्रपद कीं भी आयु है, और यह उसकी आयु जब खत्म हो जाएगी तो सिवाय मृत्यु के कुछ नहीं होगा। पीछे कहाँ जाएगा कुछ पता नहीं।

श्री मद्‌भागवत में राजा नहुष की कथा है। राजा नहुष बड़ा शूरवीर था अपने समय में। वृत्रासुर को मारने के बाद इन्द्र भाग गया। इन्द्र के पीछे ब्रह्महत्या पड़ गई। वृत्रासुर राक्षस तो था किन्तु जाति का ब्राह्मण था। उसका वध किया। इन्द्र के पीछे ब्रह्म हत्या पड़ी। इस ब्रह्म हत्या के भय के मारे इन्द्र मान सरोवर मे जाकर कमल बन मे छिप गया। पौराणिक उपाख्यान जो होते है, उनका आध्यात्मिक महत्त्व जुदा होता है। कहते है इन्द्र मान सरोवर मे चला गया। वो कमल वन में जाकर छिप गया। वो इन्द्र कौन ? इन्द्र माने परमात्मा मन एव सरोवरः। मानस सरोवर का अर्थ मन में आकर छिप गया। जब यह परमात्मा मन में आ कर छिपया तभी यह जीव बना। ब्रह्म हत्या कौन सी ? ब्रह्म को नहीं जानना ही ब्रह्म हत्या। किसी शास्त्र से, श्रुति से, गुरु के मुख से ब्रह्म को नहीं सुनना ही ब्रह्म हत्या है। ब्रह्म की तो हत्या कर दी, अब मन को पकड़ कर घूमने के सिवाय कोई रास्ता नहीं। तुमको मैं मैं करना पडेगा। तुमको मेरा मेरा करना पडेगा। रोज मैं मैं करो। रोज मेरा २ करो। न मैं निकलेगा न मेरा मेरा निकलेगा। ध्यान कर के देखो कितना मैं मैं कर के आए हो ? आद्यजगद् गुरु श्री शंकराचार्य आठ वर्ष की अवस्था में ही चारों वेदों का और समस्त शास्त्रों का अध्ययन उनको हो चुका था। प्रौढ पंडित हो चुके थे। आठ वर्ष की अवस्था में सोचो बच्चा कितना विद्वान हो सकता है ? सामान्य बच्चा नहीं था। इसलिए भगवान शंकर का अवतार मानते हैं उनको। यह अपनी मां से कहते है कि मुझे सन्यास लेने की आज्ञा दे। मैं सन्यास लेकर धर्म की सेवा करूँगा। धर्म की रक्षा करूँगा। तो मां तो बडे से बडे पुरुष की मां है तो भी मां है और छोटे से छोटे प्राणीं की मां है तो भी मां है। मां हृदय मोह प्रधान है। वो कहती है नही बेटा अभी नहीं। घर में और कौन है ? पिता भी नहीं है। जब थोडे बडे हो जाओगे तो तुम्हारी शादी करूँगी। बहुरानी आएगी। कोई इस

घर मे आगे भी चाहिए । नहीं तो तू चला जाएगा तो दरवाजे बन्द हो जाएँगे । मां रोज टाल देती है । यह सोचते हैं कि सन्यास लिए बिना देश का भला नहीं कर सकता । सन्यास तो मेरे को लेना ही पडेगा । पर मां मानती ही नहीं ।

एक दिन मां और बेटा दोनों पूर्णिया नदी पर स्नान करने गये । इनके अन्दर तो महान योग है । संकल्प मात्र से एक crocodile मगर मच्छ खड़ा कर दिया । और जोर से चिल्लाए कि मेरे को मगरमच्छ ने पकड़ लिया है । तू सन्यास की आज्ञा देगी तब छोडेगा । नहीं तो खा जाएगा । अब मां क्या करेगी ? सन्यास लेने की आज्ञा नहीं देती तो बच्चा अभी चला जाएगा । सन्यास की आज्ञा देती हूँ तो बच्चा जीवित तो रहेगा । चला भीं जाएगा तो जीवित तो रहेगा । कह दिया हां बेटा सन्यास लेने की आज्ञा देती हूँ । तो crocodile तो इन्हीं की माया थी । वह गायब हो गया । आज्ञा मिल गई । बोले जा रहा हूँ । इतनी जल्दी ? हां इतनी जल्दी करने के लिए ही तो यह सब हुआ है । तो वहाँ मां को उपदेश किया, आंख बन्द कर के देखो । ध्यान करो कितने तेरे बेटे हुए है ?कितने तेरे जन्म हुए है :

"कति वा सुता न लालिता: कति वा नेह बधूरभुञ्जि हि ।
क्व नु ते क्वचत/ क्ववावयं भवसङ्ग: खलु पान्थ संगम:।।"

कतिनाम सुता न लालिता: । कितने जन्म तेरे हुए है और उन जन्मों मे कितने तेरे पुत्र हुए है ? उन पुत्रो को बहुएं कितनी हुई ? उन पुत्रों के कितने बच्चे हुए । 'क्वनु ते क्वच ता: ।' वो बेटे तेरे कहाँ हैं ? व. बहुएं कहाँ हैं ? हे मां एक दिन हम लोग भी ऐसे ही गायब हो जाएंगे । 'क्व वा वयं भव सङ्क खङ्ग पांथसंगम:' पांथ कहते है यात्री को । पथ माने रास्ता । रास्ते में चलने वाले को यात्री कहते है । इसलिए आज कल नारा लगाते हैं पंथ खतरे में है । माने जो रास्ता हमारा बना हुआ है वो खतरे मे है । मां को उपदेश किया 'पांथसंगम:' मां ने कहा जब मेरा प्राण छोड़ने का समय आएगा तो मेरे पास आना पडेंगा । बोले हाँ यह मैं जरुर करूँगा । तेरे प्राण छूटने के समय जरुर आऊँगा । मां का शरीर जब छूटने लगा तो शंकराचार्य आ गये और आकर मां से मिले. । मां बडी खुश हो गई । जाति वाले ब्राह्मण चिढ गये । बोले यह सन्यासी होकर घर आ गया, यह पतित

हो गया। बोले मां का वचन पूरा करने आ गये हैं। उस समय छूआछूत बहुत था। मां का शरीर छूट गया। जाति वाले मां का मुर्दा उठवाने नहीं आए कि तुम क्यों आए। इन्हों ने मां का शरीर घर मे ही जला दिया बोले जाओ कहीं ले जाने की जरुरत नहीं ही नहीं। किन्तु तुम्हारे मुर्दे अब घर मे ही जला करेंगे। ऐसा शाप दे दिया। अभी तक उनके मुर्दे घरों में ही जलाते हैं। तो यह सिद्धों के संकल्प बडे विचित्र होते हैं।

इन्द्र ब्रह्म हत्या के डर के मारे भाग गया। नहुष मे इतना पुण्य तो था नहीं कि वो इन्द्र बन जाए। ऋषियों ने अपना पुण्य दिया। नहुष इन्द्र पद पर पहुंच गया। इन्द्र पद पर पहुंच गया तो कुछ दिन तो दिमाग ठीक रहा। पर कहा है न 'प्रभुता पाई काहि मद नाहीं।' मद मे आ गया। मैं जब इन्द्र बना हूँ तो इन्द्र की सभी वस्तुएँ हमे मिलनी चाहिए इन्द्राणी अभी तक हमारे सामने आई। इन्द्राणी को भी हमारे सामने आना चाहिए। जब नहुष ने ऐसा कहा तो इन्द्राणी घबरा गई। गुरु बृहस्पति के आगे प्रार्थना की। देवता जिसको रक्षा करते है उसकी बुद्धि स्वस्थ करते है और जिसका विनाश करते हैं उसकी बुद्धि नष्ट कर देते हैं। बृहस्पति ने इन्द्राणी से कहा कि तुम एक काम करो, उसको समाचार भेजो कि तुम जिस पालकी मे बैठ कर आओ सप्त ऋषियों को उस पालकी मे जोड़ कर लाओ। तब मैं तुमको स्वीकार करूँगी। राजा था, आर्डर कर दिया। ऋषियों को पालकी मे लगा दिया और कहा कि पालकी उठाना पडेगी। ऋषियों ने कहा चलो। जिनके बाप दादा ने कभी पालकी नहीं उठाई थी धीरे २ चल रहे है। नहुष को जल्दी थी। सर्प सर्प करता है। अगस्त ऋषि को तो पैर से ठोकर ही मार दी। घोडे को जैसे एडी मारते है। शाप दे दिया जो मूर्ख तू सर्प ही हो जा। तो यह सर्प बन गया। देखो कहाँ पहुंच गया ? इन्द्रपद से। तेरे को इतना सब कुछ मिला था पर फिर भी तू मद में आ गया। सर्प योनि मे चला गया। इन्द्र बन जाएंगे तो सब कुछ हो जाएगा। कुछ नहीं होगा। इन्द्र के पीछे भी मृत्यु खड़ी है।

यहाँ इन्द्र भगवान प्रजापति ब्रह्मा के पास से जो ब्रह्मविद्या सीखने गो

आया है, क्यों आया है ? इसलिए कि मृत्यु का भय है । इससे बचने के लिए । 'इन्द्रपदादपि गुरुतरा: ब्रह्मविद्या' यह ब्रह्मविद्या इन्द्र पद से भी गुरुतर है, महान है। इन्द्र एक सौ एक वर्ष तक भगवान प्रजापति के पास ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर के रहा । ब्रह्मविद्या को पाने के लिए जब इतने महान, इन्द्र को भी इतना धैर्य धारण करना पडा तो सामान्य प्राणी को कैसे धैर्य नहीं रखना पडेगा । यह कैसे सम्भव होगा । धैर्य रखना रखना चाहिए । धीरे २ यह ब्रह्मविद्या प्रतिष्ठित होती है । एक वात और समझो । इस लोक मे कुछ लोग ऐसे भी होते है जिनके चोरों के, डाकुओं के, शराबियों के gang बने होते है । उनके बीच मे जाओगे तो वो तुम को शंका की नजर से देखेंगे । अपनाएंगे नहीं । पहले तुमको उनके बीच मे बडी नम्रता से जाना पडेगा । हाथ जोड कर नमस्कार करना पडेगा । सेवा भी करनी पडेगी । किन्तु जिस समय वो तुमको पकड़ लेंगे तो बाहर नहीं निकलने देंगे । तुम चाहोगे तो बाहर नहीं निकलने देंगे । तो जो ऐसे third class आचार विचार के लोग हैं, जिनका जीवन न इस लोक का न उस लोक का । ऐसे पतित विचार के लोग भी जब पकड लेते हैं तो छोड़ते नहीं तो सोचो कि यह ब्रह्मविद्या तुम को कैसे छोडेगी । अमृत विद्या है, पहले तो तुम्हे इसको पकड़ना पड़ेगा किन्तु विद्या जब पकड लेती है तो फिर कोई दिक्कत नहीं । यह ऐसे छोड़ने वाली नहीं । यह कहेगी तेरा तो मोक्ष कर के ही छोडना है । तेरे को मैं इस संसार मे अब लोट कर कैसे जाने दूँ । इसलिए किसी को पहले अपना दोस्त बनाओ तब वो तुमको अपना दोस्त बनाएगा । हम कहें कि हमारा दोस्त अपने ही घर से आ जाएगा तो कोई नहीं आएगा । पहले इस विद्या को तप के द्वारा श्रद्धा से मुमुक्षु पकडता है और वो पकड लेता है तो पीछे यह मोक्ष मे बडे आराम से चला जाएगा ।

इस प्रकार इस विद्या को लेकर चलता हुआ इन्द्र भगवान प्रजापति के पास एक सौ एक वर्ष तक तप करता हुआ रहा । अब उस इन्द्र को भगवान प्रजापति फिर सत्य की ओर खींचते हैं । ब्रह्मविद्या का उपदेश करते हैं । हे इन्द्र । तू यही चाहता है न कि मैं अमृत पद मे चला जाऊँ किन्तु रस अमृत पद में तू कैसे जाएगा ? डेरा तो डाला है मृत्यु के घर मे और इच्छा करता है अमरत्व की ।

यह कैसे होगा ? अमरत्व की इच्छा करते हो तो अमरत्व के पास में जाओ । मृत्यु के घर से बाहर निकलो। 'मर्त्यं वा इदं शरीरं' हे मघवन्, इन्द्र का नाम है मघवा जिस शरीर को तू पकड़ कर बैठा है यह तो मरणशील है। जिस शरीर को तू पकड कर बैठा है इस शरीर मे तो मृत्यु देवता की यात्रा होती रहती है। ऐसा अनुभव करो, जंगल मे जो शेर है व्याघ्र । रात को जब निकलेगा, शिकार करने जाता है, कहाँ जाएगा । जहाँ पानी पीने की जगह होती है वहाँ जाता है । क्यों ? जंगल के जानवर हरिण आदि उनको पानी की प्यास तो लगती है । दिन भर तो बेचारे छिपे रहे । पानी पीने तो जाना पडेगा । tiger तो पहले ही वहाँ ध्यान कर बैठा है । जैसे ही पानी पीने लगा, वैसे ही पकड लिया । इसी तरह समझो उस हिरण की तरह यह जीव भी इस शरीर को पकड़ कर बैठा है। क्या पकड कर बैठा है ? माने इस शरीर के अहंकार को पकड कर बैठा है । 'यह मैं हूँ' और मृत्युरूपी tiger जो है इसी अहंकार को खा जाता है । इसलिए इस शरीर भाव से बाहर निकलो । कहोगे यह tiger कब आएगा । तो सोचो, यह tiger तो तुम्हारे साथ ही चल रहा है । इस शरीर को देखो जब जन्मा था तो कितना बडा था ? वो स्वरूप कहाँ गया ? tiger रोज चाट रहा है इसको । वो बपचन को खा गया तो कुमारावस्था आ गई । धीरे से उसने इसको मालपूडे की तरह लपेट कर मुँह मे रख लिया । तो जवानी आ गई । जवानी का तो कहना ही क्या ? जवानी को भी चूस लिया । बची खाली बोतल फिर भी हम नहीं समझे । पूछते है यह मृत्यु देवता कब आएगा ? अरे यह तो तुम्हारे साथ २ चल रहा है किन्तु हम समझते है कि जब प्राण निकल जाएगा तब मरेंगे । रोज तो मर रहे हो । मरने की कोई date fix करना है ? रोज मर रहे है, रोज जन्म रहे है किन्तु न जन्म को समझे न मरण को समझे । ऐसे ही आंख बन्द कर के आए, आंख बन्द कर के चले गये । क्या कमाई किया ? इसलिए श्रुति से, शास्त्र से, बुद्धिमान आचार्य से इस रहस्य को स्पष्ट रूप से समझना चाहिए कि इस आत्मा से परे कोई सत्य नहीं । बुद्धिमान देहाहंकार से ऊपर उठे ।

उपनिषद मे पहले एक मंत्र गया 'अथात आदेशः अथ एष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात्समुत्थाय परं ज्योति रूप सम्पद्य स्वेन रुपेणाभिनिष्पद्य एषात्मेति होवाच

एतदमृतमभयैतद्ब्रह्मेति' मंत्र क्या कहता है, यह हृदयस्थ अहं २ चेतन आत्मा ही सम्प्रसाद है। इसके दीखने पर ही तेरे को खुशी होगी। और जो तेरे प्रिय बन्धु बन कर बैठे हैं, देखो एक अपना जो बेहोश है। श्वास अभी चल रहा है इसलिए घेर कर बैठे हैं। किन्तु खुश कोई नहीं। खुश कब होंगे ? आंख खोलते ही सब खुश हो गये। आ गये, अब बाहर आ गये। दरवाजा बन्द कर के बैठे थे। पुराने जमाने का नियम था कि घरवाली यदि गुस्सा करे तो लडना नहीं। घर मे एक कमरा बना होता था ऊपर। बस उस कमरे मे चले जाओ और दरवाजा बन्द कर के बैठ जाओ। घर वाले दूसरे लोग खोजेंगे कि कहाँ गयी ? कहेंगे पता नहीं। कोई कह देगा कि ऊपर है तो पांव के नीचे की मिट्टी खिसकने लगेगी ऊपर का नाम सुनते ही घबरा गया। अब problem को कैसे हल करूँ। धीरे से जाएगा और दरवाजा खट खटाएगा। अन्दर से मारी फुंकार उसने तो धीरे से बोला, चलो गल्ती हो गई। अब गल्ती को जब हम मान रहे हैं तब तो कोई अपराध नहीं रहता। उसको कहते हैं प्रायश्चित करना। 'यज्ञान्ते प्रायश्चित्तं चरितं चेत पुण्यसमाहारोपनिहितं' 'त्राहि मा'।

यज्ञ के अन्त मे यजमान को भी प्रायश्चित्त करना पडता है। प्रायश्चित्त हो गया। गल्ती हो गई। वो जो दरवाजा बन्द कर के बैठी है वो ऐसे ही थोडे बैठी है। कहता है बन्दे को क्षमा कर दिया जाए वो इतनी अनुसार नहीं है, चलो माफी मांग रहा है तो चलो दरवाजे खुल जाते है। प्रत्येक कमरे में झगडा न कर के एक कमरा अलग रखा है। घर का वायु मंडल न बिगडे। कभी उसका भी झगडा करने का मन हो तो बैठ जाए वो भी जाकर। इसी तरह यहाँ समझो अपने हृदय में चलो। वहाँ देख लो क्या २ माल रखा है। विवेकशील सत्य को पकडे। इसलिए यहाँ कहा कि 'मर्त्यं वा इदं शरीरम्' यह सम्प्रसाद है। 'अस्मात् शरीरात् समुत्थाय परं ज्योति रुपसम्पद्य' इस शरीर में जो अहंकार कर के बैठे हो कि यह मैं हूँ इस अहंकार को तोडो। गुरु कहता है 'ब्रह्मासि सौम्य' हे सौम्य तुम ब्रह्म हो। शरीर के अहंकार को काटो। आत्म प्रज्ञा मे जाओं। शरीर का अहंकार कट गया तों मृत्यु क्या बिगाडेगा तुम्हारा ? मृत्यु तो यहीं आता है। कहाँ ? शरीर मे। वो क्या करता है ? तुमको मारता थोडे ही है, तुम्हारे अहंकार को

मारता है। और उस अहंकार को गुरु ने ब्रह्मविद्या के द्वारा पहले ही मार दिया अब मृत्यु से तुमको क्या डर ? श्रुति कहती है 'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन' महान इस अमृत ब्रह्म के आनन्द को समझ कर विद्वान को कोई भय नहीं। माने वो अमृत पद है। इस प्रकार भगवान प्रजापति इस अमृत पद को प्रकट कर रहे हैं कल और इसकी व्याख्या करेंगे।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१२-६-८८

प्रवचन सं० ६५

"ॐ मघवन्मर्त्यं वा इदं शरीरमात्तं मृत्युना तदस्या-मृतस्या शरीरस्यात्मनोऽधिष्ठानमात्तो वै सशरीरः प्रियाप्रियाभ्यां न वै सशरीरस्य सतः प्रियाप्रिययोरपहतिरस्त्य-शरीरं वाव सन्तं न प्रियाप्रिये स्पृशतः ।।"

(छान्दो.८-१२-१)

भगवान प्रजापति ब्रह्मा देवराज इन्द्र को आत्मा का उपदेश करते है 'यत् सारभूतंतदुपासनीयम्' मनुष्य के जीवन में सारभूत क्या है? यह आत्मा ही सार है। अगर आत्मा नहीं है तो यह शरीर कितना ही प्यारा हो, कितना ही सुन्दर है किन्तु यह मुर्दा फिर किसी को प्यारा नहीं। तो शरीर के आकार मे जो कुछ भी भी है यदि वो ही आत्मा है तो यह अमृत नहीं, अभय पद नहीं। जब तक इस आत्मा का बोध नहीं होगा मृत्यु का भय नहीं छोडेगा। इसलिए देवराज इन्द्र इस मृत्यु के भय से बाहर जाने के लिए भगवान प्रजापति ब्रह्मा से प्रार्थना करता है कि हे भगवन मेरे को इस आत्मा को समझाएँ। मैं इस मृत्यु के भय से बाहर हो जाऊँ। यदि यह जीव बडे भीख भी मांगे जैसे उत्तम से उत्तम लोकों मे जाएगा तो मृत्यु पीछे पडा हुआ है। वो छोडता नहीं। आकाश में आजकल बडे राकेट उडते हैं उनको मारने के लिए मिसाइल्स ऐसी बनी है कि जिधर वो जाएगा उधर ही यह भी जाएगी। ऐसा आकर्षक होता है मिसाइला के अन्दर कि यह उधर ही जाएगी।

इस पृथ्वी को आकाश जानो और यह शरीर क्या है? यह बडे २ राकेट है। इस पृथ्वी पर जहाँ २ यह राकेट जाएंगे यह मृत्युरूपी मिसाइल्स इसके पीछे ही जाएगी। इसलिए देवराज इन्द्र भी चाहता है कि ऐसी विद्या हमको मिले जिस विद्या के मिलने से हम अभयपद मे पहुंच जाएं। यह नियम है कि यह मनुष्य अगर अपनी चीज को पकडेगा तो इसको भय नहीं होगा। और दूसरे की चीज पकडेगा तो इसको भय होगा। अपनी चीज है अपनी आत्मा। अगर अपनी आत्मा को पकड लिया तो तुमको अमरत्व मिल जाएगा। और अगर केवल शरीर को ही पकडा तो यह शरीर किसका है? पंचभूतों का पुतला है। पंचभूतों की धरोहर रखी है। किसी ने कोई चीज रखी हो तुम्हारे पास तो वो time से मांगता है कि नहीं? वो मांग लेंगे इसको। इसलिए भगवान प्रजापति कहते हैं इन्द्र से कि हे 'मघवन्मर्त्यं वा इदं शरीरमात्तं मृत्युना' इन्द्र यह शरीर तो मरणधर्मा है। प्रतिक्षण मृत्यु इसको अपनी ओर खींच रहा है। मृत्यु देवता ने इसको पकड कर रखा है। कई बार इस बात को समझा कर आए हैं कि प्रतिक्षण इस शरीर में परिवर्तन चल रहा है। बच्चे थे बच्चे नहीं रहे। कुमार थे कुमार नहीं रहे।

जवान थे जवान नहीं रहे । इतनी अच्छी २ अवस्थाएं आई और पीठ दिखा कर चली गई । तो यह बुढापा क्या टिकेगा ? "प्रतिक्षणपरिणामिनोहिभावा:" सांख्य दर्शन के जो बडे आचार्य है वो कहते हैं कि यह सारे पदार्थ प्रतिक्षण बदलने वाले हैं । अगर यह प्रतिक्षण न बदले तो तुमको स्वाद भी नहीं आएगा । तुम्हारे स्वाद का भी तों स्वाद है । घर मे जो भोजन बनाने वाला प्रत्येक सदस्य के स्वाद का खयाल रखता है, अगर खाने वाले को स्वाद का भोजन नहीं बनता तो क्या होता है ? इस शरीर को अपना भोजन समझो । खाने वाले तुम हो । अहं २ कर रहे हो । इस शरीर का स्वाद ले रहे हो ।

जन्म के समय यह शरीर कितना बडा होता है भला ? चूहे जितना होता है । उतने का उतना ही वो शरीर १० वर्ष तक रहे तो कौन मां छाती पर हाथ रख कर बोलेगी कि मैं उस बच्चे का पालन करूंगी । यह तो बच्चा रोज अपनी शकल बदल रहा है इसलिए माँ प्यार करती है । एक वर्ष मे बच्चा बैठने लगता है । बडा होने लग जाता है । चलने लगता है । अगर चूहे जितना ही रहे तो कोई मां हाथ नहीं लगाएगी । उठा कर कोने मे डाल देगी । मां को तुम्हारा परिवर्तन प्यारा है, तुम्हारी एक जैसी शकल पसन्द नहीं । किन्तु परिवर्तन प्यारा होने पर भी, अन्दर जो तत्त्व है अहं २, इस अहं मे कोई परिवर्तन नहीं । यह जो अहं है यह अमरतत्व है । इसलिए बुद्धिमान के लिए उपदेश है कि वह इस अह को पकडे । इस कवर को नहीं पकडे । इस कवर को तों बक्सा समझो । बक्से मे हम लोंग घुस गये और भगवान की भक्ति भी करते है तो कहते है कि चले आओ हमारे अन्दर । अगर तुम उस विश्वात्मा से मिलना चाहते हो तो इस बक्से से बाहर निकलो मैं पुरुष हूं, मैं स्त्री हूं, यह जो अहंकार है इससे बाहर निकलो । इसीलिए वह ब्रह्माण्डात्मा इससे जुदा दीखता है । अगर तुम इस देहांकार को जुदा कर दो तो तुम्हारे में और उसमे क्या फर्क है ?

"इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च
जन्ममृत्युजराव्याधिदु:खदोषानुदर्शनम्"

केवल शरीर मे फर्क कर के रखा है । बुद्धिमान इन्द्रियों के अर्थों को भी ले । ठीक है, रूप भी देखो, शब्द भी सुनो, गन्ध भी लो, स्पर्श सुख भी लो किन्तु अपने

स्वरूप का ध्यान भी करो। हम कौन है ? यह शरीर के आकार से हम मनुष्य हैं किन्तु यह शरीर के आकार ने जो मनुष्य भाव है, यह अमृत नहीं। यह तो आने जाने वाला है। इसलिए अपने उस असली स्वरूप की चिन्ता करो। वो कौन है ? यहाँ पर भगवान प्रजापति उपदेश करते है कि यह शरीर तो मृत्यु से ग्रस्त है। आप लोग सुनते रहते हो यह जो सर्प है इसने मेंढक को मुँह में पकड रखा है। पीछे की ओर से पकडा है। मेंढक का मुँह खुला है, टें टें कर रहा है। सामने से आ गया मच्छर मेंढक ने उसको पकड लिया। वह स्वयं मृत्यु के मुँह मे है फिर भी दूसरे के लिए मृत्यु बना हुआ है। इसी प्रकार हमारा जो शरीर है, यह भी मृत्यु के मुँह मे है। किसी भी राकेट में बैठ कर किसी भी ग्रह में चले जाओ फिर भी उसके पंजे से बाहर नहीं जा सकते। इसलिए विवेकशील अपनी आत्मा में ध्यान देवे केवल इस शरीर के ऊपर ही घूम कर नहीं चला जावे। इस शरीर के ऊपर घूम कर पशु भी जा रहे है। यदि मनुष्य भी शरीर के ऊपर ही घूम कर चला गया तो कमाइ क्या हुई ? ठीक है कुछ हाथों का कमाई कर ली। कोई भगवान की बडी कृपा हुई तो कुछ शुभ कर्म कर लोगे और तुम्हारा पुण्य होगा। इससे तुम्हारा आगे का जन्म शुद्ध हो जाएगा। किन्तु बिना समझे क्या होगा ? अगर किसी से कह जाए कि तुम समझना बन्द कर दो और तुमको सारे संसार का राष्ट्रपति बना देते है तो कौन तैयार होगा ? समझना बन्द कर देने का मतलब क्या है ? बेहोशी। तो वेहोशी से सारो दुनियाँ का मालिक बनना अच्छा है कि होश मे रह कर सूखी रोटी खाना अच्छा ? कहेंगे हाथ जोड कर कि भगवन हमको होश मे रख कर सूखी रोटी दो तो अच्छी है। बेहोशी में सारी दुनियां का राज्य भी दोगे तो क्या करेंगे। इसलिए विवेकशील सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा की ओर दृष्टि देवे। केवल इस शरीर को घूमा फिरा कर खतम नहीं करे। "तदस्यामृतस्याशरीरस्यात्मनोऽधिष्ठानम्' हे इन्द्र यह शरीर क्या है ? 'तदस्यामृतस्याशरीरस्य' यह जो तेरी आत्मा है अशरीर। इसका कोई निश्चित स्वरूप नहीं। आज इस शरीर मे है, कल उस शरीर मे, परसों उस शरीर में। इसी का नाम जन्म और मरण है। कभी देव शरीर मे कभी मनुष्य शरीर मे, कभी पशु पक्षी शरीर में। सभी शरीरों मे यह चोग चुगना है। यह इसका चोग चुगना कब

समाप्त होगा ? जब अपनी आत्मा को जानेगा । मेरी आत्मा है क्या? उस आत्मा का बोध दे रहे है भगवान प्रजापति । हे इन्द्र यह आत्मा शरीर है । इसका कोई शरीर नहीं । यह शरीर तो कर्म का बादल है । जैसे हमारे पूर्व के कर्म आए उन्होंने यह शरीर दिया । वो शरीर हमको खिला २ कर चला जाएगा । जैसे बडे लोग अपने छोटे बच्चों के लिए आया रखते हैं । छायी की ड्यूटी है । time से आएगी, बच्चों की service करेगी और जाएगी । इस शरीर को धाई समझो । time पर आया है तुम्हारी service के लिए और चला जाएगा । जिस समय लगेगा, तुम हाथ भी जोडोगे तो रुकेगा नहीं । बोलेगा रूकूंगा नहीं । मैं जाता हूं। यह मनुष्य शरीर बडे भाग्य से मिलता है और मनुष्य शरीर ही एक ऐसा शरीर है जिससे आत्मा का मोक्ष हो सकता है । इस शरीर मे ही तुमको उत्तम वेदादि शास्त्र मिलेगा । श्रेष्ठ ज्ञान वाला गुरु मिलेगा । श्रेष्ठ साधन भी मिलेंगे । साधना भी करोंगे । बैठ कर ध्यान करोगे कि 'मैं कौन हूँ ?'

कठोपनिषद का मंत्र है ''इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः, भूतेषु भूतेषु विचित्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ।।'' मंत्र सावधान कर के कहता है 'इह चेदवेदी' अगर इस मनुष्य जन्म मे तू अपने को समझ गया कि 'मैं कौन हूँ' ? गुरु ने कहा ब्रह्मासि सौम्य हे सौम्य तू ब्रह्म है । अगर अपने ब्रह्मभाव को पकड लिया तो 'सत्यमस्ति' तुमने अपने सत्य भाव को पकड़ लिया और 'न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः' तुमने अगर इसका नहीं समझा । केवल संसार के भोगों में ही आसक्त रहा तो 'महती विनष्ठिः' महान विनाश है । अब कब लौट कर आएंगे कुछ पता नहीं । भाग्य से यह मिला था । अब फिर कब मनुष्य जन्म मिलेगा, कुछ पता नहीं । इसलिए बुद्धिमान मनुष्य को इस सत्य का विवेक करना चाहिए । दीर्घा विनष्टि यहाँ से तू देखते २ चला गया । अब कब तू लौट कर इस मनुष्य शरीर मे आएगा । कुछ पता नहीं । यह तुम्हारे ज्ञान के ऊपर, तुम्हारे कर्म ऊपर निर्भर है । इसलिए विवेकशील बडी श्रद्धा से सत्कर्म भी हाथ से करे और बुद्धि से इस सत्य को समझे । जब जानते हो कि यह शरीर इस आत्मा के बिना २४ घण्टे भी रह नहीं सकता । उस सत्य के बिना यह झूठ शरीर जीने वाला नहीं । उस आत्मा के करंट मे यह सौ वर्ष तक जी सकता है तो

आत्मा कितना महत्त्वशाली है ? भूतेषु भूतेषु विचित्य धीरा: प्रेत्यास्माल्लोका दमृता भवन्ति'

संत लोग बडा सुन्दर दृष्टान्त देते हैं। एक संत रहे। गर्मी तो आजकल पड ही रही है। यह तो काठमाण्डू है जो आप लोगों को ठंडी की बौछार भी देता है। हिमालय बगल मे खड़ा है। आप लोगों को ठंडा करने के लिए एयर कंडीशन बना कर रखा है किन्तु जरा नीचे जाओ तो पता चले गर्मी का क्या हाल है। तेज धूप थी। संत एक बडे वट वृक्ष के नीचे मस्ती से बैठे है। एक मदारी उधर से आ गया। खेल दिखाने वाला मदारी एक गांव से आ रहा है। उसके पास पांच छोटे बडे बन्दर थे। उसका काम यही था एक गांव से दूसरे गांव जाना। बन्दरों को नचाना, जों मिला उससे बच्चों का पालन करता है। वो वहां आया। देखा बड़ा सुन्दर वट वृक्ष है। छाया है। बगल मे कुआं भी है। उसने सोचा धूप मे चलते २ परेशान हों गये हैं। सत के पास बैठ कोई अच्छी बात भी सुने और छाया में बैठें, ठंडा पानी पीएं। बन्दर तो पांचो रस्सी से बंधे हैं। रस्सी को पत्थर के नीचे दबा दिया। पानी पिया और नमस्कार कर बैठ गया। संत ने पूछा मदारी क्या हाल है। बोला महाराज मेरा क्या हाल होना है। धन्धा क्या करते हो ? बोला धन्धा क्या करना है। देखो वो पांच बन्दर हैं मेरे पास। इस गांव से उस गाँव में उस गाँव से इस गाँव में इनको नचाता हूं। तमाशा देखने वाले बच्चों से कुछ pocket money मैं भी ले लेता हूं। रोजी रोटी चलती है। संत कहने लगे जरा मेरे को भी बन्दरों का खेल दिखाओ। वो कहता है महाराज यह आपके काम का खेल नहीं है। यह तो छोटे २ बच्चों के देखने के लिए है। महात्मा ने कहा नहीं थोडा मेरे को भी दिखाओ। संत ने आग्रह किया तो मदारी ने अपने पांचों बन्दरों को खोल कर इधर से उधर नचाया। किन्तु इतना सुन्दर खेल नहीं दिखाया। वह सोचता है संत से क्या मिलने वाला है, इसलिए थोडा सा खेल दिखा दिया। बाद मे अपने बन्दरों को बांध दिया और रस्सी पत्थर के नीचे दबा दी। फिर आकर संत के पास बैठ गया। संत ने कहा आंख बन्द करो हम तेरे को इनाम देते है। बेचारा भक्त था, आंख बन्द कर के बैठ गया। महात्मा कहते ही नहीं कि आंख खोल। बहुत देर बाद उसने आंख खोल कर देखा तो बन्दर भी

गायब और महात्मा भी गायब । उसने कहा बाप रे बाप ! यह महात्मा था कि कोई लुटेरा । हाय रे मैं तो लुट गया । अब मैं अपने बच्चों की रोजी रोटी कैसे चलाऊँगा । थोडी देर शोक मे बैठा रहा । इतने मे देखता है कि कुछ घुड़सवार आ रहे है । एक हाथी आ रहा है । उसके ऊपर सोने का सिंहासन रखा है । इन्होंने आकर मदारी से कहा कि तुम इस नगर के राजा बन गये हो । इस हाथी के ऊपर बैठो । हम तुमको राजमहल मे ले जाएंगे । बताओ यह राजा बनेगा कि नहीं ? खुश हो गया । बोला महात्मा ने इनाम दिया है । यह राजमहल मे पहुंच गया । अब तो यह महाराजा बन गया । सिंहासन पर बैठा है । मंत्री हाथ जोड कर खडें हैं । इसका शासन चलने लगा । सुन्दर २ राजकुमारियों से इसका विवाह हो गया । इसको अब याद भी नहीं रहा कि मैं मदारी था । इसने प्रजा से बहुत अधिक टैक्स लेना शुरु कर दिया । प्रजा ने सोचा कि यह नया राजा जब से आया है हमारी तों जेब खाली कर दी इसने । पडोस के एक राजा पर हमला भी कर दिया । सेना लेकर उसी रास्ते से जा रहा था । दूर से देखा तो उसी पेड़ के नीचे वही संत बैठे हैं । इसने सोचा चलो महात्मा जी को प्रणाम कर लें और उनको धन्यवाद भी कर ले आशीर्वाद भी ले लें । पास मे गया । चरणों पर गिर गया । संत ने पूछा कहो मदारी राजा कैसे हो ? भगवान आपकी विचित्र माया है । हम अपने पडोसी राजा पर चढाई करने जा रहे हैं । आशीर्वाद दीजिए कि हमारी जीत हो जाए । महात्मा ने कहा आँख बन्द कर के बैठ जाओ । बैठ गया । बहुत देर हो गई । आँख खोल कर देखा । महाराजा गायब सेना भी गायब । सामने पांच बन्दर बंधे पडे है और वही झोली रखी । बोला हाय रे मेरा तो राज्य छिन गया । रोने लगा भगवान मेरे को इतना बडा राजा बनाया फिर वही भिखारी बना दिया । थोडी देर मे महात्मा प्रकट हो गये बोले यह तो तुमने खेल दिखाया था उसका इनाम था । हमने तुमको राजा थोडे ही बनाया था ।

यह तो एक दृष्टान्त था अब दार्ष्टान्त मे यूं समझो महात्मा है परमात्मा यह जीव जितना खेल दिखाता है उतना इनाम इसको मिलता है । मनुष्य योनि मे जन्म लेना राजा बनना है । मनुष्य से जंगल मे रहने वाला tiger भी डरता है । जंगल का कोई जीव ऐसा नहीं जो मनुष्य से न डरे । तुम राजा हो पांच बन्दर

तुम्हारी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ है। तुम इनको नचाते रहते हो। कभी भगवान के सामने नचाते हो। हाथ जोडते हो। आँख से भगवान का दर्शन करते हो। कान से भगवान का नाम सुनते। यह जो तुम्हारी भक्ति प्रार्थना होती है इसकी बदले मे भगवान तुमको मनुष्य योनि देता है। तुम राजा बन जाते हो। फिर राजा बनने के बाद केवल भोगों मे ही घूमते हो। सोचते भी नहीं वो परमात्मा क्या है। 'मैं कौन हूं' परिणाम क्या होता है। राज छिन जाता है। और वो मदारी का मदारी रह जाता है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ पंच प्राण मन और बुद्धि। यह सूक्ष्म शरीर का झोला उठा कर यह जीव निकलेगा यहाँ से। अब कोई अच्छी मानुषी गां मिली तब तो फिर मनुष्य बन जाएंगे। और कहीं सींग पूंछ वाली मम्मी मिल गई तब तो कहना ही क्या? वो कहेगी बेटे मेरे को ही पूंछ लगी है तो मैं तेरा क्या करूं। इसलिए विवेकशील सत्य को पकडे। यह परम सत्य है तुम्हारी आत्मा। श्रुति सावधान करते हुए कहती है 'इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः भूतेषु भुतेषु विचित्य धीराः' धीर पुरुष प्रत्येक भूत मे तत्त्वचिन्तन करे। 'प्रेत्यास्माल्लोकात्' इस लोक से जब तू चलेगा अमृत हो जाएगा। इस लोक से जब तू चलेगा, माने इस शरीर से तेरा मोक्ष हो जाएगा। इसलिए प्रत्येक भूत मे तत्त्व का चिन्तन करो। बुद्धिमान, विवेकशील मनुष्य इस आत्मा मे मन को लगावे। 'ब्रह्मैवाहमस्मि' 'आत्मैवाहमस्मि' ऐसी ब्राह्मीभावना करे। इस सत्य से मन को मिलाएंगे तो संसार से पार हो जाएंगे।

भगवान प्रजापति ब्रह्मा इन्द्र को उपदेश करते हुए कहते है कि इस आत्मा का कोई शरीर नहीं है अशरीर यद्यपि यह शरीर इस आत्मा का अधिष्ठान मालूम पडता है किन्तु आधार है नहीं, दीखता है। 'सः शरीरः प्रिया प्रियाभ्यां' भगवान प्रजापति कहते हैं हे इन्द्र इस शरीर मे तेरे को दो चीज मिलेगी। प्यार मिलेगा और दुश्मनी मिलेगी। कोई अच्छे मन से आएगा तो प्यार करेगा तुमको। जो प्यार करता है उसको आ गया गुस्सा तो प्यार देगा कि दूसरी चीज? यही मृत्यु है। हे इन्द्र इसीका नाम मृत्यु है। कभी तुम प्यार के पंजे मे फंसे, कभी क्रोध के पंजे मे फसे। प्यार हुआ तो राग बढ गया। क्रोध हुआ तो द्वेष बढ गया। भाई२ का दुश्मन हो जाता है। किसी को बाहर जाने की जरुरत नहीं। यह जीव बहा

selfish है। कोई बडा भाग्य समझो तुम्हारे चित्त मे दया होवे तो। तुम्हारे चित मे उदारता हो। तुम्हारे चित्त मे क्षमा हो तो यह पूर्व जन्म की बडी कृपा है। नहीं तो यह जीव जहां जाएगा selfish होकर जाएगा। स्वार्थ की ही बात करेगा। उसके सामने परिवार नहीं, समाज नहीं, राष्ट्र नहीं कुछ भी नहीं। यह तो जंगल मे रहने वाले tiger से भी खराब है। इसलिए ठीक है, प्यार भी देगा कोई, क्रोध भी कोई देगा किन्तु तुम कितना लगे। प्यार भी हिसाब से लो। मोह बढा कर प्यार मत लो। ज्ञान से प्यार लो। जो तुम्हारे प्रिय बन कर बैठे है उन्होंने तुमको प्यार भी देना है, कभी क्रोध भी देना है। तो द्वेष से क्रोध को मत पकडो। समझ लो कि कभी Screw ढीला है इसलिए मशीन उल्टा बोल रही है। 'योग: कर्मसु कौशलं' इसको कर्मयोग कहते हैं। तब तुम्हारा चित्त स्वस्थ रहेगा, प्रसन्न रहेगा।

भगवान प्रजापति कहते है हे इन्द्र जब तक तू देह का अहंकार करेगा यह दो तो तुमको मिलेंगे ही। दुकान मे विष भी रखा है अमृत भी वही है। तुम को कितना प्यार लेना है, कितना क्रोध देना है। पहले लेने वाला तो मूर्ख है, अज्ञानी है। तुम तो समझदार हो। 'युक्ताहारविहारस्य' किसी ने बढिया खीर बनाई। सोने का वर्क भी लगाया और बढिया चांदी की कटोरी मे रख कर तुम को खाने को दी। अब तुमको कितना खाना है। पेट मे डिसेन्ट्री भी लगी है। इसलिए कहा कि संयम से खाओ। नहीं तो खीर जो अमृत है, शरीर को बिगाड बिगाड़ कर रख देगी। हे इन्द्र इसलिए अपनी आत्मा से दोस्ती करो। आत्मा से बडा कोई दोस्त नहीं है। मुमु ब्रह्मचिन्तन करे। ऐसा करने से तुम्हारे चित्त के विकार, राग द्वेष साफ हो जाएंगे। चित्त शान्त हो जाएगा प्रसन्न हो जाएगा। जब तू अशरीरभाव में आ जाएगा। शरीर का अहंकार नहीं रहेगा तो यह प्रिय अप्रिय भाव भी नहीं रहेगा। शरीर के अहंकार मे तो पशु पक्षी भी चल ररे है यदि मनुष्य भी इतने से ही रहे तो तुम्हारे मे और पशु मे फर्क क्या हुआ? इसलिए हे इन्द्र तुम इस देहाहंकार से बाहर निकलो।ऐसा करने से तुम्हारा चित्त संतुलित रहेगा। आगे और समझाने वाले है।

हरि: ॐ तत्सत्

ॐ

१३-६-८८

प्रवचन सं०-६६

"ॐ अशरीरो वायुरभ्रं विद्युत्स्तनयित्नुरशरीराण्येतानि तद्यथैतान्यमुष्मादाकाशात्समुत्थाय परं ज्योतिरुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यन्ते । ॐ एवमेवैष सम्प्रसादोऽस्मा-च्छरीरात्समुत्थाय परं ज्योति रुपसम्पद्य स्वेन रूपेणा-भिनिष्पद्यते स उत्तमपुरुषः स तत्र पर्येति जक्षत्क्रीडन्‌रममाणः स्त्रीभिर्वा यानैर्वा ज्ञातिभिर्वा नोपजनं स्मरन्निदं शरीरं स यथा प्रयोग्य आचरणे युक्त एवमेवायमस्मिञ्छरीरे प्राणो युक्तः ।।"

(छान्दो.८-१२-२।८-१२-३)

बडी अच्छी बात आई । इस जीवन मे सब से श्रेष्ठ जों तत्त्व है, महत्त्व-शाली जो तत्त्व है वो है यह चेतन आत्मा । इस आत्मा के बिना कोई प्यारा नहीं और हम भी किसी के प्यारे नहीं । इसलिए बुद्धिमान मनुष्य को इस चेतन आत्मा की खोज करनी चाहिए । यह उपनिषद विद्या मुमुक्षु को help करती है कि इस चेतन आत्मा की खोज कैसे करनी चाहिए । यह जीव जों मन के पंजे में -फंसा है। मन कभी शोक को पकडता है, कभी मोह को पकडता है । कभी चिन्ता का कभी भय को । हमको कोई आदमी निर्भय नहीं कर सकता । निर्भय करने वाला यदि कोई है तो एक मात्र तत्त्व ज्ञान ही है । उस तत्त्व ज्ञान के पाने से ही यह निर्भय हों जाता है । इसलिए भगवान प्रजापति ब्रह्मा ब्रह्मविद्या के परम जिज्ञासु देवराज

इन्द्र को उपदेश करते है हे इन्द्र 'मर्त्यं वा इदं शरीरम्' यह शरीर तो मरण धर्मा है, मृत्यु से ग्रस्त है । इस शरीर को तू कब तक अमर रखेगा ? इस ससार मे बडे २ सिद्ध भी हुए । मृत्यु को जय करने का अहंकार करने वाले थे । किन्तु इस मृत्यु को जय नहीं कर सके अपने आप जाकर मृत्यु की गोद मे सो गये ।

मृत्यु को जय करने वाली एक मात्र अमृत यह ब्रह्मविद्या है । 'अमृतस्तया-शरीरस्यात्मनोऽधिष्ठानम्' हे इन्द्र यह जो तेरा शरीर है, यह इस अमृत आत्मा का आश्रय है । यह इस अमृत आत्मा का आश्रय बना हुआ है इसलिए यह शरीर खा पी रहा है । जैसे कोई नौकर मालिक की सेवा करता है तो मालिक से खाना दाना मांगता है कि नहीं ? इसी तरह यह शरीर इस आत्मा का नौकर बना हुआ है इसलिए खाना दाना मांगता है । किन्तु केवल इसको खाना दाना देने मे ही नहीं रह जाओ । एक आदमी है बडा दयालु । खाने को भी बहुत है । वह परोसता ही जा रहा है दूसरे को । किन्तु अपनी भूख तो अपने ही खाने से जाएगी । यह तुम्हारी अन्तरात्मा इस शरीर रूपी नौकर को खाना दाना देता है । इस शरीर के पीछे दूसरे नौकर हैं इन्द्रियाँ । आँख को सुन्दर रूप देखने को चाहिए । कान को सुन्दर शब्द सुनने को चाहिए । जीभ को सुन्दर रसाल पदार्थ खाने को चाहिए । सब इन्द्रियाँ अपने २ विषय की ओर भाग रही है । मन का वही हाल है । इन परोसते २ ही ठंडा हो गया । तो हुआ क्या ? क्या कमाई कर के गया यह ? इसलिए विवेकशील, शास्त्र से सत्सङ्ग से गुरु के ज्ञान द्वारा सावधान हो जावे । हम अपने आप मे भी कुछ है । अपने आप मे कुछ हो तो शरीर की शकल मे भी हो । यदि अपने आप मे हम कुछ नहीं तो शरीर के रूप मे भी क्या है । तुम्हारे उस स्वरूप को प्रकट करने के लिए भगवान प्रजापति कह रहे हैं "अशरीरं वाव सन्तं न प्रिय प्रिये स्पृशतः" हे इन्द्र तुम अशरीर भाव मे आ जाओ । माने तुम्हारा स्वरूप असल में अशरीर है । दूसरे शब्दों में, श्रुति है 'अशरीर शरीरेष्वनवस्थेष्व-वस्थितम् महान्तं विभुमात्मान मत्वा धीरो न शोचति ।।"

यह तुम्हारी आत्मा जो है सत् चित् आनन्द स्वरूप है । इसका कोई शरीर नहीं । यह शरीर तो कर्मो का बगीचा है । पूर्व जन्मों का भोग है । 'अशरीरं

शरीरेषु कहते हैं इस शरीर में तुम कैसे हो इसकी कोई अवस्था नही, कोई सच्चा स्वरूप । बचपन कुमार, युवा, वृद्ध इस शरीर का कौन सा स्वरूप असली रहा ? जो भी रूप मिला केवल देखने के लिए ही मिला । तो कुछ समय तक दुनियाँ की कोई भी चीज अच्छी लगती है । जैसे यह हमारे हाथ मे गुलाब का सुन्दर फुल है । अमुक समय तक यह प्यारा लगेगा उसके इसकी पखुडी २ अलग हो जाएगी । यह शरीर भी गुलाब के फुल की तरह है । देखते नहीं घर के बच्चे ही जो इस शरीर से जन्मे है बुढे मां बाप को पीछे कर देते हैं । शक्ति है तो आगे, शक्ति नहीं तो पीछे । इसलिए जीवन के अच्छे दिनों मे इस आत्मा की खोज कर लेनी चाहिए । वो आत्मा क्या है 'महान्तं विभुमात्मानं' माने परिपूर्ण विश्वात्मा है । व्यापक आत्मा है । ऐसा निश्चय कर के 'मत्वाधीरो न शोचति' मुमुक्षु जब शास्त्र से, गुरु से जब समझ जाएगा वो धीर हो जाएगा । धीर माने 'धियं कर्षति इति धीरा:' बुद्धि को हम अपनी ओर खींचे वो हमको अपनी ओर न खींचे । उदाहरण के लिए यूं समझो, बुद्धि क्रोध आया । यह बताओ तब वाणी से कैसे बोलोगे ? वाणी से क्रोध से बोलने लगते है अगर तुम्हारे अन्दर सत्सङ्ग से ज्ञान आ गया तो तुम क्रोध को दबा दोगे । तुम शोक को दबा दोगे । चिन्ता को दबा दोगे । यदि चिन्ता भय, शोक क्रोधादि को दबा दिया तो ब्लाड प्रेशर नहीं बढेगा । ब्लाड प्रेशर नहीं बढेगा तो उसका बडा भाई heart attack भी नहीं आएगा । किन्तु यदि हम बुद्धि के वश मे हो गये तो बुद्धि ने कहा मैं शोक करुँगी तो शोक करने लग गये । बुद्धि ने कहा मैं चिन्ता करुँगी तो हम चिन्ता करने लग गये क्रोध करुँगी, लोभ करुँगी तो क्रोध लोभ करने लग गये । जब सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा का विचार करता है तो यह बुद्धि शान्त हो जाती है, उसके वश मे हो जाती है । दुःख भला इस संसार मे किसको नहीं हुआ ? राम को हम लोग भगवान मानते है, क्या राम को दुःख नहीं हुआ ? 14 वर्ष बन मे रहना पडा कृष्ण को दुःख नहीं हुआ ? राजा नल को कितना दुःख सहना पडा युधिष्ठर की क्या हालत हुई ? बन २ भटकना पडा ।

ऐसा भी मत सोचो कि दुःख कोई बुरी चीज है । दुःख भी तुम्हें कुछ देने के लिए आता है । धैर्य रखोगे तो दुःख भी तुमको कुछ देगा । नहीं तो सुख

भी कुछ नहीं देगा । जिस सुख को बडे प्यार की आंख से देखते हो वो सुख भी तुमको कुछ नहीं देगा । इसलिए कहा 'शरीरस्य सतः प्रियाप्रिययोरपहतिरस्त्य शरीररं वाव सन्तं न प्रियाप्रिये स्पृशत:' भगवान प्रजापति ब्रह्मा कहते है हे इन्द्र जब देखो तब तुम देह के अहंकार मे ही घूमते हो तो तुम्हारे सामने मित्र भी आएगा शत्रु भी आएगा । प्रिय और अप्रिय । प्रिय माने मित्र अप्रिय माने शत्रु । प्रिय माने सुख अप्रिय माने दुःख । यदि तुम शरीर भाव से बाहर चले गये तो यह प्रिय अप्रिय तुमको कुछ नहीं कहेंगे । अपने अनुभव मे समझो, एक आदमी सो जाता है । कोई मित्र आया है, वो बैठा है । कोई शत्रु भी आ गया, वो भी बैठा है । तो उस मित्र से तुमको कोई सुख नहीं उस शत्रु से तुमको कोई दुःख भी नहीं । दोनों चुपचाप बैठे है ।

इसी तरह 'आत्मैवाहमस्मि, ब्रह्मैवाहमस्मि' ऐसा तत्त्व विचार करते २ यदि तुम शरीर के अहंकार से बाहर चले गये तो तुमको दुःख आने पर भी दुःख का भान नहीं होगा । । इसलिए 'अशरीरंवाव सन्तं न प्रियाप्रिये स्पृशत:'' यदि तुम शरीर के अहंकार से बाहर चले गये तो तुम्हें दुःख कोई नहीं, कोई सुख नहीं। न कोई प्रिय है न अप्रिय है । आगे एक बड़ी अच्छी बात कहीं 'अशरीरं वायुरभ्रं विद्युत्स्तनयित्नु शरीराण्येतानि तद्यथैतान्यमुष्मादाकाशात्समुत्थाय परं ज्योतिरुप सम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यन्ते ।' कहते हैं देखो अभी हम लोग बड़ी ग्रीष्म ऋतु को पार कर के आए है । तब आकाश कैसा सूर्य की किरणों से तप रहा था । यहाँ नेपालवालों को तो ज्यादा इसका असर नहीं होता किन्तु जो नीचे पटना या दिल्ली मे रहते है उनसे पूछो, यह खोपडी जैसे तस्व होता है वैसी गर्मी हो जाती है । उस पर कोई रोटी सेक ले । इतनी गर्मी को पार किया उन लोगों ने । उस समय वायु का भी कोई आकार नहीं था । मेघो का भी कोई आकार नही था । मेघों में चमक मारने वाली विजली का भी कोई आकार नहीं था । सब अशरीर हो गये थे । किसी स्वरूप में नहीं थे । किन्तु जिस समय मानसून आया । मानसूनी हवा जब चलती है तो वो जो सूर्य की किरणें है तेजोमयी । इन किरणों का यह मन्थन करती हैं । जैसे हम दही का मन्थन करते है तो मक्खन निकलता है, ऐसे ही इन सूर्य की किरणों का मन्थन हुआ तो बादल प्रकट हो गया । बादलों में

बिजली प्रकट हो गई। गर्जन तर्जन होने लगा। हवा भी तेज रूप में चलने लगी। तो पहले जो अशरीर था अब शरीर वाला हो गया। बादलों का कोई आकार नहीं था। अब आकार दीखने लगा। पहले बिजली का चमकना भी नहीं था हवा भी नहीं दीखती थी। क्यों? पहले यह अशीरर था। जब यह अशरीर भाव में थे तब कोई गडबड भी नही थी। अब मानसून के आते ही यह शरीर भाव को पकडते हैं जब वायु का कोई आकार नहीं था तब अभ्र कहते हैं इसे। मेघ को जो बरसने वाला बादल है इसे cloud कहते हैं इसको अभ्रक कहते हैं। उन बादलों मे चमकने वाला जो विद्युत है उसकी चमक से स्तनयित्नु कहते है उसको।

'अशरीराणि एतानि' यह सब अशरीर भाव में हैं 'तद्यथैतानि अमुष्मा-दाकाशात्' और सब इस आकाश के अन्दर है। सृष्टि चक्कर जब आया। सृष्टि चक्कर माने प्राणियों को जीवन देने का जब समय आया, वर्षा नही होती है तो चलने फिरने वाले प्राणियो को जीवन नहीं मिलेगा। एक बात और समझो। अपने लोग परमात्मा के निराकार और साकार स्वरूप को लेकर झगडा करते है कहते है निराकार साकार कैसे हो गया। किन्तु विचार करो कि ग्रीष्म काल में वायु भी बन्द है, बादल भी नहीं है, बादलों के अन्दर बिजली का चमकना भी नहीं किन्तु जिस समय निमित्त आया माने मानसून आया तो हवा भी आकार धारण कर गई। बादल भी साकार हो उठे। बिजली का स्वरूप भी दीखने लगा। आगे वर्षा हो गई और जिनको जीवन मिलना है उनको जीवन मिल गया। जिन को मृत्यु मिलनी है उनको मृत्यु भी मिलेगी। कहते है ऐसी वर्षा हुई कि इतने आदमी मर गये। एक जगह जंगल में बहुत से मजदूर काम कर रहे थे वर्षा आ गई। अस्सी लोग एक बडे मकान मे घुस गये। लकड़ी की छत थी। बिजली इतनी तेज चमकती है कि बार उस मकान के अन्दर घुस जाती। सब डरते है कि यह बिजली अगर गिरी तो सब मर जाएँगे। विचार करते है कि एक काम करें। एक २ कर के बाहर निकलो जिसकी मृत्यु होनी होगी उसको ले लेगी। अगर बाहर से नहीं ले तो अन्दर लौट आए। एक २ कर के 79 आदमी बाहर गये और लौट आए। अब एक जो बचा वो सोचता है कि मेरी मृत्यु तो निश्चित है। बाहर जाना नहीं चाहता हाथ जोड़ता है किन्तु सब ने मिल कर उसको बाहर

धकेल दिया। कहा अगर तु नही जाएगा तो हम सब मर जाएँगे। बाहर बिजली चमक रही थी, वर्षा हो रही थी। चल पडा माई का बेटा उस घर पर बिजली गिरी और वह सब लोग एक साथ मर गये। तो यह बताओ कि उस एक को बचाने के लिए मृत्यु देबता ने कितने नाटक किए, कितना देखता रहा। सबकी बुद्धि के अन्दर प्रेरणा देने वाला वो परमात्मा है। और परमातमा कौन ? इस प्रेरणा को जिज्ञासु जानता है। जो जिज्ञासु है, धर्मनिष्ठ है, आत्मनिष्ठ है वो जानता है कि ईश्वर की प्रेरणा है। वो अकेला बच गया और 79 लोग मर गये।

तो सगुन को निराकार होने मे और निराकार को साकार होने में देर नहीं लगती। दूसरे शब्दों में यूं समझो यह शरीर तुम्हारा सगुण साकार रूप है। धीरे २ निराकार होता जा रहा है। बुढा होने का मतलब क्या है ? सगुण साकार भाव से निर्गुण निराकार भाव में लौटो। असली स्वरूप में चला जाएगा तो यह गायब हो जाएगा। इसलिए मुमुक्षु घबरावे नहीं। बडी सावधानी से अपने इस अमृत स्वरूप का निश्चय करे। और इस अमृत स्वरूप में थोडा मन को देवे। जैसे किसी मित्र से प्यार लेना हो तो क्या करना कडेंगा ? पहले अपना प्यार उन को देना पडेगा। और अपने तो देवें क्रोध तो वो क्या देगा ? प्यार देगा वो ? उसके पाकेट मे कहाँ प्यार रखा है। अगर तुमको प्यार लेना हो तो पहले अपना प्यार उसको दो। इसी तरह अमरत्व लेना होगा तो इस अमरत्व में अपना मन दो। इसलिए यहाँ मंत्र कहता है 'अमुष्मादाकाशात्समुत्थाय परं ज्योति रूप सम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यन्ते' हे इन्द्र तुमने देखा कि यह मेघ, यह वायु, यह बिजली यह सब पहले अपने स्वरूप में निराकार थे और मानसून हवालों के आते ही सब साकार हो गये। और यह गर्जन तर्जन और वर्षन सब चालू हो गया। हे इन्द्र तुम भी अपने निराकार स्वरूप आत्मा को देखो। एवमेवैप सम्प्रसादोऽमाच्छरीरात्समुत्थाय पर ज्योति रुपसम्पद्यन्ते। तुमको इतना तो निश्चय करना पडेगा कि जैसे पहले वायु नहीं था, वायु आ गया। बादल नहीं थे, बादल आ गये। बादल नहीं थे, आकाश मे बादल आ गये और उनमे बिजली भी उत्पन्न हो गई। साकार रुप में प्रकट होने पर गर्जन तर्जन और वर्षन यह सब हुआ इसी तरह इस आत्मा

को यह मंत्र सम्प्रसाद कह रहा है । हम प्रसाद लेते है, यह क्या है ? प्रसाद माने खुशी । 'प्रसादस्तु प्रसन्नत: प्रसाद: प्रसन्नता' किसी संत के पास या किसी मन्दिर मे जाओ । तो प्रसाद मिलता है । माने प्रसन्नता मिलती है । अच्छा यह बताओ कि प्रसन्नता जाग्रत में आएगी कि निद्रा में । निद्रा मे तो प्रसन्नता आएगी नहीं और जाग्रत मे भी कब आएगी ? जब ज्ञान ठीक होगा तो मन प्रसन्न होगा। फिर थोडी देर के लिए दु:ख भी आएगा तो सहन करोगे । किन्तु अगर मन ठीक नहीं होगा तो अच्छी बात भी तुमको बुरी लगेगी । तो right knowledge होने पर ही तुमको खुशी होगी ।

विषयों का ज्ञान कब तक रहेगी ? जब तक विषय रहेगा । जैसे रुप का ज्ञान कब तक ? जब तक रूप रहेगा । रूप खत्म हो जाएगी तो यह ज्ञान भी नहीं रहेगा । विषयों का ज्ञान तो नहीं रहेगा किन्तु विषयों के प्रति मोह रहं जाएगा । हाय रे आए थे पर चले गये । बताओ सबसे सुन्दर कौन है दुनियाँ मे ? सब से सुन्दर है तुम्हारी आत्मा । जिसके रहने से यह शरीर इतना सुन्दर, इतना प्यारा लगता है । वो आत्मा का जो ज्ञान है उसका नाम है सम्प्रसाद । आत्मा का जो तत्त्व बोध है वो सम्प्रसाद है । वो तत्त्व बोध जब होगा उस समय तुमको यह लगेगा कि यह शरीर तो कुछ भी नहीं । यह शरीर तो मेरे ऊपर कर्म का बोझ है। ठीक है पूर्व जन्म का कर्म अच्छा है । भगवान ने अच्छा शरीर दिया । अगर ऐसा शरीर नहीं मिला होता और पूंछ लगा कर आए होते तो सत्सङ्ग तो अभी चल रहा है परन्तु पूंछ वाले को अन्दर थोडा ही आने देंगे ।यह इस शरीर की महिमा है । इसकी कृपा है । इस शरीर से तुमको सुन्दर पदार्थ भी खाने को मिल रहे है। साथ में यह भी जानने को मिल रहा है कि मैं कौन हूँ ?इसलिए यहाँ पर भगवान प्रजापति ब्रह्मा कहते हैं हे इन्द्र जब तू इस शरीर से ऊपर उठ जाएगा । उठ जाएगा इसका तात्पर्य है, उठने के दो प्रकार हैं, एक तो निद्रा मे जब सो जाओगें तो इस शरीर का अहंकार नहीं रहेगा । निद्रा मे यह शरीर तो नहीं दीखता, यह तो जाग्रत मे इस शरीर का अहंकार हमको पकड लेता है इसलिए जरा सा दु:ख आया तो दु:खी हो जाते है । जरा सा सुख आ गया तो सुखी हो गये । इसलिए जाग्रत मे सुख दु:ख मे ही घूमते रहते हैं । निद्रा तुमको इस अहंकार से बाहर

कर देनी है तो सुख से सुखी नहीं दुःख से दुःखी नहीं । शरीर के सुख दुःख से भी बाहर हो जाते हैं । इसी तरह यह जो ब्रह्मविद्या है 'ब्रह्मैवाहमस्मि आत्मैवाहमस्मि' इस ब्राह्मीभावना के करने से शरीर अहंकार तुम्हारा कम हो जाएगा । धीरे २ गायब हो जाएगा ।

तुम्हारे जीते जी बचपन चला गया ।तुम्हारे जीते जी कुमारावस्था चली गई । रोने बैठ जाओ कि मेरा बचपन मर गया । तो लोग क्या कहेंगे ? दिमाग खराब है । अरे भाई बचपन किसका नहीं जाता । सबका जाता है । रोने की क्या जरुरत है, अब तुम बडे हो गये । यह शरीर तो छोडता चला जा रहा है। बचपन गया लोग दुःखी नहीं । कुमारावस्था चली गई । लोग दुःखी नहीं हुए । जवानी मे आ गये तो मस्त हो गये । यह जवानी जब छोड़ने लगती है तो पैर हिलने लगते है । हाय, अब तो बुढापा आ गया जैसे भूचाल आता है न तो बिल्डिंग्स हिलने लगती है । अरे भाई वह piller system की Biulding है । भूकम्प क्या बिगाडेगा इसका ? बम्बई मे एक बार हम थे 65 मे । बडा भूकम्प आया बिल्डिग यूं हिलने लगी । lift भी बन्द है । कहाँ भागेगा । मैंने कहा भय के मारे परेशान मत हो । कईयों को तो heart attack हो गया सेठियों को, बिस्तर मे जो लोग पडे थे । बिल्डिग हिलने लगी तो यूं गिरे । दुःख जब आता है तो letter थोडे भेजता है कि मैं आ रहा हूं । यह संसार ऐसा ही है । इस लिए हमेशा सत् चित् आनन्द स्वरूप चेतन आत्मा ही ब्रह्म है । मुमुक्षु ऐसा तत्त्व चिंतन करता रहे । बाकी संसार मे सुख भी होगा, दुःख भी होगा । आज सारे world मे देखो कितने डाक्टर है किन्तु यह बताओ किस देश का दुःख खतम हो हो गया है । अमेरिका बडा Advance Country है । हम कहते है अमरीका मे कौन सा दुःख नहीं । world के सारे दुःख वहाँ मौजूद है । डाक्टरों के रहते हुए करोडों रोग हैं वहाँ । सड़कों पर working करते है । इसलिए ऐसा मत सोचो कि दुःख के नहीं होने से हम सुखी होंगे । ज्ञान अच्छा प्राप्त कर लोगे तो तुमको कोई भी दुःख परेशान नहीं करेगा । यहाँ मंत्र स्पष्ट करता है 'परं ज्योति रुपसम्पद्य' परं ज्योति जो तुम्हारा स्वरूप है उस स्वरूप को जब पा जाओगे 'स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यन्ते' अपने स्वरूप मे प्रकट हो जाओगे । तब तुम उत्तम पुरुष

बन जाओगे । उत्तम पुरुष गीता के पन्द्रहवें अध्याय में भगवान कृष्ण अर्जुन से कहते हैं :–

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च, क्षरः सर्वाणि
भूतानि कूटस्थोऽक्षरमुच्यते, उत्तमः पुरुषस्त्वन्य परमात्मेत्युदाहृतः ।।

कहते हैं अर्जुन इस लोक मे क्षर और अक्षर दो पुरुष है। क्षर पुरुष जो प्रतिक्षण बदलने वाला है । जड़ प्रकृति कों भी भगवान पुरुष कह रहे हैं ।पुरुष शब्द का अर्थ है पूर्णात पुरुषः जो पूर्ण है वो पुरुष है । देखो इस मे जो सुन्दर रूप है , वो जितना होना चाहिए वो है । जितना इसका विकास होना चाहिए उतना है । इस लिए यह भी पुरुष है किन्तु क्षर पुरुष है । थोडी देर इसका विनाश हो जाएगा । माया बुढिया होती नहीं । सब बुढ्ढे हो जाते हैं । माया कब बुढी होगी ? जब तुम्हारे अन्दर आत्मविद्या आ जाएगी तो माया बुढिया हो जाएगी । मम्मी बुढी हो गई । बेटा जवान हो गया । मां ने सोचा इस को खूंटे से बांध दूं । बांध दिया । अब बहुरानी आ गई । बेटा बहु जवान है कि मम्मी जवान है । जवानी दान कर दी और अपने बुढ्ढे बुढिया बन कर बैठ गये । यह संसार का इतिहास है give and take दो और लो । दे दिया पहले अब बैठ कर खाओ । माया कूटस्थ पुरुष है । उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेति । क्षर प्रकृति पांच भूत, अक्षर प्रकृति माया । यह माया निवृत नहीं होती । उत्तम पुरुष को दोनों से जुदा कर रहीं है । यही परमात्मा है 'बिभर्त्यव्यय ईश्वरः' जों अन्दर बैठा है । चोर को पकड़ने वाला चोर के अन्दर ही छिपा हुआ बैठा । बुद्धिमान् वो बडा भाग्यशाली है जो परमात्मा की सत्ता को सब जगह व्यापक माने ।

उस सत् चित् आनन्द स्वरूप आतमा का अपने हृदय मे ध्यान करो ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१४-६-८८

प्रवचन सं० ६७

"ॐ एवमेवैष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात् समुत्थाय परं ज्योति रुपसम्पद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यते स उत्तम-पुरुषः स तत्र पर्येति जक्षत्क्रीडन्रममाणः स्त्रोभिर्वा यानैर्वा ज्ञातिभिर्वा नोपजनं स्मरन्निदं शरीरं स यथा प्रयोग्य आचरणे युक्त एवमेवायमस्मिञ्छरोरे प्राणो युक्तः। अथ यत्रैतदाकाशमनुविषण्णं चक्षुः स चाक्षुषः पुरुषो दर्शनाय चक्षुरथ यो वेदेदं जिघ्राणीति स आत्मा गन्धाय घ्राण मथ यो वेदेदमभिव्याहराणीति स आत्माभिव्याहाराय वागथ यो वेदेदं शृणवानीति स आत्मा श्रवणाय श्रोत्रम् ॥"

(छान्दो. ८-१२-३।८-१२-४)

भगवान प्रजापति कहते है हे इन्द्र देखो रस्सी स्वरूप का जरा सा अज्ञान होते ही वहाँ सर्प का भ्रम हो जाता है। सर्प खडा हो जाता है और उस सर्प का बडा भय लगता है।इसी तरह यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है इसका जरा सा अज्ञान होते ही जो आत्मा नहीं है उसकों आत्मा मान लेते हैं। जैसे इस अपने शरीर को ही लो। यह शरीर आत्मा नहीं। जहाँ प्राणात्मा ने इसको छोडा सब

इसको मुर्दा कहेंगे। उस मुर्दे की क्या प्रतिष्ठा है? ज्यादा से ज्यादा यही कि जल्दी से इस मुर्दे को उठा कर ले जाओ और चिता पर डाल दो और इसका दाह संस्कार कर दो। उसको घर में रखने से कोई लाभ नहीं। किन्तु जब तक चेतन आत्मा के करट में है तब तक यह मुर्दा मुर्दा नहीं। असली को दबा कर जो नकली था वो असली बन गया। इस उपनिषद विद्या के द्वारा उस असली की खोज है। असली बनाना नहीं। उसकी खोज करना है। वो असली क्या है? उसका कौन इसलिए मंत्र कहता है 'एषमेवैष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात्समुत्थाय' हे मघवन यह आत्मा ही सम्प्रसाद है। बेटा बेटी पति पत्नी एक दूसरे को देखते है। किन्तु प्यार से कब देखते हैं जब चेतन भासता है। जब चेतन नही भासता तो मुर्दे को कौन प्यार से देखता है? अहा बड़ा अच्छा हुआ तुम मुर्दा होकर पड़े हो। कोई बोलता है ऐसे? इसलिए जिसके रहने से प्यार है, जिसके न रहने पर कोई पूछता नहीं कोई प्यार देता नहीं, वो आत्मा है। वो सम्प्रसाद है। उसके जैसा कोई प्रसाद नहीं। संत लोग जो प्रसाद देते है थोड़ा २, इसका अर्थ यह नहीं हमको कुछ खाने को देते है। यह तो उस आत्मा का प्रतीक है symbol है। उस आत्मा की ओर चलो। उसके ज्ञान को पकड़ो।'न चक्षुषा गृह्यते नैव वाचा नान्यैर्-देवैस्तपसा कर्मणा वा' चक्षु उसको ग्रहण नहीं कर सकता। चक्षु उसकी कृपा से देखता है। चक्षु उसको कैसे देखेगा। जैसे अपने अनुभव के लिए समझो आजकल जितने बड़े २ बिजनेस मैन है वो अपनी pocket money तो दबाए रहते हैं। सब बैंकों से उधार ले २ कर बिजनैस करते हैं। वो धनी माना गया कि गरीब माना गया। उसी तरह यह आंख तुम्हारी देखो उससे तेज लेकर अपने को तेजस्वी बनाया और प्रशंसा अपनी। लोग कहते हैं उसकी आंख देखो कितनी सुन्दर है। इसी तरह वो धनी पैसा तो सारा बैंकों का लगाता है और प्रशंसा सेठ की होती है। बैंको कौन जानता है?

यहाँ भी यह सब इन्द्रियाँ उसके चमत्कार को लेकर धनी बनी बैठी है। जो आता है वो इन्हीं से मिलता है। कोई मुख से मिलता है। कोई हाथ से मिलता है और जो असली धन है उधर कोई ध्यान नहीं देता। 'न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा नान्यैर्देवैस्तपसा कर्मणा व' चक्षु उसको ग्रहण नहीं करते। 'न वाचा'

बाणी उसको पकड नहीं सकती । 'नान्यैदेवै' देव शब्द का अर्थ है इन्द्रियाँ । जैसे चक्षु रूपी देवता उसको देख नहीं सकता ऐसे ही दूसरी इन्द्रियां भी उसको नहीं देख सकती । 'न तपसा न कर्मणा, ज्ञानप्रचारेण तु विशुद्धसत्त्वा:' किसके प्रसाद से यह समझ में आएगा ? ज्ञान रूपी प्रसाद से । जो प्रसाद संत देते है वो इसका symbol है । ज्ञान थोडा ही होता है । थोडा माने छोटे रूप मे ही आएगा । अन्दर जा कर अपना रूप धारण करता है । ज्ञान जब बड़ा होता है, माने जैसे जवान लड़के से मम्मी डरती है कि ज्यादा जोर से बोलेगी तो छोकरा गुस्सा करेगा । जीभ को तालू से सटा कर बोलेगी कि छोकरे को सुनना ही पडे । जरा रफ होकर बोलो तो लड़का बिगडता है कि नहीं । यह ज्ञान भी पहले छोटे रूप मे आता है और अन्दर जाकर अपना रूप धारण करता है। यह ज्ञान रूपी प्रसाद है जिससे यह जो अन्दर भगवती माया बैठी है, यह दबती है । यह अविद्या दब जाती है । 'विशुद्धसत्त्व' चित्त शुद्ध होता है । ततस्तु तं पश्यते निष्कल ध्यायमान: निष्कल' कला शब्द का अर्थ है आकार । वो निराकार है । उस निरा-तत्त्व को कहते है 'ध्यायमान:' ध्यान करता हुआ उसको देखता है ।

यहाँ भगवान प्रजापति कहते हैं 'एवमेवैष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात्स-मुत्थाय परं ज्योति रुपसम्पद्य' ऐसे यह मुमुक्षु इस ब्रह्म भाव का साक्षात्कार करे । एक बात याद रखो । दुनियाँ में जितने प्रणी हैं अपनी २ योनि के अनुसार सब को निद्रा भी चाहिए । निद्रा है क्या ? निद्रा की defination क्या है ? अहंरूप से इन्द्रियों को देख रहा है, शरीर को देख रहा है । यह देखना जब बिल्कुल बन्द हो जाए उसको निद्रा कहते हैं sound sleep है यह । उस समय यह शरीर का अहंकार कि मै मनुष्य हूं कि मैं पुरुष हूं, मैं स्त्री हूं । मैं बुद्धिमान हूं कि मैं मूर्ख हूं कोई अहंकार है? 'शरीरं परित्यज' शरीर का परित्याग हो गया। शरीर जब तक दीखेगा तब तक नींद नहीं आएगी । और जब भी नींद नहीं आए गी तो खोपडी गर्म रहेगी । अब जहाँ भी बैठेगा खोपड़ी पकड़ कर ही बैठेगा । हाय आज तो नींद नहीं आई । तो इसका अर्थ क्या हुआ कि सोने के लिए भी तुमको शरीर का अहंकार छोडना पडेगा तब निद्रा आएगी और तब उसकी आनन्द की अनुभूति होगी । इस प्रकार निद्रा का अर्थ हुआ बिस्मृति । शरीर की

विस्मृति । तो तुमको स्मृति भी चाहिए विस्मृति भी चाहिए । जाग्रत में अगर तुमको स्मृति नहीं आई तो भी लोग चिन्ता मे पड जाएंगे । सोने के समय अगर तुम सोये नहीं माने तुमको विस्मृति नहीं हुई तो भी चिन्ता मे पड जाएंगे । तो तुमको इस शरीर की स्मृति भी होनी चाहिए और विस्मृति भी होनी चाहिए । किन्तु यूं ही अज्ञान में अगर शरीर की विस्मृति होती रहेगी तो फल क्या मिलेगा ।

ज्ञानवान जो सत्सङ्गी है वो शास्त्र से, गुरु से समझ कर आत्मा को ब्रह्म भाव मे पकडे और शरीर भाव से ऊपर उठे । तब शरीर की विस्मृति मोक्ष का कारण बनती है । नहीं तो शरीर की विस्मृति मृत्यु का कारण है । एक महान ब्रह्मवेत्ता ऋषि है तैतरीय उपनिषद कृष्ण यजुर्वेदीय उपनिषद है । वहाँ पर ऋषि आत्मा का साक्षात्कार करता है उस साक्षत्कार स्थिति का वर्णन श्रुति करती है। वो ऋषि जब साक्षात्कार करने के लिए चलता है तो जिसको पकड़ कर चलता है कि 'यह मैं हूँ' उसको छोड़ता है । वहाँ मंत्र है 'एतमन्नमयमात्मानमुपसंक्रम्य, एतं विज्ञानमयमात्मानमुपसंक्रम्य, एतमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रम्य, इमाँल्लोकान्-कामान्नी कामरूप्यनुसंचरन् एतत्सान्मगायन्नास्ते । हा ३ वु हा ३ वु हा ३ वु । अहमन्नमहमन्नमहमन्नम् । अहमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नदो ।।

मंत्र कहता है कि ऋषि जब साक्षात्कार की अनुभूति में आगे बढ़ा तो 'एतमन्नमयमुपसंक्रम्य' यह जो अन्नमय कोश है । इस अन्नमय स्थूल शरीर कोश को छोड दिया । उसने कहा यह कुछ नहीं यह तो गधा है हमारा । इसकी पीठ पर चढ़ कर हम चलते है । किन्तु जब यात्रा खत्म हो गई तो क्या करोगे ? गधे की पीठ पर ही रहोगे कि नीचे उतरोगे ? यह थोडे ही है कि घर पहुंच गये तो भी गधे पर ही बैठे रहोगे ? जब काम लेना हो तो जाओ गधे की पीठ चढो और मार्किटिंग करो । यह पालतू गधा है तुम्हारा । इसको खाना दाना दिया और उससे काम लिया । किन्तु जब इससे काम लिया किन्तु जब सत्र जानते है तो इस को छोडते है कि नहीं ?

यह ऋषि जब यह गधे से बाहर जा रहा है । इसने कहा कहाँ जा रहे

हो ? बोले ब्रह्मलोक । यह कहता है मैं ही हूँ ब्रह्मलोक इसने कहा तो कुछ भी नहीं । जन्म मरण वाला है 'एतमन्नमयमुपसंक्रम्य' तू तो गधेड़ा है हम नहीं मानते तुमको । आगे प्राण खड़ा था । भाई साहब कहाँ जा रहे हो ? कहते हैं ब्रह्मलोक। यह कहता है मैं ही हूँ ब्रह्मलोक । इस प्राण को कम समझते हो ? प्राण तुमको रोकता है । यह प्राण अगर रुक गया तो घर मे कोई रखेगा ? प्राण ring master है । प्राण चल रहा है तब तक कोई कुछ नहीं बोलेगा । कहोगे सूखी २ खिला रहे हो । चार पांच रहे वो ring leader समझो । उन्होने देखा, जाट बकरा लेकर जा रहा है । छोटा बकरा था । पीठ पर लाद कर जा रहा था । जवान छोकरे थे । एकता कर लिया । एक यहाँ खडा हो गया । एक वहाँ खडा हो गया । एक आगे चक्रपथ पर खडा हो गया । जैसे ही वो वहाँ से निकला एक छोकरा बोला कुत्ते को क्यों उठाए जा रहा है । जाट बोला दीखता नहीं कुत्ता है कि बकरा ? डांट दिया उसको और आगे बढ गया । आगे दूसरा खड़ा था । अरे कुत्ते को क्यों उठाए जा रहे हो ? बोला जा जा । तेरे को कुत्ता दीखता है ? उस को भी फटकार दिया । आगे तीसरा खड़ा है, उसने भी कहा ए तू कुत्ते को क्यों उठाए जा रहा है । अब तीन आदमी बोल चुके तो इसको भी लगा कि कुत्ता ही होगा । इसीलिए कुत्ता बोल रहे हैं । उठा कर बकरे को नीचे फैंक दिया । छोकरों का तो काम बन गया । ले गये उसको और खूब सब्जी बनाया । समझ लो बस वो ही हाल है यहाँ अन्नमय कोश बोला कहाँ जा रहे हो ? ब्रह्मलोक । बोला यही है ब्रह्मलोक । थोडा रुका किन्तु आगे बढ गया । प्राणमय कोश आगे खडा है उसने पूछा कहाँ जा रहे हो ? ब्रह्मलोक । उसने कहा मैं ही हूँ ब्रह्मलोक । ऋषि बोला नहीं । आगे बढा तो यह माया पुत्र, कौन भला ? यह मनोमय कोश । उसने पूछा पूछा किधर जा रहे हो ? ब्रह्मलोक । मैं हूँ न । अब यह बताओ यह मुमुक्षु रुकेगा कि आगे जाएगा । कमजोर होगा तो रुक जाएगा यहीं । बोलेगा ठीक है तू ही ब्रह्मलोक है तो मैं आगे जाकर क्या करूँगा । नावल्स पढेगा, stories पढेगा औ समझेगा कि हमने बहुत पढ लिया । मन की कल्पना के पीछे दौडेगा । असली सत्य को तो स्पर्श नहीं करना है । थोड़ा सा आगे बढेगा तो विज्ञानमय कोश खडा है । उसने भी यही कहा । विज्ञानमय कोश को भी ऋषि पार करता है और आगे आनन्दमय कोश मे जाता है । आनन्दमय कोश अविद्या है । प्रिय मोद प्रमोद

वृति सहित प्रविश्या आनन्दमय कोश । जैसे सुषुप्ति मे हम रोज आनन्दमय कोश मे जाते हैं ।

यह आनन्दमय कोश जीवन भी देता है किन्तु मृत्यु अधिक पास मे खडा है । इस आनन्दमय कोश से अगर बाहर नहीं निकलोगे तो बार २ जन्म मरण का धन्धा चलता रहेगा । इसलिए ऋषि आनन्दमय कोश का भी अतिक्रमण कर जाता है । तब हा ३ वु हा ३ वु हा ३ वु अहमऽन्नं अहमऽन्नं अहमन्नं अहमन्नाद अहंमन्नाद अहंमन्नाद, दिव्य संगीत शुरु करता है । सामवेद मे हा ३ वु स्वर लेने के लिए रखा जाता है । यूं हा ३ वु शब्द का अर्थ करने जाओगे तो नहीं निकलेगा । यूं कहते हो महान आश्चर्य है । सामवेदीय इस गान के द्वारा ऋषि आश्चर्य प्रकट करता हैं । कितना बडा भारी आश्चर्य है । जो जीव नहीं था उसको जीव कर के दिखाया । जो पशु नहीं था उसको पशु कर के दिखाया । जो घोडा गधा नहीं था, उसको घोडा गधा कर के दिखाया । हा ३ वु और क्या उस माया ने सिद्धि दिखाई अपनी । जो खाना है उसको खाने वाला कर के दिखाया । जो खाने वाला है उस को खाना बना दिया । जब थाली मे परोस दिया तब क्या हो गया ? अन्न । थाली के सामने बिठा दिया तो आनन्द बना दिया । अन्न भी तुम्हीं हो अन्नाद भी तुम्हीं हो । यह दो रूपों ने किस ने तुमको विभक्त किया ? माया ने तुम्हे दो रूपों मे विभक्त कर दिया । तुमको ही भोंजन बनाया और तुमको ही खाने वाला बना दि.ा । बताओ यह सिद्ध है कि नहीं ? कहते सिद्ध कहां मिलेंगे। यह माया कितनी बडी सिद्ध है ? ऋषि ने कहा अहंमन्नं अहंमन्न अहमन्नं ।कहोगे स्वामी जी यूं ही बैठे २ कल्पना करते रहते हैं । कल्पना नहीं करते यह बिलकुल सच्ची बात है । सोचो तो यह फूल है । कोई पूछे कि यह फूल कब तक हमारा भोजन है ? जब तक इसमे रसात्मा है । तब तक इसका सुन्दर रूप भी भोजन । इसका सुन्दर गन्ध भी भोजन ।। इसका कोमल स्पर्श भी भोजन । सारी चीजें भोजन बन रही हैं । इक ही फूल में सब रखा है । और रसात्मा जब हट गया तो क्या रखा ही इसमे तुम्हारे लिए ? इसी तरह और भी जो फलादि हैं जैसे आजकल आमों का मौसम है । बडे सुन्दर २ आम हैं किन्तु उस आम को कब तक चूसोगे ? जब तक सुन्दर रस है । उसमे कीडे पड गये तब क्या करोगे ? फैंकना पडेगा । अब तुम्हारा

भोजन नहीं रहा । तुम्हारे पीछे जो जीव हैं उनका भोजन है यह । माने वहाँ अन्न रूप से ब्रह्म बैठा है । यहाँ अन्नाद रूप से ब्रह्म बैठा है।

इसलिए वेदों में विचार किया अन्नं ब्रह्मे'ति विजानीयात,अन्नं न निन्द्यात स य एतदऽन्नमऽन्ने प्रतिष्ठितक वेदे प्रतितिष्ठति । अन्न हमारा प्राणदाता है । अन्न के सामने जब आओ तो समझो यह ब्रह्म है, साक्षात् ब्रह्म है । लोक मे किसी की प्रशंसा करते हो न कि आप तो हमारे प्राणदाता हो । हालांकि उसने एक श्वास भी तुमको नहीं देना । बल्कि वो इतना उदार है कि तुम्हारे श्वास को खींच लेगा किन्तु फिर भी हम उसकी प्रशंसा में इसको अन्नदाता कहते हैं । प्राणदाता तो अन्न है उसकी निन्दा करते हैं । क्या फुलका बना है ? क्या परौंठा बनाया है ? क्या पूरी बनी है ? आधी तो जल गई । आधी कच्ची है । जब तुम निन्दा कर के उसको पकड़ोगे तो वो तुमको क्या देगा ? और सत्त्व गुण को दबा देगा । रजो-गुण को फेंकेगा । तुम्हारी बुद्धि को उसने राजस कर दिया । जो अन्न हम खाते हैं उसके तीन भाग होते हैं । जो सात्त्विक भाग होता है वो मन मे जाता है । मन को मिलेगा । मन बुद्धि को एक ही समझो । इसलिए अन्न को ब्रह्म समझो । तब अन्न तुमको सात्त्विक भाव देगा । पहले वो तुम्हारी बुद्धि को ठीक करेगा । जिस को तुमने देखना है उसको देखने के लिए बुद्धि चाहिए । अगर बुद्धि नहीं तो तुम उसके पास मे भी हो तो कैसे देखोगे ? अहमन्नमहमन्नमहमन्नम् अहमन्नादोऽहम-न्नादोऽमहन्नाद: । मैं ही अन्न हूं मैं ही अन्नाद हुँ ।जो अन्न को खाए उसे अन्नाद कहते हैं जब थाली मे है तो अन्न है । अन्दर चला गया तो अहं हो गया। अब अहं बोलोगे । अन्दर जाने पर जब अहं होता है तो थाली मे क्या है ? वहाँ भी अहं है ।

तुम्हीं सर्व रूप मे हो किन्तु अपने रूप को नहीं देख रहे हो । इसका नाम है ignorancc । एक ही तुम अनेक रूप दिख रहे हो किन्तु देखते २ जुदा समझ रहे हैं । बस यह ignorance है इस दीवार से वाहर निकलो ! अहमस्मि प्रथमज: ऋता पूर्वं देवेभ्योऽमृतस्य' इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का प्रथमजा सबसे पहले उत्पन्न होने वाला मैं ही हुँ । ऋता पूर्वेभ्य: देवभ्य: । देव शब्द का अर्थ हम स्वर्ग के देवता समझ लेते हैं । यह तुम्हारे शरीर के भी तो देवता हैं । यह इन्द्रियगण

सब क्या है ? यह सब देवता हैं । कहोंगे कैसे देवता है । तो यूं समझो । आंख ने रूप को देखा तो क्या खा लिया रूप का इसने भला ? केवल रूप को पकडा इस ने और आगे तुम्हारे को भेंट कर दिया कि जाओ ले जाओ । तो जो त्यागी है वो देवता और जो रागी है वो असुर । आंख ने रुप को पकडा और तुमको दे दिया । घ्राणेन्द्रिय ने गन्ध को पकडा और तुमको दे दिया । श्रवणेन्द्रिय ने शब्द को पकडा और तुमको दे दिया । रसनेन्द्रिय ने रस को पकडा और तुमको दे दिया । जीभ मे क्या है ? जन्म से अब तक अगर सोचो तो कितना घी चला गना होगा ? कितना तेल चला गया होगा इस नाली से ? जरा जीभ मे उंगली लगा कर देखो जरा सा भी अंश है उसका कहीं ? यह जीभ सुखी की सुखी है । यहाँ चमडी पर मलो तो थोडी देर रहेगा भी । थोडी देर के लिए चमड़ी तर होगी । किन्तु जीभ बिल-कुल साफ है वहाँ कुछ नहीं । तुमको सब देवता दे रहे हैं ।

'पूर्वेभ्यो देवेभ्योऽ अमृतस्य नाभीहि' ऋषि महान ब्रह्म का साक्षात्कार करता है और कहता है 'पूर्वेभ्यो देवेभ्यः' सब इन्द्रियों से और इस मन से अर्थात् सब देवताओं से मैं पहले हूँ । 'अमृतस्य नाभि' वेद में शब्द तो है 'नाभाहि' मैं अमृत की नाभि हूँ । इसका अर्थ है कि अमृतत्व का मध्य स्थान 'मै' ही हूँ ।हमारे से ही सब हुआ है और हम कल्पना कर रहे हैं अह अहं । यह अहमास्बद आत्मा है तब न यह शरीर प्यारा लग रहा है । जो आएगा प्यार से बात करेगा । किन्तु आत्मा अगर निकल गया तो मुर्दे से कौन प्यार करता है । उसके बिना न मैं न मेरा । उस आत्मा का मुमुक्षु साक्षात्कार करे भूमा विद्या मे पहले इस बात को समझा कर आए हैं । भगवान नारद ने भूमा-विद्या का उपदेश किया नारद को । 'यदल्पं तन्मर्त्यं'' जिस वृत्ति में भेद दृष्टि चल रही,'अन्यत् पश्यति अन्यत् श्रृणोति अन्यत् विजानाति' अपने से भिन्न देखता है । अपने से भिन्न सुनाता हूँ । अपने से भिन्न जाता है । वो अल्प है वो मर्त्य है । 'यो वैं भूमा तत्सुख' भूमा ब्रह्म का उपदेश है । यह 'भूमा ब्रह्म' पुस्तक छप चुकी है । आ लोगों के सामने भी आ चुकी है । यहाँ भगवान सनत्कुमार नारद को समझाते हैं कि जिस ब्रह्माकार वृत्ति मे अन्य भाव नहीं है । ध्याता ध्यान और ध्येय त्रिपुटी निवृत्त हो जाती है । जब तक त्रिपुटी चलती रहेगी तब तक हम लोग कुछ मेरा समझेंगे कुछ तेरा समझेंगे ।

त्रिपुटी जब निवृत्त हुई तो भेद दृष्टि खत्म हो जाएगी 'स वै भूमा' भूमैव सुखं भूमात्वेव विजिज्ञासितव्यः' वो ब्रह्म भूमा है। वही सुख है। अल्प मे सुख नहीं। मायिक पदार्थ सब अल्प है। महान एक मात्र भूमा ही सुख रूप है। हे नारद तुम उस भूमा ब्रह्म को जानने की इच्छा करो।

इस प्रकार यह ऋषि उस महान ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। अब यह स्वस्वरूप में स्थित हो गया। इसलिए इसको उत्तमः पुरुषः कहा। मंत्र आगे कहता है ऐसा जो ऋषि है साक्षात्कार करने वाला। वह पारिवारिक जीवन में भी रहता है, लोक जीवन मे अगर उसके शरीर से कुछ होता भी है तो उसको पाप नहीं लगेगा। पाप कब लगता है ? जब आसक्ति होती है। आसक्ति जब तुम्हारी है ही नहीं तो तुम बुरा क्यों करोगे ? जिसको अपने प्यार होगा वो कुपथ्य क्यों करेगा ? जब समझ लिया कि मैं रोगी हूँ तो खाना बन्द कर देता। किन्तु जिस मरीज को ज्ञान नहीं कि मैं रोगी हुँ वो कुपथ्य नहीं करेगा तो क्या करेगा। ऐसा व्यक्ति स्त्रि पुत्रादि है उनसे मोह उत्पन्न नहीं करता। ज्ञान की भूमि तुम्हारे मोह को भंग कर देगी। हे मघवन् जैसे किसी गाड़ी को खींचने के लिए बैल को या घोडे को लगा देते हैं इस शरीर रूपी गाड़ी का खींचने के लिए प्राण को लगाया है। सावधानी से इस सत्य को पकड़ो। आगे और समझाने वाले हैं।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१५-६-८८

प्रवचन सं० ६८

"ॐ अथ यो वेदेदं मन्वानीति स आत्मा मनोऽस्य दैवं चक्षुः स वा एष एतेन दैवेन चक्षुषा मनसैतान् कामान् पश्यन् रमते । ॐ य एते ब्रह्मलोके तं वा एतं देवा आत्मानमुपासते तस्मात्तेषाँ सर्वे चलो का आत्ताः सर्वे च कामाः स सर्वाँश्च लोकानाप्नोति ।।"

(छान्दो. ८-१२-५।८-१२-६)

इस बात को आए है क्षर और अक्षर प्रकृति और इससे विलक्षण यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा यह उत्तम पुरुष है। जो ब्रह्मवेत्ता इसको समझ जाएगा वह पारिवारिक जीवन में रहता हुआ भी, व्यवहार करता हुआ भी पारिवारिक जीवन के कर्म से असङ्ग हो जाएगा । जैस कमल का पत्ता पानी के अन्दर रहते हुए भी पानी के दोष से लिपायमान नहीं होता । निर्दोष रहता है । इसी तरह ब्रह्मवेत्ता चाहे पिता चाहे वह माता हो, चाहे विरक्त महात्मा हो अगर वो व्यवहार मे ही है, तो भी व्यवहरन्नपिव्यवहारे न लिप्यते । यह जो शरीर है इसके लिए श्रुति दृष्टान्त देती है जिस प्रकार घोडे अथवा बैल गाडी खींचने में लगाते है और वह गाडी को खींच कर गन्तव्य स्थान तक ले जाते हैं । घोडे या बैल से पूछो कि कहाँ जाना है तो वो नहीं जानते । इस शरीर को भी रथ जानो और प्राण को घोडे यह तुम्हारे शरीर रूपी रथ को खींच रहे हैं । प्राण को पूछो भाई साहब कहाँ

ले जा रहे हो रथ को ? तो यह भाई साहब क्या बताएगा ।तुमको समझना पडेगा कि कहाँ जाना है । प्राण का बड़ा महत्त्व है । प्राण शब्द का अर्थ एक तो मुँह और नाक से निकलने वाली हवा का नाम प्राण है । यह प्राण पांच भागों में विभक्त होकर सारे शरीर का संचालन कर रहा है । किन्तु यह प्राण भी तभी तक काम करेगा जब तक इस प्राण का प्राण अन्दर बैठा है । 'श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनोयद्ववाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः । चक्षुषश्चचक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेत्यास्-माल्लोकादमृता भवन्ति, केनोपनिषद् का मंत्र है वो तुम्हारी इस आत्मा के स्वरूप का वर्णन करता है 'श्रोतस्य श्रोत्रं' बेटा यह श्रोत्रका भी श्रोत्र है । यह कान जिस से शब्द सुनते हैं यह कान भी शब्द तो तब पकड़ेगा जब इसका श्रोता होगा । मनसोमनः यह तुम्हारा मन नाना प्रकार के संकल्प विकल्प करता है । अच्छा या बुरा सोचेगा । किन्तु कब सोचेगा ? जब इस मन का भी मन होगा । इस मन का यह आत्मा है । आत्मा है तो मन का काम करेगा ।

यह वाणी है, ठीक है बोलना इसका काम है । यह टेप रिकार्डर की तरह बोलती जाएगी किन्तु यह टेप रिकार्डर भी तभी बोलेगा जबelectrie current होगा । यूं ही टेप लगाकर रख दो तो क्या बोलेगा । electric current है तुम्हारी आत्मा । यह आत्मा है तो वाणी भी बोलेगी । इसलिए वो वाणी की वाणी है, चक्षु का चक्षु है । 'वाचो ह वाच' यह आंख देखने जाती है किन्तु वो नहीं होगा तो यह आंख क्या देखेगी । मंत्र कहता है यह सब यंत्र अपनी २ क्रिया तो करेंगे किन्तु तुम्हारे बिना कोई कुछ नहीं करेगा । मालिक घर मे नहीं होगा तो कोई नौकर सीढी के नीचे जाकर बीडी पीएगा । कोई तो सेठ के कमरे मे जा कर सो भी जाएगा । सेठ के पलंग पर सोने मे कितना मजा आता है । वहीं सो जाएगा । तीन दिन तक बंगले में झाड़ू ही नहीं लगेगी ।यह तुम्हारा शरीर बंगला है और सेठ है अन्दर । वो चला गया निद्रा मे, निद्रा से महा निद्रा मे । महानिद्रा माने बेहोशी । तब बताओ क्या आंख देखेगी ? वाणी बोलेगी ? हाथ हिलेंगे ? कोई कुछ सहीं करेगा । इसलिए विवेकशील धीर पुरुष अपनी आत्मा का ही चिन्तन करे । बुद्धि के अधीन न हो जाए । बुद्धि को अपने अधीन रखे वो धीर है। बुद्धि में शोक आता , मोह आता है, यह उसको दबावे । यह नहीं कि बुद्धि ने

अगर शोक को खड़ा किया है तो यह भी शोक का प्रस्ताव पास कर के रोने बैठ जाए । ,प्रेत्यास्माल्लोका' लोक शब्द का अर्थ है, यह शरीर । इस शरीर मे हम आए हैं । इसको पंचभूतों से लिया है हमने, तो देना भी पडेगा । यह किराए का बंगला है । आजकल तो होटल system है । किसी होटल मे जाओ, कमरा लो किराए का, तो छोडना भी पडेगा । इस बात को समझाने के लिए यहाँ इस बात को कह रहे हैं । यत्रैतदाकाशमनुविषणां चक्षु: समाक्षुषः पुरुषा' यह जो तुम्हारी आंख है । इस आंख में यह जो काला भाग है, इसके जो तारे जैसा चमकता है यहां आकाश है । इस आकाश में जो चाषक्षु: पुरुष बैठा है । इस खिडकी में बैठा है । बाहर झांक रहा है । वो क्षक्षु की सृष्टि करता है और इस नेत्र से जब देखने लगा तो इस आत्मा का नाम पड़ गया चाक्षुषः । चक्षुषः पश्यति चाक्षुषः । दर्शनाय चक्षु' माया भगवती ने कहा हे भगवन् हमारे साथ चलना तो पडेगा । मैंने show room खोला है । आजकल फैशन हो गया है, कोई show room लगाओ और फिर बुलाओ महाराजा को । भगवती ने show room लगाया है तो चलोगे ? चलूंगा सही किन्तु मैं देखूंगा कैसे ? कोई २ तो इतनी चमकीली चीज होती है कि उसको यूं सीधे देख नहीं सकते । जैसे सूर्य । सूर्य की ओर सीधी आंख कर के देखो तो तुम्हारी आंख की ज्योति दब जाएगी । चश्मा लगा कर देखो तो देख सकते हो ।

इसी तरह यह सारा ब्रह्माण्ड क्या है ? माया भगवती का show room है । बोली opening करने तो तुमको ही चलना पडेगा । तो देखने के लिए उसने चश्मा fit कर दिया दर्शनाय चक्षु । माने जो असीम था उसको सीमा में बाध दिया । जिसकी असीम ज्योति थी show room की opening करने के लिए उसको सीमा में बांध दिया । 'दर्शनाय चक्षु:' उसने कहा इतने मे क्या होगा ? यहाँ गन्ध भी सूंघना पडेगा । बढिया show room है तो वहाँ cent भी होगा । spray तो किया होगा । घ्राणेन्द्रिय लगा दिया 'गन्धाय घ्राणं' घ्राणेन्द्रिय की सृष्टि किया । 'स आत्मा' उस आत्मा ने सोचा 'यो वेदेदंमभिव्याह-राणीति स आत्माभिव्याहाराय वागथ' मैं व्यवहार कैसे करूँगा ? एक बात समझो, व्यवहार दो तरह का होता है । शब्दात्मक व्यवहार और ज्ञानात्मक

व्यवहार । ज्ञानात्मक व्यवहार बुद्धि से होगा । बुद्धिरूपी यंत्र तुमको fit किया हुआ है । शब्दात्मक व्यवहार के लिए वागेन्द्रिय को fit किया । फिर कहा भगवती तेरे show room में जाकर मेरे को कुछ बोलना पडेगा न । तो कैसे बोलूंगा ? बडे २ लोगों के आगे माईक रखा होता है । पार्लियामेंट मे देखो, प्रत्येक मैम्बर के सामने माईक होता है । जो बोलो वो माईक से बोलो । सबको सुनाई पडे । उसने कहा यह व्यवहार कैसे करेंगे ? माईक fit कर दिया । यह वाणी क्या है । आटोमैटिक माईक है । जहाँ भी जाओगे वह माईक तुम्हारे साथ जाएगा ।

आजका बुद्धिमान कहता है हमने सब कुछ आटोमैटिक कर दिया है । क्या आटोमैटिक किया है ? चबाने के लिए भगवान के दिए हुए दांत हैं । खाने के लिच हाथ तो हिलना ही पडता है है । जीभ चलना ही है । सब काम तो उसी रीति से हो रहे हैं हाँ मरने के लिए बहुत से साधन आटोमैटिक हो गये हैं । जीने के लिए तो सब काम पुराने साधनों से ही लेना पडेंगा । कोह यंत्र fit करो । अगर वह बोल जाए तो बात है, वाणी से ही बोलना पडेगा । 'य वेदेदं शृणवानीति श्रवणाय श्रोत्रं' यह बताओ तुम्हारे show room में जाकर कुछ सुनना भी पडेगा । श्रवणेन्द्रिय fit कर दिया । इस प्रकार यह इतने यंत्र fit कर दिए माय ने । आत्मा का महान दिव्य जो तेज था । जैसे अग्नि के समीप जो पदार्थ रखा वो थोडी देर मे अग्नि जैसा ही हो गया । अग्नि के पास लोहे को रखा तो लोहा अग्नि बन गया । लकडी रखा तो लकडी अग्नि बन गया । इसी प्रकार माया ने जो यंत्र fit किया आत्मा के तेज से आत्मा जैसा हो गया । आंख आत्मा जैसी तेजोमयी हो गई । वाक् वाणी भी आत्मा जैसी हो गई । सब इन्द्रियाँ आत्मा जैसी तेजस्वी हो गई । बडे २ काम करने वाहे leader हो गये । जो असल मे काम करने वाला है वो किसी को दीखता ही नहीं ।

एक बार प्राण के साथ इनका झगड़ा हो गया । यह नैनांदेवी कहती है सब कुछ तुमको मैं दिखाती हूँ । निखट्टू कहीं का । बढिया २ रूप मैं पकड़ लाती हूँ और स्वाद तू लेता है । ओज बोला हाँ बहन तू ठीक कहती है मैं भी बढ़िया

शब्द लता मंगशकर और आशा भोंसले के लेकर आता हूं । यह सब स्वाद ले लेता है । रसनेन्द्रिय बोली हाँ भाई साहब बिल्कुल ठीक कह रहे हो । यह सुन्दर रसाल पदार्थ, यह लाखों २ हलवाई रात दिन लगे हुए हैं, रस मैं लाती हूं स्वाद यह लेता है । काम तो हम सब करते हैं और यह अपने को यों ही महान कर के बैठा है । महत्ता तो हम लोगों की है महान यह बना बैठा है । जैसे कोई पुराने जमाने का बाप हो । दास बारह बच्चे हों । सब बच्चों में झगड़ा हो जाए और वो अपना झगड़ा लेकर बाप के सामने आएँ । माता पिता को समदर्शी बन कर निर्णय लेना चाहिए जिससे सब बच्चे अच्छे बने रहें । इसीं तरह यह इन्द्रिय गण भगवान प्रजापति के बच्चे हैं । सब प्रजापति के पास पहुंच गये । नैनां देवी क्या बिजली की तरह चमक रही है । कर्ण देव भी कम नहीं है । वाणी भी कम नहीं है । रस-नेन्द्रिय भी अकड़ कर खड़ी है । प्राण बेचारा मुँह लटकाए खड़ा है । जो ईमान-दार होता है वो सिर ऊँचा कम करता है । नैनां देवी ने कहा देखो भगवन् यह प्राण कुछ करता नहीं है और हम पकड़ २ कर जो कुछ लाते हैं यह सब चाट जाता है । कर्ण देव ने भी कहा हाँ भगवन् मधुर २ संगीत मैं लाता हूं । सब इन्द्रिय गण ऐसे अहंकार में आ गये । हम श्रेष्ठ हैं, हम महान हैं । इसको श्रेष्ठ मत बोलो बडी बुद्धिमत्ता से भगवान प्रजापति ने निर्णय दिया । 'यस्मिन्नुत्क्रमते इदं शरीरं पापिष्ठं भवति स श्रेष्ठः' तुम लोग बारी २ से एक २ वर्ष के लिए बाहर चले जाओ । जिसके जाने से यह शरीर पापिष्ठ हो जाए, पापिष्ठ माने अस्पृष्ट अस्पृश्य हो जाए । इसको कोई देखना नहीं चाहे वो ही श्रेष्ठ है ।

नैनां देवी ने कहा मेरा तो पासपोर्ट भी तैयार है । सब मे पहले मैं जाती हूं लंडन । उसने अटैची उठाई और चल दी । वहाँ पहुंच कर फोन किया । How is going on ? Every thing is o. k. उत्तर मिला । चुपचाप लौट आई और अपने flat में घुस गई । कर्ण देव चल दिए । अच्छा हुआ न किसी की सुनो न किसी से कुछ कहो । गुस्सा क्यों आएगा । लौटकर आ गये । वाणी ने कहा अब मैं जाती हूं बहुरानी आई है, बोलने के लिए तो आई है । कुछ भी बोलती है । सासुएँ कान लम्बे कर के घर में नहीं रहे । वाणी निकल कर चली गई । बच्चा जैसे मां की गोद में पड़ा है । इधर उधर देखता है । रोता कब

है ? जब भूख लगती है। आगे पीछे होने की जरुरत नहीं पड़ती। क्यों ? उसको सारी इन्द्रियों की भूख नहीं। इन्द्रियों का अपराध तो उसका है जिसको इन्द्रियों का ज्ञान है। उसके लिए सब नियम हैं। धर्माधर्म है। मन भी लौट आया। यह स्थिति हो गई है। प्राण ने कहा लौट आए ? हाँ। अच्छा अब मैं जाता हूं। इस show room को तुम सम्भालो। प्राण ने ज्यों ही निकलना चाहा कि नैनांदेवी का बुरा हाल। हाथ जोड कर खड़ी हो गई। वागेन्द्रिय का वही हाल। श्रोत्रे-न्द्रिय भी बोली कौन हमारी रक्षा करेगा ? हाथ जोड़ कर इन्द्रियों ने प्राण देवता को मताया, प्राणात्मा को मनाया। त्वम श्रेष्ठः। तुम्ही श्रेष्ठ हो। तुम्हीं से इस बंगले की शोभा है। प्राण बोला 'प्रतिष्ठाऽहमस्मि' मैं प्रतिष्ठा रुप हूं। आप लोग मेरी क्या सेवा करेंगे। नैनादेवी बोली, मैं प्रतिष्ठा गुण आपको देती हूं। श्रोत्र ने कहा भगवन 'सम्पदमस्मि' सम्पद समर्पयामि' में सम्पद आपको देता हु।यह बडर राष्ट्र वडी २ सम्पत्ति है। बडे २ बिजनैस चल रहे हैं यह कान को कृपा से ही चल रहे हैं। अगर सुनोगे ही नहीं तो काम क्या करोगे। वागेन्द्रिय बोली है भगवन 'वशिष्ठोऽहमस्मि' मैं अपना वशिष्ठ गुण आपको देती हुं। यह जो वागे-न्द्रिय है, देखते नहीं कितने बडे २ लीडर हैं यह धन की कृपा से नहीं बने। यह यह वाणी की कृपा से ही बने हैं। बुद्धिमान की यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वाणी से स्वस्थ बोले दूसरे के हृदय को दुःखी कर के मत बोलो। इसलिए विद्वान वाणी का बड़ी सावधानी से उपयोग करे। कहते हैं विद्वान की वाणी कैसी होनी चाहिए 'अर्थवत् प्रत्ययवत्' विद्वान की वाणी में कोई अर्थ आना चाहिए। कोई प्रत्यय आना चाहिए। प्रत्यय माने ज्ञान आना चाहिए। अर्थ नहीं आएगा ती अनर्थ आएगा। ज्ञान नहीं आएगा तो मूर्खता आएगी।देखते नहीं हो आजकल गह वाणी राष्ट्र को राष्ट्र से टकरा देती है। भाई को भाई से, जाति को जाति से टकरा देती है।

इतना बड़ा महाभारत का जो युद्ध हुआ, उस युद्ध का मूल कारण क्या था। यह बाणी थी। युधिष्ठर ने मयदानव से, जो उस जमाने का बड़ा इंजीनीयर था, बड़ा सुन्दर महल बनवाया। अमीराका मे मयामी नाम का एक शहर है। वह मयदानव की भूमि है। मैक्सिको कैलेफोर्निया से ५००, ७०० मील दूर है।

मैक्सिको में विष्णु का मन्दिर है। देवी का मन्दिर है । मैक्सिको के रहने वाले जो लोग हैं उनकी शकल भी हम लोगों से मिलती है।एक को तो हम हिन्दुस्तानी समझ कर हिन्दी में बात करने लगे। हिन्दु culture आप को वहाँ मिलता है। कालान्तर मे कुछ ऐसा हो गया कि समुद्र यात्रा बन्द हो गई। नहीं तो world के कोने २ मे आर्य जाति के लोग थे। आर्य धर्म मे प्रचार की परम्परा लुप्त होने से लोग स्वेच्छाचारी हो गते। यह बताओ कि सृष्टि आर्यो से शुरु हुई कि अनार्यो से ? तुम्हारी दृष्टि मे सृष्टि का प्रवर्त्तक जो प्रजापति था वह आर्य था कि अयार्य था। रही बात यह कि आगे चल कर लोग। आचार हीन हो गये। आचार हींन होने से वह असुर कहलाने लगे। हिरण्य कशिपु राजपूत था। वृत्रासुर ब्राह्मण था असुर कोई अलग जाति नहीं थी। हमी लोग देवता थे। कुछ देव हमारे से ऊपर भी थे। कुछ आचार हीन होने से असुर कहलाए । इस तरह सावधानी की जरुरत है जीवन के बारे में केवल कल्पना नहीं है।

तो युधिष्ठर ने मय दानव से बड़ा सुन्दर महल बतनाया इतना सुन्दर था कि पृथ्वी की जगह पानी और पानी जगह पृथ्वी दिखती है। एक बार कन्या कुमारी गये। वहाँ निवेकानन्द स्मारक देखा। वहाँ का फर्श ऐसा ही बना है। देखने से पानी दिखता है। जहाँ पानी था वहाँ पृथ्वी दीखती थी । वहाँ यह प्रत्यक्ष हुआ हमको। सब राजममारों को देखने के लिए बुनाया। दुर्योधन भी आया। जहाँ पानी था वहाँ सूखा प्रतीत हुआ। धड़ाम से गिरा। रानियाँ ऊपर बैठ कर देख रही थी। जहाँ पृथ्वी थी वहाँ पानी दीखा। कपडे ऊपर उठाने लगा द्रोपदी से रहा नहीं गया। बोल दिया कि अन्धे का बेटा अन्धा ही होगा। दुर्योधन ने कहा समय आने पर बताऊँगा यद्यपि वह देवर है, वह भाभी है। देवर भाभी मे मजाकं चलता है। किन्तु कभी २ वेसमय का मजाक मृत्यु को भी बुला लेता है। सारी हिन्दु संस्कृति, वैदिक सस्कृति, बडे २ दार्शनिक, विद्वान, सांयटिस्ट उसमे समा गये। कितने बडे सहारक शास्त्रों का अविष्कार हो चुका था। सब नष्ट हो गये। हजारों वर्षो तक ऐसी स्थिति हो गई कि हिन्दु जाति भोगासक्त हो गई। यह तो आगे जाकर अशोक हर्षवर्धन आदि ने देश की स्थिति को सम्भाला।

इस जीवन को ऐसा बनाना पडेगा जिससे देश की स्थिति समाज की

स्थिति में सुधार हो। देश का राष्ट्र का भला हो सके। तो कहा कि विद्वान की वाणी अर्थवती होनी चाहिए, प्रत्ययबती होनी चाहिए। ज्ञान वो होना चाहिए जिस ज्ञान मे जीवन मिले लोक जीवन और परलोक जीवन दोनों की ओर तुम्हारा ध्यान होना चाहिए। नही तो हमारे जीवन का कोई महत्त्व नहीं होगा आत्मा का विचार करना आवश्यक है। निश्चय हो गया कि प्राण ही महान है। प्राण ही श्रेष्ठ है। प्रजापति को जजमैंट उचित थी। मंत्र कहता है 'स आत्माऽभिव्यहारायवागथ, श्रवणाय श्रोत्रम्' इस प्रकार इन इन्द्रियों की सृष्टि किया। आगे मंत्र आया ,ॐ य एते ब्रह्मलोके तं वा एतं देवा आत्मानमुपासते तस्मात्तेषां सर्वेच लोका आत्ता: सर्वांश्च लोकानाप्नोति'भगवान प्रजापति ब्रह्माऽने इन्द्रको जिस आत्मा का उपदेश किया। 'तं वा एतं देवा आत्मानमुपासते'उस आत्मा को इन्द्र ने समझा दूसरे देव भी उसी आत्मा की उपासना करते हैं। देव शब्द का अर्थ ऐसा मत समझो कि स्वर्ग मे रहने वाले ही देवता होते हैं। इन मनुष्यों मे भी जो देव भाव वाले है, जो अपने मन को जाग्रत करके इस चेतन आत्मा की ओर चल रहे हैं, उनके अन्दर यह प्रज्ञा जाग्रत होगी कि ब्रह्माण्ड की आत्मा क्या है। इसलिए विवेकशील को चाहिए कि इस जगत का जो तत्त्व है उसकी ओर अपने मन को लगावे और धीरे २ इस अविद्या से बाहर हो जावे। अविद्या के द्वारा तुम्हारे अन्दर जो जीव भाव है इस जीव मे कर्त्ता, भोक्तापन है। तत्त्व चिन्तन करते २ मुमुक्षु जीवभाव से ऊपर उठ जाता है। आगे और समझाने वाले है।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१६-६-८८

प्रवचन सं०-६९

"ॐ य एते ब्रह्मलोके तं वा एतं देवा आत्मानमुपासते तस्मात्तेषाँ सर्वे च लोका आत्ताः सर्वे च कामाः स सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्चकामान्यस्तमात्मानमनुविद्य विजानातीति ह प्रजापतिरुवाच प्रजापतिरुवाच इति । ॐ श्यामाच्छबलंप्रपद्ये शबलाच्छ्यामं प्रपद्येऽश्व इव रोमाणि विधूय पापं चन्द्र इव राहोर्मुखात् प्रमुच्य धूत्वा शरीरमकृतं कृतात्मा ब्रह्मलोकमभिसम्भवामीत्यभि सम्भवामीति ।।"

(छान्दो. ८-१२-६।८-१३-१)

भगवान प्रजापति ब्रह्मा इस रहस्य को प्रकट कर रहे हैं कि मनुष्य के जीवन का जो बडा रहस्यपूर्ण, महत्त्वपूर्ण अग है, वो है मन । मन यदि व्यवस्थित है तो सब काम ठीक होंगे और मन यदि व्यस्थित नहीं है तो कोई भी काम व्यवस्थित नहीं होगा । भगवान प्रजापति ब्रह्मा कह रहे हैं कि परमात्मा ने सोचा कि भगवती माया के जगत में हम चल रहे हैं । यह सारा ब्रह्माण्ड क्या है ? भगवती माया का show room तो है ही । इसकी opening के लिए जब उनको आना पडा तो इसके लिए उन्होंने मन की सृष्टि किया । 'अथ यो वेदेदं मन्वानीति स आत्मा मनोऽस्य दैवं' । परमात्मा ने सोचा कि मैं मनन करूँ । कोई

वस्तु हमारे सामने आती है तो हम उसका मनन करते हैं। मनन शब्द का अर्थ क्या है ? 'गुणदोषाभ्यां विवेचनं इति मननम्' वस्तु में दो चीज समझो या दो पक्ष समझो। गुण और दोष। अपने शरीर में ही देख लो, गुण भी है दोष भी। 'गुणदोषाभ्यां विवेचनं मननम्' गुण पक्ष को पकडो। कितने गुण है ? दोष पक्ष को पकड़ो कितने दोष हैं ? निर्दोष कोई चीज नहीं मिलेगी। अच्छी वस्तु कौन ? जिसमें गुण ज्यादा और दोष कम हों वो अच्छी। जिसमें दोष अधिक गुण कम वो बुरी।। संसार मे जब परमात्मा को आना पड़ा तो गुण दोषों के विरोचन के लिए मन की सृष्टि की। 'यो वेदेदं मन्वानीति' सुन्दर यंत्र तुम्हारे लिए बनाया। 'मननाय मनः' यह जो मनन है, गुण दोषों का विचार करना। यह इन्द्रियों का विषय नहीं है। आंख नहीं पकडेगी। आंख तो रूप को देखेगी। गुण या दोष को आंख नहीं देखेगी। गुण या दोष को आँख देख नहीं सकती। नाक उसको सूंघ नहीं सकता। नाक दुगन्धं सुगन्ध को सूंघेगीं। गुण दोष को कैसे देखेगी ? जीभ उसका स्वाद नहीं ले सकती। खट्टे मीठे पदार्थो को जीभ पकडेगी। वस्तु में गुण है या दोष यह जीभ नहीं पकडेगी। त्वगेन्द्रिय स्पर्श को पकडेगी। कोमल स्पर्श कठोर स्पर्श। गुण दोष को कैसे पकडेगी। भाष्यकार व्याख्या करते हैं, 'मनन व्यापार इन्द्रियाऽसस्पृश्य' मनका जो व्यापार है मनन। यह इन्द्रियाँ उसका स्पर्श भी नहीं कर सकती। इन्द्रियाँ उसको छू भी नहीं सकती। इन्द्रियों के बस का नहीं। उस मनन व्याप.र को करने वाला कौन ? मन है और मनको पकड़ने वाला आत्मा है। जिस समय आत्मा ने मन को पकडा यह मन बड़ा तेजस्वी हो गया। शक्ति सम्पन्न हो गया। बोला हे भगवन् हम आपके सम्बन्ध से शक्ति सम्पन्न हो गये है किन्तु मेरे सम्बन्ध से आप जीव बन गये। जीव बना दिया आपको। तो अब हम जहाँ जाएँगे वहाँ आप को चलना पडेगा। जब तक हम वहां रहेंगे आपको रहना पडेगा। जब हम वहाँ से चल देंगे तो आपको भी चलना पडेंगा। तो प्रधान कौन हुआ ? मालिक कि नौकर ? नौकर है मन। जब तक मन इस शरीर में बैठा है, यह जीवात्मा को पकडे रहेगा, तब तक वह आराम से रोटी खाएगा। और जब मन शरीर को छोड़ देगा तो यह रहना भी चाहेगा तो नहीं रह सकेगा। मननाय मनः। 'यस्य मनः स आत्मा' मनन के लिए मन है और जिसका यह मन है वो आत्मा है। 'आप्नोनि ह वै इदं सर्वं' जो सम्पूर्ण भूतों को व्याप्त कर के बैठा है,

वो इस मन के सम्बन्ध से जीव भाव में आ गया।

जो परमात्मा सोचता है कि मनन के लिए मैं मन की सृष्टि करूँ 'स आत्मा इत्येव सर्वत्र व्याप्नोति' आचार्य व्याख्या करते हुए कहते है 'वेदनं अस्य स्वरूपं इत्युपगम्यते'। 'वेदन माने ज्ञानं' इस आत्मा का स्वरूप क्या है? 'वेदनं अस्य स्वरूपं' यह बात ठीक है कि ज्ञान ही इसका स्वरूप। यद्यपि ज्ञान निर्विकार है निराकार जो संवित् है वो केवल साक्षी मात्र है। उसमे कोई प्रवृत्ति निवृत्ति नहीं। प्रवृत्ति निवृत्ति तो तब आएगी जब कोई उपाधि आएगी। जैसे अपने में ही समझो मनुष्य है, केवल मनुष्य मात्र से हम मनुष्य की शकल मे है। मनुष्य दीखेगे, मनुष्य की तरह चलेंगे। मनुष्य का भोजन हम खाएँगे। किन्तु यह बताओ कि गवर्नमैंट के जो बडे २ पद है, वहाँ बैठ सकते है जाकर? उस post पर तो वही बैठेगा जिसको गवर्नमैंट नियुक्त करेगी। जिस समय वह उस post पर पहुँच जाएगा तो देखो वो कितना काम करता है। उसका सुन्दर ज्ञान होगा तो अच्छे से अच्छा करेगा। और ज्ञान को बिगाड़ कर बैठेगा तो बुरे से बुरा करेगा। यह शक्ति तुम मे कहाँ से आई? उस पद से एक commanding officer है। हजार जवान उसके सामने खडे होकर salute मारते है। है तो वह भी मनुष्य ही, किन्तु गवर्नमैंट ने उसको यह पद दिया। यह पद प्रतिष्ठा है। उसमे उतनी शक्ति है। इसी तरह समझो, यह निर्गुण निराकार, निर्विकार चेतन आत्मा जो ब्रह्म है, यह जगत का जीवन है। उसके बिना कोई जी नहीं सकता। किन्तु कुछ करना या न करना तो तब होगा जब पद प्रतिष्ठा में पहुंचेगा। सब से बडा पद माया का अधिष्ठाता बनना है। माया का अधिष्ठाता बन गया तो 'कर्तुम कर्तुमन्यथा कर्तुम्' सर्व समर्थ हो गया। ईश्वर हो गया। किन्तु मन का अधिष्ठाता बना तो यह जीव हो गया। रोने गाने वाला। किन्तु जीव होने पर भी यह जीव है नहीं। यह तत्त्वविद्या ब्रह्मविद्या इसको स्पष्ट करेगी। यह ब्रह्मविद्या तुमको समझाती है कि यह जीव होने पर भी यह जीव है नहीं। यह ब्रह्म ही है। बेटा यह निर्गुण निराकार है। चिन्मात्र है। मुमुक्षा इसको ग्रहण करे। मुमुक्षु के लिए यह पक्ष है। मुमुक्षु के लिए वो पक्ष नही जो मायाधिपति बन कर बैठा है। वो ईश्वर है। वो तो 'कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुम्' समर्थ है। जीव के आश्रय मे इतनी

शक्तियां नहीं रह सकती ।

कथा आती है कोई बडे अच्छे संत थे । गाँव के किनारे रहते थे । वर्षा पड नहीं रही थी । गांव के लोग संत के पैरों मे आकर गिर पडे । महाराज आप सब कुछ कर सकते है, वर्षा करो । वो बोले मेरे मे इतनी शक्ति कहाँ है किन्तु जब भक्त पीछे ही पड़ जाएं तो भगवान क्या करेंगे । बोले अच्छा भाई तुम लोगों की प्रार्थना लेकर हम भगवान से प्रार्थना करेंगे । माला लेकर बैठ गये । भगवान ने भी सुन लिया । पूछा क्या बात है । संत ने कहा भगवन यह सारे आपके भक्त मेरे को ही सब कुछ समझ रहे है । कहते है वर्षा करो । आप ऐसी शक्ति दो । वर्षा नहीं हो रही है । जब भक्तों की इच्छा हो तब मैं वर्षा कर सकूं । भगवान ने कहा ठीक है । भगवान तो अनन्त शक्ति हैं । वर्षा हो गई । सब ने अनाज खेत मे डाल दिया । अनाज थोडा बडा हुआ तो उसमे कीडा लग गया । पीला हो गया । खेती खराब होने लगी । फिर सन्त के पीछे पडे । अच्छा भगवान से प्रार्थना करेगे । फिर माला लेकर बैठ गया । भगवान ने कहा अब क्या हो गया ? बोला भगवन् वर्षा से खेती तो अच्छी हो गई थी किन्तु अब उसमे कीडा लग गया है । सब खेती पीली हो गई है । अब ऐसी शक्ति दो जिससे इनकी खेती मे कीडा न लगे । खेती खराब न हो । भगवान बोले तुमने वर्षा करने की शक्ति मांगी थी वो मैंने दे दी । अब इसके लिए तो विशेष प्रकार की वायु की जरूरत है । उत्पत्ति, स्थिति और संहार तीनों साथ मे चलते हैं । जीव बेचारा उत्पत्ति, स्थिति और संहार तीनों को एक साथ कैसे चलाएगा । जीव के आश्रय मे मेरी सारी शक्तियां तो नहीं रह सकती । अच्छा जा अब वो कीडा भी मर जाएगा किन्तु फिर मत आना ।

उपाख्यान का तात्पर्य यह है कि परमात्मा के अन्दर जितनी शक्तियाँ है उन सम्पूर्ण शक्तियों का आश्रय जीव नहीं बन सकता । हाँ जीव ईश्वर की कुछ शक्तियाँ पाकर सिद्धि प्राप्त कर सकता है । इसलिए जीव को ईश्वर बनने का उपदेश शास्त्र नहीं करता । कोई गुरु भी नहीं कहता कि तुम ईश्वर बन जाओ । वो कहता है कि तुम ईश्वर से भी परे जा सकते हो किन्तु कब ? जब यह अविद्या का चोगा जो पहन रखा है इसको छोडोगे । इस अविद्या से बाहर निकलोगे । जिस

अविद्या ने तुमको जीव बनाया है उस अविद्या से जब तू बाहर हो जाएगा तो तेरे को ब्रह्मभाव प्रत्यक्ष हो जाएगा। इस ब्रह्मभाव में तेरे को मालूम पडेगा 'ज्ञानमयं मत्स्वरूपं' ज्ञानमय स्वरूप है मेरा। आचार्य बडा सुन्दर दृष्टान्त दे रहे हैं, यह जो महान सूर्य है। सूर्य को आदित्य कहते हैं आदित्य शब्द की व्याख्या करते हैं, 'अदनात् भक्षणात् आदित्य' यह आदित्य क्या है ? सम्पूर्ण जगत का भक्षण करता है। शक्ति को खींच रहा है अपनी ओर। जैसे हम लोग सोचते है कि हम बडे हो रहे हैं, विचार करो कि बडे हो रहे हो कि छोटे हो रहे हो। एक २ ग्रास रोटी तोडं कर खाते हैं, बारह रोटियों में से एक रोटी खालो तो कितनी रोटी बची ? एक रोटी कम हो गई। मान लो तुम्हारी इतनी आयु है। एक दिन चला गया तो यह एक दिन कम हो गया। इस तरह यह महान आदित्य खींच रहा है। 'पुरस्तात् प्रकाशयति उत्तरतः प्रकाशयति, दक्षिणतः प्रकाशयति।' सूर्य सब अपनी २ दृष्टि से दीख रहा है। जो उत्तरी ध्रुव की ओर रहते हैं, उनको दीखता है कि सूर्य दक्षिण से उदय हो रहा है। जो दक्षिणी ध्रुव की ओर रहते हैं उनको उत्तर की ओर से उदय होता हुआ दीख रहा है। जो पूर्व में रहते हैं उनको पश्चिम की ओर से उगता हुआ दीखता है और जो पश्चिम की ओर रहते है उनको दिखाई देता है कि सूर्य पूर्व की ओर से उदय हो रहा है। इस तरह भिन्न २ दृष्टि है।

कहते हैं 'नित्य प्रकाशवान् सविता' सूर्य नित्य प्रकाशवान् है। सारे ब्रह्माण्ड को यह महान सूर्य, प्रकाश दे रहा है। 'सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षुः' उपनिषद् का यह मंत्र है। परमात्मा ने अपनी ओर से यह सूर्य रूपी नेत्र सब प्राणियों को दिया है। सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षुर्न लिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः' सुर्य सारे ब्रह्माण्ड का चक्षु है। अपने प्रकाश से अच्छी से अच्छी चीज का भी प्रकाश करता है और बुरी से बुरी चीज का भी प्रकाश करता है किन्तु 'न लिप्यते अच्छी चीज का प्रकाश करने से अच्छी चीज़ के गुण सूर्य मे नहीं जाएंगे। बुरी चीज का प्रकाश करने से उस वस्तु की बुराई सूर्थ के अन्दर नहीं जाएगी। 'न लिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः' जो भी चक्षु के द्वारा प्रकाशित होंने वाले दोष हैं उनसे लिपायमान नहीं होता। इसी प्रकार यह आत्मा भी 'एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा न लिप्यते लोकदुःखेन बाह्यः।' सब भूतों में स्थित होते हुए भी नाना प्रकार के दुःखों से वो लिपायमान नहीं होता क्योंकि वो इनकी पकड़ म नहीं है।

आप लोगों ने कई बार सुना है वेदान्त शास्त्र में षड उर्मि मानी गई है। उर्मि शब्द का अर्थ है तरङ्ग। पहला जन्म का बडा तरङ्ग।इसके पीछे भूख और प्यास का तरङ्ग है। बच्चा जन्म लेते ही रोने लगता है। कुशल नर्स या धायी मुँह साफ कर के खट उसके मुँह मे कुछ खाने को डाल देती है। Building कों भी देखना होता है। खाने को दिया तो मूत्रादि हो जाता है तो Building का system ठीक है। तो जन्मते ही रोने का क्या अर्थ है, भूख लगी है उसको। pipe line ठीक है। जन्म मरण भूख प्यास और शोक मोह यह छः ही प्रकार की तरङ्गे हैं ससार की। भूख प्यास का बडा भारी दुःख है। हम भूख के लिए घूमते है, प्यास के लिए घूमते हैं। देखते नहीं हो यहाँ पानी की कमी हो रही है। पानी होगा ही नहीं तो मिलेगा कहाँ से ?

जन्म मरण स्थूल शरीर मे पडा है। भूख प्यास प्राणों का धर्म है। प्राणो मे पडा है। शोक मोह की अटैची मन है। आजकल अटैची का फैशन है न हर चीज अटैची मे रखी है। स्थूल शरीर जन्म मरण की अटैची। स्थूल शरीर को पकडोगे तो जन्म मरण दीखेगा। भूख प्यास की अटैची प्राण। प्राण खाता है। जो कुछ भी हो रहा उसका reaction मन मे पहुंचता है तो मन में शोक मोह। यह बताओ तुम्हारी जो आत्मा है सत् चित् आनन्दस्वरूप, उसमे क्या है ? यह संसार तो केवल मन तक गया है, उसके आगे क्या है ? आगे तो तुम बैठे हो। संसार तो इतना ही है जन्म मरण भूख प्यास और शोक मोह। देखो यहाँ नेपाल मे तो अच्छी ठंडी है। दुढ्ढा बुढ्ढी जाडे में अग्नि ताप रहे है। मान लो कोई कोना कपडे का अग्नि मे पहुंच गया। जलता २ जब वो शरीर मे पहुंचा तो चिल्लाया अरे जल गया। जैसे बुढ्ढा बुढ्ढी अग्नि के समीप जाने मे तप रहे है, इसी तरह वो मन के समीप होने से मन को पकड़ कर बैठा है। इसलिए शोक मोह मे होते हुए उसमे दीखने लगा वैसे उसमे है नहीं। जब शोक मोह उस आत्मा मे दीखने लगा तो मन ने कहा थोडा और है। बगल में प्राण बैठा था तो भूख प्यास भी दीखने लगा जब भूख प्यास भी इसमे दीखने लगा तो यह शरीर बोला एक और भी है। बोला क्या ? जन्म मरण भी तुम्हारा ही है। हम तो तुम्हारा

ही स्यापा पीट रहे है । स्यापा पीटना जानते हो ? जब कोई बुढढा बुढ्ढी मर जाते है तो रोते है न वो स्यापा पीटना है। वो तो मरा ही नहीं छाती किसके लिए पीट रहे हो । किन्तु इनके साथ जो दोस्ती हो गई थी इसलिए स्यापा पीट रहे है। इसलिए मुमुक्षु सत्य की खोज करे । अपने स्वरूप का ध्यान करे ।

कहते हैं जैसे वो महान सूर्य अपनी सत्ता मात्र से सारे जगत को प्रकाशित कर है । सूर्य किसी के घर मे जाकर तो प्रकाश नहीं करता । केवल अपनी सत्ता मात्र दे रहा है । इसी प्रकार यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा अपनी सत्ता मात्र से इन्द्रियों को प्रकाश दे रहा है । सत्ता मात्र से मन को प्रकाश दे रहा है । इसकी सत्ता मात्र से प्राण चल रहा है । किन्तु जैसे कोई आदमी व्यापार में संलग्न हो जाए ऐसा नहीं । यह सूर्य ऐसे संलग्न होकर भी प्रकाश नहीं करता । ऐसे ही यह तुम्हारी आत्मा, जो सूर्य का भी सूर्य है, सूर्य के अन्तर मे स्थित है किन्तु सूर्य से जुदा है । सूर्य उसका शरीर बना हुआ है । सूर्य नहीं जानता कि मैं किसकी कृपा से जी रहा हूं । इसका सबसे बडा दृष्टान्त तुम्हारा यह शरीर है । चेतन आत्मा के प्रकाश मे यह शरीर जी रहा है खाना दाना लेता है किन्तु यह शरीर इस आत्मा को नहीं जानता । इसी प्रकार यह महान सूयं भी अपनी महान आत्मा को नहीं जानता । 'य; सूर्यमन्तरो यमयति' वो सूर्य का नियन्ता है । तुम्हें देहात्मा से, देह परिच्छेद से बाहर निकाल कर सूर्यात्मा मे प्रतिष्ठित करने का तात्पर्य है कि तुम्हारी आत्मा परिपूर्ण विश्वात्मा व्यापक है । तुम इस देह रूपी बक्से से बाहर निकलो । इस शरीर को क्या समझते हो ? यह बक्सा है रबड़ का। इसके अन्दर घुस कर बैठ गये हो और भगवान से कहते हो कि आओ हमसे मिलो तो भगवान क्या कहेगा ? तुम स्वयं बैग में घुस कर बैठे हो, और हमको कहते हो तुम भी इसमे घुस जाओ । हमसे मिलना हो शरीर से बाहर आओ । कहोगे महाराज शरीर से बाहर आएँगे तो हमारा बचेगा क्या ? अरे इससे बाहर आने का मतलब कोई मरना नहीं है, शरीर से बाहर आने का मतलब है शरीर के अहंकार को छोड़ना । अहम् पुरुषो, अहम् स्त्री यह अहंकार से ही बोलते है । जब जन्म नहीं हुआ था तब क्या थे ?

यह शरीर रोज कह रहा है कि मैं तू नहीं हूं तू में नहीं । देखते २ बच्चा

बच्चा नहीं । कुमार २ नहीं । जवान २ नहीं । क्या मतलब निकला ? म बच्चा, तो तू बच्चा नहीं मैं कुमार तो तू कुमार नहीं । मैं जवान, तो तू जवान नहीं और मैं बुढ्ढा तो तू बुढ्ढा नही । मैं मरा तो तू मरा भी नहीं । उस ने कहा तू जैसे का तैसा ही है । तेरे मे कोई फर्क नहीं । सारे के सारे फर्क तो इस पंचभूतों के पुतले मे हैं । यह रबड का पुतला है सारे के सारे फर्क इस शरीर मे ही हैं । विवेकशील अपनी आत्मा का इस प्रकार निश्चय करे । यही तत्त्व है । उस परमात्मा ने ऐसा निश्चय करने के लिए मन की सृष्टि की । 'मनः तु दैवमचक्षुः' मन परमात्मा का दिव्य चक्षु है । मनन तो करना पडेगा । 'देवमाप्रक्रतं' आचार्य व्याख्या करते हैं अप्राकृतं । इतर इतरे असाधारण । मन परमात्मा का दैव चक्षु है । यह मन इतर इन्द्रियों की तरह नहीं है । इतर इन्द्रियां जो हैं उनमे क्या है : जैसे किसी को कुष्ट रोग होता है तो उसके हाथ भी सिकुड जाते हैं । हाथ जब यूं रहेगा तो उसमे उतनी ही चीज आएगी । इसी तरह यह जो दूसरी इन्द्रियाँ हैं यह बिषय को कहाँ तक पकड़ती है भला ? जाग्रत मे । वर्तमान मे सारी इन्द्रियाँ विषय को जाग्रत मे वर्तमान मे ही पकड़ती हैं । इस आंख को जरा बोलो कि मेरी ननंदेवी कल जो रूप देखा या, जरा दिखाओ तो । आँख कल वाले रूप को आज दिखाएगी क्या ? या एक महीने बाद भी यह होने वाला है क्या ? सारी इन्द्रियों का व्यापार केवल वर्तमान काल में है । न भूत काल मे न भविष्य मे । किन्तु मन का व्यापार तीनों कालों मे है । इसलिए श्रुति इस मन को दैवचक्षु कह रही है । इस मन को भूत काल के विषय का कहो तो भूतकाल के विषय को खडा कर देगा । भविष्य काल का कहो तो भविष्य के विषय को दिखा देगा और तुमको शोक मोह भी देगा । वर्तमान में तो है ही । वर्तमान मे तो यह सारी इन्द्रियाँ इस मन की body guards हैं । श्रुति है मनस्तु त्रिकाल बिषयमुपलब्धि करणं। आचार्य कहते है यह मन तो त्रिकाल के विषयों की उपलब्धि कराता है । किन्तु मन में स्वभाव से कोई दोष नहीं है । दोष आता है दोस्तों की संगति से । जैसे कोई हमारा दोस्त तो बन गया किन्तु है बड़ा क्रोधी । वो बात करते २ तुम पर क्रोध करने लगा । एक बार तुमने सहन कर लिया । दूसरी बार भी सहन कर लिया । किन्तु तीसरी बार जब क्र.ध से बोलेगा तो क्या करोगे ? तो क्रोध करना

पडगा । तो अब यह जो क्रोध तुम्हारे में आया, कहाँ से आया ? यह उस दोस्त की संगति से आया । यह दस इन्द्रियां क्या हैं ? यह मन के दोस्त हैं । जब इन दोस्तो से यह मन मिलता है तो इन के दोष मन में आ जाते हैं । चिन्ता, शोक भय, क्रोध सब आ गये । अब शोक करते रहो । मोह करते रहो । problem solue करते रहते हैं । इसी प्रकार उम्र भर हम लोग पार कर कर देते हैं । न लोभ गया, न क्रोध गया, न राग गया, न द्वेष गया । बस इसी तरह कहते हैं वो मर गया । जो मरा वो गया कैसे ? यह आत्मा अमर है तुम्हारीं । तत्त्व चिन्तन जब करेगा मुमुक्षु तो वो इस अविद्या से बाहर हो जाएगा । नाना प्रकार के विकार जो आए वो हट गये । ज्ञान स्वरूप ही आतमा है । कल और चर्चा करेंगे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१७-६-८८

प्रवचन सं०-७०

"ॐ आकाशो वै नाम नाम रूपयोर्निर्वहिता ते यदन्तरा तद्ब्रह्म तदमृतं स आत्मा प्रजापतेः सभां वेश्म प्रपद्ये यशोऽहं भवामि ब्राह्मणानां यशो राज्ञां यशो विशां यशोऽहमनुप्रापत्सि स हाहं यशसां यशः श्येतमदत्कमदत्कं श्येतं लिन्दु माभिगां लिन्दुमाभिगाम् ।।"

(छान्दो. ८-१४-१)

इस बात को निश्चय कर के आए हैं कि परमात्मा ने मनन करने के लिए मन की सृष्टि की । मननाय मनः परमात्मा ने मन की सृष्टि की मनन के लिए । मन का बड़ा महत्त्व बतलाया । यह मन त्रिकाल मध्यवर्ती वस्तु को ग्रहण करने वाला है । तीन काल में जो भी वस्तु होगी, उस वस्तु को मन ग्रहण करता है । इसलिए मन को परमात्मा का दिव्य चक्षु कहा । इस बात को कल कहा था कि यह मन दैव चक्षु है और जो इन्द्रियाँ है वो वर्त्तमान काल के विषय को ही पकडती हैं । भूतकाल के विषय को इन्द्रियाँ नहीं पकडती । भविष्य काल के विषय को इन्द्रियाँ नहीं पकड़ती इसका अर्थ क्या है कि इस काल को दीवार समझो । यह काल एक दीवार है । जैसे दीवार से परे की कोई चीज आंख से हमको नहीं

दीखती है ऐसे ही भूतकाल के विषय मे, भविष्य काल के विषय में काल की दीवार खड़ी है। उस दीवार को पार करेंगी तब उस विषय को पकड़ेंगी। काल के पर्दे में दूसरी इन्द्रियाँ शक्ति से रहित हो जाती हैं। किन्तु मन एक ऐसा यंत्र है कि इसको काल नही रोक सलता। काल इस को रोक नहीं सकता तो वो काल से सूक्ष्म है इसलिए इस मन को श्रुति दिव्य चक्षु कहती है। यह काल के द्वारा भी नहीं रुकता। दूसरी बात यह मन सूक्ष्म ग्राही है। मन सूक्ष्म तत्त्व को पकड लेता है। दुसरी इन्द्रिय स्थूल विषयग्राही है। विषय किसी आकार मे होगा तो इन्द्रिय पकडेंगी नहीं तो नहीं। इसलिए इन्द्रियों की शक्ति कम है। विवेकशील जगत के सारे भोगों को इन्द्रियों से पकडने की चेष्टा न करे। जगत का जो सार तत्त्व है उस सार तत्त्व की ओर मन को जाग्रत करे।

जगत का सार तत्त्व क्या है ? अपने शरीर से ही पूछो भाई साहब तुम क्यो प्यारे लगते हो सबको। खाना दाना भी तुमको हम बडा अच्छा देते हैं कपडे भी हम बढ़िया पहनाते हैं किन्तु तुम हम सबको प्यारे क्यों लगते हो ? तो क्या कहेगा यह शरीर ? कहेगा वो अन्दर वाला बैठा है इसलिए मैं प्यारा हूँ। आत्मा से ही यह शरीर प्यारा है। वो आत्मा ब्रह्माण्डात्मा है। उस ब्रह्माण्डात्मा को जाननेके लिए इन्द्र तीन बार गया है और एक सौ एक वर्ष तक तप किया भगवान प्रजापति के पास। इस बात को यहां मंत्र कहता है। 'तं वा एतं देव आत्माना-मुपासते' भगवान प्रजापति ने इन्द्र को जिस आत्मा का उपदेश किया। इन्द्र ने उस आत्मा को समझा। दूसरे देव भी उसी आत्मा की उपासना करते हैं आत्मानमद्यत्वेपि देवा उपासते।' भाष्यकार लिख रहे है कि उसी आत्मा की 'अद्यत्वेपि' अद्यत्व शब्द का अर्थ, आज भी जो देवता देवभाव में है। देवभाव का अर्थ ऐसा मत समझो कि स्वर्ग मे रहने वाले ही देवता हैं। मनुष्यों के अन्दर भी जो अपने मन को जाग्रत कर के इस चेतनात्मा की ओर जो चल रहे है। उन के अन्दर यह प्रज्ञा जाग्रत होगी कि ब्रह्माण्डात्मा क्या है। देखो, छान्दोग्य उपनिषद के चौथे अध्याय मे एक बडी सुन्दर कथा आई है। उपदेश है, इसमे सोलह कला पुरुष का वर्णन है। यह आत्मा षोडस कला है।

एक सत्यकाम नाम का लड़का है। उसका पिता है नहीं। मां है, माँ का नाम जबाला है। बडी अच्छी मां है। बच्चा जब बड़ा हुआ उसके अन्दर स्वभाव से इच्छा हुई कि मैं ब्रह्मचर्य धारण कर के वेदों का स्वाध्याय करूँ। मां से पूछा, मम्मी मेरा गोत्र क्या है ? मां बडी भोली थी कहती है कि युवावस्था मे मैं 'अहं वहुपरिचारिणी' बहुतों की सेवा मे रत रहती थी। इसलिए गोत्र के बारे मैंने तुम्हारे पिता से कभी गोत्र जानने की इच्छा ही नहीं की। 'यद्गोत्रस्त्वमसि अहं न जानाभि' तुम्हारे गोत्र को मैं नहीं जानती। तुम सत्य काम हो मैं जवाला हूँ। अपने गुरु से जाकर कह दो 'सत्यकामः जाबालोऽहमस्मि' हे भगवन मेरा नाम सत्यकाम है, मेरी मां का नाम जबाला है। हारिद्रुमत नाम के ऋषि हैं, उनके पास गुरुकुल में जाकर कहता है भगवन मेरा उपनयन संस्कार कर के मेरे को दीक्षित करो। 'गौतम वंशीय हारिद्रुमत ऋषि पूछते हैं 'किं गोत्रोऽसि' तेरा गोत्र क्या है ? हे भगवन् मैं गोत्र को नहीं जानता। कहते है अपनी मां से पूछो। बोला मां से पूछा था। मां ने कहा कि तेरा नाम सत्यकाम है मैं जवाला हूँ। गोत्र मैं नही जानती। इतना ही जानती हूँ। मां ने कहा था सत्यकाम जबला बोल देना। ऋषि बडे प्रसन्नन हुए और बोले तुम ब्राह्मण हो तुम ने सत्य को नहीं छोड़ा। नहीं तो आदमी झूठ बोलने की होशियारी करता है। 'त्वं सत्यं न त्यक्त्वा' तुमने सत्य को नहीं छोडा। इसलिए तुम ब्राह्मण हो। उस जमाने मे गुरु की कसौटी बड़ी जोंर की होती थी आजकल तो बेचारे गुरु भी ढीले हो गये है। उसका संस्कार कर दिया और कहा यह चार सौ गऊएँ खड़ी है, इनको जंगल मे लेजाओ तब सत्यकाम ने जब एक हजार न हो जाएँ तब तक वापिस नहीं आऊँगा ऐसा कहा। सोचो, हृदय मे बडीश्रद्धा है इतना सौम्य उसका हृदय है कि गौओं को बडी श्रद्धा से ले जाता है और उनकी सेवाशुश्रूषा करता है। चराता है। कभी गिनता भी नहीं। खाने पीने को और तों कुछ था नहीं गौओं का दूध निकाल कर पी लिया। गौओं को बडे प्यार से पालता है। एक दिन देवता प्रसन्न होकर ऋषभ रूप मे सामने आ गये। बैंल के रूप मे देवता बोलने लगे 'प्राप्ता वयंसहस्रम्' प्रापय आचार्या कुलम्' हे सौम्य हम एक हजार हो गये हैं। हमे गुरुकुल मे ले चलो। 'ब्रह्म ते प्रब्रवाणीति' मैं तुम को ब्रह्म का उपदेश करूँगा। सत्यकाम बोला हे भगवन् मेरे को ब्रह्म का उपदेश

करो। वहाँ सोलह कला पुरुष का बडा सुन्दर उपदेश हुआ है। उस रहस्य को यहाँ श्रुति स्पष्ट करती है। ऋषभ के रूप मे बैल के शरीर में प्रवेश कर के देवता उपदेश कर रहा है। हे सोम्य प्राची दिक् कला प्रतीचि दिक् कला, उदीचि दिक् कला, दक्षिण दिक् कला एताः प्रथमः पादः ब्रह्मणः। यह ब्रह्म का पहला पाद है। यह चार दिशाएँ ही तो तुम्हारा जीवन है। अगर दिशाएँ बन्द हो जाएँ तो तुम्हारा क्या जीवन है। तुम कहां जाओगें? कभी हम पूर्व दिशा मे जाते है, कभी पश्चिम कभी उत्तर कभी दक्षिण। यह चारों दिशाएँ प्रकाशवत् है। यह चारो दिशाएँ सब जीवों को जीवन देने वाली है। इद चारों दिशाओं का जो जीवन है वो ब्रह्म है। इसलिए इनको प्रकाशवद् कहा। इस प्रकार प्रकाश रूप मे जो ब्रह्म की उपासना करेगा करेगा वो 'प्रकाशवतो लोकाञ्जयति।' उन प्रकाशवान लोकों को प्राप्त करेगा। इसका अर्थ क्या हुआ? दिशाओं के रूप मे परमात्मा प्रकट हुआ। तुम्हारे सामने चार दिशाओं के रूप मे परमात्मा ही प्रकट हुआ। इसलिए मनुष्य किसी भी दिशा को पकडेगा तो जीवन ही मिलेगा। जैसे किसी भी जीवित मनुष्य को पकडोगे तो तुम्हें जीवन ही मिलेगा। मुर्दे को तुम पकडोगे तो तुमको क्या मिलेगा? ऐसे ही दिशाओं को यदि तुम पकडोगे तो तुमको जीवन मिलेगा और दिशाओं मे यदि जीवन नहीं होगा तो तुमको जीवन कहां से मिलेगा? हे सौम्य 'अग्निस्ते वक्तेति' आगे अग्नि तुमको उपदेश करेगा।

अब यह सत्यकाम गऊयों को लेकर गुरुकुल की ओर चल पड़ा। दिन भर चलता रहा। रात्रि को जहाँ डेरा डाल गऊयों को खडा कर के अग्नि जलाया। पूर्वाभि मुख होकर बैठ गया। हाथ जोड़ कर। उस समय अग्नि देव प्रकट होकर बोले हे सौम्य 'ब्रह्म ते प्रब्रमामि' हे सौम्य मैं तुमको ब्रह्म के दूसरे पाद का उपदेश करता हूँ सत्यकाम भी कहता है हे भगवन मेरे को ब्रह्म के दूसरे पादक का उपदेश करो। 'पृथ्वी कला, आन्तरिक्ष कला, समुद्र कला, द्यौकला अनन्तवद् ब्रह्मः' हे सौम्य यह ब्रह्म पृथ्वी के रूप में प्रकट हुआ। यह पृथ्वी इस की कला है। अन्तरिक्ष कला, द्यौ कला सूर्य मण्डल से ऊपर का भाग, इसको द्यौ लोक कहते हैं। और समुद्र कला। यह सब कैसे है? तो यह सब अनन्तवद् है। इनका अन्त नहीं। यह सब अनन्त है। पृथ्वी अनन्त है। ठीक है आज विज्ञान बहुत बढ गया है किन्तु

अभी तक इस पृथ्वी का पार किसी को मिला ? इसी तरह अन्तरिक्ष यह आकाश भी अनन्त है। द्युलोक भी कितना लम्बा चौड़ा है ? किसी को नहीं पता। यह द्युलोक भी अनन्त है। और समुद्र भी अनन्त है। यह चारों ही अनन्त है 'अनन्त वद् ब्रह्म,' यह चारों ही ब्रह्म की कला हैं। इस रूप से जो ब्रह्म की उपासना करेगा वो 'अननावतो लोकाञ्जयति' वो अनन्तवद् लोकों को प्राप्त करेगा। और अग्नि आगे कहता है हे सत्यकाम 'हंसस्ते तृतीयः पादं वक्तेति' हंस तेरे को ब्रह्म के तृतीय पाद का उपदेश करेगा। अग्नि ने यह उपदेश किया और यह यहाँ से चल पड़ा।

आगे रात्रि को जहाँ पडाव पड़ा सत्यकाम रुक गया। अग्नि जलाया और पूर्वाभिमुख होकर बैठ गया। प्राचीन काल में अग्नि के बिना कोई वैदिक क्रिया नहीं होती थी। इसने अग्नि जला कर नित्य कर्म किया और हाथ जोड कर बैठ गया। हंस नाम का देवता आया और बोला हे सोम्य 'ब्रह्मणः तृतीय पाद-वक्तास्मि' हे सत्यकाम मैं तेरे को ब्रह्म के तृतीय पाद का उपदेश करूँगा। 'ब्रवीतु मे भगवन्' हे भगवन् आप तृतीय पाद का उपदेश कीजिए। हंस नाम का जो देव है वो तीसरे पाद का उपदेश करता है। 'अग्नि कला, सूर्य कला, चन्द्र कला, विद्युत कला प्रकाशवद् ब्रह्म ज्योतिष्मद् ब्रह्म।' हे सौम्य यह ब्रह्म ज्योति रूप है, प्रकाश स्वरूप है। अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा और बिद्युत। इस प्रकाश रूप मे जब परमात्मा प्रकट हुआ तो अन्धकार दूर हो गया। कौन सा अन्धेरा ? यह रात्रि का अन्धकार। यह ब्रह्म का तृतीय पाद है जो इस ज्योति रूप ब्रह्म की उपासना करेगा वो 'ज्योतिष्मातो लोकाञ्जयति।' वो उन लोकों मे जाएगा जहाँ उसको प्रकाश मिलेगा, ज्योति मिलेगी। ऐसा मत सोचो कि स्वर्ण में उस ो ज्योति मिलेगी ? अपने जीवन मे अनुभव करो कि ज्योति कहाँ मिलेगी ? ज्योतिष्मान यह मनुष्य लोक है। इस मनुष्य लोक मे जब यह जन्म लेगा तो इसको कोई ज्योति मिलेगी। ज्ञान ज्योति भी मिलेगी। कोई गुरु मिलेगा कोई शास्त्र मिलेगा। सत्सङ्ग मिलेगा। ज्ञान का सा न मिलेगा। बाँकी योनियों मे तो केवल भोग मिलेगा ? ज्ञान नहीं मिलेगा। इसलिए यह मनुष्य जन्म ही महान है। यह ज्योतिष्मान् लोक है।

यह मनुष्य लोक ज्योतिष्मान् लोक है इसलिए इस मनुष्य शरीर का लक्ष्य है अपने अन्दर ज्ञान ज्योति को प्रकट करना। केवल भोगों का बाजार लगा कर आंख बन्द कर के जाना नहीं है। ज्ञान ज्योति को प्रकट करना है। ज्ञान ज्योति को प्रकट कर लोगे तो जीवन सफल हो जाएगा। ज्ञान नहीं है तो कुछ भी नहीं है। इसी तरह चला जाएगा। इस प्रकार हंस ने सत्यकाम को ब्रह्म के तीसरे पाद का उपदेश किया और अन्त में हंस क्या बोलता है कि हे सत्यकाम जाबाल इस जगत मे अन्धेरे को दूर करने के लिए परमात्मा इस रूप मे प्रकट हुआ। आगे कहा कि'मद्गुस्ते चतुर्थपादं वक्तेति' मद्गु नाम का एक जलचर पक्षी है। एक चिडिया विशेष होती है जो जल मे ही रहती है। उस शकल मे देवता तुमको ब्रह्म के चतुर्थ पाद का उपदेश करेगा। जहाँ सत्यकाम को फिर रात्रि आई उसने डेरा डाला। अग्नि जलाया। नित्य कर्म किया और हाथ जोड़ कर अग्नि के सामने पूर्वाभिमुख होकर बैठ गया। मधबु नाम का पक्षी विशेष जो है, देवता उस रूप मे प्रकट होकर बोला सत्यकाम 'ब्रह्म ते प्रब्रवाणाति' मैं तेरे को ब्रह्म का उपदेश करता हूं। 'ब्रवीतु मे भगवन्' हे भगवन् आप मेरे लिए ब्रह्म का उपदेश करे। मद्गु नाम का जलचर पक्षी कहता है 'प्राण कला, चक्षुःकला, श्रोत्रकला, मनश्यः कला।' यह ब्रह्म का चतुर्थ पाद है। चौथी कला है।

पहले कहाँ उपदेश लिया? दिशाओं पकडा। नम्बर दो मे पृथ्वी अन्तरिक्ष, द्यौ और समुद्र को पकडा। तीन नम्बर मे प्रकाश प्रधान अग्नि,सूर्य, चन्द्रमा और विद्युत को पकड़ा और चौथे नम्बर मे प्राण को पकडा इन्द्रियों को पकडा। लौट कर आ गया। प्राण उसकी कला है। प्राण को जब धारण किया तब वो शरीर धारी बना। चक्षु को कला कहा, श्रोत्र को कला कहा। प्राण के साथ इन्द्रियों को पकडा। किन्तु प्राण के साथ चक्षु श्रोत्र इतने से काम नहीं चला तब मन को पकडा। 'आयतनूवद् ब्रह्म' आयतन माने आश्रय। प्राण आश्रय है तुम्हारा अगर प्राण इस शरीर को रख देगा तो कौन उठाएगा इस शरीर को? आंख तुम को धारण कर रही है? रास्ते मे जा रहे हो, पैर को कहाँ रखना है? कौन धारण कर रहा है? आंख? कान है सुनने के लिए, कान से जो सुना है उसके अर्थ को कौन पकड रहा है? इन सबको मन पकड़ रहा है तो मन आयतन है।

मन ही सर्वोपरि है । यह सब मिला कर कितनी कलाएँ हो गईं ? सोलह । यह षोडश कला पुरुष विराटात्मा है । यह विराटात्मा है परमात्मा । इसको अपने हृदय में मिलो । इसलिए गुरु उपदेश करता है 'ब्रह्मासि सौम्य' हे सौम्य तू ब्रह्म है बाहर घूमने से क्या होगा ? इस तरह जब अन्दर आकर पहुंचा वो सत्यकाम, प्रसन्न हो गया । सत्यकाम बड़ा निर्मल था । पांचवे दिन गऊएं लेकर गुरुकुल मे पहुंचा तो गुरु उसके मुँह की ओर देख कर बोले बेटा 'ब्रह्म विद्धि'।

देखो ! चोर के face को देखो तो मालूम पड़ता है कि यह चोर है । दो लड़के हैं, एक पढा लिखा है, एक मूर्ख है । जो पढा लिखा है उसके face को देखते ही स्पष्ट हो जाता है कि यह पढा लिखा है । जो पढा लिखा नहीं उस के face को देखो तो मालूम पड़ता है कि यह यों ही है लठधर । ऋषि ने देखते ही झट जान लिया । हे सौम्य तुम तो ब्रह्मवेत्ता जैसे लग रहे हो । किसने तुमको दिया है ? यह बोला गुरुदेव मैं आपका शिष्य हूं । मुझे किसी मनुष्य ने उपदेश नहीं दिया । देवताओं ने मेरे को उपदेश किया है । आप भी मेरे को उपदेश करो। ब्रह्मवेत्ता जब ब्रह्म का उपदेश करता है तभी यह विद्या वीर्यवती अर्थात् शक्तिशाली होती है ।

इस प्रकार इन्द्र को भगवान प्रजापति ने इस ब्रह्म का उपदेश किया । वे ब्रह्म का उपदेश करते हुए कहते हैं । 'तंवा एते देवा आत्मानमुपासते' देवा माने जो देव प्रकृति के मनुष्य है और मान लो जो स्वर्ग के देवता भी हैं, वो इसी ब्रह्म की उपासना करते हैं जिस ब्रह्म का उपदेश हमने तेरे को किया है । 'तस्मात्तेषां सर्वे च लोका आत्ता:' परमात्मा क्या है 'आत्ता:' चराचर ग्रहणात् चर और अचर जितने भी जीव है, चर माने चलने वाले, अचर माने जड़, एक जगह रहने वाले, यह परमात्मा इनका आत्ता: माने खाने वाला है । यह बताओ यह बताओ यह इतना दालभात जो खाते हो, यह शरीर खाता है कि और कोई खाता है ? वो अगर अन्दर नहीं है तो एक चावल भी अन्दर जाएगा ? नहीं जाएगा । इसलिए कहा यह परमात्मा 'आत्ता:' है । सर्वे च कामा: स सर्वांश्च लोकानाप्नोति' ऐसा ज्ञानवान जो होगा वह सम्पूर्ण लोकों को प्राप्त कर लेगा । सम्पूर्ण लोकों को प्राप्त कर लेगा । ऐसे तत्त्वज्ञान मे पहुंच जाएगा तो उसकी सम्पूर्ण कामनाएँ

माने सारी वासनाएँ पूरी हो जाएँगी । वासनाएँ अधूरी तब तक है जब तक हम मन के चक्कर मे, गोल मे घूमते हैं । मन से ऊपर उठ जाओगे तो कौन सी बासना है ? जैसे उदाहरण के लिए चिन्ता, शोक भय जब तक निद्रा मे नहीं जाओगे तभी तक है । निद्रा मे गये तो किन्तु अर्ध निद्रा मे चले गये तो वहाँ भी शोक, मोह, चिन्ता, भय होगा । जब sound sleep मे चले गये, गाढ निद्रा मे पहुंच गये तो वहाँ भय, शोक, मोह, चिन्ता कुछ भी नहीं है । मन से ऊपर चले गये । वहाँ न कोई भय है, न चिन्ता है, न शोक है और न मोह है । अब आनन्द ही आनन्द है । इसी तरह ज्ञान की ऊंची भूमि पे जब पहुंच जाओगे तो वहाँ यह संसार के शोक मोह देने वाले पदार्थ अगल बगल मे तो रहेंगे किन्तु तुम्हारे को परेशान नहीं करेंगे । कोई भी पदार्थ जब हम मन से पकडते है तभी शोक मोह देता है । जबरदस्ती कोई शोक मोह नही देता । जो विवेकशील हैं, सत्सङ्गी हैं, इस सत्य को समझ जाते हैं कि 'आत्मैवाऽहमस्मि, ब्रह्मैवाऽहमस्मि' वो इस ससार के पदार्थों से व्यवहार करते हुए भी इन पदार्थों से अपने को जुदा रखते हैं । उनमे अब कोई इच्छा नहीं रहती । इसी बात को भगवान प्रजापति पहले भी कह कर आए है 'सर्वांश्च कामान् स सर्वांश्च लोकानाप्नोति' कि जो इस ब्रह्म को इस प्रकार जान जाता है उसको सर्व लोकों की सिद्धि हो जाती है । जब इस शरीर के अहंकार से बाहर चले जाओगे तो ब्रह्माण्डात्मा मे पहुंच जाओगे तो सर्वान् लोकानाप्नोति अब कौन सी इच्छा अधूरी । जब आत्मभाव में चले गये तो किससे क्या लेना और क्या देना है । लेन देने का भाव तो स्थूल शरीर तक ही है । बुद्धिमान जीवन के इस रहस्य को पकडे ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१८-६-८८

प्रवचन सं० ७१

"ॐ तद्धैतदब्रह्मा प्रजापतय उवाच प्रजापतिर्मनवे मनुः प्रजाभ्य आचार्यकुलाद्वेदमधीत्य यथाविधानं गुरोः कर्मातिशेषेणाभिसमावृत्य कुटुम्बे शुचौं देशे स्वाध्यायमधीयानो धार्मिकान्विदधदात्मनि सर्वेन्द्रियाणि सम्प्रतिष्ठाप्याहिंसन्सर्वभूतान्यन्यत्र तीर्थेभ्यः स खल्वेवं वर्तयन्यावदायुषं ब्रह्मलोकमभिसम्पद्यते न च पुनरावर्तते न च पुनरावर्तते इति ।।"

(छान्दो.८-१५-१)

विचार चल रहा है 'तं वा एतं देवा आत्मानमुपासते' प्रजापति ब्रह्मा ने इन्द्र को उपदेश दिया है कि हे इन्द्र यह आत्मा ब्रह्म है, यह आत्मा सर्व पापों से विनिर्मुक्त है। जिस आत्मा को इन्द्र ने भगवान प्रजापति के द्वारा ब्रह्म कर के जाना और भय से मुक्त हो गया। कहते हैं इस आत्मा को श्रद्धाशील मनुष्य 'तं आत्मानमनुविद्य' बुद्धिमान मनुष्य शास्त्र और गुरु के द्वारा इस आत्मा के ब्रह्मभाव को प्रकट करे, स्पष्ट करे। स्पष्ट क्या करना है? ब्रह्मभाव को स्पष्ट करना है। अगर ठीक से समझो तो अहं अहं रूप से अहमाकार वृत्ति जो हो रही है इस वृत्ति के द्वारा अहमास्पद आत्मा का रूप अनावृत है। कोई आवरण नहीं। जिसको ब्रह्म कहते है वो ब्रह्म भी अपने स्वरूप मे अनावृत है। उसको माया आवृत नहीं कर

सकती । तो सोचना पडेगा कि आवृत कौन है । आवरण किसका है ? कौन पर्दे मे जाकर अपने को जीवभाव मे देख रहा है । तो कहना पडेगा कि जीव यद्यपि अहंरूप से तो अनावृत है किन्तु जीव का जो ब्रह्मभाव है वो आवृत है वो पर्दे मे है इसलिए इस ब्रह्मभाव को श्रुति स्पष्ट करती है । गुरु से इस ब्रह्मभाव को समझना है । कहीं आना नहीं जाना नहीं । इसलिए श्रुति कहती है 'यस्तमात्मानमनुविद्य विजानाति स सर्वान् लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामान्' सम्पूर्ण लोकों में उस का आत्मभाव हो जाएगा आत्मा का ब्रह्मभाव जो आवृत है, उसको स्पष्ट समझ गया तो वो सम्पूर्ण लोकों को प्राप्त कर जाएगा । जैसे यह अपना शरीर है, इस शरीर मे जब यह स्पष्ट हो है कि यह मैं हूं, तब कहीं जरा सी चोट लगती है पांव मे, तो अनुभव होता है कि नहीं । सिर मे अगर कहीं कोई कीड़ा आदि घूमता है तो उसका अनुभव होता है, क्योंकि हमने अपने को इस सारे में लपेट लिया है । इसलिए इस शरीर में अगर कहीं भी कुछ होता है उसकी feeling हो जाती है कि अमुक जगह पर यह हो रहा है ।

ऐसे ही यह महान ब्रह्मवेत्ता जिसने इस आत्मा के ब्रह्मभाव को ग्रहण कर लिया है वो सम्पूर्ण लोको की आत्मा बन जाता है इसलिए कहा 'सर्वांश्च लोकानाप्नोति सर्वांश्च कामान्' वो सम्पूर्ण लोकों को प्राप्त कर जाता है । उसकी सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं । इसका अर्थ क्या है ? दर असल मे यह तो थोडा सा प्रजापति ने लोभ दिया कि ऐसी ब्रह्मविद्या को अगर तुम प्राप्त करोगें तो जो इच्छा करोगे, पा जाओगे । यहां पाने की बात कुछ नहीं । जब सर्वात्म भाव तुमने प्राप्त कर लिया तो तुम्हारी कोई अधूरी नहीं रहेगी । सम्पूर्ण इच्छाएँ तुम्हारी खत्म हो जाएँगी । जब इच्छाएँ खत्म ही हो गाई तो उनकी सिद्धि हो गई कि नहीं । जैसा इन्द्र को भगवान प्रजापति ने इस आत्मा को समझाया और इन्द्र ने एक सौ एक वर्ष तक तप कर के उस ब्रह्मभाव को ग्रहण किया, ऐसे ही आज भी जो श्रद्धाशील मुमुक्षु आचार्य से, श्रोत्रिय ब्रह्मवेत्ता से आत्मा को ब्रह्म कर के जानेगा वो सर्वात्म भाव मे चला जाएगा । इसी प्रसंग को आगे श्रुति कहती है 'श्यामाच्छबलं प्रपद्ये शबलाच्छ्यामं प्रपद्येऽश्व इव रोमाणि विधूय पापं चन्द्र इव राहोर्मुखात्प्रमुच्य धूत्वा शरीरमकृतं कृतात्मा ब्रह्मलोकमभिसम्भवामि'

आचार्य कहते है कि इस मंत्र को पढने का अभिप्राय क्या है ? 'पावनः' यह पवित्र करने वाला मंत्र है । 'जपार्थश्च ध्यानार्थौ व' यह मंत्र जप के लिए अथवा मंत्र का अर्थ जो है वो ध्यान करने के लिए है । जहाँ कर्म मीमांसा आती है वहाँ पर कहा 'यस्यै देवतायै हविर्ग्रहीतुमस्यात तस्यन तां मनसा ध्यायथ वशं करिष्यत्' मीमांसा मे विचार आया कि यज्ञादि कर्म में जिस देवता के लिए तुम हवि तो हाथ मे 'इन्द्रस्य इदंहवि' तो इन्द्र कौन है ? उसके स्वरूप का वर्णन करने वाला मंत्र है उस मंत्र का अर्थ यजमान को भी आना चाहिए और पुरोहित को भी आना चाहिए । तब तो पुण्य है । उसका फल पूरा होगा । और मंत्र तो पढा किन्तु देवता का स्वरूप सामने आया नहीं तो हवि तुमने किसको दिया ? इसलिए मीमांसा मे यह भी कहा कि अर्थ का ज्ञान होना चाहिए । 'अथातो धर्मजिज्ञासा' महर्षि जैमिनी का सूत्र है यह 'धर्माभिलाषा' धर्म क्या है ? वेद मंत्र और मंत्र का जो अर्थ है वो धर्म है । उस अर्थ को समझने के लिए प्राचीन काल मे तो यजमान भी पढा लिखा होता था । पुरोहित भी । किन्तु काल क्रम के प्रभाव से आज दोनों ही कंठस्थ है । यजमान भी कठस्थ है, पुरोहित भी कंटस्थ है । इसलिए महाराज कर्म तो हुआ किन्तु फल कुछ हुआ नही । अधूरा हो गया । लड़का तो जन्मा किन्तु आंख एक । उसको क्या कहोगे ?

इसलिए मंत्रार्थ को जानना चाहिए । भावार्थ को जानना चाहिए । नहीं तो फल पूरा नहीं होगा । यहाँ तक निषेध किया कि 'मंत्रार्थानाऽभिज्ञेन पुरुषाः संचारिता न श्रवणीया' वेदमंत्र का उच्चारण भी करे तो सुनोमत । उससे कोई लाभ नहीं । यहाँ पर यह कहा कि यह मंत्र बडा पवित्र है 'जपार्थश्च ध्यानार्थश्च' जप का मतलब यह नहीं कि माला लेकर जप करना है । पवित्र भाव से पढने का नाम जप है । या इस मंत्र के अर्थ को समझ कर ध्यान करने के लिए कहा । क्या ध्यान करो ? आचार्य व्याख्या करते हैं 'श्यामाच्छबलं प्रपद्ये' 'श्याम इव श्यामो हार्दं ब्रह्म' श्यामो गम्भीर वर्णः । श्याम शब्द जो है यह बडा गम्भीर है । श्याम नाम कृष्ण का भी है । श्याम नाम क्यों रखा ? गम्भीर वर्णः । गम्भीर वर्ण है। यह गम्भीर क्या है ? गम्भीरत्व का अर्थ इतर वस्तु इस मे आ ही नहीं सकती । और रंगो मे तो दूसरे रंग मिल जाते हैं, किन्तु श्याम वर्ण मे दूसरा वर्ण मिल ही

नहीं सकता । श्याम रंग में दूसरा रंग नहीं मिल सकता । यह श्याम रंग ऐसा है कि किसी को अपने मे मिलने नहीं देगा और जो मिलेगा वो. श्याम ही हो जाएगा । इसलिए आचार्य कहते है 'श्यामो गम्भीर वर्णः । लोग समझते है चमडी चिट्टी होगी तो सुन्दर होगा । किन्तु उनको पता नहीं कि चिट्टी चमडी मे काला दाग लग जाए तो जैसे आकाश में तारा नहीं चमकता, काले मे सफेद ऐसे दीखता है ।

आचार्य आगे कहते हैं 'श्यामवर्णो हार्द ब्रह्म' हृदय के अन्दर जो ब्रह्म है वो ही तो श्याम है । इतर इन्द्रियऽग्राह्यत्वं यहाँ गम्भीर का अर्थ बताया कि इन्द्रियां इसको ग्रहण नहीं करती । मन से इतर जो इन्द्रियाँ है वो इस श्याम की ग्रहण नहीं करती । तो गम्भीर हो गया न । हृदय मे जो हार्द ब्रह्म है हार्द माने हृदय में अहं २ रूप से भासने वाला यह हार्द जो ब्रह्म है इसको कोई ग्रहण नहीं कर सकता । देखो, अप्रत्यक्ष होने के छः कारण है अतिदूरात्, समीप्यात् इन्द्रिय घातात् मनोऽनवस्थानात्, व्यवधानात् अप्रत्यक्षं । सांख्याचार्य कहते है वस्तु अप्रत्यक्ष कब होती है, माने वस्तु दीखती कब नहीं ? कहते हैं अति दूरात् । जैसे महान आकाश है, बडा हैवीजैट उड़ा, कुछ दूर तक तो दीखेगा आकाश मे, किन्तु इस महान आकाश मे जब दूर चला जाएगा तो नहीं दीखेगा । यद्यपि वो किसी पर्दे के अन्दर नहीं है, अनावृत है, तो भीं महान आकाश मे वो हम को दिखाई नहीं देगा । अति दूरात् । बहुत दूर हो गया इसलिए कहा 'अतिदूरात् अप्रत्यक्षं ।' वस्तु जब अति दूर हो जाती है तो दिखाई नहीं देती अप्रत्यक्ष हो जाती है । अति समीप्यात्' अति समीप होने से भी वस्तु नहीं दीखती । उदाहरण के लिए जैसे आंख मे काजल लगाओ और अपनी आंख से कहो नैनादेवी जरा देखो तो सही यह काजल कैसा लगा है ? तू तो देखने मे बडी चतुर है न । तो जैसे आजकल की पढी लिखी लडकियाँ नहीं होती, मम्मी ने कहा बेटी जरा स्टोव जला दे । तो कहेगी न मम्मी मुझे तो lesson तैयार करना है । स्कूल का पाठ पढना है, स्टोव जलाने का time नहीं है । जो घर का काम करने को तैयार नहीं है office मे तो दिन लटकी रहेगी कुर्सी के उपर किन्तु घर का जरा सा काम करने को तैयार नहीं । ऐसे ही यह तुम्हारी नैनादेवी दूर का तो देखने मे बडी चतुर है

किन्तु उससे बोलो जरा काजल देख कर बताओ तो कैसा लगा है ? तो इसको वो नहीं देखेगी । क्यो अति सामीप्य हो गया । कहेगी शीशा ले आओ तो मैं देखूंगी शीशे मे देखा तो सही किन्तु यह बताओ कि शीशे मे असली आंख को देखा कि नकली आंख को ? कज्जल भी असली नहीं देखा' नकली ही देखा । नकली को देखकर ध्यान किधर करना है ? असली की ओर । तो नकली को देखकर असली को ठीक करना है ।

आचार्यो की यह भी एक परम्परा है 'असतिस्थित्वा वर्तमाने ततः सत्यं समीक्षते' असत मार्ग में खडे होकर सत्य मार्ग की समीक्षा करो । मार्ग शब्द का अर्थ है, 'मृग्यति अनेन इति मार्गः' यह तुम्हारा शरीर जो है यह मोक्ष मार्ग है । और शरीरों मे मोक्ष की खोज नहीं नहीं होती । मोक्ष की खोज होती है मनुष्य शरीर मे । केवल मनुष्य शरीर मे बैठ कर इस सत्य की खोज करो । उस सत्य की समीक्षा करो । इसलिए कहा 'असनि वर्तते स्थित्वा' प्रिय अप्रिय भोगों को ही मत पकडो । इनको तो पशु पक्षी भी पकड रहे हैं । हम भी पकड रहे है । इसमे क्या फर्क है ? मनुष्य सत्य की खोज करे । तो अति समीप होने से यह इन्द्रियों का विषय नहीं और इन्द्रियों का दोस्त जो मन है उस मन का विषय नही । इस का क्या अर्थ हुआ ? जो बहिर्मुखी इन्द्रियां है और इनका साथी जो वहिर्मुखी मन है वो भी विषयों को ही पकड़ता है । उस मन का यह विषय नहीं किन्तु जो अन्तर्मुखी मन है, शुद्ध मन, जैसे श्रुति है

यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम्
तदेव ब्रह्म त्व विद्धि नेदं यदिदमुपासते ।
मनसैवेदमाप्तव्यं नेह नानास्ति किंचन,
मृत्योः स मृत्यु गच्छति य इह नानेव पश्यति ।।

एक श्रुति है कि यह मन से नही होगा । दूसरी श्रुति कहती है 'मनसैवेदमाप्तव्यं' इसे मन से ही प्राप्त करो । तो विचार तो करना पडेगा कि जो मन इन्द्रियों से बाहर के विषयों को पकडने बाला होगा वो बहिर्मुखी मन होगा । यह बहिर्मुखी मन इस आत्मा से दोस्त नहीं कहेगा । आत्मा को नहीं पकडेगा । किन्तु जो मन ब्रह्मविद्या के सस्कारों से युक्त होगा 'ब्रह्मणइदम्ब्रह्म'नो ब्रह्म को ग्रहण करने वाला

ब्राह्मी मन होगा। यह मन ध्यान मे ब्रह्म की ओर चलेगा, आत्मा की ओर चलेगा। बेटा मन से ही इस आत्मा को प्राप्त करो। और कोई इन्द्रिय काम नही करेगी। 'मन सै वे दमाप्तव्यं' यह दूसरी जो इन्द्रियाँ है इनको stop कर दो। दूसरी इन्द्रियों को ब्रेक मारने का नाम ही तप है। इसलिए कहा 'मनसैवेदम्' 'नेह नानास्ति चिंचन' 'न इह' इह माने ब्रह्मणि। इस ब्रह्म मे नाना भेदों से मुक्त कोई वस्तु नहीं। नाना भेदवत् कोई वस्तु नहीं। 'मृत्योः स मृत्यु गच्छति' वे तो बार २ जन्म मरण को प्राप्त करेगा। 'य इह नानेव पश्यति' जो यहां भेदवत् वस्तु को देखेगा। अभेद मे जो भेद को देखेगा। जो चलते २ अपने को दो कर के देखने लगे तो उसको क्या समझोगे ? कहोगे यह तो पागल है या यह भयभीत है। इसको दूसरा नजर आता है। इसी तरह इस जगत के अन्दर भी जिसको दो नजर आता है या तो वो पागल है या वो भ्रम मे घूम रहा है। उसको सत्य दर्शन हुआ नहीं। इसलिए अति दूरात समीप्यात् इन्द्रियघातः। इन्द्रिय का घात होने से भी वस्तु दिखाई नहीं देती। जैसे आँख है, चोट लग गई तो आंख खराब होने से बस्तु नहीं दीखेगी। मनोऽनवस्थानात्। मन अन्यमनस्क हो अथवा मन कहीं अन्य जगह हो। कहीं जा रहे है, सांप सामने आ रहा था किन्तु हम किसी दूसरी चिन्ता में थे, देखा ही नहीं। ज्यों पास पहुंचे तो जोर से चिल्लाए। सौक्ष्म्यात् यह तुम्हारी जो आत्मा है अति सूक्ष्म है। सूक्ष्म होने ने मन जल्दी इसका अनुभव नहीं कर पाता। किन्तु धीरे २ मन जब ब्रह्माकार वृत्ति मे चलता है तो 'आत्मैवाहमस्मि ब्रह्मैवाऽहमस्मि' सूक्ष्म सूक्ष्मतर होते २ अनुभव करने लगता है 'नाहं देहादि संघातः' अयमऽहमस्मि देहादिबिलक्षणः। स्थूल सूक्ष्म कारग इन तीनों शरीरों से बिलक्षण यह आत्मा मैं हूँ।

श्रीमद्भागवत के ग्यारहवें स्कन्ध मे भगवान कृष्ण इस सत्य का उपदेश उद्धव को करते हुए कहते हैं :- 'विलक्षण स्थूल सूक्ष्मात् देहात् आत्मैक्षत' हे ऊद्धव यह तेरी आत्मा स्थूल से विलक्षण 'स्वदृक्' अन्तरात्मा सत् चित् आनन्द स्वरूप है। स्वयं प्रकाश है। स्थूल से, सूक्ष्म से और कर से भी विलक्षण है। जैसे अग्नि, जितनी लकडियां सामने करते जाओगे, अग्नि जलाता जाएगा। माने लकडियाँ जुदा और अग्नि जुदा। ऐसी वो तुम्हारी अन्तरात्मा है। भगवान कृष्ण

गीता मे कहते हैं नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः कहते हैं यह सूक्ष्म स्वरूप होने से अज्ञानी प्राणी है उनके प्रकाश मे हम नहीं आते हैं कहते हैं क्या ? बोले योगमाया 'समावृतः' । योग माया हमको ढक कर रखती है जिससे ऐरा गैरा हमको नहीं देख पावें । जैसे माताएँ छोटे बच्चों को, चार पांच महीने के बच्चों को जो कहीं ले जाना हो तो ऊपर से ढक लेती है । यहाँ एक काला दाग भी लगा देती हैं कि यह किसी को दीखे नहीं और दीखे भी तो नजर यहीं रुक जाए । मेरे लाल के ऊपर किसी की नजर नहीं पडे । बचाया कि नहीं उसको ? पहले तो मुँह ही ढक कर रखा है और ऊपर से लगाया काला टीका । तो इस माया को क्या समझते हो ? इस ब्रह्म को कोई नहीं देखे । ऐरा गैरा यों ही मुफ्त मे चलते फिरते इसको कोई नहीं देखे । वो ही मुमुक्षु इसको देखे जिन्हों ने ब्रह्मविद्या के द्वारा बुद्धिमान आचार्य के मुख से ब्रह्म स्वरूप को समझा है । इसलिए कहा 'नाहं प्रकाशः सर्वस्य' 'मूढोऽयंनाभिजानाति लोकोमामजंव्ययं' मूढा मुह्यमति विषये विषयों मे जो मोहित हो जाते है । विषयों मे मोह को पकड कर बैठ जाते हैं, बिषयों से बाहर कौन है इसको नहीं देखता । मूढ जो लोग है यह मेरे को नहीं जानते । यह सूक्ष्म तत्त्व है इसको मूढ प्राणी नहीं जान सकेगा ।

यहाँ कहा 'हार्दं ब्रह्म' यह हृदय के अन्दर अहं २ रूप से भासने वाली यह महान ब्रह्म 'दूरावग्राह्य' है बडी कठिनाई से प्राप्त होने वाला है । जैसे समुद्र के अन्दर गोता लगाना बडा कठिन है, ऐसे हृदक के अन्दर इस ब्रह्म से मिलना बडा कठिन है । 'अत्यन्त दूरावग्राह्यत्वात्' इसलिए मुमुक्षू श्रुति और बुद्धिमान आचार्य के द्वारा इसको जाने । पहले शब्दे के द्वारा सुने । ध्यान से सुने । 'श्रुतं हरति पापानि' श्रवण पापों का हरण करता है । किन्तु केवल इतना ही न करे, सुन कर इसका ध्यान भी करे । तस्मात् श्यामाच्बलं शबलं शब्द का अर्थ है यह जो महान ब्रह्म है 'श्यामं प्रपद्येऽश्व इव रोमाणिविधूय पापं' इस ब्रह्म मे तुम्हारा मन जब पहुँच जाएगा तो तुम्हारी अनन्तानन्त कामनाएँ पूर्ण हो जाएँगी 'अरण्यामि अनेक कामं ···धावय' कोई विशाल जंगल है । उस जंगल मे क्या नहीं है ? उस जंगल मे सारी चीजें पडी हुई हैं । इस महान ब्रह्म मे सारी चीजे पडी हुई हैं । मुमुक्षु जो इच्छा करेगा उसको सब कुछ मिलेगा । महान ब्रह्मलोक मे

जब यह पहुंचेगा तो श्रुति दृष्टान्त देती हैं 'अश्व इव रोमाणि विधूय पापं' अश्व माने घोडा, जैसे घोडे के ऊपर चढो और खूब दौडा कर ले जाओ और फिर उसे बांध दो तो घोडा अपने शरीर को हिलाएगा। इसका मतलब क्या है? कि उस का रोम २ झड जाता है। तो प्रत्येक रोम मे जो धूल है वो झाड देता है। कहते हैं कि तू भी जरा हिलो। जरा अपने को झटको हिलाओ। जब उस ब्रह्म को समझ जाएगा तो जन्म जन्मान्तर के जो धर्माधर्म तुम्हारे अन्दर भरे पडे है वो झाड जाएँगे। घोडा जैसे धूल को झाड देता हैं तुम धर्माधर्म झाड दोगे। तेरे जन्म मरण का हेतु क्या है? यह धर्माधर्म। जब तू इन धर्माधर्मों को झाड देगा तो तेरा जन्म मरण भी खत्म हो जाएगा।

घर से निकले बाहर, इतने मे कोई दोस्त मिल गया। उसने पहले तो shake hand किया और फिर फिलम का टिकिट पकडा दिया हाथ मे। अब तुम छुडाना भी चाहो तो छुडा नहीं सकते। इसी तरह यह धर्म। जैसे ही तुम धर्मशाला से बाहर निकले तो वो पकड कर अपनी धर्मशाला में ले जाएगा। अपने लोक मे ले जाएगा। वहाँ से निकले तो आगे दूसरा दोस्त पाप खडा है। उस पाप ने तुमको अपने park में ले जा है। इस तरह यह धर्माधर्म इस जीव को पकडे रहते हैं। यह इस जीव को अपनी इच्छा के अनुसार नचाते रहते हैं। यही जीव के बडे भारी दुश्मन हैं। यही तुम्हारे बन्धन के कारण हैं। इसलिए इनसे छुट्टी पाने के लिए इस शबल ब्रह्म को, श्याम ब्रह्म को जब तुम समझ जाओगे तो जैसे घोडेने अपनी धूलि को झाड दिया तुम अपने धर्माधर्म को दूर कर दोगे। 'विधूय पापं' पाप शब्द का अर्थ यहाँ पाप पुण्य दोनों से है। दूसरा दृष्टान्त देते है 'चन्द्र इव राहु' ग्रहण लगा तो हमको ऐसे लगा जैसे चन्द्रमा को राहु ने ग्रहण कर लिया है। अगर सच पूछो तो राहु नाम कोई देव नहीं है। वो तो छायामात्र है। जहाँ और सूर्य के बीच ने पृथ्वी आ गई तो पृथ्वी की छाया चन्द्रमा पर पडी तो राहु कह देते हैं। किन्तु वो छाया भी महत्त्व रखती है चन्द्रमा को ढक लेती है। देखने नहीं देती। दिन मे सूर्य ग्रहण लगता है। रात्रि मे यदि चन्द्रमा पूर्णिमा मे है तो यह छाया चन्द्रमा को ढक लेती है। देखने नहीं देती दिन मे सूर्य ग्रहण लगता है तो अन्धेरा हो जाता है। तो कम

महत्त्व की छाया नहीं है । तों जैसे इस छाया से चन्द्रमा और सूर्य की मुक्ति ऐसे ही अविद्या रूपी राहु से और नाना कर्म रूपी बन्धन से तुम अपनी मुक्ति करो । 'शरीरंऽकृतमकृतात्मा ब्रह्मलोकं सम्मवामि' मुमुक्षु के लिए मंत्र कहता है यह तो तत्त्व है तेरी आत्मा, यह कैसी है ? 'अकृतं' इसका कोई कर्त्ता नहीं । यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है । इसका कोई उत्पन्न करने वाला नहीं । इसका कोई जनिता नहीं ।

'न तस्य करणं कार्यं च विद्यते, न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते, परास्य शक्ति र्विविधैव श्रूयते, स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया वा श्वताश्वतरोपनिषद की की श्रुति है इस महान ब्रह्म का कोई कारण नहीं । इसका कोई कर्म भी नहीं । जैसे स्वप्न में तुम बडे २ शहरों मे घूमते हो, विशाल जंगल मे भी घूमते हो । उसके लिए तुमने कुछ किया थोडे ही है । किन्तु तुम्हारे सहज स्वभाव के द्वारा वो जंगल खडा है । बडे २ शहर खडे है इसी तरह 'न तस्य कार्यं न करणं' माया स्वभाव के कारण यह प्रपंच खड़ा है । मंत्र कहता है कि महान जो ब्रह्म है उसके समान भी कोई नहीं उससे अधिक भी कोई नहीं । ऐसा मुमुक्षु इस सत्य को पकडे। 'एवं धूत्वा शरीरं सर्वानर्था' अस्मिन् जन्मनि माने इसी जन्म ने 'मनुष्य बुद्धिमान् ध्यानेन कृतात्मा' एक बात समझो जैसे कोई आदमी रो रहा है, उसके मुँह की ओर देखो तो तुम्हारे चित्त मे एक करुणा नाम का एक चित्तविकार आता है । दया करूणा उत्पन्न होगी । प्यार से उससे बात करोगे । यदि कोई क्रोध से देख रहा है तो तुम्हारे मन मे भी क्रोध उत्पन्न हो जाएगा । जैसे को देखोगे वैसा विकार तुम्हारे अन्दर प्रकट होने लग जाएगा । ध्यान मे अगर महान ब्रह्म को देखोगे । ब्रह्म की ओर अगर तुम अपने मनको फैंकोगे तो तुम्हारे मन के अन्दर क्या आएगा ? ब्रह्म की ओर देखोगे तो तुम्हारे मन के आदर महान शन्ति आएगी । महान शक्ति आएगी । तुम्हारा मन कृत्य कृत्य हो जाएगा । जो भी कर्त्तव्य था वो खत्म हो गया । इसलिए कहा 'अकृतं ब्रह्मलोकमभिसम्भामि' अकृतं ब्रह्मलोकं माने नित्य ब्रह्मलोक । उस महान ब्रह्म की अनुभूति जब हो गई तो ऋषि कहता है अब तो हम ब्रह्मलोक जा रहे हैं, हम ने सत्य को पकड़ लिया है । अब कुछ भी करने अथवा छोड़ने के लिए नहीं है ।

इस प्रकार भगवान प्रजापति से ब्रह्म का उपदेश प्राप्त कर के इन्द्र देवताओं मे जाता है और उस ब्रह्मविद्या की वहाँ व्याख्या होने लगती है

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

१६-६-७८

प्रवचन सं० ७२

"ॐ आकाशो वै नाम नामरूपयोनिर्वहिता ते यदन्तरा तद्ब्रह्म तदमृतं स आत्मा प्रजापतेः सभां वेश्म प्रपद्ये . . . . लिन्दु-माभिगाम् । ॐ तद्धै तद्ब्रह्मा प्रजापतय उवाच . . .. खल्वेवं वर्तयन्यावदायुषं ब्रह्मलोकमभि सम्पद्यते न च पुनरावर्तते न च पुनरावर्तते । ।"

(छान्दो. ८-१४-१।८-१५-१)

इस बात को निश्चय कर के आए हैं 'श्यामाच्छबलं प्रपद्ये शबला-च्छयामं' महान वो ब्रह्म आत्मरूप उसको श्यामाच्छबलं कहा । श्याम शब्द का अर्थ है 'महान गम्भीर ब्रह्म' जैसे किसी नदी मे या समुद्र मे पानी बहुत गहरा होता है उसको गम्भीर कहते हैं । इस ब्रह्म से गम्भीर कोई नहीं । जैसे उस जल की गहराई में कोई प्रवेश नहीं कर सकता जिसको गम्भीर कहते है, जो बहुत गहरा है । इसी तरह यह ब्रह्म महत गम्भीर है । इसके अन्दर सहसा कोई प्रवेश नहीं कर सकता । कोई अगर चाहे कि मैं केवल अपनी बुद्धि से ब्रह्म में पहुंच जाऊँ तो केवल बुद्धि से पहुंच नहीं सकेगा ।शास्त्र से, सत्सङ्ग से और किसी महान आचार्य के द्वारा धीरे २ मुमुक्षु पहुंच जाता है । 'यत आत्मा ब्रह्म है' जब ऐसे निश्चय मुमुक्षु का हो जाता है तो उसके जन्मान्तर के धर्माधर्म नष्ट हो जाते हैं । बडे सुन्दर दृष्टान्त दिए है मंत्र ने कहा जि जैसे वो सुन्दर घोडा जो अभी २ बाहर से घूम कर आया है 'रोमाणि विधूय' अपने रोमो को झाड़ देता है । धूलि को झाड देता है । दूसरा दृष्टान्त है जैसे राहु से चन्द्रमा मुक्त हो जाता है तो पूर्ण चन्द्र स्वच्छ हो जाता है । इसी प्रकार यह ज्ञानवान् नाना प्रकार के पापों से मुक्त होकर निर्मल हो जाता है । और निर्मल होकर अपने स्वरूप मे प्रतिष्ठित हो जाता है । 'न स पुनरावर्तते न स पुनरावर्नते' 'ॐ तद्वै तदब्रह्मा प्रजापतय उवाच' अब उसको पुनर्जन्म नहीं लेना पडेगा । 'आकाशो वै नामरूपं' इस सत्य को और स्पष्ट करते है 'योंनिर्वहिता ते यदन्तरा तद ब्रह्म तदऽमृतं स आत्मा' तेरी आामा क्या है ? मंत्र कहता है 'आकाशो वै' यह आकाश ही तेरी आत्मा है। यहाँ आकाश शब्द यह भूताकाश नहीं । यह जो महाकाश है, जिसके अन्दर यह चारोभूत पृथ्वी जल, तेज वायु, यह चारों घूमते हैं' इस आकाश का नाम आकाश नहीं । यह दृष्टान्त है कि जैसे यह आकाश व्यापक है, निराकार है ऐसे ही यह तेरी आत्मा व्यापक है, निराकार है । जैसे यह चारों भूत इस आकाश में घूमते रहते है और इन भूतों से जो कुछ बना है वो सब इस आकाश मे ही है, इसी तरह यहाँ मंत्र स्पष्ट करता है'आकाशो वे नाम नामरूपयोर्निवहिता' यह सृष्टि क्या है?यह है नाम रूप । यह अपने शरीर मे ही देख लो । यह शरीर हुआ तो इसका एक नाम रखा गया और यह शरीर का जो आकार हुआ यह इसका रूप हुआ । शरीर क्या

है ? 'शीर्यति प्रतिक्षणं, अन्यथा परिणमते इति शरीरं' जो प्रतिक्षण अपना रूप बदले वो शरीर। और इसका एक रूप माने ऐसी आकृति वाले शरीर को मनुष्य कहा। और ऐसी आकृति नहीं होगी तो उसे मनुष्य नहीं कहेंगे। इस मनुष्य शरीर को जीवन कौन ? तो इसका जीवन यह आत्मा है। 'आकाशो वै निर्वहिता' नाम रूप का आधार यह आकाश है। निर्वहिता शब्द का अर्थ है नाम रूप का व्यवहार करने वाला। नाम रूप की सृष्टि इस आत्मा से हो रही है।

दूसरे शब्द से ऐसा समझो कि यह आत्मा ही जगत कर्त्ता है। जगत की सृष्टि आत्मा से ही हो रही है। इस आत्मा के बिना इस जगत का कोई कर्त्ता नहीं। यद्यपि यह लोक है, संसार है किन्तु इस नाम रूपात्मक जगत का कर्त्ता कोई और नहीं हो सकता। यह आत्मा अपनी सत्ता मात्र से कर्त्ता हो रहा है। अपने अनुभव के लिए समझो बच्चा जब जन्मा तो कितना बडा है। बच्चा चेतन मात्र की सत्ता मे हवा ले रहा है, भोजन भी ले रहा है। धीरे २ यह शरीर लम्बा चौडा हो रहा है कि नहीं। आत्मा कुछ कर तो नहीं रहा। इसलिए परमार्थ मे आत्मा अकर्त्ता है, लोक दृष्टि मे उसके बिना कुछ होता नहीं इसलिए इस आत्मा को जगत का कर्त्ता कहा।

ईश्वर जगतकर्ता है इस प्रकार कहने का एक कारण यह भी है कि जो मन्द प्रज्ञ है, मन्द बुद्धि है उनके अन्दर यह भाव तो है कि कोई है जो कुछ कर्त्ता है तो कुछ होता है। ईश्वर को कर्त्ता कह कर उन मन्द प्रज्ञों को बोध हो जाता है, नहीं तो बोध होता नहीं। इसलिए परमात्मा को कर्त्ता कह दिया। बहुत से ऐसे हैं जो कहते है ईश्वर को मानने की क्या जरुरत है ? सृष्टि तो अपने आप हो रही है स्वभाव से। स्वभाव से ही स्थित है, स्वभाव से ही नाश है। उत्पत्ति, स्थिति और नाश तीन चीजें है। उत्पत्ति भी हो रही है, स्थिति भी हो रही है, नाश भी हो रहा है। अपना शरीर समझ लो उत्पत्ति स्थिति और नाश चल रहा है। वही शरीर जिसमे इतनी शक्ति है, इतना बल है, कोई चाहता है कि मैं बुढा हो जाऊँ ? किसी ने चाहा कि हम ऐसे बने किन्तु यही शरीर एक दिन किसी दूसरे के सहारे से उठता है। इसलिए स्वभाव से ही यह सृष्टि हो रही है। आज

कल ऐसा मानने वाले लोग अधिक है। उनसे पूछो तो कि यह स्वभाव क्या है? स्वभाव को को जड मानोगे कि चेतन? कर्त्ता किसी चेतन को ही मानना पडेगा। तो तुमने चेतन कहा, हमने ईश्वर कह दिया। यदि यह कहो कि यह स्वभाव जड है तो जड स्वभाव इतनी सुन्दर सृष्टि कैसे करेगा? सुन्दर २ मनुष्य चीजें बनाता है। बिल्डिग बना, पहले planer होते है जो plan बनाते है फिर बिल्डिग बनाते है मो स्वभाव से ही यह बिल्डिग क्यों नहीं बन गई।

जल स्वभाव से शीतल है। अग्नि स्वभाव से गर्म है। यह तो ठीक है किन्तु स्वभाव से बिल्डिग बन जाए यह सम्भव नहीं। अपने शरीर को ही देखो। इसकी रचना कैसे हुई? बिना चेतन के जड स्वभाव कुछ नहीं कर सकेगा।

विद्यानन्द स्वामी जो अपने समय के अद्भुत दार्शनिक थे कहते है

एतस्माद् दृढ इन्द्र जालं यद् गर्भवास स्थितम
एतदेतद् हस्तमस्तकं पद नानाभूत मामांकुरम्

'एतस्माद् दृढ इन्द्रजालं' कहते है इससे ज्यादा और इन्द्रजाल क्या होगा? जो बच्चा मां के गर्भ मे रहता है। आज तो हम लोग कहते है कि इतने छोटे room मे कैसे रहेंगे? इसमे तो कोई ventilation भी नहीं है। किन्तु यह बताओ जब गर्भ मे थे तो वहाँ मां के पेट मे कितना बडा room है? कितने ventilation हैं? 'यदगर्भवासस्थितं' मां के पेट मे बच्चा बनता है। धीरे २ शरीर बन रहा है। जहाँ आंख चाहिए वहाँ आंख बन रही है। जहाँ कान होना चाहिए वहाँ कान बन रहा है। मां के पेट में पहले खोपडी का निर्माण होता है। उत्तान पाद खोपडी नीचे और पैर ऊपर। श्रीमद्भागवत मे उत्तानपाद की कथा आती है। उत्तानपाद की दो रानियाँ हैं सुनीति और सुरुचि। दो पुत्र हैं ध्रुव और उत्तम। सुरुचि का पुत्र उत्तम है। सुरुचि माने सुन्दर रूचि। महाराजा सुरुचि के प्रभाव मे था। सुनीति बेचारी बोलती ही नहीं। कभी बोलती है तो उसकी कोई नहीं सुनता। उसका जो पुत्र है वो ध्रुव है। एक दिन ध्रुव चाहता है कि पिता की गोद मे बैठे, किन्तु राजा सुरुचि के कारण, चाहते हुए भी उसको गोद मे नहीं ले सका। सुरुचि कहती है राजा की गोद मे बैठना हो तो मेरे पेट से जन्म लो।

बच्चा रोता २ मां के पास गया। मां से बोल दिया। उसने कहा हाँ मैं अभागी हूँ। भगवान तेरी रक्षा करेगा। सुनीति ने बच्चे को उपदेश दिया और मोक्षमार्ग मे लगा दिया। आगे नारद ने उपदेश किया कि ऐसे भगवान का ध्यान करना। ध्रुव ध्रुव बन गया।

वो उत्तानपाद हम लोगों के बीच मे बैठा है। सुरुचि माने तुम्हारी बुद्धि की जो ईच्छा विषय को पकड़ने वाली है वो सुरुचि है। सुनीति वो बुद्धि है जिस मे तप है. त्याग हैं। जो सामान्यता विषय की ओर नहीं जाती। उसका नाम सुनीति है। सुरुचि तुमको विषयों के जंगल मे घुमा २ कर ऊख (गन्ने) की तरह निचोड़ देती है। सिटी २ रह जाती है। लोग कहते हैं बुढ्ढे हो गये। रस निकल गया। तुम्हारी आत्मा उत्तानपाद है। मां के पेट मे सिर नीचे और पैर ऊपर कर के तप जर रहा है। यही भगवान की लीला है, और क्या है? यह भगवान का इन्द्रजाल है। अगर मां के पेट मे बच्चे के पैर नीचे और सिर ऊपर होता तो मह यह बतलाओ बच्चा बाहर कैसे आता। कहीं एक टांग फंसा देता तो मां का क्या हाल होंता? उसने सोचा यह मूर्ख है इसलिए इसका सिर नीचे करो। सीधे बाहर आ जाएगा। इस तरह यह उत्तानपाद बन गया।

अब बताओ यह शिर कैसे बनना चाहिए? तुम्हारे बिना कौन है वहां? नाक कैसे बनही चाहिए? नाक कितना व्यवस्थित है। यदि कोई कन्ट्रोलर नही होता और नाक एक फुट लम्बी हो गई होती तो पानी कैसे पीते। एक हाथ से नाक को पकड कर यूँ पानी। जुकाम हो गया होता तो कैसे साफ करते। कितना तुम्हारा ध्यान रखा है फिर कहो कि यह जगत ऐसे ही बन गया। उसके बिना जगत कैसे हो जाएगा। कैसे इस शरीर की रचना हुई है इसके लिए कहा रेतश्चेति हस्तमस्तक पद प्रोत भूत नानांकुरम्। प्रायेष शिशुत्व यौवन जरा' इस तरह शिशुत्व बाल्यावस्था, यौवनावस्था और जरावस्था नाना अनेस्थाओं मे इस तरह खाता पीता हुआ आया। खाता पीता हुआ चला गया। यह उस कर्त्ता के बिना, उस परमात्मा के बिना कैसे होगा। उसकी सत्ता मे ही शरीर का बढना घटना है। उसकी सत्ता में यह सारा ब्रह्माण्ड चल रहा है। ऐसे मत सोचो कि आंख से दीखता नहीं है इसलिए वो है ही नहीं। बहुत सी चीजे आंख से नहीं

दीखती । अभी यही पर हम लोग बैठे हैं, हमको कोई शब्द नहीं सुनाई पड रहा किन्तु क्या कोई शब्द नहीं है यहां ? कोई रूप भी दिखाई नहीं दे रहा, किन्तु क्या कोई रूप नहीं है यहां ? अभी T. V. set खोलो तुमको घूमता हुआ रूप दीखने लगेगा । तुमको शब्द सुनाई पडने लगेंगे । सारी चीजें यहां घूम रही है किन्तु यदि तुम्हारी आंख रूप को नहीं पकड रही, तुम्हारे कान शब्द को नहीं पकड रहे तो इसका मतलब यह नहीं कि कोई चीज है ही नहीं । इसलिए स्वभाव वाद कुछ नहीं ।

एक बुद्धिमान तर्कशील वकील थे । पत्नी बड़ी धर्म परायण थी । वो भगवान के मन्दिर मे जाती, सत्सङ्ग में जाती कथा मे जाती और कीर्तनादि भी करती । यह बुद्धिमान उसको कहता है कि तू किसकी कथा सुनाती है । यह सारी सृष्टि तो स्वभाव से ही बन रही है । कोई है भी जिसकी कथा सुनती हो । वह अपनी स्त्री को कितना समझाता है किन्तु वह कहती है कि आप कुछ भी कहो मेरे गले से यह बात उतरेगी नही । धीरे २ बच्चे भी बडे होने लगे । यह उनको भी यही picture देता है कि यह सारी चीजे स्वभाव से ही हो रही हैं । कोई भगवान नहीं है । मां धीरे से समझा देती है कि पिता का कहना गलत है । बच्चे मां की तरह है । कई वर्षों के बाद एक बच्चे के मन मे आया कि पिता जी को कैसे समझाया जाए । झगड़ा करने से तो चलेगा नहीं । एक दिन एक कोरा क़ागज लाकर पिता की टेबल पर रख दिया । पिता ने देखा पर कुछ बोला नहीं । दोप-हर को उस पर कृष्ण जी का सुन्दर सा चित्र बना कर वहीं रख दिया पिता ने देखा तो पूछा यह किसने बनाया है ? लड़का बोला किसी ने नहीं बनाया । सामने वाली दुकान है न उस पर बहुत से रंग पडे हैं । रात को हवा चली थी । सब रंग इधर उधर उडे और चित्र बन गया । पिता बोला जब तुम मे से किसी ने बनाया नहीं तो कैसे बन गया । लड़का बोला आपके स्वभाव वाद के हिसाब से सब रंग उड़ २ कर आ गये और यह चित्र बन गया । अरे बाप को मूर्ख बनाता है ? मै जब कोर्ट मे बोलने लगता हूं तो बडे २ न्यायधीश मुँह बन्द कर लेते हैं। लड़का बोला जब यह सारा ब्रह्माण्ड आपके स्वभाववाद मे बन गया तो यह चित्र कैसे नहीं बन सकता । एक छोटा सा चित्र यदि अपने आप नहीं बन सकता तो

इतना बड़ा जगत जिसमे जड़ भी है और चेतन भी है वो कैसे सम्भव है । 'अचिन्त्य रचना रूपस्य' जिसकी रचना की चिन्ता भी नहीं की जा सकती । बडा टेढा है । इसकी चिन्ता भी करोगे तो कुछ समझ मे नहीं आएगा । यह सारा संसार कैसे खडा हो गया । पत्नी भी सुन रही थी झट सामने आ गई और बोली आप कृपा कर के स्वभाववाद का पुच्छड़ पकडना छोड दो । इससे कुछ होने वाला नहीं । इस जगत का कोई कर्त्ता है । तभी यह जगत खडा है । कर्ता के बिना जगत खडा नहीं रह सकेगा । जगत के पीछे असली सत्य वो ही है । जैसे तुम्हारा शरीर, जब तक वो चेतन बैठा है तब तक यह शरीर चलेगा फिरेगा । खाएगा पीएगा । सब संसार के धन्धे करेगा । इसी सत्य को प्रकट करने के लिए मंत्र कहता है 'आकाशो वै नाम नामरूपयोनिर्वहिता' यह नाम रूप जो कुछ भी है इसके पीछे यह चिदात्मा है ।

दूसरा दृष्टान्त भाष्यकार देते हैं जैसे बडा समुद्र हो कल्पना करो समुद्र मे बडी २ लहरें उठती है तो वो लहरें पानी के बाहर नहीं । अभी मान लो वर्षा हो रही है तो पानी के प्रपोटक पानी के बुदबुदे, पानी लहरें या फेन सब पानी ही पानी के बाहर कुछ नहीं । इसी तरह यह आकाश चिदात्मा ब्रह्म मे यह जगत नाम रूप प्रतीत हो रहा है उसके बाहर कुछ नहीं । सब से बडा दृष्टान्त तुम्हारा शरीर ही है । जब तक यह तुम्हारी अन्तरात्मा है, यह शरीर उसमे खड़ा है,शरीर का नाम रूप उसमे बनता जा रहा है, बच्चे से कुमार, कुमार से जवान, जवान से बुढ्ढे । यही सृष्टि है । यह नाम रूप की सृष्टि तुम्हारी सत्ता मे हो रही है । तुम्हारी सत्ता मे सब हो रहा है । किन्तु तुम उसकी पकड मे नहीं हो । और तुम उसको पकड नहीं सकते ।

जिसकी सत्ता मे सब कुछ हो रहा है वो है सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा । 'तद्ब्रह्मतदमृतं' बेटा वो ब्रह्म है । वो अमृत है । अमृत कहने का मतलब है कि वहाँ जरा जन्म मरण आदि विकार स्पर्श भी नहीं कर सकते । पकडना तो दूर रहा स्पर्श भी नहीं करते । जरा भी दीखता है । जन्म भी दीखता है । मरण भी दीखता है किन्तु इनका जरा भी स्पर्श चिदात्मा मे है नहीं ।ऐसा वो निर्विकार चेतन आत्मा ब्रह्म है । 'स आत्मा प्रजापते सभां वेश्म प्रपद्ये' महान

प्रजापति ब्रह्मा उसकी वेश्म सभा मे प्रवेश करते हैं । 'प्रजापतिश्चतुर्मुखस्तस्य सभांप्रभुविमितं वेश्म प्रपद्य गच्छेयम्' उनका जौबिमतं माने अपरिमितं । मित माने परिमित विमितं माने असीम जो सीमा मे नहीं है । ऐसा उन महान प्रजा-पति का स्वरूप है । उस स्वरूप को हम प्राप्त करते हैं । अभी तक सीमा मे अपने को मान रहे थे । कोई पूछे कि कितने लम्बे ? तो हम कहेंगे साढे पांच छः फुट लम्बे । शरीर की सीमा मे थे । अब जब हम अपने को ब्रह्म समझे तो हम किसीं सीमा मे बंधे हुए नहीं है । असीम हमारा स्वरूप है । वो जो हमारा स्वरूप है उसको कहते हैं 'यशोऽहं यशोनाम आत्माऽहं भवामि ब्राह्मणानाम्' यश नाम है आत्मा का । मैं आत्मा हूं ।'आत्माऽहंभवामि' ब्राह्मणानां ब्राह्मणा एव हि विशेष' ब्राह्मी बृत्ति वाला जो ब्राह्मण है, ऐसे ब्राह्मणों का यश मैं हूं ।'यशो राज्ञा यशो विशां राज्ञां माने क्षत्रिय जो है, जो ब्रह्मभाव मे ऊपर हुए हैं, उनका यश रुप मैं हूं । वैश्य जो ब्रह्मभाव मे हैं ऐसे वैश्यों का यश मैं हूं । ऐसा नहीं कि लोक व्यवहार मे ही जीवन को खत्म करें यह आत्मा ही यश है । 'यशोऽहं भवामि' इसलिए मंत्र कहता है कि ब्राह्मणों का यश रुप मैं हूं । क्षत्रियों का रूप रूप मैं हूं ? वैश्य जाति का यश रुप मैं हूं ।

ऋषि कहते है 'तद्यशोऽहमनुप्राप्तुमिच्छामि' हम उस महान दिव्य यश को प्राप्त करने की इच्छा करते हैं । 'देहन्द्रियमनोबुद्धिलक्षणानामात्मा' देह,इन्द्रिय मन और बुद्धि इन सबसे अन्तरतम जो आत्मा है वो अन्तरात्मा मैं बन रहा हूं 'किमर्थमहमेव प्रपद्ये इति उच्यते' हम उस पाप से विमुक्त हो जाएँगे जो बार २ जन्म मरण का हेतु बनता है । हम उस पाप से बाहर हो जाएंगे । मुमुक्षु सत्चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है, ऐसा निश्चय करे । ऐसा समझने का प्रयत्न करे । यह ज्ञान सत्र दो ढाई महीने तक चला । कल हम इसका विश्राम करेंगे २४ ता० को महामण्डलेश्वर जी आने वाले हैं । बीच का गैप आप लोगों को अच्छा नहीं लगेगा । २४ ता० से प्रातः इसी प्रकार सतसङ्ग चलेगा ।आप सबके लिए धन्यवाद हरिद्वार जाना पडेगा । आना जाना तो लगा ही रहता है । आप श्रद्धाशील मुमुक्षु हैं । इसी तरह श्रद्धा से सुनते रहें और धीरे २ अपनी वृत्ति को ब्रह्माकार बनाते रहें ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

२०-६-८८

प्रवचन सं०-७३

"ॐ तद्धैतद् ब्रह्म प्रजापतय उवाच प्रजापतिर्मनवे मनुः प्रजाभ्य आचार्यकुलाद्वेदमधीत्य यथाविधानं गुरोः कर्मातिशेषेणाभिसमावृत्य कुटुम्बे शुचौ देशे स्वाध्यायमधीयानो धार्मिकान्विदधदात्मनि सर्वेन्द्रियाणि सम्प्रतिष्ठाप्याहिं सन्सार्वभूतान्यन्यत्र तीर्थेभ्यः स खल्वेवं वर्तयन्यावदायुषं ब्रह्मलोकमभि सम्पद्यते न च पुनरावर्तते न च पुनरावर्तते ।। इति पञ्चदशः खण्डः । इति अष्टमः अध्यायः समाप्तः ।।

(छान्दो. ८-१५-१)

छान्दोग्य उपनिषद का यह आठवां अध्याय आज अपनी पूर्णता को प्राप्त कर रहा है। इससे पहले छठा अध्याय और सातवां अध्याय पूर्ण किया। छठे अध्याय मे निर्गुन निराकार जो स्वरुप है आत्मा, का सत् चित् आनन्द स्वरूप ब्रह्म जिसमे देश काल वस्तु का भेद नहीं उसका व्याख्याख्यान किया। सातवें अध्याय मे भूमा ब्रह्म का उपदेश किया। जो 'भूमाविद्या' के नाम से पुस्तक भी आपके सामने आ गई है। भूमा का अर्थ है व्यापक परमात्मा। भूमा जहाँ कोई काल नहीं, जहाँ कोई देश नहीं, कोई वस्तु भेद नहीं। उस भूमा ब्रह्म की व्याख्या कर के आए। 'यत्र नान्यत् पश्यति नान्यच् छृणोति नान्यद् विजानाति स भूमा' यत्र माने जिस ब्रह्मी वृत्ति मे आत्मवित् 'नान्यत् पश्यति' इस चेतन आत्मा के प्रति-

रिक्त कोई दूसरा है ही नहीं जिस को देखें। ऐसा मत समझो कि यह कोई नाबल की बात है। अपने जीवन मे स्पष्ट देखो, इस शरीर मे जो भी दीख रहा है वो आत्मा ही दीख रहा है। आत्मा ही अनुभव में आता है। जिस समय इस आत्मा के करट से यह शरीर बाहर हो जाता है तों मुर्दा दीखेगा। कोई प्यार की आंख से इसको नहीं देखेगा। इसलिए 'नान्यत् पश्यति नान्यत् शृणोति नान्यत् विजानाति' कहा। ऐसे सम्पूर्ण यह जों ब्रह्माण्ड है, इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मे दूसरा कोई देखने के काबिल नहीं, दूसरा कोई सुनने समझने के काबिल नहीं। ऐसा सत् चित् आनन्द स्वरूप जो आत्मा है उसे श्रुति भूमा कहती है। 'स भूमा' 'यो वै भूमा तत्सुखं' तुम्हारे मन की श्रेष्ठ वृत्ति जब बन जाएगी। इस स्थिति मे जब मन पहुंच जाएगा तभी सुख होगा। भेद काल मे सुख नहीं होता। लोक दृष्टि मे इस बात को पहले भी समझाया है। लोक जीवन मे बडे समीप के सम्बन्ध हैं पति पत्नी या माता पिता या बेटा बेटी। इन सम्बन्धों मे हम सुख मानते है। अगर इनमे भेद बुद्धि हो गई, मां को यदि संशय हो गया कि छोकरा जवान हो गया है और बाहर ज्यादा रहता है। घर मे time कम देता है तो अपनी सोने की चूडियाँ छिपा कर रखेगी। पता नहीं कब हाथ मार दे। देखो भेद बुद्धि आई तब यह हुआ। चिन्ता मे आ गई। हालांकि वह उसीका बेटा है, बेटा होने पर भी भय आ गया। भय मे आ गई। भेद होने पर यह सब होगा। भेद नहीं तो कुछ नहीं होगा।

ज्ञान की जो ऊंची भूमि है 'यत्र नान्यत् पश्यति' जहाँ उससे अतिरिक्त कुछ देखने योग्य नहीं। उससे अतिरिक्त कुछ समझने योग्य नहीं। उससे अतिरिक्त कुछ श्रवणीय नहीं। अब इस सत्य को अपने शरीर मे समझो। आत्मा के अतिरिक्त इस शरीर मे क्या देखने योग्य वस्तु है? क्या मुर्दे कों देखोगे? क्या मुर्दे को समझोगे? आत्मा के अतिरिक्त इस शरीर मे क्या समझने योग्य है? इस आत्मा के अतिरिक्त क्या सुनने योग्य है? मुर्दे को क्या सुनोगे? इसलिए कहा 'यों वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति' यह सातवें अध्याय मे विचार किया था जो 'भूमा विद्या' पुस्तक के रूप मे आपके सामने आ गया है। यह जो आठवां अध्याय है, इस आठवें अध्याय के समारम्भ करने का प्रयोजन, जहाँ देश काल भेद नहीं

ऐसा जो निर्गुण निराकार तत्त्व है उस तत्त्व मे मन्द बुद्धि जिज्ञासु की बुद्धि स्थिर नहीं होती। उसकी बुद्धि को स्थिर करने के लिए, वो परमात्मा की ओर कैसे बढे श्रुति उस तत्त्व का हृदय देश से ध्यान करने का निर्देश करती है। परमात्मा का ध्यान करने के लिए तुमको देश दिया। उस दहराकाश मे वो सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा का ध्यान करने के लिए तुम्हारे को कहा। तुम्हारा मन ध्यान करते २ पक्का हो जाएगा तो अपने ही निर्गुण निराकार मे चला जाएगा। हृदय का नाम है दहर। इस हृदय मे ध्यान करो। इसका नाम है दहरविद्या अथवा दहरोपासना। यह दो नाम है इसके। दहर विद्या और दहरोपासना। जिसको पहले निर्गुण निराकार कहा उसको यहाँ सत्यकामः सत्यसंकल्प. इत्यादि गुणों का कथन किया। वो परमात्मा कैसा है ? सत्यकाम है। उसकी जो कामना होती है वो झूठी नहीं होती।

एक बात और याद रखो जो २ भी कामना होती है, जो २ इच्छा होती है वो अन्तःकरण सम्बन्ध से होती है। परमात्मा का तो अन्तःकरण है नहीं, कहोगे फिर इच्छा कैसे हुई ? अन्तःकरण में इच्छा होती है जीव की। जो जीवभाव से बंधा हुआ है, मैं २ करता है, उसकी सारी इच्छाएँ अन्तःकरण में होती है। किन्तु जिसको हम परमात्मा कहते हैं वो किसी अन्तः करण मे नहीं बंधा इसलिए उसकी इच्छा जीव की इच्छा की तरह नहीं है। उसका जो कुछ भी संकल्प होगा, जो कुछ भी इच्छा होगी वो मायामय होगी। उसका मायामय शरीर है। अविद्या शरीर जीव और माया शरीर हो गया परमात्मा। गीता मे भगवान कृष्ण ने इस सत्य को प्रकट किया हैः- समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः, ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ।।

'समोऽहं सर्व भूतेषु' मैं तो सब भूतों मे समान हूँ। 'समोऽहं' जब मैं सब भूतों मे सम हूँ तो मेरा कोई द्वेष्य नहीं कोई प्रिय नहीं। तो भगवान का प्यारा क्या बनना है ? भगवान की ओर अपना प्यार फैंको तो तुम भगवान के प्यारे बन जाओगे। यदि क्रोध फैंको तो क्या बनोगें ? कंस ने क्या फेंका ? क्रोध तो वो दुश्मन बन गया भगवान का। भगवान का अन्तःकरण तो है नहीं तुम्हारी तरह जो उस मे कभी प्यार उत्पन्न हो और कभी क्रोध उत्पन्न हो। इस अन्तः

करण की लपेट मे जो जीव है इसलिए इस जीव के अन्तःकरण मे उल्टे पुल्टे विचार आते रहते है । यह तो बड़े भाग्य से कभी ऐसा सुयोग आता है जो तुमको मोक्ष की ओर जाग्रत करता है । ऐसे धर्म तो बहुत हैं जो तुमको सुन्दर सुख भोग मे ले जाएँगे किन्तु मोक्ष की ओर ले जाने वाला धर्म कम है । जिस समय मुमुक्षु का वो धर्म आता है तो वो उसको मोक्ष की ओर, आत्मा की ओर उठाता है । ज्ञान देता है । बिना ज्ञान के तो कुछ होना नहीं है ।

उस ज्ञान के बिना तो तुम घर में भी नहीं रह सकते तो बाहर कैसे जाओगे ? ज्ञान नहीं होगा तो घर कैसे जाओगे ? वो घर तुम्हारा कब से बना है ? जन्म हुआ तब से न । उससे पहले कहाँ थे ? इससे पहले तुम्हारे कितने Address गायब हो चुके है, और आगे भी कितने बनेंगे और बिगड़ेंगे । यह सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा ब्रह्म है, असली होश यह है । जिसको तुम अपना घर मान रहे हो वो तो नकली होश है । सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा ब्रह्म है, ऐसा ज्ञान होने का असली होश है । और इस आत्मा मे भेद नहीं है । 'समोऽहं सर्वभूतेषु' न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः, ये भजन्ति तु मां भक्त्या । भक्ति शब्द का अर्थ दूसरा नहीं समझो । तत्त्व ज्ञान के द्वारा 'ये मां भजन्ति' भजन्ति शब्द का अर्थ भजन नहीं । ध्यायन्ति, अनुभवन्ति जो तत्त्व ज्ञान के द्वारा मेरे स्वरूप का अनुभव करने वाला ज्ञानी है, तत्त्व ज्ञान के द्वारा जो मेरा अनुभव करेगा 'मयि ते' वो मेरे मे, मैं उसमे । वो और मैं उससे दूर नहीं । ऐसा वो सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है । मन्दप्रज्ञ के लिए उसमे सत्यकामः सत्य संकल्पः आदि गुणों का विधान किया । ऐसे गुणों को परमात्मा मे समझो । ऐसे गुणों को पकड़ कर जो कर जो चलेगा वो परमात्मा होगा, वो ईश्वर होगा । उस परमात्मा का जो भी कार्य होगा वो मायामय होगा । ऐसे छोटे से अन्तःकरण का सकल्प नहीं उस ईश्वर का । जिस अन्तःकरण मे राग और द्वेष घूमता । वो महान ईश्वर का संकल्प होगा । बिलक्षण ईक्षण होगा । वो इच्छा होगी वो सत्यकाम सत्यसंकल्प होगी ।

श्वेताश्वतरोपनिषद् का मंत्र है 'अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स श्रृणोत्यकर्णः । स वेत्ति वेद्य न च तस्यास्ति वेत्ता, तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम् ।। मंत्र कहता है हे भगवन् 'अपाणिपादो' तुम कैसे हो ? स्वरूप का वर्णन करता है ।

तुम्हारा कोई हाथ नहीं किन्तु तुम बडे वेग से सबको पकड़ कर बैठे हो। यह अपना हाथ है, इससे पूछो। तुमने किसी को पकडा है या तुमको किसीने पकडा है अगर जिसने पकडा है वो छोड़ देगा तो यूं गिर जाएगा जैसे कटा हुआ लकडा होता है। मुर्दे की बांह को उठा कर छोडो तो यूं गिर जाएगी। तो माने किसी ने पकडा हुआ है। जिसने पकडा है उसका कोई हाथ है? हाथ नहीं है फिर भी पकडा है। इसलिए मंत्र कहता है 'अपाणिपादो जवनो ग्रहीता' हाथ नहीं कोई पैर नहीं किन्तु तुम तेजी से चले जाते हो। यह तुम्हारे पैर जो रोड पर चलते हैं, इनसे पूछो तो खुद चल रहे है या कोई चला रहा है? उसके करंट में पैर चल रहे हैं 'पश्यत्यचक्षुः स श्रृणोत्यकर्णः' मंत्र कहता है हे भगवन तुम्हारा कोईचक्षुः नहीं है फिर भी तुम देख लेते हो। यह आंख तो चशमे की तरह है। अन्दर वाले ने अपने को पीछे हटा लिया तो आंख नहीं देखेगी। यह आंख तो परमात्मा की factory का चश्मा है। मनुष्य की factory मे ऐसे चशमे नहीं बने अभी तक। इस face को तो टेबल समझो और इस आँख को समझो चश्मा। मनुष्य की factory मे ऐसा चश्मा बनने की आशा भी नहीं करो। और थोडी देर के लिए सोचो कि बन भी जाए तो उससे काम नहीं होगा बडी अच्छी एक मां थी। लड़की बडी सुन्दर थी। माँ ने सोचा कि लडकी की शादी कर देना चाहिए। तो पता लगा कि अमुक जगह पर एक लडका है। किसी ने देखा तो बडी प्रशंसा किया लड़के की। मां की आँख बडी तेज होती है। लडका देखा तो बोली देखने में बडा सुन्दर है किन्तु एक जगह उसको कभी मालूम पड़ी। एक आँख में कुछ कमी लगी जैसे कोई काणा होगा तो उसको यूं सिर घुमा कर देखना पड़ेगा। यह बात उस ने देखली माँ जान गई कि एक आँख तो मनुष्यों की factory की बनी हुई है और एक आँख भगवान की factory की है। इसलिए मनुष्य की factory की बनी हुई आँख काम नहीं करेगी। परमात्मा की आंख ही काम करेगी।

इसलिए मंत्र कहता है 'पश्यत्यचक्षुः स श्रृणोत्यकर्णः' यह चक्षु कुछ नहीं देखता है। वो देखता है किन्तु उसका कोई चक्षु नहीं है। उसका कोई कान नहीं फिर भी सुनता है। स वेत्ति वेद्य। वो जो कुछ भी वेद्य मानने जानने योग्य है 'स वेत्ति' जानता है। क्या जानता है। इस जगत मे जो कुछ भी है वो सब

जानता है 'न च तस्यवेत्ता' किन्तु उसको जानने वाला कोई नहीं। वो अपने को आप ही जानता है। 'तमाहुरग्यं पुरुषं महान्तम्' मंत्र कहता है 'तं ब्रह्मविदो महान्तं पुरुषंमाहु' कोई महान ब्रह्मवेत्ता ही उस महान पुरुष को जानता है। 'पूर्णात् पुरुषं' वो पुरुष है कोई उसमे कमी नहीं है। ऐसे उस महान पूर्ण पुरुष को सत् चित् आनन्द स्वरूप, निर्गुण निराकार तत्त्व को यहां छठें और सातवें अध्याय मे कथन किया है। इस आठवें अध्याय के अन्दर उसीको गुणों के द्वारा मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु के लिए उसकी उपासना अपने हृदय मे करे इसके लिए सत्यकाम: सत्यसंकल्प कहा। परमात्मा सत्यकाम है, सत्य संकल्प है ऐसा समझ कर उसका ध्यान करो। किन्तु एक बात समझो जो मन्दप्रज्ञ मुमुक्षु होगा, जो लडकी अपने मां बाप के घर से प्यार ज्यादा करती है वो ससुराल मे टिक नहीं पाती। ससुराल जाएगी तो बार २ कहेगी मैं मम्मी को देख लूंगी। पहले २ तो सासु भी समझती है कि चलो नई २ आई है इसका मन नहीं लगता भेज दो। इसलिए भेज दिया। किन्तु जब देखो ऐसा ही करेगी तो सासु बेचारी क्या करेगी ? बिगडेगी कि नहीं। ऐसा ही समझो यह मम्मी का घर है संसार और इस संसार मे एक नहीं करोडों२ जन्म हुए हैं और करोडों २ जन्मों मे क्या काम किया है, इस ार के जो विषय हैं, इन्हीं का भोग भोगा है। और क्या काम किया है ? मनुष्य योनि मे गये तो भी इन्हीं भोगों में रमे रहे और दूसरी योनियों मे तो भी योनि के अनुसार जो भोग मिले उन्हें ही भोगा है। जीव का इन भोगों मे आकर्षण अनादि काल से है। यह आकर्षण जैसे उस लडकी का छूटता नहीं है तो वो ससुराल मे दु:खी है ऐसा मन्द प्रज्ञ मुमुक्षु ब्रह्मभाव मे आने मे दु:खी हो जाता है। इसलिए इस आठवें अध्याय में साधन का उपदेश किया कि बेटा विवेक वैराग्य और ब्रह्मचर्य को धारण करो। ब्रह्मचर्य की व्याख्या कर के आए हैं।

एक तो ब्रह्मचर्य माने इन्द्रियों का संयम और दूसरे 'ब्रह्मतज्ज्ञानार्थं' उस ब्रह्म को जानने के लिए जो व्रत है वो ब्रह्मचर्य है। उस ब्रह्मचर्य को पकडो और इन्द्रिय सयम भी आदरणीय है। इस साधन को जब पकडोगे तो तुम्हारा मन धीरे२ एकाग्रता मे आएगा। जिस समय मन मे एकाग्रता आने लगेगी, उस एकाग्रता की स्थिति मे भगवान गीता मे कहते है :

''न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः''

स्थिर प्रज्ञ मुमुक्षु कौन है ? प्रिय मिला तो भी ज्यादा हर्ष नहीं करता। नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् और कुछ अप्रिय योग भी होगा, सब कुछ हमारी इच्छा से हम को मिलने वाला नहीं है। कुछ हम नहीं चाहते हैं वो भी मिलता है। खाने को बैठते हो तो जो परोसने वाली सामने बैठी है कुछ अपनी इच्छा से भी तो परोस देती है। कुछ तो तुम्हारी इच्छा से परोसा और कुछ अपनी इच्छा से भी परोस देती है। इसी तरह इस माया की नगरी मे भी जो तुम नहीं चाहते हो वो भी तुम्हारे को थोडा मिलेगा। उसको अप्रिय कहते है तो भगवान कहते हैं 'नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम्' अप्रिय भाव भी आएगा तो मुमुक्षु स्थिर बुद्धि जो है, उद्वेग नहीं धारण करे। 'स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः' वो स्थिरबुद्धि है और नहीं तो बुद्धि ने जिधर खींचा उधर चलदिए। यह ठीक नहीं। किन्तु बुद्धि यदि तुम्हारे कंट्रोल मे, तुम्हारे संयम मे होगी तो तुम जिधर चाहोगे बुद्धि उधर जाएगी। और तुम्हारा अच्छा काम करेगी।

और भगवान कहते हैं 'असंमूढो' माने मूढ नहीं होवे। मूढ शब्द का साधारण अर्थ हम लोग समझते हैं मूर्ख। किन्तु मूढ का अर्थ है मोहवान्। जो मोह में बंधा है यद्यपि विषय तो हमारे सामने नहीं है किन्तु विषय के मोह ने नहीं छोडा। जैसे समझो जवानी को हमने छोडा कि जवानी ने हमें छोडा ? माने जवानी ने हम लोगों को छोड दिया कि जाओ मैं तुम्हारे साथ अब नहीं रहूँगी। अब जब वो घर खाली कर के चली गई तो यहाँ लोग क्या कहेंगे ? बूढा ही कहेंगे न। यह संसार के भोग ऐसे ही है, हम इनको नहीं भी छोडेंगे तो यह हम को छोड देंगे। पर इनके छोगने का फल तुमको कुछ नहीं मिलेगा। आप छोडोगे तो त्याग का फल मिलेगा। उस त्याग को पकडो। इसलिए भगवान कहते हैं 'असंमूढो' स्थिरबुद्धि ब्रह्मविद्। उसको ब्रह्मविद् कहते हैं। 'ब्रह्मणि स्थितः' वो ब्रह्मविद् है उसकी ब्रह्म मे स्थिति है।

तो इस प्रकार इस आठवें अध्याय मे यह दहरविद्या इस दहरबिद्या की उपासना के द्वारा मूर्धन्य नाडी के द्वारा इसकी ब्रह्मलोक गति बताई है। इसकी

नाडी ऊपर की ओर, मूर्धा की ओर निकल कर ब्रह्मलोक इसको लेकर जाएगी। ऐसी जो श्रेष्ठ विद्या है उस विद्या के लिए कहते हैं 'तद्धैतद्ब्रह्म प्रजापतये उवाच' तद्धैतद्ब्रह्म' अन्त में यह विद्या कैसे गुरु परम्परा के द्वारा आई है, इसका वर्णन श्रुति करती है। तद्धैतद्ब्रह्म' इति निश्चयार्थ कहा यह आत्मा ही ब्रह्म है। आत्मा कोई जुदा नहीं। जो महान सत् चित् आनन्द स्वरूप आत्मा है, बेटा यही ब्रह्म है। तो उस ब्रह्म को मिलने तेरे को कहाँ जाना है? अपने हृदय मे जाना पडेगा। हृदय देशका निर्देश किया। क्यों? मन्दप्रज्ञ मुमुक्षु है उसकी ज्ञान शक्ति इतनी प्रबल नहीं हुई कि ब्रह्मैवेदं सर्वं आत्मैवेदं सर्वं'' यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड नाम रूप जो है यह ब्रह्म है ऐसी व्यापक बुद्धि इसकी नहीं बनी इसलिए हृदय देश का निर्देश किया।'दहरं पुण्डरीक वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशस्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं यदिमस्मिन्ब्रह्मपुरे' इस शरीर को मंत्र कहता है बेटा यह ब्रह्मपुर है। जैसे इस लोक में किसी नगर मों यदि ब्राह्मण जाति के लोग अधिक रहते हों तो उसे ब्रह्मपुर कह देते हैं। ऐसे ही यह श्रुति तुम्हारे शरीर को ब्रह्मपुर कह रही है। यह ब्रह्मपुर है बेटा यहाँ ब्रह्म रहता है। दहरं पुण्डरीकं वेश्म। दहरं पुण्डरीकं पुण्डरीकं माने कमल। दहर माने अति सूक्ष्म हृत् कमल। 'तस्मिन्नन्तराकाश' इस दहर पुण्डरीक के अन्दर जो तत्त्व अहं २ रूप से जो भास रहा है। सत् चित् आनन्द रूप से भासने वाला। बेटा उसकी खोज करो 'तदन्वेष्टव्यं तद्वाव विजिज्ञासितव्यं' और यह जो महान ब्रह्मवेत्ता हैं उन ज्ञानियों के पास जाकर इसकी खोज करो। विजिज्ञासितव्यं उसी की जिज्ञासा करो। बेटा और दुनियाँ मे खोजने की कोई चीज नहीं है।

'एतद्ब्रह्म' महान जो ब्रह्म है 'प्रजापतये उवाच' भगवान ब्रह्म ने ऐसा प्रजापति से कहा। यहाँ प्रजापति शब्द का अर्थ है भगवान कश्यप मुनि। प्रजापति का बेटा कश्यप है। यह जो कश्यप है यह भी प्रजापति है। कश्यप ऋषि का पुत्र हुआ मनु 'प्रजापतिर्मनवे मनुः प्रजाभ्यः' प्रजापति कश्यप ने अपने पुत्र मनु से कहा। मनु के लिए उपदेश किया। देखो प्राचीन काल मे एक बात होती थी। पिता जो बडा पुत्र होता था उसको ब्रह्मविद्या का उपदेश देता था। वंश परम्परा आती थी। जो विरक्त ऋषि होता था वो अपने शिष्यों का ब्रह्मविद्या देता था।

बडा पुत्र या छोटे पुत्र अथवा बडे शिष्य या छोटे शिष्य का विचार तो नहीं होता किन्तु परिवार मे एक ज्ञानी तो होना ही चाहिए । इसलिए बडे पुत्रको ब्रह्मविद्या दी जाती थी । इस तरह मनु बडा पुत्र था । प्रजापति कश्यप ने मनु को ब्रह्मविद्या का उपदेश किया । मनु भी प्रजापति था । अब आगे मनु ने प्रजाभ्यः । आचार्यं कुलाद्वेदमधीत्य यथाविधानं गुरोः कर्मातिशेषेणाभिसमावृत्य' उस जमाने का पुराना जो आचार था कि आचार्य कुल मे बच्चा जाएगा । चाहे वो राजा का बेटा भी हो किसी गरीब की बात नहीं । राजा का बेटा भी होगा तो गुरु कुल तो जाना पडेगा । गुरुकुल में रह कर वेदों का अध्ययन करसा पडेगा और गुरुसेवा भी करनी पडेगी । यह कर्त्तव्य था उस जमाने का । इसलिए 'विधिवद्वेदमाधीत्य' विधिवत् विद्याध्ययन के पश्चात जब गुरुकुल का उसका समय समाप्त होता है उस समय समावृत्य समावर्तन संस्कार होता था । वेद मे दो तरह के ब्रह्मचारियों का वर्णन हैं । एक वेदाध्ययनार्थ और एक नैष्ठिक ब्रह्मचारी । जो नैष्टिक ब्रह्मचारी होता था उसका तो आधा संन्यास हो जाता था । उसको फिर गृहस्थाश्रम मे जाने का विधान नहीं था । किन्तु जो वेदाध्ययनार्थं आचार्य कुल मे जाता वो अध्यन के पश्चात् घर जाता। सदृशीं भार्या विन्देत्' उसके लिए कहा सदृशीं भार्या का पाणि-ग्रहण करो । एक बात याद रखो । आप लोग सब पढे लिखे हो, एक पच्चीस वर्ष का लडका आचार्य कुल से लौटकर घर आएगा तो उसकी सदृशीं भार्या कौन होगी कम से क १६, १८ से ऊपर ही समझो । तो यह वेंद का विधान था ।

एक बात स्पष्ट समझ लो । मुस्लिम काल जब आया हमारे देश मे उस समय लड़कियों की रक्षा करना मुश्किल हो गया था । हमारे यहाँ छूआछूत की परम्परा ऐसी थी कि किसी ने छू लिया तो समाज में उसकी जगह नहीं रहती थी । तो इसलिए इस काल से बाल विवाह की प्रथा चल पड़ी । नहीं तो वैदिक काल मे सदृशीं भार्या विन्देत् का विधान था । अब आगे आता है 'कुटुम्बे शुचौ देशे स्वाध्यायमधीत्य धार्मिकान्विदधदात्मनि सर्वेन्द्रियाणि' पवित्र देश मे रहता हुआ आगे स्वाध्याय करता है । अगर सन्तान भी उत्पन्न करता है तो उसको धार्मिक बनाता है । या दूसरे भी जो उसके जिज्ञासु शिष्य बनते है उनको धार्मिक बनाता है । अभी यह गृहस्थाश्रम मे ही रह रहा है, अभी विरक्त नहीं हुआ है ।

'सर्वेन्द्रियाणि सम्प्रतिष्टाप्य' अपनी सब इन्द्रियों को यथासम्भव अपने वश मे रखता है। और 'अहिंसन्सर्वभूतान्यन्यत्र तीर्थेभ्य:' किसी प्राणी का हिंसा नहीं करता। अन्यत्र तीर्थेभ्य: का अर्थ है शास्त्र जहाँ करता है वहाँ हिंसा करता है जहाँ शास्त्र नहीं कहता वहाँ हिंसा नहीं करता। यह हिंसा अहिंसा का बड़ा विचारणीय एक स्वतंत्र विषय है। अभी इसका समय नहीं हैं। शायद कल भी हमको बोलना पडेगा। क्योंकि अपने शास्त्री जी कहते हैं कि कल आपको जाना तो देरी से है तो कल का प्रवचन भी आप ही कर लो। हमने कहा तो कर देंगे। तो कल इस विषय पर विचार कर लेंगे।

यहां यज्ञादि कर्म को यहाँ श्रुति तीर्थ कहती है। तो माने यज्ञादि कर्म मे कहीं हिंसा का विधान है तो वहाँ करो। इसलिए यहाँ कहा कि 'तीर्थेभ्य:' किन्तु अपनी रुचि के लिए किसी की हिंसा मत करो। अन्यत्र हिंसा नहीं करो। बुद्धिमान को सयम तो बरतना ही चाहिए। 'स खल्वेवं वर्तयन्यावदायुषं ब्रह्म लोकमभिसम्पद्यते न स पुनरावर्तते न स पुनरावर्तते' मंत्र कहता है कि ऐसा वो धर्मनिष्ठ अपनी आयु पार कर के ब्रह्मलोक चला जाएगा। न स पुनरावर्तते न स पुनरावर्तते' और मंत्र कहता है कि अब यह लौट कर इस माया के संसार चक्र मे नहीं आएगा।

इस प्रकार इस आठवे अध्याय के प्रवचन का उपसहार हम कर रहे हैं। प्रवचन कोई वन्द नहीं होता है। उपसंहार मात्र होता है। कल भी हम बोलेगे किन्तु कल स्वतंत्र रूप से बोलेंगे। हो सका तो याज्ञवल्क्य मैत्रेयी सवाद आपके सामने रखेंगे। इसके बाद शास्त्री जी तीन दिन बोलेंगे। उसके बाद हमारे प्रिय महामण्डलेश्वर आने वाले हैं। वो शायद ५ तारीख से प्रवचन करेंगे।

आप सव प्रिय भक्त हैं, प्रिय मुमुक्षु आप सब के लिए हमारी हार्दिक शुभ कामना है। यह हमारे गुरु जी का ही संकल्प था कि कोई ऐसी जगह अच्छी बनें तो यहाँ के जो मुमुक्षु हैं उनको लाभ हो। तो मैं तो यहीं समझता हूं कि आप मुमुक्षुओं के ही भाग्य से यह जगह बनी है। और नेपाल बडी सुन्दर भूमि है राजपूत महाराजा जहाँ का होवे वो भूमि भाग्यशाली मानी जाती है। सुन्दर भाग्यशाली देश मे ऐसी जगह हो जहाँ आत्मा और परमात्मा को समझ सको।

रोने की जगह तो बहुत सी हैं किन्तु हंसने के लिए और असली हंसी तो तभी आएगी जब ज्ञान असली तुम्हारे अन्दर प्रकट होगा। और असली ज्ञान तभी प्रकट होगा जब महान कोई ब्रह्मवेत्ता श्रुति शास्त्र के द्वारा उसको प्रकट करेंगे। नहीं तो असली हंसी नहीं आएगी। वैसे तो जब कोई मित्र आता है तो हम हंसते हीं हैं और उसका स्वागत भी करते हैं ऐसे हमारे चित्त में भले ही कोई शोक भी हो तो भी हम उसको हंस कर ही मिलते हैं। इस आत्मा को जानने के लिए यह समझो ज्ञान सत्र है यह। जैसे कोई धनी मानी अपने क्षेत्र मे अन्नक्षेत्र खोलता है कि हमारी इस भूमि पर कोई भूखा न रहे। ऐसे ही तुम्हारे इस सुन्दर देश की काठमाण्डौ राजधानी में यह ज्ञानसत्र चला है। यहां कोई भी आएगा उसको यह सुन्दर ज्ञानरूपी अमृत भोजन मिलेगा। 'ज्ञानममृतं भोजनं' वो अपनी आत्मा को तृप्त करेगा। कृतकृत्य करेगा।

हम अपने सभी मुमुक्षुओं का हार्दिक धन्यवाद करते हैं। आशीर्वाद करते हैं। आप देखो हमारी प्रिया शिष्या श्रीमती राजेश्वरी आनन्द है। ग्वालियर से आती हैं। हिन्दी की अध्यापिका है।इसने पहले भी भूमाविद्या का प्रवचन लिखा है। सारा इसने तैयार किया था हमारा तो ठीक है बोलने के लिए तो मशीन हमारी काम करती है किन्तु लिखना अगर हम चाहेंगे तो शायद नही लिख पायेंगे। और बहुत अच्छा हुआ अभी भी वह लिख रही है। और आठवें अध्याय का भी विचार है कि पुस्तक के रूप में आपके सामने आ जाए। जितनी जल्दी वो लिख देगी उतनी जल्दी यह हो जाएगा। आप संकल्प करो कि उनका स्वास्थ्य ठीक रहे और यह प्रवचन लेख बढिया रूपमे तैयार करके आपके सामने रखें।आप सबके लिए हमारा धन्यवाद। इसके पहले भूमा विद्या के प्रकाशन हेतु हमारे प्रिय श्री प्रेम नारायण काबरा का सहयोग प्राप्त हुआ है। अब भी कोई भक्त अपने आप सामने आ जाएगा। इति शुभमस्तु।

हरिः ॐ तत्सत्

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१४	मान	भान
२	२०	सश	सब
४	१८	मुमुक्ष	मुमुक्षु
५	२३	क्ता	कथा
८	१५	जसे	जैसे
८	१६	मत	मन में
१०	१८	म	में
१३	२६	दृष्टा	द्रष्टा
१४	१६	अ	था
१७	२४	भरेगा	मरेगा
१६	८	इसना	रसना
१६	२७	स्पशादि	स्पर्शादि
२०	२३	फकड	पकड
२०	२६	शन्ति	शान्ति
२०	२७	ह	है
२१	१५	स	सा
२१	१६	मायमा	मायाम्
२५	२६	विमुच्चा	विमुच्य
२८	१८	धन्य	धन्या
३३	१०	कालुम	मालुम
३५	१४	दैव्य	दैत्य
३६	५	वृत्त	निवृत्त
५२	२४	वाचारम्यणं	वाचारम्भणं
५५	६	मे	से
५८	२३	समाधान्	समाधानम्
५६	६	मा	पा
७२	२६	मरेंग	मरेंगे
७४	२४	बिशन्ति	बिशालम्
८३	२५	तदुन	तदुना
८६	१०	वेखती	देखते

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८९	१४	सौमरि	सौभरि
८९	२८	पघारने	पधारने
९८	६	सोल	साज
१०३	१४	ह	है
१०५	८	उडने	उडती
१०६	९	जया	गया
१०७	१६	लहा	महा
११९	२५	यास्यां	याऽयां
१२४	१८	पू	तू
१३३	२	मालूल	मालूम
१३३	७	सही	नही
१३५	८,९,१२	देवी,देवी,देवी	दैवी, दैवी, दैवी
१३५	२४	मान	भान
१३५	२५	ह	हैं
१३८	१३	भित्र	मित्र
१३९	३	अपते	अपने
१३९	६,११	गमा, चीथा	गया, चौथा
१४५	१४	विस्सार	निस्सार
१४९	२५	मरे	मारे
१५३	१४	पडपेगी	तडपेगी
१५४	१५	सत	संत
१५७	१८	एन्मिद्र:	छन्मिद्र:
१५८	६	माथा	माया
१६१	१९	बड	वह
१६६	१०	इन्द्रिगों	इन्द्रियों को
१६९	८	वंधी	बँधी
१६९	२२	बवा	बना
१७०	८	सो	तो
१८२	१४	जमान्तर	जन्मान्तर
२०२	१	अनुभय	अनुभव

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०२	६,८	आर, नें	आकार, मे
२०२	१५	मेहतान	मेहमान
२०३	१२,२१	वाषा, भर्ता	भाषा, भुर्ता
२०३	२५	उभर	उधर
२०४	१६	शोवति	शोचति
२०५	५	भोज	भोग
२०६	८	हें	में
२०७	११,२३	नहा, सूक्षम	नही, सूक्ष्म
२०८	८	भा	भी
२१३	१२	देथते, लगगा	देखते, लगेगा
२१४	८	प्रानवान,मुमुज	प्राज्ञवान्,मुमुक्षु
२१४	१३,१६	सर्प, उप	सर्व, रूप
२१४	१७	मृमुक्षु	मुमुक्षु
२१५	१६	बच्गा	बच्चा
२१६	१५	यम	यम्
२१७	८,१३	हू ,रास्ने	है, रास्ते
२१७	२५,२६	गाढी, आप मे	गाडी, आप के
३१६	१२,२६	वड़, यम	बडी, यम्
२२०	५,८	ह, अन्द	ह, अन्दर
२२१	३,२१	रब, जादेने	सब, जानने
२२१	२१,२२	तुव, ओकार	तुम, आकार
२२२	४,८,६	मान सो,खार,सष	मान लो,खीर,सब
२२२	१०,१४,१५	तीन नो,नवीं,सही	तीन को,नहीं,यही
२२३	१	आत्म	आत्मी
२२४	१८	हार ह	हार है
२२६	१०	भित्र	भिन्न
२२६	७	इसलि	इसलिये
२३४	३	कनजोरी	कमजोरी
३३८	१८	विजायत:	बिजानत:
२५२	२२	रख	रखा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२७१	२३	द्विरेके	द्विरेफे
२७३	१८	भजती	भजति
२७७	२५	रसेगा	रहेगा
२९५	१५	चक्षेरेकायनं	चक्षुरेकायनम्
२९६	२८	सुःदरता	सुन्दरता
२९९	३	म्कास्ति	मूकोस्ति
३२५	५	ह	है
३२७	१६	यमयता	यमयिता
३२८	१०	स्वयसेव	स्वयमेव
३२९	२	को	करो
३३४	१२	कमो	कर्मो
३३५	१,१६	तेषामष, यथात्मति	तेषामेष, तथात्मति
३३७	१	गन्धवलोके	गन्धर्वलोके
३३७	३६	सत	सन्त
३४०	९	तो	को
३४३	१८	संमिन्न	संभिन्नं
३४६	१५	आसास	आभास
३४२	५	छान्दों,५-६-२	छान्दो ८-६-२
३८९	२७	नारायणय।	नारायणाय
३९५	१८	हृदथाऽग्रे	हृदयाऽग्रे
४०४	१७	भाषमे	भाषसे
४२३	१७	उससास	उसे सास
४३४	१०	नराधस	नराधम
४४८	१३	हसुदा	हलुवा
४५०	१५	हीकर	होकर
४५४	२६	कर्माचतान्	कर्मचितान्
४५७	१३	चौरेणा आत्महारिणा	चौरेणात्मापहारिणा
४६२	५,१३	अन्यान, प्रसग	अन्याय, प्रसंग
४६४	१०	बंसी	बंशी
४६५	७,११	सयझा, भयसे	समझा, भयमे
४६५	१५,२२	मदर्शे, एयु	मादर्शे, एपु

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४७१	४	बेती	देती
४७२	१९	रूपपा	रूपता
४७३	४	आप्मा	आत्मा
४७३	१५,२७	लपर, शरी	उपर, शरीर
४७५	२७	अरो	और
४७६	२६	घोड	घोडा
४७७	२६	पअना	अपना
४७९	१६	शुश्रुवा	शुश्रूषा
४८२	२०	क्षयत्रि	क्षत्रिय
४८३	१७	नि न्ता	नियन्ता
४८६	२,७	कट्टया, कट्टया	कट्यां, कट्यां
४८७	५	ऐषो	एषो
४८९	२८	विरोचक	विरोचन
४८९	२८	भरने	मरने
४८३	७,१५	भद, तिराका	भेद, तिरस्कार
४९६	१	गषा	गया
५००	१५,२४	गह, घया	गई, गया
५०१	१३,२४	भइ,कोंवे	भ्रम, कोने
४०३	४,१६,२२	गला,पेटा,म	लगा,लेटा,मे
५०४	१६	वर्यं	वर्ष
५११	२८	जगड्	जगद्
५१२	१०	श्रपण	श्रवण
५१२	१९	श्र	श्रवण
५१३	७	डहुचे	पहुचे
५१७	३,१०	पक्षेत्, देहाहि	पश्येत्, देहादि
५१९	२०	ससाप्रवृत्ति	संसारप्रवृत्तिः
५२१	१	क्रिन्पु	किन्तु
५२३	९	पकडना	पकडना
५२५	३	सवम्व	सर्वस्व
५२६	२२	पत्ता	पत्ते

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५२७	१	हीशि	होशि
५२९	१	काऽसि	कोऽसि
५३१	१८	किमिच्छ	किमिच्छन्
५३७	२१	सङ्क खङ्ग	संग खलु
५४४	२५	दोपामुदर्शम्	दोषाषानुदर्शनम्
५५७	२७	आ।या	आया
५५९	३	क्षरश्च	क्षरश्चा
५५९	१२	जवानो	जवान
५६०	२	रूपेणाभिनि	रूपेणाभिनि
५६४	११	केत्ते	कुत्ता
५६७	१६	अहमास्वद	अहमास्पद
५७०	८	श्रोतस्य	श्रोत्रस्य
५७२	२६	श्रोम्न	श्रोत्र
५७५	७	आयार्यं	प्रनार्यं
५७५	२३	सांयटिस्ट	सायन्टिस्ट
५८३	२२	हमसं	हम से
५८५	१	पडगा	पडेगा
५८७	२६	षोडस कला	षोडशकल
५९०	२०	मातो	मतो
५९६	१४	कंटस्थ	कंठस्थ
५९९	२०	अयमऽह	अयमह
६०६	२०	ऊत्तानपाद	उत्तानपाद
६०८	४	लगेग	लगेगा
६०८	१८	दोष	दोप
६१३	२	केसे	कैसे
६१४	५	वौ	वो
६१६	१५	ार	प्रकार
६१७	१३	जिघर	जिधर
प्रकाशक पत्र	१७	६७८३७३	५१२८३७३